भारत और अफगानिस्तान-अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में एक अध्ययन
(1947-1993)

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय की
पीएच०डी० (राजनीति विज्ञान) उपाधि हेतु
शोध प्रबन्ध

1995

निर्देशक
डा० राजेन्द्र कुमार
एम० ए०, पीएच० डी०
राजनीति विज्ञान विभाग
दयानन्द वैदिक महाविद्यालय उरई, (उ० प्र०)

प्रस्तुति
अर्चना गुप्ता
एम० ए० (राजनीति विज्ञान)

राजनीति विज्ञान विभाग
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय
झांसी (उ०प्र०)

परमपूज्य गुरुदेव
के
श्री चरणों में समर्पित

CANDIDATE'S DECLARATION

I hereby certifes that the work which is being presented in this thesis entitle "**INDIA AND AFGANISTAN - A STUDY IN INTERNATIONAL RELATIONS**" for the award of Ph.D. degree in Poltical Science, Bundel Khand University, Jhansi is an authentic record of my own work carried out from September 1985 to August 1995 under the supervision of **Dr. Rajendra Kumar Purwar**, Reader, Department of Poltical Science, D.V. Post Graduate, College, Orai (U.P.), India.

The matter embodied in this thesis has not been submitted by me for the award of any other degree or diploma.

अर्चना गुप्ता

Dated: September 25, 1995 **(ARCHANA GUPTA)**

This is to certify that the above statement made by the candidate is correct to the best of my knowledge and belief.

(Dr. Rajendra Kumar Purwar)
Reader
Department of Poltical Science
D.V. Post Graduate, College
Orai (U.P.)

प्राक्कथन

सदियों से अफगानिस्तान को भारत के सांस्कृतिक प्रदेश के रूप में जाना जाता है। दोनों देश पूर्व काल से ही एक दूसरे से जुड़े रहे हैं। उनके मध्य कभी ऐसा समय नहीं आया जब परस्पर सम्बन्धों में कटुता का प्रवेश हुआ हो। विचारात्मक समानता के कारण दोनों देश प्रकारान्तर से एक दूसरे को समर्थन देते रहे हैं। अफगानिस्तान एक भूवेष्ठित तथा अल्प-विकसित राज्य है, उसे भारतीय सहायता की आवश्यकता है, किन्तु दोनों मित्र राष्ट्रों के बीच में स्थित पाकिस्तान इसमें व्यवधान उत्पन्न करता रहा है। यही कारण है कि उसके द्वारा चीन, अमेरिका व अन्य पश्चिमी देशों से बड़ी मात्रा में प्राप्त हथियारों के संग्रह से भारत तथा अफगानिस्तान दोनों भयातुर रहे हैं। पाकिस्तान की सहायक साम्राज्यवादी व विस्तारवादी शक्तियाँ इस महाद्वीप के लिए सबसे गम्भीर खतरा है और उनकी महत्वाकांक्षाएं समस्त एशिया को अशान्त बनाने में संलग्न है।

भारत-अफगान सम्बन्ध अभी तक सबसे अधिक उपेक्षित रहे हैं। अध्ययन की उपयोगिता के लिए यहाँ भारत और अफगानिस्तान (1947-93) के अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों पर एक अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है। जो इन सम्बन्धों के इतिहास, उनके विकास, उपेक्षित प्रसंगों, वर्तमान स्थितियों और मैत्री सुझावों के विस्तृत विश्लेषण पर आधारित है। प्रस्तुत शोध हेतु विभिन्न पुस्तकों व लेखों का अध्ययन किया गया है। विस्तृत अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अब तक के अध्ययन अधूरे है, अर्थात् इन अध्ययनों में एक ही पक्ष-आर्थिक या राजनैतिक पर ही विशिष्ट रूप से बल दिया गया है। अन्य जो भी कार्य अभी तक इस क्षेत्र में हुए है वह ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में अथवा केवल अफगानिस्तान की भूराजनैतिक स्थिति को लेकर ही हुए है। इस विषय पर अब तक उपलब्ध अध्ययनों में जाफरी की पुस्तक उल्लेखनीय है, किन्तु वह केवल 1947-67 तक ही दोनों राष्ट्रों के पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन प्रस्तुत करती है। किन्तु उसके पश्चात् तो अफगानिस्तान की स्थिति में पूर्णतया परिवर्तन हो चुका है। अतः परिवर्तित परिस्थितियों में सर्वांगीण अध्ययन की दृष्टि से यह पुस्तक उपयुक्त नहीं है। 1979 में अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप के उपरान्त इस क्षेत्र में महाशक्तियों की शक्ति-स्पर्धा का नूतन अध्याय आरम्भ हुआ। इस क्षेत्र में हुए शक्ति समीकरणों से अमेरिका-चीन-पाकिस्तान तथा दूसरी ओर भारत-रूस मैत्री के फलस्वरूप राष्ट्रों के द्विपक्षीय सम्बन्ध प्रभावित हुए। इस परिवर्तन के परिवेश में भारत और अफगानिस्तान के पारस्परिक सम्बन्धों पर निरन्तरता बनाए रखते हुए ऐतिहासिक से वर्तमान तक एक वस्तुनिष्ठ और वैज्ञानिक शोध कार्य की अत्यधिक आवश्यकता समझी जा रही थी। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध इसी दिशा में एक विनम्र प्रयास है। यद्यपि उपलब्ध समस्त सामग्री की अध्ययन के क्षेत्र में उपयुक्तता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता, इनका प्रस्तुत शोध में महत्वपूर्ण योगदान है।

प्रस्तुत शोध भारत-अफगान सम्बन्धों के विभिन्न आयामों का मूल स्त्रोत होगा; जिसमें दोनों देशों के सम्बन्धों के समस्त आयामों पर व्यापक प्रकाश डाला जाएगा। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् महाशक्तियों (रूस व अमेरिका) के मध्य प्रारम्भ हुई शीतयुद्ध की गतिविधियों का दोनों देशों की विदेशनीति में व्याप्त प्रभाव का विश्लेषण किया गया है। भारत व अफगानिस्तान के मध्य पाकिस्तान ऐसा देश है जो उनके परस्पर सम्बन्धों को निर्धारित करता है। अतः इस शोध में पाकिस्तान के साथ दोनों देशों के सम्बन्धों और समस्याओं को भी वर्णित किया गया है। महाशक्तियों के एशियाई सम्मोहन को लेकर हुए अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप तथा दक्षिण एशिया में शीत युद्ध के आगमन से भारतीय विदेशनीति अत्यन्त प्रभावित हुई। चीन, अमेरिका, मुस्लिम व अन्य पश्चिमी देशों ने पाकिस्तान के माध्यम से अफगान मुजाहिदों को सैन्य सहायता देकर संकट की स्थिति को और बढ़ाया। संयुक्त

राष्ट्र के प्रयासों से 9 वर्ष बाद रूसी सैनिकों की अफगानिस्तान से वापसी हुई, और इस प्रकार एक युग का अन्त हुआ। अफगानिस्तान से महाशक्तियों ने हाथ खींच लिए, ताकि अफगान अपनी शासन-व्यवस्था का स्वयं निर्माण कर सके। किन्तु अफगानिस्तान का दुर्भाग्य है कि सत्ता के संघर्ष में अफगान ही अफगान के खिलाफ खड़े है। वहाँ शान्ति के लिए संयुक्त राष्ट्र के प्रयास जारी है। प्रस्तुत शोध के प्रत्येक प्रकरण को विभिन्न परिपेक्ष्यों-राष्ट्रहित और विचारधारा, शक्ति संतुलन, लघु और महाशक्ति दबाव प्रक्रिया आदि में रख कर देखने का विश्लेषणात्मक प्रयत्न भी किया गया है।

सम्पूर्ण शोध प्रबन्ध को दस अध्यायों में विभाजित किया गया है जिसमें मुख्य रूप से 1947 से 93 तक के काल का अध्ययन समाहित है। प्रथम अध्याय में, दक्षिण एशिया के देशों के साथ भारत के सम्बन्धों को व्यक्त करते हुए वहाँ भारत व अफगानिस्तान की स्थिति तथा उनके पारस्परिक मधुर सम्बन्धों को दर्शाया गया है। जो अगले अध्यायों में किए गए विवेचन के लिए एक आवश्यक पृष्ठभूमि का कार्य कर सकता है। द्वितीय अध्याय में, ऐतिहासिक संदर्भो में भारत-अफगानिस्तान के राजनैतिक, भौगोलिक, सांस्कृतिक व आर्थिक निर्वहित सम्बन्धों के उद्भव, विकास, उत्थान व परिवर्तन का अध्ययन किया गया है। तृतीय अध्याय में, भारत-अफगानिस्तान की विदेशनीति व उनकी नीतिगत समानताएँ, यथा-गुटनिरपेक्षता की नीति, निरस्त्रीकरण का समर्थन तथा साम्राज्यवादी-विस्तारवादी नीतियों का विरोध। इसके साथ ही पारस्परिक मित्रता व स्थितियों की समानता के कारण दोनों देशों ने एक दूसरे की समस्याओं के प्रति उदार तथा अनुकूल रूख अपनाया है। एक अपवाद है, पख्तूनिस्तान के मसले पर राष्ट्रीय हित को लेकर भारत एवं अफगानिस्तान के मध्य कूटनीति सम्बन्ध अवश्य प्रभावित हुए। चतुर्थ अध्याय जो 1947-52 की अवधि का अध्ययन है, में पाकिस्तान के जन्म से उत्पन्न समस्याओं के मध्य भारत-अफगान सम्बन्धों को व्यक्त किया गया है। पाकिस्तान के जन्म के साथ ही उठे पख्तून विवाद पर भारतीय दृष्टिकोण तथा द्वितीय विश्व युद्ध के बाद उत्पन्न हुए शीतयुद्ध व नवोदित एशियाई राष्ट्रों की समस्याओं पर दोनों देशों के दृष्टिकोणों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। स्वतन्त्रता से पूर्व भारत एवं अफगानिस्तान की सीमाएं समान थीं, परन्तु विभाजन के उपरान्त उनके बीच पाकिस्तान के उदय से उनके आर्थिक सम्बन्ध प्रभावित हुए। किन्तु पारस्परिक आर्थिक सहयोग तात्कालिक स्थिति की मांग थी। अतः दोनों देशों ने पाकिस्तान द्वारा उत्पन्न की गई मुश्किलों के बावजूद आर्थिक सम्बन्धों को उचित स्वरूप प्रदान किया। पंचम अध्याय, जो 1953 से 1963 की कालावधि में समाहित है, में दोनों देशों के नेताओं की यात्रा के परस्पर आदान-प्रदान से जहाँ राजनैतिक, आर्थिक सम्बन्धों में नवीनता का प्रवेश हुआ, वहीं अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के प्रति दोनों राष्ट्रों ने अपना रूख स्पष्ट किया। इस काल में पाकिस्तान, अमरीकी सैनिक सन्धियों का सदस्य बन चुका था, अतः उससें भारत-अफगानिस्तान को चिन्ता स्वाभाविक थी। इसलिए यहाँ भारत-पाक-अफगान के त्रिकोणात्मक सम्बन्धों का यथा सम्भव वस्तुनिष्ठ अध्ययन किया गया है। षष्ठ अध्याय में, महाशक्तियों की राजनीति, पाकिस्तान के अमेरिका व चीन के साथ नवीन शक्ति सम्बन्धों का भारत-अफगानिस्तान की राजनीति पर प्रभाव, 1965 व 1971 के भारत-पाक युद्ध तथा इस दौरान भारत-अफगान आर्थिक सम्बन्धो में अवरोध, भारत के महत्वपूर्ण नेताओं की अफगान यात्राओं से राजनैतिक व सांस्कृतिक सम्बन्धों में वृद्धि तथा आर्थिक सहयोग के प्रयास का विवेचनात्मक विवरण किया गया है, जो 1964-72 की कालावधि पर प्रकाश डालता है। सप्तम अध्याय में, दाऊद के नेतृत्व में अफगानिस्तान में गणतन्त्र की स्थापना तथा उस पर भारतीय दृष्टिकोण पर प्रकाश डाला गया है। 1973-78 के इस काल में दोनों देशों के राष्ट्राध्यक्षों के यात्रा आदान-प्रदान द्वारा व्यक्त

किए गए विचारों में परस्पर नीतिगत और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर समान दृष्टिकोणों का आभास मिलता है। इस काल में नेताओं व प्रतिनिधि मण्डलों की यात्राओं से जहाँ आर्थिक सम्बन्ध बढ़े, वही उनके मध्य संयुक्त आर्थिक आयोग की स्थापना से इन सम्बन्धों में मजबूती आई। भारत तथा अफगानिस्तान गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सक्रिय सदस्य हैं। दोनों देशों ने आन्दोलन की प्रक्रिया पर विश्वास व्यक्त करते हुए एक दूसरे के विचारों को समर्थन प्रदान किया। कुल मिलाकर यह काल दोनों देशों के मध्य मित्रता का काल कहा जा सकता है। अष्टम अध्याय, अप्रैल 1978-1985 की सीमावधि का अध्ययन प्रस्तुत करता है, जिसमें अफगानिस्तान की खल्की व परचमी क्रान्ति पर भारतीय दृष्टिकोण तथा आर्थिक सम्बन्धों का विवरणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इस काल में गुटनिरपेक्ष अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप हुआ, इस संकट पर भारतीय दृष्टिकोण तथा उसके द्वारा क्षेत्रीय स्तर पर तथा अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों के माध्यम से समाधान के प्रयासों का विवेचन किया गया है। नवम् अध्याय, जोकि 1986 से 1993 की कालावधि पर प्रकाश डालता है, में एशिया में महाशक्तियों का शक्ति संतुलन, अफगानिस्तान से रूसी सैनिकों की वापसी व सोवियत संघ का विघटन, तत्पश्चात् अमेरिका के रूप में एक ध्रुवीय शक्ति का प्रादुर्भाव तथा समझौते के बाद अफगानिस्तान की अन्तरिम व्यवस्था एवं वहाँ चल रहे गृहयुद्ध पर गहन व विशिष्ट अध्ययन किया गया है। इस प्रबन्ध को अद्यतन एवं उपयोगी बनाने की दृष्टि से अन्तिम दशम् अध्याय को वर्तमान (1995) समय तक जोड़ दिया गया है। इसमें भारत-अफगानिस्तान के पारस्परिक सम्बन्धों का विश्लेषण, प्रगाढ़ सम्बन्धों की आवश्यकता तथा विभिन्न लेखकों के साथ ही अपने सुझाव और सम्बन्धों के भविष्य को चित्रित किया गया है। इस प्रकार इस शोध-प्रबन्ध को काल-क्रमानुसार विभाजित किया गया है, क्योंकि प्रत्येक काल विशेष का अपना पृथक् चरित्र है। चूंकि इस विषय पर विस्तृत रूप में अभी तक अध्ययन नहीं किया गया था, इसलिए भी आवश्यक हो गया था कि घटनाओं का विश्लेषणात्मक, किन्तु सिलसिलेवार ब्योरा उपस्थित किया जाए, जिससे भविष्य में होने वाले शुद्ध सैद्धान्तिक या विश्लेषणात्मक शोध कार्य में यह सहायक सिद्ध हो सके।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध मूलतः प्राथमिक स्त्रोतों, यथा- विदेश मन्त्रालय से प्रकाशित रिपोर्टो, संसद में लोकसभा-राज्यसभा की बहसें, अफगान दूतावास द्वारा अफगानिस्तान की आन्तरिक स्थिति व विदेश विभाग की सूचनाओं, कूटनीतिज्ञों के विषय से सम्बन्धित प्रधान लेखों तथा राष्ट्र प्रधानों के वक्तव्यों पर आधारित है। संयुक्त राष्ट्र दस्तावेजों का भी उपयुक्त अध्ययन किया गया है। इसके अतिरिक्त सिद्धान्त और व्यवहार सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की विभिन्न पुस्तकों व लेखों का भी सहयोग लिया है। प्रस्तुत शोध को तथ्यों पर आधारित व सारगर्भित बनाने के लिए विभिन्न देशी - विदेशी पत्रिकाओं व समाचार पत्रों का भी क्रमबद्ध अध्ययन किया गया है। अनेक स्थलों पर एक ही घटना के बारे में विभिन्न लेखकों के भिन्न-भिन्न विचार पढ़ने को मिले, ऐसी स्थिति में तथ्यों को सभी दृष्टिकोणों से उपस्थित करने का प्रयत्न किया गया है।

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के क्षेत्र में हिन्दी में शोध-प्रबन्ध लिखने की अपनी कठिनाइयाँ हैं। अधिकांश शोध से सम्बन्धित सामग्री का अनुवाद करना पड़ा। इसमें यह ध्यान रखा गया कि मूल की आत्मा का सही प्रतिनिधित्व हो। इस विषय पर हिन्दी में यह प्रथम शोध-प्रबन्ध है। जो स्वयं में एक प्रयोग है। इसे विद्वत् समाज के विचारार्थ प्रस्तुत करते हुए मै हर्ष का अनुभव कर रही हूँ। यदि विद्वत्गण इससे परितुष्ट हुए तो मै अपने परिश्रम को सार्थक समझूंगी।

अर्चना गुप्ता

आभार

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को पूर्ण करने में इतने व्यक्तियों और संस्थाओं का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष सहयोग रहा है कि उनमें से अधिकांश के प्रति मूक आभार प्रदर्शन करके ही सन्तोष करना पड़ेगा। तथापि मै अपने निर्देशक परम श्रद्धेय डा० राजेन्द्र कुमार पुरवार की हृदय से आभारी हूँ जिनके कुशल एवं विद्वता पूर्ण निर्देशन में मैं यह शोध कार्य पूर्ण कर सकी। मैं श्रीमती (डा०)जयश्री पुरवार, विभागाध्यक्ष राजनीति विज्ञान, दयानन्द वैदिक कालेज उरई के प्रति आभार प्रकट करती हूँ जिन्होंने अपने अमूल्य सुझावों और आत्मिक स्नेह से मुझे शोध कार्य में सहायता की । मै विशेषरूप से आभारी हूँ भाषा के सम्पादक डा० वेद प्रताप वैदिक की जिन्होंने उपयोगी एवं अमूल्य मार्गदर्शन व परामर्श देकर शोध-प्रबन्ध को प्रारम्भ करने में नई दिशा दी।

मैं भारतीय समाज विज्ञान अनुसंधान परिषद् की आभारी हूँ जिसने मुझे शोध कार्य के लिए छात्रवृत्ति प्रदान की। इस शोध में इण्डियन स्कूल ऑफ इण्टरनेशनल स्टडीज़ के सप्रू हाउस स्थित पुस्तकालय का विशेष योगदान है। वहाँ अपेक्षित जानकारी में मिले सहयोग के लिए मै पुस्तकालयाध्यक्ष तथा दक्ष स्टाफ सदस्यों का हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ। अन्य कई पुस्तकालयों के अधिकारी और कर्मचारी भी धन्यवाद के पात्र हैं, जिनमें नई दिल्ली का संसदीय पुस्तकालय, राष्ट्रीय संग्रहालय, विदेश मन्त्रालय पुस्तकालय, तीन मूर्ति पुस्तकालय, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय का केन्दीय पुस्तकालय, दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी, समाज विज्ञान अनुसंधान परिषद् पुस्तकालय, अमरीकन सेण्टर लाइब्रेरी एवं हाउस ऑफ सोवियत सांइस कल्चर एण्ड आर्ट में स्थित पुस्तकालय की आभारी हूँ, जिन्होंने मुझे न केवल पुस्तकालय में अध्ययन करने की अनुमति प्रदान की, अपितु अध्ययन में आने वाली समस्त बाधाओं को अपने सहयोग व मार्गदर्शन से यथासम्भव दूर किया और मेरे मनोबल को बनाए रखा। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के भाषाई सुधार में डा० सुरेन्द्र कुमार शर्मा ने जो सहयोग किया, मैं उनका अभार व्यक्त करती हूँ।

मै अपने पिता श्री राधेश्याम गुप्त की अवर्णनीय रूप से आभारी हूँ जिन्होंने मुझे यथेष्ट प्रोत्साहन देकर इस कार्य को पूर्ण करने में सहायता की। मै अपनी मां श्रीमती विमला देवी की ऋणी हूँ जिन्होंने अपना नैतिक समर्थन देकर मेरी संघर्ष की शक्ति को संचित किया। मै अपने पति श्री राकेशकुमार गुप्त के प्रति अत्यन्त कृतज्ञ हूँ जिनके उचित मार्गदर्शन व पूर्ण सहयोग से मैं इस शोध कार्य को अन्तिम रूप दे सकी। मैं अपने श्वसुर श्री बद्रीप्रसाद गुप्त व सास श्रीमती सावित्री देवी तथा देवर अरविन्द की हृदय से आभारी हूँ जिन्होंने मुझे इस कार्य को पूर्ण करने की प्रेरणा दी। मैं अपने चाचा डा० सुरेश चन्द्र व श्री रमेश चन्द्र गुप्त और चाची जी तथा फूफा श्री हरिदास गुप्त एवं बुआ जी का विशेष आभार मानती हूँ जिनकी स्नेहपूर्ण सहायता मेरे लिए सदा सुलभ रही। मै अपनी बहनों श्रीमती सुधा, सुनीता, सन्ध्या, स्मिता, ईशा, सपना व भाई अमित के प्रति भी कृतज्ञ हूँ जिन्होंने इस शोध प्रबन्ध को तैयार करने में मुझे अपना अमूल्य सहयोग प्रदान किया। इस शोध-प्रबन्ध के लेखन काल में अपने बच्चों नीति व विशाल के निजी समय व आनन्द में से जो खींचतान की उसका क्या प्रतिदान किया जाए।

प्रस्तुति

अर्चना गुप्ता

विषय-सूची

प्रथम अध्याय

प्रथम अध्याय

प्रस्तावना

दक्षिण एशिया का बिगड़ता हुआ सुरक्षा वातावरण दिन-प्रतिदिन जटिल होता जा रहा है। यद्यपि इस क्षेत्र में महाशक्तियों के मध्य चल रहा शीत युद्ध समाप्त हो चुका है, किन्तु कई अन्य ध्रुव अपने शक्ति विस्तार में संलग्न हैं, जिनकी गतिविधियों से निश्चित रूप से स्थिति विस्फोटक हुई है। दूसरी ओर विश्व की ध्रुवीय शक्ति अमेरिका एशियाई सम्मोहन को लेकर इस क्षेत्र के राष्ट्रों पर अपना वर्चस्व बनाए रखना चाहता है। शक्तिशाली सोवियत संघ के पतन के बाद चीन का प्रभाव दक्षिण एशिया में काफी बढ़ा है। विघटन से पूर्व सोवियत संघ सुरक्षा की दृष्टि से संतुलन का काम करता था। सोवियत संघ के पतन से जहाँ दक्षिण एशिया में भारत की स्थिति कमजोर हुई है, वहीं अब इस क्षेत्र में चीन की शक्ति को चुनौती देने वाली कोई शक्ति नहीं रही। परस्पर विश्वास के अभाव में दक्षिण एशियाई राष्ट्र अपनी शक्ति का विस्तार कर रहे हैं। पाकिस्तान, चीन व अमेरिका के व्यापक कूटनीतिक व सैन्य सहयोग से भारत के प्रति विरोधी रूख अपनाए हुए है। वह भारत को विखण्डित करने का प्रयास कर रहा है। पाकिस्तान की इन गतिविधियों से सम्पूर्ण दक्षिण एशिया में भय व तनाव व्याप्त है। दक्षिण एशियाई देशों की सामाजिक व आर्थिक स्थिति में सुधार हेतु आवश्यकता है- शान्ति और स्थायित्व की, न कि शस्त्रों की खरीद फरोख्त की।[1] दक्षिण एशिया का महत्व उसकी आर्थिक व सैनिक शक्ति पर निर्भर करता है। इस दिशा में भारत का उत्तरदायित्व व योगदान सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। वर्तमान समय में भारत पड़ोसी देशों की सभी आर्थिक व सैनिक आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर सकता। ऐसी स्थिति में दक्षिण एशियाई देश बड़ी शक्तियों की ओर झुकेंगे ही। जब तक ये देश क्षेत्रीय आर्थिक सहयोग और क्षेत्रीय सामूहिक सुरक्षा को नहीं स्वीकारते, तब तक सुदृढ़ स्थिति की आशा नहीं की जा सकती।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद दक्षिण एशियाई देश एक-एक कर तेजी से ब्रिटिश उपनिवेशवाद से मुक्त होते गए।[2] 1947 में इस उपमहाद्वीप में पाकिस्तान के जन्म ने द्वितीय विश्व युद्ध में विजयी शक्तियों का ध्यान इस ओर आकर्षित किया। किन्तु पड़ोसी देश अफगास्तिान के लिए

---

1. इण्डियाज व्यूज ऑन द सिचुएशन "प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के लोकसभा में प्रसारित किए गए वक्तव्य (अक्टूबर 1981)" भारत सरकार द्वारा आकल्पित एवं प्रकाशित, नई दिल्ली, पृ. 90-91
2. गुजराल इन्द्र कुमार, "इतिहास के आईने में अफगानिस्तान-सोवियत उपस्थिति एक पक्षीय नहीं है", दिनमान साप्ताहिक, 12-18, अगस्त 1984, पृ. 36-37

स्वतन्त्र तथा मित्र देश भारत का उदय अधिक फायदे तथा खुशी की बात थी।[3]

(क) दक्षिण एशिया के देश व उनका महत्व

भारत एशिया महाद्वीप के दक्षिण में स्थित एक विशाल देश है। वह विशालता की दृष्टि से पाकिस्तान से चार गुणा बड़ा है। जनसंख्या की दृष्टि से बंगला देश से आठ गुणा अधिक है और सम्पूर्ण दक्षिण एशिया का तीन गुणा भाग है।[4] भारत की सीमाओं पर पाकिस्तान, अफगानिस्तान, रूस, नेपाल, चीन, बर्मा, भूटान, बंगलादेश व श्रीलंका स्थित हैं। भारत का सामरिक महत्व इसलिए भी अधिक है क्योकि वह जल मार्ग द्वारा विश्व के सभी महाद्वीपों से जुड़ा है। 10 मार्च, 1950 को लोकसभा में भाषण करते हुए पं0 नेहरू ने कहा था कि हम एशिया के सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण भाग हिन्दमहासागर के मध्य स्थित हैं। अतीत व वर्तमान में भारत सम्पूर्ण एशिया से जुड़ा है, इसलिए भारत उनकी समस्याओं व उनके प्रकरणों को अनदेखा नहीं कर सकता।[5] जबकि अफगानिस्तान एशिया का दूसरा छोटा देश है। अपनी भौगोलिक स्थिति व रूस से बड़ी सीमा से जुड़ा होने के कारण उसने इस क्षेत्र के इतिहास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।[6] किन्तु समुद्री मार्ग पर उसका अधिकार न होने के कारण वहाँ परराष्ट्र निर्भरता बनी रही है। अत: वह दक्षिण एशिया में अपनी स्थिति को देखते हुए एशियाई देशों में परस्पर विश्वास तथा सहयोग चाहता है। भारत की सीमा पर बसे दक्षिण एशियाई देशों में चीन व पाकिस्तान शक्तिशाली देश हैं, किन्तु उनसे भारत के कटुतापूर्ण सम्बन्ध हैं। अन्य देश नेपाल, भूटान, बंगलादेश, मालदीव, श्रीलंका, बर्मा एवं अफगानिस्तान से भारत के सम्बन्ध सामान्य व मधुर हैं।

चीन

चीन विश्व का सबसे बड़ी जनसंख्या वाला तथा प्राकृतिक साधनों से सम्पन्न देश है। 1949 में साम्यवादी शासन व्यवस्था स्थापित हो जाने के पश्चात् चीन में एक शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार की स्थापना हुई। विश्व के इस महत्वपूर्ण क्षेत्र के प्रतिनिधित्व एवं भारत के सतत् समर्थन

3. गुजराल इन्द्र कुमार, "इतिहास के आईने में अफगानिस्तान-सोवियत उपस्थिति एक पक्षीय नहीं है", दिनमान साप्ताहिक, 12-18, अगस्त 1984, पृ. 36-37
4. गुप्ता, भवानी सेन, "साउथ एशिया, द बिग वैदर सैन्ड्रोम", इण्डिया टूडे, खण्ड 9, अंक 8, अप्रैल 16-30, 1984, पृ. 122, 27
5. नेहरू, जवाहरलाल, "इण्डियाज फॉरेन पॉलिसी सिलेक्टिड स्पीचिज", सितम्बर 1946-अप्रैल 1961 (नई दिल्ली 1963) पृ. 22
   - अप्पादोराय, ए0., एम0एस राजन, "फॉरेन पॉलिसी एण्ड रिलेशन्स", दिल्ली 1985, पृ. 10
6. आर्यवर्त्त, (पटना) 5 मार्च, 1978

से चीन को संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् में स्थायी सदस्य का स्थान प्राप्त हुआ।[7] किन्तु चीन ने विशाल देश भारत के प्रति सदैव अपने वैमनस्य को बनाए रखा। 1962 में भारत पर युद्ध थोप कर उसने अपनी शक्ति की श्रेष्ठता सिद्ध करने का प्रयास किया और इसमें उसे सफलता भी मिली। शीतयुद्ध के प्रारम्भ में उसने जहाँ अमेरिका व पाकिस्तान के साथ गठजोड़ कर दक्षिण एशिया में शक्ति संतुलन उत्पन्न किया वहीं अफगान मुजाहिदों को हथियार तथा प्रशिक्षण प्रदान कर स्थिति को विस्फोटक बनाया। चीन-पाकिस्तान सम्बन्ध प्रारम्भ से ही भारत की सुरक्षा के लिए चुनौती रहे हैं। दोनों परमाणु सम्पन्न देशों द्वारा दक्षिण एशिया को प्रदूषित होने से बचाने के लिए भारत-चीन सम्बन्धों की अत्यधिक आवश्यकता है।[8]

पाकिस्तान

धार्मिक कट्टरता, मुस्लिम नेताओं के स्वार्थ व ब्रिटेन की 'फूट डालो राज्य करो' की नीति का परिणाम ही पाकिस्तान का निर्माण था। भारत विभाजन ने स्वाभाविक रूप से कुछ ऐसी समस्याएं पैदा की, जिससे स्पष्ट हो गया था कि दोनों देश मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों का निर्वाह नहीं कर सकेंगे। इस प्रकार दोनों देशों के मध्य द्वेष व मनमुटाव इतिहास या ब्रिटेन की देन है।[9] क्षेत्रफल की दृष्टि से पाकिस्तान भारत का एक चौथाई और आबादी की दृष्टि से आठवां हिस्सा है, फिर भी पाकिस्तान का रक्षा खर्च भारत से आधा है। जो कि अनुपात की दृष्टि से किसी भी कोण से उचित नहीं है।[10] वह तीन बार भारत से युद्ध कर चुका है, किन्तु सफल नहीं हुआ। पाकिस्तान को दक्षिण एशिया में शक्ति संतुलन बनाए रखने में पश्चिमी देशों, अमेरिका, चीन व कुछ मुस्लिम देशों का समर्थन प्राप्त है। दक्षिण एशिया में चीन व पाकिस्तान की गतिविधियां तथा भारत के साथ उसके सम्बन्धों का विस्तृत विवरण आगामी अध्यायों में किया गया है।

बंगला देश

बंगाल की खाड़ी में स्थित, इस महत्वपूर्ण देश का निर्माण ही भारतीय सहयोग व पाकिस्तान के विभाजन से हुआ था। इसलिए इस छोटे देश की भारत के प्रति कोई दुर्भावना नहीं रही। बंगलादेश के साथ हमारे द्विपक्षीय सम्बन्धों में और खास तौर पर आर्थिक सहयोग के क्षेत्र

---

7. श्रीवास्तव, डा0 एल0एस0, वी0पी0 जोशी, "अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध", मेरठ 1983, पृ. 119-123
8. कुमार, सतीश, "चीन का बढ़ता दायरा" नवभारत टाइम्स, 21 मार्च, 1995
9. श्रीवास्तव, देखिए क्र. 7, पृ. 168
10. कुमार, रंजीत, "तूफान से पहले का सन्नाटा" नवभारत टाइम्स, 4 दिसम्बर, 1994

में निरन्तर सुधार हुआ है। किन्तु कुछ लम्बे समय से चली आ रही समस्याएं बनी रहीं; जैसे फरक्का में जल प्रवाह को बढ़ाने, बंगलादेश के निकटवर्ती भारतीय प्रदेशों में बंगलादेशी लोगों का बड़े पैमाने पर घुस आना और भारतीय नागरिकों की सम्पत्ति से सम्बन्धित दावों के समाधान का प्रश्न आदि।[11]

नेपाल

दक्षिण एशिया में सुरक्षा की दृष्टि से नेपाल भारत की सीमा का महत्वपूर्ण प्रहरी है। दोनों देशों के बीच भौगोलिक, सांस्कृतिक समानताएं है। तत्कालीन कम्युनिस्ट सरकार की स्थापना के पश्चात् वहाँ चीन की गहरी रूचि भारतीय हितों के प्रतिकूल प्रतीत होती है।[12] चीन के प्रभाव से बचने के लिए भारत भूवेष्टित राष्ट्र नेपाल की विभिन्न क्षेत्रों में मदद करता रहा है, जैसे- कृषि, जलविद्युत परियोजनाओं, बांध परियोजनाओं तथा दैनिक उपयोग की वस्तुओं को रियायती दरों पर उपलब्ध कराना आदि है। पारस्परिक सम्बन्धों की दृष्टि से तत्कालीन प्रधानमन्त्री श्री मनमोहन अधिकारी ने भारत यात्रा पर बताया कि नेपाल अपनी धरती से भारत विरोधी गतिविधियाँ नहीं चलने देगा, तथापि नेपाल में विशाल देश भारत से घबराकर उसकी नीतियों के प्रति विरोधी अभियान भी समय-समय पर चलते रहे हैं।

भूटान

भूटान दक्षिण एशिया में बसा व भारत की सीमा से लगा ऐसा पड़ोसी है जिसके साथ सम्बन्धों में प्रत्यक्षत: कभी कोई तनाव नहीं आया।[13] नेपाल की तरह ही भूटान के साथ भी भारत परस्पर सूझ-बूझ व सद्भाव के साथ सहयोग के क्षेत्रों में विस्तार की कोशिशें करता रहा है।[14] वह भूटान के विकास कार्यक्रमों में प्रचुर सहयोग व अन्य उपयोगी सामग्री देता है। भूटान की सामरिक अवस्थिति का लाभ उठाने के लिए चीन ही नहीं, अमेरिका, रूस तथा अन्य यूरोपीय राष्ट्र भी लालायित हैं। यदि भूटान को एकदम खोल दिया जाए तो वह भारतीय सुरक्षा के लिए खतरनाक सिद्ध हो सकता है। लेकिन एक सार्वभौम राष्ट्र को, जो कि संयुक्त राष्ट्र संघ का सदस्य है, भारत एक सन्धि के आधार पर कितना नियन्त्रित कर सकता है, यह प्रश्न भी विचारणीय है।

---

11. वार्षिक रिपोर्ट, 1983-84, भारत सरकार द्वारा आकल्पित व प्रकाशित, पृ. 4-5
12. कुमार, सतीश, देखिए क्र. 8
13. वैदिक, वेद प्रताप, "भारतीय विदेश नीति, नए दिशा संकेत", (दिल्ली 1980), पृ. 35-36
14. वार्षिक रिपोर्ट, 1983-84, पृ. 5-6

श्रीलंका

हिन्द महासागर के किनारे तथा भारतीय सीमा पर बसे देश श्रीलंका का रूख भारत के प्रति प्राय: अनुकूल नहीं रहा। किन्तु जब से श्रीलंका ने स्वयं को गुटनिरपेक्ष घोषित किया, भारत से उसके सम्बन्ध सामान्य होते गए। पर श्रीलंका अपने मन से यह डर नहीं निकाल पाया कि भारत उसे निगल जाएगा।[15] इसका प्रमाण यह है कि श्रीलंका, भारत के साथ द्विपक्षीय आर्थिक सहयोग के बजाय बहुपक्षीय या एशियाई साझा बाजार के अन्तर्गत आर्थिक सम्बन्धों को बढ़ाने पर जोर देता है।[16] किन्तु विश्व में हो रहे परिवर्तन के दौर में तत्कालीन राष्ट्रपति श्रीमती चन्द्रिका कुमार तुंग ने भारत के साथ अच्छे सम्बन्धों का प्रस्ताव रखा है। खुले बाजार व्यवस्था के तहत उन्होंने भारतीय व्यापारियों को श्रीलंका में महत्वपूर्ण क्षेत्रों में निवेश के लिए आमन्त्रित किया है। किन्तु यह सत्य है कि भारत में श्रीलंका के साथ सम्बन्धों को प्राय: शंका की दृष्टि से देखा जाता रहा है क्योंकि दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय संघ व अन्य महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर श्रीलंका का रूख पाकिस्तान की ओर झुकता प्रतीत होता है।

मालदीव व बर्मा

भारत की सीमा पर स्थित छोटा-सा देश मालदीव अधिकांशत: भारतीय सहयोग व सहायता पर निर्भर है। उनके बीच राजनैतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक सम्बन्ध रहे हैं। दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन के अन्तर्गत विभिन्न क्षेत्रों में मालदीव व भारत ने निकट सहयोग से कार्य किया है।[17]

पड़ोसी बर्मा से भी भारत के सम्बन्ध परम्परागत मैत्रीपूर्ण और सहयोग के बने रहे हैं। इन सम्बन्धों को और अधिक उदारीकरण की आवश्यकता है। किन्तु इसकी जिम्मेदारी बर्मा से अधिक भारत पर है।[18] भारत अपने इन छोटे पड़ोसी देशों के प्रति समता मूलक और उदारतापूर्ण नि:स्वार्थ सहयोग करता रहा है।

इस प्रकार हिमालय की ओर से भारत की सुरक्षा की दृष्टि से जहाँ नेपाल, बर्मा व भूटान का विशेष महत्व है वहीं जल मार्गो की ओर से बंगला देश व श्रीलंका की महत्वपूर्ण स्थिति को अनदेखा नहीं किया जा सकता। अन्त में, यह सत्य है कि अपनी भौगोलिक व सामरिक स्थिति के कारण भारत दक्षिण एशिया का मजबूत स्तम्भ है तो इस क्षेत्र में अफगास्तिान के

15. वैदिक, देखिए क्र. 13, पृ. 33-34
16. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 5 अप्रैल, 1978
17. वार्षिक रिपोर्ट, 1983-84, विदेश मन्त्रालय, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित, पृ. 8
18. वैदिक, वेद प्रताप, "भारत-बर्मा सम्बन्ध-नए आयामों की खोज", नवभारत टाइम्स, 18 अगस्त, 1977

महत्व को भी अस्वीकारा नहीं जा सकता। दोनों देश विचारों व विश्वास के मज़बूत बन्धन में बंधे रहे हैं।

दक्षिण एशिया में बड़ी शक्तियों की राजनीति

दक्षिण एशियाई राजनीति में भारत, पाकिस्तान, चीन, अमेरिका तथा रूस, इन पांचों देशों के प्रमुख हित रहे हैं। स्वतन्त्रता से पूर्व दक्षिणी एशियाई राजनीति में ब्रिटेन के साथ-साथ रूसी गतिविधियाँ भी जारी रहीं, किन्तु द्वितीय विश्व युद्ध के उपरान्त रूस के अतिरिक्त अमेरिका का विश्व राजनीति में प्रमुख शक्ति के रूप में पदार्पण हुआ। ये महाशक्तियाँ अपने-अपने स्वार्थो के लिए दक्षिण एशिया को बाँटने में लग गयी। पाकिस्तान ने, जिसका प्रारम्भ से ही पश्चिमी शक्तियों ने समर्थन किया था, इस क्षेत्र में शक्ति सन्तुलन बनाये रखने के लिए[19] अमरीकी सैन्य संगठनों; नाटो, सीएटो व सेन्टो की सदस्यता ग्रहण कर ली। दक्षिण एशिया में अमेरिका का प्रभाव बढ़ रहा था। स्वाभाविक था, कि रूस अपने पड़ोसी अफगानिस्तान में उसका प्रभुत्व नहीं देखना चाहेगा।[20] इसलिए सोवियत प्रधानमन्त्री ने कहा कि वे अफगानिस्तान में साम्राज्यवाद को समाप्त करना तथा दक्षिण एशियाई क्षेत्र में शान्ति व सुरक्षा को उन्नत करना चाहते हैं।[21] इस प्रकार दक्षिण एशिया में अपना प्रभुत्व स्थापित करने के लिए जहाँ एक ओर अमेरिका ने पाकिस्तान को चुना वहीं दूसरी ओर रूस ने उसके प्रभुत्व को समाप्त करने के लिए अफगानिस्तान को अपना मोहरा बनाया।[22] जिससे दक्षिण एशिया में अब रूस और अमेरिका का एक समान लक्ष्य हो गया कि चीन के प्रभाव क्षेत्र को बढ़ने से रोकना। इस नीति का प्रथम प्रयोग भारत पर किया गया। 1962 में चीन ने भारत की सीमा के बड़े क्षेत्र को हड़पने की दृष्टि से आक्रमण कर दिया, तैयारी न होने के कारण भारत की पराजय हुई, जिससे भारत की छवि को आघात लगा और चीन इस क्षेत्र की महान शक्ति बन गया। वह भारत की शक्ति को नियन्त्रित करने के लिए उसके पड़ोसी मित्र देशों पर अपना प्रभाव स्थापित करने का भी प्रयास करता रहा है। चीन की इसी नीति के फलस्वरूप अफगानिस्तान इस युद्ध में तटस्थ रहा। 'शत्रु का शत्रु मित्र होता है', इसी आधार पर चीन-पाक मैत्री का सूत्रपात हुआ। इनकी आक्रामक नीतियों के कारण भारत अन्य दक्षिण एशियाई देशों के साथ मित्रता तथा रूस व अमेरिका दोनों से मदद

---

19. गुप्ता, भवानी सेन, "द अफगान सैन्ड्रोम, हाउ टू लिव विद सोवियत पावर", (दिल्ली 1982), पृ. 113
20. ठाकुर, रमेश, "अफगानिस्तान; द रीजन्स फॉर इण्डियाज डिस्टिंक्टिव एप्रोच", राउण्ड टेबिल (280), अक्टूबर 1980, पृ. 422, 432-33
21. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 19, पृ. 124-25
22. वही, पृ. 145

चाहता है।[23]

1965 के भारत-पाक युद्ध के पश्चात् हुए ताशकन्द समझौते द्वारा दक्षिण एशिया की राजनीति में रूस अपनी छवि बना चुका था। अफगानिस्तान ने क्षेत्रीय राजनीति में शान्ति को आधार मानते हुए इस समझौते की प्रशंसा की।[24] अमेरिका ने दक्षिण एशिया से रूसी प्रभाव को समाप्त करने के लिए चीन के साथ आम सहमति कर ली। दूसरी ओर चीन ने भी भारत को सबक सिखाने के लिए पाकिस्तान से गठजोड़ स्थापित कर लिया। ऐसी स्थिति में विभिन्न समझौते द्वारा दक्षिण एशिया में शान्ति की आशा कैसे की जा सकती है? इसी प्रकार 1971 में बंगलादेश के प्रश्न पर भी पाकिस्तान को चीन तथा अमेरिका की ओर से खुला समर्थन मिला। ऐसी स्थिति में भारत का झुकाव रूस की ओर हुआ।[25] यद्यपि अमरीकी राष्ट्रपति निक्सन, कार्टर तथा हेनरी केसिंजर दक्षिण एशिया में भारत को प्रमुख शक्ति स्वीकार करते थे। किन्तु रीगन प्रशासन की दृष्टि में पाकिस्तान का कूटयोजनात्मक महत्व अधिक रहा।

इस प्रकार दक्षिण एशिया में साम्राज्यवादी व विस्तारवादी ब्रिटिश नीतियों के कारण भारत विभाजन और पाकिस्तान के जन्म के साथ ही नित नई समस्याएं जन्म लेती रही हैं। आरोपण-प्रत्यारोपण के साथ ही समझौते भी होते रहे, लेकिन उनकी समस्याएं ज्यों की त्यों बनी रही। फिर भी भारत ने दक्षिण एशिया में शान्ति के प्रयास जारी रखे। 1972 में शिमला समझौता इसी का प्रतीक है। जिसके द्वारा इस क्षेत्र में शान्ति व स्थिरता की आशा की गई। बंगला देश के निर्माण के पश्चात् भारतीय कूटनीति का लोहा माना जाने लगा। साथ ही परमाणु विस्फोट, सिक्किम विलय से भारत की दक्षिण एशिया में गौरवपूर्ण छवि बनी।[26]

चूँकि भारत दक्षिण एशिया की एक महान शक्ति है, इसलिए वह इस क्षेत्र में शान्ति, स्थायित्व तथा विकास चाहता है।[27] उसका साथी अफगानिस्तान भी दक्षिण एशिया में गुटबन्दियों से उत्पन्न तनाव व युद्ध का वातावरण समाप्त कर शान्ति व सहयोग का सुदृढ़ आधार बनाना चाहता है। किन्तु इन प्रयासों में अफगानिस्तान एक सीमित योगदान ही कर सकता है क्योंकि जब तक इस क्षेत्र में राजनैतिक समस्याएं जीवित हैं, क्षेत्रीय सहयोग की आशा कठिन कार्य है।[28]

---

23. वर्नडस,विलियम जे,"कान्टेम्पोरेरी इण्डिया,इण्डिया इन वर्ल्ड पालिटिक्स" एशिया 1968,(न्यूयार्क) पृ. 13
24. काबुल टाइम्स, 11 अक्टूबर, 1966
25. बनर्जी, सुबराता, "इण्डियाज अफगानिस्तान एण्ड द वर्ल्ड, ए स्टडी इन पर्सपेक्टिव", सिकुलर डेमोक्रेसी, खण्ड 13, अंक 3, फरवरी 1980, पृ. 24-25
26. अप्पादोराय, राजन, देखिए क्र. 5, हिन्दुस्तान, 14 सितम्बर, 1978
27. गहलोत, एन0एस0, "इण्डिया एण्ड नान-एलाइनमेन्ट", 7वीं राजस्थान पालिटिकल साइंस कान्फ्रेन्स, 27-28 फरवरी, 1978, पृ. 37
28. वैदिक, वेद प्रताप, "अफगानिस्तान और सोवियत अमेरीकी प्रतिस्पर्धा", (दिल्ली 1973), पृ. 231

मार्च 1975 में अफगानी राष्ट्रपति दाऊद ने दक्षिण एशिया में चीन तथा अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को शस्त्रीकृत किए जाने से उत्पन्न संकट को लेकर क्षेत्रीय सुरक्षा पर विचार-विमर्श हेतु भारत सहित अन्य दक्षिण एशियाई देशों की सद्भावना यात्रा की,[29] जिससे पड़ोसी देशों को परस्पर एक दूसरे के विचारों को जानने का अवसर मिला।

वर्ष 1975 में भारत में हुई आपातकालीन घोषणा की अमेरिका, चीन व पाकिस्तान में निन्दा की गई। अमेरिका के विदेश उपसचिव श्री वारेन क्रिस्टोफर ने कहा कि भारत को दक्षिण एशिया का नेतृत्व करना चाहिए, जिससे उसके आकार और गुरूता का प्रतिबिम्ब बढ़े। इसके प्रत्युत्तर में श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने कहा कि अमेरिका को हथियारों की बिक्री में संयम तथा तनाव कम करने का प्रयास करना चाहिए। पाकिस्तान अपनी स्वतन्त्रता गिरवी रखकर चीन, अमेरिका तथा कूटनीति द्वारा रूस से शस्त्र सहायता प्राप्त कर सम्पूर्ण एशिया को आतंकित कर रहा है।[30] व्यापक तनाव को देखते हुए रूसी प्रधानमन्त्री कोसीगिन ने कहा कि दक्षिण एशिया में शांति व सुरक्षा के लिए एशियाई देश सामूहिक सुरक्षा जैसी कोई व्यवस्था करें।[31] सितम्बर 1977 में विदेश मन्त्री श्री वाजपेयी की अफगानिस्तान यात्रा के दौरान दोनों ही देशों ने विचार व्यक्त किए कि 'वे दक्षिण एशियाई देशों से सामान्य सम्बन्धों के साथ ही उनकी उन्नति व समृद्धि के लिए प्रयास करते रहेंगे।[32] यदि वास्तव में दक्षिण एशिया में शान्ति व सहयोग का मार्ग प्रशस्त हो जाए तो हम सब जिन पर विकास का समान बोझ है, अपने साधनों को विनाश से हटाकर विकास में लगा सकेंगे'।[33]

अफगानिस्तान में लाल सेना की मौजूदगी का दक्षिण एशिया के सुरक्षा माहौल को बिगाड़ने में अहम् स्थान रहा।[34] भारत पाकिस्तान सहित दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय संगठन के सभी सदस्य

---

29. रेड्डी, जे0के0, "साउथ एशिया सिक्योरिटी प्राब्लम्स फिगर इन पी.एम.-दाउद", द हिन्दू (मद्रास), 11 मार्च 1975, नवभारत टाइम्स, 10 मार्च, 1975, हिन्दुस्तान टाइम्स, 11 मार्च, ट्रिब्यून (चंडीगढ़) 17 मार्च, 1975, एक ओर पाकिस्तान की सैन्य तैयारी से इस क्षेत्र में विशेषकर सीमान्त देश भारत व अफगानिस्तान के लिए युद्ध जैसी स्थिति उत्पन्न हो रही थी, वहीं दूसरी ओर पाक राष्ट्रपति भुट्टो द्वारा आरोप-प्रत्यारोप लगाए जा रहे थे। ऐसी स्थिति में संकट समाधान के लिए राष्ट्रपति दाउद ने दक्षिण एशियाई देशों की यात्रा की।
30. द स्टेट्समैन (दिल्ली) 13 मार्च, 1975
31. हिन्दुस्तान टाइम्स, 13 सितम्बर, 1978
32. इण्डिया एण्ड फॉरेन रिव्यू, खण्ड 14, अंक 23, 1977, पृ. 6-7
    - ट्रिब्यून (चण्डीगढ़) 27 सितम्बर, 1978
33. भाटिया, पी0आर0, "भारत की विदेश नीति" (1979), पृ. 206
34. हियरिंग बिफोर द सब कमेटी ऑन एशिया एण्ड पैसिफिक अफेयर्स, हाउस ऑफ रिप्रिजेन्टेटिव-26वाँ कांग्रेस प्रथम सत्र, 26 सितम्बर, 1979, सहायक सचिव हेराल्ड एच0 साउण्डर्स द्वारा पूर्व और दक्षिण एशियाई सम्बन्धों पर जारी किया गया वक्तव्य, पृ. 32-33

देशों ने इसे अस्वीकार तुरन्त रूसी सेनाओं की वापसी का प्रस्ताव रखा।[35] किन्तु भारत का मत था कि पाकिस्तान द्वारा भारी मात्रा में शस्त्रों का संग्रह रूसी हस्तक्षेप से कम खतरनाक नहीं है। वे दक्षिण एशिया में शान्ति के लिए गुटनिरपेक्ष सिद्धान्तों को स्वीकार करते हैं।[36] अमेरिका का मत था कि जिया सरकार रूसी हमले के डर से अमेरिका से शस्त्र सहायता प्राप्त कर रही है। अत: दिल्ली व इस्लामाबाद को अपने सामान्य सम्बन्धों में सुधार करना चाहिए।[37] चीन ने भी उनकी इन नीतियों का समर्थन किया।[38] इसलिए प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी ने कहा कि जब तक अमेरिका दक्षिण एशिया में अपने निजी हितों से ऊपर उठकर विश्वसनीयता का प्रदर्शन नहीं करता, तब तक भारत उसे अधिक महत्व नहीं देगा। भारत की प्रतिरक्षा व कूटनीति के प्रयासों का केन्द्र बिन्दु दक्षिण एशिया है,[39] जबकि अमेरिका, पाकिस्तान को शस्त्र सज्जित कर शीत युद्ध को बढ़ावा देना चाहता है। उनके पश्चात् प्रधानमन्त्री राजीव गांधी ने भी दक्षिण एशिया में शान्ति का समर्थन कर इस क्षेत्र में परमाणु बमों के प्रयोग का विरोध किया।[40] उनका मत था कि इस क्षेत्र में नए-नए हथियारों के आगमन से आतंक तथा भय व्याप्त हुआ है।

दक्षिण एशिया में बढ़ते हुए शक्ति सन्तुलन के कारण ही भारत अफगान संकट के प्रति प्रभावशाली भूमिका नहीं निभा सका था। वास्तव में यदि भारत इसमें सक्रिय रहता तो गत्यवरोध की इस स्थिति को तोड़ने में अहम् भूमिका निभा सकता था, पर हमने दबी-छिपी नीति अपनाई और दक्षिण एशिया में शस्त्र होड़ व तनाव का माहौल बनने दिया। इसका प्रमुख कारण जहाँ भारत-रूस सम्बन्ध थे, वहीं दूसरा बड़ा कारण दक्षिण एशिया की तत्कालीन स्थिति भी थी।[41] भारत तथा अफगानिस्तान प्रारम्भ से ही दक्षिण एशिया में शान्ति के लिए पाकिस्तान से मित्रवत् सम्बन्धों को बनाए रखने के प्रयास करते रहे हैं। अत: पाकिस्तान सरकार को भी चाहिए कि वह अमेरिका व चीन की निर्भरता पर विश्वास न करके इस महाद्वीप में शान्ति व विकास के लिए भारत के साथ सहयोग करे।

---

35. स्टीफेन, पी0 कोहेन, "साउथ एशिया आफ्टर अफगानिस्तान" (वाशिगंटन 1985) पृ. 178,
- बुद्धराज़, विजयसेन, "इण्डियाज रिसपोन्स टू द क्राइसिस इन अफगानिस्तान" जनरल ऑफ पालिटिक्स, खण्ड 4, अंक 1, जनवरी-जून 1980, पृ. 4
36. एशियन रिकार्डर, खण्ड 26, अंक 8, फरवरी 16-25, 1980, पृ. 15324-25
37. लिसले, एच0 गेल्व एण्ड रिचर्ड एच0 उलेमान, "कीपिंग एट द खैबर पास" फॉरेन पॉलिसी, 1980, पृ. 17-18
38. रतनाम, परेला, "अफगानिस्तान अनसरटेन फ्यूचर"(दिल्ली 1981) पृ. 77-78
39. प्रसाद, विमल, "इण्डिया एण्ड अफगान क्राइसिस" इण्टरनेशनल स्टडीज, खण्ड 4, अंक 19, अक्टूबर-दिसम्बर 1980, पृ. 635-41 भारत की सुरक्षा स्वयं दक्षिण एशिया की क्षेत्रीय सुरक्षा पर निर्भर करती है।
40. गांधी, राजीव, "इण्डिया एण्ड द यू0एस0ए0 कोआपरेशन ऑन कॉमन आइडियाज", प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी की अमेरिका यात्रा के दौरान राष्ट्रीय प्रेस क्लब में प्रश्नोत्तर, वाशिगंटन, 14 जून, 1985
41. व्यास, हरिशंकर, "भाई-भाई में करीबी और दोस्त की चिन्ता" जनसत्ता, 14 दिसम्बर, 1987

दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन की स्थापना

दक्षिण एशिया हिन्द महासागर का प्रवेश द्वार है। यहाँ के देश अधिकांशत: अपनी उन्नति, प्रगति व निरन्तर विकास के लिए बड़ी शक्तियों की प्रौद्योगिकी पर निर्भर रहे हैं। इस निर्भरता का बड़ी शक्तियों ने सदैव अपने स्वार्थों के लिए प्रयोग किया। एशिया में हो रहे महत्वपूर्ण परिवर्तन और संक्रमणकारी युग में दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन की आवश्यता अनुभव की गई। जिससे इस क्षेत्र के देश परस्पर विश्वास व सहयोग के आधार पर एक दूसरे की आवश्यकताओं की पूर्ति में स्वयं सहायक हो सकें। पं0 जवाहर लाल नेहरू ने कहा था कि भारत अपनी कूटनीतिक व भौगोलिक स्थिति के कारण सम्पूर्ण एशिया से इस प्रकार जुड़ा है कि किसी एशियाई क्षेत्रीय संगठन के गठन में भारत के महत्व को नकारा नहीं जा सकता।[42] यही कारण था कि दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन की स्थापना के प्रयासों में भारत की प्रमुख भूमिका रही।

1983 में दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन की दिशा में एक ऐतिहासिक कदम उठाया गया। सात दक्षिण एशियाई देशों की विदेश मन्त्रियों की पहली बैठक अगस्त 1983 में नई दिल्ली में हुई। जिसमें एक घोषणा द्वारा दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन के व्यापक लक्ष्य एवं सिद्धान्त निर्धारित किए गए।[43] इस सहयोग संगठन में जिन देशों को सम्मिलित किया गया उनमें बंगलादेश, भूटान, भारत, मालदीव, नेपाल, पाकिस्तान और श्रीलंका थे। 27 फरवरी, 1984 को नई दिल्ली में दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन की बैठक के पहले सत्र का उद्घाटन करते हुए भारतीय विदेश मन्त्री श्री पी0 वी0 नरसिंहाराव ने कहा कि यह बैठक ऐसे समय हो रही है जब विश्व में बढ़ रही शस्त्र होड़ से मानवता के स्वरूप पर अपूर्व संकट छाया हुआ है, किन्तु हम शान्ति, मित्रता तथा विकास चाहते हैं। पिछली आधी सदी से विश्व की अर्थव्यवस्था गम्भीर संकट में फंसी हुई है। स्थिति में सुधार के लिए विकासशील देशों को अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक आज्ञा पत्र की आवश्यकता है, जिससे उनको विकास व उन्नति के लिए नए साधन प्राप्त हो सकें। हमारी समस्याएं तथा अभिलाषायें समान हैं। अत: हमारे लक्ष्यों की पूर्ति आत्म विश्वास से इस संगठन द्वारा ही पूर्ण की जा सकती है। इसलिए इन देशों में राजनैतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक सम्बन्ध स्थापित होना चाहिए।[44]

किन्तु दक्षेस का विधिवत रूप में गठन लम्बी प्रक्रिया के बाद हुआ। इन्दिरा गांधी के

---

42. नेहरू, जवाहरलाल, देखिए क्र. 5
43. वार्षिक रिपोर्ट, 1983-84, विदेश मन्त्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, पृ. 64
44. वही, खण्ड 30, अंक 2, फरवरी 1984, पृ. 71-74

रहते यह मामला औपचारिकताओं से आगे नहीं बढ़ा। प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी ने विचार को पनपने दिया मगर सहमति इसलिए नहीं दी क्योंकि भारत अपनी भूमिका के प्रति अनिश्चित था।[45] दूसरी ओर संगठन के छह देशों की सीमा से जुड़े जिस भारत की पहल पर इस संगठन की स्थापना हुई थी उसी के प्रति पड़ोसी देशों का रवैया अविश्वास पूर्ण रहा। मनोवैज्ञानिक तौर पर यह स्पष्ट है कि बड़े एवं समृद्ध पड़ोसी देश के प्रति ईर्ष्या की भावना अन्य देशों में व्याप्त रहती हैं।[46]

यद्यपि दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन से आशा व्यक्त की गई थी कि यह सहयोग के आधार पर सभी के लिए उपयोगी होगा।[47] किन्तु इस सम्मेलन में अफगानिस्तान व बर्मा को नहीं मिलाया जाना उसके अधूरेपन को दर्शाता है। अफगानिस्तान द्वारा प्रायः इसका सदस्य बनने की इच्छा व्यक्त की जाती रही, किन्तु पाकिस्तान की कूटनीतिक गतिविधियों तथा कड़े विरोध के कारण ही अफगानिस्तान को इस संगठन का सदस्य नहीं बनाया जा सका।

प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी की दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सहयोग बढ़ाने की कोशिश प्रारम्भ से ही रही। उनके सतत् प्रयासों तथा पड़ोसी देशों के सहयोग से दिसम्बर 1985 में ढाका में दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन (सार्क) का विधिवत गठन हुआ। इस संगठन में सम्मिलित देशों ने संकल्प लिया कि वे पारस्परिक सहयोग करेंगे और अपने द्विपक्षीय मतभेदों व दुराव को बैठक में नहीं रखेंगे।[48] बैठक में सभी निर्णय एकमत से पारित किए जाएँगे। अब तक सभी दक्षेस सदस्य देशों के यहाँ बैठक हो चुकी है। जिससे सदस्य देशों में परस्पर आर्थिक सम्बन्धों में वृद्धि हुई है।

इस प्रकार यद्यपि दक्षेस प्रारम्भ से ही उलझनों से घिरा रहा, तथापि उसके महत्व से इन्कार नहीं किया जा सकता। यह दक्षिण एशिया के सात राष्ट्रों के बीच सम्पर्क की एक मात्र कड़ी है। यदि पारस्परिक वैमनस्य और विरोधों को आड़े न आने दिया जाय तो यह संगठन इस क्षेत्र में आर्थिक सहयोग के संवर्द्धन तथा सामूहिक क्षेत्रीय नीति के निर्धारण में ऐतिहासिक भूमिका का निर्वाह कर सकता हैं। दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय संगठन के दो मुख्य देश ही (भारत-पाकिस्तान) न केवल अन्य देशों के साथ सहयोग तथा उन्नति में योगदान दे सकते हैं,

---

45. व्यास, हरिशंकर, "सात बहनों के घोंसले की डाल" जनसत्ता, 19 नवम्बर, 1986
46. सिंह, हरिकिशोर, " दक्षेस पर दयनीयता - संदेह, शंका और अविश्वास का माहौल", दिनमान, 31 अगस्त, 1989, पृ. 66-67
47. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 30, अंक 9, सितम्बर 1984, पृ. 267, मिनिस्ट्रीरियल मीटिंग ऑफ द ग्रुप ऑफ 77, विदेश राज्यमन्त्री श्री आर0एन0 मिर्धा का 27 सितम्बर को न्यूयार्क में जारी किया गया वक्तव्य
48. दूरदर्शन समाचार, 1 मई, 1995

बल्कि वे इस क्षेत्र को बड़ी शक्तियों की कूटनीतिक चालों से भी बचा सकते हैं।[49]

किन्तु आज दक्षिण एशियाई देशों के साथ भारत के सम्बन्धों का कारवां एक मुकाम पर जाकर ठहर गया हैं। पाकिस्तान, नेपाल, बंगलादेश, श्रीलंका और यहाँ तक कि भूटान भी 'सार्क' की बैठकों के बावजूद भारत के विरूद्ध एक जुट हुआ दिखाई रहा हैं। हिन्द महासागर शन्ति क्षेत्र, परमाणु अप्रसार, अफगानिस्तान, कम्पूचिया आदि सवालों पर हमारे सारे पड़ोसी एक तरफ और हम दूसरी तरफ खड़े देखते हैं। आपसी मामलों में भी बराबर खींचतान और मनमुटाव का माहौल चल रहा है। क्षेत्रीय स्थिरता व परस्पर समस्याओं के समाधान के लिए भारतीय प्रयासों की आवश्यकता है, तभी पड़ोसी देशों से अच्छे सम्बन्धों की आशा की जा सकती है।[50]

विश्व में हो रहे परिवर्तन के इस दौर में दक्षिण एशिया की राजनीति और क्षेत्रीय समीकरण नए आधार की तलाश में हैं। इसका प्रमुख उदाहरण रूस चीन सम्बन्ध हैं। दक्षिण एशिया में शीत युद्ध के पश्चात् अमेरिका-चीन सम्बन्ध भी महत्वपूर्ण नहीं रहे। ऐसी स्थिति में दक्षिण एशिया में प्रमुख सहयोगी के रूप में भारत को चीन के साथ सीमा विवाद सुलझा लेना चाहिए।[51] अब चीन भी भारत को अपना प्रमुख शत्रु नहीं मानता।[52] इसलिए तत्कालीन प्रधानमन्त्री श्री नरसिंहाराव ने कहा कि विश्व की एक तिहाई आबादी का प्रतिनिधित्व करने वाले भारत और चीन विश्व में शान्ति व विकास के प्रति महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं। यह दोनों देशों का फर्ज भी है। उन्होंने कहा कि भारत बदले हुए अन्तर्राष्ट्रीय परिपेक्ष्य के अनुरूप अपने आपको ढालने तथा अपने राष्ट्रीय हितों को एक औजार के रूप में इस्तेमाल करने के लिए तत्पर है।[53]

पाकिस्तान के अतिरिक्त दक्षिण एशिया में किसी अन्य देश के साथ भारत की आधारभूत समस्याएं नहीं हैं।[54] अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण भारत में कहा जाता है कि पड़ोसी देश नेपाल, श्रीलंका, बर्मा, भूटान, बंगलादेश और अफगानिस्तान आदि से कुछ खोकर भी मित्रता पूर्ण सम्बन्ध स्वयं उसके हित में हैं।[55] मलेशिया और सिंगापुर के साथ भारत के प्रचीन सम्बन्ध हैं। भारत एशियाई देशों की प्रगति में रूचि रखता है, उसका मत है कि वह

---

49. गुप्ता, भवानी सेन, "इण्डो-पाक रिलेशन्स - अन्सैटिल्ड इशू", इण्डिया टुडे, मई 16-31, खण्ड 9, अंक 10, 1984, पृ. 126-31
50. वैदिक, वेद प्रताप, "विदेश नीति-गति है, मगर दिशा स्पष्ट नहीं", धर्मयुग, वर्ष 36, अंक 19, मई 12, 1985, पृ. 13
51. व्यास, हरिशंकर, देखिए क्र. 41
52. मिश्र, आशीष, "शक्ति संतुलन का नया ध्रुव बनाने की तैयारी", नवभारत टाइम्स, 6 मार्च, 1995
53. हिन्दुस्तान, 21 दिसम्बर, 1991
54. गुप्ता, भवानी सेन, "देखिए क्र. 19, पृ. 12
55. अप्पादोराय-राजन, देखिए क्र. 5 पृ. 12

इस क्षेत्र में निःस्वार्थ सेवा करता हैं।[56]

वास्तव में इक्कीसवीं सदी की दौड़ में आगे रहने की सभी देशों की चिन्ता विश्व राजनीति में फेर बदल ला रही है। भू-राजनीति की जगह भू-आर्थिक हालात ले रहे हैं। इसका प्रमुख उदाहरण दक्षिण एशिया जैसे क्षेत्र में भी सहयोग परिषद् काम करने लगी है। कारण आर्थिक मजबूरियां ही हैं। हमें एक ओर बदल रहे राजनैतिक समीकरणों का सामना करना है तो दूसरी ओर अपनी आर्थिक वरीयता के लिए भी कार्य करना है। वास्तव में, दक्षिण एशिया का सामरिक माहौल जितना कम महत्वपूर्ण होगा उतने अधिक विकल्प भारतीय विदेशनीति में होंगे।[57] पाकिस्तान के साथ सम्बन्धों को सामान्य बनाना हमारे लिए कठिन चुनौती है। दक्षिण एशिया में शान्ति व स्थिरता के लिए इन सम्बन्धों की आवश्यकता है।

(ख) भारत का पड़ोसी अफगानिस्तान

भारत ने अपने पड़ोसी देशों के साथ किसी तरह का दुर्व्यवहार (मिथ्याभ्रम) न कर उनके प्रति अपने सम्बन्धों में शान्ति, स्थिरता तथा विश्वास को निर्धारित किया हैं। यह उसकी विदेश नीति का मुख्य तत्व है।[58]

स्वतन्त्रता के उपरान्त भारत का पड़ोसी अफगानिस्तान उसके लिए नया नहीं था। दोनों ही देश इतिहास में समान रूप से भागीदार रहे तथा उनमें घनिष्ट मित्रता रही थी।[59] सीमाओं की समानता के कारण उनके मध्य राजनैतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक सम्बन्धों का सरित प्रवाह बहता रहा।[60] स्वतन्त्रता के पश्चात् अफगानिस्तान पहला देश था जिसने भारत के साथ कूटनीतिक सम्बन्ध स्थापित किए और प्राचीन काल से चली आ रही मित्रता को नया स्वरूप प्रदान किया गया।[61]

भारत विभाजन के पश्चात् उनके मध्य पाकिस्तान का जन्म हो जाने से यद्यपि भारत

---

56. वही, दिनमान, 12 मई, 1968, पृ. 5
57. व्यास, हरिशंकर, देखिए क्र. 41
58. एशियन रिकार्डर, खण्ड 24, अंक 26, 25 जून-1 जुलाई, 1978, पृ. 14373, विदेशमन्त्री श्री वाजपेयी ने विदेश नीति पर एक सेमीनार पर बोलते हुए पड़ोसी देशों के प्रति अपने विचार प्रगट किए - अप्पादोराय-राजन, देखिए क्र. 5 पृ. 610
59. अप्पादोराय-राजन, पृ. 154-55
60. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 2, अंक 2, फरवरी 1959, पृ. 13, अफगान प्रधानमन्त्री दाउद की भारत यात्रा पर प्रधानमन्त्री पं0 नेहरू द्वारा जारी किया गया वक्तव्य
61. नेहरू, देखिए क्र. 5, "अफगानिस्तान ओल्ड कान्टेक्ट रिव्यूड", पृ. 289, प0 नेहरू का 17 मार्च, 1950 को संसद में दिया गया भाषण

व अफगानिस्तान का सीधा सम्बन्ध नहीं रहा, किन्तु परस्पर मित्रता जारी रही।[62] वास्तव में, अफगानिस्तान भारत का ऐसा पड़ोसी है, जिसके साथ हमारे सम्बन्धों में किसी प्रकार की राजनैतिक कटुता का प्रवेश कभी नहीं हुआ। आजादी के पहले अंग्रेज दोनों देशों के शत्रु थे। आजादी के बाद पाकिस्तान के जन्म तथा उसके साथ उत्पन्न हुए कश्मीर तथा पख्तूनिस्तान विवाद ने भारत तथा अफगानिस्तान दोनों को एक दूसरे के निकट आने का नया आधार प्रदान किया। यद्यपि राष्ट्रीय हित को लेकर उन्होंने इन प्रश्नों पर एक दूसरे के प्रति पूर्ण समर्थन व्यक्त नहीं किया, किन्तु दोनों देश पाकिस्तान के विरोधी होने के नाते समयानुसार एक दूसरे की मांगों को उचित समर्थन प्रदान करते रहे।

अफगान सरकार तथा वहाँ की जनता के साथ मित्रवत् घनिष्ठ सम्बन्धों के कारण ही भारत उनकी सुरक्षा, स्वतन्त्रता, सीमाओं की रक्षा के लिए परस्पर विचार-विमर्श करता रहा है। दोनों ही देश गुट निरपेक्षता व संयुक्त राष्ट्र के सिद्धान्तों को स्वीकार करते हैं। वे अपने पड़ोसी देशों से मित्रतापूर्ण सम्बन्धों के साथ ही उनकी स्वतन्त्रता, राष्ट्रीय सुरक्षा व अहस्तक्षेप के प्रति वचनबद्ध हैं।[63] पड़ोसी पाकिस्तान की गतिविधियों से प्राय: दोनों ही देश सशंकित रहे हैं। मार्च 1975 में राष्ट्रपति दाउद ने भारत यात्रा के दौरान विदेशमन्त्री श्री चव्हाण से बातचीत में कहा कि पाक राष्ट्रपति भुट्टो अमरीकी आयुध प्राप्त कर अफगानिस्तान के साथ सहयोग नहीं, तनाव बढ़ा रहे हैं।[64] जुलाई 1976 में प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी की काबुल यात्रा पर दोनों देशों ने चीन व पाकिस्तान सहित उपमहाद्वीप के सभी पड़ोसी देशों से अच्छे सम्बन्धों के लिए आशा व्यक्त की।[65] श्रीमती गांधी ने कहा कि पड़ोसी देशों से भारत ने जो सम्बन्ध सुधार किया है, उसके मूल में किसी के विरूद्ध कोई विरोध की भावना नहीं है। उन्होंने स्पष्ट किया कि किसी देश से मैत्री दूसरे देश के मूल्य पर नहीं हो सकती। राष्ट्रपति दाउद ने उपमहाद्वीप में शान्ति व स्थिरता के लिए उठाए गए भारतीय कदमों की प्रशंसा की।[66]

जनता सरकार ने अपनी विदेश नीति में असंलग्नता के साथ ही सभी पड़ोसी देशों से

---

62. दास, ए. एन., "इण्डो-अफगान टॉक ऑन कॉमन नैबर", नार्दन इण्डिया पत्रिका (इलाहाबाद), 3 जून, 1969, अम्रिता बाजार पत्रिका (कलकत्ता), 9 मार्च, 1978
63. रतनाम, परेला, देखिए क्र. 38, पृ. 58
64. डान (कराची) 12 मार्च, 1975. हिन्दू (मद्रास), 12 मार्च, 1975. हिन्दुस्तान (दिल्ली), 12 मार्च, 1975.
65. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 22, अंक 7, 1976, पृ. 195-200
   - मिश्र, विनोद, "निर्गुटता के मूल आधार से हटना उचित नहीं" प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी की राष्ट्रपति दाउद से आपसी मामलों पर वार्ता, हिन्दुस्तान (दिल्ली), 6 जुलाई, 1976, द स्टेट्समैन (दिल्ली), 6 जुलाई, 1976, पैट्रीआट (दिल्ली), 9 जुलाई, 1976
66. 'भारत-अफगानिस्तान मित्रता के दायरे', नवभारत टाइम्स (नई दिल्ली), 9 जुलाई, 1976
   - पैट्रीआट (दिल्ली), 9 जुलाई, 1976

मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों की स्थापना करने के लिए घोषणा की और कहा कि भारत अपने पड़ोसियों पर अपना प्रभुत्व नहीं चाहता। विदेशमन्त्री श्री वाजपेयी की काबुल यात्रा पर दोनों ही देशों ने दक्षिण एशियाई देशों के बीच अधिक विश्वास और मित्रता की भावना को सुदृढ़ करने के लिए मिलजुल कर कार्य करने का फैसला किया।[67] श्री वाजपेयी ने कहा कि अभी साधनों का बहुत दबाव है फिर भी हम अपने पड़ोसी मित्र देशों के आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में यथा सम्भव सहायता के लिए तैयार हैं।[68] दाउद के नेतृत्व में एक गणतन्त्र की स्थापना के पश्चात् जहाँ दोनों देशों के सम्बन्धों में घनिष्ठता आई, वहीं दूसरी ओर दक्षिण एशियाई देशों के आपसी रिश्तों में भी मूलभूत परिवतर्न हो रहे थे। इसलिए डा0 वैदिक ने लिखा कि भारत सरकार को उपमहाद्वीप में सुरक्षा व स्थायित्व के लिए अफगानिस्तान के साथ व्यापार और उद्योग को फैलाने के साथ-साथ पाकिस्तान और अफगानिस्तान दोनों को ही अपने नज़दीक लाने का कार्य करना चाहिए।[69] इस प्रकार प्राचीन काल से चली आ रही मित्रता को भविष्य में बनाए रखने के लिए[70] न केवल जनता सरकार ने, बल्कि उनके पूर्व पं0 जवाहरलाल नेहरू, लाल बहादुर शास्त्री, ज़ाकिर हुसैन और श्रीमती इन्दिरा गांधी ने अपने उत्तरी-पश्चिमी पड़ोसी (अफगानिस्तान) से अच्छे सम्बन्ध बनाए रखे।[71] भारत के समान ही अफगान विदेश-नीति का भी लक्ष्य रहा है कि पड़ोसी देशों के साथ अच्छे सम्बन्ध बनाए रखने से न केवल हमारे राष्ट्रहित सम्पादित होते हैं, अपितु इस क्षेत्र में शान्ति का वातावरण तैयार करने में मदद मिलती है। ईरान, चीन, भारत तथा रूस से इसी आधार पर अफगानिस्तान के सम्बन्ध हैं।

27 अप्रैल, 1978 को अफगानिस्तान में खल्की क्रान्ति हुई। भारत ने पारस्परिक मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों के कारण न केवल उसे स्वीकार किया, बल्कि उसे पूर्ण समर्थन भी प्रदान किया। क्योंकि वह भारत का ऐसा पड़ोसी देश है जो विश्व राजनीति में गुटनिरपेक्षता तथा साम्राज्यवादी शक्तियों के प्रति समान विचार रखता है।[72] अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण इस छोटे से देश (अफगानिस्तान) में महाशक्तियां उसके विकास कार्यों में सहयोग का बहाना लेकर अपने स्वार्थों के लिए कार्य करती रही है। पड़ोसी पाकिस्तान भी अफगानिस्तान में क्रान्ति विद्रोहियों की मदद कर देश में

---

67. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 23, अंक 9, सितम्बर 1977, पृ. 150
68. हिन्दुस्तान, (दिल्ली), 13 दिसम्बर, 1977
69. वैदिक, वेद प्रताप, "अफगानिस्तान में नया शक्ति संतुलन, स्वतन्त्र भारतीय विदेश नीति जरूरी" नवभारत टाइम्स, 8 नवम्बर, 1978
70. जाफरी, एच0ए0एस0, "इण्डो-अफगान रिलेशन्स, 1947-67" दिल्ली 1976, पृ. 92
71. हैदर, के0एल0, "इण्डो-अफगान फ्रेण्डशिप" भारत ज्योति (बम्बई), 1 जून 1969
72. कासिम सैयद, मीर, "इम्पीरियलिस्ट डिज़ायन इन अफगानिस्तान - प्वाजिनियस ट्री" द्वारा अजहर अन्सारी 'डव्लपमैन्ट इन अफगानिस्तान थ्रो इण्डियन आइस', 1980, पृ. 32-33

अस्थिरता फैला रहा था। ऐसी स्थिति में दिसम्बर 1979 में अफगानिस्तान में तत्कालीन सरकार ने आन्तरिक संघर्ष व विदेशी हस्तक्षेप से देश की सुरक्षा के लिए रूसी सैनिकों को आमन्त्रित किया। किन्तु अमरीकी अत्याधुनिक अस्त्र-शस्त्रों की मदद से[73] पाक गतिविधियां पहले से अधिक तीव्रता से जारी रहीं। इसलिए अफगान सरकार ने आरोप लगाया कि उनके देश के विरूद्ध आक्रमणकारी गतिविधियों से उसे कुछ भी प्राप्त नहीं होगा और स्वतन्त्र राज्य के रूप में स्वयं उसकी अपनी प्रतिष्ठा गिर जाएगी। अपनी स्वतन्त्रता को सुदृढ़ बनाना तथा अपने सभी पड़ोसी देशों के साथ अच्छे व मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाए रखना स्वयं उसके तथा दक्षिण एशिया के जनगण की सुरक्षा व स्वतन्त्रता के हित में है।[74] अफगानिस्तान में तत्कालीन शीत युद्ध की लहर और आन्तरिक व बाह्य सम्बन्धों में उत्पन्न संकट के चलते भी भारत-अफगास्तिान के पारस्परिक सम्बन्धों में कोई अन्तर नहीं आया।[75] भारत अच्छा पड़ोसी व मित्र होने के नाते अफगानिस्तान में शान्ति व स्थिरता के प्रति अनुकूल विचार व्यक्त करता रहा है।[76] अप्रैल 1980 में प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी ने कहा कि "हम भारतीय इस बात पर विश्वास रखते हैं कि भारत की सीमा पर कोई कमजोर पड़ोसी न हो। हमारे पड़ोसी आन्तरिक रूप से शक्तिशाली व स्थिर होने चाहिए"।[77] प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी ने पाकिस्तान के साथ अपने सम्बन्धों के प्रति चिन्ता व्यक्त करते हुए कहा कि वह एक साथ दो बातें नहीं कर सकता, लड़ाई की तैयारी व युद्ध वर्जन की सन्धि"। उसे प्राप्त हो रही आवश्यकता से अधिक सैन्य सहायता से कोई भी खतरा उत्पन्न हो सकता है।[78] भारत एशिया में ही नहीं सम्पूर्ण विश्व में शान्ति का समर्थक है। श्रीमती गांधी का यही मत था कि विश्व में रहते हुए हम किसी अन्य ग्रह पर जाकर बस नहीं सकते। इसलिए राष्ट्रों में परस्पर सद्भावना होना चाहिए क्योंकि इससे ही मित्रता पैदा होती है, मित्रता से सामंजस्य

---

73. निक्सन, एन्थोनी, एतमद खान, "साउथ एशिया : डिरेन्ट एण्ड कोआपरेशन आर कानफ्रान्टेशन", फॉरेन अफेयर्स रिपोर्ट, जुलाई 1982, खण्ड 31, अंक 7, पृ. 121-23. पाकिस्तान जो इस क्षेत्र में रूसी सैनिकों की उपस्थिति से उत्पन्न संकट का बहाना लेकर अमेरिका से अत्याधुनिक शस्त्र प्राप्त कर रहा है।
74. प्रावदा, 12 फरवरी, 1980
75. गोयल, डी0आर0, "अफगानिस्तान बिहाइन्ड द स्मोक स्क्रीन", दिल्ली 1984, पृ. 5-6
 -रतनाम, परेला, देखिए क्र. 38, पृ. 1
76. रतनाम, परेला, देखिए क्र. 38
77. चौधरी, नरेन्द्र सिंह, "भारतीय उपमहाद्वीप में शीतयुद्ध", बरेली 1981, पृ. 30
78. गांधी, इन्दिरा, "कानकुन सम्मेलन की उपलब्धियां" प्रधानमन्त्री के विचार 39, पृ. 8-9, पाकिस्तान को दुबारा हथियार प्राप्त होने पर भारत में चिन्ता व्यक्त की गई। कानकुन सम्मेलन में भाग लेने के पश्चात, लौटने पर नई दिल्ली के पालम हवाई अड्डे पर 27 अक्टूबर, 1992 को प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी द्वारा संवाददाता सम्मेलन में जारी किया गया वक्तव्य (भारत सरकार)

और फिर शान्ति स्थापित होती है।[79]

नवम्बर 1984 में श्री राजीव गांधी प्रधानमन्त्री बने। उनके नेतृत्व में पड़ोसी देशों के प्रति हमारी नीति बेहतर दिशा में बढ़ी। उनकी सरकार भी मित्र अफगास्तिान की गुटनिरपेक्षता, स्वतन्त्रता एवं अखण्डता का सम्मान करते हुए मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों की पोषक रही। प्रधानमन्त्री श्री गांधी ने कहा कि भारत दूसरे देशों के आन्तरिक मामलों में दखल को स्वीकार नहीं करता, साथ ही सहअस्तित्व तथा गुटनिरपेक्षता हमारे सम्बन्धों के मार्गदर्शक सिद्धान्त हैं।[80] तत्पश्चात् भारत में स्थापित राष्ट्रीय मोर्चा सरकार अफगानिस्तान के प्रति प्रभावशाली भूमिका नहीं निभा सकी, किन्तु उसने पाकिस्तान के साथ सम्बन्धों में सुधार के व्यापक प्रयास किए।

संयुक्त राष्ट्र के बृहत अभियान के तहत फरवरी 1989 में अफगानिस्तान से रूसी सैनिकों की वापसी हुई। नजीबुल्ला के नेतृत्व में अफगान सरकार ने देश में शान्ति के लिए व्यापक प्रयास किए। उनकी नीतियों को भारत ने समर्थन प्रदान किया। किन्तु पाकिस्तान व मुजाहिद्दीन वहाँ मुस्लिम सरकार की स्थापना करना चाहते हैं। इसी उद्देश्य से मुजाहिदों ने नजीब सरकार के खिलाफ लड़ाई जारी रखी है। उनके विजयी अभियान तथा सत्ता पक्ष में फूट के कारण नजीब सरकार को त्याग पत्र देना पड़ा। मुजाहिद गुटों में सत्ता के बटवारे को लेकर उत्पन्न हुए मतभेदों के बावजूद, मुजाहिद सरकार की स्थापना हुई। किन्तु उनमें परस्पर संघर्ष जारी रहा जिससे अत्यधिक जन-धन की हानि हो रही है। संयुक्त राष्ट्र ने पुनः शान्तिपूर्ण व जनता द्वारा चुनी गई सरकार की स्थापना के प्रयास किए, किन्तु वे असफल रहे। अफगानिस्तान में अनिश्चिय की स्थिति बनी हुई है। भारत का उत्तरदायित्व है कि वह स्थिति को बिगड़ने से रोके, ताकि वहाँ धार्मिक कट्टरता शासन पर हावी न हो सके। वास्तव में, पिछले 14 वर्षों (रूसी हस्तक्षेप के पश्चात्) से भारत ने अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में अपनी नीतियों का समर्थन करने वाला एक मित्र खो दिया है।

उपर्युक्त अध्ययन को आधार मानते हुए निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि विश्व राजनीति में दक्षिण एशिया का सदैव विशेष महत्व है। पूर्व सरकारों से लेकर वर्तमान नरसिंहाराव सरकार भी अपने दक्षिण एशियाई पड़ोसी देशों का विश्वास प्राप्त करने का प्रयास करती रही है। यही कारण है कि बंगलादेश, नेपाल, भूटान, मालदीव व श्रीलंका के साथ-साथ पश्चिम एशियाई व

---

79. प्रधानमन्त्री के विचार-46, "विश्व शान्ति और युवा", प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी का 22 जनवरी, 1982 को नई दिल्ली में मानव की जिन्दगी और विकास की समस्याओं पर अन्तर्राष्ट्रीय युवा सम्मेलन में उद्घाटन भाषण (भारत सरकार द्वारा आकल्पित व प्रकाशित)
80. गांधी, राजीव, "मिलकर महान और मज़बूत भारत बनाएं", प्रधानमन्त्री श्री गांधी का 22 नवम्बर, 1984 का राष्ट्र के नाम प्रसारित संदेश (भारत सरकार)

दक्षिण पूर्व एशिया के देशों के साथ भी सम्बन्धों में सुधार हुआ है। सार्क बैठकों ने इन देशों को परस्पर निकट लाने का महत्वपूर्ण कार्य किया। भारत ने पूर्ण योगदान तथा कुशल नीतियों द्वारा दक्षिण एशियाई राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया, किन्तु अब जब कि विश्व राजनीति में महान परिवर्तन हो रहे हैं, राष्ट्रों के मध्य राजनैतिक कटुता का स्थान परस्पर आर्थिक सहयोग ले रहे हैं। ऐसी परिस्थितियों में भारत को चाहिए कि वह वस्तुतः एक ही परिवार के हिस्से रहे पाकिस्तान से सामान्य सम्बन्ध बनाने का प्रयास करे, तभी दक्षिण एशिया में नवीन राजनैतिक समीकरणों का उदय हो सकेगा। इस परिवर्तन से निश्चिय ही अफगानिस्तान की स्थिति में सुधार होगा। मित्र राष्ट्र अफगानिस्तान में लोकप्रिय सरकार की स्थापना हो और पुनः प्राचीन प्रगाढ़ सम्बन्धों को नवीनतम रूप दिया जाए, यही भारत की इच्छा व प्रयास है। हिन्द महासागर में अमरीकी सैनिक उपस्थिति का दक्षिण एशिया में असुरक्षा व अविश्वास का माहौल बनाने में प्रमुख स्थान रहा है। स्थिति में सुधार के लिए उसे अपने स्वार्थ की अपेक्षा क्षेत्र के विकास की ओर उचित ध्यान देना चाहिए। दूसरी ओर अफगानिस्तान में गृहयुद्ध समाप्त कराने तथा स्थिर व टिकाऊ सरकार की स्थापना में पाकिस्तान के साथ ही अमेरिका, चीन व रूस को भी अपना योगदान देना होगा, तभी स्थिति में सुधार की आशा की जा सकती है।

*****

द्वितीय अध्याय

द्वितीय अध्याय

ऐतिहासिक संदर्भो में भारत और अफगानिस्तान

प्राचीनकाल से भारत तथा अफगानिस्तान में ऐतिहासिक, भौगोलिक, सांस्कृतिक व जातीय और व्यापारिक सम्बन्ध रहे हैं।[1] इन सम्बन्धों पर बोलते हुए अफगान डेमोक्रेटिक पार्टी के सचिव मोहम्मद जियरी ने कहा कि हमारे परम्परागत मित्रता पूर्ण सम्बन्ध इतिहास से चले आ रहे हैं।[2] जिनमें मुख्य भूमिका सांस्कृतिक सम्बन्धों की है। इसलिए उसका प्रभाव आज भी अफगानिस्तान में देखा जा सकता है।[3] अफगान राष्ट्रपति दाउद ने भी सम्बन्धों में परस्पर समानताओं को व्यक्त करते हुए कहा कि 'भारत-अफगानिस्तान में यद्यपि धर्म भिन्न है, परन्तु दोनों देशों में कभी कोई मतभेद नहीं हुआ। इतना ही नहीं उपनिवेशवाद के शिकार होने के पश्चात दोनों देशों ने एक दूसरे की स्वतन्त्रता में महत्वपूर्ण योगदान किया।[4] नीतियों के परस्पर आदान-प्रदान के द्वारा उन्होंने गुटनिरपेक्षता, शान्ति व निरस्त्रीकरण को स्वीकार किया। उनके उद्देश्य तथा हित भी समान हैं।[5] उनकी सीमांत समस्याएं भी समान है तथा इन समस्याओं के प्रति दृष्टिकोणों में भी कहीं भिन्नता दिखाई नहीं देती।[6] वे प्रारम्भ से ही एक दूसरे के सुख-दुख में भागीदार रहे हैं।[7]

(क) राजनैतिक सम्बन्ध

भारत तथा अफगानिस्तान की ऐतिहासिकता ही उनके पारस्परिक सम्बन्धों को व्यक्त करती है।[8] भारत का विगत शताब्दियों का इतिहास कई पीढ़ियों के औपनिवेशिक तथा सामन्ती उत्पीड़न से मुक्ति की खातिर लम्बे और वीरता पूर्ण संघर्ष का इतिहास है।[9] अफगानिस्तान का इतिहास भी यह तथ्य प्रस्तुत करता है कि डेढ़ शताब्दी से भी अधिक समय से ब्रिटिश उपनिवेशवादी अफगान राज्य के टुकड़े-टुकड़े कर उसे दासता की जंजीरो में जकड़ना चाहते थे।[10]———

---

1. ताबीबी, एच.ए., "अफगानिस्तान एण्ड इण्डिया हिस्टोरीकल टाइज", अफगानिस्तान, खण्ड 26, जून 1973, पृ. 86-9
2. चक्रवर्ती, सुमित, "डेट लाइन काबुल" 1983, पृ. 66
3. कुमार, अशोक, "पाकिस्तान एज ए फैक्टर इन इन्डो-अफगान रिलेशन्स 1947-73" (मेरठ 1981) शोध-ग्रन्थ
4. हिन्दुस्तान (नई दिल्ली), 4 मार्च, 1978, अफगान राष्ट्रपति दाउद की भारत-यात्रा पर उनके द्वारा किया गया भाषण
5. गोयल, डी. आर., "अफगानिस्तान बिहाइण्ड द स्मोक स्क्रीन", (दिल्ली 1984), पृ. V-VI
6. वाकी, अब्दुल," हिज मेजेस्टी-द डेमोक्रेसी", सौवनीर 1958, पृ. 1
7. गोयल, देखिए क्र. 5, पृ. 4
8. वाकी, अब्दुल, देखिए कृ 6, अफगान राजा ज़हीर शाह की भारत यात्रा पर अफगान दूतावास द्वारा जारी की गई प्रेस-विज्ञप्ति, पृ.-1
9. अंतोनोवा कोतोव्स्की, "भारत का इतिहास", (नई दिल्ली 1984), पृ. 11
10. खालफिन, नफ्तुला, "अफगानिसतान के खिलाफ ब्रिटिश षडयन्त्र", नई दिल्ली 1983, पृ. 1

किन्तु वीर अफगानों ने कभी भी इसे स्वीकार नहीं किया।

भारत-अफगानिस्तान सम्बन्धों का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है। कहा जाता है कि तीन सौ पाँच बी. सी. में चन्द्रगुप्त मौर्य ने सैल्यूकस को पराजित कर पूर्व में अफगानिस्तान की स्थापना की।[11] यहाँ के गणतन्त्र को अवगण तथा जनता को अवगाण कहते थे। लगभग दो हजार वर्ष पूर्व अफगानिस्तान को मध्य हिन्दुकुश भी कहते थे।[12] आर्य, ग्रीक, मंगोल और मुस्लिम (तुर्क और मुगल) पहले अफगानिस्तान आए और उसके पश्चात् भारत आए। इस अनुगमन से दोनों देशों में समीप्य बढ़ा। इनमें से बहुत से आक्रमणकारी भारत व अफगानिस्तान में बस गए और उन्होनें हमारी संस्कृति, सामाजिक स्थिति व राजनैतिक पद्धति को स्वीकार किया तथा गहरे व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित किए।

मुगलकाल

मुस्लिम शासकों की विस्तारवादी नीतियों के कारण भारत तथाकथित मुस्लिम विश्व की परिधि में खिच आया। 1451-1526 तक अफगान लोधी कबीलों ने भारत में शासन किया। तैमूर वंशीय मुगल जहीरूद्दीन बाबर ने हेरात के शासक की सहायता से अफगान इलाकों पर कब्जा कर लिया और वह काबुल में जम गया। लेकिन उसका विश्वास था कि भारत को जीत कर ही वह एक समृद्ध और शक्तिशाली राज्य का स्वामी बन सकता है। बाबर ने 1526 में अफगान व गकहर सैनिकों की सहायता लेकर पानीपत की लड़ाई में इब्राहीम लोधी की सेना को ध्वस्त कर उसे परास्त किया। इसी के साथ मुगल साम्राज्य का समारम्भ हुआ, जिसे भारतीय इतिहास के आगामी 200 साल के क्रम को निर्धारित करना था। बाबर की जीत के पश्चात् कुछ अफगान दस्ते लूट का माल लेकर स्वदेश लौट गये और कुछ को वहीं पर जागीरें दे दी गईं। अफगान सामन्तों का नेता शेरशाह सूरी बाबर के बेटे हुमाँयू का मुख्य प्रतिद्वन्द्वी बना। जिसने कुछ समय के लिए दिल्ली पर अधिकार कर लिया। तत्पश्चात् हुमाँयू के बेटे अकबर ने दिल्ली सल्तनत पर अधिकार किया। इस प्रकार अकबर (1556-1605), जहाँगीर (1605-1627), शाहजहाँ (1627-1658), से लेकर औरंगजेब (1658-1707) के काल तक मुगल साम्राज्य अपने अधिकतम विस्तार तक पहुँच गया था। दक्षिण से लेकर उत्तर में कश्मीर और काबुल तथा गजनी सहित अफगान प्रदेशों तक लगभग सारा ही उपमहाद्वीप उसकी परिधि में आ चुका था। कन्दहार ही फारस

---

11. हैदर, के. एल., ''इंडो-अफगान फ्रैंडशिप'', भारत ज्योति (बम्बई), 1 जून, 1969.
12. ओबेराय, जे. पी. एस., ''स्ट्रक्चर आफ इण्डो-अफगान रिलेशन्स", इन्डिया एण्ड फॉरेन रिव्यू, खण्ड 16, अंक 13, जुलाई 15, 1976

के हाथों में था। औरंगजेब ने कुछ अफगान नेताओं को रिश्वत देकर अफगान कबीलों की एकता को तोड़ने का प्रयास किया। इस बीच अफगान सरदार खुशहाल खां ने घटकों के इलाके में आजाद अफगान राज्य स्थापित कर लिया, किन्तु आन्तरिक संघर्ष तथा 1689 में उसकी मृत्यु के कुछ दिन पश्चात् ही स्वतन्त्र अफगानिस्तान का अन्त हो गया। इस प्रकार मुगल शासकों ने कबीलों में बटे अफगानिस्तान से सम्बन्धों को निरन्तर बनाये रखा।[13] अट्ठारहवीं शताब्दी में मुगल साम्राज्य का पतन हो गया।

अफगानिस्तान ने अनेक मुस्लिम शासकों का उत्थान-पतन देखा था। 1738 में वह फारस के शासक नादिरशाह के अधिकार में आ गया। उसने भारत पर आक्रमण कर[14] मुगल सम्पत्ति को लूटा और मुगल बादशाह से एक फरमान द्वारा सिन्धु नदी के उत्तर में मुगल अधिकृत भू-क्षेत्रों (वर्तमान अफगान भू-क्षेत्र) को अपने नियन्त्रण में ले लिया, किन्तु अफगानिस्तान दीर्घकाल तक फारसी शासन के अधीन नहीं रहा। 1747 में नादिरशाह की हत्या के बाद अहमदशाह अब्दाली (दुर्रानी) ने विभिन्न भाषाओं और जातियों के संगठन से एक स्वतन्त्र अफगान राज्य की स्थापना कर[15] उसकी निश्चित रूपरेखा तैयार की। तत्पश्चात् 1950 में प्रत्यक्ष रूप में वस्तुतः सीमाओं पर शासनात्मक नियम कायम किए गए।[16] यह राज्य भारत के उत्तरी भाग से जुड़ता था। अब्दाली का भी सम्पूर्ण भारत को जीतने का सपना था। उसने दो ही वर्षो में जहाँ काबुल को शक्ति सम्पन्न बनाया, वहीं भारतीय सीमाओं पर अपना साम्राज्य बढ़ाना आरम्भ किया। 1762 में उसने सिक्खों को लाहौर के निकट पराजित किया। उसकी इच्छा कश्मीर, दिल्ली तथा तिब्बत की सीमाओं से होते हुए हिन्द महासागर तक पहुँचने की थी, लेकिन अल्प समय में हुई मृत्यु ने उसे उसकी इच्छा शक्ति से पृथक कर दिया।[17] पंजाब में राजा रणजीत सिंह ने अफगान सेनाओं को खदेड़ कर अपने क्षेत्र में पुनः अधिकार कर लिया। दूसरी ओर मध्यभारत में मराठे अपना विस्तार कर रहे थे।

भारत में अंग्रेजी शासन का पदार्पण

भारतीय राज्यों में यूरोप की व्यापारिक कम्पनियाँ अपने-अपने देशों के संरक्षण में काम कर रहीं थीं। सोलहवीं शताब्दी में भारत में इन यूरोपियों के अधिकार में मात्र कुछ किले और मालगोदाम

13. ओबेराय, जे. पी. एस., वही
14. वाकमेन, मोहम्मद, "अफगानिस्तान नॉन एलाइनमेंण्ट एण्ड ए सुपर पावर", (दिल्ली 1985), पृ. 3
15. वही,
    - कुमार, अशोक, देखिए क्र. 3, पृ. I-II
16. फ्रेशर, टाइटलर, डब्ल्यू. के., "अफगानिस्तान ए स्टडी ऑफ पॉलिटिकल डवलपमेण्ट इन सेन्ट्रल एशिया", न्यूयार्क (टोरन्टो 1950), पृ. 47-60
17. जाफरी, एच. ए. एस., "इण्डो अफगान रिलेशन्स 1947-67", (दिल्ली 1976), पृ. 2-3

थे। सत्रहवीं शताब्दी में उन्होंने व्यापारिक केंन्द्रों और बस्तियों की स्थापना करना शुरू कर दिया।

भारत में सर्वप्रथम औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित करने का प्रयास फ्रांसीसी ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने किया। पाण्डिचेरी के गवर्नर जोजेफ फ्रांसुआ डूप्ले ने 1740 में फ्रांसीसी अफसरों के अधीन भारतीय सिपाहियों की टुकड़ियाँ खड़ी करना शुरू कर दिया। ये सिपाही इतनी अच्छी तरह लड़ते थे, कि उसे देखकर 1746 में अंग्रेजों ने भी सिपाही टुकड़ियाँ खड़ी करना शुरू कर दिया, व्यापार में घाटे के कारण परिस्थितियाँ फ्रांसीसियों के अनूकूल नहीं थीं, इसी कारण ब्रिटिश आधिपत्य की जड़ें भारत में मजबूत हुईं। छोटे राज्य जो आपस में लड़ते-झगड़ते रहते थे, वे इस कलह को सुलझाने में यूरोपियों की मदद ले रहे थे। इसके बदले में इन यूरोपीय कम्पनियों ने जोर-जबरदस्ती, रिश्वत व भेंटों के माध्यम से व्यापारिक रियासतें प्राप्त कर लीं थीं। उन्नीसवीं सदी में ब्रिटिश व्यापारिक कम्पनी भारत की सबसे धनी कम्पनी थी। वह भारत में अपने पैर जमाने के लिए (छल व कूटनीति द्वारा) किसी तरह की भी कार्रवाई करने को तैयार थी।

अफगानिस्तान में अब्दाली के काल में आन्तरिक-बाह्य लड़ाइयों के दौरान देश में इतना खून बहा कि उसमें यूरोपीय उपनिवेशवादियों के अभियानों का मुकाबला करने की बिल्कुल शक्ति नहीं रह गई थी। इसलिए ये शक्तियाँ उपमहाद्वीप में अपनी शक्ति का विस्तार कर रहीं थी। भारत में 1717 में रैग्यूलेटिंग एक्ट पास हो जाने पर कम्पनी को मात्र एक व्यापारिक संगठन के रूप में ही नहीं, बल्कि भारतीय भू-भागों के शासक के रूप में मान्यता प्रदान की। ब्रिटिश सरकार ने कम्पनी की राजनैतिक, व्यापारिक तथा न्यायिक गतिविधियों की देख-रेख का दायित्व स्वयं ग्रहण कर लिया।

वारेन हेस्टिंग भारत का पहला गवर्नर जनरल बना। अट्ठारवीं शताब्दी के आठवें व नवें दशकों में कम्पनी ने सहायक संधि द्वारा भारत के स्वतन्त्र राज्यों को फौजी टुकड़ियाँ सुलभ कराकर जहाँ उनके अधिकारों को सीमित किया, वहीं अपने अधिकृत क्षेत्रों में विस्तार कर राज्यों में अपने प्रभाव को मज़बूत बनाया। 'दासकरण' की इस नीति से व्यापक असंतोष उत्पन्न हो गया। अंग्रेजों की घुसपैठ का सबसे प्रबल प्रतिरोध दक्षिण भारत के मैसूर राज्य ने किया। मैसूर शासक हैदर अली ने ही सर्वप्रथम कहा कि अंग्रेज ही भारतीय राज्यों के असली शत्रु है, उनके साथ समझौता करने का प्रश्न ही नहीं उठता। 1799 में लार्ड बैलेजली के नेतृत्व में अंग्रेजों ने कठिन प्रयत्नों तथा लगातार तीन युद्धों के पश्चात् मैसूर पर विजय प्राप्त की। मराठों का अधीनीकरण अंग्रेजों की विजय में मुख्य अध्याय की समाप्ति का परिचायक था।

उन्नीसवीं शताब्दी में भारतीय उपनिवेश की रक्षा के लिए अफगानिस्तान ब्रिटिश शासक हल्कों के आकर्षण का केन्द्र बना।[18] उन्होंने वहाँ राजनैतिक व व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित कर अपना प्रभाव जमाना आरम्भ कर दिया। 1801 में मांउटस्टूअर्ट एलीफिंस्टन के नेतृत्व में पहला ब्रिटिश मिशन अफगानिस्तान पहुंचा और उसने अफगानिस्तान के शाहशुजा-उल-मुल्क के साथ मित्रतापूर्ण[19] किन्तु असामान्य सन्धि की। जिसके अनुसार यदि ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सम्पत्तियों पर ईरान और फ्रांस हमला करे तो उन्हें कम्पनी का साथ देना होगा। शाहशुजा आन्तरिक संकटों से ग्रस्त था, इसलिए शासन छोड़कर भाग गया। उसने भारत में शरण ली[20] और वह अफगानिस्तान के खिलाफ ब्रिटिश षडयन्त्रों में मुख्य पात्र बना रहा।

1826 में अफगान सरदार दोस्त मोहम्मद खान ने काबुल में दृढ़ता से शासन सम्भाला। वह अफगानों के राष्ट्रीय हितों का प्रवक्ता था। उसके सामने तीन बड़ी समस्याएं थी; सिक्खों, पारसियों तथा रूस के जार से। दोस्त मोहम्मद ब्रिटिश सरकार से जहाँ सम्बन्धों को बढ़ाना चाहते थे, वहीं सहायता की गारण्टी भी चाहते थे।[21] किन्तु ब्रिटिश सरकार ने उसकी परवाह नहीं की और अपनी विस्तारवादी नीतियाँ जारी रखीं। उसी समय रूस ने लैफ्टीनैण्ट यान विटकेविच के नेतृत्व में अफगानिस्तान के अमीर को पड़ोसी राज्यों से अनुकूल सम्बन्ध बनाने की हिदायत दी।

प्रथम ऑंग्ल-अफगान युद्ध, ब्रिटिश कूटनीति तथा भारत

1830 के दशक में भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की पकड़ मज़बूत होती जा रही थी। उसकी पड़ोसी देशों के झगड़ों को सुलझाने में नहीं, बल्कि बढ़ाने में दिलचस्पी थी। ब्रिटिश सत्ताधारी पंजाब में अपने पांव जमाने की आशा से पेशावर को अफगानिस्तान को नहीं सौंपना चाहते थे। उन्हें दोस्त मोहम्मद द्वारा आर्थिक, राजनैतिक व सैनिक आधार पर सत्ता मज़बूत करना भी पसन्द नहीं था, क्योंकि ब्रिटिश सरकार अफगानिस्तान को अपना भावी उपनिवेश समझती थी। अंग्रेज, ब्रिटिश सत्ता पर आश्रित शाहशुजा-उल-मुल्क को अफगान तख्त पर बैठाना चाहते थे। अफगानिस्तान पर खुला हमला करने से पूर्व उन्होंने रूस के निकोलस प्रथम की सरकार को तटस्थ करने का प्रयास किया। भारत में गुप्त व राजनैतिक विभाग के प्रमुख विलियम मैगनाटन ने अमीर को दिये गए वायदों को कम्पनी की नीति के खिलाफ मानते हुए[22] अफगानिस्तान के खिलाफ युद्ध

18. आशित्कोव, गोवोक्र्यान, पोलोन्स्की, स्वेतोजारोव, ''अफगानिस्तान सच्चाई क्या है'' दस्तावेज, तथ्य और प्रत्यक्ष दर्शियों की रिपोर्ट, दिल्ली 1983, पृ. 45-52
19. एलिफिन्स्टन, माउण्टस्टुअर्ट, ''एकाउण्ट ऑफ द किंगडम आफ काबुल'', (लन्दन 1815)
20. जाफरी, देखिए क्र0. 17, पृ. 3
21. वही, पृ. 5-6
22. पेपर्स ईस्ट इण्डिया, 'काबुल एण्ड अफगानिस्तान', लन्दन 1856, पृ. 111-115

छेड़ने को कहा। उसी समय भारत के नए गवर्नर लार्ड आकलैण्ड ने कड़ा रूख अपनाया। उन्होंने 1 अक्तूबर, 1838 को शिमला में घोषणा की कि जब तक काबुल में दोस्त मोहम्मद की हुकूमत रहेगी, तब तक पड़ोसी देशों में शान्ति की आशा नहीं की जा सकती। इसलिए ब्रिटिश सेना की सहायता से शाह शुजा ने अपनी सेना के साथ काबुल में प्रवेश किया। यद्यपि आरम्भ में अंग्रेजों को अपने कार्य में सफलता मिली, किन्तु शीघ्र ही स्थिति बदल गई। अफगान देशभक्तों ने ब्रिटिश दूत वरनेस तथा मैगनाटन को मार डाला तथा सभी शत्रुओं को महत्वपूर्ण पहाड़ियों से खदेड़ दिया। 1843 में दोस्त मोहम्मद पुनः अमीर बन गये और मृत्यु पर्यन्त इस पद पर बने रहे। किन्तु अंग्रेजों ने अपने मूल उद्देश्य को नहीं छोड़ा, बल्कि उद्देश्य की पूर्ति के लिए पूरी-पूरी तैयारी करने का फैसला किया।

इस प्रकार प्रथम आंग्ल-अफगान युद्ध वरनेस मिशन की असफलता की निशानी थी। इस युद्ध में ब्रिटिश नीति की कड़ी आलोचना की गई।[23] युद्ध का खर्च भारतीय खजाने से किया गया[24] तथा इसमें भारतीय सैनिकों का प्रयोग किया गया। जिससे दोनों देशों (भारत-अफगान) के सम्बन्धों में गिरावट आई।

1857 का विद्रोह

अफगान युद्ध में पराजित हुए ब्रिटिश नेतृत्व ने भारत में अपनी विजय को पूरा करके प्रतिष्ठा पुनः कायम करने का निर्णय लिया। ब्रिटिश अधिकारियों ने धीरे-धीरे सम्पूर्ण भारत पर प्रत्यक्ष ब्रिटिश प्रशासन की प्रणाली (उत्तराधिकार के अपहरण का सिद्धान्त) कायम करके देशी राज्यों को समाप्त करने का निर्णय लिया। इसके परिणाम स्वरूप भारत में व्यापक हिस्सों पर जनता में असन्तोष व्याप्त हो गया। दूसरी ओर कम्पनी में भारतीय सिपाहियों की अंग्रेज सिपाहियों की अपेक्षा खराब स्थिति के फलस्वरूप उनमें व्याप्त असंतोष के कारण 1857 का महान विद्रोह आरम्भ हुआ। मुसलमान भी अंग्रेजों की चाल समझ गये थे इसलिए सभी ने इस विद्रोह में भाग लिया। 1 नवम्बर, 1858 को महारानी विक्टोरिया के नाम पर भारत का प्रशासन ब्रिटिश ताज

---

23. जेम्स, डब्ल्यू स्पेन, 'द पठान वोर्डर लैण्ड', द हुग, 1963, पृ. 130, स्वयं ब्रिटेन के कुछ नेताओं तथा बहुत से पाश्चात्य लेखकों ने प्रथम आंग्ल-अफगान युद्ध की निन्दा करते हुए अपने विचार व्यक्त किए, जिनमें मुख्य है:-
    - कार्य, जॉन विलियम, "हिस्ट्री ऑफ वार इन अफगानिस्तान", खण्ड प्रथम, लन्दन 1978 ।
    - टाइटलर, फ्रेशर, 'देखिए क्र. 16, पृ. 120
24. काये, जान विलियम, खण्ड तृतीय, पृ. 398, इस युद्ध में भरतीय खजाने से डेढ़ करोड़ रू0 खर्च ऐसे समय किया जव स्वयं देश कठिन परिस्थितियों से गुजर रहा था।

को सौंप दिया गया और ईस्ट इण्डिया कम्पनी भंग कर दी गई।[25] जवाहरलाल नेहरू ने 'हिन्दुस्तान की कहानी' में लिखा कि यद्यपि 1857-58 के विद्रोह ने कुछ ही हिस्सों को प्रभावित किया मगर उसने सारे हिन्दुस्तान और अंग्रेजी हुकूमत को हिला दिया। विद्रोह की विफलता ने भी राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन के प्रेरणा स्त्रोत जैसे महान उद्देश्य की पूर्ति की।[26] विद्रोह के पश्चात् अंग्रेजों को भारत में अपनी नीति में सुधार करने के लिए मजबूर होना पड़ा, किन्तु अंग्रेजों ने इस विद्रोह के दौरान हिन्दू-मुस्लिम एकता को देख लिया था। इसलिए उन्होंने उनमें 'फूट डालो और राज्य करो' की नीति अपनाई।

अमीर दोस्त मोहम्मद ब्रिटिश साम्राज्य की शक्ति को समझते थे, इसलिए किसी भी कीमत पर अपनी स्वतन्त्रता को खतरे में नहीं डालना चाहते थे। उन्होंने गुजरात की लड़ाई के बाद ब्रिटिश साम्राज्य से लड़ाई करना उचित नहीं समझा और उनकी ओर दोस्ती का हाथ बढ़ाया। 26 जनवरी, 1857 को अफगानिस्तान और ब्रिटिश साम्राज्य के बीच सन्धि हो गई। इस मित्रता सन्धि के अनुसार उन्हें अंग्रेजों ने हस्तक्षेप न करने का वचन दिया।[27] पहली बार भारत अफगान कूटनीतिक सम्बन्धों में राजदूतों के आदान-प्रदान का प्रावधान रखा गया। उसी समय भारत में 1857 का विद्रोह हो जाने पर भारतीय विद्रोहियों ने अफगानिस्तान से सहायता की अपील की। अंग्रेजों के साथ सन्धि में बँधे होने के कारण अफगानिस्तान भारत को उचित सहायता नहीं भेज सका। अतः भारतीय जनता द्वारा अफगानिस्तान की इस कार्रवाई की निन्दा की गई।[28]

1868 में दोस्त मोहम्मद की मृत्यु के पश्चात् अफगानिस्तान वीभत्स संघर्ष का अखाड़ा बन गया। अन्त में 1869 में शेर अली खान अफगान तख्त पर बैठा। लार्ड लारेन्स के काल में ब्रिटिश भारत व अफगानिस्तान सम्बन्धों में तनाव बना रहा। उसी समय आंग्ल-रूसी प्रतिद्वन्द्वता बढ़ जाने पर कहा गया कि अफगानिस्तान को, दो शक्तियों के अधिकृत इलाके के बीच एक तटस्थ क्षेत्र मान लिया जाए। ब्रिटेन ने इसे रूस की विस्तारवादी नीति कहते हुए इसके खिलाफ ही आह्वान किया।

---

25. मार्क्स, कार्ल, "नोट्स ऑन इण्डियन हिस्ट्री", पृ. 186
26. पाणिक्कर, के. एन., '1857 का विद्रोह जन आन्दोलन था', रविवार, खण्ड 8, अकं 34, 5-11, मई 1985, पृ. 16-21
27. प्रसाद, विश्वेश्वर, 'द फाउण्डेशन्स आफ इण्डियाज फॉरेन पॉलिसी', भाग 1 (1860-82) कलकत्ता, 1955, पृ. 25
28. सिंघल, डी. पी., "इण्डिया एण्ड अफगानिस्तान ए स्टडी इन डिप्लोमेटिक रिलेशन्स 1876-1907'" आस्ट्रेलिया 1963, पृ. 7

द्वितीय आंग्ल-अफगान युद्ध व ब्रिटिश कूटनीति

ब्रिटेन में कन्जरवेटिवों के सत्ता में आने से ब्रिटिश सरकार की राजनीति में परिवर्तन आया। ब्रिटिश प्रधानमन्त्री ने भारत सरकार को अफगानिस्तान से अधिक सक्रिय सम्बन्ध बनाने और काबुल में एक ब्रिटिश राजदूत नियुक्त करने का आदेश दिया, किन्तु भारत में वायसराय नार्थब्रुक किसी भी तरह के परिवर्तन के खिलाफ थे।[29] इसलिए उनके स्थान पर लिट्टन को भारत का नया वायसराय नियुक्त किया गया। लिट्टन अफगानिस्तान में ब्रिटिश विस्तार में विश्वास रखते थे, अत: उन्होंने अपनी योजनाओं को कार्यरूप में लाने के आदेश दे दिए।[30]

अफगानिस्तान के अमीर शेरअली भारत-अफगान सम्बन्धों में मित्रता बनाये रखना चाहते थे। इसलिए उन्होंने 6 अक्तूबर, 1876 को अपना एक दूत शिमला बातचीत के लिए भेजा, किन्तु सफलता नहीं मिली। अत: अमीर ने ब्रिटिश प्रतिनिधि अफगानिस्तान में रखने के लिए अस्वीकृति व्यक्त कर दी। उन्होंने कहा कि अब्दुल्लाहजन को राज्य का उत्तराधिकारी स्वीकार किया जाय तथा ब्रिटिश सरकार स्थायी आर्थिक सहायता के साथ अनाक्रमण का वायदा करे। ब्रिटिश सरकार ने इन शर्तों को स्वीकार किया, किन्तु इसके बदले में उन्होंने अमीर से यह मांग की, कि वे रूस से सम्बन्ध समाप्त कर राज्य में ब्रिटिश प्रस्ताव को स्वीकार करें।[31] इस प्रकार जहां दबाव डालकर ब्रिटेन अफगानिस्तान में राजनैतिक घेरेबन्दी करना चाहता था, वहीं वह उसके खिलाफ युद्ध के लिए बहाने की तलाश में था, किन्तु शेरअली अंग्रेजों के किसी दबाव में नहीं आया। पुन: लार्ड लिट्टन ने रूस के दबाव का भय दिखाकर नैविल्ले चेम्बरलेन के नेतृत्व में ब्रिटिश सैनिक मिशन को अफगानिस्तान भेजा। शेरअली खान ने इसे नामंजूर कर दिया। जिसके परिणाम स्वरूप द्वितीय आंग्ल-अफगान युद्ध हुआ, जो (1878-79) छह महीने तक चला।[32]

अमीर शेर अली की मृत्यु के पश्चात् उसका बेटा याकूब खान अंग्रेजों की सहायता से गद्दी पर बैठा। उसने 26 मई, 1879 में अंग्रेजों के साथ गन्दत्मक की सन्धि की।[33] इस सन्धि के द्वारा अफगानिस्तान की विदेश नीति ब्रिटिश नेतृत्व के अधीन हो गई और वह ब्रिटिश भारत का एक अंग बन गया। व्यापारिक सम्बन्धों के लिए सन्धि में आपसी सम्बन्धों का प्रावधान रखा गया। अफगान राज्य में ब्रिटिश सलाहकारों को रखने की अनुमति दी गई। बदले में अमीर

---

29. प्रसाद, विश्वेश्वर, देखिए क्र. 27
30. वेलफोर, लेसीबेट्टी, "लार्ड लिट्टन्स इण्डियन एडमिनिस्ट्रेशन 1876-80", लन्दन 1899, पृ. 30
31. सिघंल, डी. पी., देखिए क्र. 28, पृ. 18-19
32. हन्ना, एच. बी., "द सेकेंण्ड वार", भाग 3, लन्दन 1899
33. एचीसन, सी. यू., "ए कलैक्सन ऑफ ट्रीट्रीज, इंगेजमेण्टस एण्ड सनद्स रिलेटिंग टु इण्डिया एण्ड द नैबरिंग कंट्रीज", खण्ड द्वितीय, (कलकत्ता 1909), पृ. 344-347

एक निश्चित राशि वार्षिक सहायता के रूप में प्राप्त करता रहेगा। इस प्रकार इस सन्धि के द्वारा अफगानिस्तान को पराधीनता की बेड़ी पहना दी गई।[34] अंग्रेजों ने भारत से नेपोलियन काबागनरी को राजदूत बना कर भेजा। अब अंग्रेज अफगान राज्य के टुकड़े करने पर तुल गये। हेरात ईरान को रूस से ब्रिटेन की ओर मोड़ने के लिए भेंट कर दिया गया। कन्दहार में भी नाममात्र की सत्ता शेरअली (बली) को सौप दी गई। स्वतन्त्रता प्रिय अफगानों ने विद्रोह कर दिया और 3 सितम्बर, 1879 को काबुल में ब्रिटिश राजदूत का कत्ल कर दिया गया, तत्पश्चात भी अफगानिस्तान में ब्रिटिश कूटनीति जारी रही।[35]

भारत अपने पड़ोसी देश में शान्ति, स्थिरता व मित्रता चाहता था, जबकि अंग्रेज उन पर दुरभि सन्धियों का बोझ डाल कर उनके अधिकारों का हनन कर रहे थे। अंग्रेजों की इन नीतियों की भारत में ही नहीं इंग्लैण्ड में भी निन्दा की गई।[36] मार्च-अप्रैल, 1880 में ब्रिटेन में सत्ता परिवर्तन के पश्चात् नियुक्त वायसराय लार्ड रिपन पीछे हटने को तैयार नहीं हुए और इस तरह अंग्रेज अफगानिस्तान को विभाजित करने में सफल हुए।

इस प्रकार द्वितीय आंग्ल-अफगान युद्ध में अत्यन्त जन-धन हानि हुई। भारत में जहाँ कुछ ही समय पूर्व इतिहास का अत्यन्त भीषण अकाल पड़ा था, ब्रिटिश उपनिवेश के सभी खर्च भारत के बजट से पूरे किये गए। फिर भी ब्रिटेन अफगानिस्तान को पूरी तरह अपने अधीन व विभाजित करने के उद्देश्य में सफल न हो सका। अफगानिस्तान अर्ध उपनिवेश के स्तर वाला एक ब्रिटिश आश्रित देश बन गया। लन्दन 1878-80 के युद्ध के परिणामों से असंतुष्ट था, इसीलिए वह वहाँ अपनी स्थिति मजबूत करने के किसी अवसर को हाथ से जाने नहीं देना चाहता था।

जून, 1880 को दोस्त मोहम्मद का पौत्र अब्दुर्रहमान जो चतुर तथा दूरदर्शी था, काबुल का अमीर बना। अब्दुर्रहमान ने हेरात के शासक अयूब खान को कन्दहार में परास्त कर अफगानिस्तान को एकताबद्ध कर लिया।[37] उसने विदेशी मामलों में भी अपना अस्तित्व बनाया और अंग्रेजों के हस्तक्षेप को रोका।[38] अमीर ने गन्दत्मक सन्धि पर बोलते हुए कहा कि दूसरे देशों से ही नहीं,

---

34. ठाकुर, रमेश, 'द रीजन्स फॉर इण्डिया डिस्कनकटिव एप्रोच', राउण्ड टेविल 280, अक्टूबर 1980, पृ. 422-33
35. वही
36. हायी, ख्वाजा, 'ब्रिटिश इन्टरैट्स, इन अफगानिस्तान, इन ए हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम मूमेण्ट (1831-1905) भाग 2, पाकिस्तान हिस्टोरीकल सोसायटी कराची 1960, पृ. 46
37. डुप्री, लाऊस, 'सैटिलमैन्ट एण्ड माइग्रेशन पैटर्न इन अफगानिस्तान: ए टेनेनटिव स्टेटमेण्ट', मार्डन एशियन स्टडीज, खण्ड 9, अंक 3, जुलाई 1975, पृ. 404
38. वैदिक, वी. पी. , "अफगानिस्तान नॉन एलाइनमेण्ट चेजिंग फेसिस" द्वारा के. पी. मिश्रा "नॉन एलाइनमेण्ट फ्रंटियर्स एण्ड डायनामिक्स", (दिल्ली 1982), पृ. 240

बल्कि ब्रिटेन स्वयं से ही अफगानिस्तान को सम्मान जनक सम्बन्ध नहीं रखने देना चाहता।[39]

डुरेण्ड रेखा और ब्रिटिश कूटनीति

भारत में दिन-प्रतिदिन अंग्रेजों की पकड़ मजबूत होती जा रही थी। वहाँ ब्रिटिश अधिकारियों द्वारा दमन चक्र चल रहा था, दूसरी ओर अफगानिस्तान के पठान काबायली क्षेत्रों में विशाल फौजी शिविर बनाये गए। सीमावर्ती क्षेत्रों में उपनिवेशवादियों को पश्चिम में पठान कबीलों और पूर्व में नागाओं के जर्बदस्त प्रतिरोध का सामना करना पड़ा। 2 अक्टूबर को मार्टियर डुरेण्ड के नेतृत्व में एक मिशन काबुल आया और उनके द्वारा निर्धारित[40] की गई भारत-अफगान सीमा के तहत 2 नवम्बर, 1893 में अब्दुर्रहमान को ऐसी सन्धि पर दस्तखत करने पड़े, जिसमें कृत्रिम डुरेण्ड लाइन को अफगानिस्तान की सीमा रेखा मान लिया गया।[41] परिणाम स्वरूप पख्तूनिस्तान सहित अनेक पठान कबीले डुरेण्ड रेखा द्वारा अफगानिस्तान से कटकर ब्रिटिश अधिकृत क्षेत्र में आ गए।[42] जिससे इन कबीलों में अत्यन्त असंतोष फैला। अंग्रेजों ने सैनिक शक्ति द्वारा इन्हें दबा दिया। यद्यपि वे इन सीमावर्ती क्षेत्रों में अपना पूर्ण प्रभुत्व स्थापित करने में सफल नहीं हो सके। किन्तु उपनिवेशवादियों ने डुरेण्ड रेखा द्वारा इतिहास में भारत और अफगानिस्तान को विभाजित कर दिया।[43] बिलग्रामी ने लिखा कि इस समझौते के द्वारा भारत-अफगान सीमा सम्बन्धी समस्या का अन्त नहीं हो सका। यह अफगानिस्तान पर ब्रिटिश हस्तक्षेप ही था, जिसने एक नई समस्या (पख्तूनिस्तान) को जन्म दिया।[44] अफगानों ने इसे कभी स्वीकार नहीं किया, क्योंकि उनके अनुसार ये रेखा अफगानिस्तान में रहने वाले पठानों को पख्तूनिस्तान में रहने वाले पठान भाइयों से अलग करती थी।[45] इस प्रकार उन्नीसवीं शताब्दी में डुरेण्ड लाइन के क्षेत्र में उत्पन्न तनावपूर्ण स्थिति 1947 में भारत से ब्रिटेन के प्रस्थान तक कम नहीं हुई।

अफगानिस्तान में अब्दुर्रहमान के नेतृत्व में स्थानीय राजनीति में स्थिरता आ चुकी थी। उन्होंने अंग्रेजों को देश में आने की अनुमति नहीं दी, केवल भारतीय मुसलमान को काबुल में प्रतिनिधित्व की अनुमति दी गई, किन्तु इस प्रकार शेष विश्व से कटे रहने के कारण अफगानिस्तान

---

39. अब्दुर्रहमान "द लाइफ आफ अब्दुर्रहमान, अमीर आफ अफगानिस्तान", सम्पादक मीर मुंशी सुल्तान मोहम्मद खान, लन्दन (1900), खण्ड-2, पृ. 259-304
40. नैय्यर, कुलदीप, "रिपोर्ट ऑन अफगानिस्तान", (दिल्ली 1981), पृ. 301
41. एचीमन, सी. यू., देखिए क्र. 33
42. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 40
43. प्रसाद, विश्वेश्वर, देखिए क्र. 27, भाग द्वितीय 1888-1914, (दिल्ली 1979), पृ. 180
44. बिलग्रामी, ए. एच., "अफगानिस्तान एण्ड ब्रिटिश इण्डिया 1793-1907", दिल्ली 1972, पृ. 23
45. हिन्दुस्तान (नई दिल्ली), 6 नवम्बर, 1973

आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक विकास की दृष्टि से पिछड़ गया। 1901 में अब्दुर्रहमान का देहान्त हो गया।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना व उसकी नीतियाँ

भारत की पराधीनता ने उसके सभी विदेशी सम्बन्ध समाप्त कर दिए थे। पड़ोसी देशों से सम्बन्धों का निर्धारण भी ब्रिटिश सरकार द्वारा स्वहित में किया जाता था। उन्नीसवीं शताब्दी में भारत में सामाजिक एवं धार्मिक सुधार आन्दोलन चले, इससे भारतीय जनता में नवीन जाग्रति उत्पन्न हुई। अंग्रेजों की क्रूर अपमान जनक नीतियों के कारण जनता ने अनुभव किया कि भारत की उन्नति तब तक सम्भव नहीं हो सकती, जब तक वहाँ विदेशी शासन है। राजनैतिक चेतना के उभरने से कुछ लोगों ने राजनैतिक संगठन बनाने आरम्भ किए। इन्हीं संगठनों में 1885 में राष्ट्रीय कांग्रेस का जन्म हुआ, जिसके नेतृत्व में स्वतन्त्रता आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। उनकी मुख्य राजनैतिक मांग थी कि विधान परिषदों व अन्य सरकारी पदों में भारतीय प्रतिनिधियों का बहुमत होना चाहिए। कांग्रेस के नेता तिलक औपनिवेशिक शासन के विरूद्ध जन आन्दोलन के प्रति सहानुभूति रखते थे, फिर भी सशस्त्र संघर्ष को स्वतन्त्रता प्राप्त करने का सही रास्ता नहीं समझते थे। किन्तु अंग्रेजों ने राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन के प्रति दमन कारी रूख अपनाया। लार्ड लिट्टन ने भारतीय भाषाओं के सभी प्रकाशनों पर प्रारम्भिक सैंसरशिप लागू कर दी। बाद में लार्ड रिप्पन (1880-84) ने प्रेस कानून को निरस्त कर दिया। किन्तु लार्ड कर्जन (1899-1905) भारतीय बुद्धिजीवियों से घृणा करता था। उसके काल में फौजी व्यय में वृद्धि की गई तथा उत्तरी-पश्चिमी सीमा पर विशेष नई रेल लाइनें बिछायी गई, जिससे अंग्रेज, पठान-कबीलों पर अधिक मजबूती से नियन्त्रण कर सके। कर्जन की दमनकारी नीतियों ने अंग्रेजों के प्रति घृणा व क्रान्तिकारी आंदोलनों को बढ़ाने में ही मदद की।

कांग्रेस के नेता पं. जवाहर लाल नेहरू, महात्मा गांधी एवं अन्य नेताओं ने मिलकर एक स्वतन्त्र विदेश नीति की भूमिका तैयार की, जिसमें गुटनिरपेक्षता व निरस्त्रीकरण को प्रमुख स्थान दिया गया। बीसवीं शताब्दी में कांग्रेस अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर विचार व्यक्त करने लगी थी। उसने पड़ोसी देशों के प्रति ब्रिटिश नीतियों पर सुझाव देना शुरू कर दिया। उसने डुरेण्ड रेखा के निर्धारण की आलोचना की।[46] 1893 के नवें अधिवेशन में दादा भाई नौरोजी ने बताया कि भारत में सेना के अत्यधिक खर्च का कारण अफगानिस्तान के साथ युद्ध के लिए तैयार होना है,[47]

---

46. प्रसाद, विमल, 'द आरीजिन्स ऑफ इण्डियन फॉरेन पॉलिसी', कलकत्ता 1960, पृ. 40
47. "द इण्डियन नेशनल कांग्रेस कण्टेनिंग ऐन एकाउण्ट ऑफ इट्स आरीजिन एण्ड ग्रोथ फुल टैक्ट्स ऑफ द प्रेसीडेन्सियल एड्रस", जी. ए. नातेसन एण्ड कम्पनी द्वारा प्रकाशित (मद्रास), पृ. 170

इसलिए भारतीय जनता ब्रिटिश नीति का कड़ा विरोध करती है।[48]

भारत में अंग्रेजों के विरूद्ध चल रहे स्वतन्त्रता आन्दोलनों ने अफगानिस्तान को अत्यधिक प्रभावित किया। इसलिए 19 वीं शताब्दी के अन्त तक अफगान जनता भी उपनिवेशवाद विरोधी आन्दोलन का मुकाबला करने का प्रयास करने लगी। अफगानिस्तान में ब्रिटिश व रूसी गतिविधियाँ जारी रही। ब्रिटेन प्रारम्भ से ही अफगानिस्तान का विभाजन कर उसको समाप्त करना चाहता था, उसने वहाँ कोई विकास कार्य नहीं किए। ब्रिटेन के आधिपत्य में रूस को अफगानिस्तान के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप का अधिकार नहीं था। वह केवल उसकी मदद कर सकता था।[49] इसलिए अमीर दोस्त मोहम्मद और अब्दुर्रहमान ने कहा कि अगर अफगानिस्तान को मिटने से बचाना चाहते हो तो सैंटपीटर्सबर्ग (रूस) और कलकत्ता (ब्रिटिश भारत) को काबुल के नज़दीक मत आने देना और उनमें बराबर की समदूरी रखना।[50]

1901 में अब्दुर्रहमान का बेटा हबीबुल्लाह खान तख्त पर बैठा। वह अपने पिता के विचारों से अधिक उदार था। उसने काबुल में अनेक सुधारों के साथ कैदियों को आम माफी की घोषणा की। उसके द्वारा देश को अर्ध उपनिवेशवादी दर्जे को स्वीकारने से मुल्ला प्रतिगामी व प्रगतिशील लोगों ने उसका विरोध किया। उस समय भारत का वायसराय विस्तारवादी नीति का परिचायक लार्ड कर्जन था। उसने अब्दुर्रहमान के साथ की गई सभी सन्धियाँ रद्द करके सैनिक व अन्य सहायता भी बन्द कर दी। उसे केवल 18 लाख रूपये प्रतिवर्ष अनुदान के रूप में दिया जाने लगा।

दिसम्बर 1904 में विदेश सचिव लाउसदाने के नेतृत्व में एक मिशन काबुल आया, जिसके द्वारा आंग्ल-अफगान सन्धि में भारत से काबुल कन्धार तक रेल और तार व्यवस्था स्थापित करने की हिदायत की गई। अफगानों का मत था कि रेल यात्रा द्वारा अफगानिस्तान में अंग्रेजों का आवागमन आसान हो जाएगा, इसलिए उन्होंने इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया।[51] 21 मार्च, 1905 को एक सन्धि के अनुसार ब्रिटेन के साथ हुए पिछले सभी समझौतों का अनुमोदन किया गया। हबीबुल्लाह अपनी इस स्थिति से सन्तुष्ट था और उसने नये वायसराय लार्ड मिण्टो द्वारा दी गई भारत की

48. बनर्जी, सुबरात, 'इण्डिया, अफगानिस्तान एण्ड द वर्ड' द्वारा अजहर अन्सारी 'अफगानिस्तान थ्रो इण्डियन आइज' पृ. 65
49. खान, अब्दुल गफ्फार खान "डवलपमेण्ट इन अफगानिस्तान", बख्तर न्यूज एजेन्सी, काबुल न्यू टाइम्स, 11 जनवरी, 1980
50. वैदिक, वेद प्रताप, 'भारत यात्रा पर आये राष्ट्रपति दाउद से नव भारत टाइम्स के सहसम्पादक वेद प्रताप वैदिक की बातचीत', नवभारत टाइमस (नई दिल्ली), 14 मार्च, 1975
51. गुहा, अमालेन्दु, 'अफगानिस्तान इन सैन्ट्रल एशिया', सेमीनार ऑन मेजर प्रॉब्लम्स ऑफ मार्डन सैण्ट्रल एशिया, 27-28 जनवरी, 1970 पृ. 1-7
    - कुमार, अशोक, देखिए क्र. 3, पृ. 176

दावत को स्वीकार किया। 1907 में वह भारत आया और उसने भारतीय क्रान्तिकारियों के प्रति हार्दिक सहानुभूति प्रगट की।[52] उसी समय 1905-7 में रूस में हो रही क्रान्ति के प्रगतिशील परिवर्तनों का अफगानिस्तान व भारत पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा। काबुल में अमीर हबीबुल्लाह की राजनैतिक उदासीनता और ब्रिटिश समर्थक नीति ने देश में एक असफल विद्रोह को जन्म दिया। तभी 31 अगस्त, 1907 में ब्रिटेन ने रूस के साथ संन्धि कर ली, जिससे रूस भी अफगानिस्तान की गतिविधियों में शामिल हो गया।[53]

मुस्लिम लीग की स्थापना व क्रान्तिकारी आंदोलन

1905 में हुई रूसी क्रान्ति से प्रभावित हो कर भारत में हिन्दू-मुस्लिम ने एक होकर आन्दोलन चलाया। उनमें फूट डालने के उद्देश्य से लार्ड मिण्टो ने (1906-1910) विधान परिषदों में मुस्लिमों को विशेष स्थान देकर दोनों समुदायों को एक दूसरे के विरूद्ध खड़ा किया। दिसम्बर, 1907 को ढाका में मुस्लिम लीग नामक एक प्रतिक्रियावादी ब्रिटिश समर्थक संगठन स्थापित किया गया। राष्ट्रीय कांग्रेस को हिन्दू संस्था घोषित किया गया। 1906 के अधिवेशन में कांग्रेस ने स्वराज्य की मांग की, तभी बंगाल में स्वतन्त्रता आन्दोलन तेज हो गये और राष्ट्रीय कांग्रेस में फूट पड़ने से नरम व गरम दलों में मतभेद हो गये। नरम दल स्वशासन में विस्तार से अधिक कुछ नहीं चाहते थे, जबकि गरम दल पूर्ण स्वतन्त्रता के समर्थक थे। तिलक इनके मुख्य नेता रहे। भारतीय संविधान को दण्ड संहिता की संज्ञा देने में पूरा राष्ट्र उनसे सहमत था। 1903-14 में मोहनदास करमचन्द गांधी ने अफ्रीका में वकालत के साथ ही भारतीय प्रवासियों के अधिकारों तथा जातिवाद व रंगभेद के विरूद्ध संघर्ष किया। 1914 में भारत में गांधी जी ने अहिंसात्मक प्रतिरोध तथा सत्याग्रह द्वारा अग्रेंजों के खिलाफ संघर्ष आरम्भ किया। अन्य देशों में भी भारतीय क्रान्तिकारी अपना मुक्ति आन्दोलन चला रहे थे।

प्रथम महायुद्ध तथा भारत व अफगानिस्तान

24 अगस्त, 1914 को प्रथम विश्व युद्ध शुरू हो गया। भारत ने यह युद्ध अंग्रेजों की ओर से लड़ा, किन्तु युद्ध के दौरान फौजी व्यय भारत के कन्धों पर डाल दिए जाने से आम जनता में असन्तोष उत्पन्न हो गया। जबकि अफगान अमीर हबीबुल्लाह ने इस युद्ध में तटस्थ रहने

---

52. परसी, सीकेस, 'ए हिस्ट्री आफ अफगानिस्तान' खण्ड द्वितीय, (लन्दन 1940), पृ. 225-226
53. विवेकानन्द, वी.,' अफगानिस्तान इनवेंशन व्यूज़ फ्राम इण्डिया', एशिया पैसिफिक कम्युनिटी (9) 1980, पृ. 64

की घोषणा की, किन्तु युद्ध की पूरी अवधि के दौरान अफगानिस्तान विभिन्न विदेशी व स्थानीय राजनैतिक शक्तियों की प्रतिद्वन्द्विता का अखाड़ा बना रहा।

तृतीय आंग्ल-अफगान युद्ध व स्वतन्त्र अफगानिस्तान की स्थापना

1917 में हुई रूस की साम्यवादी क्रान्ति ने जहाँ भारतीय राष्ट्रवादियों को मुक्ति संघर्ष तेज करने के लिए प्रेरित किया, वहीं अफगानिस्तान भी इससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका। अफगान देशभक्तों को उपनिवेशवादियों के चंगुल से बाहर निकलने के लिए रूस की सहायता मिलना आरम्भ हो गई। अमीर हबीबुल्लाह के काल में राजनैतिक और आर्थिक स्थिति जटिल थी। जनता के व्यापक असन्तोष के कारण ही उसकी हत्या कर दी गई और काबुल का गवर्नर अमानुल्लाह खान 28 फरवरी, 1919 को अफगानिस्तान का अमीर बन गया। उसने देश में पूर्ण स्वाधीनता के लिए जनता से सहायता की अपील की।[54] अमीर ने भारत के वायसराय चेम्सफोर्ड को 3 मार्च, 1919 को अफगानिस्तान की स्वाधीन व मुक्त सरकार के लिए लिखा और कहा कि वे मैत्री के आधार पर उनके साथ सहयोग की सन्धियां करने के लिए तैयार हैं, जिनसे दोनों सरकारों को लाभ हो। चेम्स फोर्ड ने उत्तर में दोस्ताना व्यापारिक सम्बन्धों के लिए लिखा, किन्तु शब्दजाल पूर्ण इस दस्तावेज में अफगान जनता की स्वाधीनता के सम्बध में कुछ नहीं लिखा। अंग्रेज तो रिश्वत देकर अमीर को खरीदना चाहते थे। ब्रिटिश सरकार के कोई निश्चित उत्तर न देने पर अमानुल्लाह खान ने दरबार बुलाकर देश के पूर्ण स्वतन्त्र होने की घोषणा कर दी।[55]

भारत में अंग्रेजों द्वारा अफगानिस्तान की विदेश नीति को नियन्त्रित किए जाने की आलोचना हो रही थी[56] और भारत की राजनैतिक क्रान्तिकारी गतिविधियों की खबर एजेंटों द्वारा अफगानिस्तान पहुँच रही थी। लार्ड चेम्सफोर्ड ने रोलट एक्ट के द्वारा पुलिस अधिकारियों को असीमित शक्तियां प्रदान कीं और अफगान सीमा पर सेना भेज दी। इस एक्ट का दोनों देशों में विरोध किया गया।[57] तदुपरान्त ब्रिटिश सरकार ने अफगानिस्तान में एक बड़ी सेना भेज कर युद्ध छेड़ दिया।

3 मई, 1919 को आरम्भ हुआ तृतीय आंग्ल अफगान युद्ध अधिक दिनों तक नहीं चला। रावलपिण्डी में दोनों देशों के प्रतिनिधियों ने 8 अगस्त, 1919 को शान्ति सन्धि पर हस्ताक्षर किए।

---

54. अमानुल्लाह ने हबीबुल्लाह के काल में उत्पन्न जनता के असन्तोष को देख लिया था कि स्वतन्त्रता प्रिय अफगान किसी दूसरे देश का हस्तक्षेप नहीं चाहते, इसलिए अमानुल्लाह ने प्रारम्भ से ही अफगानिस्तान की स्वतन्त्रता की मांग की।
55. शर्मा, सी. एस,. 'इण्डिया एण्ड एंग्लो-सोवियत रिलेशन्स 1917-1947', (बम्बई 1959), पृ. 38
56. प्रसाद, विश्वेश्वर प्रसाद, देखिए क्र. 43, पृ. 299-301
57. मोलेस वोर्थ, जी. एन., 'अफगानिस्तान 1919' बम्बई 1962, पृ. 26-27

ब्रिटिश नेता हैमिल्टन ग्राण्ट ने अफगान प्रतिनिधि मण्डल के नेता महमूद तार्जी को पत्र देकर कहा कि, वे उनको आन्तरिक तथा वाह्य मामलों में अधिकारिक रूप से स्वाधीन व स्वतन्त्र करते हैं।[58] बाद में विचारकों ने लिखा कि यदि अमीर द्वारा सौहार्द्रपूर्ण सन्देश का शिष्टाचार पूर्ण जवाब दे दिया जाता तो तीसरा अफगान युद्ध टाला जा सकता था।[59] भारतीय नेताओं द्वारा भी अफगानिस्तान पर आक्रमण के लिए ब्रिटिश विस्तारवादी नीति की आलोचना की गई।[60] इस युद्ध में रूस ने अफगानिस्तान को समुचित सहायता प्रदान की।

इस प्रकार लगभग 150 वर्षो तक ब्रिटेन व रूस की कूटनीतिक चालों का केन्द्र बना अफगानिस्तान अमानुउल्लाह के नेतृत्व में स्वतन्त्र विदेश नीति की स्थापना कर सका। इससे पूर्व अफगानिस्तान के वैदेशिक सम्बन्ध पड़ोसी सीमांत राष्ट्रों तक ही सीमित रहे, क्योंकि अशिक्षित मान्यतावादी अमीर दूसरे देशों से सम्बन्ध बढ़ाने की आवश्यकता को अनुभूत नहीं करते थे।[61] 1919 में रूस पहला देश था, जिसने अफगानिस्तान को मान्यता प्रदान की।[62] अमानुल्लाह ने रूस, पश्चिमी शक्तियों व यूरोपीय देशों के साथ राजनयिक सम्बन्ध स्थापित कर एक सक्रिय अन्तर्राष्ट्रीय अफगान कूटनीति का मार्ग प्रशस्त किया। अमीर ने ब्रिटिश व रूसी प्रतिस्पर्धा में संतुलन बनाये रखने के लिए जहाँ 28 फरवरी, 1921 को रूस के साथ 12 धाराओं वाली ऐतिहासिक सन्धि की,[63] वहीं ब्रिटेन के साथ 2 नवम्बर, 1921 को एक व्यापारिक व मैत्रीपूर्ण संन्धि द्वारा सम्मानित सम्बन्ध स्थापित किए।

भारत में क्रान्ति की सफलता के लिए रूस को अफगानिस्तान की आवश्यकता थी। भारतीय क्रान्तिकारियों को शस्त्र देकर अफगानिस्तान के रास्ते से ही भेजा जा सकता था। इसी उद्देश्य से मानवेन्द्र राय के नेतृत्व में एक मुक्ति सेना को गठित किया गया, किन्तु 1921 में ब्रिटेन के साथ सन्धि हो जाने के कारण अमानुउल्लाह ने क्रान्तिकारियों की गतिविधियों पर नियन्त्रण लगा दिया।[64] इसलिए ब्रिटिश विरोधी सोवियत योजना जिसे अमानुउल्लाह का समर्थन प्राप्त था, असफल हो गई।[65] जैसे ही भारत-अफगान सीमा पर ब्रिटिश सेना द्वारा मुठभेड़ों के समाचार आने लगे,

---

58. एचीसन, सी. यू., क्र0 33, पृ. 286-287
59. शाह, इकबाल अली, 'आधुनिक अफगानिस्तान', लन्दन 1934, पृ. 102
60. यंग इण्डिया, (अहमदाबाद), 4 मई, 1921
61. छाबड़ा, हरी शंकर, 'अफगानिस्तान भॉट लाइस अहेड', वर्ड फोकस, खण्ड 5, अकं 4 अप्रैल, 1984, पृ. 31
62. वैदिक, वी.पी., 'अफगानिस्तानः ए हिस्टोरीकल पर्सपैक्टिव', वर्ड फोकस, वही, पृ. 3-6
63. वैदिक, देखिए क्र. 38 पृ. 247
64. राय, एम. एन., 'एम. एन. रायॅज मेमोयर्स', बम्बई 1964, पृ. 411-418
65. एचीसन, देखिए क्र. 33
    - वैदिक देखिए क्र. 38

रूस ने अमानुउल्लाह को नैतिक समर्थन देना प्रारम्भ कर दिया। कहा जाता है कि कर्जन की अबुद्धिमत्तापूर्ण क्रूर कार्रवाईयों के कारण जहाँ एक ओर अफगानिस्तान रूस की ओर झुक गया, वहीं दूसरी ओर भारत में ब्रिटिश विरोधी अभियान पहले से कहीं अधिक तेज हो गए।

भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन के प्रति अफगान दृष्टिकोण

हबीबुल्लाह के काल से ही काबुल भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम का केन्द्र बिन्दु बना रहा। प्रथम विश्व युद्ध के दिनों में ही 1 दिसम्बर, 1915 को भारतीय नेताओं ने एक क्रान्तिकारी दल का निर्माण कर काबुल में अस्थायी सरकार की स्थापना की। जिसके राष्ट्रपति महेन्द्र प्रताप, प्रधानमन्त्री बरकतुल्लाह और विदेश मन्त्री उवेदुल्लाह* हुए। इस सरकार का उद्देश्य था कि अफगानों की सहायता से ब्रिटिश सरकार का भारत से कैसे पलायन कराया जाए।[66] अफगान सरकार ने उन्हें सभी प्रकार की (सैन्य व आर्थिक) सहायता प्रदान की। 18000 भारतीय मातृ भूमि छोड़कर काबुल आ गए। इस देशान्तर गमन से दोनों देश अधिक करीब आए, किन्तु इन क्रांतिकारियों ने अफगान सरकार के लिए बड़ी समस्याएँ उत्पन्न कर दीं थीं, इसलिए वर्ष के अन्त में उन्हें वापस लौटना पड़ा। कुछ क्रान्तिकारी वहीं सीमा पर बस गए और अन्य बहुत से नेताओं के साथ नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने काबुल में ही रह कर अपनी गतिविधियाँ जारी रखीं।[67] इनका "आजाद हिन्दुस्तान" अखबार उर्दू में प्रकाशित होने लगा। महमूद तार्जी (1912-33) लगातार भारत में मौलाना अबुल कलाम आजाद के पास समाचार भेज रहे थे।[68]

प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् कांग्रेस की शक्ति दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी। उसकी मांगें पहले से अधिक सशक्त व उन्नत हो गई थी। अब वे जहां अपनी पूरी स्वतन्त्रता की मांग कर रहे थे, वहीं वे अफगान स्वतन्त्रता का भी समर्थन कर रहे थे।[69] भारत में अमानुल्लाह खान को 'अफगानिस्तान का मुक्तिदाता' कहा गया।[70] अमानुल्लाह ने अंग्रेजों के प्रति विरोध व्यक्त करते हुए 'जेहाद' में कहा कि अफगानिस्तान अपनी पूर्ण स्वतन्त्रता की मांग के साथ ही अपने भारतीय भाइयों की सहायता का उद्देश्य रखता है।

---

66. राजा महेन्द्र प्रताप, 'माई लाइफ स्टोरी ऑफ फिफ्टी फाइव ईयर्स', (देहरादून 1947), पृ. 52
67. चौधरी, नीरजा, 'इण्डियाज स्टेण्ड ऑफ अफगानिस्तान', एशियाज व्यास, हिम्मत वीकली, फरवरी 22, 1980, पृ. 7-8, 23
68. काजेम, मोहम्मद, 'हिस्टोरीकल लिंक्सविटवीन इण्डिया एण्ड अफगानिस्तान', स्टेट्स मैन (दिल्ली), 5 जून, 1969
69. परसी, सीकेस, देखिए क्र. 52, पृ. 269
70. बाकी, अब्दुल, देखिए क्र. 6, पृ. 1-2

* उवेदुल्लाह अफगान राजा हबीबुल्लाह के छोटे भाई थे, इसलिए उनसे भारतीय संगठनों को सरकारी और गैर सरकारी तौर पर अत्यधिक मदद मिल रही थी।

1927 में अमानुल्लाह अपनी पहली राजनैतिक यात्रा पर बम्बई आए। उन्होंने एक जनसभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि वे भारत की स्वतन्त्रता की मांग का समर्थन करते हैं। एक मस्जिद में बोलते हुए उन्होंने कहा कि हिन्दुस्तान हिन्दू-मुस्लिम एकता का विशाल प्रतीक है। केरयो के एक विद्यार्थी समूह में दिए गए भाषण में अमानुल्लाह ने कहा कि 'मैं भारत से प्यार करता हूँ'।[71] उनकी इस यात्रा का भारत-अफगान सम्बन्धों पर गहरा प्रभाव पड़ा। भारतीय जनता अफगान राजा से अत्यन्त प्रभावित हुई। अमानुल्लाह खान की महात्मा गांधी से गहरी मित्रता थी। इसलिए महात्मा गांधी ने अफगानिस्तान के प्रति मित्रता व्यक्त करते हुए कहा कि मुझे विश्वास नहीं होता कि प्राचीन (दुर्रानी काल में) अफगानिस्तान भारत पर कब्जा करना चाहता था। अफगानों का स्वभाव है कि वे किसी कीमत पर अपनी स्वतन्त्रता को नहीं बेचना चाहते न ही वे आक्रमण कर सकते हैं। अफगान स्वभाव से सहयोगी रहे हैं, अत: भारत नहीं चाहता कि वहां किसी प्रकार का बाहरी हस्तक्षेप हो। उन्होंने आगे कहा कि अफगानों के साथ भारत के सम्बन्धों में कटुता या मतभेद नहीं हैं। भारत अपने पड़ोसी देशों के साथ मित्रता का भाव रखता है।[72]

वास्तव में, अमानुल्लाह से पूर्व अफगान शासकों का ध्यान भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रति नहीं रहने के कई कारण थे-प्रथम, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने 1915 से पूर्व एक निश्चित व सही स्वरूप नहीं लिया था, इसलिए अफगान शासक भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन की नीतियों को सही ढंग से नहीं समझ सके। द्वितीय, अफगान शासक अपनी आन्तरिक कठिनाइयों में व्यस्त रहे। तृतीय, प्रथम महायुद्ध से पूर्व अफगानिस्तान की विदेश नीति का संचालन ब्रिटिश सरकार द्वारा किया जाता था, ब्रिटिश अधिकारियों के कड़े रुख ने अफगानिस्तान को सभी अधिकारों से वंचित कर दिया। ऐसे भी तथ्य मिलते हैं कि अमीर हबीबुल्लाह द्वारा अस्थायी सरकार के प्रति कड़ा रुख अपनाने पर भारत में कांग्रेस ने कहा कि अफगान सरकार ब्रिटेन का समर्थन कर रही है, किन्तु जहां तक अफगान जनता का प्रश्न है ब्रिटिश विरोधी नीति ही अफगान जनता की उनके प्रति सहानुभूति का मुख्य कारण रही। भारतीय जनसंघ के सचिव नाना जी देशमुख ने कहा कि भारतीय कांग्रेस का सबसे अधिक समर्थन अफगानिस्तान ने किया है।[73] इसलिए प्राय: भारत सरकार विचारणीय मुद्दों पर अफगानिस्तान की मदद लेती रही है।[74]

---

71. फिशर, लाऊस, 'सोवियत इन वर्ड अफेयर्स 1917-29', खण्ड द्वितीय, न्यूयार्क 1951, पृ. 788
72. यंग इण्डिया (अहमदाबाद), 18 मई, 1921 और 1 जून, 1921
73. द हिन्दुस्तान टाइम्स, 5 दिसम्बर, 1965
74. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 13, अंक 1, जनवरी 1967

रूस में भी अमानुल्लाह का समर्थन किया जा रहा था। भारतीय कांग्रेस ने यद्यपि उनकी स्वतन्त्रता की मांग का समर्थन किया, किन्तु कोई उचित व ठोस कदम नहीं उठा सकी। क्योंकि कांग्रेस के समक्ष बहुत सी कठिनाइयां थीं। प्रथम, जहां कांग्रेस अपनी राष्ट्रीय समस्याओं में उलझी हुई थी, वहीं प्रथम विश्व युद्ध में जर्मनी की ओर से लड़ा टर्की हार गया था। मुस्लमानों को डर था कि अंग्रेज खलीफा के साथ बुरा व्यवहार करेंगे, जिससे भारत सहित समस्त मुस्लिम जगत में खिलाफत आन्दोलन चल पड़ा। कांग्रेस ने भी हिन्दू-मुस्लिम एकता बनाए रखने के लिए खिलाफत आन्दोलन का समर्थन किया। उसी समय 6 अप्रैल, 1919 को भारत में विदेशनीति के विरोध में राष्ट्रीय हड़ताल कर दी गई। 13 अप्रैल को जब शान्ति के लिए क्रांन्तिकारी नेता अमृतसर के जलियांवाला बाग में मिले तो अंग्रेजों द्वारा 2000 भारतीयों का कत्ल कर दिया गया। अंग्रेजों की अमानवीय नीतियों के कारण भारत में अत्यधिक रोष व्यक्त किया गया। अफगानिस्तान में भी इस घटना पर रोष व दुःख व्यक्त किया।[75] द्वितीय, अफगानिस्तान में राष्ट्रीय चेतना का उभार प्रथम विश्व युद्ध के बाद बढ़ा। अंग्रेजों द्वारा विश्व राजनीति में भाग लेने की स्वतन्त्रता को कुचलने के प्रयत्न के कारण इस भावना में अधिक उग्रता बढ़ी। वहां स्वाधीन विदेश नीति को राष्ट्रीय स्वाधीनता का प्रमुख चिह्न माना जाने लगा। अत: ऐसी स्थिति में अफगान अमीर ने भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रति अपने विचार व्यक्त नहीं किए, जबकि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस प्रथम विश्व युद्ध में अंग्रेजों की लड़ाई लड़ने के पश्चात् उन्हें किसी तरह से देश से बाहर करना चाहती थी। मई 1919 में तृतीय ऑंग्ल-अफगान युद्ध के प्रति कांग्रेस की बैठक में महात्मा गांधी ने कहा कि एक तरह से यह खुला आक्रमण था, इसमें जिन्होंने अंग्रेज सरकार की मदद की है, उन्होंने घोर अपराध किया है।[76] अमानुल्लाह ने गांधी जी की ब्रिटिश विरोधी नीतियों की प्रशंसा की।[77] फलत: 1922 में काबुल में स्थापित अखिल भारतीय कांग्रेस की शाखा को अफगान सरकार ने स्वीकार कर लिया।[78]

कांग्रेस ने एक प्रस्ताव पास कर पड़ोसी देशों तथा गैर भारतीय राज्यों को बताया कि वर्तमान भारत सरकार की नीतियों को तय करने में किसी भी भारतीय प्रतिनिधि को शामिल नहीं

75. मुखर्जी, साधन, 'अफगानिस्तान फ्राम ट्रेजिडी टू ट्रम्फ' दिल्ली 1984, पृ. 47
76. यंग इण्डिया (अहमदाबाद), 4 मई, 1921
77. मिश्रा, के. पी., 'इण्डो अफगान रिलेशन्स', साऊथ एशियन स्टडीज, खण्ड 2, अंक 1, जनवरी 1967, पृ. 60
78. द इण्डियन नेशनल कांग्रेस, ए. आई. सी. सी., सितम्बर 1920-दिसम्बर 1923 (इलाहाबाद), पृ. 75, 192, 199, 237

किया है, इसलिए कांग्रेस पड़ोसी देशों से अपनी विदेश नीति के अनुसार सम्बन्ध स्थापित करेगी। अंग्रेज सरकार ने भारत के पड़ोसी देशों पर जो सन्धियां थोपी हैं, वे साम्राज्यवाद का प्रतीक हैं, कांग्रेस उनका विरोध करती है। इसमें उन्होंने भारतीय हित शामिल नहीं किया है। वास्तव में अंग्रेज सरकार अपना साम्राज्य विस्तार भारतीय सेना और धन की सहायता से कर रही थी, जिससे भारत विश्व में बदनाम हो रहा था।

10 जनवरी, 1927 को बैल्जियम की राजधानी ब्रुसेल्स में पददलित राष्ट्रों के सम्मेलन में नेहरू जी ने अपनी प्रतिभा से सदस्य राष्ट्रों से भारत की स्वतन्त्रता के संघर्ष में पूर्ण समर्थन का आश्वासन प्राप्त किया। इसलिए वे कांग्रेस के विदेश विभाग के संचालक बना दिए गए। 3 फरवरी, 1928 को साइमन कमीशन के आगमन पर भारत में कड़ा विरोध किया गया। असहयोग आन्दोलन के पूरे भारत में फैल जाने पर अंग्रेजों ने कड़ी कार्रवाई करने का निर्णय लिया। इसी कारण उत्तरी-पश्चिमी सीमान्त के केन्द्र पेशावर में असंतोष फैल गया।[79] यहां अंग्रेजों के विरूद्ध आन्दोलन का नेतृत्व गांधी जी के अनुयायी खान अब्दुल गफ्फार खां कर रहे थे।

1928 में अफगानिस्तान में अमानुल्लाह के विरूद्ध आन्तरिक विद्रोह भड़क उठा। भारत में अफगान सरकार के प्रति पूरी सहानुभूति व्यक्त की गई।[80] जनवरी 1929 में ब्रिटिश सरकार की शह से अमानुल्लाह को गद्दी से हटा दिया गया।[81] तत्पश्चात् बच्चा-ए-सिक्का ने सत्ता सम्भाली।[82] 25 जनवरी, 1929 को सम्पूर्ण भारत में "अमानुल्लाह डे" घोषित किया गया। कांग्रेस में सर्वसम्मत से पं0 नेहरू ने लिखा कि "अफगानिस्तान की हाल की घटनाओं से उन्हें गहरा दु:ख हुआ है। वे उस वीर राजा के प्रति सहानुभूति व्यक्त करते है"।[83]

पं0 जवाहरलाल नेहरू ने 1930 में एशियाई संघ की बैठक में कहा कि भारत ने अपने मित्र अफगानिस्तान की समस्याओं के प्रति सदैव अनुकूल विचार तथा सहानुभूति प्रदर्शित की है।[84] अपने पडोसी देशों से अच्छे सम्बन्धों के लिए मार्च, 1931 में गोलमेज़ सम्मेलन में राष्ट्रीय कांग्रेस ने सुरक्षा व विदेशी सम्बन्धों में नियन्त्रण की मांग की। तत्पश्चात् कराची में हुए कांग्रेस के अधिवेशन में घोषणा की गई कि भारत सीमा से लगे पड़ोसी देशों के साथ मित्रता बनाए

---

79. शर्मा, सी. एस., देखिए क्र. 55, पृ. 134-35। उसी समय असहयोग आन्दोलन के साथ हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए समझौता हो गया।
80. द ट्रिब्यून (लाहौर), 28 फरवरी, 1929
81. शाह, इक़बाल अली, 'ट्रैजिडी ऑफ अमानुल्लाह', लन्दन 1934, पृ. 173-74
 - अली, मोहम्मद, 'प्रोग्रेसिव अफगानिस्तान', लाहौर 1933, पृ. 235-36
82. सिंह, जे. डी., 'अफगानिस्तान फेल टु सी इण्डियाज प्वाइन्ट' टाइम्स आफ इण्डिया, 13 फरवरी, 1980
83. द कांग्रेस बुलेटिन, ए. आई. सी. सी. इलाहाबाद, 27 फरवरी, 1929
84. तेन्दुलकर, डी. जी., 'महात्मा लाइफ ऑफ एम. के. गॉधी', खण्ड 7, बम्बई 1954, पृ. 263

रखेगा। उसमें किसी तरह की सीमा सम्बन्धी कटुता का प्रवेश नहीं होगा।[85]

काबुल में सत्ता परिवर्तन

अमानुल्लाह के पतन के बाद नए अफगान शासक बच्चा-ए-सिक्का को रूस व ब्रिटेन की ओर से न तो कोई सहायता प्राप्त हुई और न ही विरोध हुआ।[86] अमानुल्लाह के इन दस वर्षों के शासन काल में जहां अफगानिस्तान की विदेश नीति में निखार आया और उसने राष्ट्रीय हितों की व्यापक सफलता प्राप्त की थी,[87] वहीं बच्चा-ए-सिक्का के अव्यवस्थापूर्ण शासन पर रूस द्वारा खेद प्रगट किया गया।

अफगानिस्तान के सेनापति नादिरशाह जो 1924 में अफगान राजदूत बनकर फ्रांस चले गए थे, लौट कर पुनः भारत आये और उन्होंने उत्तरी-पश्चिमी प्रान्त में सेना जमा कर काबुल की ओर कूच कर दिया। 16 अक्तूबर, 1929 को नादिर शाह ने काबुल पर अधिकार कर स्वयं को बादशाह घोषित कर दिया। उन्होंने अमानुल्लाह द्वारा जारी की गई विदेश नीति को ही दोहरायाऔर कहा कि उनकी सरकार पड़ोसी देशों के साथ मैत्री सन्धि करने को तैयार है, ताकि देश की अक्षुण्णता की रक्षा की जा सके।[88] नादिरशाह की प्रमुख नीति देश को विदेशी प्रभाव से मुक्त कराने की रही । उसने वायु सेना से रूसियों को पदमुक्त कर अफगान नागरिकों की नियुक्ति की । ब्रिटेन व रूस से हथियार तथा आर्थिक सहायता प्राप्त होने पर नादिरशाह ने कहा कि इसका तात्पर्य उनको देश में किसी तरह की सुविधा देना या उनके प्रभाव में आ जाना नहीं है।[89] अमीर ने 1932 में निरस्त्रीकरण सम्मेलन में सोवियत दृष्टिकोण का समर्थन किया ।[90] नवम्बर 1933 में नादिरशाह की हत्या हो गयी।

नादिरशाह के पुत्र जहीरशाह ने अपने राज्याभिषेक के बाद नादिरशाह की नीतियों में परिवर्तन कर पश्चिमी व यूरोपीय देशों से सैनिक तथा अन्य प्रकार की सहायता के लिए प्रयत्न किए।[91] रूस ने भी सरकार को मान्यता देकर मैत्री पूर्ण सम्बन्धों के लिए आशा व्यक्त की।[92] सितम्बर, 1934 में राष्ट्रसंघ का सदस्य बनकर अफगानिस्तान ने अपने वैदेशिक क्षेत्र को

---

85. राजकुमार, एन. वी., 'द वैक ग्राउण्ड ऑफ इण्डियाज फॉरेन पॉलिसी', नई दिल्ली 1951, पृ. 49
86. फ्रेशर, टाइटलर डब्ल्यू. के., देखिए क्र. 16, पृ. 229
87. मंजूर, जैबी., 'अफगानिस्तान केश स्टडी इन कम्पटीटिव पीसफुल कोएक्जिसटेन्स', पाकिस्तान होराइजन, खण्ड 15, अकं 1, 1962, पृ. 93
88. अली मोहम्मद, देखिए क्र0 81
89. शाह, इकबाल अली, देखिए क्र. 81
90. गैम्स, वेल्फ, 'द फॉरेन पॉलिसी ऑफ सोवियत एशिया 1929-41', लन्दन 1949, खण्ड 1, पृ. 51-52
91. क्लेयर, जॉन, सी. ले., 'द वेस्ट आइज अफगानिस्तान',एशिया (न्यूयार्क), खण्ड 38, अकं 1, पृ. 55-56
92. इजवेस्तिया, 18 नवम्बर, 1933

अधिक व्यापक किया। भारत में इस कदम की प्रशंसा की गयी।

द्वितीय महायुद्ध

1 सितम्बर, 1939 को द्वितीय विश्व युद्ध प्रारम्भ हो गया। उस समय भारत के 8 प्रान्तों में कांग्रेस का शासन चल रहा था। भारत के ब्रिटिश गर्वनर ने कांग्रेस के नेताओं से परामर्श किये बिना भारत को युद्धरत राष्ट्र घोषित कर दिया और उससे इंग्लैंड की सहायता करने की अपील की गई। किन्तु बदले में ब्रिटिश सरकार कांग्रेस को कोई रियायतें देने को तैयार न थी। इसलिए राष्ट्रीय कांग्रेस ने युद्ध में समर्थन न देने का निश्चय किया, जबकि अफगानिस्तान ने जर्मनी, रूस तथा ब्रिटेन से मित्रता होने के कारण प्रारम्भ से ही युद्ध में तटस्थ रहने की घोषणा की। 17 अगस्त, 1940 को ज़हीर शाह ने अफगान संसद में कहा कि उनका यह निर्णय राष्ट्रीय हितों की रक्षा की भावना से प्रेरित है। वे विश्व में शान्ति चाहते हैं। उन्होंने युद्ध के परिणामों को अत्यन्त भयंकर बताते हुए अफगानों से एक होकर भविष्य की चिन्ता करने की सलाह दी।[93]

इस युद्ध की विभीषिका ने ब्रिटिश साम्राज्य को खोखला बना दिया। अफगान राजनीतिज्ञों को परिस्थितियों से स्पष्ट हो गया था कि भारत में अंग्रेजों का राज्य अब कुछ वर्षों का मेहमान है। ऐसी स्थिति में उत्तरी पश्चिमी सीमान्त प्रान्त (पख्तूनिस्तान) का सवाल उठाना स्वाभाविक था। अफगान चाहते थे कि अग्रेंज पख्तूनिस्तान को अफगानिस्तान में मिलाने की स्वीकृति दे जायेगें जिससे डुरेण्ड रेखा की समस्या का भी स्वत: ही हल हो जायेगा। युद्धोत्तर अफगानिस्तान की राजनीति का यह सर्वाधिक ज्वलन्त प्रश्न था।

भारत का विभाजन व ब्रिटिश कूटनीति

अग्रेंज वायसरायों ने यद्यपि भारत के लिए नियमों में कुछ सुधार किए, किन्तु उनकी हिन्दू-मुस्लिम के बीच फूट डालने की नीति जारी रही। उन्होंने मुस्लिम लीग का समर्थन कर हिन्दू-मुस्लिम में साम्प्रदायिक मतभेद पैदा कर दिए। परिणाम स्वरूप कई स्थानों पर दंगे भड़क उठे। दोनों संगठनों में बातचीत भी हुई, किन्तु सफलता नहीं मिली। अब तक मुस्लिम लीग के भीतर मोहम्मद अली जिन्ना के नेतृत्व में एक प्रगतिशील पक्ष जड़ जमा चुका था। लीग, धार्मिक व साम्प्रदायिक कार्य कलापों के कारण अपने को भारतीय मुसलमानों के हितों का एकमात्र प्रवक्ता बतलाती थी। 1937 में लखनऊ में उसके प्रथम अधिवेशन में घोषणा की गई कि 'उनका मुख्य उद्देश्य भारत की पूर्ण स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करना है, तत्पश्चात् लीग देश के स्वतन्त्र जनवादी राज्यों के संघ के

93. 'कीसिंग्स कन्टमपरेरी आर्काइब्स 1940-43', खण्ड 4, पृ. 4271

रूपान्तरण का समर्थन करती है।' मुस्लिम लीग के मार्च, 1940 में लाहौर में हुए सम्मेलन में कहा गया कि उनके संघर्ष का अन्तिम लक्ष्य भारतीय मुसलमानों के लिए अलग राज्य पाकिस्तान की स्थापना करना है।

अंग्रेजों ने सिंध, बंगाल, उत्तरी पश्चिमी सीमान्त आदि मुस्लिम बहुल क्षेत्रों में पूर्वी-पश्चिमी पाकिस्तान की अप्रत्यक्ष स्वीकृति दे दी। उनकी इस कूटनीति से साम्प्रदायिक दंगे भड़क उठे। गांधी जी तथा अन्य कांग्रेसियों ने इसका विरोध किया और हिन्दू-मुस्लिम एकता बनाए रखने के लिए मुस्लिम राष्ट्रवादी नेता मौलाना अबुल कलाम आजाद को कांग्रेस का अध्यक्ष चुना गया, किन्तु अंग्रेज हिन्दू-मुस्लिम मतभेद बढ़ाने मे लगे रहे, क्योंकि इसके द्वारा ही भारत में उनका शासन में बने रहना सम्भव हो सकता था।

अंग्रेज, भारत को पूर्ण सार्वभौम राष्ट्र के रूप में नहीं देखना चाहते थे। वास्तव में ब्रिटेन का हित भारतीय राष्ट्रवाद को कमजोर करने में था। इसलिए भारत के टुकड़े-टुकड़े करने के लिए नए अधिनियम के तहत प्रान्तों को स्वायतता देना ब्रिटिश कूटनीति ही थी। 1 जुलाई, 1938 में लाहौर में एक ब्रिटिश अधिकारी द्वारा उत्तरी-पश्चिमी सीमान्त को लेकर 'विभाजन और नीतियों' पर बातचीत के लिए क्रिप्स मिशन भेजा गया, किन्तु उसके भी उचित परिणाम नहीं निकले।[94] भारतीय कांग्रेस को तो सीमा सम्बन्धी ब्रिटिश नीति पहले ही स्वीकार न थी।[95] 16 मई, 1946 को लीग ने कांग्रेस के नेतृत्व में बनी अन्तरिम सरकार के कार्य में भाग लेने से इन्कार कर दिया। लीग ने पाकिस्तान के निर्माण के लिए खुला संघर्ष आरम्भ करने की घोषणा की। अन्तिम वायसराय लार्ड माउण्टबेटेंन द्वारा ब्रिटिश योजना के अनुसार भारत को दो भागों में विभाजित कर दिया गया। सिंध, सिलहर और उत्तरी पश्चिमी सीमान्त प्रान्त को जनमत संग्रह के नतीजों के अनुसार पाकिस्तान में शामिल किया गया। वायसराय ने खान अब्दुल गफ्फार खान की उत्तरी-पश्चिमी सीमान्त प्रान्त में स्वतन्त्र पख्तूनिस्तान की स्थापना के लिए जनमत संग्रह कराने की मांग को अस्वीकार कर दिया।[96] इस प्रश्न पर अफगानिस्तान में अत्यन्त रोष प्रगट किया गया, क्योंकि वे इसके द्वारा ही डुरेण्ड सीमा रेखा में सुधार चाहते थे।

15 अगस्त, 1947 को भारतीय स्वतन्त्रता अधिनियम के तहत भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त हो गई। स्वतन्त्र भारत की सरकार के प्रधानमन्त्री व विदेशमन्त्री पं0 जवाहर लाल नेहरू ने दिल्ली के ऐतिहासिक किले पर भारत का राष्ट्रीय झण्डा फहराया। इस प्रकार औपनिवेशिक दासता की

---

94. वाकमेन, मोहम्मद अमीन, देखिए क्र. 14, पृ. 33-34
95. राजकुमार, एन0 वी0, देखिए क्र. 85
96. 'गांधीजीस कारेसपाण्डेन्स विद द गवर्नमेण्ट 1944-47', नवजीवन (अहमदाबाद) 1959, पृ. 374

एक लम्बी काली रात के बाद स्वाधीनता के सूर्य का उदय हुआ।[97]

अफगानिस्तान में राजा ने राष्ट्रीय सभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि उनकी सरकार भारत में हुए राजनैतिक परिवर्तनों से अत्यधिक प्रभावित हुई है। इसलिए वह दोनों देशों के बीच मित्रता बनाये रखना चाहती है।[98] पं0 नेहरू ने भी विदेशी सम्बन्धों के प्रति अपनी भावी योजना में अफगानिस्तान से विशेष सम्बधों के लिए कहा।[99] 4 सितम्बर, 1947 को संविधान सभा में बोलते हुए पं0 नेहरू ने कहा कि 'हम कोई भी नीति का निर्धारण करें, किसी देश के वैदेशिक मामलों के संचालन की कला इस बात में निहित है कि उस देश के लिए सबसे अधिक हितकारी क्या है'।[100] इसलिए द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् परिवर्तित परिस्थितियों को देखते हुए उन्होंने गुटनिरपेक्षता तथा सभी देशों के साथ मित्रता की घोषणा की[101]

मार्च-अप्रैल, 1947 में एशियाई सम्बन्धों की बैठक में दोनों देशों के घनिष्ठ सम्बन्धों पर चर्चा करते हुए अफगान प्रतिनिधि ने कहा कि अफगान जनता के प्राचीन भारत के साथ सांस्कृतिक तथा पारस्परिक सम्बन्ध स्मरणीय है, वे यथार्थ और दृढ़ सम्बन्धों में बंधे हुए हैं।[102] इस प्रकार वर्तमान मित्रता भारत अफगानिस्तान के प्रगाढ़ ऐतिहासिक सम्बन्धों की परिचायक मानी जाती है।

(ख) भौगोलिक सम्बन्ध

भारत तथा अफगानिस्तान अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण ही प्राचीन काल से एक दूसरे से जुड़े रहे हैं।[103] भौगोलिक दृष्टि से अफगानिस्तान अट्ठारवीं सदी में प्रथम स्वतन्त्र राज्य था। जिसने मध्य और दक्षिण एशिया के इतिहास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया।[104] हिमालय और हिन्दूकुश की पहाड़ियों पर बसा यह छोटा सा देश अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण ही विश्व का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करता रहा है।[105] इसी मार्ग से अलैक्जैंडर, मैक्रोपोलो,

---

97. गांधी, श्रीमती इन्दिरा, ' स्वतन्त्रता , विकास, निरस्त्रीकरण और शान्ति परस्पर अविभाज्य है', प्रधानमन्त्री के विचार 68, नई दिल्ली, मार्च 1983, भारत सरकार द्वारा आकल्पित व प्रकाशित
98. द टाइम्स (लन्दन), 31 मई, 1947
99. आकाशवाणी में नेहरू का भाषण, 7 सितम्बर, 1946
 - नेहरू, जवाहर लाल, 'इण्डियाज फॉरेन पॉलिसी' (टैक्ट्स ऑफ सिलेक्टिड स्पीचिज), नई दिल्ली 1961, पृ. 3
100. संविधान सभा में नेहरू का भाषण, 4 सितम्बर, 1947
101. वही,
102. एशियन रिलेशन्स; रिपोर्ट ऑफ द प्रोसीडिंग्स एण्ड डाक्यूमेण्टेशन ऑफ द फस्ट एशियन रिलेशन्स कान्फ्रेन्स, एशियन रिलेशन्स आरगनाइजेशन न्यू दिल्ली 1948, पृ. 32-33
 - अप्पादोराय, राजन, 'इण्डियाज फॉरेन पॉलिसी एण्ड रिलेशन्स', दिल्ली 1985, पृ. 155-56
103. अप्पादोराय राजन,
104. भौमिक, एस. सी., 'इण्डो अफगान रिलेशन्स' द्वारा हरमिन्दर सिंह,' इण्डिया हर नैबर्स' 1967, पृ. 88
105. अंसारी, अजहर, 'अफगानिस्तान थ्रो इण्डियन आइज' 1980, पृ. 9

चंगेज़ खां, तैमूर वंशज, मुगल और चीनी तीर्थयात्री भारत आए। इस प्रकार प्राचीन काल से ही भारत और अफगानिस्तान के मध्य सीधा भौगोलिक सम्बन्ध रहा।

अफगानिस्तान एक पठारी व भूवेष्टित राज्य है।[106] इसका क्षेत्रफल दो लाख तिरेपन हजार आठ सौ इकसठ वर्ग मील है। वहां की आबादी लगभग दो करोड़ हैं। ऊँचे पहाड़ों के कारण यहां की जलवायु ठंडी है।[107] वह समुद्रों से बहुत दूर स्थित है।[108] किसी देश की भौगोलिक स्थिति से उसकी राजनीति का सीधा सम्बन्ध होता है। इसलिए सीमा से दूर राष्ट्रों से वैदेशिक सम्बन्धों की व्यापकता के अभाव के कारण ही उसका विकास अन्य राष्ट्रों तथा भारत की तरह नहीं हो सका।इसलिए वहाँ सदैव परराष्ट्र निभर्रता बनी रही है।

भौगोलिक दृष्टि से अफगानिस्तान का काफी महत्व है, क्योंकि वह भारत से मध्य एशिया, पूर्वी ईरान, सिक्यांग और पश्चिमी चीन तक जाने वाले मार्गों के चौराहे पर स्थित है। यही कारण है कि वह उपनिवेशवादी तथा साम्राज्यवादी शक्तियों का लगभग डेढ़ सौ वर्षों तक क्रीड़ा स्थल रहा है।[109] 19वीं सदी के प्रारम्भ में ही ब्रिटिश उपनिवेशवादी भारतीय उपमहाद्वीप के कुछ भागों पर अधिकार कर चुके थे। वे अफगानिस्तान के सामरिक महत्व को देखते हुए उसे एशिया के मध्य में एक ऐसे अड्डे के रूप में प्रयोग करना चाहते थे, जहाँ से ईरान, चीन तथा मध्य एशिया में दूर-दूर तक घुसा जा सके। रूस से बड़ी सीमा जुड़े होने के कारण वहाँ ब्रिटेन के साथ ही रूसी गतिविधियाँ भी जारी रहीं।[110]

'दीन-दुनिया' के सम्पादक मुफ्ती शौकत ने लिखा कि 1824 में मौलाना सैय्यद अहमद ने बरेली में अंग्रेजों के विरूद्ध शान्ति युद्ध की घोषणा की, तो अफगानिस्तान के उत्तरी-पश्चिमी सीमान्त से इस आन्दोलन में मदद मिली। इस समर्थन को अंग्रेज सहन नहीं कर सके। इसलिए इस सीमान्त को सुरक्षित रखने के लिए कूटनीति द्वारा[111] ब्रिटिश सरकार ने 1893 में डुरेण्ड रेखा का निर्माण कर भारत-अफगान सीमा का निर्धारण किया। अफगानिस्तान के महत्वपूर्ण क्षेत्र उसकी सीमा रेखा से कट जाने के कारण अत्यधिक असन्तोष व्यक्त किया गया।[112] इस सीमा में

---

103. अप्पादोराय राजन, देखिए क्र0 102
106. वैदिक, वी.पी., 'भारतीय विदेश नीति: नये दिशा संकेत अफगानिस्तान हत-प्रभता', (दिल्ली 1980), पृ. 38
107. आज (वाराणसी), 11 मार्च, 1978
108. हिन्दुस्तान (नई दिल्ली), 3 जून, 1978
109. वैदिक, वी. पी., देखिए क्र. 38
110. एस्पीनॉल, रिचर्ड, 'ब्रोकन विंडो इन सैंट्रल एशिया; अफगानिस्तान' आस्ट्रेलियन आउट लुक, खण्ड 10, अकं 1, मार्च 1956, पृ. 47
111. फैमी, मुफ्ती शौकत अली, 'इण्डो अफगान रिलेशन्स', (सौवेनीर 1954), पृ. 81
112. कौर, कुलवन्त, 'पाक अफगान रिलेशन्स' (1985), पृ. 22-25

सुधार के लिए अमीर ने ब्रिटेन के साथ ही रूस से भी अच्छे सम्बन्ध स्थापित किए।[113]

अक्तूबर, 1940 में वर्धा में हुए कांग्रेस के अधिवेशन में सीमा सम्बन्धी ब्रिटिश नीति की आलोचना करते हुए कहा गया कि अफगान जनता के साथ मित्रतापूर्ण सम्बंधों के विकास में आवागमन के लिए इस सीमा से कठिनाइयाँ उत्पन्न होंगी।[114]

1947 में विभाजन के उपरान्त भारत तथा अफगानिस्तान के मध्य में पाकिस्तान का जन्म हुआ। अफगानिस्तान का उत्तरी पश्चिमी सीमान्त प्रान्त पाकिस्तान का अंग बन गया और डुरेण्ड रेखा दोनों देशों के बीच अन्तर्राष्ट्रीय सीमा रेखा घोषित की गई।[115] जिसे अफगानिस्तान ने मान्यता नहीं दी। इसी प्रश्न को लेकर पाक-अफगान सम्बन्ध बिगड़े हुए हैं। भूवेष्टित राष्ट्र होने के कारण दूसरे देशों विशेषतया भारत से उसका व्यापार पाकिस्तान के 35 मील लम्बे खैबर दर्रे के थलीय मार्ग से होता है। चूंकि पाकिस्तान के भारत तथा अफगानिस्तान के साथ सीमा सम्बंधी विवाद हैं[116] इसलिए दोनों देशों का व्यापार पूर्णतया उनके पाकिस्तान से अच्छे सम्बन्धों पर निर्भर करता है। अनीस पत्र ने लिखा कि पाकिस्तान को यह जानना चाहिए कि साम्राज्यवादी नीतियों के कारण यद्यपि अफगानिस्तान को समुद्री मार्ग नहीं मिल सका, किन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं कि अफगानिस्तान की सीमाएँ सिर्फ पाकिस्तान से मिलती है और केवल उससे होकर ही उसका रास्ता जाता है। उसके दूसरे पड़ोसी (रूस आदि) भी हैं, जिनसे उनके सम्बन्ध हैं।[117] अफगानिस्तान अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण भारत की सुरक्षा के लिए अत्यन्त ही प्रांसगिक है। क्योंकि जहाँ एक ओर उसकी सीमा पर पाकिस्तान, चीन व ईरान हैं वहीं सुरक्षा के लिए रूस सीमा पर प्रहरी के समान खड़ा हुआ है।[118] अफगानिस्तान में रूसी आकर्षण का प्रमुख कारण हिन्द महासागर में उतरने के लिए छोटा से छोटा मार्ग खोजना रहा है।[119]

भारत एक किला की तरह है, जिसके तीन ओर समुद्री खाइयाँ हैं, (दक्षिण में हिन्द महासागर, पूर्व में बंगाल की खाड़ी ओर पश्चिम में अरब सागर) और शेष सीमा पर प्राकृतिक रूप से ऊँचे पहाड़ स्थित हैं। चूँकि सीमाओं की सुरक्षा पर विदेश नीति निर्धारित होती है। इसलिए भारत ने सीमाओं की रक्षा के लिए पड़ोसी देशों से मित्रता का लक्ष्य रखा, किन्तु उसके

---

113. फिशर, लाऊस, 'देखिए क्र0 71, पृ. 285
114. तेन्दुलकर, डी. जी., 'महात्मा लाइफ एम. के. गांधी', खण्ड तृतीय, बम्बई 1954, पृ. 263
115. कौर, कुलवन्त, देखिए क्र0 112
116. वाकमेन, मोहम्मद अली, देखिए क्र0 14, पृ. 38
117. अनीस (काबुल), 17 सितम्बर, 1546
118. वाकमेन, मोहम्मद अमीन, ' अफगानिस्तान एट द क्रोस रोड' (1985), पृ. 193-97
119. श्रीवास्तव, एम.पी., 'सोवियत इण्टरवेन्शन इन अफगानिस्तान' नई दिल्ली, 1980
    - चौधरी, नरेन्द्र सिंह,' भारतीय उपमहाद्वीप में शीत युद्ध' बरेली 1981, पृ. 86

पश्चिमी ओर पूर्वी सीमा पर बसा पाकिस्तान प्रारम्भ से ही भारत विरोधी रहा। कश्मीर के प्रश्न को लेकर उनकी सीमा पर सदैव तनाव छाया रहता है, जिसके कारण वहाँ लाखों सैनिक तैनात रहते है। सीमा सम्बन्धी इन्हीं समस्याओं को लेकर भारत को पाकिस्तान द्वारा किए गए तीन-तीन युद्धों की आग में झुलसना पड़ा। शत्रु का शत्रु मित्र होता है, अतः भारत, अफगानिस्तान से मित्रता बनाए रखना चाहता है। उत्तरी-पश्चिमी सीमा पर स्थित रूस से उसके अच्छे सम्बन्ध हैं। भारत के अन्य सीमान्त देश नेपाल तथा भूटान की सुरक्षा में भारत की स्वयं की सुरक्षा निहित है। उसके पूर्व में बर्मा और उत्तर में चीन स्थित है। चीन से उसके सीमा सम्बन्धी विवाद रहे हैं। 1962 में भारत-चीन युद्ध इसका ही परिणाम था। चीन ने भारत की बड़ी सीमा पर अधिकार किया हुआ है। भारत स्थलीय सीमा पर साम्यवादी देश रूस व चीन से शत्रुता मोल नहीं ले सकता तथा समुद्री सीमाओं की रक्षा के लिए उसे पश्चिमी गुट से मित्रता की आवश्यकता है। भौगोलिक आधार पर भारत तथा अफगानिस्तान में समानता है,[120] इसलिए दोनों देशों ने सीमाओं की सुरक्षा के लिए अन्तर्राष्ट्रीय गुटबन्दी में शामिल न होकर गुटनिरपेक्षता की नीति अपनाई।[121]

भारत विश्व के 7 बड़े देशों में से एक है तथा जनसंख्या की दृष्टि से वह दूसरा बड़ा देश है।[122] जबकि अफगानिस्तान एशियाई क्षेत्र में दूसरा छोटा देश है,[123] किन्तु वहाँ विविध खाद्य पदार्थों का अनुपम भण्डार होने के कारण अन्य देशों के लिए वह आकर्षण का विषय रहा है।

1903 में भारत में गवर्नर जनरल लार्ड कर्जन ने कहा कि भारत की भौगेलिक स्थिति उसे अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में अग्रणी स्थान दिए जाने की भूमिका का निर्वाह करेगी।[124] यह बात पूर्णतः सत्य सिद्ध हुई है। वास्तव में भारत अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण अफगानिस्तान और पाकिस्तान में होने वाले सैन्य व राजनैतिक परिवर्तनों की उपेक्षा नहीं कर सकता। भारत की रक्षा व विदेश नीति इन दोनों देशों में होने वाले परिवर्तनों पर निर्भर है। भौगोलिक दृष्टि से अफगानिस्तान की सुरक्षा, शान्ति तथा विकास में भारत का न्यस्त स्वार्थ है।[125] एक अशान्त (उपद्रवी) और अव्यस्थित अफगानिस्तान पर विस्फोटकों की सम्भाव्यता और आन्तरिक कलह व वाहय हस्तक्षेप का हमारी सुरक्षा पर गहरा प्रभाव पड़ता है।[126] ऐतिहासिक सम्बन्धों तथा भौगोलिक

---

120. फैमी, मुफ्ती, शौकत अली, देखिए क्र. 111, पृ. 83
121. वैदिक, वी.पी. देखिए क्र. 38
122. अप्पादोराय, राजन, देखिए क्र. 102, पृ. 9
123. कामर्स फारेन ट्रेड ऑफ इण्डिया, खण्ड 123, अकं 3165, 1971, पृ. 98
124, चतुर्वेदी, दिनेशचन्द्र, 'भारतीय शासन और राजनीति' (1973) पृ. 426
125. गोयल, डी. आर., देखिए क्र. 5, पृ. V
126. कौर, कुलवन्त, देखिए क्र. 112, पृ. 130-31

समीपता के कारण ही भारत पाकिस्तान व अफगानिस्तान से अच्छे सम्बन्ध बनाए रखना चाहता है।[127] अन्त में यह कहा जा सकता है कि भारत तथा अफगानिस्तान की परस्पर मित्रता तथा नीतिगत समानता में उनकी भौगोलिक स्थिति का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

(ग) सांस्कृतिक सम्बन्ध

सदियों (120-160 ई0) से ही अफगानिस्तान को भारत के सांस्कृतिक प्रदेश के रूप में जाना जाता था । दोनों पहले एक ही आर्य सभ्यता व संस्कृति के अवयव थे। अफगानिस्तान में स्थापित बौद्ध धर्म के भग्नावशेष दोनों देशों की सांस्कृतिक मित्रता का प्रतीक हैं। 327वीं सदी में अलैक्जैण्डर और सैल्यूकस से लेकर मौर्यों और मध्य काल में मोहम्मद गजनी तक अफगानिस्तान एवं भारत के मध्य संस्कृति-साहित्य व शासन के सन्दर्भ में घनिष्ठता रही है। इस प्रकार वे परस्पर धर्म और संस्कृति की समानता के कारण एक दूसरे के समीप आये।[128]

भारत मानव-सभ्यता के उद्गम स्थलों में से एक है। हजारों वर्षों के दौर में प्राचीन तथा मध्य कालीन भारत की विज्ञान, साहित्य व कला में उपलब्धियों ने दूर-दूर के राष्ट्रों के सृजनात्मक चिन्तन् को प्रेरित किया है। अफगानों का प्राचीनतम विवरण प्रसिद्ध खगोल शास्त्री वराह मिहिर रचित भरत संहिता से प्राप्त होता है। अफगान इतिहास के मुख्य स्त्रोत वेद तथा अवेस्ता हैं। अफगान भूमि से ही आर्यो ने भारत के दक्षिणी-पश्चिमी प्रदेश में प्रवेश किया। दसवीं सदी तक उस देश के बासी बौद्ध तथा जस्थस्तु थे। दोनों के पूर्वजों में खून का रिश्ता रहा है। एक दूसरे के बिछुड़ जाने, भौगोलिक दृष्टि से दूर हो जाने और समय के अन्तराल के बाद भी उनकी घनिष्ठता और हार्दिकता में कोई अन्तर नहीं आया है।

अफगानिस्तान में इस्लाम पहुँचने से पहले देश को आर्यों की भूमि अर्याना कहा जाता था। आजकल वहाँ वायुयान सेवा का नाम 'आरयाना' अफगान एयरलाइन्स है।[129] दसवीं सदी में मोहम्मद गजनी द्वारा अफगानिस्तान में मुस्लिम शासन आ गया और वहीं से भारत में इस्लाम का प्रवेश हुआ। भूगोल ने दोनों देशों को ऐसे अटूट बन्धन में बांधा है कि कई बार तो ये एक दूसरे के अंग होकर रहे हैं और जब कभी बाहरी ताकतों, मजहबी भिन्नता तथा औपनिवेशिक कारणों से उनमें दूरियां आई हैं, तब भी दोनों देशों के सांस्कृतिक आदान-प्रदान की सरिता निरन्तर

---

127. ठाकुर, रमेश, देखिए क्र. 34
128. राधाकृष्णन, एस., "ओकंजनल स्पीचिज़ एण्ड राइटिंग्स, अक्टूबर, 1952, जनवरी, 1956" (नई दिल्ली 1959), पृ. 29
129. वैदिक, वेद प्रताप, 'भारत-अफगान सांस्कृतिक सम्बन्ध, सहयोग व समानताएं', नवभारत टाइम्स (नई दिल्ली), 5 जुलाई, 1976

बहती रही है।

ऋग्वेद आर्यों का प्राचीनतम ग्रंथ माना जाता है। इसमें जिन नदियों का उल्लेख है उनमें से कुछ भारत तथा कतिपय नदियों का अस्तित्व अफगानिस्तान में देखा जा सकता है। पाणिनि व्याकरण में भी दासी पुत्र पठानों का उल्लेख है। भारत के प्राचीन ग्रथों में भी इस बात का उल्लेख मिलता है कि भारत और कन्दहार के राजघराने एक दूसरे से सम्बन्धित थे।[130] कौरवों की माता गंधारी को कन्दहार का बताया जाता है।[131] राजा कनिष्क ने पहली शताब्दी में न केवल इस राज्य की स्थापना की, बल्कि बुद्ध का सन्देश अफगानिस्तान से लेकर सम्पूर्ण विश्व में फैलाया।[132] इतिहास के पांच हजार वर्ष पूर्व अफगानिस्तान एशिया का दिल कहा जाता था।[133] इसका वर्तमान नाम 18 वीं शताब्दी के मध्य में पड़ा। इसे प्राचीन काल में अर्याना और मध्य काल में खुरासान कहा गया।[134] भारत तथा अफगानिस्तान दोनों ऐतिहासिक भ्रातृत्व के कठोर पाश में बंधे हुए हैं। यदि कोई अन्तर है तो ऐसा जो पर्वतीय तथा मैदानी क्षेत्रों के निवासियों में हो सकता है। पं0 नेहरू ने 'हिन्दुस्तान की कहानी' में लिखा कि वे अफगान आर्य जाति के लोग हैं। वे भारतीयों से निश्चित रूप से निकटवर्ती व उनसे संश्लिष्ट हैं। अफगानों की राष्ट्रीय भाषा पश्तो और दारी है। पश्तो का मूल स्त्रोत संस्कृत है इसलिए उसे भारतीय साहित्य में संस्कृत की बहिन कहा जाता है। अफगानिस्तान में भारतीय साहित्य को बहुत पसंद किया जाता है, इसी कारण बहुत से ग्रन्थों को उनकी अपनी भाषा (पश्तो) में अनुवाद किया गया है। परस्पर सांस्कृतिक सामीप्य को देखते हुए अफगानों को भारत-अफगान कहना कहीं अधिक तर्कसंगत व समीचीन होगा।

मुगल काल में भारत तथाकथित मुस्लिम विश्व की सांस्कृतिक परिधि के भीतर आ गया। मुस्लिम परम्परा से सम्बद्ध मस्जिदों, मदरसों व मीनारों का निर्माण हुआ। हिन्दुओं-मुसलमानों में भयंकर लड़ाइयों के बावजूद उनके एक ही देश में दीर्घकाल तक साथ-साथ रहने के परिणाम स्वरूप उन्होंने एक दूसरे को प्रभावित किया तथा कुछ समान विश्वासों व प्रथाओं का विकास हुआ। अकबर ने दीन-ए-इलाही धर्म में भारत के सभी मुख्य धर्मों के उचित तत्वों के समावेश

---

130. प्रताप राजा महेन्द्र, 'इण्डिया एण्ड अफगानिस्तान', (सौवेनीर 1958), पृ. 40
131. सेहनाविस, चिनमोहन, 'अफगानिस्तान एण्ड इण्डियाज स्ट्रगल फॉर फ्रीडम', मैनस्ट्रीम खण्ड 17, अकं 1, 1979
132. फॉरेन अफेयर्स रिकार्डस, खण्ड 19, अकं 6, जून 1973, पृ. 213, भारतीय उपराष्ट्रपति जी.एस. पाठक ने काबुल में दोनों देशों के पुरातन महत्व का हवाला देते हुए वर्तमान सम्बन्धों को बढ़ाने के लिए कहा।
133. वाकमेन, मोहम्मद अमीन, देखिए क्र, 118, पृ. 175
134. आज (वाराणसी), 11 मार्च, 1978

के साथ उनमें पारस्परिक समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया।[135] भारत के प्रमुख धर्मों में से एक इस्लाम धर्म अफगानिस्तान की अधिकांश आबादी का धर्म है और भारत के अधिसंख्यक धर्म हिन्दू (बौद्ध) अफगानिस्तान में ऐसे अल्पसंख्यक समुदाय का धर्म है, जिसका उनके देश में पर्याप्त महत्व है। प्राचीन काल में बहुत से अफगान अपना घर भारत में बनाते थे और बाद में वहां का हिस्सा बन जाते थे। वे अपनी संस्कृति के धनी रहे हैं। महान कवि टैगोर की प्रसिद्ध कहानी 'काबुली वाला' में उनका न भुलाने वाला प्यार व शिष्टता तथा उनका भारत के प्रति आकर्षण चित्रित किया गया है।[136]

ब्रिटिश उपनिवेश काल में इन गहरे सम्बन्धों में गिरावट आई, किन्तु हम प्राचीन सामाजिक, सांस्कृतिक सम्बन्धों में उसी तरह बँधे रहे।[137] 1893 में भारत के युवा सन्यासी स्वामी विवेका-नन्द ने देश-विदेश में भ्रमण कर हिन्दू धर्म की श्रेष्ठता को सिद्ध किया। वह शान्ति का पुजारी रहा और विश्व बन्धुत्व के सिद्धान्तों पर अड़ा रहा। भारत का मत है कि घृणा से घृणा फैलती है और प्रेम से प्रेम। वह एक धार्मिक देश रहा है। गाँधी व तिलक की आध्यात्मिक विचारधारा से न केवल देश में, बल्कि विश्व में उनकी छवि उभरी है। वेद, गीता, उपनिषद्, दर्शन शास्त्र, मनु स्मृतियाँ, बौद्ध एवं जैन दर्शन का आज के आर्थिक युग में भी कम महत्व नहीं है। प्राचीन भारत ने अपनी सभ्यता और संस्कृति से विश्व गुरू की उपाधि पाई थी। मध्य काल में आपसी फूट के कारण उसे विदेशियों का गुलाम रहना पड़ा, पर उसने स्वतन्त्रता की भावना एवं अपनी सभ्यता और संस्कृति को नहीं त्यागा। उसने शक्तिशाली विदेशी साम्राज्य के विरूद्ध सफल शस्त्र के रूप में अहिंसा का प्रयोग किया।[138]

अफगानिस्तान में बच्चा-ए-सिक्का के शासनकाल में (1929-30) अफगानिस्तान का राजनैतिक व आर्थिक ही नहीं, सांस्कृतिक पतन भी हुआ, किन्तु उसके बाद नादिरशाह से लेकर वर्तमान शासन तक दृष्टिपात करें तो पाएंगे कि अफगानिस्तान कला और विद्या का केन्द्र बन गया, वह उन्नति की ओर अग्रसर है। इतिहास साक्षी है कि अफगानिस्तान की स्वतन्त्रता की आधार शिला मज़बूत व गहरी है, इसकी नींव सदियों से बुर्जुगों के महान कार्य और बलिदान द्वारा बनी हुई है।[139]

---

135. अंतोनोवा, को.अ., 'भारत का इतिहास' प्रगति प्रकाशन मास्को, 1984
136. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 75, पृ. 1
- हैदर, कं. एल., 'इण्डो-अफगान रिलेशन्स', भारत ज्योति, (बम्बई), 1 जून, 1969
137. खान, रसीदुद्दीन, 'सिनो-अमेरिकन कोल्यूजन ओवर, इवेन्ट्स इन अफगानिस्तान', पृ. 46 द्वारा अजहर अन्सारी, 'अफगानिस्तान थ्रो इण्डियन आइज'
138. गांधी, श्रीमती इन्दिरा, देखिए क्र. 97
139. खान, मार्शल शाहवली, 'मेरे संस्करण' भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद 1966, पृ. 3-7

भारतीय नेतागण गांधी, नेहरू, अबुल कलाम आज़ाद तथा राधाकृष्णन अफगानिस्तान के साथ ऐतिहासिक सांस्कृतिक सम्बन्धों को बनाए रखने के पक्षपाती रहे हैं।[140] 1938 में सुभाष चन्द्र बोस ने कहा था कि अफगानिस्तान के साथ सम्बन्धों में विकास के लिए सांस्कृतिक सम्बन्धों की आवश्यकता है।[141] अफगान नेता मोहम्मद जियरी ने भारत-अफगान सम्बन्धों पर बोलते हुए कहा कि बुद्ध बख्तिरियन हमारी संस्कृति है। काबुल के सिनेमा घरों में भारतीय फिल्में दिखाई जाती हैं तथा बाजारों में भारतीय संगीत की धुनें सुनाई पड़ती हैं। अफगान जनता उर्दू अपनाना पसंद करती है।[142]

काबुल की पहाड़ियों पर भगवान बुद्ध के स्मारक चिह्न तथा जलालाबाद की ऐबक पहाड़ियों में विशेष रूप से बामियान दोनों देशों के प्राचीन सांस्कृतिक सम्बन्धों को स्पष्ट करते हैं। पुरातत्व सम्बन्धी शोध-कार्य इन सम्बन्धों के महत्व को व्यक्त करते हैं।[143] भारत सरकार अफगानिस्तान के अतीत की रक्षा के लिए प्राचीन स्मारक चिह्नों का पुनरूद्धार करने में सहर्ष सहायता कर रही है। बामियान में 100 फुट से भी अधिक ऊँची बुद्ध की प्रतिमा की दरारों को ठीक करने के लिये भारतीय विशेषज्ञ कार्य कर रहे हैं तथा वे उनकी प्राचीनता का अध्ययन कर रहे हैं।[144] अफगान विश्वविद्यालयों तथा पाठशालाओं में आज भी भारतीय अध्यापक कार्यरत हैं। दोनों देशों के सांस्कृतिक सम्बन्धों में बहु आयामी प्रगति हो रही है। उनकी कला-संस्कृति, संगीत तथा राष्ट्र की विभिन्न उपलब्धियां एक दूसरे पर प्रभाव डालती रही हैं।[145] अफगानिस्तान के राष्ट्रीय दिवस पर एक प्रतिनिधि मण्डल भारत से काबुल जाता है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि प्राचीन काल से अफगानिस्तान भारतीय संस्कृति का अंग रहा है। सांस्कृतिक समरसता के कारण ही आज भी भारतीय संस्कृति तथा उसके प्रभाव पर अफगानिस्तान में विश्वास व श्रद्धा व्यक्त की जाती है।

---

140. अनीस, मोहम्मद, ''अफगानिस्तान कॉमन हैरीटेज विद इण्डिया'' (सूचना एंव संस्कृति विभाग, काबुल), -हिन्दुस्तान टाइम्स (दिल्ली), 31 मई, 1969.
141. 'द इण्डियन नेशनल कांग्रेस प्रेसिडेन्सियल एड्रस (1936-62)' ए. आई. सी.सी., नई ल्ली, पृ. 22-23
142. चक्रवर्ती, सुमित, ''डेट लाइन काबुल'' 1983, पृ. 66
   - अबीदी, एस.ए.एच., ''अफगानिस्तान एण्ड इण्डिया कल्चरल रिलेशन्स', नेशनल हेराल्ड (दिल्ली), 6 जून, 1969.
143. बनर्जी, ब्रजेन्द्र नाथ, ''इण्डियाज एण्ड टु इट्स नैबरिंग कंट्रीज", (नई दिल्ली) 1982, पृ. 276-77
144. गुप्ता, सेन, "रेस्ट्रोरेशन ऑफ हिस्टोरिक अफगान मोस्कियू वाई इण्डिया" इण्डिया एण्ड फॉरेन रिव्यू, खण्ड 14, अंक 18, जुलाई 1977, पृ. 13-16.
145. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 13, अंक 1, जनवरी, 1967, पृ. 2, अफगान राजा ज़हीरशाह की भारत यात्रा पर जारी किया गया वक्तव्य.

(घ) व्यापारिक सम्बन्ध

भारत-अफगानिस्तान के मध्य ऐतिहासिक, भौगोलिक व सांस्कृतिक सम्बन्ध होने के कारण दोनों देशों में व्यापार सम्बन्ध प्राचीन काल से रहे हैं। कुषाण व गुप्तकाल में व्यापार क्षेत्र में तीव्र विकास हुआ। समुद्री मार्ग से भी व्यापार का प्रसार हुआ। भारत मसालों, कपड़ों के अतिरिक्त हाथी दाँत की वस्तुएं रेशम, रत्न, शंख, कस्तूरी, लोहे व इस्पात का भी निर्यात करता था। तेरहवीं व चौदहवीं शताब्दी में व्यापारियों के संगठन बनाए गए, जिनकी परिधि में पूरे-पूरे व्यापार क्षेत्र समाहित थे। पहली बार 1498 में जब पुर्तगालियों ने भारत में प्रवेश किया, तब वे अपने साथ ऐसा कुछ भी नहीं लाये थे जो व्यापार के लिए स्वीकार्य होता। फिर भी वे भारतीय मालों को हथियारों के बल पर ले जाने की स्थिति में थे।[146] इसलिए मुगल साम्राज्य को व्यापार हेतु समुद्री मार्ग को प्राप्त करने के लिए पुर्तगालियों के विरोध का सामना करना पड़ा। जिसके परिणाम स्वरूप स्थल मार्ग से व्यापार में बृद्धि हुई।

ऐसा माना जाता है कि भारत-अफगान व्यापार सम्बन्ध सांस्कृतिक सम्बन्धों से भी पुराने हैं। अफगानिस्तान के लिए भारत बड़ा बाजार रहा है। भूवेष्टित अफगानिस्तान के लिए भारत से व्यापार भौगोलिक दृष्टि से भी उसके हित में रहा है।[147] अफगानिस्तान व भारत के बीच महत्वपूर्ण व्यापार भारत के केन्द्रीय शहरों मथुरा, बनारस व पटना के साथ पेशावर व काबुल के पहाड़ी मार्ग से होता था।[148]

मध्य युग में भारत विदेशी आक्रमणों के कारण आर्थिक दृष्टि से भी असंगठित हो गया। तुर्की, मुगलों एंव पठानों ने भारत को खूब लूटा। अंत में मराठों ने मंगोलों को हराकर भारत को स्वतन्त्र करा लिया, परन्तु इसी बीच पश्चिमी देशों से व्यापारियों का आना प्रारम्भ हो गया। इन यूरोपीय व्यापारियों के लिए भारत के साथ व्यापार एक महत्वपूर्ण, किन्तु जटिल कार्य था। इन व्यापारिक कम्पनियों को उनकी सरकारों का पूर्ण समर्थन प्राप्त था। 18वीं सदी में ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी भारत में प्रभुत्व करने वाली सबसे धनी कम्पनी थी, उसने जनता का शोषण किया। भारत का धन लद-लद कर इंग्लैंड जाने लगा। उसके पड़ोसी देशों के साथ व्यापारिक सम्बन्ध भी कट गए। ब्रिटिश अधिकारी अपनी स्वार्थी नीति को व्यापार में भी प्रयोग कर रहे थे। उन्होंने भारत की आर्थिक स्थिति को खोखला बना दिया। अंग्रेजों ने भारत के निर्यात को हतोत्साहित कर आयात को प्रोत्साहित किया, जिससे भारतीय व्यापारियों व दस्तकारों की स्थिति

---

146. अंतोनोवा, देखिए क्र. 135, पृ. 285-87.
147. कुमार, अशोक, देखिए क्र. 3, पृ. 174.
148. इण्डिया एण्ड फॉरेन रिव्यू, खण्ड 4, अंक 9, फरवरी 15, 1967, पृ. 8.

निम्नतर होती गई। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक विश्व मण्डियों के साथ भारत के व्यापारिक सम्पर्को के विस्तार के द्वारा बन्दरगाह नगरों का विकास हुआ। रेल-मार्गों का निर्माण तथा टेलीग्राफ लाइनों को बिछाया गया और डाक संचार को सुधारा गया। किन्तु औपनिवेशिक सरकार दोहरी नीति का प्रयोग कर स्वहित के लिए कार्य कर रही थी।

19वीं शताब्दी से ही रूस व ब्रिटेन अफगानिस्तान में आर्थिक सहायता कर अपना प्रभुत्व स्थापित करना चाहते थे। ब्रिटिश सरकार ने 1830 में अलेक्जैण्डर के नेतृत्व में अफगानिस्तान से अच्छे सम्बन्ध बनाने के लिए एक व्यापारिक मिशन भेजा। उन्हें अफगानिस्तान में ब्रिटेन की वस्तुएं लाने के लिए दोस्त मोहम्मद की स्वीकृति प्राप्त करने की हिदायत दी गई।[149] अपनी विस्तारवादी व उपनिवेशवादी नीति के परिणामस्वरूप अंग्रेजों ने 1879 में गन्दमक संन्धि के द्वारा न केवल विदेश-नीति, बल्कि अफगानिस्तान के व्यापारिक अधिकार भी सीमित कर दिए। अब उनका विदेश व्यापार ब्रिटिश अनुमति से होने लगा। 20वीं सदी में रूस व ब्रिटेन ने यातायात के लिए अफगान सीमाओं पर रेलयात्रा का प्राविधान रखा, किन्तु परस्पर अविश्वास के कारण अफगानों ने इसे स्वीकार नहीं किया। इसलिए अफगानिस्तान ही एक ऐसा देश है जहां भूवेष्टित होने के साथ ही रेलयात्रा की सुविधा नहीं है।[150] अफगान जनता अपने देश में विदेशियों को पसंद नहीं करती, किन्तु भारतीयों को पारस्परिक समानताओं के कारण वहां पर्याप्त सम्मान दिया जाता है। भारत में अफगानी वस्तुओं को बहुत पसंद किया जाता है। अफगानिस्तान अपने फल, मेवे, इत्र, हींग, खालों व कालीन के अतिरिक्त कन्धार के अनार, जलालाबाद के लाल संतरे, काराकुल के चमड़े के कोट, कैसेट प्लेयर, ट्रांजिस्टर, खाद्य सामग्री तथा तन्दूरी रोटी इत्यादि के लिए प्रसिद्ध हैं।[151] वह भारत को इनका निर्यात भी करता रहा है। बदले में भारत अफगानिस्तान को दैनिक उपयोग की वस्तुएं जैसे मसाले, कपड़ा, चमड़े से बनी हुई वस्तुएं तथा अन्य तकनीकी सामान भेजता रहा है। दोनों देशों के मध्य व्यापार में किसी प्रकार का कर नहीं लगता। व्यापार में लेनदेन भारतीय मुद्रा द्वारा किया जाता रहा है।

. जल मार्ग पर अफगानिस्तान का नियन्त्रण न होने के कारण दूसरे देशों से व्यापार के लिए उसके पास तीन स्थलीय मार्ग हैं- ईरान, सोवियत रूस और भारत। ईरान से उसका मार्ग बहुत दूर तथा खर्चीला पड़ता है। रूस अपनी सीमा से किसी दूसरे देश से व्यापार की आज्ञा नहीं देता। भारत से उसके घनिष्ठ सम्बन्ध होने के कारण अफगानिस्तान के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार

---

149. जाफरी, देखिए क्र. 17, पृ. 3.
150. भौमिक, एस.सी., देखिए क्र. 103, पृ. 91.
151. गोयल, डी.आर. ''अफगानिस्तान स्प्रिंग इन द एअर'', मैनस्ट्रीम, खड 21, मार्च 1983, पृ. 85

का बड़ा हिस्सा भारत के बम्बई व कराची के बन्दरगाहों से होकर ही होता था, क्योंकि यही मार्ग अफगानों के लिए अधिक उपयुक्त था।[152] वास्तव में भूवेष्टित व विकासशील देश होने के कारण, उसे व्यापार में यातायात तथा आर्थिक सहायता के लिए पड़ोसी देशों पर निर्भर रहना पड़ता है।[153] ब्रिटेन के साथ हुए तीन युद्धों का अफगानिस्तान की अर्थव्यवस्था पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा। वहां की सामाजिक व आर्थिक स्थिति दिन-प्रतिदिन बिगड़ती जा रही थी। तभी अमानुल्लाह के नेतृत्व में अफगान गणराज्य ने स्वतन्त्र आर्थिक व राजनैतिक नीति का अनुसरण किया। जिससे पड़ोसी देश भी अब अफगानिस्तान के साथ सहयोग कर रहे हैं।

प्राचीन काल से ही सीमान्त देश रूस से अफगानिस्तान के व्यापारिक सम्बन्ध रहे हैं। रूस अफगानिस्तान के विकास कार्यों में आर्थिक तथा तकनीकी सहयोग के साथ ही वहां अपने विशेषज्ञों को भेजता रहा है।[154] 28 फरवरी, 1921 को 12 धाराओं वाली सोवियत-अफगान सन्धि में कर मुक्त निर्यात के साथ ही प्रगाढ़ व्यापारिक सम्बन्धों का उल्लेख किया गया।

5 जून, 1923 को अफगानिस्तान और ब्रिटिश भारत के मध्य एक समझौते द्वारा आयात-निर्यात करों के नियम के सम्बन्ध में बातचीत हुई, जिसके तहत भारत व अन्य देशों से व्यापार भारतीय मार्गों द्वारा होना निश्चित हुआ। 2 अक्टूबर, 1927 को ब्रिटिश सरकार के आमन्त्रण पर अमानुल्लाह खान लन्दन गए। उन्होंने इस यात्रा के दौरान ब्रिटिश सरकार से विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग बढ़ाने के लिए कहा, किन्तु सफलता नहीं मिली।[155] ब्रिटिश सहायता बन्द हो जाने के पश्चात् रूस ही एक ऐसा देश था, जो अफगानिस्तान को मदद दे सकता था, क्योंकि भारत तो उस समय तक पराधीन था, उसका विदेश व्यापार ब्रिटिश अधिकारियों द्वारा तय किया जाता था। अमानुल्लाह ने रूस से व्यापार समझौता करने का अनुरोध किया। जिसके तहत अफगानिस्तान को होने वाले सभी निर्यात से कर हटा लिया गया तथा अफगानिस्तान से आयातित वस्तुओं पर न्यूनतम सीमा कर लगाने की घोषणा की गई।[156] इस प्रकार अफगानिस्तान में रूस के साथ व्यापार तथा विकास कार्यों में सहयोग बढ़ रहा था,[157] अफगानी बाजार में रूसी वस्तुएँ दिखाई पड़ती थीं। अफगान अमीर ने संघर्ष की स्थिति से बचने तथा विकास कार्यों में सहयोग के लिए 6 फरवरी, 1930 को ब्रिटेन के साथ एक समझौता किया। जिसके अनुसार ब्रिटेन ने विभिन्न क्षेत्रों में सहायता के

---

152. रामादोराई बी, "इण्टरनेशनल पार्टीसिपेन्ट्स" एशिया 72, ऑफिसियल गाईड, विदेश व्यापार विभाग, (भारत सरकार द्वारा आकल्पित व प्रकाशित), पृ. 137.
153. जाफरी, देखिए क्र. 17, पृ. 40-43, 46.
154. एचीसन, सी.यू., देखिए क्र. 33, 5वाँ संस्करण, खण्ड 13, परिशिष्ट 7, पृ. 197-99.
155. जाफरी, देखिए क्र. 17, पृ. 19.
156. वायलेट, कोनोली, ''सोवियत इकोनोमिक पॉलिसी इन द ईस्ट", (लन्दन 1933), पृ. 82.
157. द टाइम्स, 11 जून, 1936.

साथ कर मुक्त दो लाख पौंड की सहायता दी और व्यापारिक मिशन द्वारा अमानुल्लाह को 20 हजार राइफलें, 20 बड़ी तोपें, 4 करोड़ रूपये तथा प्रतिवर्ष 40 लाख रूपये देने की पेशकश की। इस सहायता के साथ शर्त यही थी कि काबुल, मास्को से सम्बन्ध तोड़ ले, किन्तु काबुल ने ऐसा करने से इन्कार कर दिया और उसके पश्चात् रूस-अफगान सम्बन्धों में और निकटता आई।[158]

नादिरशाह के शासन काल में व्यापार में अधिक प्रगति नहीं हुई, किन्तु ज़हीर शाह के शासन काल में जून, 1936 में अफगानिस्तान की राष्ट्रीय बैंक व सोवियत व्यापार अधिकरण के बीच एक व्यापारिक समझौते के तहत अफगानिस्तान को रूई, ऊन तथा अफीम आदि वस्तुओं का निर्यात करना था, वहीं घासलेट, कपास, पैट्रोल व चीनी आदि का आयात भी करना था। इस व्यापार का मूल्य लगभग 1,05,00,000 डालरों में होना निश्चित हुआ।[159]

भारत-अफगान सम्बन्धों में घनिष्ठता लाने के लिए प्रायः आर्थिक सम्बन्धों की आवश्यकता पर बल दिया जाता रहा। यद्यपि पिछले वर्षों में अफगानिस्तान के आर्थिक सम्बन्ध रूस तथा ईरान से रहे हैं, किन्तु भारत के साथ उसके व्यापारिक सम्बन्धों को नकारा नहीं जा सकता। अफगानी वस्तुओं की बिक्री में भारत बड़े ग्राहकों में रहा है। द्वितीय विश्व युद्ध की विभीषिका से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े न होने पर भी युद्धरत राष्ट्रों से घिरे होने के कारण अफगानिस्तान की अर्थव्यवस्था पर कुप्रभाव पड़ा। उसका रूस से चलने वाला व्यापार लगभग बन्द हो गया। ऐसे समय में भारतीय व्यापारी अफगानिस्तान को सभी आवश्यक वस्तुओं की सप्लाई करते रहे। किन्तु द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् ब्रिटेन के साथ ही भारत की आर्थिक स्थिति भी नगण्य हो चली थी । भारत विभाजन, शरणार्थियों की समस्या तथा अनेक प्रकार के ऋणों ने भारत को दिवालिया बना दिया। इसलिए ऐसी कठिन परिस्थितियों में दोनों देश एक दूसरे की मदद नहीं कर सके। युद्ध के पश्चात् अफगानिस्तान को महाशक्ति अमेरिका तथा रूस ने उसकी विकास योजनाओं के लिए आर्थिक सहायता दी, किन्तु इस सहायता के पीछे उनके अपने प्रयोजन भी थे।[160] अतः भारत तथा अफगानिस्तान के आर्थिक विकास के लिए आवश्यक था कि वे सभी राष्ट्रों के मित्र बने रहें, किसी के शत्रु नहीं। उन्हें विकसित राज्यों से तकनीकी तथा आर्थिक सहायता तथा विकासशील देशों में बाजार मिले, जिससे उनके अपने आर्थिक उत्थान में पूर्ण प्रयास किए जा सकें।

---

158. हरिवंश, पी.के., ''अफगानिस्तान, ईरान व भारत", हिन्दुस्तान (नई दिल्ली), 3 जून, 1978.
159. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 75, पृ. 190-96.
160. वैदिक, वेद प्रताप, "अफगानिस्तान में सोवियत अमरीका प्रतिस्पर्धा" 1973, पृ. 201-3.

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि भारत-अफगानिस्तान प्राचीन काल से ही एक होकर रहे हैं, उनके पारस्परिक, ऐतिहासिक, भौगोलिक, सांस्कृतिक व व्यापारिक सम्बन्धों की भूमिका स्मरणीय है। 1947 में विभाजन के पश्चात् उनके नए पड़ोसी पाकिस्तान की उपस्थिति से उत्पन्न भौगोलिक दूरी से यद्यपि दोनों देशों के व्यापारिक सम्बन्ध प्रभावित हुए, किन्तु ऐतिहासिक सम्बन्धों के आधार पर उनकी मित्रता अनवरत रही है।

*****

तृतीय अध्याय

तृतीय अध्याय

विदेश नीति : भारत -अफगानिस्तान सम्बन्ध

विदेश नीति वह क्रिया है जो एक राज्य द्वारा दूसरे राज्य के साथ सम्पर्क स्थापित करने के लिए की जाती है। राष्ट्रीय हितों से प्रभावित इन सम्बन्धों को ठोस रूप प्रदान करना ही वैदेशिक नीति का प्रथम और अन्तिम उद्देश्य होता है। दूसरे शब्दों में, विदेशनीति वह धुरी है, जिसके चारों ओर अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति चक्कर काटती है।

यहाँ पर भारत व अफगास्तिान की विदेशनीति का अध्ययन किया जा रहा है। जिसमें उनकी समस्याओं तथा एक दूसरे के प्रति उनके दृष्टिकोणों को भी दर्शाया गया है।

(क) भारत की विदेशनीति

द्वितीय विश्व युद्ध के समाप्त हो जाने के पश्चात् अन्तर्राष्ट्रीय जगत में बहुत से परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगे थे। ब्रिटिश उपनिवेशवाद पतन की ओर जा रहा था और सम्पूर्ण विश्व विजयी दो शक्तियों (अमेरिका व रूस) के मध्य गुटों में विभाजित हो गया था।[1] ऐसी स्थिति में अन्तरिम सरकार के प्रधानमंत्री पं0 नेहरू के नेतृत्व में भारत ही पहला देश था, जिसने गुटीय राजनीति से अलग गुटनिरपेक्षता की नीति की घोषणा की।[2] इसलिए लेखक जार्ज लिस्का ने लिखा कि "द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद की राजनीति में बाह्य ढांचे के द्वारा असंलग्नता को, नीति की अपेक्षा दृष्टिकोण के रूप में महत्वपूर्ण बना दिया गया तथा इसके द्वारा भारत का न केवल प्रभाव बढ़ा, वरन् अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अपने राष्ट्रीय उद्देश्यों की पूर्ति के लिए शक्ति भी प्राप्त हुई।" भारत के स्वाधीनता संग्राम ने एशिया और अफ्रीका को उपनिवेशवाद से मुक्त कराने में अग्रणी भूमिका अदा करने का दायित्व और साहस दिया। इस सन्दर्भ में भारतीय अनुभव का अधार मुख्यत: शान्तिपूर्ण कानूनी और असहयोगी संघर्ष से था।[3]

---

1. मार्टिन, लारेन्स डबल्यू, "नेचुरेलिज्म एण्ड नॉन एलाइनमेण्ट", न्यूयार्क 1962
2. समाचार (नई दिल्ली), 7 सितम्बर, 1947
   - नेहरू, जवाहर लाल, "इण्डियाज फॉरेन पॉलिसी सिलेक्टिड स्पीचिज" (सितम्बर 1947 से अप्रैल 1961) पब्लिकेशन डिवीजन, नई दिल्ली, 1961, पृ. 12
   - जानसेन, जी. एच., "एफ्रो-एशिया एण्ड नॉन एलाइनमेण्ट" (लन्दन) 1966, पृ. 425
3. मुनि, सुखदेव, "भारतीय विदेश नीति के बदलते आयाम"
   - लेवी, बरनर, "इण्डियाज इवोल्यूसन ऑफ इण्डियाज फॉरेन पालिसी" द इयर ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स, 1958 (लन्दन), पृ. 115-132

भारतीय विदेश-नीति के निर्धारक तत्त्व

किसी राज्य की विदेश नीति जहाँ ऐतिहासिक परम्पराओं व विचारधाराओं पर निर्भर करती है, वहीं उसमें भूगोल, राष्ट्रीय क्षमता, राष्ट्रीय हित व आर्थिक हित का विशेष महत्वपूर्ण स्थान होता है। यही कारण है कि भारत की विदेश नीति के निर्धारण में उसका आकार, प्राकृतिक साधन, प्राविधिक विकास एवं उसकी आवश्यकताओं का स्वरूप, एशिया में उसकी विशेष स्थिति तथा दूर-दूर तक फैली हुई सामुद्रिक और पर्वतीय सीमाओं की सुरक्षा का विशेष स्थान रहा है। चूँकि भौगोलिक स्थिति में मूलतः कोई परिवर्तन नहीं आता, इसलिए प्रत्येक देश की विदेश-नीति के कुछ स्थायी पहलू होते हैं। किन्तु विशेष परिस्थितियों में विदेशनीति में हेर-फेर भी करना पड़ता है। वस्तुतः भारतीय विदेशनीति केवल किसी नैतिक आदर्श को लक्ष्य मानकर नहीं चलती, बल्कि वह ठोस राष्ट्रीय हितों को लक्ष्य मानती है। भारत द्वारा गुटनिरपेक्षता, शान्ति पूर्ण सहअस्तित्व तथा प्रजातन्त्र को स्वीकार करना, उसके राष्ट्रीय हित से प्रभावित है। भारत के चारों ओर नेपाल, वर्मा, श्रीलंका तथा पाकिस्तान जैसे छोटे राज्य हैं। भारत का किसी गुट में सम्मिलित होना निःसन्देह उसके चारों ओर स्थित राज्यों को इतना भयभीत करता कि वे किसी न किसी प्रकार के सैन्य गुट में सम्मिलित होकर भारतीय भौगोलिक सुरक्षा को खतरा पहुँचा सकते थे।

भारत की ऐतिहासिक परम्परा है कि वह शान्ति का पुजारी तथा विश्व बन्धुत्व के सिद्धान्त पर अडिग रहा है। पश्चिमी विचारक हडसन ने लिखा कि "गांधी के शान्तिवाद ने देश को यह भरोसा दिलाया कि विश्व में शान्ति समझौतों से ही स्थापित हो सकती है, न कि रक्षात्मक संगठन बनाने से।" दूसरी ओर, जवाहर लाल नेहरू ने अपनी समाजवादी विचारधारा द्वारा राजनैतिक, धर्मनिरपेक्ष, गुटनिरपेक्ष और तकनीकी रूप से आधुनिक लोकतन्त्र की नींव रखी।[4]

15 अगस्त, 1947 को भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई जिसके फलस्वरूप शासन की बागडोर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के हाथ में आई। प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने घोषणा की कि भारत अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में स्वतन्त्र विदेशनीति का अवलम्बन करेगा, वह संयुक्त राष्ट्रसंघ को शान्ति स्थापना के कार्य में सहयोग देगा तथा आण्विक शस्त्रों के प्रसार को रोकेगा। भारत पंचशील के सिद्धान्तों का अनुसरण कर सभी राष्ट्रों में सद्भाव और सहयोग बढ़ाने का प्रयास करेगा।[5] भारत गुटों में बंधी हुई शक्तियों और समूहों से अलग रहेगा, जिसकी वजह से पहले भी विश्व युद्ध हुए हैं तथा भविष्य में भी बड़े पैमाने पर विध्वंस हो सकते हैं।

---

4. प्रधानमन्त्री श्री राजीव गाँधी का 12 नवम्बर, 1984 को राष्ट्र के नाम प्रसारित सन्देश 'मिलकर देश महान और मजबूत बनाएं' भारत सरकार द्वारा आकल्पित व प्रकाशित
5. लेवी, बरनर, देखिए क्र. 3

भारत ने अपनी विदेश नीति में गुटनिरपेक्षता को प्रमुख स्थान दिया था। किन्तु पं0 नेहरू ने कहा कि "जहाँ स्वाधीनता संकट में हो या न्याय खतरे में हो या आक्रमण की घटना हुई हो, वहाँ हम तटस्थ नहीं रह सकते।" अपनी इसी स्वतन्त्र विदेश नीति के तहत भारत अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति व सुरक्षा, राष्ट्रों में परस्पर न्यायपूर्ण सम्बन्ध, अन्तर्राष्ट्रीय कानून का सम्मान तथा विवादों को मध्यस्थता द्वारा निपटाने के लिए प्रोत्साहन देने में सहयोग करेगा। दूसरी ओर, प्राचीन संस्कृति की अभूतपूर्व देन पंचशील का भारतीय विदेश नीति में अत्यधिक महत्व है। 20 जून, 1954 को प्रधानमंत्री पं0 नेहरू और चीन के प्रधानमंत्री चाऊ-एन-लाई ने अन्तर्राष्ट्रीय आचरण के लिए पांच सिद्धान्तों को मानने की प्रतिज्ञा की: (1) एक दूसरे की अखण्डता व सम्प्रभुता का सम्मान, (2) आन्तरिक मामलों में अहस्तक्षेप, (3) एक दूसरे पर आक्रमण न करना, (4) परस्पर समानता व मित्रता की भावना, तथा (5) शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व। इन पंचशील के सिद्धान्तों को 1955 में बाण्डुंग सम्मेलन में उपस्थित 19 राज्यों ने तथा 1959 में संयुक्त राष्ट्रमहासभा के अन्तर्गत 82 राज्यों ने स्वीकार किया। इस सम्बन्ध में अफगानिस्तान ने भी भारत के विचारों का समर्थन किया।

विश्व राजनीति में अमेरिका व रूस की प्रतिद्वन्द्विता ने जहाँ गुटबन्दी व शीतयुद्ध को जन्म दिया, वहीं इन महाशक्तियों में नवोदित राष्ट्रों को अपने परिवेश में लाने की होड़ लग गई। भारत के किसी गुट के साथ जुड़ जाने से सहायता की मात्रा बढ़ सकती थी, परन्तु इससे आत्मनिर्भरता और स्वाधीनता की बुनियाद मजबूत नहीं हो सकती थी। इसलिए पं0 नेहरू ने गुटनिरपेक्षता की नीति का प्रतिपादन कर विकासशील छोटे देशों के भाग्य का निर्माण कर दिया।[6] जैसे-जैसे देश आजाद होते गए, उन लोगों की संख्या बढ़ती गई जो शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व में आस्था रखते हैं और सैनिक गठबन्धन से दूर रहना चाहते हैं । दूसरी ओर एशिया में पश्चिमी राष्ट्रों के बढ़ते हुए सैनिक जमघट को देखते हुए भारतीय विदेश नीति की आवश्यकता हो गई कि एक ऐसा समूह बने जिसे पश्चिमी देशों के पिट्ठू राष्ट्रों और चीन के अनचाहे प्रभाव से मुक्त रखा जा सके, साथ ही वह अन्य गुटनिरपेक्ष देशों के साथ मिलकर नैतिक और राजनैतिक आन्दोलन के माध्यम से करोड़ों शोषित लोगों की आवाज़ बुलन्द करे। गुटनिरपेक्षता राष्ट्रों के बीच समानता और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक एवं राजनैतिक सम्बन्धों को लोकतान्त्रिक रूप दिए जाने का समर्थन है, जिसको संयुक्त राष्ट्रसंघ, एफ्रो-एशियाई देशों तथा महाशक्तियों ने भी स्वीकार किया है।[7] यह सत्य है कि सैनिक गठबन्धनों में ऐसी बाध्यताएं होती हैं जो पूरी तरह किसी राज्य

6. आल इण्डिया रेडियो, 'गुटनिरपेक्ष आन्दोलन और पंडित नेहरू', प्रात: 5 बजे, 14 नवम्बर, 1986
7. जाफरी, एच.ए.एस., "इण्डो अफगान रिलेशन्स" (दिल्ली 1976), पृ. 45-46

के अनुरूप नहीं होती। इसी कारण कोई भी देश अब एक दूसरे का न स्थायी दोस्त रहा और न ही दुश्मन।[8] इस प्रकार यद्यपि बड़ी शक्तियों के पिछलग्गुओं का उद्देश्य बड़े-बड़े अभियान और इरादे पूरा करना होता है, किन्तु आज के विज्ञान और तकनीकी युग में देशों के आपसी सहयोग को नकारा नहीं जा सकता।

गुटनिरपेक्षता की अवधीरणाएं

भारतीय जनता ने स्वभावतः ही गुटनिरपेक्षता की नीति को स्वीकार किया, क्योंकि नेहरू का मत था कि अन्य कोई नीति भारत के लिए कामयाब नहीं हो सकती।[9] उसे अपनी स्थिति को देखते हुए सभी के साथ मित्रता व सहयोग की आवश्यकता थी। इसके लिए पं0 नेहरू ने गुटनिरपेक्षता के आधार पर शान्तिपूर्ण सम्बन्धों के लिए जिन सिद्धान्तों की नींव रखी, उन्हें पंचशील का नाम दिया गया। इसका सबसे प्रथम प्रयोग भारत-चीन सन्धि जो तिब्बत को लेकर हुई थी, उसमें किया गया। विश्व राजनीति में भी इस सिद्धान्त को मान्यता प्रदान की गई।[10] इस सिद्धान्त के प्रणेता चीन ने ही इसका घोर उल्लंघन किया। इसलिए पंचशील को भारतीय राजनय की दुर्बलता भी माना जाता है। आचार्य कृपलानी ने कहा था कि यह महान सिद्धान्त पापपूर्ण परिस्थितियों की उपज है, क्योंकि यह एक प्राचीन राष्ट्र तिब्बत के विनाश पर हमारी स्वीकृति पाने के लिए प्रचारित किया गया था।

नेहरू काल में ही विभिन्न नेताओं ने उनकी गुटनिरपेक्षता की नीति की भी आलोचना की। समाजवादी पार्टी के मुख्य पत्र 'जनता' में डा0 लोहिया ने लिखा कि यद्यपि "दिल्ली अटलाण्टिक या सोवियत खेमे की गुलाम नहीं है, किन्तु वह केवल अस्थायी मालिकों को चुनने में ही स्वतन्त्र है"।[11] 1964 में बैंगलूर में सम्पन्न स्वतन्त्र पार्टी के तीसरे अस्थाई सम्मेलन में श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य तथा मीनू मसानी ने अपने एक प्रस्ताव में कहा कि कांग्रेस की नीतियों में सबसे अधिक दुःखदायी और विनाशकारी धारणा थी - गुटनिरपेक्षता की, जिसके कारण विदेश नीति में दोहरे मापदण्ड उत्पन्न हुए; कम्युनिस्ट चीन का निरन्तर तुष्टिकरण, दक्षिण और दक्षिण पूर्व एशियाई पड़ोसी देशों के प्रति बेरूखी, 1950 में चीनी साम्यवादी साम्राज्यवाद के आगे तिब्बत की बलि, 1956 में हंगरी क्रान्ति को दबाने के सोवियत कदम का संयुक्त-राष्ट्र में समर्थन तथा

---

8. प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी, देखिए क्र. 4
9. अप्पादोराय, राजन, "इण्डियाज फॉरेन पॉलिसी एण्ड रिलेशन्स" नई दिल्ली 1985, पृ. 41
10. जानसेन, जी. एच., देखिए क्र. 2, पृ. 228
11. लोहिया, राम मनोहर, "द थर्ड केम्प इन वर्ल्ड अफेयर्स" (बम्बई 1950)
    - जनता (नई दिल्ली), 31 जनवरी, 1956

इजराईल के साथ राजनैतिक सम्बन्ध स्थापित करने से निरन्तर इन्कार आदि दोहरे मापदण्डों के उदाहरण हैं।[12]

वास्तव में शीतयुद्ध के वातावरण में नवोदित भारत के लिए गुटनिरपेक्षता की नीति का वरण शायद तात्कालिक दृष्टि से उचित रहा हो, किन्तु भारत जैसे विशाल देश के लिए गुटनिरपेक्षता की नीति को शाश्वत् रूप देना न तर्कसंगत है और न ही यह दृष्टिकोण यथार्थ की कसौटी पर खरा उतरता है। वास्तव में विदेश नीति का क्षेत्र इतना व्यापक है कि उसे गुटनिरपेक्षता की परिधि में नहीं बांधा जा सकता। महाशक्तियों के गुटों की राजनीति पर प्रतिक्रिया करते रहना ही इस नीति का मुख्य लक्ष्य बन जाता है। इसका सबसे बड़ा दोष है कि गुटनिरपेक्ष देशों में कोई वैचारिक समानता नहीं है, इसके विपरीत अटलाण्टिक और सोवियत गुट के देशों के पास दृढ़ राष्ट्र हित की विचारधारा है। भारत ने गुटनिरपेक्षता की नीति का वरण शक्तिहीनता की विवशता को छिपाने के लिए किया, किन्तु उसे इसमें अधिक सफलता नहीं मिली। सच्चे अर्थो में गुटनिरपेक्ष होना तो केवल शक्तिशाली राष्ट्र के लिए ही सम्भव है।[13] इसलिए गुटनिरपेक्षता को मात्र नीति ही माना जा सकता है, विदेश नीति का सिद्धान्त या विचारधारा नहीं। भारत जैसे विशाल और परम्परा सम्पन्न देश की भूराजनैतिक अवस्थिति को देखते हुए उसकी विदेश नीति के लिए एक ऐसी सैद्धान्तिक आधार-भूमि होनी चाहिए, जो गुटनिरपेक्षता से अधिक दूरगामी व यथार्थवादी हो।

विदेश-नीति का सैद्धान्तिक पक्ष

1947 से 1964 तक भारत की विदेश नीति पं0 नेहरू के द्वारा ही निर्धारित की जाती रही, उसके पश्चात शास्त्री जी, इन्दिरा जी, मोरार जी, राजीव गांधी, विश्वनाथ प्रताप सिंह तथा नरसिंहाराव ने थोड़ा बहुत फेरबदल कर उन्हीं नीतियों को जारी रखा। इसलिए डा0 वैदिक ने लिखा कि सच पूछा जाए तो नेहरू के अलावा किसी भी प्रधानमंत्री के पास विदेश नीति के मौलिक सूत्र नहीं थे। जो भी प्रधानमंत्री बना कमोवेश नेहरू नीति को ही चलाया।[14]

11 जून, 1964 को लाल बहादुर शास्त्री ने प्रधानमंत्री बनने के बाद पहली बार देश को सम्बोधित करते हुए कहा कि वे गुटनिरपेक्षता के आधार पर उन्नति व विकास का मार्ग अपनाएँगे तथा विश्व शान्ति के आधार पर मानव अधिकारों का समर्थन करेगें।[15] श्रीमती इन्दिरा

12. 'अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों और प्रतिरक्षा पर प्रस्ताव' 1 तथा 2 फरवरी, 1964
13. वैदिक, वेद प्रताप, "भारतीय विदेश नीति- नये दिशा संकेत" नई दिल्ली 1980, राष्ट्रीय सहमति का भ्रम, पृ. 20-24, विकल्प; गुटनिरपेक्षता काफी नहीं, पृ. 123, 130-34
14. वैदिक, वेद प्रताप, "भारतीय विदेशनीति-गति है मगर दिशा स्पष्ट नही", धर्मयुग 12-18 मई, 1985, पृ. 13
15. अप्पादोराय, 'सिलेक्टिड डाक्यूमेन्ट्स ऑफ इण्डियाज फॉरेन पॉलिसी एण्ड रिलेशन्स 1947-72', प्रथम भाग 1982, प्रधानमन्त्री लाल बहादुर शास्त्री द्वारा विदेश नीति पर भाषण; 11 जून, 1964

गांधी के शासन काल में भारतीय विदेश नीति पर रूसी प्रभाव[16] तथा राष्ट्रीय सुरक्षा के उद्देश्य की छाप स्पष्ट उभरती प्रतीत होती है। भारत ने परमाणु शक्ति सम्पन्न देशों से रक्षा के लिए अपनी परमाणु क्षमताओं को सशक्त बनाया।* उसने बड़ी शक्तियों के भेदभाव पूर्ण रवैये के कारण परमाणु शस्त्र परिसीमन सन्धि तथा पाकिस्तान द्वारा संयुक्त राष्ट्र में रखे गए दक्षिण एशिया परमाणु रहित क्षेत्र प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया। क्योंकि भारत, चीन को भी इसी परिधि में रखना चाहता है, किन्तु चीन यह स्वीकार नहीं करता। भारत की परमाणु नीति समूचे विश्व की परमाणु व्यवस्था को सुधारने के प्रयोजन को सामने रखे हुए है। श्रीमती इन्दिरा गांधी की विदेश नीति उचित शक्ति, सामर्थ्य और क्षमताओं के बल पर सैनिक क्षेत्र में ही नहीं, अपितु आर्थिक, राजनैतिक व सामाजिक दृढ़ संकल्प के प्रति पूरी तरह जागरूक व संवेदनशील थी। सम्भवत: इसी कारण उनकी विदेश नीति को कुछ प्रबुद्ध विश्लेषण कर्त्ताओं ने शक्ति संचय की विदेश नीति कहा है।[17]

1977 में जनता शासन काल में प्रधानमंत्री श्री मोरार जी देसाई तथा विदेशमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने अपनी राष्ट्रीय सहमति पर आधारित विदेशनीति में अमेरिका, चीन व सभी पड़ोसी देशों के साथ सम्बन्धों में सुधार की सम्भावना को व्यक्त किया तथा असंलग्नता की नीति को जारी रखा। उनके पश्चात इन्दिरा गांधी, तत्पश्चात् राजीव गांधी ने नेहरू नीति को ही आगे बढ़ाया।[18] प्रधानमंत्री श्री गांधी ने संसद में अपनी नीति को स्पष्ट करते हुए कहा कि "भारत ने हमेशा ही साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद, जातिवाद व किसी भी प्रकार के प्रभुत्व तथा विषमताओं के विरूद्ध संघर्ष किया है। इसलिए चाहे पश्चिमी शक्तियों द्वारा मिस्त्र पर बमबारी हो, अरबों पर इजरालियों का आक्रमण हो और चाहे पोलेण्ड एवं चेकोस्लोवाकिया पर रूसी गुट का आक्रमण हो, भारत ने अपनी स्वतन्त्र विदेश नीति के तहत विश्व में एक विशेष स्थान प्राप्त किया है"।[19] 1989 में विश्वनाथ प्रताप सिंह के नेतृत्व में बनी राष्ट्रीय मोर्चा सरकार ने भी पुरानी नीतियों को जारी रखते हुए जहाँ पाकिस्तान के साथ सम्बन्धों में सुधार के प्रयास किए, वहीं अन्य देशों के साथ भी अच्छे सम्बन्धों के लिए आशा प्रगट की। वर्ष 1991 में बनी नरसिंहाराव सरकार ने विश्व में बदलती हुए राजनैतिक स्थितियों को देखते हुए विदेश नीति में मूलभूत परिवर्तन

16. राय, एम. पी., "इण्डियाज फॉरेन पॉलिसी (1966-77)- ए क्रिटिकल एनालिसिस" फरवरी 1978

* भारत ने मई 1974 में प्रथम परमाणु परीक्षण किया।

17. मान, सुरजीत सिंह, "इण्डिया सर्च पावर- इन्दिरा गांधी फॉरेन पालिसी" नई दिल्ली, 1984

18. आल इण्डिया रेडियो, 14 नवम्बर, 1986

19. राजीव गांधी, "सुदृढ़ और सक्रिय विदेश नीति" लोक सभा में 10 अप्रैल, 1985 को विदेश मन्त्रालय की अनुदान मांगों पर बहस के जवाब में प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी का वक्तव्य, भारत सरकार द्वारा आकल्पित एवं प्रकाशित

किए हैं। वह नेहरू जी की नीतियों के विपरीत विदेशी पूँजी को देश में आमन्त्रित कर रही है।[20] मुक्त बाजार व्यवस्था के तहत यदि विदेशों के बड़े उद्योगपति भारत तथा अन्य देशों के बाजार व मंडियों में कब्जा करते हैं तो विश्व अर्थ व्यवस्था में सबकी साझेदारी की भारतीय कल्पना कैसे साकार होगी।[21]

विदेश-नीति का क्रियान्वयन

1947 से 1952 तक भारत की विदेश नीति का झुकाव पश्चिम की ओर बना रहा। इसका प्रमुख कारण था- अंग्रेजों से मिली भारत की राजनैतिक व सामरिक विरासत तथा व्यापार एवं पूँजी निवेश के क्षेत्र में पश्चिमी देशों पर निर्भरता। बाद में जैसे-जैसे पश्चिमी देशों की पाकिस्तान समर्थक नीति और एशियाई क्षेत्र में सैनिक गठबन्धन की योजनाएं उभरी, वैसे-वैसे भारत उनसे अलग खिंचता गया और उसका रूझान सोवियत संघ की ओर बढ़ा।[22] 1954-55 में जहाँ पाकिस्तान अमेरिका का एक व्यावहारिक रूप में उपनिवेश बना, वहीं भारत-सोवियत मित्रता ने सुदृढ़ रूप ले लिया।

1962 में चीन के हाथों करारी हार के पश्चात् भारतीय विदेश नीति लड़खड़ाई और उसे अपने हितों पर समझौते करने पड़े। बाद में भारत की कमजोरी को ध्यान में रखते हुए, चीन से सहायता और समर्थन की उम्मीद में 1965 में पाकिस्तान ने कश्मीर में युद्ध थोप कर भारत की शक्ति को और अधिक क्षीण और शिथिल करने का प्रयास किया।[23] वास्तव में भारत पर हुए चीन के आक्रमण तथा कश्मीर मुद्दे पर पाकिस्तान और पश्चिमी देशों के असह्य दबाव ने नेहरू व अन्य नीति निर्धारकों को इस बात के प्रति सजग कर दिया कि असंलग्न नीति राष्ट्रीय सुरक्षा का विकल्प नहीं बन सकती। 1971 की भारत-सोवियत सन्धि इसका प्रमुख उदाहरण थी। क्योंकि जहाँ चीन द्वारा पाकिस्तान के समर्थन की बहुत सम्भानाएं थी, वहीं अमरीकी नेता भी हस्तक्षेप ही चाहते थे। यह भारतीय विदेश नीति का परिवर्तनकारी बिन्दु था। किन्तु 1971 की सन्धि असंलग्नता का विकार नहीं थी अपितु यह द्विपक्षीय स्तर पर भारत की सुरक्षा और दक्षिण एशियाई क्षेत्र में बंगला देश के उदय में सफल भूमिका निभाने का प्रावधान मात्र था।

सुरक्षा हितों का सीधा सम्बन्ध अक्सर पास-पड़ोस के सामरिक वातावरण से होता है।

---

20. सिंह, उदय नारायण, "भारत-अमेरिकी संयुक्त नौसैनिक युद्धाभ्यास का औचित्य" जनसत्ता, 19 अप्रैल, 1992
21. चतुर्वेदी, राधानाथ, " समृद्धि या आर्थिक दास्ता को नियन्त्रण" नवभारत टाइम्स, 27 जून, 1994
22. मुनि, सुखदेव, देखिए क्र. 3
23. मुनि, एस. डी., "साउथ-एशिया सिस्टैमिक एडं स्ट्रेटजिक डाईवर्जस इम्पलीकेशन फॉर इण्डियन सिक्युरिटी" मैनस्ट्रीम, 30 मार्च, 1994, पृ. 17-24

इसी कारण ही भारत की विदेश नीति का ध्यान पिछले दो दशकों में चीन, पाकिस्तान और अन्य पड़ोसी क्षेत्रों में हुए सामरिक महत्व के परिवर्तनों पर गया है। उसने चीन के साथ सीमा सुरक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण सुधार किए। बंगला देश में अग्रणी भूमिका के पीछे भी भारत का मुख्य उद्देश्य अपनी सुरक्षा व सामरिक वातावरण को सुधारना था। इसके द्वारा भारत की दक्षिण एशिया में छवि सुधरी और वह 1962 में चीन युद्ध से उत्पन्न हीनता की भावना से मुक्ति पा सका। 1974-75 में भारत में सिक्किम के एकीकरण से चीन की ओर से किसी अवश्यंभावी खतरे से निपटने में भी भारत की सामरिक स्थिति सुदृढ़ हो गई।[24]

दिसम्बर 1979 में सोवियत संघ द्वारा अफगानिस्तान में सैनिक हस्तक्षेप के कई दूरगामी और परस्पर विरोधी परिणाम भारत की सुरक्षा और विदेश नीति के लिए चिन्ता का विषय बने; प्रथम, इस हस्तक्षेप से सोवियत संघ फारस की खाड़ी, दक्षिण व दक्षिण पश्चिम एशिया और हिन्दमहासागर के शक्ति उपक्रम में एक अहम् कारण बन गया। दूसरा, अमेरिका को खाड़ी में अपने पांव जमाने और इस क्षेत्र में सैनिक प्रसार का एक अच्छा बहाना मिल गया और तीसरा, इसके कारण अमरीकी-पाकिस्तानी व चीनी-पाकिस्तानी सामरिक सम्बन्धों को निकटतम बनाने का नया प्रयोजन उत्पन्न हुआ। भारतीय विदेश नीति ने इन परिणामों से उत्पन्न स्थिति का सामना करने के लिए सोवियत हस्तक्षेप का विरोध कर गुटनिरपेक्ष सम्मेलन व अन्य कूटनीतिक माध्यमों से अफगानिस्तान के पूर्ण स्वतन्त्र व असंलग्न होने की मांग की तथा सेना की वापसी का आग्रह किया। दूसरी और अफगानिस्तान के बहाने खाड़ी में अमरीकी जमाव एवं पाकिस्तान के सैन्यीकरण का खुलकर विरोध किया। इसके लिए कोई कारगर विकल्प खोजने के उधेड़बुन में राजीव की सरकार भी उलझी रही।

आठवें दशक के प्रारम्भ से ही बड़ी शक्तियों के सैन्य जमाव में वृद्धि ने जहाँ ईरान-ईराक युद्ध को जटिल बना कर उसे तीव्र किया, वहीं चीन का पड़ोसी देशों में बढ़ता हुआ सामरिक प्रभाव तथा पड़ोसी देशों के आन्तरिक कलह व विघटन भारत की सुरक्षा के लिए चिन्ता का कारण रहे। इन चुनौतियों का सामना करने के लिए भारतीय विदेश नीति को सक्षम बनाना होगा। दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय संगठन संस्था भी इसी दिशा में एक ठोस कदम है, जिसका भारत की पड़ोसियों के प्रति (आर्थिक, सांस्कृतिक व तकनीकी) नीति में बहुत महत्व है। इस दिशा में पड़ोसियों के साथ सम्बन्ध सुदृढ़ करने की श्री गांधी की योजना स्वागत योग्य रही।[25]

तत्कालीन स्थितियों से प्रभावित होकर बड़ी शक्तियों के एशियाई सामरिक सम्बन्धों में

24. मान, सुरजीत सिंह, देखिए क्र. 19
25. मुनि, सुखदेव, देखिए क्र. 3

महत्वूपर्ण परिवर्तन हो रहे हैं। इसका प्रमुख उदाहरण 1983-84 में अमेरिका-भारत का प्रमुख व्यापार सहयोगी बन गया। भारत में सत्तारूढ़ सभी सरकारों तथा वर्तमान कांग्रेस सरकार ने भी इस आर्थिक गतिशीलता को बनाये रखा है। इसलिए सम्भावित चुनौतियों को देखते हुए कहा जा सकता है कि भारत की विदेश नीति राष्ट्रीय सुरक्षा और आर्थिक विकास के उद्देश्यों की धुरी पर घूमती रहेगी।[26]

सोवियत संघ ने गोर्वाच्योव के नेतृत्व में अपनी व्यावहारिक गतिशील नीति का परिचय देते हुए जहाँ अफगानिस्तान से सेना की वापसी की इच्छा व्यक्त की, वहीं चीन तथा पाकिस्तान से सौहार्द्र पूर्ण सम्बन्धों के प्रयास भी किए। इससे चीन तथा पाकिस्तान की कूटनीतिक गतिशीलता बढ़ी। भारत द्वारा इसके विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करके एक सुचारू व संयत दृष्टिकोण अपनाना विदेशनीति की प्रथम आवश्यकता थी। तभी सोवियत संघ का पतन हुआ। उनके द्वारा नियन्त्रित अर्थव्यवस्थाएं चल पाना कठिन था। इसलिए भारत तथा लगभग सभी देशों ने खुली अर्थ-व्यवस्था के तहत उदारीकरण का रूख अपनाया। किन्तु नरसिंहाराव ने जिस दृढ़ संकल्प से देश की विदेशनीति को नया आर्थिक दर्शन दिया वह निश्चित ही सराहनीय है।[27] दूसरी ओर चीन के आधुनिकीकरण के कार्यक्रम की प्रगति से होने वाले प्रभावों का भी भारतीय विदेश नीति को सुरक्षा की दृष्टि से मूल्यांकन करना होगा। पाकिस्तान अपनी नवार्जित शक्ति के बल पर भारत को परमाणु युद्ध की धमकी देकर धमकाना चाहता है। वह अमेरिका व पश्चिमी देशों की आँखों में धूल झौंककर परमाणु बम और मिसाइलें हासिल कर सका है। अतः भारत के लिए भी अपनी क्षमता विकसित करना आवश्यक हो गया है, किन्तु अमेरिका नहीं चाहता कि भारत परमाणु बम व प्रक्षेपास्त्रों के युग में प्रवेश करे। 19 मई, 1994 को प्रधानमंत्री श्री नरसिंहाराव ने अमेरिकी यात्रा के दौरान दबाव रहित विदेशनीति के तहत परमाणु विकल्प को छोड़ने से इन्कार किया और इस प्रकार उन्होंने अपनी सुदृढ़ नीति का परिचय दिया है। इस प्रकार पाकिस्तान, चीन और समूचे विश्व के प्रति अपने राष्ट्रीय हितों को बढ़ाने में भारत की विदेश नीति की सार्थकता उसकी अपनी आर्थिक, राजनैतिक और सैनिक क्षमताओं पर निर्भर करेगी। भारत की विदेशनीति अमेरिका और यूरोप से अपना सन्तुलन सुधारने की दिशा में भी सक्रिय है। वह सोवियत रूस से गहरी मित्रता तथा चीन से सम्बन्ध सुधारने का प्रयास कर रही है। किन्तु अभी पाकिस्तान के साथ सम्बन्धों में सुधार की आवश्यकता है। भारत सरकार को कश्मीर प्रश्न पर अपनी दूरदर्शिता

---

26. मुनि, सुखदेव, देखिए क्र. 3
27. बाली, सूर्यकान्त,"यह रहा विदेशनीति पर बहस का संदर्भ", नवभारत टाइम्स (नई दिल्ली), 19 मार्च, 1995

तथा कूटनीति द्वारा एशिया, यूरोप और अमेरिका को अपना पक्ष स्पष्ट कर पाकिस्तानी चालों से अवगत कराना चाहिए। उसे अपने छोटे पड़ोसी देशों के प्रति दबाव का नहीं, बल्कि मित्रता और सहयोग का रूख अपनाना चाहिए। अपनी सन्तुलित व सक्रिय विदेश नीति द्वारा भारत विश्व में महान शक्ति तथा संयुक्त राष्ट्रसंघ में स्थायी सदस्य का दर्जा प्राप्त कर सकता है।

अफगानिस्तान की विदेशनीति

प्राचीन काल से ही साम्राज्यवादी व उपनिवेशवादी शक्तियों ने अफगानिस्तान को जितना दबाने की कोशिश की उतनी ही उग्रता के साथ उन्होंने विश्व में स्वतन्त्रता से व्यवहार करने के अपने अधिकारों का दावा शुरू किया। आज जिसे गुटनिरपेक्षता की नीति कहा जाता है उसकी प्रारम्भिक अभिव्यक्ति अफगानिस्तान में ही हुई। अफगान शासकों की बुद्धिमत्तापूर्ण व संतुलित विदेश नीति ने अफगानिस्तान को प्रथम व द्वितीय विश्व युद्ध का शिकार बनने से बचा लिया। युद्ध के दौरान महाशक्तियों द्वारा ईरान के कब्जे ने अफगानिस्तान को भली भाँति सिखा दिया था कि न केवल प्रतिरक्षा बल्कि राजनैतिक स्वतन्त्रता के लिए भी उसका तटस्थ रहना लाभकर है। मई 1946 में शाह मसूद ने मन्त्रिमण्डल की घोषणा में कहा कि "सभी राष्ट्रों, विशेषकर पड़ोसी राष्ट्रों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध का सिद्धान्त उनकी विदेश नीति की आधारशिला है । अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में हम विश्व शान्ति को सुदृढ़ बनाने के लिए सहयोग देने का प्रयत्न करते रहेंगें"।[28]

अफगानिस्तान की परम्परागत विदेश नीति के अन्तर्गत गुटनिरपेक्षता द्वारा राष्ट्रीय स्वतन्त्रता, मित्रता व सभी देशों के साथ सहयोग है।[29] पख्तूनिस्तान मांग का समर्थन अफगान विदेशनीति का मुख्य तत्व है। अफगानिस्तान ने प्रारम्भ से ही अपने वैदेशिक सम्बन्धों में उल्लेखनीय गत्यात्मक पहल और व्यावहारिक लचीलेपन का परिचय दिया। उसने सीमा क्षेत्रों की सुरक्षा, पृथकतावाद का विरोध और अपनी शक्ति के प्रति सजगता आदि गुणों को विदेश नीति में शामिल किया, साथ ही हर स्थिति में अपनी स्वतन्त्रता का समर्थन किया है। अफगानिस्तान संयुक्त राष्ट्रसंघ तथा गुटनिरपेक्ष आन्दोलन का समर्थन कर उपनिवेशवाद, जातिवाद, सैनिक सन्धियों व शस्त्रहोड़ का विरोध करता है। वह अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सहयोग, शान्तिपूर्ण सम्बन्धों में विश्वास तथा

---

28. वैदिक, वेद प्रताप, "अफगानिस्तान में सोवियत-अमरीकी प्रतिस्पर्धा", दिल्ली 1973 , पृ. 47
    इस्लाह (काबुल), 15 मई, 1946
29. हसन, जुवेदा, "द फॉरेन पॉलिसी ऑफ अफगानिस्तान", पाकिस्तान होराइजन, क्वाटरली 3, खण्ड 17, अकं 1, 1964, पृ. 48
    - बैक्स, आर्थर, एस., "पॉलिटिकल हैड बुक ऑफ द वर्ल्ड, 1975" (न्यूयार्क), पृ. 3-4

निरस्त्रीकरण का समर्थन कर विश्व में किसी भी प्रकार के युद्ध का विरोध करता है।[30]

अफगान प्रधानमंत्री मोहम्मद युसूफ ने 14 मार्च, 1963 को प्रथम नीति वक्तव्य में कहा कि "अफगानिस्तान की विदेश नीति राष्ट्रीय हितों और अफगान जनता की आकांक्षाओं के अनुकूल परस्पर सम्मान तथा विश्वास के आधार पर सभी राष्ट्रों और लोगों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों को दृढ़ रखते हुए शान्ति को बनाये रखने में योगदान करेगी। वह तटस्थता तथा असंलग्नता, स्वतन्त्रता तथा राष्ट्रीय सार्वभौमिकता की अपनी परम्परागत नीति का पालन करेगी"। विदेशनीति के इन आयामों को राष्ट्रपति दाउद, तराकी, अमीन, कारमल एवं नजीबुल्ला आदि सभी ने समय व स्थिति के बदलते क्रम के तहत स्वीकार किया। इस प्रकार अफगानिस्तान की विदेशनीति के आधार हैं- संयुक्त राष्ट्रसंघ के घोषणा पत्र का अनुसरण, मानवीय अधिकारों की घोषणा का सम्मान, आत्मनिर्णय के अधिकार का समर्थन, सम्पूर्ण विश्व में हर प्रकार के उपनिवेशवाद का अन्त तथा अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग में वृद्धि। वह बल प्रयोग का सहारा लिए बिना विवादों की समाप्ति के द्वारा विश्व शान्ति की रक्षा का लक्ष्य रखता है।[31] अस्तु, स्वतन्त्र, प्रगतिशील व रचनात्मक विदेश-नीति को बनाए रखना अफगानिस्तान का आधारभूत राष्ट्रीय लक्ष्य है।

विदेशनीति का क्रियान्वयन

प्राचीन काल में अफगानिस्तान के वैदेशिक सम्बन्ध केवल उन्हीं शक्तियों या राष्ट्रों के साथ थे जो या तो उनकी भौगोलिक सीमा को स्पर्श करते थे या इस्लामी राष्ट्र होने के कारण अफगान मानस के समीप थे। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् उसके वैदेशिक सम्बन्धों में विस्तार हुआ। महाशक्तियों की कूटनीतिक गतिविधियों के कारण उसने राष्ट्रहितों के लिए तटस्थता की नीति को स्वीकार किया।[32] इसी नीति के तहत जहाँ देश के नवनिर्माण के लिए अफगानों ने अमेरिका से ऋण मांगकर सफलता अर्जित की, वहीं रूस के साथ व्यापार बढ़ाकर देश की आर्थिक समृद्धि के लिए सफल प्रयत्न किया। इस प्रकार यह उनकी राष्ट्रहित की भावना ही है जो विदेश-नीति में समायोजित नव्यता प्रदान करती है।[33] राष्ट्रहित का अर्थ है, देश की सुरक्षा, सीमा एवं प्रादेशिक अखण्डता और देश का आर्थिक विकास आदि। राष्ट्रहित ही विदेश नीति का आधार होता है। इसलिए पं0 जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व में जब भारत ने किसी भी महाशक्ति के

---

30. बत्रा, मनोहर सिंह, "द फॉरेन पॉलिसी एण्ड रिलेशन्स ऑफ अफगानिस्तान", सेमीनार ऑन मेजर प्राब्लम्स् ऑफ मार्डन सैंट्रल एशिया, 27-28 जनवरी, 1970
31. वैदिक, देखिए क्र. 28, पृ. 267-72
32. बैंक्स, आर्थर एम, देखिए क्र. 29
33. वैदिक, देखिए क्र. 28, पृ. 46-48, 70, 77, 78

साथ न जुड़ने और गुटनिरपेक्षता की नीति स्वीकार करने का निर्णय लिया तो अफगानिस्तान ने भी इसे स्वीकारते हुए स्वतन्त्र विदेशनीति के आधार पर इस न्यायिक निर्णय लेने वाली (गुटनिरपेक्ष-आन्दोलन) संस्था में अपना नाम दे दिया।[34]

पड़ोसी पाकिस्तान के साथ पख्तूनिस्तान की समस्या और उस पर उसके रूख के अलावा दोनों देशों के बीच कोई ऐसा मामला नहीं है जिसके कारण सम्बन्धों के निरन्तर विस्तार और दृढ़ीकरण में व्यवधान हो। पड़ोसी देश ईरान के साथ भ्रातृत्वपूर्ण सम्बन्धों की अभिवृद्धि करना तथा चीन के साथ पारस्परिक मित्रतापूर्ण सम्बन्ध कायम रखना व सफल सहयोग में अभिवृद्धि करना, अफगानिस्तान की विदेश नीति का एक अंग है।[35] दो अलग-अलग राजनैतिक और सामाजिक व्यवस्थाएं होने के उपरान्त भी पड़ोसी सोवियत संघ के साथ मैत्रीपूर्ण और पारस्परिक सम्मान के आधार पर अफगानिस्तान के सम्बन्ध बने रहे हैं। मैत्री के परम्परागत सम्बन्धों तथा पारस्परिक समझ के आधार पर भारतीय गणतन्त्र के साथ अफगानिस्तान के सम्बन्ध मैत्रीपूर्ण और सन्तोषजनक हैं। किन्तु अफगानिस्तान की इच्छा और प्रयत्नों के बावजूद उसके पाकिस्तान के साथ सम्बन्ध सुधरे नहीं हैं।

इस प्रकार तटस्थता व शान्ति प्रियता काबुल की विदेश नीति के मुख्य गुण हैं। राष्ट्रीय प्रपंच और प्रचार से दूर रह कर सीधी-सादी भाषा में सीधे-सादे रास्ते अख्तियार करना अफगानिस्तान का राष्ट्रीय चरित्र है। इसका अर्थ यह नहीं कि सही या गलत के बारे में अफगान सरकार का अपना कोई विवेक नहीं है। वास्तव में दक्षिण एशिया, रोडेशिया, इज़राईल और ताइवान के साथ अफगानिस्तान की कोई सहानुभूति नहीं है। साइप्रस के सवाल पर काबुल तुर्की का समर्थन करता है, जो भारत सरकार को पसन्द नहीं है। इस्तबुल के समर्थन के बारे में काबुल का मत है कि तुर्की के लिए सेंटो देशों के समर्थन पर रहना जरूरी नहीं है। वियतनाम या अन्य किसी भी सवाल पर उसकी नीति चीन या अमेरिका को खुश करने की नहीं रही। 1973 में दाउद काल में जहाँ भारत के साथ सम्बन्धों में निकटता आई वहीं अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को दी जा रही सैनिक सहायता पर व्यापक चिन्ता प्रकट की जाती रही। 1978 में तराकी के नेतृत्व में प्रथम कम्युनिस्ट सरकार की स्थापना के पश्चात् अफगानिस्तान में रूसी प्रभाव में वृद्धि हुई। पड़ोसी मुस्लिम देश पाकिस्तान एवं ईरान ने इस सरकार को स्वीकार नहीं किया। जबकि नई सरकार ने गुटनिरपेक्षता तथा पारस्परिक मित्रता को विदेशनीति के प्रमुख आधार के रूप में स्वीकार

34. प्रोसीडिंग्स ऑफ द काफ्रेन्स ऑफ हैड्स ऑफ स्टेट एण्ड गवर्नमेण्ट ऑफ नॉन एलाइनमेण्ट कन्ट्रीज, बेलग्रेड, यूगोस्लाविया 1961, पृ. 80, अफगान विदेश मंत्री की 1961 में बेलग्रेड में हुए गुटनिरपेक्ष देशों के सम्मेलन में उद्घाटन समारोह में दिया गया भाषण।

35. प्रधानमंत्री मोहम्मद मूसा सफीक के प्रथम नीति वक्तव्य का विदेश नीति-प्रकरण (10 दिसम्बर, 1972)

किया था। क्रान्ति से उत्पन्न अस्थिरता की स्थिति में 1979 में पुनः क्रान्ति द्वारा सोवियत समर्थित सरकार की स्थापना हुई, जिसने देश में वाह्य आक्रमण से रक्षा के लिए रूसी सैनिकों को देश में आमन्त्रित किया। यद्यपि विश्व भर में प्रतिक्रिया व्यक्त की गई कि अफगानिस्तान रूसी खेमे में शामिल हो गया है, किन्तु अफगान नेताओं ने समय-समय पर पूर्ववत् स्वतन्त्र विदेशनीति के प्रति विचार व्यक्त किए। वास्तव में अफगानिस्तान में सोवियत प्रभाव का प्रमुख कारण उनकी बड़ी सीमा का परस्पर जुड़ा होना है। इसलिए जहीरशाह व दाऊद से लेकर नजीबुल्ला तक सभी शासकों की विदेशनीति रूस से प्रभावित रही।

भारत और अफगानिस्तान की विदेशनीति में समानताएं

प्रारम्भ से ही गुटनिरपेक्षता की नीति दोनों देशों की विदेशनीति की आवश्यकता रही है। दोनों राष्ट्रों को उपनिवेशवाद के चंगुल से छूटने के बाद जहाँ अपने विकास की चिन्ता थी, वहीं इन्हें इन उपनिवेशवादियों ने जाते हुए अनेक समस्याएं दी थीं, जिसके कारण इन राष्ट्रों को किसी एक शक्ति की नहीं, अपितु सभी बड़े राष्ट्रों के सहयोग की आवश्यकता थी। अफगानिस्तान के लिए जहां प्रमुख समस्या आर्थिक पिछड़ापन था, वहीं उसकी सबसे बड़ी समस्या उसका भूवेष्टित राष्ट्र होना था। भारत की अर्थव्यवस्था भी पूरी तरह जर्जर हो चुकी थी, इसलिए राष्ट्रहित के उद्देश्य से दोनों राष्ट्रों ने अपनी विदेशनीति में तटस्थता को विशेष स्थान दिया। भारत में जहाँ सभी तत्कालीन सरकारों ने पूर्ण रूप से इसका पालन किया, वहीं अफगान शासकों में जहीर-शाह, दाऊद, तराकी[36], कारमल और राष्ट्रपति नजीबुल्ला के नेतृत्व में अफगानिस्तान ने कठिन परिस्थितियों में भी गुटनिरपेक्षता के प्रति विश्वास व्यक्त किया।[37]

अफगानिस्तान के पश्तों भाषा के समाचार पत्र 'हेवाद व अनिश' ने अपने सम्पादकीय में लिखा कि आजादी के बाद भारत ने गुटनिरपेक्षता के आधार पर अपनी विदेश नीति निर्धारित की, जो हमारी नीति से बहुत कुछ मिलती-जुलती है। अपनी नीतिगत समानता के कारण दोनों देश एक दूसरे के करीब आए।[38] भारत तथा अफगानिस्तान दोनों ने ही उपनिवेशवाद से उत्पन्न कठिन परिस्थितियों का अनुभव किया था, इसलिए इस कुरीति के उन्मूलन के प्रति

---

36. काबुल टाइम्स, 13 मई, 1978
37. वैदिक, वी.पी., "अफगान नॉन एलाइनमेण्ट: चेन्जिग फेसिस" द्वारा के.पी. मिश्रा नॉन एलाइनमेण्ट फ्रण्टियर्स एण्ड डायनामिक्स, नई दिल्ली 1982, पृ. 239
38. पत्रकार संसद, "भारत अफगानिस्तान मित्रता के दायरे" अष्टम परिच्छेद, अफगानिस्तान के पश्तो भाषा के दैनिक पत्र हेवास और अनिष्ट। द्वारा उद्धृत, दिनमान 29 जुलाई, 1966
    - कुमार, अशोक, "पाकिस्तान एज ए फेक्टर ऑफ इण्डो-अफगान रिलेशन्स" मेरठ 1981, पृ. 164

उनके विचार स्वभावतः समान है।[39] दोनों देश एफ्रो-एशियाई ग्रुप, संयुक्त राष्ट्रसंघ और गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सदस्य राज्य हैं। उन्होंने इन संघों के माध्यम से विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय संघर्षों एवं समस्याओं को अपने विचारों एवं कार्यों से प्रभावित कर स्वतन्त्र भूमिका का निर्वाह किया है।[40] परस्पर विदेश नीति में समानता का जिक्र करते हुए प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी ने जून, 1969 में अपनी काबुल यात्रा के दौरान कहा कि "दोनों देशों ने सुनियोजित विकास तथा तटस्थता का मार्ग अपनाया है। हमारी तटस्थता का अर्थ विश्व की समस्याओं के प्रति उपेक्षा का भाव दिखाना नहीं है। हम शान्ति, प्रगति, पारस्परिक मित्रता व सहयोग चाहते हैं। उन्होंने कहा कि हमारी तटस्थता की नीति ने फौजी गुटों के महत्व को घटा दिया है"।[41]

भारत व अफगानिस्तान मानव जाति की सम-सामयिक चिन्ता, शान्ति, निरस्त्रीकरण व आत्मनिर्भरता के प्रति समान रूप से भागीदार हैं। दोनों ही देशों ने गुटनिरपेक्षता को स्वीकार करते हुए रूस से गहरी मित्रता की है।[42] इस प्रकार असंलग्नता का समर्थन तथा सैनिक गुटों का विरोध दोनों राष्ट्रों की विदेश नीति के स्वतन्त्र आयाम रहे हैं। इसलिए अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नों पर शान्ति व स्थिरता की स्थापना के लिए उनके विचार समान हैं।

परन्तु यह सत्य है कि वर्तमान युग में गुटनिरपेक्षता किसी देश की विदेश नीति का सतत् आधार नहीं हो सकती। जहाँ तक राष्ट्रीय हित सम्पादित होते हैं, ठीक है, किन्तु हमेशा के लिए इसको स्वीकार नहीं किया जा सकता। गुटनिरपेक्षता द्वारा विश्व शान्ति व मानवाधिकारों के सम्मान की आशा निरर्थक है। उदाहरण के लिए अफगानिस्तान ने प्रारम्भ से ही तटस्थता को स्वीकार किया, किन्तु वह सदैव महाशक्तियों का शक्ति स्थल रहा और आन्तरिक समस्याओं से जूझता रहा। दूसरी ओर भारत में भी गुटनिरपेक्षता ने आन्तरिक व बाह्य अशक्तता ही दिखाई।[43]

अस्तु, किसी भी देश की विदेश नीति विश्व परिस्थितियों के संदर्भ में उस देश की आन्तरिक आकांक्षाओं और आवश्यकताओं की अभिव्यक्ति होती है तथा उसमें पड़ोसी देशों की नीतियों और उनके अमल का विशेष महत्व होता है। इसलिए भारत व अफगानिस्तान को एक ऐसी विदेश नीति की आवश्यकता है जो सर्वागींण हो, व्यावहारिक हो, लचीली हो और जिसका उनकी आन्तरिक स्थिति से सीधा सम्बन्ध हो। इसके अतिरिक्त, भारत व अफगानिस्तान को अपनी कुशल विदेशनीति के तहत परस्पर सहयोग बढ़ाना चाहिए तथा इस क्षेत्र में तनाव को समाप्त

39. इस्लाह (काबुल), 11 मई, 1963, भारतीय राष्ट्रपति की काबुल यात्रा के दौरान दिया गया वक्तव्य
40. जाफरी, एच.ए.एस., देखिए क्र. 7, पृ. 88-89
41. हिन्दुस्तान (नई दिल्ली), 6 जून, 1969
42. गोयल देशराज, "जाग्रत अफगानिस्तान" (दिल्ली 1984), पृ. 7
43. वैदिक, वेद प्रताप, देखिए क्र. 13, पृ. 129-31

करने के लिए शक्ति सन्तुलन को रोकने का प्रयास करना चाहिए।

अब जबकि रूसी सेनाओं की वापसी के पश्चात् अफगानिस्तान में मुजाहिद्दीन की सरकार की स्थापना हो चुकी है, ऐसी स्थिति में भारत को स्वयं को क्षेत्रीय शक्ति के रूप में प्रदर्शित न करते हुए इस छोटे देश की स्वतन्त्रता एवं अस्तित्व की भावना को ध्यान में रखकर नई तरह से सम्बन्धों का विकास करना चाहिए। अफगानिस्तान को भी भारत के कार्यों एवं प्रयासों पर विश्वास करना चाहिए।

(ख) भारतीय समस्याएं व अफगानिस्तान

भारत में मुसलमानों से पहले जितनी भी विदेशी जातियां आक्रमणकारी के रूप में आयीं, वे सब यहीं बस गई और भारतीय समाज का अंग बन गयीं। परन्तु जब मुसलमानों ने आक्रमण किया तो आरम्भ में उनका उद्देश्य इस्लाम धर्म का प्रचार करना व भारत के धन को लूटना रहा। हिन्दू लगातार इन विदेशियों से लड़ते रहे और अपने छोटे व कभी बड़े स्वतन्त्र राज्य स्थापित करते रहे। इस संघर्ष में विदेशी यूरोपीय जातियां जो व्यापार करने आई थी, राजनीति में भाग लेने लगीं और कभी हिन्दुओं से तो कभी मुसलमानों से मिल कर भारत के भू-भागों पर अधिकार जमाती रहीं। 19वीं शताब्दी के मध्य तक सम्पूर्ण भारत पर अंग्रेज जाति का प्रभुत्व हो गया। भारत स्वतन्त्र होते-होते फिर गुलाम हो गया। तब हिन्दू-मुसलमान जातियों को अहसास हुआ, उन्होंने फिरगियों के खिलाफ 1857 का विद्रोह कर दिया। यह विद्रोह असफल हुआ, किन्तु अंग्रेजी शासन ने निश्चित किया कि वे हिन्दू-मुसलमान को कभी मिलने नहीं देगें। उन्हें आपस में लड़ाते रहेगें। मुस्लिम लीग इसी का प्रमाण थी।

दूसरे विश्व युद्ध के समाप्त होने के बाद, भारत में अंग्रेजी शासन के खिलाफ जनता में असन्तोष बढ़ता ही जा रहा था। एक ओर राष्ट्रीय आन्दोलन तो दूसरी ओर साम्प्रदायिक दंगे फैल रहे थे। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस सम्प्रभुता सम्पन्न भारतीय गणतन्त्र की मांग पर जोर दे रही थी तो मुस्लिम लीग एक अलग राज्य बनाने की। लीग की धमकी तथा उनकी प्रत्यक्ष कार्रवाई से घबराकर अन्तरिम सरकार* के प्रधानमंत्री पं0 नेहरू अनेक विरोधों (गांधी जी सहित अनेक कांग्रेसी नेता इसके खिलाफ थे) के बावजूद पाकिस्तान की योजना को मानने के लिए तैयार हो गए। तभी ब्रिटिश संसद द्वारा 1947 में भारतीय स्वतन्त्रता अधिनियम के तहत भारत को

* 24 अगस्त, 1946 को जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व में अन्तरिम सरकार बना दी गई, परन्तु उसमें मुस्लिम लीग शामिल नहीं हुई थी, सिक्खों ने भी लीग का साथ दिया। 24 मार्च, 1947 को नये वाइसराय माउण्टबेटन ने भारत का प्रशासन अपने हाथों में लिया और भारत विभाजन की योजना बनाई। इस प्रकार 14 अगस्त को पाकिस्तान और 15 अगस्त को भारत स्वतन्त्र हो गया।

दो राज्यों में बाँट दिया गया। इस प्रकार पाकिस्तान का निर्माण कर भारत ने एक सशक्त शत्रु सदैव के लिए सीमा पर बसा लिया। इस अधिनियम की धारा 7 के अन्तर्गत देशी रियासतों पर ब्रिटेन की अधिसत्ता समाप्त कर दी गई जिससे वे राज्य स्वतन्त्र हो गए। इस सम्बन्ध में ब्रिटिश अधिकारियों की राय थी कि उन्होंने जैसा भारत पाया था, वे उसे वैसी ही स्थिति में छोड़कर जाएंगे। एक तरह से यह भारत की स्वतन्त्रता को खोखला करने का प्रयास था। इस स्थिति से निपटने का उत्तरदायित्व गृहमन्त्री पटेल ने उठाया। सभी रियासतें धीरे-धीरे भारत में विलय हो गई, किन्तु जम्मू-कश्मीर की स्थिति कुछ अलग व पेचीदा रही।

अफगानिस्तान की भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के प्रति सदैव हमदर्दी बनी रही।[44] भारत को स्वतन्त्रता मिल जाने के पश्चात् अफगानिस्तान ने वहाँ छिपे हुए हिन्दू और सिक्खों को सहानुभूति के साथ सुरक्षित वापस भेज दिया।

भारत का बटवारा, पाकिस्तान को 54 करोड़ का ऋण, भारत-पाक युद्ध, शरणार्थियों की समस्या आदि अनेक कारणों से भारत की आर्थिक स्थिति बहुत बिगड़ी हुई थी। भारत सरकार ने कोई छोटे से छोटा देश नहीं छोड़ा, जिससे कर्ज न लिया हो। वास्तव में कोई भी देश बिगड़ी हुई अर्थव्यवस्था में उन्नति नहीं कर सकता। दूसरी ओर भारत व पाकिस्तान के मध्य बटवारा साम्प्रदायिक आधार पर हुआ था, अत: परिणाम प्रतिकूल होना स्वाभाविक था।

कश्मीर की समस्या

कश्मीर भौगोलिक दृष्टि से भारत के अफगानिस्तान के साथ सम्बन्धों के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यहाँ से दोनों देशों की सीमाएं लगभग 40 मील दूर उत्तर में गिलगित के पास भाखा मार्ग तक समान ही हैं। कश्मीर से सोवियत संघ, चीन व पाकिस्तान की सीमाएं मिलती हैं, जो भारत की सुरक्षा की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है।[45]

भारत में विभाजन के परिणाम स्वरूप रियासतों से सम्बन्धित अनेक समस्याएं उत्पन्न हुई। जिसमें हैदराबाद व जूनागढ़ रियासतों का थोड़ी मुश्किलों के पश्चात् विलय कर लिया गया। नहरी पानी विवाद तथा अनेक समस्याओं को समझौतों द्वारा सुलझाने का प्रयास किया गया। किन्तु भारत-पाकिस्तान के मध्य सर्वप्रमुख विवाद कश्मीर का मसला नहीं सुलझ सका, जिसके कारण भारत-पाकिस्तान सम्बन्धों में प्रारम्भ से ईर्ष्या व घृणा ने जन्म लिया। दोनों ही देश कश्मीर को

44. भारत के राष्ट्रपति डा. राधा कृष्णन की अफगान यात्रा पर वहाँ के राजा द्वारा उनके स्वागत में दिया गया भाषण। फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 9, अंक 5, मई 1968, पृ. 105
45. नेहरू, जवाहर लाल, स्पीचिज, खण्ड 1, 1946-49, (नई दिल्ली 1949), पृ. 162
-ग्रि.ग्रि.क्रोतोव्सकी, "भारत का इतिहास" पृ. 674

प्राप्त करने के लिए तीन बार संघर्ष कर चुके हैं। इस सम्बन्ध में अफगानिस्तान की धारणा प्राय: भारत व पाकिस्तान के साथ सामान्य सम्बन्धों की रही है। परन्तु कभी-कभी अफगानिस्तान का रूख भारत सरकार की ओर भी रहा।

कश्मीर में 77 प्रतिशत मुस्लिम तथा शेष हिन्दू जनता है। कश्मीर के शासक हरीसिंह कश्मीर को स्वतन्त्र राज्य बनाना चाहते थे। 1947-48 में वहाँ की जनजाति पर पाक समर्थक कबायलियों (पठान) के आक्रमण ने कश्मीर के विषय को अन्तर्राष्ट्रीय विवाद बना दिया। पाकिस्तानी शासक समझौते द्वारा कश्मीर के राजा को अपने राज्य में विलय के लिए विवश करना चाहते थे। कुछ टीकाकारों ने लिखा कि अट्ठारहवीं शताब्दी के मध्य (1752-1818) दुर्रानी राज्य द्वारा आरम्भ में कश्मीर के एक हिस्से पर कब्जा कर लिया गया था। अफगानिस्तान ने पख्तूनिस्तान के साथ कश्मीर के उस हिस्से की भी मांग की, जिसने एक परिकल्पनात्मक प्रश्न को जन्म दिया। वास्तव में विदेशी टीकाकार यहाँ भारत व अफगानिस्तान के बीच संघर्ष देखना चाहते थे।[46] किन्तु भारत ने कश्मीर पर हुए आक्रमण का पूरा आरोप पाकिस्तान पर लगा दिया।

कश्मीर में उत्पन्न हुई संकट की स्थिति में वहाँ के महाराजा ने भारत से सहायता की अपील की। तत्पश्चात् 27 अक्टूबर, 1947 को कश्मीर के भारत में विलय की घोषणा कर दी गई। भारतीय सेना ने उन पाकिस्तानी शस्त्रों से लैस कबायलियों को कश्मीर से खदेड़ दिया। पं0 नेहरू ने कहा कि जब कश्मीर में शान्ति व कानून स्थापित हो जाएगा, तब संयुक्त राष्ट्र संघ जैसे किसी अन्तर्राष्ट्रीय संगठन के तत्त्वाधान में जनमत संग्रह करवा दिया जाएगा। श्री नेहरू के इसी वक्तव्य के कारण कश्मीर की समस्या आज तक नहीं सुलझ सकी। इसी बीच पाकिस्तान इस प्रश्न को संयुक्त राष्ट्रसंघ में ले गया। परिणाम स्वरूप 1 जनवरी, 1949 को कश्मीर में युद्ध विराम हो गया। इसे मानकर निश्चय ही भारत ने दूसरी बड़ी गलती की।[47] यदि कश्मीर का भी जूनागढ़ व हैदराबाद की तरह पूर्ण विलय कर लिया जाता तो कश्मीर की समस्या का वहीं अन्त हो जाता । सुरक्षा परिषद् ने जम्मू-कश्मीर के भारत में विलय को वैध मान लिया। किन्तु पाकिस्तान ने परिषद् के आदेश का उल्लघंन कर 32,000 वर्गमील कश्मीर के हिस्से को आजाद कश्मीर घोषित कर वहाँ से अपनी सेनाएं हटाने से इन्कार किया। इस प्रकार संयुक्त राष्ट्रसंघ की यह पहली असफलता थी। राष्ट्रमण्डल भी इस समस्या का समाधान नहीं कर सका। पख्तून नेता अब्दुल गफ्फार खान इस क्षेत्र के लोगों का साहस देखकर अत्यधिक प्रभावित

---

46. 'द टाइम्स' 28 मई, 1956
47. डूंगरवाल, कन्हैयालाल, "क्या है धारा-370 की संवैधानिक स्थिति ?", धर्मयुग, खण्ड 14, अंक 19, 6 मई, 1990, पृ. 6-7

हुए।[48]

1950 में पं0 नेहरू ने युद्ध-वर्जन सन्धि का प्रस्ताव रखा जिसे पाकिस्तान ने ठुकरा दिया और 1954 में अमरीकी सैनिक संगठन नाटो, सेण्टो व सिएटो की सदस्यता ग्रहण की। जिसके द्वारा उसे अधिक मात्रा में सैनिक सहायता प्राप्त होने लगी। इस पर भारत तथा अफगानिस्तान की चिन्ता स्वाभाविक थी। 14 मई, 1954 को धारा 370 के अन्तर्गत कश्मीर को भारत में विशेष राज्य का दर्जा दे दिया गया[49] और यह क्षेत्र भारत का अभिन्न अंग बन गया। इस पर पाकिस्तान पश्चिमी शक्तियों के पूरे समर्थन से यह प्रश्न पुनः सुरक्षा परिषद् में ले गया। जहाँ उन्होंने संयुक्त राष्ट्र के तत्वावधान में जनमत संग्रह का प्रस्ताव रखा, जिसका भारत ने कड़ा विरोध किया। अन्त में रूस ने इस प्रस्ताव पर अपने विशेषाधिकार (वीटो) का प्रयोग कर भारत के प्रति समर्थन व्यक्त किया। पं0 नेहरू ने 9 अप्रैल, 1958 में लोकसभा में कहा कि भारत कश्मीर में विदेशी सेना स्वीकार नहीं कर सकता, वह सेना संयुक्त राष्ट्रसंघ की ही क्यों न हो।

यह सत्य है कि कश्मीर के प्रश्न पर अफगानिस्तान भी, भारत की स्थिति पर कभी भी विश्वास व्यक्त नहीं करता। वह अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों द्वारा कश्मीर में संयम और नियन्त्रण बनाये रखने तथा वहाँ की जनता की शुभकामना के लिए शान्तिपूर्ण समाधान चाहता है।[50] अफगानिस्तान पख्तूनिस्तान की तरह वहाँ भी आत्म निर्णय के सिद्धान्त का समर्थन करता है। प्रधानमंत्री पं0 जवाहर लाल नेहरू के 14 सितम्बर, 1959 को काबुल आगमन पर अफगान प्रधानमंत्री ने उनके स्वागत में दिये गए भोज में कहा कि, "मेरे विचारों में जनता के विचारों तथा मानवीय ज्ञान की अवहेलना करना वर्तमान समय में सम्भव नहीं है, जनता के दृढ़ निश्चय और राष्ट्र के प्रति उनके चिन्तन को शक्ति द्वारा कुचलना उनकी बहुत बड़ी भूल है। हमारी उनसे गुजारिश है कि मनुष्य की इच्छाओं तथा उसके वैधानिक अधिकारों का हमें पूरी तरह आदर करना चाहिए"।[51]

कुछ घटनाएं ऐसी भी हैं, जब दोनों देशों (भारत व अफगानिस्तान) की अपनी समस्याएं उनको एक दूसरे के समीप ला देती हैं। पाकिस्तान के प्रति उनकी नीति उनमें प्रमुख व महत्वपूर्ण

---

48. 'द इण्डियन एक्सप्रेस' (दिल्ली), 6 सितम्बर, 1965, पी.एस. सुधोवन ने अपनी पुस्तक में कश्मीर के महत्व के बारे में लिखा कि, "कश्मीर व पख्तूनिस्तान की भौगोलिक स्थिति एक दूसरे से मिली-जुली है तथा परस्पर बंधी हुई है। पख्तूनों को पाकिस्तान ने अपनी ओर मिला लिया था। पाक सरकार ने उन अनभिज्ञ व अशिक्षित पख्तूनों को चावल व गेहूँ देकर धर्म के नाम पर कश्मीर को प्राप्त करने में प्रयोग किया। सुधोवन, पी.एस., "जेनेसिस ऑफ द कश्मीर प्राब्लम"(दिल्ली 1961), पृ. 7
49. डूंगरवाल, देखिए क्र. 47
50. इस्लाह (काबुल), 25 फरवरी,1959
51. अफगानिस्तान न्यूज, खण्ड 3, अंक 27, नवम्बर 1959, पृ. 3

है। अफगानिस्तान अप्रत्यक्ष रूप में कश्मीर के प्रश्न पर पाकिस्तान का समर्थन करता है। वहीं पाकिस्तान की दोहरी नीति की आलोचना करता है, क्योंकि जहाँ वह एक ओर कश्मीरी जनता के आत्मनिर्णय की मांग का समर्थन करता है, वहीं दूसरी ओर पख्तूनिस्तान के प्रश्न पर एकांगी प्रस्ताव को स्वीकार कर रहा है।[52] इसलिए जब संयुक्तराष्ट्र संघ में पाकिस्तान द्वारा कश्मीर के प्रश्न पर आत्मनिर्णय के सिद्धान्त पर विचार-विमर्श किया गया तो अफगान प्रतिनिधि अब्दुर्रहमान पेजवाक ने उसमें हिस्सा नहीं लिया और न ही सुझाव के लिए कोई महत्वपूर्ण उदाहरण प्रस्तुत किया।[53]

अन्त में यह कहा जा सकता है कि अफगानिस्तान आत्मनिर्णय के सिद्धान्त का गहराई से चिन्तन करता है। कश्मीर का उदाहरण वह अपने प्रयोग की व्याख्या के लिए देता है। इसमें उसका ध्येय भारत के साथ सम्बन्धों को संकट में डालना या खराब करना नहीं है। भारत व अफगानिस्तान पारस्परिक मित्रता के कारण एक दूसरे का समर्थन करते रहे हैं। किसी भी प्रश्न पर उन्होंने प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप में अपने स्वार्थ या दूसरे देश के साथ सम्बन्ध बनाये रखने के लिए एक दूसरे के विरोध में कुछ नहीं कहा। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है - 1961 में जब गोवा की समस्या ने भीषण रूप ले लिया तो भारत ने गोवा, दमन एवं द्वीव को पुर्तगालियों से मुक्त करा लिया। पश्चिमी शक्तियों ने पुर्तगाल का पक्ष लिया, किन्तु रूस ने भारत का प्रभावशाली समर्थन किया।[54] अफगान प्रधानमंत्री ने अपने सन्देश में कहा कि गोवा की जनता की स्वतन्त्रता के समाचार से उन्हें गहरी सहानुभूति है।[55] अफगानिस्तान के इस वक्तव्य का तात्पर्य उसकी पख्तूनिस्तान में स्वायत्त शासन की मांग पर समर्थन प्राप्त करना था। अफगान समाचार पत्र में, कराची में इस सम्बन्ध में विरोध प्रकट किए जाने पर, कि विश्व के इस क्षेत्र में भारत की यह नीति महान उपनिवेशवाद का प्रतीक है, उसके इस वक्तव्य पर रोष व्यक्त किया गया।[56] अमेरिका में अफगान राजदूत मोहम्मद हाशिम मेंबन्दवाल ने पश्चिमी समाचार पत्रों में पाकिस्तान पर ध्यानाकर्षण करते हुए कहा कि वह तो प्रतिदिन अमरीकी वायुयान व शस्त्रों द्वारा पख्तूनिस्तान की जनता का शमन कर रहा है।[57] अफगानिस्तान ने एक ओर भारत द्वारा परमाणु बम न बनाये जाने का स्वागत किया तो दूसरी ओर इस सम्बन्ध में पाक नीति की निन्दा की।

---

52. अफगानिस्तान न्यूज, खण्ड 5, अंक 55, मार्च 1962, पृ. 9
53. यू. एन. पी. ए. ओ. आर., सत्र 8, थर्ड कमेटी, 1525 मीटिंग, पृ. 243
54. अन्सारी, अजहर, "अफगानिस्तान थ्रो इण्डियन आईस" (दिल्ली 1980), पृ. 20
55. अफगानिस्तान न्यूज, खण्ड 5, अंक 54, फरवरी 1962, पृ. 2
56. बख्तियार न्यूज, 19 दिसम्बर, 1961
57. न्यूयार्क टाइम्स, 21 दिसम्बर, 1961

विदेश विभाग के अधिकारी राजेश्वर दयाल ने कहा कि पाकिस्तान की सैनिक सन्धियां ही कश्मीर वार्ता पर व्यवधान डाल रही हैं।[58] तभी 2 मार्च, 1963 को पाकिस्तान ने चीन के साथ एक समझौते के तहत 2,500 वर्गमील आजाद कश्मीर की भूमि चीन को दे दी। भारत ने इस समझौते का विरोध किया कि आजाद कश्मीर "कश्मीर" का अंग है। अत: उसकी भूमि देने का पाकिस्तान को कोई अधिकार नहीं है। वास्तव में इसमें उसका मुख्य उद्देश्य चीन को भारत के विरूद्ध तैयार करना था।

पाकिस्तान का जन्म साम्प्रदायिकता के आधार पर हुआ। उसके द्वारा अल्पसंख्यकों (हिन्दू-सिक्खों) का कत्ले आम तथा निष्कासन किया गया। उसने अफगानिस्तान में भी हिन्दू विरोधी भावना जगाने की कोशिश की गई, किन्तु उसे असफलता ही मिली। अफगानिस्तान मुस्लिम देश होने पर भी भारत-पाक युद्धों के दौरान काबुल के समाचार पत्रों ने पूरी निष्पक्षता का परिचय दिया।[59] समान विचारों के कारण भारत व अफगान नेता समय-समय पर कश्मीर व पख्तून मांगों पर परस्पर विचार-विमर्श करते रहे हैं।[60] किन्तु दक्षिण एशिया में शान्ति व सहयोग के ढाँचे को अपनी क्षेत्रीय विदेश नीति का प्रमुख लक्ष्य मान लेने के बावजूद भी इस क्षेत्र की वास्तविकता को बदलने में अफगानिस्तान एक सीमित योगदान ही कर सकता है। उसके कहने से पाकिस्तान न तो कश्मीर पर अपने दावे को छोड़ सकता है और न ही भारत के प्रति अपने जन्मजात वैमनस्य को।

चीन के साथ सीमा-विवाद

चीन भारत का पुराना मित्र रहा है, भारत उससे अच्छे सम्बन्ध बनाये रखने के प्रयास करता रहा है। किन्तु चीन का सिद्धान्त है कि "राष्ट्रों में कभी मित्रता या शत्रुता स्थायी नहीं होती, वरन् राष्ट्रीय हित सदैव स्थायी होते हैं"। 1954 में चीन और भारत के मध्य पंचशील के सिद्धान्तों के आधार पर सहअस्तित्व की सन्धि हुई, दोनों देशों में हिन्दी-चीनी भाई-भाई के नारे लगाये गए।

भारत में अंग्रेजी राज्य के समय में तिब्बत भी ब्रिटिश सरकार के प्रभाव में था, उत्तराधिकार में भारत को वहाँ विशेष सुविधाएं प्राप्त थीं। 1951 में चीन ने सेना भेजकर वहाँ कब्जा कर लिया। चीन ने इसे घरेलू मामला बताया। भारत किसी भी कीमत पर चीन जैसे

---

58. इण्डियन एक्सप्रेस (दिल्ली), 22 मई, 1963
59. 'अफगानिस्तान: पड़ोसी और भारत', समाचार भूमि, दिनमान 26 अगस्त, 1966, पृ. 24
60. द स्टेट्समैन, 21 मई, 1965

शक्तिशाली पड़ोसी से बिगाड़ नहीं लेना चाहता था। संयुक्त राष्ट्र में भी कोई भी सदस्य तिब्बत के प्रश्न को उठाने की हिम्मत नहीं कर सका। दूसरी ओर दलाईलामा द्वारा भारत में शरण लेने पर चीन ने भारत को कड़ा विरोध पत्र भेजा।

भारत-चीन सम्बन्धों में बड़ी समस्या सीमा सम्बन्धी रही है।[61] चीन ने भारत की मित्रता के साथ विश्वासघात किया और उत्तरी पश्चिमी सीमा के पहाड़ी क्षेत्र को धीरे-धीरे अपने कब्जे में करना प्रारम्भ किया। भारत और चीन में सीमा सम्बन्धी चल रही छुट-पुट मुठभेड़ों को लेकर ही अफगानी विदेश मंत्री ने सितम्बर 1959 को सरकारी तौर पर चीन की यात्रा की।[62] उन्होंने चीनी नेताओं से इस सम्बन्ध में बातचीत कर अपील की कि भारत व चीन एक उच्चस्तरीय बैठक द्वारा अपने सीमा सम्बन्धी विवादों के समाधान के लिए प्रयास करे।[63] तभी भारतीय प्रधानमंत्री पं0 नेहरू ने अफगानिस्तान की यात्रा की और कहा कि प्रत्येक देश अपनी समस्याओं के समाधान का प्रयास करते हैं, साथ ही दूसरे देशों से उसमें सहायता की आशा रखते हैं और बहुत से उनके साथ सहयोग करते हैं।[64] उन्होंने अपनी यात्रा के अन्त में कहा कि अन्तर्राष्ट्रीय मतभेद शान्तिपूर्ण तरीके से सुलझाए जा सकते हैं उसमें सैनिक कार्रवाई की आवश्यकता नहीं होती।[65] उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से तिब्बत व भारत-चीन सम्बन्धों पर प्रकाश नहीं डाला।

चूँकि 1955 के पश्चात् ही अफगानिस्तान ने चीन के साथ कूटनीतिक सम्बन्धों की स्थापना की थी, इसलिए अफगानिस्तान ने चीन की आक्रामक गतिविधियों को देखते हुए भी उसकी निन्दा नहीं की। संयुक्तराष्ट्र में भी चीन की शक्ति सम्पन्नता को देखते हुए अफगान प्रतिनिधि ने किसी भी पक्ष को मत नहीं दिया।[66]

चीन द्वारा बार-बार सीमा का अतिक्रमण किए जाने पर जब भारत ने कड़े विरोध पत्र भेजे तो 20 अक्तूबर, 1962 को उसने भारत पर आक्रमण कर दिया। युद्ध में लगातार हार ने भारत को पश्चिमी गुट से सैनिक सहायता लेने को विवश किया।पड़ोसी मित्र राष्ट्रों एवं रूस ने भारत की संकट में सहायता न कर अपने आपको तटस्थ घोषित किया। अफगानिस्तान ने भी भारत द्वारा की गई अपील का उत्तर तुरन्त नहीं दिया। बाद में अफगान सरकार ने मतभेदों

---

61. अयौरी, डिरेन कोर्ट, "इण्डिया-पाकिस्तान इन द सैडो ऑफ अफगानिस्तान" फॉरेन अफेयर्स (न्यूयार्क), खण्ड 61, अंक 2, 1982, पृ. 436
62. न्यूयार्क टाइम्स, 6 सितम्बर, 1959
63. वही, 16 सितम्बर, 1959
64. नेहरू, जवाहर लाल, देखिए क्र. 2, पृ. 261-92
65. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 5, अंक 9, सितम्बर 1959, पृ. 209
66. काबुल टाइम्स, 14 मार्च, 1962, जिसे उद्धृत किया वेद प्रताप वैदिक "अफगानिस्तान में सोवियत - अमरीकी प्रतिस्पर्धा"।

के शान्तिपूर्ण तरीके से समाधान के प्रति आशा व्यक्त की।[67] उसने अपना दृष्टिकोण बहुत ही सन्तुलित रखा और प्रत्यक्ष रूप में भारतीय स्थिति का समर्थन नहीं किया।[68]

22 नवम्बर को चीन ने एक तरफा युद्ध विराम की घोषणा कर दी। कोलम्बो योजना के तहत चीनी परामर्श से 6 सूत्रीय कार्यक्रम बनाया गया। यद्यपि वह भारत के लिए अपमानजनक था, किन्तु शान्ति प्रिय नेहरू ने उसे भारत में विरोध के बावजूद स्वीकार कर लिया। इसलिए आज तक सीमा विवाद तय न हो सका, हजारों वर्गमील भूमि आज भी चीन के अधिकार में है। चीनी आक्रमण व भारत की पराजय ने यह सिद्ध कर दिया था कि रूसी-अमरीकी सहायता के बावजूद भी भारत युद्ध क्षेत्र में चीन का मुकाबला नहीं कर सका।[69] किन्तु यह निश्चित है कि यदि चीन, तिब्बत को नहीं हड़पता तो उनके लिए भारत पर भी हमला कठिन होता। तिब्बत को चीन ने सम्पूर्ण मध्य एशिया की फौजी छावनी बना लिया है। जिससे नेपाल, भूटान, मंगोलिया, बर्मा, सोवियत एशिया तथा भारत के असम, सिक्किम व लद्दाख आदि इलाकों की सुरक्षा को भी खतरा पैदा हो गया है।[70] दूसरी ओर रूस भी चीन का भय दिखाकर भारत को अपने चंगुल में रखने के प्रयास करता रहा है। भारत-चीन युद्ध के समय "सोवियत इनसाइक्लोपीडिया" के दूसरे संस्करण के नक्शे में भारत के लद्दाख-नेफा क्षेत्र को चीन का क्षेत्र बताया गया था। भारत रूस से विरोध नहीं लेना चाहता था, इसलिए इस मामले को उसने अधिक तूल नहीं दिया।

भारत की सीमाएं जितनी असुरक्षित हैं, शायद उतनी इस क्षेत्र के और किसी देश की सीमाएं नहीं हैं। 1962 में चीन तथा 1965 व 1971 में पाकिस्तान के साथ वह दो लड़ाइयां भी लड़ चुका है। असुरक्षित सीमाओं के कारण भारत किसी ऐसे बन्धन में नहीं बंधना चाहता जिससे उसकी प्रतिरक्षा व्यवस्था पर कोई प्रतिबन्ध लग जाए। साथ ही वह बड़े देशों से भी बैर मोल लेना नहीं चाहता। वास्तव में, रूस व अमेरिका दोनों ही नहीं चाहते कि भारत क्षेत्रीय शक्ति बनें। इसलिए उन्होंने दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन की स्थापना पर असन्तोष व्यक्त किया। अमेरिका इसे सीटो के लिए खतरा मानता है और रूस अपने प्रभाव क्षेत्र के विस्तार

---

67. घोष, कं., "चाइनीज इनवेशन ऑफ इण्डिया" (कलकत्ता 1963), पृ. 169
68. काबुल टाइम्स, 25 नवम्बर, 1962, उद्धृत वैदिक, अफगानिस्तान के अखबारों ने युद्ध के एक हफ्ते बाद भारत व चीन की कार्रवाइयों को बारी-बारी से संतुलित ढंग से प्रकाशित किया।
69. समाचार भूमि - दक्षिण पूर्व एशिया में शक्ति संतुलन "दिनमान, 21 अप्रैल, 1968, पृ. 32 - वर्नड्स, विलियम जे.," इण्डिया इन वर्ल्ड पॉलिटिक्स" एशिया 1968, अंक 12, एशियाई सोसायटी (न्यूयार्क) पृ. 261
70. नोरबू, दावा, "स्ट्रेटजिक डवलपमेण्ट डिबेट: इम्पलीकेशन्स फार इट्स नैबर्स" एशिया सर्वे, 19 (3) मार्च 1979, पृ. 245-259

में बाधक।[71] चीन भी क्षेत्रीय महाशक्ति बनने के लिए भारत के साथ सीमा सम्बन्धी तनाव बढ़ाकर तथा पाकिस्तान को संघर्ष के लिए शह देकर भारत को कमजोर बनाना चाहता है। 1962 व 1965 के युद्ध के पश्चात् भारत ने एक मित्र की आवश्यकता का अनुभव किया और डुरेण्ड व पख्तूनिस्तान पर अफगान सरकार के प्रति समर्थन व्यक्त किया।[72] 13 मई, 1963 को भारत के राष्ट्रपति राधाकृष्णन ने अफगानिस्तान की यात्रा की और अफगान राजा को सीमा-विवाद को लेकर भारतीय संकट से परिचित कराया। अफगान सरकार ने इस सम्बन्ध में भारत के प्रति सहानुभूति तथा हमदर्दी का इजहार किया।[73]

1977 में चीन ने कराकोरम सड़क का उद्घाटन कर कश्मीर के सवाल को फिर जोरों से उठाया। तथापि भारत में जनता सरकार ने चीन के साथ सम्बन्ध सुधारने के प्रयास किए। कांग्रेस सरकारों में सर्वप्रथम प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने इस दिशा में सराहनीय प्रयास किए।[74] वास्तव में भारत द्वारा चीन को खुश करने के पीछे मकसद यह रहा है कि चीन के दोस्त पाकिस्तान पर थोड़ी लगाम लग जाएगी, ताकि भारत का सिरदर्द जरा कम होगा। परन्तु पाकिस्तान को भारत के विरूद्ध कोई मजबूत राष्ट्र चाहिए, पहले वह अमेरिका था अब चीन है।[75] चीन कराकोरम मार्ग गैर कानूनी ढंग से बना रहा है, पाकिस्तान भी चीन के कदम पर चल कर कश्मीर में कब्जा करना चाहता है।[76]

भारत-पाक युद्ध

अभी चीन द्वारा पहुँचाई गई क्षति, जिसने विश्व में भारत की छवि बिगाड़ी थी, को पूरी तरह भर भी नहीं पाया था कि पाकिस्तान ने सितम्बर 1965 में भारत पर आक्रमण कर दिया।[77] चीन, पश्चिमी शक्तियाँ, तुर्की व ईरान ने पाकिस्तान का साथ दिया, किन्तु अमेरिका ने दोनों देशों से समान रूप से युद्ध बन्द करने तथा उन्हें किसी प्रकार की सैनिक व आर्थिक सहायता न देने के लिए कहा। अमरीकी नीति को देखकर कोई भी देश पाकिस्तान की प्रत्यक्ष सहायता नहीं कर सका। जिससे पाकिस्तान की आशाओं पर पानी फिर गया और उसकी बुरी

---

71. अफगानिस्तान- पड़ोसी और दोस्त, समाचार भूमि, दिनमान, 26 अगस्त, 1966
72. कौर, कुलवन्त, "पाक-अफगान रिलेशन्स, ए स्टडी ऑफ इण्डियाज परसेप्सन" पंजाब जरनल ऑफ पॉलिटिक्स खण्ड 3, पृ. 153
73. काबुल टाइम्स, 17 अक्टूबर, 1963, पैट्रीयाट (दिल्ली), 12 अक्टूबर, 1963
74. सिंह, एस.के., "विदेशनीति ढुलमुल तरीके से चल रही है", नवभारत टाइम्स (नई दिल्ली), 19मार्च, 1955
75. वैदिक, वेद प्रताप, देखिए क्र. 13, भारत की चीनी नीति शीर्षासन की मुद्रा में, पृ. 88-89
76. टाइम्स ऑफ इण्डिया (दिल्ली), 22 जून, 1978
77. अयौरी, डिरेन कोर्ट, देखिए क्र. 61

तरह हार हुई। यह युद्ध 22 दिन तक चला। युद्ध के समय अफगानिस्तान भी पख्तूनों की आजादी के लिए पाकिस्तान के विरूद्ध दूसरा मोर्चा खोल सकता था, किन्तु सोवियत संघ भारत-पाक युद्ध को फैलाना नहीं चाहता था।

भारत की असंलग्नता की नीति की श्रेष्ठता सिद्ध होने लगी, क्योंकि पाकिस्तान को गुट में सम्मिलित होने से कोई लाभ नहीं मिला तो भारत को क्या मिल सकता था। भारत के मित्र पड़ोसी देशों ने संकट के समय भारत की सहायता की। अफगानिस्तान 1965 के इस युद्ध के दौरान भी तटस्थ रहा।[78]

रूस ने भारतीय उपमहाद्वीप में अपना प्रभाव जमाने के लिए दोनों देशों के बीच मध्यस्थता का प्रस्ताव रखा। प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री व पाक राष्ट्रपति अय्यूब खां के बीच 10 जनवरी, 1966 को ताशकन्द समझौता हो गया। जीती हुई सभी भूमि भारत ने पाकिस्तान को लौटा दी। यह समझौता भारत के राष्ट्रीय हितों के विरूद्ध था। किन्तु रूसी प्रधानमंत्री कोसीगिन ने धमकी दी कि वे सुरक्षा परिषद में कश्मीर के मामले पर भारत की तरफदारी नहीं करेगें। इस प्रकार भारत को दबा कर रूस ने पाकिस्तान का समर्थन प्राप्त कर लिया था। पाकिस्तान भी पुनः अपनी शक्ति अर्जित करने के लिए रूस से सैनिक-आर्थिक सहायता प्राप्त करने लगा।

चूँकि 2 मार्च, 1964 को पाकिस्तान द्वारा भारत में यातायात को लेकर 5 वर्ष के लिए पाक-अफगान समझौता हो चुका था, इसलिए इस युद्ध के दौरान मौन रहते हुए भी अफगानिस्तान का दृष्टिकोण पाकिस्तान के प्रति सहानुभूति पूर्ण था। 1 जनवरी, 1966 को अय्यूब ताशकन्द से लौटते हुए काबुल रूके और राष्ट्रपति जहीरशाह को उनकी नीतियों के लिए धन्यवाद दिया।[79] अफगान प्रधानमंत्री मोहम्मद हाशिम मेंबन्दवाल ने कहा कि ताशकन्द समझौता इस क्षेत्र में शान्ति स्थापित करने में महत्वपूर्ण योगदान देगा और वे आशा करते हैं कि भारत व पाकिस्तान परस्पर निष्कपटता से अपना मनोबल बनाए रखेगें।[80] यह सत्य है कि अफगान जनता धर्म के नाम पर पाकिस्तान के साथ थी।[81] किन्तु भारत के साथ परम्परागत सम्बन्धों को बनाये रखने के लिए अफगानिस्तान ने भारत के विरोध में भी कुछ नहीं कहा। इस नीति से प्रारम्भ में अफगानिस्तान को व्यापारिक सम्बन्धों में हानि हुई, जिसके परिणाम स्वरूप उसने अनुभव किया कि भारत तथा

---

78. मिश्रा, के.पी., "इण्डो-अफगान रिलेशन्स", साउथ एशियन स्टडीज, खण्ड 2, अंक 1, जनवरी 1967, पृ. 70
79. रजवी, मुजतवा, "पाक-अफगान रिलेशन्स सिन्स 1947, एन एनालिसिस", पाकिस्तान होराइजन, क्वाटरली, खण्ड 32, अंक 4, 1979, पृ. 43
80. काबुल टाइम्स, 11 अक्टूबर, 1966, उद्धृत डा. वैदिक
81. लोकसभा में काबुल स्थित पाकिस्तानी दूतावास द्वारा भारत विरोधी विचार पर ध्यानाकर्षण। लोकसभा डिबेटस, थर्ड सीरिज, खण्ड 47, अंक 4, 8 नवम्बर, 1965, का. 819-20

पाकिस्तान दोनों से मित्रता बनाये रखना उसके लिए महत्वपूर्ण है। यही कारण था कि युद्ध की स्थिति में अफगान प्रेस ने दिल्ली, कराची व कश्मीर की अलग-अलग रिपोर्ट प्रकाशित की। सरकार द्वारा बिगड़ी हुई स्थिति पर विचार विमर्श के लिए मन्त्रिमण्डल की विशेष सभा बुलाई गई।[82] युद्धरत राष्ट्रों में पाक सरकार जहाँ अफगान सरकार से पूरी सहानुभूति की मांग कर रही थी।[83] वहीं भारत उससे पूर्ण निष्पक्षता बनाए रखने के लिए कह रहा था।[84] संयुक्त राष्ट्र में अफगान प्रतिनिधि ने कहा कि भारतीय उपमहाद्वीप की वर्तमान स्थिति के विषय में अफगानिस्तान को छोड़ कर कोई अन्य देश अधिक दु:खी नहीं है। स्थिति को सामान्य बनाने में अफगानिस्तान का उद्देश्य अपनी नीति लागू करना नहीं है, वरन् इन सबसे पहले इस क्षेत्र में शान्ति व सुरक्षा की व्यवस्था स्थापित होनी चाहिए।[85] जून 1969 में काबुल यात्रा पर श्रीमती गांधी ने कहा कि भारत की प्रमुख समस्या विकास और प्रगति की हैं।[86] उन्होंने कहा कि इस क्षेत्र में चीन-पाक गठजोड़ ने भारत के लिए न केवल असुरक्षा का माहौल[87] बल्कि अफगानिस्तान के साथ आर्थिक सहयोग में भी कठिनाईयाँ उत्पन्न कर दी है।[88]

पाकिस्तान द्वारा विनाशकारी सैन्य साधनों के एकत्र किए जाने से उत्पन्न आशंकाओं व समस्याओं को लेकर भारत व अफगानिस्तान एक दूसरे के निकट आए।[89] पाकिस्तान उनकी इस मित्रता को अपवित्र सांठ-गांठ करार देता रहा है।[90] इसी कारण पाकिस्तान द्वारा उसकी दोनों सीमा पर तनाव बढ़ना स्वाभाविक था।[91] पाकिस्तान की इन्हीं सैनिक गतिविधियों तथा उनके द्वारा आर्थिक व राजनैतिक शोषण को लेकर व्याप्त असंतोष के फलस्वरूप पूर्वी पाकिस्तान में विद्रोह हो गया, जिसमें उन्होंने स्वायत्तता की मांग की। पाक सरकार ने यॉह्या खां के नेतृत्व में अमानुषिक अत्याचार द्वारा इसे दबाना चाहा। 15 मार्च, 1971 को पूर्वी पाकिस्तान में बंगाल नेता मुजीबुर्रहमान ने बंगला-देश के निर्माण की घोषणा कर दी। पाक सैनिकों की मारकाट से पीड़ित होकर बंगलादेश से

82. काबुल टाइम्स, 7 सितम्बर, 1965 उद्धृत डा. वैदिक
83. द हिन्दुस्तान टाइम्स, 7 सितम्बर, 1965
84. विदेश सम्बन्धों के प्रति सरदार स्वर्णसिंह का 24 नवम्बर, 1965 को दिया गया वक्तव्य, राज्यसभा डिबेट्स, खण्ड 54, पार्ट 2 (2 नवम्बर - 11 दिसम्बर, 1965), का. 2567-68, साथ ही देखिए लक्ष्मी मेनन द्वारा इस सम्बन्ध में जारी किया गया वक्तव्य, लोकसभा डिबेट्स 3 सीरिज, खण्ड 47, अंक 4, (8 नवम्बर, 1965), का. 783
85. यू.एन.जी.ए.ओ.आर., बीसवां सत्र, 1362, प्लेनरी मीटिंग, (14 अक्टूबर, 1965) पृ. 4-5
86. हिन्दुस्तान 8 जून, 1969
87. नेशनल हेराल्ड (दिल्ली), 9 जून, 1969
88. टाइम्स आफ इण्डिया (दिल्ली), 8 जून, 1969, चक्रवर्ती, सुभाष, भारत-अफगान सहयोग के लिए संयुक्त आयोग की स्थापना
89. द ट्रिब्यून (चण्डीगढ़), 17 मार्च, 1975
90. हिन्दुस्तान (नई दिल्ली), 21 मार्च, 1975, ट्रिब्यून (चण्डीगढ़), मदरलैण्ड
91. वही

लाखों शरणार्थी भारत आ गए। ऐसी स्थिति में प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी ने पाकिस्तानी नेताओं से अपील की, साथ ही विश्व का ध्यान इस ओर केन्द्रित किया। अमरीकी राष्ट्रपति निक्सन और पाकिस्तान के सभी मित्र राष्ट्रों ने यह कहकर बात टाल दी कि यह पाकिस्तान का घरेलू मामला है, उधर चीन व पाकिस्तान युद्ध की धमकी दे रहे थे। भारत के चारों ओर युद्ध की सम्भावना बढ़ रही थी और उसे अकेलापन अनुभव हो रहा था, ऐसी स्थिति में 9 अगस्त, 1971 को भारत ने रूस के साथ 20 वर्षीय मित्रता सन्धि कर ली। इस पर पश्चिमी राष्ट्रों ने कहा कि भारत ने असंलग्नता की नीति का परित्याग कर दिया है।

4 दिसम्बर, 1971 को भारत-पाक युद्ध प्रारम्भ हो गया। चीन व अमेरिका की सेनाएं पाकिस्तान को पराजित होते देखती रहीं। यह युद्ध 14 दिन तक चला, पाकिस्तान का विभाजन हुआ और बंगला देश स्वतन्त्र हो गया। 2 जुलाई, 1972 को दोनों शासनाध्यक्षों के बीच शिमला में सीमा सम्बन्धी तनाव समाप्त करने तथा कश्मीर में शान्ति कायम करने एवं पारस्परिक मित्रता के लिए समझौता हो गया, जिसमें कोई दूसरा देश मध्यस्थ नहीं रहा। इस समझौते में पाकिस्तान ने कूटनीति द्वारा जीती हुई समस्त भूमि भारत से वापस ले ली, किन्तु इससे न तो स्थायी शान्ति स्थापित हो सकी और न कश्मीर समस्या ही सुलझ सकी। इस प्रकार शान्ति के पुजारी भारत को दुर्भाग्यवश कई बार युद्ध करना पड़ा, 1948 में कश्मीर की रक्षा के लिए पाकिस्तान से, 1962 में आत्म सुरक्षा के लिए चीन से तथा 1965 व 1971 में पाकिस्तान की पहल पर उससे युद्ध करना पड़ा, पर उसने किसी देश पर युद्ध नहीं थोपा।

1971 में बंगला देश का जन्म एवं भारत-पाक युद्ध के दौरान अफगान राजनीति इससे अत्यन्त प्रभावी रही।[92] अफगानिस्तान का मत था कि बंगला देश के सत्य को हृदयगंम करने में भी पाकिस्तान ने अप्रत्याशित विलम्ब किया। पख्तूनों के प्रति भी न्याय किया जाना नितान्त आवश्यक है क्योंकि अफगानिस्तान अपने पख्तून भाइयों को कभी भुला नहीं सकता।[93] अफगानिस्तान भारतीय उपमहाद्वीप में शान्ति बनाये रखने की भारत की नीतियों का समर्थन करता है। उसने शिमला समझौते द्वारा परस्पर सम्बन्धों को सामान्य बनाए जाने का स्वागत किया।[94]

किन्तु 1965 व 1971 की हार के बाद भी पाकिस्तान की मनोवृत्ति में कोई परिवर्तन नहीं आया । अब वह पुनः सैन्य शक्ति द्वारा रौद्र रूप ग्रहण कर बदले की तलाश में है।[95] जबकि भारत ने सदैव सैनिक सन्धियों का विरोध तथा शान्तिपूर्ण क्षेत्रीय विकास के लिए प्रयास

92. मुखर्जी, साधन,"अफगानिस्तान फ्राम ट्रेजडी टु ट्रम्प्स", नई दिल्ली 1984, पृ. 77
93. हिन्दुस्तान टाइम्स (दिल्ली), 28 नवम्बर, 1967
94. द हिन्दु (मद्रास), 12 जुलाई, 1972, भारतीय राष्ट्रपति वी.वी. गिरि की अफगानिस्तान यात्रा।
95. आज (वाराणसी), 14 मार्च, 1975

किया है।[96] प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी ने कहा कि जब तक शस्त्रों के निर्माण की होड़ समाप्त नहीं होगी, विश्व में तनाव तथा कटुता का वातावरण समाप्त नहीं होगा। अफगान राष्ट्रपति ने भी कहा कि जब भी सैनिक सहायता दी गई तनाव और शत्रुता बढ़ी तथा संघर्षो एवं युद्धों को बढ़ावा मिला।[97] 1965 व 71 में भारत-पाक युद्धों में भी इन हथियारों का प्रयोग किया गया। दक्षिण एशिया में उपद्रवी राष्ट्र के रूप में पाकिस्तान ने अपने अस्तित्व में आने के समय में ही कश्मीर को धर दबोचा, तब उसे ब्रिटिश साम्राज्यवादियों से प्रच्छन्न प्रोत्साहन मिला, बाद में अमेरिका ने उसे सैन्य सामग्री से भरपूर करते हुए पीठ ठोकनी आरम्भ कर दी।[98]

जनवरी 1978 में विदेशमंत्री श्री बाजपेयी की पाकिस्तान की यात्रा से यह उम्मीद की गई थी कि पाकिस्तान हमें अफगानिस्तान व ईरान तक माल लाने-ले जाने के लिए थल मार्ग दे देगा और हम बदले में उसे बंगला देश और नेपाल तक परागमन की सुविधा दे देगें।[99] किन्तु वहाँ के नेताओं व समाचार पत्रों की राय थी कि कश्मीर के सवाल को हल किए बिना सहज सम्बन्ध की बात निरर्थक है तथा व्यापार आदि भी इस तरह से नहीं होना चाहिए कि किसी मुल्क को एकतरफा लाभ हो।[100] अफगान राष्ट्रपति जहीरशाह ने भारत व पाकिस्तान में बढ़ते हुए तनाव से भारत-अफगान व्यापार में उत्पन्न गतिरोध को दूर करने के लिए ताशकन्द समझौते का हवाला दिया।[101]

न्यूयार्क में 2 अगस्त, 1982 को विदेश नीति एसोसिएशन पर बोलते हुए प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी ने कहा कि, "हालांकि हमारे पड़ोस में तनावपूर्ण व विद्वेष का वातावरण बना हुआ है, लेकिन हमने बातचीत का सिलसिला और समझौते का मार्ग खुला रखा है। हम चीन और पाकिस्तान के साथ विश्वास और सद्भाव से सम्पर्क चाहते हैं"।[102] अफगानिस्तान में रूसी सेनाओं के हस्तक्षेप के पश्चात् अमेरिका अत्यन्त आधुनिक हमलावर शस्त्रों को पाकिस्तान को दे रहा है, जो भारतीय उपमहाद्वीप में अब तक अज्ञात थे, इसमें निहित खतरों की ओर से भारत सरकार निरन्तर चिन्तित बनी हुई है।[103] यद्यपि पाकिस्तान का कहना है कि वह अफगानिस्तान में स्थित रूसी सेनाओं

96. नवभारत टाइम्स, 21 सितम्बर, 1978
97. हिन्दुस्तान (नई दिल्ली), 13 मार्च, 1975, अमृिता बाजार पत्रिका (कलकत्ता), 12 मार्च, 1975
98. हिन्दुस्तान टाइम्स, 11 मार्च, 1975, टाइम्स ऑफ इण्डिया, 11 मार्च, 1975
99. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 24 जनवरी, 1978, इण्डियन एक्सप्रेस, 1 फरवरी, 1978
100. वही, 6 फरवरी, 1978
101. इंडियन एक्सप्रेस (दिल्ली), 9 फरवरी, 1977
102. गांधी, श्रीमती इन्दिरा, "लोकतान्त्रिक विकास में भारत की सफलता", न्यूयार्क में 2 अगस्त, 1982 को विदेश नीति एसोसिएशन एवं द एशिया सोसायटी द्वारा वाणिज्य एवं उद्योग की सुदूरपूर्वी अमेरिकन परिषद एवं अमेरिका में भारतीय वाणिज्य मण्डल के सम्बन्ध में आयोजित किए गये भोज में भारत की प्रधानमंत्री श्रीमती गाँधी का भाषण, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित।
103. वार्षिक रिपोर्ट, 1983-84 विदेश मन्त्रालय, भारत सरकार द्वारा आकल्पित व प्रकाशित

से अपने देश की सुरक्षा व अफगानिस्तान से अपनी हिफाजत के लिए इन शस्त्रों की खरीद कर रहा है।[104] किन्तु प्रश्न यह है कि आवश्यकता से अधिक बड़े पैमाने पर उनकी तैयारी किसके विरूद्ध है? क्योंकि इतनी अधिक तैयारियों के बावजूद वह रूस से उलझ नहीं सकता, अफगानिस्तान में सोवियत सेनाएं उसका प्रत्युत्तर देने को तैयार है, चीन उसका मित्र देश है, सऊदी अरब उसका मित्र है, श्रीलंका से उसके सम्बन्ध सामान्य हैं, केवल शेष रह जाता है पाकिस्तान का परम्परागत शत्रु भारत, जिसके साथ उसके स्थायी सीमा विवाद है और जिससे लगातार तीन युद्ध हो चुके हैं। आज भी कश्मीर की समस्या ज्यों की त्यों बनी हुई है।[105] दक्षिण एशिया में अमेरिका, चीन व पाकिस्तान ने एक धुरी का निर्माण कर विकासशील देशों के लिए समस्याएं उत्पन्न कर दी हैं।[106] अमेरिकी लेखक आर0 फ्रेंकव का विचार है कि भारत की सुरक्षा और राष्ट्रीय एकता को जितना बड़ा खतरा अमेरिका की दूरवर्ती रक्षा नीतियों से है, उतना अफगानिस्तान में रूसी फौजों की उपस्थिति से नहीं है।[107]

प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने कहा कि पाकिस्तान हमसे दोहरी दुश्मनी निभा रहा है। एक ओर वह अमेरिका से बड़ी मात्रा में सैन्य शक्ति का संचयन कर रहा है, दूसरी ओर वह भारत में आतंकवादियों को सहायता दे रहा है।[108] पाक घुसपैठिए कश्मीर में आतंक फैला रहे हैं। वहां धर्मनिरपेक्षता का गला काटने के लिए साम्प्रदायिकता पर सान चढ़ाई जा रही है।[109] शान्ति व मित्रता पर आधारित शिमला समझौता, जिसे दोनों देशों ने स्वीकार किया था, आज उसकी अवहेलना करते हुए दोनों ही ओर से घुड़की तथा सीमाओं पर सैनिक कार्रवाई की खबरें मिल रही हैं।[110] पाकिस्तान की सुरक्षा व्यवस्था आधी से अधिक भारत की सीमा पर स्थित है।[111] यही स्थिति अफगानिस्तान में है। पाकिस्तान में स्थित अफगान विद्रोही अमरीकी सैन्य सहायता प्राप्त कर अफगानिस्तान में आंतक फैला रहे हैं।

चीन एक ओर पाकिस्तान को बड़ी क्षमता वाली मिसाइलें दे रहा है तो दूसरी ओर उसने

104. भारतीय विदेश मंत्री की काबुल यात्रा के दौरान प्रेस कान्फ्रेन्स में उनका वक्तव्य, आल इण्डिया रेडियो, उर्दू सर्विस 6 मई, 1987
105. चौधरी, नरेन्द्र सिंह, "भारतीय उपमहाद्वीप में शीत युद्ध", बरेली 1981, पृ. 161
106. पाकिस्तान को अमेरिका द्वारा सैन्य सहायता (एक रिपोर्ट, ताशकन्द रेडियो), तपसरा, आल इण्डिया रेडियो, 30 अक्टूबर, 1986
107. फ्रेन्साइन, आर. फ्रेंकव, "भारत को वास्तविक खतरा अमेरिका की सुदूर रक्षा नीति से ही है" आज (कानपुर), 24 मई, 1985
108. दूरदर्शन समाचार, 5 नवम्बर, 1986
109. शर्मा, उदयन, "फारूख के खिलाफ पाक घुसपैठिए", रविवार, अंक 42, खण्ड 8, 30 जून-6 जुलाई, 1985
110. हेरीसन, सेलिंग एस., "डेट लाइन काबुल", फॉरेन पॉलिसी (अमेरिका) 1980-81, अंक 41, पृ. 184
111. देखिए, क्र. 106

एक बार फिर भारत के प्रहरी अरूणाचल के अन्दर आठ किलोमीटर तक कब्जा कर हैलीपेड बना लिया है। वह जबरन अक्साईचिन को अपने हिस्से में भारत द्वारा मनवाना चाहता है।[112] भारत के लिए खतरा दिन प्रतिदिन बढ़ रहा है।[113] अब जबकि तीन युद्धों के पश्चात् भारत ने कश्मीर में संयुक्त राष्ट्र के दखल व जनमत संग्रह की बात को हमेशा के लिए छोड़ दिया है।[114] पाकिस्तान जनरल जिया के आपरेशन टोपक के तहत कश्मीरियों को सैन्य प्रशिक्षण देकर आतंक फैलाने के लिए भेज रहा है, यदि इसके लिए भारत सरकार बन्दूक का सहारा लेती है तो कश्मीरी जनता में भारत विरोधी भावना और भड़केगी। इस तरह पाक योजना कामयाब हो रही है।[115] दोनों देशों द्वारा युद्ध की धमकी के विषय में सामरिक विश्लेषक कहते हैं कि यदि युद्ध हुआ तो इसके परिणाम भयानक होगें।[116] कश्मीर में फैलते आतंकवाद को देखते हुए दुनिया के सभी मुल्कों ने एक स्वर से कश्मीर समस्या के शान्तिपूर्ण हल (शिमला समझौते के अनुरूप) की बात की है।[117] एक पश्चिमी राजनयिक ने कहा कि समय आ गया है कि भारत और पाकिस्तान कुछ करे, ताकि इस महाद्वीप के 93 करोड़ लोगों का भविष्य 70 लाख कश्मीरियों की मुट्ठी में बन्द न रहे।[118] जून 1990 में अफगानिस्तान के विदेशमंत्री श्री अब्दुल वकील ने भारत यात्रा के दौरान पाकिस्तान द्वारा कश्मीर में खुल्लम-खुल्ला हस्तक्षेप का विरोध करते हुए[119] कहा कि यदि पाकिस्तान भारत में अपना हस्तक्षेप खत्म नहीं करता तो उनके सम्बन्ध भी पाकिस्तान के साथ मधुर नहीं रह सकेगें।[120] अफगान राष्ट्रपति नजीबुल्ला ने भी पाकिस्तानी नीतियों का विरोध करते हुए कहा कि कश्मीर समस्या का राजनैतिक समाधान ही सम्भव है। वास्तव में यह सत्य है कि ये समस्याएं पूर्णत: पाकिस्तान रचित नहीं हैं। कश्मीरी इस वायदे पर भारत का अंग बने थे कि उनकी निजी सत्ता का सम्मान होगा और उन्हें भारतीय संघ में चन्द विशिष्ट रियायतें

---

112. नकवी, कमर वहीद, "खतरा, चीनी अरूणाचल में फिर घुस आये हैं", रविवार, खण्ड 9, अंक 52, 24-30 अगस्त, 1986, पृ. 24-29
113. सक्सेना, राजीव, "चीन सीमा विवाद पर झुकना नहीं चाहता", नजरिया, रविवार- वहीं, पृ. 45,
114. डूंगरवाल, कन्हैयालाल, देखिए क्र. 47
115. सिन्हा, रंजीत, "हमारा परमाणु बम क्या शान्ति बम साबित होगा", धर्मयुग, खण्ड 41, अंक 20, 13 मई, 1990, पृ. 6-7
116. गुप्ता, शेखर, "भारत-पाकिस्तान", खास रपट, कश्मीर में उठे उग्रवाद, पाकिस्तान की क्रूर-कार्रवाइयों व भारतीय सीमाओं पर हस्तक्षेप को लेकर सैनिक तैयारी व सीमा पर मुस्तैद, इण्डिया टुडे, 15 मई, 1990, पृ. 21
117. वही
118. "दक्षिण एशिया में महाशक्तियों की विवादास्पद स्थिति पर दृष्टिकोण, कोई भी तो युद्ध नहीं चाहता, फिर पाकिस्तान की आक्रामक कार्रवाइयों को लेकर भारत क्यों चिन्तित है", इण्डिया टुडे, 15 मई, 1990, पृ. 20-23
119. जहाँनुमा, उर्दू सर्विस, आल इण्डिया रेडियो, 12 जून, 1990 दूरदर्शन समाचार, 12 जून, 1990
120. वही, 13 जून, 1990

हासिल होगीं। बड़े दुर्भाग्य की बात है कि हमने उनके प्रति अविश्वास दिखाया। यही कारण है कश्मीरी जनता के असन्तोष का।[121] भारत से अच्छे सम्बन्धों के कारण ही काबुल की कश्मीर की जनता के साथ सहानुभूति रही है, जबकि पाकिस्तान कश्मीर में भारत की नीतियों की विश्व-व्यापी निन्दा करता रहा है।[122]

वास्तव में भारतीय कश्मीर को हड़पने के लिए पाकिस्तान सरकार उतावली हो रही है, सेना से लगाकर राजनीतिज्ञ तक एक ही बात दोहराते रहते हैं कि हम बहुत जल्द कश्मीर को जीतकर बंगला देश बनाने का बदला भारत से ले लेगें।[123] पाकिस्तान कश्मीर में एक कम तीव्रता वाला युद्ध लड़ रहा है, उसे भय है कि भारत उस पर पलट कर वार न कर दे, इसलिए उसने परमाणु बम होने की पुष्टि कर दी है।[124] दोनों देश पिछले तीन युद्धों से एक दूसरे की क्षमता से परिचित हैं। जिनसे किसी तरह की समस्या का समाधान नहीं हुआ।[125] अत: महाविनाश की आशंका को देखते हुए भारत का मत है कि वह तब तक जंग शुरू नहीं करेगा जब तक कि पाकिस्तान शान्ति का हर एक रास्ता बन्द न कर दे।[126]

वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय हालात के मद्देनजर दोनों देश वार्ता के लिए राजी हो गये हैं। शिमला समझौते की तेरहवीं वर्षगांठ पर भारत-पाक विदेशमंत्रियों ने कहा कि जिन मामलों में राष्ट्रीय हित आड़े आते हैं, उन पर खुलकर विचार कर दोनों ही ओर से अपनी स्थिति पूरी तरह स्पष्ट करनी चाहिए, इससे समस्याओं के हल करने में मदद मिलेगी।[127] दूसरी ओर जब तक सीमा विवाद हल नहीं होता, भारत और चीन के मध्य सामान्य सम्बन्ध तथा सद्भाव कठिन कार्य है।[128]

इस प्रकार जहाँ एक ओर अफगानिस्तान, पाकिस्तान को लेकर उत्पन्न हुई भारतीय समस्याओं के प्रति सहानुभूति व्यक्त करता रहा है, वहीं भारत-चीन सीमा विवाद पर उसने पूर्ण तटस्थ रूख अपनाए रखा। इसमें उसकी चीन से अच्छे सम्बन्ध बनाये रखने की इच्छा शामिल थी। किन्तु

---

121. अरोड़ा, जनरल जे.एस., "लम्बी लड़ाई के लिए तैयार होना चाहिए" माया, वर्ष 61, अंक 10, 31 मई, 1990, पृ. 30-31
122. खान, हफीज आर., "अफगानिस्तान एण्ड पाकिस्तान" पाकिस्तान होराइजन, क्वाटरली, खण्ड 13, अंक 1, 1960, पृ. 48-64
123. हुसैन, मुजफ्फर, "पाक अधिक्रत कश्मीर भी अलग होने की फिराक में" अमर उजाला, मेरठ, 4 अगस्त, 1990
124. कुमार, रंजीत, "तूफान से पहले का सन्नाटा" नवभारत टाइम्स, 4 दिसम्बर, 1994
125. अग्रवाल, अभय, "पलड़ा किसका भारी"? देखिए क्र. 121, पृ. 39-43
126. कौल, जवाहर, "पाकिस्तान के बारे में दूरगामी नीति" जनसत्ता, 1987
127. नवभारत टाइम्स, 3 जुलाई, 1985
128. वही, 10 जुलाई, 1985

सत्य तो यह है कि अपनी ही आन्तरिक समस्याओं से जूझता व महाशक्तियों की राजनीति का शिकार अफगानिस्तान भारतीय उपमहाद्वीप में उत्पन्न हुई समस्याओं के प्रति सीमित योगदान ही कर सकता है।

(ग) अफगान समस्याएं व भारत

इतिहास भी इसका साक्षी रहा है कि अफगानिस्तान का सुख-दुःख भारत का सुख-दुःख है।[129] भारत सदैव अफगानिस्तान के प्रति जागरूक रहा है तथा उसकी समस्याओं को बातचीत द्वारा राजनैतिक स्तर पर सुलझाए जाने का समर्थन करता रहा है।[130]

डुरेण्ड लाइन

डुरेण्ड लाइन ब्रिटिश भारत और अफगानिस्तान की एक अन्तर्राष्ट्रीय सीमा रही है। भारत विभाजन व पाकिस्तान के जन्म के पश्चात् यह रेखा पाकिस्तान व अफगानिस्तान के मध्य सीमांकन का काम करने लगी जिसे लेकर दोनों देशों में परस्पर मतभेद उभरे। ऐसे अवसरों पर भारत का नेतृत्व वर्ग सर्वदा ही अफगानिस्तान का समर्थन करता हुआ पाया गया।[131]

डुरेण्ड लाइन की समस्या ब्रिटिश उपनिवेशवाद का प्रतीक थी, जिसने अफगानिस्तान में अनेक समस्याओं को जन्म दिया।[132] 1893 में मार्टियर डुरेण्ड के नेतृत्व में अंग्रेजों ने भाषा व जाति सम्बन्धी विवादों को ध्यान रखे बिना इस सीमा रेखा को स्थापित किया।[133] अफगानिस्तान सामान्यतया उसमें सुधार चाहता था, किन्तु ब्रिटिश सरकार ने इसे कभी गम्भीरता से नहीं लिया। अफगानिस्तान की विशेष मांग पर[134] 1930 में राउण्ड टेबिल कांफ्रेन्स में डुरेण्ड सीमा मामले को सुधार के लिए रखा गया,[135] किन्तु सफलता नहीं मिली। तदुपरान्त डुरेण्ड लाइन की मान्यता पर ब्रिटिश भारत व अफगानिस्तान के मध्य विचार-विमर्श किया गया, जिसमें अंग्रेजों ने निश्चित किया कि उत्तरी पश्चिमी क्षेत्र तथा अन्य जनजातीय क्षेत्र भारत व पाकिस्तान में इच्छानुरूप मिला दिये जायेंगे। अफगानिस्तान यह कभी भी स्वीकार नहीं कर सकता था, क्योंकि वह इन क्षेत्रों

---

129. अफगानिस्तान पड़ोसी और दोस्त, दिनमान, 26 अगस्त, 1966, पृ. 24
130. वार्षिक रिपोर्ट 1983-84, भारतीय विदेश मन्त्रालय द्वारा प्रकाशित, पृ. 3
131. आज (वाराणसी), 11 मार्च, 1978
132. कौर, कुलवन्त, देखिए क्र. 72, पृ. 149
133. इमप्री, ए.टी., "पाकिस्तान इम्पीरियल लीजेंसी", पाकिस्तान वैस्टर्न बोर्डर लैण्ड्स (नई दिल्ली) 1977, पृ. 24
134. प्यारे लाल, "महात्मा गांधी द लास्ट फेस", खण्ड 2, नवजीवन (अहमदाबाद), 1958, पृ. 280-81
135. राव, वी. शिवा, "कान्फिलिक्ट बियोण्ड द इन्ड्स", द नेशन (न्यूयार्क), 16 जुलाई, 1949

को अपने क्षेत्राधिकार में मानता था।[136] अतः अफगानिस्तान ने ब्रिटिश सरकार पर दबाव डाला कि इन क्षेत्रों पर पहली इच्छा उसके सम्मुख रखी जानी चाहिए।[137] पाक सरकार ने उनकी इस मांग का कड़ा विरोध किया।[138]

ब्रिटेन ने डुरेण्ड सीमा का निर्धारण किया था, इसलिए वह उसका अविकल रूप से समर्थन करता रहा। भारत विभाजन के पश्चात् डुरेण्ड सीमा रेखा के पूर्व में स्थित पख्तून क्षेत्र पाकिस्तानी प्रशासन क्षेत्र में आ गया। अफगानिस्तान ने डुरेण्ड लाइन के साथ ही पख्तूनिस्तान की मांग की। नये पख्तून राज्य की स्थापना का अर्थ होता कि पुनः सीमा निर्धारण। इस प्रश्न पर भारत प्रारम्भ से ही वैधानिक लाइन को ही स्वीकार करता रहा है। ऐसा स्वीकार किया जाता है कि भारत विभाजन के पश्चात् डुरेण्ड लाइन की वैधानिकता पर अधिक वाद-विवाद नहीं चला। अफगानिस्तान द्वारा 1,200 वर्गमील सीमा रेखा (डुरेण्ड लाइन) को मान्यता न दिये जाने के कारण तथा पख्तून प्रश्न को लेकर अफगानिस्तान व पाकिस्तान सम्बन्ध बिगड़े हुए हैं।[139] एक पत्रकार सम्मेलन में पं० नेहरू ने जब अफगान समर्थित डुरेण्ड लाइन व पख्तूनिस्तान के सम्बन्ध में मत व्यक्त किया तो पाक सरकार ने यह कहकर उनकी भर्त्सना की कि भारत उनके आन्तरिक मामलों में दखल कर उन्हें समाप्त करना चाहता है। तब भारत ने अप्रत्यक्ष रूप में अफगानिस्तान का समर्थन प्रारम्भ किया।

पख्तून विवाद

द्वितीय महायुद्ध ने ब्रिटिश साम्राज्य को खोखला बना दिया था। अफगान शासकों को अनुमान था कि ब्रिटिश राज्य अपने प्रयाण के साथ पख्तूनों को फिर से अफगानिस्तान में मिलने का अवसर दे जायेगा या ऐसी स्थिति पैदा करेगा जिसमें भारत और अफगानिस्तान के मुसलमान मिलजुल कर रह सकेंगे। अगस्त 1947 में पाकिस्तान के जन्म के साथ ही पख्तून विवाद प्रबल हो उठा।[140] पाकिस्तान स्वतन्त्र पख्तूनिस्तान के निर्माण के लिए तैयार नहीं था। अतः ब्रिटिश कूटनीति के अनुसार जनमत संग्रह का यह प्रस्ताव 6 से 9 जुलाई तक रखा गया, किन्तु वहाँ

---

136. अब्दुर्रहमान, अमीर, "द आटो बायोग्राफी", खण्ड 1, लन्दन 1900, पृ. 158
 – हैरीसन, एस. सैलिंग, देखिए क्र. 110, कुरेशी, एम. एम. एस., "द फ्रण्टियर डिसप्यूट बिटवीन अफगानिस्तान एण्ड पाकिस्तान", पैसिफिक अफेयर्स, खण्ड 39, अंक 1, 1966, पृ. 103
137. न्यूयार्क टाइम्स, 3 जुलाई, 1946, द हिन्दुस्तान टाइम्स (नई दिल्ली)
138. डेली मुस्लिम लीग, 4 जुलाई, 1947
139. मुजतवा, रजवी, देखिए क्र. 79, पृ. 34
140. पख्तून विवाद पर विस्तृत जानकारी के लिए विविध सामग्री उपलब्ध है, जिनमें कुछ प्रमुख- चार्ल्स, एफ. एण्ड जे., "द चैलैंज ऑफ द नार्थ वेस्ट फ्रण्टियर (लन्दन 1937)", सर. विलियम वार्टन, "इण्डियास नार्थ-वेस्ट फ्रण्टियर्स (लन्दन 1939)", सर ओलफ केरो, "द पठान्स 550, वी. सी. ए. डी. 1957" (लन्दन 1959), सी. कोलिन डेविस, "द प्राब्लम ऑफ द नार्थ वेस्ट फ्रण्टियर 1890-1908" (कैमिब्रज 1932) डोरोथी एस. फ्रेन्क, "पख्तूनिस्तान डिसप्यूटेड ऑफ ए ट्राइगर लैण्ड"

के निवासियों की महत्त्वाकांक्षाओं तथा खान अब्दुल गफ्फार खां द्वारा प्रस्ताव बहिष्कार के[141] परिणाम के आधार पर [142] यह क्षेत्र पाकिस्तान के हिस्से में आ गया। तभी वहाँ खान अब्दुल के नेतृत्व में स्वतन्त्रता के लिए आन्दोलन चला, जिसका अफगानिस्तान ने समर्थन किया।[143] अफगानिस्तान ही एक ऐसा देश था जिसने वहाँ मान्यता प्रदान की। यही प्रश्न पाकिस्तान और अफगानिस्तान के बीच सम्बन्धों में बड़ी समस्या बन गया। अफगानिस्तान की तरह पख्तूनिस्तान भी भूवेष्टित राज्य है। अफगानिस्तान, पख्तूनिस्तान को स्वतन्त्र राज्य घोषित करवाकर उसे अपने प्रभाव में देखना चाहता था।

भारत पख्तून प्रश्न का भावनात्मक समर्थन देता रहा है।[144] 22 जून, 1947 को कांग्रेस पार्टी की बैठक में सर्वप्रथम स्वतन्त्र पख्तून राज्य की स्थापना की मांग की गई। भारत में इस की तैयारियों पर गांधी जी ने प्रसन्नता का इजहार किया,[145] किन्तु जब आधिकारिक रूप से यह क्षेत्र पाकिस्तान में घोषित कर दिया गया तो भारत सरकार ने पख्तूनिस्तान के सम्बन्ध में कुछ भी कहने से इन्कार कर दिया।[146] इसके निम्नलिखित कारण थे; प्रथम, इसके सबसे बड़े समर्थक महात्मा गांधी की मृत्यु हो गई थी। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेताओं में इसके प्रति उत्साह में कमी थी।[147] इसके अतिरिक्त भारत उस समय तक कानूनी तौर पर डुरेण्ड लाइन को मान्यता प्रदान कर चुका था। अत: अपने विचारों को बदलना आसान नहीं था। दूसरा, उस समय नवोदित भारत सरकार को विकास के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को सुधारने की आवश्यकता थी, साथ ही देश में उत्पन्न राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के कारण पख्तूनिस्तान के प्रश्न को पुनः जीवित करने का भारत सरकार को अवसर नहीं था। तीसरा, भारत सरकार पाकिस्तान के साथ मित्रता पूर्ण सम्बन्ध बनाये रखना चाहती थी। इसी कारण उसने इस प्रश्न पर चुप्पी साध ली।[148] अन्त में, भारत सरकार पख्तूनिस्तान की कूटनीतिक गतिविधियों को और महत्ता नहीं प्रदान करना चाहती थी, क्योंकि इसका सीधा सम्बन्ध कश्मीर से है। 1948 में कश्मीर में हुई लड़ाई (दंगे) में इसी जनजाति के लोगों का हाथ था, भारत सरकार यह भूली नहीं थी। भारत पख्तूनों के साथ सम्बन्धों को विकसित कर कश्मीर के लिए समस्या नहीं पैदा करना चाहता था, क्योंकि

---

141. इस प्रस्ताव का बहिष्कार करने की सलाह स्वंयं गांधी जी ने खान अब्दुल गफ्फार खां को दी।
142. कुल मत पत्र में से 289, 244 मत पाकिस्तान को मिले और भारत को केवल 2,874 मत ही मिले। न्यूयार्क टाइम्स, 21 जुलाई, 1947
143. न्यूयार्क टाइम्स, 21 नवम्बर, 1949
144. ट्रिब्यून (चण्डीगढ़), 2 जुलाई, 1979. नागपुर टाइम्स, 2 जुलाई, 1979
145. तेन्दुलकर, डी.जी., "महात्मा: लाइफ ऑफ एम.के. गांधी", खण्ड 4, (बाम्बे 1953) पृ. 306
146. 17 मार्च, 1950 श्री नेहरू का लोकसभा में दिया गया भाषण। देखिए क्र. 2, पृ. 289
147. प्यारे लाल, देखिए क्र. 134, पृ. 272
148. लोकसभा डिबेट्स, थर्ड सीरीज, खण्ड 1, अंक 6, 13 अगस्त, 1962, का. 1378-80

ऐसा करने पर पाकिस्तान कश्मीर की ओर से भारत पर दबाव बढ़ा सकता था। इन्हीं कारणों से भारत सरकार ने पख्तूनिस्तान को किसी प्रकार के निश्चित समर्थन देने से इन्कार किया।[149]

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद यद्यपि ब्रिटेन का स्थान भौगोलिक व राजनैतिक दृष्टि से पाकिस्तान व भारत ने ले लिया, किन्तु शक्ति की दृष्टि से अमेरिका ने ब्रिटेन का स्थान लिया। अफगान शासक पाकिस्तान पर महाशक्तियों द्वारा दबाव डलवाकर पख्तूनों को आजाद करवाना चाहते थे। इस सम्बन्ध में किन्तु जहाँ अमरीकी प्रशासन ने उक्त प्रस्ताव को अनुचित बताते हुए इसे त्याग देने की सलाह दी।[150] वहीं रूस ने पख्तून प्रश्न पर अफगानिस्तान को पूरा समर्थन देने का वायदा किया। भारत ने इस प्रश्न पर मध्यम मार्ग अपनाया।

पाकिस्तान से एक ओर अफगानिस्तान पख्तूनिस्तान को लेकर जूझ रहा था तो दूसरी ओर कश्मीर को लेकर हिन्द-पाक मतभेद बने हुए थे। पख्तून समस्या अफगान विदेश नीति की सबसे अधिक मार्मिक और भावनात्मक समस्या रही है।[151] इस समस्या का सीधा सम्बन्ध जनता के हर हिस्से से रहा है। अक्टूबर, 1954 में सिन्धु नदी के पश्चिम के पख्तून क्षेत्र पश्चिमी पाकिस्तान में सम्मिलित किए जाने पर प्रधानमंत्री दाऊद ने कहा कि अफगान जनता व सरकार पख्तून क्षेत्र को पाकिस्तान का भाग नहीं मानती और जब तक इस सम्बन्ध में स्वयं पख्तून जनता द्वारा स्वेच्छा पूर्वक निर्णय नहीं हो जाता पाकिस्तान द्वारा उठाये गये कदम को अफगानिस्तान स्वीकार नहीं करेगा।[152] किन्तु पाकिस्तान पर इसका असर नहीं हुआ। विरोधी कार्रवाइयों के कारण पाकिस्तान स्थित अफगान दूतावास और समस्त व्यापार अधिकरण बन्द कर दिए गए। 22 मई, 1960 को सरदार नईम ने एक भेंट वार्ता में कहा कि यदि पाकिस्तान ने पख्तून समस्या का शान्तिपूर्ण हल नहीं होने दिया तो पख्तून लोग अपने राष्ट्रीय लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अन्य साधनों का उपयोग करने को बाध्य हो जाएँगे।[153]

सोवियत मासिक इण्टरनेशनल अफेयर्स के अनुसार अफगान-पाक विवाद को अमरीकी व ब्रिटिश साम्राज्यवादियों ने उकसाया है, जो यह भी प्रयत्न कर रहे हैं कि अफगानिस्तान अपनी

---

149. लोकसभा डिबेट्स, पार्ट प्रथम, खण्ड 14 26 मई, 1956, का. 437-41 और खण्ड 6, 14 अगस्त, 1956 का. 205-6
150. न्यूयार्क टाइम्स, 24 अप्रैल, 1960
- डुप्री, लुई, "द माउन्टेन्स गो टू मोहम्मद जहीर", अमेरिकन यूनीवर्सिटीज फील्ड स्टाफ रिपोर्टस सर्विस, (न्यूयार्क 1960), खण्ड 4, अंक 6, पृ. 3
151. टिंकर, हुग, "इण्डिया एण्ड पाकिस्तान, ए सोर्ट पॉलिटिकल गाइड", लन्दन, 1962, पृ. 142
- हिन्दुस्तान टाइम्स, 2 मार्च, 1968
152. इस्लाह, 27 नवम्बर, 1954
- इस्टर्न वर्ल्ड (लन्दन), जनवरी 1954, पृ. 26, दाऊद का भाषण। नजीबुल्ला, "द प्राब्लम ऑफ पख्तूनिस्तान", ईस्टर्न वर्ल्ड, जनवरी 1955, पृ. 25, डा. वैदिक द्वारा उद्धृत
153. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 23 मई, 1960

स्वतन्त्र नीति का परित्याग कर दे और उनकी आक्रामक नीतियों का एक उपकरण बन जाए।[154] दूसरी ओर लन्दन टाइम्स के प्रतिनिधि ने लिखा कि अफगान सरकार बिना सूझ-बूझ का खतरनाक खेल खेल रही है, बिना विदेशी सहायता व सेना के जरिए पख्तूनिस्तान की स्थापना की आशा नहीं की जा सकती।[155]

पाकिस्तान की यह धारणा रही है कि. अफगानिस्तान को उनके विरूद्ध सोवियत संघ और भारत का प्रोत्साहन मिल रहा है।[156] इसलिए पाकिस्तान अमरीकी प्रशासन द्वारा उन पर दबाव डलवा कर अपना राष्ट्रहित सम्पादित करना चाहता था।[157] अफगानिस्तान द्वारा रूस से हथियारों के खरीदे जाने पर पाकिस्तानी नेताओं ने कहा कि यद्यपि कुछ हजार बन्दूकों से अफगानिस्तान पाकिस्तान को हरा नहीं सकता, किन्तु ये ही बन्दूकें सीमान्त क्षेत्र के पठानों के हाथ में पहुँचा दी जाएं तो पाकिस्तान की शान्ति और सुरक्षा निश्चित रूप से खतरे में पड़ जाएगी।

प्रारम्भ में भारत सरकार पख्तून विवाद के परिणाम स्वरूप उत्पन्न अफगानिस्तान की आर्थिक कठिनाइयों पर विचार कर रही थी, किन्तु बाद में पाक-चीन गठजोड़ को देखते हुए उसने 1960 में पुनः पख्तून प्रश्न पर रूचि प्रदर्शित की। इस पर 27 फरवरी, 1960 को अफगान विदेश मंत्री ने संवाददाता सम्मेलन में कहा कि उनकी भारत के साथ स्वभावतः ऐतिहासिक व वैचारिक समानता है, दोनों ही देशों ने विश्व में एक दूसरे की नीतियों तथा समस्याओं के प्रति एक दूसरे का समर्थन किया है।[159] सरदार दाऊद ने जर्मन सवांददाता से एक भेंट वार्ता में कहा कि अफगानिस्तान व पाकिस्तान के मध्य विवाद तभी सुलझ सकता है, जब (क) पाक सरकार पख्तूनों को आत्म निर्णय करने का अधिकार दे और उस वचन के सम्बन्ध में कोई मित्र देश, विशेष कर अमेरिका गारण्टी दे, (ख) डुरेण्ड रेखा के पूर्व स्थित कबायली क्षेत्रों से पाकिस्तानी सेना की वापसी हो, (ग) समस्त पख्तून नेताओं की कारागार से मुक्ति हो तथा (घ) पाकिस्तान में अफगान वाणिज्य दूतावासों और व्यापारिक अभिकरणों को फिर से खोला जाए।[160]

1961 में एक सवांददाता सम्मेलन में पं0 नेहरू ने कहा कि प्राचीन भारत से जुड़े होने

---

154. इण्टर-नेशनल अफेयर्स (मस्कवा), मई 1955, अंक 5, पृ. 5-6, 10
155. लन्दन टाइम्स, 25 मई, 1955
156. बलोच, ए.एच., "पाक-अफगान रिलेशन्स", पाकिस्तान रिव्यू (लाहौर), खण्ड 7, अंक 5, मई 1959, पृ. 23, 29
157. डुप्री, लुई, "पख्तूनिस्तान, द प्राब्लम एण्ड इट्स लार्जर इम्पलीकेशन्स", अमेरिकन यूनीवर्सिटीज फील्ड स्टाफ रिपोर्ट्स सर्विसः साउथ एशिया सीरीज, न्यूयार्क 1961, खण्ड 5, अंक 5, पृ. 8
158. द हिन्दू (मद्रास), 25 अप्रैल, 1969
159. अफगानिस्तान न्यूज, खण्ड 3, अंक 22, अप्रैल 1960, पृ. 4, पाकिस्तान टाइम्स (लाहौर) 8 मार्च, 1960
160. इण्डियन एक्सप्रेस (बम्बई), 23 सितम्बर, 1961

के कारण पाक-अफगान सम्बन्धों के विषय में वे कुछ निश्चयात्मक ढंग से नहीं कह सकते।[161] वास्तव में भारत सरकार अपना राष्ट्रीय हित रखकर पख्तूनिस्तान का समर्थन चाहती थी। इसमें उसकी अफगानिस्तान से सम्बन्ध मधुर बनाने की इच्छा भी शामिल थी। परन्तु अफगान सरकार इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार कर रही थी।[162] संयुक्त राष्ट्रसंघ में भी कश्मीर प्रश्न को ध्यान में रखते हुए पख्तून समस्या पर भारत का रवैया सदैव असमंजस पूर्ण रहा है। कभी-कभी भारतीय प्रतिनिधियों द्वारा पाकिस्तान के साथ अपनी समस्याओं के समाधान के प्रश्न पर पख्तून समस्या को प्राथमिकता दिए जाने पर गलत फहमियाँ भी उत्पन्न हुई। इसका प्रमुख उदाहरण; भारतीय विदेशमंत्री एम0सी0 छागला ने पाकिस्तान को उसके क्षेत्र में हो रहे पख्तून आन्दोलन पर ध्यान देने के लिए कहा तो 7 अक्टूबर, 1965 में अफगान विदेशमंत्री ने कहा कि दुर्भाग्य से भारत कश्मीर की जनता के आत्म निर्णय के अधिकार पर विचार नहीं कर रहा है। उसे पख्तून जनता के अधिकारों का समर्थन करना चाहिए।[163] जिससे भारत सरकार ने पख्तूनों को खुला समर्थन देना आरम्भ किया।[164]

1953 से 1963 में दाऊद काल में पख्तून समस्या अफगानिस्तान के विदेश सम्बन्धों के निर्धारण की एक अनिवार्य कसौटी बन गई थी। तत्पश्चात् यूसुफ, मेंबन्दवाल, एतमादी, डा0 जहीर तथा मूशा सफीक के काल में यद्यपि अफगान शासक अपने पख्तून भाइयों के आत्मनिर्णय के अधिकार की लड़ाई का परित्याग करने के लिए तैयार नहीं थे, किन्तु उसके लिए वे अब युद्ध छेड़ने के लिए भी तैयार नहीं थे। फिर भी उनका विचार था कि यदि पख्तून व बलूच मिलकर पाकिस्तान व ईरान में वहीं स्थिति खड़ी कर दे जो बंगालियों ने पूर्वी पाकिस्तान में की थी तो अफगानिस्तान भारत से भी कहीं अधिक प्रतिबद्धता के साथ उनका साथ देगा। लेकिन ऐसी स्थिति में ईरान व पाकिस्तान दोनों ही पख्तून व बलूच आन्दोलन के दमन में एक होकर अपनी पूरी ताकत लगा देंगे जैसा कि उन्होंने पहले भी किया था। इसके अतिरिक्त स्वतन्त्र पख्तूनिस्तान अफगानिस्तान के वर्तमान राजनैतिक और भौगोलिक ढाँचे के लिए खतरा भी बन सकता है। पख्तूनिस्तान के निर्माण से अफगानिस्तान के पठान अपने देश की जनता व शासन के बजाय, जो कि विभिन्न जातियों व तत्वों का सम्मिश्रण है, शुद्ध पठान राज्य के प्रति अधिक निष्ठावान होंगे। पख्तूनिस्तान के लिए अफगानिस्तान को लड़ने से रोकना दोनों महाशक्तियों तथा क्षेत्रीय शक्ति चीन के हित में भी है। स्वतन्त्र पख्तूनिस्तान के निर्माण व पाकिस्तान के छोटी-छोटी

161. एशियन रिकार्डर, खण्ड 7, अंक 45, 1961, पृ. 42, 47
162. काबुल टाइम्स, 15 सितम्बर, 1965, डा. वैदिक द्वारा उद्धृत
163. काबुल टाइम्स, 9 अक्टूबर, 1965, डा. वैदिक द्वारा उद्धृत
164. वहीं, 12 अक्टूबर, 1965

सल्तनतों में बंट जाने से रूस के लिए हिन्दमहासागर का रास्ता बहुत मुश्किल हो जाएगा।[165] इन्हीं कारणों से 1963 में पख्तून प्रश्न की कट्टरता का अवसान हो गया। जिससे अफगानिस्तान के पड़ोसी देशों (पाकिस्तान, भारत व ईरान) के साथ रचनात्मक सम्बन्ध प्रारम्भ हो गए। 1965 में पाकिस्तान की आक्रामक कार्रवाइयों के बाद भारत सरकार ने पुनः पख्तून आन्दोलन को समर्थन देने की घोषणा की। लोकसभा में भारतीय विदेश उपमंत्री दिनेशसिंह ने घोषणा की कि भारत वैधानिक रूप से पख्तून जनता की सहायता करना चाहता है।[166]

अफगानिस्तान का विचार है कि पख्तूनिस्तान की समस्या का हल अभी तक नहीं हुआ है, लेकिन अपने इस विचार को क्रियान्वित करने के लिए वे शान्ति का रास्ता नहीं छोड़ेंगे। यह निर्विवाद सत्य है कि समय उनके साथ है।[167] कश्मीर के आत्म निर्णय के अधिकार पर जो भारत का मत है, अफगानिस्तान ने जहाँ उसका समर्थन किया वहीं पख्तूनिस्तान के सवाल पर पाकिस्तान के मत को उसने हमेशा चुनौती दी है, और दे रहा है। अफगानिस्तान के विदेश उपमंत्री पख्तून समस्या को राष्ट्रीय समस्या मानते हुए कहते हैं कि हम पख्तून व बलूच जनता के आत्म निर्णय की मांग का समर्थन करते हैं, जिससे वहाँ जनता अपने भविष्य का निर्माण स्वयं कर सके।[168] पाकिस्तान एक ओर बलूच व सीमान्त प्रान्त में जनता के स्वायत्त शासन की मांग को सैनिक शक्ति द्वारा दबाकर[169] उन्हें विद्रोही रूप ग्रहण करने के लिए विवश कर रहा है, दूसरी ओर उसने कश्मीर के प्रश्न को अपने ढंग से तूल देना प्रारम्भ किया है। पाकिस्तान की इन दोहरी हरकतों ने भारत व अफगानिस्तान दोनों को ही संकट का मुकाबला करने व आपसी सहयोग के लिए बाध्य किया है।[170]

पाक राष्ट्रपति भुट्टो ने आरोप लगाया कि अफगानिस्तान, पाकिस्तान के पख्तून इलाकों पर कब्जा करना चाहता है। दोनों देशों के आरोपों-प्रत्यारोपों से सैनिक गतिविधियों में भी तेजी आई।[171] उत्तर में पख्तूनिस्तान और पश्चिम में ईरान की सीमा से जुड़े बलूचिस्तान जैसे राजनैतिक महत्त्व के सूबें में पाकिस्तान बनने के बाद से अपनी स्वायत्तता की मांग को लेकर विक्षोभ उफनता रहा है। दोनों देशों में बढ़ता हुआ तनाव ऐसी स्थिति में पहुँच गया है कि सीमा-विवाद उनकी

---

165. वैदिक, वेद प्रताप, देखिए क्र. 28
166. लोकसभा डिबेट्स, खण्ड 48, 18 नवम्बर-1 दिसम्बर, 1965, का. 4274-76
167. दिनमान, 26 अगस्त, 1966, पृ. 24-25
168. हिन्दुस्तान (नई दिल्ली), 6 नवम्बर, 1973
169. गणेश मंत्री, "सिन्धु, ब्लूचिस्तान और सरहदी सूबा: जन विद्रोह उफन रहा है", धर्मयुग, खण्ड 27, अंक 19, 11 मई, 1986, पृ. 13-14. "जरनल इन पॉलिटिक्स पाकिस्तान, 1958-82", पृ. 181
170. आज (वाराणसी), 14 मार्च, 1975, गार्डियन 15 मार्च, 1975
171. हरिवंश, पी.के., "भारत-अफगानिस्तान सम्बन्ध", हिन्दुस्तान (नई दिल्ली), 3 सितम्बर, 1977

तत्कालीन विदेश नीति का केन्द्र बिन्दु बन गया। इसलिए सितम्बर, 1978 में विदेश मंत्री श्री अटलबिहारी वाजपेयी ने जब काबुल यात्रा के दौरान कहा कि पख्तून प्रश्न पर भारतीय महादेश में अस्थिरता पैदा न की जाए, तब काबुल की नई सरकार ने इस आग्रह को अधिक अनुकूल नहीं माना।[172]

इस प्रकार पाकिस्तान के जन्म के साथ उत्पन्न हुई भारत-अफगानिस्तान की समस्याओं से दोनों देशों के बीच मित्रता का नया दौर प्रारम्भ हुआ। वे अपनी इन समस्याओं के लिए पाकिस्तान पर राजनैतिक व सैनिक दबाव बनाये हुए हैं। अफगानिस्तान चाहता है कि कश्मीर की समस्या का हल हो और पाकिस्तान भारत के प्रति विरोधी नीति का परित्याग करे, साथ ही पख्तूनों के साथ न्याय किया जाना भी नितान्त आवश्यक है। जब तक ये राजनैतिक समस्याएं जीवित हैं, क्षेत्रीय सहयोग की आशा नहीं की जा सकती।

अफगानिस्तान की भौगोलिक स्थिति से प्रभावित व्यापार समस्या

अफगानिस्तान प्रारम्भ से ही भूवेष्टित राष्ट्र रहा है। जल मार्गों पर अफगान शासकों का कभी भी प्रभावशाली अधिकार न होने के कारण अफगानिस्तान संसार के अन्य राष्ट्रों के साथ कदम से कदम मिला कर नहीं चल सका, तथा जो राष्ट्र उसकी भौगोलिक सीमा को स्पर्श नहीं करते, अपरिचय का प्रगाढ़ आवरण पड़ा रहा।[173]

विभाजन से पूर्व अफगानिस्तान का भारत के साथ सीधा व्यापार सम्बन्ध था। 1947 में विभाजन के पश्चात् पाकिस्तान के जन्म से उत्पन्न राजनैतिक सीमा विवादों के कारण अफगान व्यापार को हानि का सामना करना पड़ा। पाकिस्तान, अफगानिस्तान से लगा हुआ ऐसा पड़ोसी देश है जिसके नियन्त्रण में बाहरी दुनिया से काबुल का व्यापार मार्ग है। अफगानिस्तान पाकिस्तान में जितनी समानता है, उतनी भारत-अफगानिस्तान में नहीं, फिर भी अफगानिस्तान भारत का समर्थक कहा जाता है। इन सम्बन्धों में प्रगाढ़ता व समीपता लाने के लिए आवश्यक है कि पाकिस्तान के जरिए उसे थल मार्ग की सुविधा मिले। इसके लिए भारतीय नेता सदैव प्रयत्नशील रहे हैं। ईरान के शहंशाह ने ईरान, अफगानिस्तान, पाकिस्तान व भारत के सहयोग से साझा व्यापार का जो प्रस्ताव रखा था, उससे अफगान समस्या का समाधान हो सकता था, किन्तु यह प्रस्ताव कारगर नहीं हो सका।

आर्थिक दृष्टि से अफगानिस्तान एक अविकसित कृषि प्रधान देश है। युद्धोत्तर काल में

172. वैदिक वेद प्रताप, देखिए क्र. 13, पृ. 240-42
173. जाफरी, एच.ए.एस., देखिए क्र. 7, पृ. 110-120

उसका व्यापार सन्तुलन बिगड़ गया। ऐसी अवस्था में स्वीकार किया गया कि भूवेष्टित देश को यदि सभ्य राष्ट्रों के समुदाय में ससम्मान रहना है तो उसे आर्थिक प्रगति के पथ पर बढ़ना चाहिए। इसी उद्देश्य से उसे दक्षिणी अफगानिस्तान में अमेरिका तथा उत्तरी अफगानिस्तान में रूस द्वारा शासकीय तथा अन्य सहायता मिलती रही। दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उसे भारत से सहायता मिलने लगी। भारत-अफगान व्यापार सम्बन्धों के लिए जहाँ एक ओर अफगानिस्तान ने पाकिस्तान से सम्बन्धों में संयम बरता , वहीं दूसरी ओर भारत ने पाकिस्तान के साथ प्रभावशाली पत्रों द्वारा सम्बन्धों को बनाये रखा।[174] किन्तु पाकिस्तान की अलगाववादी नीतियों के कारण समय-समय पर दोनों देशों (भारत-अफगान) को आयातक व निर्यातक वस्तुओं की डिलीवरी में बड़ी परेशानियों का सामना करना पड़ा। संयुक्त राष्ट्रसंघ के छठें अधिवेशन में अन्तर्राष्ट्रीय आज्ञापत्र के सम्बन्ध में अफगान प्रतिनिधि ने कहा कि भूवेष्टित राष्ट्रों के प्राचीन व्यापारिक मार्ग बन्द होने या अन्य कठिनाइयाँ उत्पन्न हो जाने की स्थिति में उन्हें स्वतन्त्र व्यापार के लिए मार्ग तथा समुद्री यात्रा का अवसर मिलना चाहिए।[175]

भारत ने अफगान मत का समर्थन किया। भारत ने विकसित देशों द्वारा विकासशील देशों को मुक्त व्यापार तथा आर्थिक मदद दिए जाने की मांग की। अपनी काबुल यात्रा पर जून 1969 में प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी ने कहा कि दोनों देशों में व्यापार की सबसे बड़ी बाधा सीधी संचार व्यवस्था का अभाव होना है।[176] प्रधानमंत्री एतमादी द्वारा अफगानिस्तान में महिलाओं की अविकसित स्थिति पर चर्चा करने पर श्रीमती गांधी ने उनकी स्थिति में सुधार व विकास के लिए शिक्षा तथा अनेक स्तर पर भारतीय सहयोग दिए जाने के लिए कहा।[177] रूसी व अमरीकी मदद ने अफगानिस्तान में कर्ज का बोझ, असमानता, गरीबी व भ्रष्टाचार को बढ़ाया। अत: अफगानिस्तान इस सम्बन्ध में भारत से मदद चाहता है। किन्तु पाकिस्तान, अफगानिस्तान के थोड़े से फल के व्यापार को छोड़ कर दोनों देशों के मध्य कोई व्यापारिक सम्पर्क नहीं होने देना चाहता। यदि पाकिस्तान यह अनुभव करे कि दोनों देशों से अच्छे सम्बन्ध स्वयं उसके हित में हैं, तो यह बाधा दूर हो सकती है।[178]

राष्ट्रपति अय्यूब और दाऊद एक दूसरे पर क्रमश: अमरीकी व रूसी खेमे में होने का आरोप लगाते रहे। पाकिस्तान द्वारा दोनों देशों में वाणिज्य दूतावास बन्द कर दिए गए। यह सूचना

174. ट्रेड जरनल, खण्ड 219, अंक 10, 10 मार्च, 1962, पृ. 636
175. टेक्स्ट अण्डर यू.एन. डाक्यूमेण्ट ए/सी, 6/एल, वाद-विवाद के लिए देखिए 12वां सेशन, छटी कमेटी, 520 मीटिंग
176. हिन्दुस्तान, 6 जून, 1969. नेशनल हेराल्ड (दिल्ली), 6 जून, 1969
177. टाइम्स ऑफ इण्डिया (दिल्ली), 10 जून, 1969
178. हिन्दुस्तान टाइम्स, 11 जनवरी, 1966

अफगानिस्तान के लिए अत्यन्त कष्टकर थी, क्योंकि इन वाणिज्य दूतावासों के माध्यम से अफगानिस्तान का अधिकांश व्यापार संचालित होता था। 6 सितम्बर, 1961 को उनके राजनयिक सम्बन्ध भंग हो जाने पर अफगान सरकार ने कराची स्थित अपने दूतावास को बन्द कर दिया।[179] अफगानिस्तान का माल जो कि पेशावर तथा कराची में पड़ा हुआ था, मार्गावरोध के कारण गन्तव्य स्थान तक नहीं पहुँच सका।[180] दाऊद ने कहा कि जब तक पाकिस्तान अनुकूल कार्रवाई नहीं करेगा हम अपनी सीमा में उसके भी माल को नहीं आने देंगे। अमेरिका आदि सभी देशों से अफगानिस्तान का व्यापार ईरान से होकर आने लगा।[181] जबकि भारत से सामान पहले की तरह अमृतसर और दिल्ली से काबुल और कन्धार की ओर विमानों द्वारा भेजा जा रहा था।[182] इस राजनैतिक हठ के कारण पाकिस्तान को मात्र यातायात शुल्क न मिलने से लगभग 16 करोड़ रू0 प्रतिवर्ष की हानि हो रही थी। इसलिए मार्च, 1963 में विदेशमंत्री भुट्टो और अफगान सूचना व प्रसारण मंत्री रिश्तिया के मध्य परिवहन और यातायात समझौता हुआ जिसके अनुसार पुनः संचार व्यवस्था प्रारम्भ करने की घोषणा की गई।[183]

अफगानिस्तान शेष संसार से दो स्थल मार्गो से जुड़ा हुआ है, ये दोनों मार्ग पाकिस्तान होकर गुजरते हैं। काबुल से सामान स्थल मार्ग से पेशावर और पाकिस्तान होकर भारत भेजा जाता है। दूसरा मार्ग कन्धार होकर पश्चिम पाकिस्तान से चमन और फिर दक्षिण में स्थित पाकिस्तानी बन्दरगाह कराची तक जाता है। दोनों रास्तों में सामान को ट्रकों से उतार कर गाड़ी में चढ़ाना पड़ता है। इन दोनों मार्गों के लिए अफगानिस्तान को पूरे तौर पर पाकिस्तान की सद्भावना पर निर्भर रहना पड़ता है। पाकिस्तान कभी-कभी अफगानिस्तान पर दबाव डालने के लिए भी इस मार्ग का इस्तेमाल करता है। ऐसी कठिन परिस्थितियों में भारत ने अफगानिस्तान के साथ वायुयान द्वारा सम्पर्क बनाये रखा, जिससे अफगानिस्तान भारी घाटे से बच सका।[184] 1966 में हुई ताशकन्द घोषणा से भी पाकिस्तान की इन नीतियों में कोई अन्तर नहीं आया, इसलिए अफगानिस्तान अपने व्यापार के लिए एक वैकल्पिक मार्ग ढूढंने के लिए प्रयत्नशील रहा है। यदि अफगानिस्तान के दक्षिण पूर्व में ईरान की स्वीकृति से बन्दर-ए-अब्बास को जोड़ने वाली एक नई सड़क बनाई जाए तो अफगानिस्तान की समस्या हल हो सकती है। यह सड़क वर्तमान दोनों मार्गों से, जो पेशावर अथवा चमन होकर जाते हैं, छोटी होगी, इसमें सामान को पुनः उतार कर चढ़ाने की

179. न्यूयार्क टाइम्स, 7 सितम्बर, 1961
180. स्टेट्समैन, 11 सितम्बर, 1961
181. यू. एस. हाउस, 87वीं कांग्रेस, दूसरा सत्र, 'हियरिंग्स' (वाशिग्टंन 1962) भाग 3, पृ. 319
182. पाकिस्तान टाइम्स, 30 मई, 1963
183. वही,
184. जाफरी, एच. ए. एस., देखिए क्र. 7, पृ. 41-42

समस्या भी उत्पन्न नहीं होगी। भारत इस सड़क के जल्दी से जल्दी निर्माण के लिए सहायता देने को तैयार है। यह सड़क अफगानिस्तान के लिए महत्त्वपूर्ण है।[185] इस प्रकार जब भी अफगानिस्तान में विदेश व्यापार से सम्बिन्धित कठिनाइयां उपस्थित हुई भारत ने उस समय निश्चित व ठोस कदम उठाया।[186] किन्तु अफगानिस्तान अपने व्यापार के लिए पाकिस्तान पर निर्भर होने के कारण पख्तून प्रश्न को पाकिस्तान के साथ अपने सम्बन्धों में स्थायी रूप प्रदान नहीं कर सका।[187]

4 मार्च को नई दिल्ली में अफगान राष्ट्रपति दाउद ने प्रधानमंत्री श्री मोरार जी देसाई के साथ बातचीत में कहा कि भारत से व्यापार बढ़ाने और इस क्षेत्र के देशों के आपसी सहयोग के विस्तार के रास्ते में पाकिस्तान से पर्याप्त सुविधाएं न मिलना बड़ी बाधा है,[188] जिसे सुलझाने के प्रयत्न आवश्यक हैं। उन्होंने पाकिस्तानी नेताओं से स्थल मार्ग की सुविधा देने के लिए कहा, क्योंकि दक्षिण एशिया व हिन्दमहासागर में बड़े राष्ट्रों की प्रतिस्पर्धा को रोकने के लिए उनका सहयोग आवश्यक हो गया है।[189] अफगानिस्तान की व्यापारिक समस्याओं को देखते हुए कहा गया कि विभाजन के पश्चात् भारत-अफगान व्यापारिक सम्बन्धों के लिए भौगोलिक चाबी पाकिस्तान के पास आ गई है।[190]

महाशक्तियों की राजनीति व अफगान समस्या

महाशक्तियों के बीच 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही अफगानिस्तान के राज दरबार में अपना वर्चस्व स्थापित करने की होड़ लग गई। देश में अशिक्षा, जानकारी तथा अनुभव की कमी आदि अनेक कारणों से अफगानिस्तान के वैदेशिक सम्बन्धों का स्वस्थ विकास अवरुद्ध रहा। अंग्रेजों ने अफगानिस्तान के साथ क्रमश: तीन युद्ध 1839, 1899 व 1919 में किए, इन पौने दो सौ वर्षों में केवल रूसी व ब्रिटिश साम्राज्य के सम्बन्धों की एकांगिता को 1919 में अमानुल्लाह ने भंग किया और विदेश नीति के क्षेत्र में कुछ नये कदम उठाए। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् महाशक्तियों (रूस व अमेरिका)के मध्य प्रारम्भ हुए शीत युद्ध से विश्व में आर्थिक विकास से सम्बिन्धित समस्याओं ने जन्म लिया, उसे देश के रक्षा साधनों द्वारा निपटाना सम्भव नहीं था। अत: अफगानिस्तान अपनी तटस्थता और स्वतन्त्रता की रक्षा तथा दोनों महाशक्तियों के वैचारिक द्वन्द्व और शक्ति संघर्ष से बचते हुए एक ऐसी नीति का सूत्रपात करना चाहता

185. जाफरी, एच. ए. एस., देखिए क्र. 7, पृ. 41-42
186. इण्डियन फॉरेन अफेयर्स, खण्ड 4, अंक 1, जनवरी 1961, पृ. 6
187. हिन्दुस्तान टाइम्स, 2 फरवरी, 1965
188. इण्डियन एक्सप्रेस, 30 मई, 1978
189. आर्यावर्त्त (पटना), 9 मार्च, 1978
190. अमृिता बाजार पत्रिका (कलकत्ता), 9 मार्च, 1978

था जिससे देश में नवनिर्माण की परिस्थितियां तैयार हों। दक्षिण एशिया में अमेरिका व चीन के साथ ही रूसी प्रभाव बढ़ रहा था। एक ओर रूसी प्रभाव को क्षीण करने के लिए अमेरिका चीन को रूस के सशक्त प्रतिद्वन्द्वी के रूप में देखना चाहता है, तो दूसरी ओर चीन पाकिस्तान को भारत का प्रबल प्रतिद्वन्द्वी बनाना चाहता है, ऐसी स्थिति में ताशकन्द समझौता, शिमला समझौता और एशियाई सुरक्षा का रूसी प्रस्ताव सभी निरर्थक ही सिद्ध होंगे। यदि दक्षिण एशिया में भविष्य में राजनैतिक सम्बन्धों के दो ढाँचे बनते हैं, एक युद्ध और तनाव का तथा दूसरा शान्ति व सहयोग का, तो भूवेष्टित अफगानिस्तान दूसरे ढांचे का वरण करेगा। भारतीय विदेशमंत्री श्री चव्हाण ने भी काबुल में हो रहे अधिवेशन में कहा कि आज टकराव के बजाय सहयोग की आवश्यकता है, अधिकांश देशों का यही रूख है।[191] भारत अफगानिस्तान के साथ सहयोग के लिए सदैव उद्यत है।[192]

27 अप्रैल, 1978 में अफगानिस्तान में खलकी क्रान्ति के पश्चात् देश में क्रान्ति विरोधी कार्रवाइयाँ बढ़ीं, दूसरी ओर सेना में रूसी प्रभुत्व बढ़ रहा था।[193] भारत, अफगानिस्तान से दूर था, अतः किसी तरह के संकट काल में तुरन्त मदद उसे रूस द्वारा ही मिल सकती थी।[194] इसलिए रूस से विभिन्न प्रकार के समझौते हो रहे थे। पारस्परिक मित्रता के कारण भारत ने अफगानिस्तान की कम्युनिस्ट सरकार का समर्थन किया। अफगान नेताओं का मत था कि खलकी क्रान्ति के शत्रु पाकिस्तान में शरणार्थी शिविर बनाकर देशद्रोही गतिविधियों में लिप्त हैं।[195] पाकिस्तान इनकी पूरी मदद कर रहा है। पाक सेना की सीमाओं पर बढ़ती हुई सैन्य कार्रवाइयों से भारत व अफगानिस्तान खतरा महसूस कर रहे थे।[196] उन्हीं दिनों कराकोरम सड़क का उद्घाटन करते हुए चीनी उपप्रधानमंत्री श्री केन पियाओं ने पाकिस्तान की पीठ ठोकी, जिसके कारण काबुल के शासकों को लगा कि भारत की मैत्री को साधे रखना कितना महत्वपूर्ण है। किन्तु यह सत्य है कि खलकी सरकार थोड़ी ही लोकतान्त्रिक रही होती और उसके लिए सोवियत विकल्प खुले होते तो आज हजारों अफगानों के मौत के घाट उतरने से बचाया जा सकता था। पाक-अफगान तनाव का यह नया रूप भी शायद पैदा नहीं होता। यह ठीक है कि अफगान जनता अपने देश

---

191. हिन्दुस्तान टाइम्स, (नई दिल्ली) 2 नवम्बर, 1975
192. वही, 1 नवम्बर, 1975
193. ट्रिब्यून (चण्डीगढ़), 8 मई, 1978, सितान्शु दास, "भारत का अफगानिस्तान से सम्बन्ध", हिन्दुस्तान (नई दिल्ली), 3 जून, 1978
194. आशित्कोव, गोर्वोक्यर्यान, पोलोन्स्की, स्वेतोजारोव, "अफगानिस्तान सच्चाई क्या है" (मास्को 1984), पृ. 56
195. जेता, "अफगानिस्तान में सौर क्रान्ति" (दिल्ली 1979), अफगानिस्तान में शान्ति विरोधी चीन, अमेरिका व पाकिस्तान की चाल, पृ. 56
196. ट्रिब्यून (चण्डीगढ़), 2 जुलाई, 1979, नागपुर टाइम्स, 2 जुलाई, 1979

की नीति निर्धारण में स्वतन्त्र है। लेकिन उनकी अस्थिरता पाक-अफगान युद्ध का कारण भी बन सकती है, जिसके असर से भारत बच नही सकता।[197]

खलकी क्रान्ति के दौर में प्रारम्भ हुए अस्थिरता दौर में विश्व को आश्चर्य चकित करने वाली घटना हुई, जिसमें सोवियत संघ के 1 लाख से भी अधिक सैनिक अफगानिस्तान आ गए और 27 दिसम्बर, 1979 को परचमी नेता बबरक कारमल ने अफगानिस्तान में प्रधानमंत्री व राष्ट्रपति पद सम्भाल लिया। उन्होंने देश की जनता के नाम अपने प्रथम सन्देश में कहा कि सोवियत सैनिक अफगान सरकार की प्रार्थना पर परस्पर मित्रता समझौते के तहत, बाह्य आक्रमण से देश की सुरक्षा हेतु, देश में आए हैं।[198] भारत ने यद्यपि रूसी हस्तक्षेप की स्पष्ट शब्दों में निन्दा नहीं की[199] किन्तु प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी ने यह अवश्य कहा कि भारत विदेशी सैनिकों की उपस्थिति अथवा किसी अन्य प्रकार के हस्तक्षेप का अनुमोदन नहीं करता है। नगा व मिजोरम में चीन की कार्रवाई भारत को उस बुरे अनुभव का बोध कराती है।[200] किन्तु यदि हम अफगानिस्तान के इतिहास का अवलोकन करें तो पाएंगे कि यह सोवियत सैनिकों की उपस्थिति एक पक्षीय नहीं है बल्कि इतिहास साक्षी है कि प्राचीन काल से ही संकट काल के दौरान (अंग्रेजों के साथ युद्ध इत्यादि में) अफगानिस्तान अपने पड़ोसी शक्तिशाली देश रूस से मदद मांगता रहा है।[201]

श्री गुजराल ने अपने लेख में इसका कारण बताते हुए लिखा कि विदेश-नीति ख्याली पुलावों पर निर्भर नहीं होती। इन्हें बनाते समय राष्ट्रीय हितों का ध्यान रखना पड़ता है। सोवियत सेनाओं का अफगानिस्तान में आना भारत को स्वीकार नहीं था, परन्तु रूस के साथ अपने पुराने सम्बन्धों को कमजोर करने से देश की सुरक्षा को खतरा था।[202] दूसरी ओर जब पाकिस्तान की फौजी सरकार हमारी सीमा पर गड़बड़ करने पर तुली हो, तब पाक-अफगान सीमा पर जनरल जिया-उल-हक के लिए शान्ति सुनिश्चित करने की मांग भारत के राष्ट्रीय हितों के अनुरूप नहीं हो सकती।[203] फिर भी प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा राजीव गांधी के नेतृत्व में भारत ने अफगान समस्या के समाधान में अथक प्रयास किये। उन्होंने महाशक्तियों पर इसके लिए दबाव

---

197. वैदिक, वेद प्रताप, देखिए क्र. 13, पृ. 41-42
198. प्रावदा (सोवियत संघ), 13 जनवरी, 1980
199. बी.बी.सी. लन्दन समाचार 'आजकल', 2 फरवरी, 1987
200. टाइम्स ऑफ इण्डिया (दिल्ली), 25 जनवरी, 1981
201. गुजराल, इन्द्र कुमार, "इतिहास के आइने में अफगानिस्तान-सोवियत उपस्थिति एक पक्षीय नहीं है", दिनमान साप्ताहिक, 5-11 अगस्त, 1984, पृ. 12
202. गुजराल, इन्द्र कुमार, "भारत-अफगानिस्तान में रूस फौजी हस्तक्षेप के विरूद्ध रहा है", पंजाब केसरी (जालंधर), 13 जुलाई, 1988
203. कुमार, प्रदीप, "राजीव गांधी की सोवियत यात्रा कुछ अहम् सवाल", आज (कानपुर), 21 मई, 1985, नवभारत टाइम्स, 18 जुलाई, 1985

डाला और सम्बद्ध पक्षों तथा अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में समस्या के समाधान के लिए उचित सुझाव दिये। अफगान विदेशमंत्री ने भारतीय पक्ष को आश्वस्त करते हुए कहा कि यदि सभी प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष विदेशी हस्तक्षेप पर रोक लग जाए तो सोवियत सैनिकों की चरणबद्ध वापसी सम्भव हो सकती है। उन्होंने इस क्षेत्र में शान्ति के लिए विश्व के सबसे बड़े लोकतन्त्र तथा गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के अध्यक्ष भारत से कारगर भूमिका के लिए कहा।[204] भारत का मत था कि अमेरिका व चीन द्वारा असीमित मात्रा में पाकिस्तान की असंवैधानिक सरकार को शस्त्र सज्जित करना तथा अफगान विद्रोहियों को सैन्य तथा वित्तीय सहायता व प्रशिक्षण दिया जाना अफगानिस्तान में सोवियत हस्तक्षेप से कम खतरनाक कार्रवाई नहीं है, जिससे क्षेत्रीय असन्तुलन एवं हिंसा को बढ़ावा मिलेगा।[205] भारत सरकार द्वारा प्रकाशित 1983-84 की वार्षिक रिपोर्ट में कहा गया कि अभी भी अफगानिस्तान की स्थिति में कोई गुणात्मक परिवर्तन नहीं हुआ। संघर्ष की स्थिति चलती रही और विद्रोही ग्रुपों को पहले से ज्यादा वित्तीय एवं सैनिक सहायता प्राप्त होती रही। भारत सरकार अफगानिस्तान की स्थिति द्वारा इस क्षेत्र में शान्ति और स्थायित्व पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों की ओर निरन्तर चिन्तित बनी रही। भारत ने अफगानिस्तान की समस्याओं को बातचीत द्वारा राजनैतिक स्तर पर सुलझाने तथा एक व्यापक समाधान तलाशने के उद्देश्य से संयुक्त राष्ट्र महासचिव के प्रयासों का समर्थन किया है।[206]

मई 1986 में नए राष्ट्रपति नजीबुल्ला ने पाकिस्तान व ईरान में रह रहे 50 लाख शरणार्थियों को स्वदेश लौट आने के लिए आमन्त्रित किया। दूसरी ओर संयुक्त राष्ट्र के तत्वावधान में जेनेवा में हो रही वार्ता के अनुसार मई 1988 में रूसी सैनिकों की टुकड़ियों की वापसी प्रारम्भ हो गई। पाकिस्तान इंस्टीट्यूट ऑफ इण्टरनेशनल अफेयर्स की ओर से प्रकाशित 'पाकिस्तान होराइजन' में परवेज इकबाल चीमा ने लिखा कि पाकिस्तान के सामने बड़ी समस्या उन अफगान शरणार्थियों की है जो शायद अपने देश न लौटे। सम्भवतः पाकिस्तानियों और शरणार्थियों के बीच संघर्ष छिड़ जाए। अफगानिस्तान में भी शान्ति के आसार नहीं हैं क्योंकि सैनिकों की वापसी के पश्चात् भी अमेरिका व सोवियत संघ को वहाँ अपने समर्थकों को हथियार सप्लाई करने की पूरी छूट होगी।[207]

15 फरवरी, 1989 में रूसी सैनिकों के वापस जाने के पश्चात् भी मुजाहिदों ने क्रान्तिकारी गतिविधियाँ जारी रखी हैं। इसलिए अफगान राष्ट्रपति नजीब ने अपने मित्र देशों से अपील की

204. "अफगानिस्तान पाक से बिना शर्त सीधी वार्ता को तैयार", आज, 13 मई, 1985
205. वैदिक, वेद प्रताप, देखिए क्र. 14
206. वार्षिक रिपोर्ट 1983-84, भारतीय विदेश मन्त्रालय द्वारा प्रकाशित
207. जनसत्ता, 24 अप्रैल, 1987

है कि वे पाकिस्तानी विस्तारवाद से उनके देश की राजनैतिक स्वतन्त्रता की रक्षा करे।[208] काबुल में भारत की उपस्थिति हमेशा बड़ी मजबूत रही है। भारतीय पत्रकार और अफगान मीडिया अफगानिस्तान में सोवियत संघ की 10 वर्ष की उपस्थिति और अफगान लोगों पर इसके प्रभाव की चर्चा नहीं करते। यद्यपि यह निश्चय है कि अफगानिस्तान की धरती पर सोवियत उपस्थिति से एक राष्ट्र का गौरव आहत हुआ है, जिसने कभी विदेशी शासन को स्वीकार नहीं किया।[209]

उपर्युक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि भारत तथा अफगानिस्तान दोनों ही इतिहास में समान रूप से भागीदार रहे थे। इसलिए उन्होंने स्वतन्त्रता उपरान्त समान विदेशनीति का अनुसरण किया और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में एक दूसरे के विचारों का सर्मथन किया। परंस्पर मित्रवत् सम्बन्धों के तहत उन्होंने एक दूसरे की समस्याओं के प्रति अनुकूल रुख तथा उनके समाधान में उचित सहयोग प्रदान किया। किन्तु अफगानिस्तान के उत्तरोत्तर विकास तथा भारत-अफगान व्यापारिक सम्बन्धों के लिए आवश्यक है कि उनके पाकिस्तान के साथ सम्बन्ध सुधरें तभी यात्रा व व्यापार की सुविधाएं अफगानिस्तान को प्राप्त हो सकती हैं। अमेरिका, चीन व सोवियत रूस को भी तीनों देशों (भारत, पाकिस्तान व अफगानिस्तान) में स्थिति सामान्य व शान्तिपूर्ण बनाने के लिए मदद करनी चाहिए न कि सैनिक सामग्री देकर अस्थिरता फैलानी चाहिए। महाशक्तियों के मध्य चल रहे शीत युद्ध के दौर में शान्ति समर्थक भारत ने सदैव ही अफगानिस्तान के एक स्वतन्त्र गुटनिरपेक्ष व शक्तिशाली होने की कामना की है। अफगानिस्तान भारत के अच्छे पड़ोसी देशों में से एक है, अत: वहाँ शान्ति की स्थापना में उसका न्यस्त स्वार्थ है।

*****

---

208. पंजाब केशरी, (जालंधर), 13 फरवरी, 1989
209. अनवर, इकबाल, "पाक-अफगान परिसंघ बनाने के सुझाव को एक भारी षड्यन्त्र के रूप में देखा जाता है", पंजाब केसरी, 11 अप्रैल, 1989

चतुर्थ अध्याय

चतुर्थ अध्याय

भारत-अफगान सम्बन्ध 1947-52

वर्ष 1947 दक्षिण एशिया के इतिहास में विशेषकर भारतीय उपमहाद्वीप के राजनैतिक इतिहास में काफी महत्व रखता है। इस वर्ष भारतीय उपमहाद्वीप से ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासन का पतन हो गया। ब्रिटिश प्रभुसत्ता समाप्त होते ही भारत का दो भागों में विभाजन कर दिया गया, जिसके फलस्वरूप भारत एवं पाकिस्तान दो स्वतन्त्र व सार्वभौम राष्ट्रों का जन्म हुआ। उस समय द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त हो चुका था, पर विश्व-राजनीति शीत-युद्ध की लपटों में घिर चुकी थी।

द्वितीय विश्व युद्ध का समापन होते ही चार प्रमुख घटनाओं का घटित होना समकालीन राजनीति एवं आगामी विश्व-राजनीति के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा। प्रथम चरण में तत्कालीन औपनिवेशिक शक्तियों, जैसे- ब्रिटेन, फ्रांस, इटली तथा जर्मनी की शक्ति का ह्रास हुआ, फलतः एशिया एवं अफ्रीका में इन शक्तियों के अधीन उपनिवेश धीरे-धीरे आजाद होने लगे। इसके अतिरिक्त संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना एक अन्य महत्वपूर्ण घटना थी। लीग ऑफ नेशन्स की विफलता के कारण ही द्वितीय विश्वयुद्ध की लपटों ने विश्व को अपने में समेट लिया था। अतः युद्ध के तुरन्त बाद विश्व के राष्ट्रों नें मिलकर संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना की, ताकि मानव जाति को युद्ध की भीषणता से बचाया जा सके एवं शान्तिपूर्वक समस्याओं का समाधान किया जा सके। इसी संदर्भ में तीसरी प्रमुख घटना थी- शीत युद्ध का प्रारम्भ। वैसे तो महाशक्ति-प्रतिस्पर्धा विशेषकर ब्रिटेन तथा रूस में लगभग दो शताब्दियों से चली आ रही थी परन्तु दूसरे विश्वयुद्ध के पश्चात् सोवियत रूस एवं संयुक्त राज्य अमेरिका के परस्पर विरोधी गुटों के रूप में विश्व राजनीति में छाने से वे एक दूसरे के प्रतिद्वन्दी के रूप में सामने आए। दोनों महाशक्तियों में अपनी-अपनी शक्ति विस्तार कि लिए होड़ लगी कि नूतन स्वतन्त्र देशों को अपने प्रभाव में लाया जाए। इसके लिए उन्होंने सैनिक सन्धियों तथा आर्थिक सहायता को माध्यम बनाया। इस प्रतिस्पर्धा ने शीत युद्ध का रूप धारण कर लिया। चौथी प्रभावशाली एवं मुख्य घटना थी- इन नूतन स्वतन्त्र राष्ट्रों का यह संकल्प कि वे महाशक्तियों की सैन्य गुटों की राजनीति से अलग रह कर एक स्वतन्त्र एवं गुटनिरपेक्ष विदेशनीति का अनुसरण करेंगे, ताकि वे अपनी सार्वभौमिकता, क्षेत्रीय अखण्डता एवं स्वतन्त्रता की रक्षा करते हुए अपनी राजनैतिक एवं आर्थिक प्रगति की ओर शान्तिपूर्ण रूप से अग्रसर हो सकें। नूतन स्वतन्त्र राष्ट्रों के इसी

संकल्प ने बाद में तटस्थता या असंलग्नता की नीति का नाम धारण कर लिया।

(क) पाकिस्तान का उदय एक नया तत्त्व

भारतीय उपमहाद्वीप में पाकिस्तान का उदय होने से पूर्व ब्रिटिश भारत एवं अफगानिस्तान परस्पर पड़ोसी थे तथा उनकी सीमायें एक दूसरे के साथ लगती थीं, किन्तु पाकिस्तान के जन्म के पश्चात् भारत का अफगानिस्तान के साथ सीधा सम्पर्क (विशेषकर थलमार्ग) टूट गया।

प्रारम्भ में यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि अब भारत-अफगान सम्बंध पाकिस्तान पर निर्भर करने लगे। भारत-पाकिस्तान सम्बन्धों का प्रभाव पाकिस्तान-अफगानिस्तान सम्बन्धों एवं भारत-अफगानिस्तान सम्वंधों पर निर्भर करने लगा। भारत एवं अफगानिस्तान के परस्पर सम्बंध भारतीय उपमहाद्वीप के विभाजन से पूर्व मधुर थे तथा दोनों ही देशों में परस्पर किसी भी बात पर मतभेद नहीं था, परन्तु पाकिस्तान का उदय होने से एक नए तत्त्व ने जन्म लिया। पाकिस्तान की अफगानिस्तान के साथ सम्बंधों की शुरूआत ठीक नहीं हुई, क्योंकि पख्तून प्रश्न पर दोनों देशों में मतभेद हो गया। इसी तरह कश्मीर समस्या को लेकर उत्पन्न तनाव के कारण भारत-पाक सम्बंधों में माधुर्य नहीं आ सका। पख्तून समस्या पर भारतीय दृष्टिकोण का विश्लेषणात्मक अध्ययन आगामी पृष्ठों पर किया गया है। यहाँ पर भारत-अफगानिस्तान के मध्य 1947 से 1952 के सम्वंधों के विकास का आलोचनात्मक अध्ययन किया जा रहा है।

1946-47 की अवधि में जब ब्रिटिश शासकों द्वारा भारत में सत्ता-हस्तांतरण की तैयारियाँ चल रही थीं, तब अफगानिस्तान ने 1946 में शाह महमूद के नेतृत्व में नई सरकार ने सत्ता संभाल ली थी। मार्च-अप्रैल 1947 में जब नई दिल्ली में एशियाई सम्बन्ध सम्मेलन का आयोजन किया गया, उसमें अफगान प्रतिनिधि मंडल के नेता अब्दुल अजीज खान ने भारत एवं अफगानिस्तान के बीच मित्रतापूर्ण संम्बधों पर बल देते हुए कहा कि "मित्रता के जो सूत्र हमें परस्पर बाँधे हुए है, वे असली एवं सुदृढ़ है।"[1]

भारतीय उपमहाद्वीप में विभाजन के उपरान्त साम्प्रदायिक दंगे भड़क उठे। अफगानिस्तान सरकार ने दंगे से पीड़ित हिन्दू एवं सिक्खों को न केवल अपने देश में शरण दी बल्कि उनकी सुरक्षा का उचित प्रबन्ध किया। इसी तरह भारत ने भी दंगों से पीड़ित अफगान शरणार्थियों को सुरक्षा प्रदान की। इस सम्बन्ध में तत्कालीन भारतीय प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने 19 दिसम्बर, 1950 को लोकसभा में बताया कि "अफगान शरणार्थियों ने भारत में शरण ली

---

1. रिपोर्ट ऑफ द प्रोसिडिंग्स एण्ड डाक्यूमैंट्स ऑफ द फर्स्ट एशियन रिलेशन्स कानफ्रेंस (नई दिल्ली), 1948, पृ. 32-33

है, यद्यपि दोनों देशों में इस तरह की कोई सन्धि नहीं है फिर भी इन अफगान शरणार्थियों की सुरक्षा का जिम्मा भारत सरकार का है। इनको यथोचित पोषण-भत्ता दिया गया।"[2]

नई दिल्ली एवं काबुल के परस्पर सम्बन्धों को मजबूत करने की दृढ़ इच्छा का सबूत इस बात से मिलता है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के तुरन्त पश्चात् भारत ने अफगानिस्तान के साथ कूटनीतिक सम्बन्ध कायम किए । दिसम्बर 1949 तक स्वतंत्र भारत एवं अफगानिस्तान के मध्य सम्बंध 1921 की ब्रिटिश-अफगान सन्धि के प्रविधानों पर ही आधारित थे। दोनों देशों के पारस्परिक मित्रतापूर्ण सम्बंधों में नए अध्याय का सूत्रपात उस समय हुआ, जब 4 जनवरी, 1950 को भारत एवं अफगानिस्तान ने एक नई मित्रतापूर्ण सन्धि पर हस्ताक्षर किए, जिसके अन्तर्गत दोनों देशों में कूटनीतिक एवं राजनैतिक सम्बन्ध कायम हो गए, जिनकी प्रथमावधि पाँच वर्ष थी, परन्तु इसे अनिश्चित काल तक जारी रखा जा सकता था।[3]

इस सन्धि की भूमिका में भारत एवं अफगानिस्तान की सरकारों ने दोनों देशों के मध्य सदियों से चले आ रहे पारस्परिक मित्रतापूर्ण सम्बन्धों का हवाला देते हुए इन सम्बन्धों को अधिक प्रगाढ़ करने एवं परस्पर सहयोग को अधिक बढ़ावा देने के लिए इस मैत्री सन्धि को सम्पन्न करने की तीव्र इच्छा जाहिर की।[4] इस मैत्री सन्धि के प्रथम प्रविधान के अन्तर्गत दोनों देशों की स्वतन्त्रता एवं अधिकारों को मान्यता प्रदान की गई। द्वितीय प्रविधान के अन्तर्गत दोनों देशों ने आपस में शांति एवं मित्रता को चिरस्थायी बनाने का संकल्प किया तथा उन के मध्य सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्धों को और अधिक मजबूत करने हेतु प्रयत्नशील रहने के लिए वायदा किया।[5] भारत-अफगान मैत्री सन्धि के तृतीय प्रविधान के भाग 'अ' के अन्तर्गत दोनों देशों ने पारस्परिक कूटनीतिक सम्बन्ध स्थापित करने हेतु कूटनीतिज्ञों के चयन के सम्बन्ध में परस्पर विचार-विमर्श करने पर बल दिया। इसी प्रविधान के भाग 'ब' के अन्तर्गत दोनों देशों के कूटनीतिज्ञों को एक दूसरे के देश में अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अन्तर्गत उपलब्ध सुविधाओं एवं अधिकारों की बात दोहराई गई।[6] मैत्री सन्धि के तृतीय प्रविधान के भाग 'स' के अन्तर्गत दोनों देशों में परस्पर प्रधान वाणिज्य दूत, उपवाणिज्य दूत तथा वाणिज्य प्रतिनिधि की दोनों सरकारों की सहमति से विभिन्न स्थानों पर नियुक्तियाँ करने की बात कही गयी। इस सन्धि में दोनों देशों में पहले

---

2. लोक सभा डिबेट्स, खण्ड, अंक 24, 19 दिसम्बर, 1950, कॉलम 1049
3. भारत-अफगान मैत्री सन्धि (1950) के पूर्ण विवरण के लिए देखिए- लोक सभा सचिवालय, फॉरेन पॉलिसी ऑफ इण्डिया-टेक्सट्स ऑफ डाक्यूमेंट्स (नई दिल्ली), 1958, पृ. 17-18
4. वही, पृ. 17
5. वही
6. वही, पृ. 18

से मौजूद व्यापार सम्बंधी कार्यालय (ट्रेड एजेन्सीज) तथा नये व्यापार संबंधी कार्यालय खोलने की एक दूसरे को अनुमति प्रदान की गई। इस सन्धि के चतुर्थ प्रावधान के अन्तर्गत दोनों देशों में पारस्परिक सांस्कृतिक, कृषि एवं औद्योगिक सम्बन्धों को और अधिक मजबूत करने पर भी बल दिया गया।[7]

उपर्युक्त प्रविधानों की व्यवस्था एवं स्पष्टीकरण के विषय में कहा गया कि यदि दोनों देशों के मध्य कोई मतभेद उत्पन्न हो जाए तो इसके लिए दोनों सरकारें परस्पर सहयोग से उसका निबटारा करेंगी अथवा दोनों की मंजूरी पर किसी तीसरे के माध्यम से इसकी व्याख्या कराई जाएगी, इसका भी प्रविधान सन्धि में रखा गया। इस सम्बंध में यह स्पष्ट कर दिया गया कि मैत्री सन्धि की पुष्टि दोनों सरकारों की मान्यता के बाद ही होगी। भारत-अफगान मैत्री सन्धि पर टिप्पणी करते हुए हिन्दुस्तान टाइम्स ने लिखा:- "यह सन्धि भारतीय विदेशनीति की यथार्थता (सत्यता) को प्रतिबिम्बित करती है। इसमें पड़ोसी देशों के साथ सम्बन्धों का सहयोग के आधार पर एक नया आकार प्रदर्शित किया गया। जिसका उद्देश्य दोनों देशों की जनता के बीच प्रबल (दृढ़) पारस्परिक मधुर सम्बन्धों को प्रारम्भ किया जाए"।[8]

जिस समय भारत-अफगान मैत्री सन्धि सम्पन्न हुई, उस समय भारतीय उपमहाद्वीप में राजनैतिक वातावरण तनावपूर्ण था। पाकिस्तान के सम्बन्ध भारत तथा अफगानिस्तान दोनों देशों के साथ विद्वेषपूर्ण थे। इस संदर्भ में भारत-अफगान मैत्री सन्धि के प्रति पाकिस्तान को चिन्तित होना स्वाभाविक था। भारत-अफगान मैत्री संधि में एक दूसरे के लिए आन्तरिक संकट एवं बाहरी आक्रमण की स्थिति में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष किसी भी प्रकार की सहायता का प्रविधान नहीं था। इस सम्बन्ध में 1 फरवरी, 1950 में लोक सभा में टी. हुसैन ने कहा कि "ऐसे मौके पर जबकि पाकिस्तान के सम्बन्ध भारत एवं अफगानिस्तान के साथ मधुर नहीं है क्या भारत सरकार अफगानिस्तान के साथ पाकिस्तान या अन्य किसी और देश से हमले की स्थिति में एक दूसरे की सहायता करने के लिए सन्धि पर विचार कर रही है?[9] " भारत सरकार ने इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं दिया तथा लोक सभा अध्यक्ष ने इस सवाल को आगे नहीं बढ़ने दिया।

पाश्चात्य प्रेक्षकों, विशेषकर बरनरलेवी का यह मत है कि भारत-अफगान मैत्री सन्धि का उद्देश्य पाकिस्तान के विरूद्ध दोनों देशों का आपस में इकट्ठा होना था।[10] भारत

7. फॉरेन पॉलिसी ऑफ इण्डिया-टेक्सट्स ऑफ डाक्यूमेंट्स (नई दिल्ली), 1958, पृ. 17-18
8. हिन्दुस्तान टाइम्स (नई दिल्ली), 6 जनवरी, 1950
9. लोक सभा डिबेट्स, खण्ड-1, भाग 1, 1 फरवरी, 1950, कॉलम 13
10. वरनरलेवी "द इण्डिया इन एशिया" (मिन्यापॉलिस 1962), पृ. 70

एवं अफगानिस्तान ने इस तर्क को मिथ्या तथा आधारहीन बताया। भारत में नियुक्त अफगान राजदूत सरदार नजीबुल्ला ने इस सम्बन्ध में स्पष्टीकरण देते हुए कहा कि यह मानना कि भारत-अफगान मैत्री सन्धि पाकिस्तान के अहित में थी, एक बेबुनियाद भ्रम है।[11]

इस सम्बन्ध में भारत का दृष्टिकोण स्पष्ट करते हुए तत्कालीन प्रधानमन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने 17 मार्च, 1951 को भारतीय संसद में घोषणा की कि "भारत की अफगानिस्तान के साथ मैत्री सन्धि परस्पर सम्बन्धों को आगे बढ़ाने के उद्देश्य से की गई थी"।[12] उन्होंने आगे कहा "इतिहास साक्षी है कि हमारे राजनैतिक व सांस्कृतिक सम्बन्ध लम्बे समय से रहे हैं। स्वतन्त्र भारत व अफगानिस्तान ने न केवल प्राचीन सम्बन्धों को पुनः दोहराया है, बल्कि वास्तव में उसके सम्वन्धों में प्रगति हुई है"।[13]

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि यद्यपि पाकिस्तान के स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में उदय होने से भारत एवं अफगानिस्तान के मघ्य सीधा तालमेल समाप्त हो गया था, परन्तु दोनों देशों की आपसी सम्बन्धों को मज़बूत करने की इच्छा ने इस अवरोध को लगभग क्षीण हो कर दिया। 4 जनवरी, 1950 में की गई भारत-अफगान मैत्री सन्धि ने पारस्परिक सौहार्दपूर्ण एवं मित्रता के सम्बन्धों पर अपनी अमिट छाप अंकित कर दी। पाकिस्तान के उदय का प्रभाव भारत-अफगान राजनैतिक सम्बन्धों पर कम एवं आर्थिक सम्बन्धों पर अधिक पड़ा। जिनका विश्लेषण आगामी पृष्ठों में किया गया है।

(ख) पख़्तून-विवाद पर भारतीय दृष्टिकोण

पख़्तून विवाद अफगानिस्तान एवं पाकिस्तान के मध्य मुख्य विवादास्पद विषय है। पख़्तूनिस्तान का क्षेत्र जिसमें पख़्तून निवासियों का बहुमत है, का अनुमानित क्षेत्रफल 140,000 वर्गमील है, जो उत्तर में पामीर से लेकर अरब सागर तथा दक्षिण में ईरान की सीमाओं को छूता हुआ उत्तरी पश्चिमी सीमांत क्षेत्र बलूचिस्तान तथा अन्य क्षेत्रों को जो अब पाकिस्तान के अधीन है, तक फैला हुआ है।[14] पख़्तून विवाद पर भारतीय दृष्टिकोण का अवलोकन करने से पूर्व इस समस्या को ऐतिहासिक दृष्टिकोण से देखना अनिवार्य है।

भारतीय उपमहाद्वीप के विभाजन से पूर्व तथाकथित पख़्तूनिस्तान क्षेत्र ब्रिटिश भारत का

11. अफगान राजदूत का वक्तव्य लोक सभा में उद्धृत किया गया, देखिए- लोक सभा डिबेट्स, खण्ड 7, भाग 1, 21 नवम्बर-23 दिसम्बर, 1955, कॉलम 1141-42
12. जवाहरलाल नेहरू, 'स्पीचिज़ 1945-47', भाग 1, (नई दिल्ली), 1955, पृ. 289
13. नेहरू, जे. एल., "इण्डियाज फॉरेन पॉलिसी", पृ. 289
    -सिंह हरमेंन्दर, "इण्डियाज एण्ड नेबर्स", भौमिक, एम.सी.,"इण्डो-अफगान रिलेशन्स"
14. धाजवाक, ए.आर., "पख़्तूनिस्तान" (लन्दन 1956), पृ. 5-7

अंग था। ब्रिटिश सरकार एवं अफगान सरकार में इस क्षेत्र को लेकर परस्पर मतभेद रहता था। पख्तूनिस्तान में पड़ने वाले इलाके अट्ठाहरवीं शताब्दी के मध्यान्तर में अफगानिस्तान साम्राज्य का अंग थे। जब महाराजा रणजीत सिंह ने अफगानिस्तान पर आक्रमण किया तो यह क्षेत्र सिक्ख साम्राज्य का अंग बन गए। महाराजा रणजीत सिंह की मृत्यूपरान्त सिक्ख साम्राज्य का पतन हो गया तथा यह क्षेत्र ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत आ गया। प्राय: इस क्षेत्र में गड़बड़ होती रहती थी, जिसके फलस्वरूप अफगानिस्तान एवं ब्रिटिश सरकार के मध्य परस्पर सम्बन्धों में तनाव उत्पन्न हो जाता था। अन्त में ब्रिटिश सरकार ने अफगान सरकार के साथ कूटनीतिक चाल चल कर 12 नवम्बर, 1893 को डुरेण्ड समझौता कर लिया। इस समझौते के अन्तर्गत तथाकथित पख्तूनिस्तान का अधिकांश क्षेत्र ब्रिटिश शासन के अधीन आ गया। कुछ विशेषज्ञों का मत है कि ब्रिटेन ने दबाव डालकर डुरेण्ड समझौता कराया।[15] तत्कालीन अफगान शासक अमीर अब्दुर्रहमान जो डुरेण्ड समझौते से अप्रसन्न थे, ने ब्रिटिश सरकार को अपनी नाराजगी प्रगट करते हुए लिखा 'यदि तुम इनको (पख्तूनों को) मेरे क्षेत्राधिकार से अलग करते हो तो न तो यह तुम्हारे किसी काम के रहेंगे और न ही मेरे। तुम इनके साथ हमेशा लड़ाइयों में उलझे रहोगे और ये सदा लूटमार करते रहेंगे'।[16]

आगामी वर्षो में भी डुरेण्ड समझौते को लेकर अफगानिस्तान एवं ब्रिटिश सरकार के मध्य मतभेद चलता रहा, परन्तु वास्तविक स्थिति में कोई अन्तर नहीं आया। 1944 में जब द्वितीय विश्व युद्ध में मित्र राष्ट्रों की विजय निश्चित प्रतीत होने लगी तथा भारत में चल रहे राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम ने एक निर्धारित मोड़ ले लिया, जिससे ऐसा आभास होने लगा कि शीघ्र ही भारत को स्वतंत्रता मिल जाएगी, ऐसे मौके पर अफगान सरकार ने ब्रिटिश भारत की सरकार से इच्छा प्रकट की कि डुरेण्ड लाइन के दोनों ओर रह रहे पख्तूनवासियों का भविष्य निर्धारित करते समय अफगान सरकार से विचार-विमर्श किया जाए।[17] इस विषय पर ब्रिटिश सरकार ने मत व्यक्त किया कि डुरेण्ड रेखा एक अन्तर्राष्ट्रीय सीमा होने के कारण अफगानिस्तान का उसमें कोई अधिकार नहीं है।

20 फरवरी, 1947 को ब्रिटिश सरकार ने घोषणा की कि भारतीय उपमहाद्वीप को जून 1947 तक स्वतंत्र किया जाएगा। यह तय किया गया कि भारतीय उपमहाद्वीप का विभाजन दो भागों में भारत एवं पाकिस्तान के रूप में किया जाएगा। 3 जून, 1947 को ब्रिटिश संसद ने

---

15. धाजवाक, ए.आर., ''पख्तूनिस्तान'' (लन्दन 1956), पृ. 14, लूईसडुप्री, ''अफगानिस्तान'' (प्रिस्टर्न 1973), पृ. 489
16. अमीर अब्दुर्रहमान, ''द आटोबायोग्राफी खण्ड-1'', (लन्दन 1909), पृ. 198
17. गाउस, अब्दुल सैयद, ''द फॉल ऑफ अफगानिस्तान'', (वाशिगंटन 1968), पृ. 66

एक प्रस्ताव पास किया जिसके अन्तर्गत भारतीय जनता को यह अधिकार दिया गया कि वह राजकीय (रियासतों) राज्यों को छोड़कर स्वेच्छा से भारत या पाकिस्तान में रहने का निश्चय करें।[18] रियासती राज्यों के लिए तीन राहों में से एक का चयन करना था, (1) भारत में शामिल होना, (2) पाकिस्तान में शामिल होना, (3) कुछ निश्चित अवधि के लिए स्वतंत्र रहना, जब तक यह फैसला न किया जाए कि अमुक रियासत भारत में शामिल होना चाहती है या पाकिस्तान में।[19] इस प्रस्ताव के अन्तर्गत उत्तरी-पश्चिमी सीमान्त देश जो कि ब्रिटिश प्रशासन के अधीन था, का भविष्य जनमत संग्रह द्वारा ही निश्चित किया जा सकता था। इस अवसर पर अफगानिस्तान सरकार ने सुझाव दिया कि (उत्तरी-पश्चिमी सीमान्त देश) इस प्रान्त को भी अन्य रियासतों की तरह "अफगानिस्तान में शामिल होने या अलग पख्तून राज्य के रूप में अपना अस्तित्व बनाने का अधिकार दिया जाए"।[20] परन्तु ब्रिटिश सरकार ने अफगान सुझाव अमान्य कर दिया।

भारत में महात्मा गांधी ने वायसराय को 29 जून, 1947 को एक पत्र लिखा कि "बादशाह खान एक स्वतंत्र पख्तूनिस्तान के पक्ष में आन्दोलन चलाने जा रहे हैं।"[21] अफगान सरकार ने भी "स्वतंत्र पख्तूनिस्तान आन्दोलन" को अपना समर्थन देना आरम्भ कर दिया है।[22] परन्तु ऐसा कोई तथ्य नहीं मिलता जिससे यह सिद्ध हो सके कि अफगान सरकार पख्तूनों के लिए अलग राज्य की स्थापना के पक्ष में थी। अफगान सरकार का मुख्य उद्देश्य डुरेण्ड लाइन की कमियों को दूर करवाना था।

कुछ पाकिस्तानी लेखकों ने अफगान नेताओं के समाचार पत्रों में छपे वक्तव्यों के आधार पर सिद्ध करने का प्रयास किया है कि अफगान सरकार पख्तून क्षेत्र को अफगानिस्तान में शामिल करने की इच्छुक थी।[23] 21 जून, 1947 को तत्कालीन अफगान प्रधानमंत्री ने बम्बई में एक प्रेस-सम्मेलन में कहा कि "यदि एक स्वतंत्र पख्तूनिस्तान की स्थापना नहीं की जा सकती तो सीमान्त प्रान्त को अफगानिस्तान में शामिल हो जाना चाहिए.....।" [24]

पख्तून नेताओं तथा अफगानिस्तान के विरोध के बावजूद ब्रिटिश सरकार ने उत्तरी-पश्चिमी सीमान्त प्रान्त में 6 से 19 जुलाई, 1947 के मध्य जनमत संग्रह करवा दिया।[25] बादशाह खान

18. आरनोल्ड फ्लेचर,"अफगानिस्तान हाइवे ऑफ कान्केस्ट", (कारनल), 1966, पृ. 249
19. डुप्री, देखिए क्र. 15, पृ. 490
20. फ्लैचर, देखिए क्र. 18
21. "गांधीजी'स कॉरेसपोन्डेन्स विद द गवर्नमैन्ट 1944-47", (अहमदाबाद 1959), पृ. 374
22. जाफरी, एच.ए.एस. "इण्डो-अफगान रिलेशन्स", 1947-67, (नई दिल्ली 1976), पृ. 67
23. रिजवी, मुजतवा, "पाक-अफगान रिलेशन्स सिन्स 1947 एन एनालेसिस", पाकिस्तान होराइज़न (कराची), खण्ड 32, अंक 4, 1979, पृ. 361
24. द स्टेट्समैन, 22 जून, 1947
25. प्यारेलाल, "महात्मा गांधी: द लास्ट फेस", खण्ड 2, (अहमदाबाद 1958), पृ. 272

के नेतृत्व में अधिकांश पख्तून वासियों के बहिष्कार के परिणम स्वरूप केवल 50.99 प्रतिशत लोगों ने ही मतदान किया। पाकिस्तान के विलय के पक्ष में 289244 मत पड़े, जबकि भारत के पक्ष में केवल 2814 मत पड़े।[26] इस जनमत संग्रह के आधार पर उत्तरी पश्चिमी सीमान्त प्रान्त 14 अगस्त, 1947 में पाकिस्तान का भाग बन गया। किन्तु 12 अगस्त, 1947 को अफरीदी कबीले के लोगों ने तिराह बाग नामक स्थान पर स्वतंत्र पख्तूनिस्तान की स्थापना की घोषणा कर दी।[27] अफगानिस्तान सरकार ने "स्वतंत्र पख्तूनिस्तान राज्य" को मान्यता प्रदान कर दी।[28]

पाकिस्तान की स्थापना तथा उत्तरी-पश्चिमी सीमान्त प्रान्त का इसमें विलय एक ऐसी घटना थी, जिसने पाक-अफगान सम्बन्धों का सूत्रपात ही तनावपूर्ण वातावरण में किया। अफगानिस्तान ने नई पाकिस्तान सरकार को तुरन्त मान्यता प्रदान नहीं की। सितम्बर 1947 में जब पाकिस्तान का संयुक्त राष्ट्रसंघ की सदस्यता का प्रश्न उठा तो अफगानिस्तान ने इसका विरोध किया। संयुक्त राष्टसंघ महासभा में पाकिस्तान की सदस्यता का विरोध करते हुए अफगान प्रतिनिधि हुसैन अजीज ने कहा कि "हम उत्तरी-पश्चिमी सीमान्त प्रान्त को पाकिस्तान का भाग मानने से इंकार करते है। जब तक सीमान्त प्रान्त के लोगों को बिना किसी दबाव या प्रभाव के स्वेच्छा से यह निश्चित करने का अधिकार नहीं दिया जाता कि वे स्वतंत्र रहना चाहते है या पाकिस्तान के साथ, हम पाकिस्तानी दावे का समर्थन नहीं कर सकते।"[29]

पाकिस्तान एवं अफगान सरकारों के मध्य विचार-विमर्श के पश्चात् 20 अक्टूबर, 1947 को अफगानिस्तान ने राष्ट्रसंघ में अपना विरोध वोट वापस ले लिया।[30] परन्तु अफगान सरकार की पख्तून विवाद पर मूलभूत नीति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

जहाँ तक 1947 से 1952 की अवधि में पख्तून विवाद पर स्वतंत्र भारत की प्रतिक्रिया का प्रश्न है तो इस विषय में यही कहना तर्कसंगत होगा कि इस दौरान भारत सरकार ने निष्पक्ष नीति का अनुसरण किया। इस विषय में 17 मार्च, 1950 में प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने कहा "सीमान्त प्रान्त में रहने वाले लोगों के भविष्य के बारे में हम भी दिलचस्पी रखते है। हमारे इन लोगों से पुराने संबंध है तथा कोई भी राजनैतिक परिवर्तन हमारे इन सम्बंधों को नहीं बिगाड़ सकता।[31]

---

26. न्यूयार्क टाइम्स, 21 जुलाई, 1947
27. वही, 21 नवम्बर, 1949
28. जाफरी, एच.ए.एस., ''इण्डियाज पख्तूनिस्तान पॉलिसी", साऊथ एशियन स्टडीज़, (जयपुर), खण्ड 5, अंक 15, जनवरी, 1970, पृ. 55
29. यू.एन. ऑफिशियल रिकार्ड्स ऑफ जनरल असैम्बली, द्वितीय सत्र, खण्ड-1, 16 सितम्बर से 13 नवम्बर, 1947, यू.एन. डाक्यूमेंट, ए/399, पृ. 3-4
30. गाऊस, देखिए क्र. 17, पृ. 70
31. नेहरू, जवाहरलाल, ''फॉरेन पॉलिसी: सिलेक्टेड स्पीचिज़ 1946-61" (नई दिल्ली 1961), पृ. 289

किन्तु इस अवधि में भारत का रूख संकोचपूर्ण ही रहा। न तो भारत सरकार ने अफगान दृष्टिकोण का समर्थन किया तथा न ही "स्वतन्त्र पख्तूनिस्तान" की मांग का अनुमोदन किया। अपने जीवन-काल एवं भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के वर्षो में गांधी जी ने खान अब्दुल गफ्फार खान के "आजाद पख्तूनिस्तान" की माँग का समर्थन किया था। परन्तु वे पख्तून क्षेत्र के अफगानिस्तान में विलय के पक्ष में नहीं थे।[32]

स्वतन्त्रता के पश्चात् जहाँ एक ओर भारत में शरणार्थियों का पुनर्वास, साम्प्रदायिकता तथा अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भारतीय भूमिका का स्पष्टीकरण इत्यादि कुछ प्रमुख विषय थे, वहीं भारत- पाक के मध्य पारस्परिक सहयोग तत्कालीन समय की आवश्यकता थी। अन्त में महत्वपूर्ण तथ्य यह था कि पख्तून विवाद पर अफगान दृष्टिकोण का समर्थन भारत की कश्मीर नीति को कमजोर कर देता। इन्हीं कारणों को दृष्टि में रखते हुए भारत ने पख्तून समस्या पर 1947 से 1952 की अवधि में विशेष रूचि नहीं दिखाई और न ही किसी विशेष नीति का अनुसरण किया।

(ग) अन्तर्राष्ट्रीय समस्याएं व भारत-अफगानिस्तान

द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् नवोदित राज्यों को अपने प्रभाव क्षेत्र में लाने की पश्चिमी शक्तियों में होड़ स्वाभाविक थी, क्योंकि ये सभी देश युद्ध के कारण अपनी द्वारा जर्जर अर्थव्यवस्था का पुनर्निर्माण करने के लिए इन विकसित शक्तिशाली देशों की सहायता पर आश्रित थे। ऐसी स्थिति में उनके अन्तर्विरोधों की अभिव्यक्ति का प्रश्न ही नहीं उठ सकता था। स्पष्टतया भारत जैसे नवोदित राष्ट्र के लिए इस प्रकार का अन्तर्राष्ट्रीय वातावरण उसकी सुरक्षा एवं विकास के लिए अनुकूल नहीं हो सकता था।[33] भारत के साथ अफगानिस्तान ने भी गुटनिरपेक्षता व शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीति को स्वीकार किया और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर दोनों ही देशों ने सामान्यत: उपनिवेशवाद तथा साम्राज्यवाद के खिलाफ आवाज उठाई। यद्यपि भारत तथा अफगानिस्तान ने इन शक्तियों के सैनिक गठबन्धनों को स्वीकार नहीं किया, तथापि समय-समय पर दोनों ही देशों ने इन महाशक्तियों से तकनीकी सहयोग अवश्य लिए।

द्वितीय विश्वयुद्ध के उपरान्त रूस एवं अमेरिका के बीच प्रारम्भ हुए शीत युद्ध के दौर से एशियाई राजनीति प्रभावित हुए बिना न रह सकी। पाकिस्तान द्वारा अमरीकी गुट में शामिल होना तथा उसके सैनिक गठबन्धनों की सदस्यता स्वीकार करना, गुटनिरपेक्ष भारत तथा

---

32. प्यारेलाल, देखिए क्र. 25, पृ. 28
33. चतुर्वेदी, दिनेशचन्द्र, ''भारतीय शासन और राजनीति", (मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, 1973)

अफगानिस्तान दोनों के लिए चिन्ता का विषय था। दूसरी ओर इस क्षेत्र चीन की बढ़ती शक्ति से भारत का चिन्तित होना भी स्वाभाविक था। विश्वव्यापी समस्याओं की आशंकाओं और संगठित रहने की आवश्यकता को दृष्टि में रखते हुए श्री जवाहरलाल नेहरू ने दिल्ली में मार्च, 1947 में एशियाई सम्मेलन बुलाया था, जबकि उस समय तक भाग लेने वाले कई अन्य देश स्वाधीन भी नहीं हुए थे। भारत ने अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को लोकतान्त्रिक स्वरूप देने के लिए मुक्ति आन्दोलन का समर्थन किया तथा सहअस्तित्व और संघर्षो के शांतिपूर्ण समाधान की हिमायत की।[34]

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में श्री नेहरू की कल्पना थी कि उपनिवेशवाद की समाप्ति के बाद दक्षिण पूर्व एशिया के देश भारत का नेतृत्व स्वीकार कर लेंगे और कोई बड़ा संघ बन जाएगा। लेकिन 1947 मे एशियाई सम्मेलन में भी इस क्षेत्र के छोटे-छोटे राष्ट्रों ने भारत और चीन के सम्भावित वर्चस्व के विरूद्ध चेतावनी दे दी थी। यद्यपि भारत, दक्षिण पूर्व एशिया में क्षेत्रीय संगठन का निर्माण नहीं कर सका। परन्तु 1947 से 1949 में उसने इण्डोनेशिया की स्वतन्त्रता का डटकर समर्थन किया, गुटनिरपेक्ष कम्पूचिया से सम्बंध स्थापित किए, हिन्द चीन में शान्ति स्थापित करने के लिए विशेष प्रयत्न किए तथा होचीमिन्ह के संघर्ष का विरोध नहीं किया।[35] तिब्बत के प्रश्न को लेकर भारत और चीन सम्बन्धों में हमेशा के लिए दरार पड़ गई। 1951 में तिब्बत को चीन में मिलाए जाने के प्रश्न पर भारत ने चीन की तीव्र भर्त्सना की। चूँकि अफगानिस्तान भी स्वतंत्रता का पक्षधर है, इसलिए उसने तिब्बत के प्रश्न पर भारत की नीति का समर्थन किया।

भारत ने अमेरिका की औपनिवेशिक नीतियों का समर्थन कभी भी नहीं किया। 1949 में चीन में गृह-युद्ध के पश्चात् कम्युनिष्ट सरकार सत्ता में आई तो भारत ने अमरीकी इच्छा के विरूद्ध न केवल चीनी राज्य को मान्यता दी, बल्कि संयुक्त राष्ट्रसंघ में उसे स्थान दिलाने का प्रयत्न किया। 19 जनवरी, 1950 में अफगान सरकार ने भी साम्यवादी चीन के जनवादी गणतंत्र को आधिकारिक रूप में मान्यता प्रदान कर दी।[36] 1949 में इजराइल के संयुक्त राष्ट्र-संघ में प्रवेश के सम्बंध में अफगानिस्तान ने किसी महाशक्ति के दबाव के चक्कर में मत देने की अपेक्षा अपना निष्पक्ष विचार प्रस्तुत किया।[37] 1950 में कोरियाई युद्ध में भी भारत तथा

---

34. 'गुटनिरपेक्षता और स्वाधीनता', गुटनिरपेक्ष देशों के विदेश मंत्रियों के सम्मेलन में प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी का 8 फरवरी, 1981 को नई दिल्ली में भाषण ''गुट निरपेक्षता की सार्थकता", प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी के विचार 23, (भारत सरकार द्वारा प्रकाशित)
35. वैदिक, डा. वेद प्रताप, ''भारतीय विदेश नीति-नये दिशा संकेत", आग्नेय एशिया उपेक्षा की नीति, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृ. 47
36. इस्लाह, 14 जनवरी, 1950
37. ''ईयर बुक ऑफ द यूनाईटेड नेशन्स", 21 सितम्बर, 1948 से 31 दिसम्बर, 1949, पृ. 405

अफगानिस्तान[38] ने सोवियत संघ या अमेरिका का पक्ष न लेकर निष्पक्ष मत व्यक्त किया। इसी कारण भारत तथा अफगानिस्तान को समय-समय पर इन महाशक्तियों का कोपभाजन बनना पड़ा।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत ने राष्ट्रमण्डल में रहने का निर्णय किया। भारत का स्वाधीनता संग्राम किसी देश या जनता के विरूद्ध नहीं था, बल्कि साम्राज्यवाद के विरूद्ध था। भारत ने संकल्प किया कि ऐतिहासिक सम्बंधों को तोड़ने के बजाय हम न केवल अपने देश की भलाई के लिए, बल्कि व्यापक हित में मैत्री सहयोग और सद्भावना का एक नया स्वरूप स्थापित करेंगें। 1949 का लन्दन सम्मेलन राष्ट्रमण्डल के विकास में एक नवीन मोड़ था।[39]

दक्षिण एशिया में पाकिस्तान का उदय ऐसी स्थितियों में हुआ जिसने अनेक अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को जन्म दिया। भारत और पाकिस्तान के बीच कभी अच्छे सम्बंध नहीं रहे। इनकी बहुत सी समान समस्याएं थीं, जिनको मधुर सम्बन्धों द्वारा ही सुलझाया जा सकता था।[40] दूसरी ओर चाहे भारत-पाकिस्तान सीमा विवाद हो या पाकिस्तान-अफगानिस्तान विवाद, भारत और अफगानिस्तान ने परस्पर मित्रता से पाकिस्तान के द्वारा उठाये गए विवादों पर एक-दूसरे का समर्थन व्यक्त किया है।

(घ) आर्थिक सम्बन्ध

भारत-अफगानिस्तान के बीच व्यापारिक सम्बन्ध प्राचीन काल से चले आ रहे सांस्कृतिक सम्बन्धों से जुड़े हुए है। अफगानिस्तान के लिए भारत सबसे बड़ा क्रय-विक्रय का स्थान रहा है। स्वतंत्रता प्राप्ति के प्रारम्भिक समय में भारत की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। देश में अनेक आर्थिक समस्याएं उत्पन्न हो गई थीं। देश के दो राज्यों में विभाजन से समस्या और गम्भीर हो गई। जिसने भारतीय आर्थिक विकास में अन्तर्निहित अर्थव्यवस्था की औपनिवेशिक संरचनाओं से उत्पन्न विरोधों को और बढ़ा दिया।

विभाजन के पश्चात् पाकिस्तान को भारत का अधिक उपजाऊ भाग पश्चिम पंजाब सिंध एवं पूर्वी बंगाल मिला और भारत के भाग में कम उपजाऊ क्षेत्र आए। पाकिस्तान द्वारा निष्कासित हिन्दू शरणार्थियों के पुनर्वास की समस्या तथा दोनों देशों में परस्पर ऋण प्रत्यर्पण पर पाकिस्तान द्वारा उल्लंघन आदि ने भारत की आर्थिक स्थिति को अधिक पंगु बना दिया।

---

38. यू.एन. डाक्यूमैंट्स, एस. 1589
39. प्रधानमन्त्री के विचार 93 ''राष्ट्र मण्डल की सहयोग भावना", 23 नवम्बर, 1983 को नई दिल्ली में राष्ट्र-मंडल देशों के शासनाध्यक्षों के सम्मेलन में भारत की प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी का भाषण (भारत सरकार द्वारा प्रकाशित)
40. कौर, कुलवन्त, ''पाक-अफगान रिलेशन्स", दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन, नई दिल्ली 1985, पृ. 132-133

भारत पूरी तरह विदेशी सहायता पर आश्रित हो गया। पश्चिम गुट आर्थिक सहायता देने में समर्थ था, अत: भारत ने राष्ट्रमण्डल की सदस्यता नहीं त्यागी और अन्य पश्चिमी देशों से मैत्री सम्बन्ध स्थापित कर लिए।[41] जून, 1948 के आँकड़ों के आधार पर भारत में विदेशी सहायता के प्रथम सर्वेक्षण से यह प्रमाणित होता है कि इन निवेशों की कुल राशि 320 करोड़ थी, जिसमें 72 प्रतिशत राशि ब्रिटिश थी।[42]

स्वतंत्रता के प्रारम्भिक समय में ही अफगानिस्तान ने भारत के साथ मैत्री सम्बन्ध स्थापित किए, फलत: दोनों देशों के मध्य व्यापार का अत्यधिक विकास हुआ।[43] किन्तु विभाजन के उपरान्त भारत को अफगानिस्तान के साथ सीधे व्यापार में होने वाले लाभ से वंचित होना पड़ा।[44] अफगानिस्तान और भारत के बीच आवागमन के लिए समुद्री मार्ग नहीं है, इसलिए दोनों देशों का व्यापार पूर्णतया स्थल मार्ग से जुड़े देश पाकिस्तान से उनके सम्बन्धों पर ही निर्भर करता है।[45] अफगानिस्तान में आवागमन के लिए तीन मार्ग है - ईरान, रूस व पाकिस्तान। ईरान होकर जाने वाला मार्ग अधिक लम्बा है तथा रूस अपने सीमा क्षेत्र से किसी दूसरे देश का माल लेने व ले जाने की अनुमति नहीं देता है। तब एक ही मार्ग बचता है- वह कराची होकर खैबर पास तक जाने वाला मार्ग। अफगानिस्तान के व्यापार का अधिकांश भाग इसी मार्ग से होता रहा है।[46] भारत-अफगान व्यापार सम्बंधों में विकास के लिए यह मार्ग सहज और आर्थिक दृष्टि से सुविधापूर्ण है।[47] किन्तु चाहे भारत-पाकिस्तान विवाद हो या अफगानिस्तान-पाकिस्तान विवाद, यह मार्ग बन्द हो जाता है।[48] पाकिस्तान के साथ इसी राजनैतिक अलगाववाद के कारण अफगानिस्तान इस मार्ग का पूरा लाभ नहीं उठा पाता।

भारत को अर्द्ध स्वतंत्रता प्राप्त करने के समय में अफगानिस्तान विदेश व्यापार अधिनियम 1947[49] के अन्तर्गत नहीं आता था। उसके साथ भारत का व्यापार पूरी तरह से स्वतंत्र था।

---

41. भाटिया, पी.आर., ''भारत की विदेश नीति", यूनिवर्सल बुक डिपो, ग्वालियर, पृ. 15
42. को.अ. अंतोनोवा, ग्रि.स., बोगर्द-लेबिन, ग्रि.ग्रि. कोतोव्स्की, ''भारत का इतिहास", मास्को प्रगति प्रकाशन, पृ. 670-72
43. गुप्ता, डी.सी., ''अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध", पृ. 191
44. वैदिक, बी.पी. ''इण्डिया एण्ड अफगानिस्तान", इन्टरनेशनल स्टडीज़, विकास पब्लिशिंग हाऊस, खण्ड 17, 1978 पृ. 529-30
45. छाबड़ा, हरिशरण ''अफगानिस्तान व्हाट लाइस अहेड", वर्ड फोकस जरनल 52, अप्रैल, 1984, खण्ड 5, अंक 4, विकास पब्लिशिंग हाऊस, गाजियाबाद. पण्डित, सी. एस. ''इण्डिया ग्रोइंग रिलेशन्स", पृ. 30-32
46. भौमिक, एम. सी., ''इण्डो-अफगान रिलेशन्स", पृ. 91-92
47. यू.एन. इकोनॉमिक्स सर्वे ऑफ एशिया एण्ड फार ईस्ट, 1954, पृ. 61, उदाहरण के लिए 1954-55 में दोनों देशों के मध्य लगभग 80 प्रतिशत आयात-निर्यात इसी मार्ग द्वारा किया गया था।
48. वैदिक, वेदप्रताप, देखिए क्र0 35, पृ. 38
49. इण्डियन ट्रेड जरनल (नई दिल्ली), खण्ड 166, अंक 2133, 1947, पृ. 101

1939 और 1948 के विदेशी अधिनियमों में भी कहा गया कि आयात-निर्यात वाली व्यापार की सभी वस्तुएं अफगानिस्तान और अन्य देशों के बीच भारत द्वारा ले जायी जा सकेंगी।[50] प्रारम्भिक अवस्था में भारत व अफगानिस्तान के कुल व्यापार में से अधिकांश भारत के पक्ष में नहीं था, अतः भारत ने अफगानिस्तान को निर्यात करने की सामर्थ्य पर अतिरिक्त उपलब्ध कच्ची सामग्री को कम करने की दिशा में विचार किया, जैसे- कच्ची रूई, कच्चा जूट, पशुओं का चमड़ा व खालें आदि। बाद में भारत ने यह सामग्री अफगानिस्तान को निर्यात करनी आरम्भ कर दी।[51] अफगानिस्तान ने भारत के अतिरिक्त रूस, चेकोस्लोवाकिया, ईरान, पोलैण्ड, चीन, इजिप्ट, इटली और पाकिस्तान से व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित किए। प्रारम्भ में अफगानिस्तान का कुल निर्यात 48,63,87,000 अफगानी था तथा आयात 21,59,8,000 अफगानी था।[52] अफगानिस्तान का सबसे महत्वपूर्ण व्यापार उसके अपने देश में उत्पादित फल व सूखे मेवे हैं, जिनका 80 प्रतिशत वह दूसरे देशों को निर्यात करता है।

1948 में भारत-अफगानिस्तान के मध्य जो आपसी समझौता हुआ उसमें व्यापार तथा घनिष्ट सम्बन्धों पर विचार किया गया। इसमें कहा गया कि भारत, अफगानिस्तान से फल व सूखे मेवे का आयात करेगा और इसके बदले भारत विभिन्न प्रकार के स्वनिर्मित पदार्थ अफगानिस्तान भेजेगा। 1949-50 में अफगानिस्तान से कुल निर्यात 1,88,41,161 रूपये हुआ, जिसमें फल व सूखे मेवे का ही निर्यात 1,86,78,846 रूपये था।[53] इसके अतिरिक्त अफगानिस्तान से निर्यात, की जाने वाली वस्तुएं हींग, पशुओं की खालें, खाने के मसाले, बीज, दवाइयाँ एवं औषधियाँ प्रमुख है। 1949-50 में भारत से कुल निर्यात 25,35,167 रूपये हुआ। जिसमें हरी और काली चाय का निर्यात 24,69,304 रूपये था। इसके साथ ही भारत, अफगानिस्तान को कपड़े, रंगने का द्रव्य, कच्चा चमड़ा और चमड़े के जूते व चमड़े से बनी अन्य सामग्री इत्यादि निर्यात करता रहा है।[54]

मई 1949 में भारतीय व्यापार प्रतिनिधि मंडल काबुल भेजा गया, जहाँ उन्होंने अत्यधिक व्यय और अन्य कठिनाइयों के अतिरिक्त, पाकिस्तान के रास्ते से सामान के आने व जाने की

---

50. रिपोर्ट ऑफ द मिनिस्ट्री ऑफ एक्सटरनल अफेयर्स, 1951-52, नई दिल्ली
51. अफगान आयातित चमड़े व खालें 1949-50 में इनका मूल्य 429 लाख और 1964-65 में इनका मूल्य 14 लाख रू. रहा। इण्डियन ट्रेड जरनल, खण्ड 177, अंक 2281, 18 मई, 1950, परिशिष्ट पृ. 1-3। देखिए- ब्रोचर ऑफ फॉरेन ट्रेड स्टेटिक्स ऑफ इण्डिया, थर्ड फाइव ईयर प्लान पीरियड, डायरेक्टोरेट ऑफ रिसर्च एण्ड स्टेटिक्स।
52. द अफगानिस्तान बैंक, देखिए क्र0 49, तालिका 18
53. रिव्यू ऑफ द ट्रेड ऑफ इण्डिया ड्यूरिंग 1947-48 एण्ड 1951-52, व्यवसाय एवम् उद्योग मन्त्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1965, पृ. 133
54. वही, पृ. 134, इण्डियन ट्रेड जरनल, खण्ड 177 अंक 2281 (18 मई, 1950), सप्लीमैंट, पृ. 1-3

दिशा में व्यापार को उन्नत बनाने के लिए सबसे बड़ी बाधा उनकी सीमाओं की राजनैतिक विवादास्पद स्थिति पर विचार विमर्श किया।[55] इसलिए 1949-50 में दोनों देशों ने समुद्र तथा वायुयान द्वारा व्यापार करने का निर्णय लिया।[56]

1950 की सन्धि

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद भारत-अफगान व्यापार सम्बन्धों में तेजी से गिरावट आई, क्योंकि एक ओर भारत-विभाजन तथा दूसरी ओर भारत-पाकिस्तान व अफगानिस्तान-पाकिस्तान के बीच उत्तेजक सम्बन्धों के कारण ही दोनों देशों के मध्य व्यापार से संबंधित कोई महत्वपूर्ण समझौता नहीं हो सका था।[57]

स्वतंत्रता के पश्चात् पहली बार दोनों देशों ने व्यापार को पुर्नजीवित करने के लिए 4 जनवरी, 1950 को मैत्री सन्धि पर हस्ताक्षर किए। जिसमें भारत की ओर से प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू तथा अफगानिस्तान की ओर से अफगान राजदूत सरदार नजीबुल्लाह ने भाग लिया। इस सन्धि में व्यापार की उन्नति व विस्तार के लिए विभिन्न विधानों (नियमों) को सम्मिलित किया गया[58] तथा सांस्कृतिक सम्बन्धों और औद्योगिक एवं कृषि सम्बन्धी विकास में आपसी सहायता पर बल दिया गया।[59] यह सन्धि पहले पाँच वर्षों के लिए की गई और इसको समाप्त करने के लिए दोनों देशों के बीच 6 महीने पूर्व के घोषणा (सूचना) पत्र का प्रविधान रखा गया।[60] यह सन्धि दोनों देशों के प्राचीन अनुभव और वर्तमान विकास की समस्या के आधार पर की गई थी। इसे अधिक प्रामाणिकता देने तथा निश्चित स्वरूप प्रदान करने के लिए 4 अप्रैल, 1950 को काबुल में दोनों देशों के बीच एक व्यापार व वाणिज्य सम्बंधों के लिए सन्धि हुई।[61] जिसमें भारत की ओर से अफगानिस्तान में भारतीय राजदूत विंग कमाण्डर रूपचन्द तथा अफगानिस्तान की ओर से अब्दुल रसीद खान ने सन्धि पर हस्ताक्षर किए। इस सन्धि में स्वीकार किया गया कि दोनों देश व्यावसायिक उद्योग-व्यापार और एक दूसरे की सीमा क्षेत्र की सुरक्षा के लिए

---

55. इण्डियन ट्रेड जरनल, खण्ड 173, अंक 2334 (23 जून, 1949), पृ. 1007।- 5 -जनरल ऑफ इण्डस्ट्री ऑफ ट्रेड, खण्ड 1 (1951-52), पृ. 133-39
 -कुमार, अशोक "पाकिस्तान ऐज़ ए फैक्टर ऑफ इण्डो-अफगान रिलेशन्स",शोधग्रन्थ (मेरठ) 1981
56. सेन, सुनन्दा, "इण्डियाज बाइलेटरल पेमैंट्स एण्ड ट्रेड ऐग्रीमैंट्स 1947-64", कलकत्ता 1968, पृ. 192
57. जाफरी, एच. ए. एस., देखिए क्र. 22, पृ. 24-43
58. टेक्स्ट ऑफ ट्रीट्री, जनवरी, 1950
59. वही, आर्टिकल 2-6
60. कीसिंग्स कौनटेमपोररी आरचीब्स, खण्ड 7, 1948-50, पृ. 10460
 -भौमिक, एस.सी., "इण्डो-अफगान रिलेशन्स", पृ. 92
61. टेक्स्ट ऑफ ट्रीट्री, अप्रैल, 1950
 -इण्डियन ट्रेड जरनल (कलकत्ता), खण्ड 181, अंक 2376, 15 मार्च, 1952 पृ. 704-6

वचनबद्ध है। कानून एवं नियमों के अनुरूप की गई यह सन्धि दोनों देशों के लिए लाभदायक रही।[62] उन्होंने स्वीकार किया कि आयात व निर्यात में फल व सब्जियाँ तथा अन्य वस्तुओं की सुरक्षा की गारण्टी नहीं दी जाएगी। भारत, अफगानिस्तान में अपने कपड़ों के निर्यात में खुली बिक्री के लिए वचनबद्ध है। इसके बदले में अफगानिस्तान अच्छी किस्म के फल व मेवे देगा। दोनों देशों ने इस बात को स्वीकार किया कि फलों के आयात व निर्यात के लिए आज्ञा देने की आवश्यकता नहीं है।[63] अफगान सरकार ने कहा कि वह अंगूर में 30% और अनार में 36% निर्यात कर लेगा, क्योंकि इन वस्तुओं के निर्यात में अत्यधिक कठिनाइयाँ है।[64] अप्रैल, 1950 में ही भारत व पाकिस्तान के बीच सन्धि हुई, जिससे आशा व्यक्त की गई कि अब दोनों देशों को यातायात के अच्छे साधन उपलब्ध हो सकेंगे।

महाशक्तियों की मदद

अफगानिस्तान-पाकिस्तान के बीच पख्तून विवाद को लेकर सदैव तनाव बना रहा है। उसका पूरा असर अफगानिस्तान की अर्थव्यवस्था पर पड़ता है। सीमा सम्बन्धी इन विवादों के कारण ही 1950 में पाकिस्तान ने अफगानिस्तान को पैट्रोलियम देना बन्द कर दिया और 3 महीने के लिए सीमा पर रोक लगा दी।[65] जिसके कारण अफगानिस्तान के ट्रक नहीं चल सके, जबकि अफगानिस्तान द्वारा गैसोलीन (प्राकृतिक गैस) संकटकालीन परिस्थितियों में भी पूरी मात्रा में भेजा जाता रहा। अत: 17 जुलाई, 1950 को अफगानिस्तान और सोवियत संघ के बीच एक चार वर्षीय समझौता मशीनें, यातायात के उपकरण तथा अन्य ऋण देने से सम्बन्धित हुआ। अफगानिस्तान ने इसके बदले में रूस को प्राकृतिक गैस भेजने के लिए कहा।[66] लेकिन इससे भूवेष्टित अफगानिस्तान की कठिनाइयाँ व सीमाओं की विवादास्पद स्थिति समाप्त नहीं हुई, बल्कि अब उसे देश के विकास के लिए रूस की सहायता के रूप में एक विकल्प मिल गया था।

---

62. अप्पादोराइ ए., एम. एस. राजन, ''इण्डियाज फॉरेन पॉलिसी एण्ड रिलेशन्स", पृ. 156-60
63. इण्डियन ट्रेड जरनल, .खण्ड 173, अंक 2334, 23 जून, 1949, पृ. 1067, 1949 में पाकिस्तान ने भारत से आयात किए हुए सभी माल पर खुली सामान्य आज्ञा (सुरक्षा का वचन) देने से इन्कार कर दिया। जिसका भारत-अफगान व्यापार सम्बन्धों पर असर पड़ा, जरनल ऑफ इन्डस्ट्रीज़ एण्ड ट्रेड, खण्ड 1, 1951-52, पृ. 1133-39
64. भारतीय व्यापारिक प्रतिनिधि मण्डल ने काबुल में हुई वार्ता का विवरण दिया। इण्डियन ट्रेड जरनल, खण्ड 176, अंक 2263, (12 जनवरी, 1950), पृ. 207, सप्लीमेन्ट-14 (4 जनवरी, 1951) पृ. 12-15, 107
65. हसन जुवैदा, ''द फॉरेन पॉलिसी ऑफ अफगानिस्तान", पाकिस्तान होराइज़न क्वाटरली (3), खण्ड 17, अंक 1, 1964, पृ. 49
66. बत्रा, मनोहर सिंह, ''द फॉरेन पॉलिसी एण्ड रिलेशन्स ऑफ अफगानिस्तान", सेमिनार ऑन प्रॉब्लम्स ऑफ माडर्न सैन्ट्रल एशिया, 27-28 जनवरी, 1970, बर्किगं पेपर नं. 4, पृ. 93

1947 में अमेरिका, अफगानिस्तान में आर्थिक सहायता के बदले अपना प्रभाव क्षेत्र सुदृढ़ करना चाहता था, जिसे अफगान शासकों ने स्वीकार नहीं किया। रूस भी अफगानिस्तान को आवश्यकतानुसार आर्थिक सहायता देता रहा है।[67] इस प्रकार देश के नव निर्माण के लिए अफगानों ने जहाँ अमेरिका से ऋण मांग कर, सफलता अर्जित की, वहीं रूसियों के साथ व्यापार बढ़ाकर देश की आर्थिक समृद्धि के लिए सफल प्रयत्न किया। भारत द्वारा भी असंलग्नता की नीति अपनाने का कारण यही था कि वह दोनों गुटों से आर्थिक, तकनीकी तथा विशेषज्ञों की सहायता ले सके। यद्यपि इस नीति के आरम्भ में भारत को कुछ कठिनाइयाँ अवश्य आई, किन्तु समय-समय पर रूसी व अमरीकी सहायता ने यह सिद्ध कर दिया कि भारत की यह नीति कुछ परिस्थितियों में सफल रही है। परन्तु सत्य तो यह है कि सोवियत संघ और अमेरिका दोनों महाशक्तियाँ अपने-अपने प्रयोजन को सिद्ध करने के लिए अन्य विकासशील राष्ट्रों को सहायता देती रही है, जिससे इन राष्ट्रों के आर्थिक विकास में प्रगति अवश्य होती है, जैसे 1951-52 में अकाल-ग्रस्त भारत, पाकिस्तान तथा अफगानिस्तान को भी अमेरिका से गेहूँ प्राप्त हुआ था। आदि अपवाद है जब विशिष्ट संकटकालीन परिस्थितियों के कारण पारस्परिक सुरक्षा कार्यक्रम के बाहर कुछ देशों को विशेष प्रविधान के तहत अल्प परिमाण में सहायता दी जाती है।[68]

1951 में पाकिस्तान-अफगानिस्तान सम्बन्धों में तनाव के कारण व्यापार सम्बन्धों में रूकावट आई।[69] इस समय कुल व्यापार भारत के पक्ष में नहीं था। इसका मुख्य कारण फल व सूखे मेवों के साथ अफगानिस्तान सरकार ने कुछ बची हुई रूई भारत को वापस भेज दी। दूसरी ओर अफगानिस्तान ने जापान से कम मूल्य में चाय का निर्यात किया, जिससे भारतीय चाय-उद्योग को बहुत घाटा हुआ।[70]

भारत ने अफगानिस्तान में नई नहरों की व्यवस्था तथा विद्युत-अनुसंधान (योजना) में सहयोग के लिए तकनीकी विशेषज्ञ भेजे। उसने ऐतिहासिक स्मारकों का जीर्णोद्धार कराने के लिए एक विशेष दल भी अफगानिस्तान भेजा।[71] अगस्त 1951 में भारतीय हाकी व फुटबाल टीमें काबुल

---

67. "अफगानिस्तान सच्चाई क्या है?", रूसी दस्तावेज तथ्य और प्रत्यक्षदर्शियों की रिपोर्ट, नवयुग प्रेस, दिल्ली, पृ. 54-56
68. वैदिक, वेदप्रताप, ''अफगानिस्तान में सोवियत-अमरीकी प्रतिस्पर्धा", नेशनल पब्लिशिंग हाऊस नई दिल्ली, 1973, पृ. 214
69. फ्रैंक, पी.जी., ''अफगानिस्तान बिटवीन ईस्ट एण्ड वैस्ट", नेशनल प्लानिगं एसोसिएशन (वाशिंगटन 1960), पृ. 247. 1951 का व्यापार पख्तूनिस्तान की सीमाओं को लेकर अशान्ति तथा अन्य गड़बड़ियों से प्रभावित रहा।
70. ''रिपोर्ट ऑफ द इण्डियन ट्रेड एजेन्ट्स ऐट काबुल", इण्डियन ट्रेड जरनल सप्लीमेन्ट, अंक 4, 26 अप्रैल, 1952, पृ. 10 तथा सप्लीमेन्ट अंक 32, 29 नवम्बर, 1952, पृ. 1
71. सिंह, जे.डी., ''अफगान फेल टू सी इण्डियाज प्वाइन्ट", टाइम्स ऑफ इण्डिया, 13 फरवरी, 1980

गयीं, जिससे दोनों देशों में प्रगाढ़ता बढ़ी।

अप्रैल 1950 की व्यापारिक सन्धि से प्रभावित होकर 24 जनवरी, 1952 को अफगानिस्तान व भारत के मध्य सन्धि हुई, जिसमें कहा गया कि इसका प्रभाव दो वर्षो तक रहेगा तथा दोनों देश इसके द्वारा एक-दूसरे के साथ अपने व्यापारिक सम्बंधों को बनाए रखेंगे।[72] सन्धि के अनुसार अफगानिस्तान भारत को ताजे फल, सूखे मेवे और हींग भेजेगा और भारत अफगानिस्तान को सूती कपड़ा, हरी व काली चाय की पत्ती, तम्बाकू बनाने की सामग्री, मसाले और जूट आदि भेजेगा।[73] जनवरी, 1952 की सन्धि के विषय में कहा गया कि यह भारत और अफगानिस्तान के बीच एक स्थिर लिखित बन्ध-पत्र के रूप में व्यापार व वाणिज्य से सम्बंधित समझौता था। जिसे 24 मार्च को हुए व्यापारिक समझौते के द्वारा दृढ़ता व स्थिरता प्रदान की गई।[74] यह सन्धि तीन वर्ष के लिए की गई तथा इसमें समय की बढ़ोत्तरी के लिए दो वर्ष और रखे गए। इसमें कहा गया कि यदि दोनों पार्टियों में से कोई भी पार्टी इसे बदलना या फेरबदल करना चाहे तो उसे दूसरी पार्टी (देश) को कम से कम 6 महीने पूर्व नोटिस देना होगा। नोटिस उस तिथि के अनुसार जब पूर्व निर्धारित सन्धि का समय समाप्त होना हो।[75] यह सन्धि दोनों राष्ट्रों के गहन प्रयासों द्वारा लगातार बढ़ाई भी जा सकती है। इस सन्धि के तहत निर्धारित किया गया कि भारत, अफगानिस्तान को चाय, मसाले, दवाइयों एवं औषधियों के लिए निर्मित पदार्थ, रबड़, कपड़े, जूट, चमड़े से बने जूते तथा इससे बनी अन्य वस्तुएं एवं धातु की दस्तकारी से बनी वस्तुएं इत्यादि देगा। इसके बदले में अफगानिस्तान भारत को फल, सूखे मेवे, हींग, जीरा, औषधि सम्बंधी जड़ी-बूटियाँ, इत्र इत्यादि भेजेगा। स्वाभाविक है कि अफगानिस्तान इस विस्तृत आयात (भारत द्वारा भेजी जाने वाली सामग्री) में रूचि रखता।[76]

अफगानिस्तान साधारण अर्थव्यवस्था वाला देश है। वह प्रायः खाद्यान्नों के लिए आत्मनिर्भर रहता रहा है, किन्तु 1952 में अनायास ही फसलों के बिगड़ जाने से खाद्यान्न की भारी कमी हो गई, इसलिए वह खाद्यान्न के लिए विदेशी सहायता पर निर्भर हो गया। अमेरिका ने उसकी अर्थव्यवस्था में सुधार के लिए तकनीकी विशेषज्ञों की पूरी टीम भेजी, किन्तु रूस अपने पड़ोसी देश अफगानिस्तान में किसी दूसरे देश का प्रभाव नहीं देखना चाहता, इसलिए उसने इसका

---

72. जाफरी एच. ए. एस., देखिए क्र. 22, पृ. 125
73. अरोरा एण्ड अप्पादोराय, ''इण्डिया इन वर्ल्ड अफेयर्स 1957-58", दिल्ली 1975, पृ. 69-71
74. कुमार, अशोक, ''पाकिस्तान ऐज़ ए फैक्टर ऑफ इण्डो-अफगान रिलेशन्स", पृ. 134
75. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, अंक 21, 9 सितम्बर, 1975, पृ. 219-20
76. ''विज़िट टू ए फ्रेंडली नेबर", द हिन्दू (मद्रास), 9 जुलाई, 1976

विरोध किया।[77]

पाकिस्तान के साथ सम्बंधों में तनाव के कारण पुनः अफगान सरकार ने भारत सरकार से व्यापार के आदान-प्रदान के लिए वायुयान का प्रावधान रखा। इस सम्बंध में भारतीय वायुसेना की ओर से एक मिशन काबुल गया और उसने वहाँ अफगानिस्तान की व्यावसायिक वस्तुएं वायुयान द्वारा लाने और ले जाने के सम्बन्ध में विचार-विमर्श किया। जनवरी, 1952 में काबुल में वायुयान से सम्बन्धित एक समझौता हो गया।[78] कुछ ही समय पश्चात् फिल्मोत्सव के लिए फिल्म डिवीजन के सदस्यों ने अफगानिस्तान की यात्रा की। जिससे परस्पर सम्बन्धों में घनिष्टता बढ़ी।

भारतीय तकनीकी विशेषज्ञों द्वारा पश्चिमी जर्मनी से एक ऐसी योजना को खरीदा गया जो 50 टन चीनी एक दिन में बना सकती थी और जिसमें से कुल 5% गन्ना लकड़ी के रूप में निकलेगा। इस योजना को भारत द्वारा अफगानिस्तान भेजा गया और इस योजना के लिए इमारत की आधारशिला 1952 में प्रारम्भ की गयी जो कि आगे चल कर 1957 में पूरी बन कर तैयार हुई।[79]

इस प्रकार देखा गया कि 1951-52 में भारत का अफगानिस्तान के साथ व्यापार में पर्याप्त विस्तार हुआ।[80]

भारत का अफगानिस्तान के साथ व्यापार*

वर्ष	निर्यात	आयात	कुल व्यापार मूल्य (लाख रू में)
1949-50	207	245	-38
1950-51	472	285	-13
1951-52	398	452	-58
1952-53	474	466	0.8

77. जैदी, मंजूर ''अफगानिस्तान स्टडी इन कम्पीटीटिव पीसफुल कोएग्जिसटैन्स", पाकिस्तान होराइज़न, खण्ड 15, अंक 2, 1962
78. ''रिपोर्ट ऑफ द मिनिस्ट्री ऑफ इन्टरनेशनल अफेयर्स", 1951-52, पृ. 5
79. बनर्जी, ब्रजेन्द्र नाथ, ''इण्डिया एण्ड टू इट्स नेबरिंग कंट्रीज़", प्रकाशित 1982, पृ. 304
80. फॉरेन ट्रेड ऑफ इण्डिया-अफगानिस्तान, कामर्स, वार्षिक अंक 1971, खण्ड 123, अंक 3165,पृ.98

* रिव्यू ऑफ ट्रेड ऑफ एशिया ड्यूरिंग 1947-48 एण्ड 1951-52 मिनिस्ट्री ऑफ कामर्स एण्ड इन्डस्ट्री, (गवर्नमैन्ट ऑफ इण्डिया) नई दिल्ली, 1955, पृ. 132

अफगानिस्तान का पाकिस्तान के साथ व्यापार**

(पाकिस्तान के 1000 रू में)

वर्ष	निर्यात	आयात
1949-50	-	3363
1950-51	3926	5127
1951-52	19837	6787
1952-53	15619	41.70

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि 1947 से 1952 तक भारत और अफगानिस्तान को जोड़ने वाली कड़ियों में प्रमुख थी; पख्तून प्रश्न, सैनिक गुटों का विरोध, असंलग्नता की नीति और परम्परागत व्यापार। यदि सैकड़ों वर्ष से चले आ रहे व्यापार के तत्त्व को छोड़ दें तो सारूप्य के जो अन्य तत्त्व है उनका मूल चरित्र निषेधात्मक ही था।

*****

** मन्थली फॉरेन ट्रेड स्टैटिक्स ऑफ पाकिस्तान, मार्च 1969 एण्ड रिलेवैन्ट ईयर्स (सैटल स्टेटिस्टीकल ऑफिस, गवर्नमैंट पाकिस्तान, कराची), फॉरेन ट्रेड ऑफ इण्डिया, (डिपार्टमैंट ऑफ कमर्शियल इन्टैलिजैन्स एण्ड स्टेटिक्स, कलकत्ता) रिलेवैन्ट ईयर्स।

पंचम अध्याय

पंचम अध्याय

भारत-अफगान सम्बन्ध 1953-1963

सामरिक एवं राजनैतिक दृष्टि से वर्ष 1953 अफगानिस्तान के लिए विशेष महत्वपूर्ण था। इस वर्ष अफगानिस्तान, सोवियत संघ एवं अमेरिका में भी नई सरकारों का आगमन हुआ तथा तीनों देशों में सत्ता परिवर्तन हो जाने से नए शासकों को तत्कालीन आन्तरिक, क्षेत्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय चुनौतियों का सामना करना था। भारत में सत्ता परिवर्तन जैसी कोई घटना नहीं हुई। 1952 के आम चुनावों के बाद केन्द्र में प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व में कांग्रेस की सत्ता बरकरार रही। अत: विदेश नीति में कोई परिवर्तन की आशा नहीं थी। अफगानिस्तान में 6 अगस्त, 1953 को तत्कालीन प्रधानमंत्री शाह महमूद खान ने अकस्मात "रूग्णता के कारण" अपना त्यागपत्र बादशाह जहीरशाह को पेश किया। तदुपरान्त सरदार मोहम्मद दाऊद को प्रधानमंत्री का पद सौंपा गया। सरदार दाऊद उस समय केवल 43 वर्ष के थे तथा कट्टर राष्ट्रवादी, परिश्रमी तथा ईमानदारी के लिए काफी लोकप्रिय थे।[1]

सोवियत संघ में 1953 में जोसेफ स्टालिन का विलोप और उनके स्थान पर एक उदारवादी नेतृत्व, निकिता ख्रुश्चेव के अन्तर्गत, का उदय एक महत्वपूर्ण घटना थी। नए प्रधानमंत्री जी0एम0 मालेन्कोफ ने सर्वोच्च सोवियत का उद्घाटन करते हुए पड़ोसी देशों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों की अभिवृद्धि का आह्वान किया। दूसरी तरफ अमेरिका में राष्ट्रपति आइजनहावर के प्रशासन के आगमन, विशेषकर जॉन फॉस्टर डलेज के विदेश मंत्री बन जाने से, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति ने एक नया मोड़ लिया, जिसका प्रभाव द्विपक्षीय एवं बहुपक्षीय सम्बन्धों पर पड़ना स्वाभाविक था। सोवियत संघ में स्टालिन के बाद उदारवादी शासन ने एशिया और अफ्रीका के देशों के साथ सम्बन्धों में समन्वय लाने एवं सहयोग करने की दिशा में कदम उठाये तो उधर आइजनहावर प्रशासन में डलेज ने अमेरिका की सोवियत विरोधी नीति को सबल बनाने के लिए सोवियत संघ के समीपवर्ती देशों जैसे टर्की, ईरान, पाकिस्तान इत्यादि को अमरीकी प्रभाव क्षेत्र में लाने के प्रयास किए। सोवियत प्रधानमंत्री मालेन्कोफ ने 8 अगस्त, 1953 को अफगानिस्तान के साथ सोवियत संघ के सम्बन्धों की चर्चा करते हुए कहा कि "अफगानिस्तान और सोवियत संघ के सम्बन्ध दृढ़ है और पारस्परिक हितों के प्रति सम्मानपूर्ण हैं। अत: हमारे देशों के मध्य दृढ़ता से सम्बन्ध बनाने के लिए उत्तम

1. अब्दुल समद गाऊस, द फॉल ऑफ अफगानिस्तान (वाशिगंटन परगॉमन ब्रैसी, 1955), पृ. 79

परिस्थितियाँ विद्यमान हैं"।[2]

मास्को के उदारवादी प्रशासन के इस तरह के मैत्रीपूर्ण उद्गारों को काबुल में दाऊद शासन पर अनुकूल प्रभाव पड़ा, किन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं था कि जब दाऊद ने सत्ता सम्भाली तब अफगानिस्तान और अमरीकी सम्बन्धों में कोई तनाव या गतिरोध पैदा हो गया था। यह सत्य है कि मोरीसन कण्डसन की निर्माण-योजना में अपेक्षित सफलता प्राप्त नहीं होना, उसके लिए अमेरिका द्वारा उपयुक्त मात्रा में ऋण नहीं देना और ईरान एवं पाकिस्तान को दी गई आर्थिक सहायता, जो अफगानिस्तान को दी गई सहायता से कई गुना अधिक थी, अफगान स्वाभिमान को ठेस पहुँचाने वाली तथा अमेरिका के प्रति यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाने की प्रेरणा देने वाली घटनाएँ थी। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि 1952 तक अमेरिका ने ईरान को 1 करोड़ 49 लाख डॉलर और पाकिस्तान को एक करोड 6 लाख डॉलर के अनुदान का वचन दिया था, जबकि अफगानिस्तान को केवल 3 लाख डॉलर के अनुदान का वचन दिया।[3]

युद्धोत्तर काल में अफगान शासकों ने अमेरिका से आर्थिक सहायता की उच्च आशाएं लगा रखी थी, वे पूरी नहीं हुई। आइजनहावर प्रशासन ने पाकिस्तान को, जिसके साथ अफगानिस्तान के सम्बन्ध मधुर नहीं थे, आर्थिक एवं सैन्य सहायता देनी आरम्भ कर दी। पाकिस्तान उसके सैनिक गठबन्धनों का सदस्य हो गया। अमेरिका द्वारा प्रेषित सैनिक गठबंधनों जैसे सेण्टो एवं सिएटो की सदस्यता अमरीकी सैनिक एवं आर्थिक सहायता प्राप्त करने के लिए एक अनिवार्य योग्यता थी। अफगानिस्तान जो सदियों से ही असंलग्नता एवं गुटनिरपेक्षता की नीति का अनुसरण करता आया था, इस नीति को किसी भी मूल्य पर छोड़ना नहीं चाहता था। इस तरह दाऊद प्रशासन को अमेरिका से अधिक सहायता की अपेक्षा नहीं थी। इसके साथ ही अफगानिस्तान सोवियत संघ पर भी अत्यधिक निर्भर नहीं रह सकता था। इस संदर्भ में गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों, विशेषकर भारत जिसके साथ अफगानिस्तान के सम्बन्ध मधुर थे, के साथ दाऊद-प्रशासन के अन्तर्गत अफगानिस्तान से राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक सहयोग बढ़ाने का सुअवसर था।

(क) भारत-अफगान राजनैतिक सम्बन्ध

अगस्त, 1953 में जब सरदार मोहम्मद दाऊद ने काबुल में प्रधानमंत्री पद का भार संभाला तो भारत अफगान सम्बन्ध प्रगाढ़ मित्रता के पथ पर बाधा रहित अग्रसर हो रहे थे। 1953 से

2. प्रावदा (मास्को), 9 अगस्त, 1953 जिसे उद्धृत किया, वेद प्रताप वैदिक, 'अफगानिस्तान में सोवियत-अमरीकी प्रतिस्पर्धा' (दिल्ली), 1973 पृ. 84
3. यू0 एस0 इकोनॉमिक्स असिसटैन्स प्रोग्राम्स एंड मिनिस्ट्रड वाई ऐजेन्सी फार इन्टरनेशनल डवलपमैन्ट एंड सिटी सैन्सर ऐजेन्सीज, 3 अप्रैल, 1948-30 जून, 1968 (वाशिंगटन 1969) पृ. 17,20

1957 की अवधि में दोनों देशों के राजनैतिक सम्बन्ध पुरानी आधार-शिला पर आधारित रहे, परन्तु इस अवधि में पाकिस्तान को अमरीकी सैनिक सहायता तथा उसका अमरीकी सैनिक संगठन सेन्टो एवं सिएटो में शामिल होना एक ऐसी घटना थी जिससे नई दिल्ली एवं काबुल में चिन्ता होना स्वाभाविक थी। अमरीकी विदेश मंत्री जॉन फॉस्टर डलेज की दृष्टि में पाकिस्तान का सामरिक महत्व भारत और अफगानिस्तान से कहीं अधिक था। डलेज अपने पाकिस्तान के तीन दिन के प्रवास पर अमरीकी विदेश नीति की धुरी, साम्यवादी सोवियत संघ के विरूद्ध सैनिक गठबन्धनों में पाकिस्तान की उपयुक्ता आंकने आए थे। अपनी पाकिस्तान यात्रा के दौरान डलेज ने एक संदेश में साम्यवादी खतरे के विरूद्ध निकट पूर्व में की जाने वाली अमरीकी कार्रवाई का संकेत देते हुए पाकिस्तान के बारे में कहा कि मुस्लिम राष्ट्रों में पाकिस्तान सबसे बड़ा है तथा मुस्लिम विश्व में उसका बड़ा मान है। लोगों की दृढ़ आध्यत्मिक श्रद्धा तथा लड़ाकू भावना उन्हें साम्यवाद के विरूद्ध एक सक्षम दीवार के रूप में प्रस्तुत करती है।[4] अक्टूबर, 1953 में तत्कालीन पाकिस्तानी सेनापति मोहम्मद अय्यूब खान ने अमेरिका की यात्रा की, जिसका अघोषित उद्देश्य पाकिस्तान के लिए लाखों डॉलर के अमरीकी हथियार प्राप्त करना था।[5]

अमरीकी विदेश मंत्री डलेज पाकिस्तान की यात्रा के बाद अफगानिस्तान नहीं गए। काबुल में शासक वर्ग को यह स्पष्ट होने लगा था कि अमेरिका के मध्य पूर्वी प्रतिरक्षा योजना में अफगानिस्तान को कोई महत्व नहीं दिया जा रहा है। दिसम्बर, 1953 में अमेरिका के उपराष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन ने अपनी दक्षिण एशिया की यात्रा कार्यक्रम में अफगानिस्तान की यात्रा को भी शामिल किया। अपनी अफगानिस्तान यात्रा के दौरान अमरीकी उपराष्ट्रपति निक्सन ने अफगान शासकों को यह समझाने का प्रयत्न किया कि अफगानिस्तान की समस्याओं का समाधान ईरान, पाकिस्तान के साथ गठबन्धन कर लेने में ही है। निक्सन ने गुटनिरपेक्षता की नीति को तर्क हीन बताते हुए सीमा विवादों विशेषकर पख्तून विवाद को अनुचित बताया।[6] इन घटनाओं ने अफगानिस्तान का यह मत दृढ़ कर दिया कि अमेरिका अफगानिस्तान की उपेक्षा कर पाकिस्तान को सैनिक एवं आर्थिक सहायता देगा। अफगान प्रधानमंत्री सरदार मोहम्मद दाऊद ने यह भय व्यक्त किया कि पख्तून विवाद में "उलझे दो पक्षों में से एक के मामलों में अमेरिका पूरी और तत्काल रूचि दिखाएगा"।[7] पाकिस्तान को अमरीकी सहायता का भारत-अफगान सम्बन्धों पर प्रभाव तथा दोनों देशों की प्रतिक्रिया

---

4. डिपार्टमैन्ट ऑफ स्टेट बुलेटिन, 15 जून, 1953
5. यू0एस0 न्यूज एंड वर्ल्ड रिपोर्ट, 9 अक्तूबर, 1953
6. लुई डुप्री "माउन्टेन्स गो टू मोहम्मद जहीर", अमेरिका यूनिवर्सिटीज फील्ड स्टाफ रिपोर्ट्स (न्यूयार्क), सं0 4, अंक 6, 1960, पृ. 3
7. द इजिशियन गजेट (काहिरा), 7 दिसम्बर, 1953

इसी अध्याय के अन्त में वर्णित की गई है। यहाँ केवल भारत और अफगानिस्तान के मध्य द्विपक्षीय राजनैतिक सम्बन्धों का विश्लेषण किया जा रहा है।

अफगान बादशाह की भारत यात्रा

फरवरी 1958 को भारत के राष्ट्रपति के निमंत्रण पर अफगान शासनाध्यक्ष महामहिम जहीरशाह भारत की राजकीय यात्रा पर नई दिल्ली पधारे। उनके साथ अफगानिस्तान के उप प्रधानमंत्री एवं विदेश मंत्री सरदार मोहम्मद नईम भी थे। अफगान शासनाध्यक्ष की भारत की यात्रा से पूर्व भारत में एक मासिक पत्र 'इण्डियन फॉरेन अफेयर्स' ने अपने सम्पादकीय में अफगान नरेश की आगामी भारत यात्रा का स्वागत करते हुए लिखा कि इस यात्रा से भारत अफगान सम्बन्धों में और अधिक प्रगाढ़ता आएगी। पत्र ने आगे लिखा "इस अवसर पर जब एशिया के दो महान देशों के नेता आपस में विचार-विमर्श करेगें तो दोनों देशों के पारस्परिक सम्बन्धों के अलावा पंचशील एंव शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व नीतियों को भी बढ़ावा मिलेगा"।[8]

अफगान नरेश के भारत आगमन के उपलक्ष्य में भारत के राष्ट्रपति डा0 राजेन्द्र प्रसाद ने 13 फरवरी को एक राजकीय भोज का आयोजन किया। इस अवसर पर बोलते हुए अफगान नरेश ने भारत द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में की गई प्रगति की चर्चा करते हुए कहा कि इतने अल्प समय में हुई तरक्की प्रशंसनीय है।[9] उन्होंने आगे कहा कि अफगानिस्तान की जनता जो स्वयं राष्ट्रीय विकास के काम में संलग्न है, भारत के लोगों के अथक परिश्रम का सही मूल्यांकन कर सकती है। अफगान नरेश ने कहा "अफगान जनता जो अपनी प्रगति में आने वाली कठिनाइयों का डटकर मुकाबला कर रही है, की यह हार्दिक इच्छा है कि विश्व के सभी राष्ट्रों, विशेषकर एशिया के लोगों की प्रगति के लिए प्रयत्न सफल हों"।[10] अफगान नरेश ने अपनी सरकार एवं अफगान जनता की ओर से भारत सरकार एवं भारतीय जनता को शुभकामनाएं देते हुए सफलता की कामना की।

भारत के राष्ट्रपति डा0 राजेन्द्र प्रसाद ने अफगान नरेश के द्वारा व्यक्त उद्‌गारों पर आभार प्रगट करते हुए कहा कि एशिया के राष्ट्रों को अपने विकास के कार्यक्रमों को और अधिक कर्मठता से करना होगा, ताकि अपनी जनता का जीवन स्तर ऊँचा किया जा सके। डा0 राजेन्द्र प्रसाद ने आगे कहा कि भारत अपनी समृद्धि के लिए किसी अन्य देश का शोषण करने के पक्ष में

---

8. इण्डियन फॉरेन अफेयर्स (नई दिल्ली), खंड 1, अंक 1, जनवरी 1958
9. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 4, अंक, 2 फरवरी, 1958, पृ. 15
10. वही

नहीं रहा है।[11] विश्व शान्ति के वातावरण में सभी देश, विशेषकर एशिया में, अपने आर्थिक विकास के कार्यो को पूरा कर सकते हैं। भारत के राष्ट्रपति ने आगे कहा "जनहित के लिए आर्थिक प्रगति की नीति का युद्ध या तनाव के साथ कोई तालमेल नहीं है। इस विचार एवं हमारी आवश्यकताओं ने शान्ति, पड़ोसियों के साथ अच्छे सम्बन्ध एवं अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव में विश्वास और अधिक सुदृढ़ कर दिया है।[12] भारत सरकार एवं जनता की ओर से शुभकामनाएं देते हुए राष्ट्रपति ने अफगान नरेश की भारत यात्रा की सुखद कामना की।

अफगान नरेश महामहिम जहीरशाह की भारत यात्रा की समाप्ति पर 14 फरवरी, 1958 को नई दिल्ली में जारी की गई संयुक्त विज्ञप्ति में कहा गया कि अपनी यात्रा के दौरान अफगान नरेश ने भारतीय राष्ट्रपति एवं प्रधानमंत्री से विश्व समस्याओं तथा पारस्परिक हितों के मामलों पर विचार किया। अफगान नरेश एवं भारत के प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने दोनों देशों के मध्य गहरे एवं मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों पर सन्तोष व्यक्त किया।[13] दोनों नेताओं ने इस बात पर प्रसन्नता व्यक्त की कि परस्पर सम्बन्धों में कोई भेद एवं गतिरोध नहीं हैं। संयुक्त विज्ञप्ति में आगे कहा गया कि अच्छे पड़ोसियों जैसे सम्बन्ध, परस्पर सहयोग, विश्व शान्ति एवं अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देने की इच्छा ऐसे आदर्श हैं, जिन पर दोनों देशों की विदेश नीतियाँ आधारित हैं।[14] भारत के प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू एवं अफगान नरेश जहीरशाह ने पारस्परिक सम्बन्धों को और अधिक प्रगाढ़ करने का दोनों सरकारों का निश्चय दोहराया।[15]

अफगान प्रधानमंत्री मोहम्मद दाऊद की भारत यात्रा

5 फरवरी, 1959 को अफगान प्रधानमंत्री सरदार मोहम्मद दाऊद भारत की यात्रा पर नई दिल्ली पधारे। अफगान नेता के स्वागत में दिए गए राजकीय भोज में बोलते हुए भारत के प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने भारत-अफगान सम्बन्धों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का उल्लेख किया। उन्होंने कहा कि दोनों देश शताब्दियों से ही ऐतिहासिक, परम्परागत, सांस्कृतिक एवं व्यापारिक सम्बन्धों से एक दूसरे से जुड़े रहे हैं।[16] श्री नेहरू ने भारत में विदेशी शासन के आगमन एवं भारत विभाजन से उत्पन्न परिस्थितियों, जिनसे भारत और अफगानिस्तान के मध्य सीधा सम्पर्क

---

11. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 4, अंक, 2 फरवरी, 1958, पृ. 15
12. वही
13. भारत सरकार, 'फॉरेन पालिसी ऑफ इण्डिया, टैक्ट्स ऑफ डाक्यूमैन्ट्स 1947-64', नई दिल्ली 1966, पृ. 261
14. वही
15. वही, पृ. 262
16. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 5, अंक 2, फरवरी 1959, पृ. 13

टूट गया था, का जिक्र करते हुए कहा कि ऐसी घटनाएँ दोनों देशों के प्राचीन एवं प्रगाढ़ मित्रता पूर्ण सम्बन्धों को कमजोर नहीं कर सकीं। युद्धोत्तर अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में दोनों देशों द्वारा शीत युद्ध एवं सैनिक गठबन्धनों में शामिल न होने की नीति तथा उपनिवेशवाद के विरूद्ध संघर्ष और स्वतंत्रता आन्दोलनों को भरपूर समर्थन आदि कुछ ऐसे आदर्श थे, जिन्होंने दोनों देशों को और अधिक समीप आने में सहायता की।[17] प्रधानमंत्री श्री नेहरू ने आगे कहा कि हमने कभी परस्पर व्यापार सम्बन्धों या छुटपुट विषयों पर चाहे कभी विचार-विमर्श न किया हो परन्तु मोटेतौर पर हम सहमत हैं और यही बात संतोषजनक है"।[18] प्रधानमंत्री ने अफगान नेता के भारत आगमन पर प्रसन्नता प्रकट करते हुए कहा कि वे अपने आपको दोस्तों के मध्य पाएँगें, जो दोनों देशों के हितों एवं विश्वशान्ति की कामना करते है। श्री नेहरू ने आगे कहा "हम एक दूसरे के सहायक सिद्ध हो सकते है। हमारी प्राचीन मित्रता हमारी शक्ति का स्त्रोत है। अपनी वर्तमान भारत यात्रा की समाप्ति पर जब आप वापस स्वदेश लौटेगें तो आप अपने साथ अफगान नरेश एवं जनता के लिए भारत की जनता की शुभकामनाएँ, मित्रता एवं सौहार्द्र साथ लेकर जाएँगें"।[19]

अपने जवाबी भाषण में अफगान प्रधानमंत्री सरदार मोहम्मद दाऊद ने कहा कि "इस क्षेत्र का इतिहास जो हमारे दोनों देशों की जनता के परस्पर सहयोग और मैत्री का साक्षी है, ही वास्तव में भारत एवं अफगानिस्तान की दोस्ती का आधार है"।[20] सरदार दाऊद ने आगे कहा कि भारत के स्वतंत्रता संग्राम के दौरान जिस प्रकार अफगान जनता ने अपनी सहानुभूति एवं नैतिक सहयोग भारत के लोगों के प्रति व्यक्त किया, उसी प्रकार भारत की जनता ने भी अफगान जनता की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष में नैतिक प्रोत्साहन दिया। ये सभी पुरानी स्मृतियाँ ही नहीं, बल्कि एक वास्तविक सच्चाई का प्रत्यक्ष रूप है। अफगान प्रधानमंत्री ने आगे कहा कि अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में दोनों देशों द्वारा एक ही तरह का रूख जो कि दोनों देशों की गुटनिरपेक्षता की नीति से प्रभावित है, परस्पर सम्बन्धों को अधिक मजबूत करने में भी सहायक सिद्ध हुआ है।

अफगान प्रधानमंत्री सरदार मोहम्मद दाऊद की भारत यात्रा की समाप्ति पर 8 फरवरी, 1959 को नई दिल्ली से जारी की गई संयुक्त विज्ञप्ति में कहा गया कि अपनी यात्रा के दौरान अफगान प्रधानमंत्री ने अपने भारतीय समकक्ष के साथ पारस्परिक हितों, अन्तर्राष्ट्रीय विषयों, विशेषकर पड़ोसी देशों के साथ सम्बन्धों पर निर्भीक एवं सौहार्द्रपूर्ण वातावरण में विचारों का आदान-प्रदान

---

17. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 5, अंक 2, फरवरी 1959, पृ. 13
18. वही, पृ. 14
19. वही
20. वही

किया।[21] संयुक्त विज्ञप्ति में आगे कहा गया कि दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों ने भारत और अफगानिस्तान के गहरे एवं मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों पर संतोष व्यक्त किया।[22]

प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू की अफगान यात्रा

अफगान सरकार के निमंत्रण पर भारत के प्रधानमंत्री अपनी अफगानिस्तान की राजकीय यात्रा के दौरान 14 सितम्बर, 1959 को काबुल पहुँचे। अपने काबुल प्रवास के दौरान प्रधानमंत्री श्री नेहरू ने अफगान नरेश, प्रधानमंत्री श्री दाऊद एवं अन्य अफगान नेताओं के साथ पारस्परिक सम्बन्धों एवं अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर विचारों का आदान-प्रदान किया।

14 सितम्बर, 1959 को भारतीय प्रधानमंत्री के सम्मान में आयोजित राजकीय भोज में बोलते हुए अफगान प्रधानमंत्री सरदार मोहम्मद दाऊद ने कहा कि दोनों देशों में मौजूदा मित्रतापूर्ण सम्बन्ध सदियों से ऐतिहासक, सांस्कृतिक एवं नैतिक मूल्यों पर आधारित रहे हैं। बाण्डुंग कान्फ्रेंस में प्रतिपादित सिद्धान्तों पर अफगानिस्तान का अडिग विश्वास जाहिर करते हुए प्रधानमंत्री श्री दाऊद ने कहा कि गुटनिरपेक्षता की नीति का सक्रिय अनुसरण दोनों देशों की मैत्री एवं सामंजस्य का मुख्य आधार है।[23]

भारत के प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने अपने जवाबी भाषण में अफगान नरेश एवं अफगान प्रधानमंत्री द्वारा व्यक्त उद्गारों पर आभार प्रकट करते हुए भारत एवं अफगानिस्तान में सदियों से चले आ रहे मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों का समय के परिवर्तन के बावजूद प्रगाढ़ता ग्रहण करते रहने पर संतोष व्यक्त किया।[24] भारत के विभाजन के उपरान्त भारत एवं अफगानिस्तान के बीच सीधा स्थल मार्ग टूटने का जिक्र करते हुए प्रधानमंत्री श्री नेहरू ने कहा कि समय और इतिहास के इतने बड़े हादसे से भी दोनों देशों के पारस्परिक मित्रतापूर्ण सम्बन्धों पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। श्री नेहरू ने आगे कहा "स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् दोनों देशों के बीच सम्बन्ध और अधिक प्रगाढ़ हुए हैं। हमारे विचार आपस में बहुत तालमेल रखते हैं। यही कारण है कि हमारे सम्बन्धों में सदा वृद्धि होती रही है"।[25] दोनों देशों के नेताओं की एक दूसरे देशों की यात्राओं का हवाला देते हुए श्री नेहरू ने कहा कि ऐसे मौके परस्पर सम्बन्धों को अधिक

---

21. 'फॉरेन पॉलिसी ऑफ इण्डिया, टैक्ट्स ऑफ डाक्यूमैन्ट्स 1947-64', नई दिल्ली 1966, पृ. 263
22. वही
23. वही, पृ 265
24. जवाहर लाल नेहरू, 'इण्डियन फॉरेन पॉलिसी सिलेक्टिड स्पीचिज सितम्बर 1946-अप्रैल 1961' (नई दिल्ली 1961), पृ. 291
25. वही

कारगर बनाने में सहायक रहे हैं। अन्त में भारतीय प्रधानमंत्री ने दोनों देशों में हर क्षेत्र में सहयोग की कामना करते हुए भारत द्वारा अफगानिस्तान के विकास कार्यों में यथा सम्भव सहायता देने का आश्वासन दिया।[26]

प्रधानमंत्री श्री नेहरू की अफगानिस्तान की यात्रा समाप्ति के अवसर पर 17 फरवरी, 1959 को काबुल में जारी की गई विज्ञप्ति में कहा गया कि इस यात्रा से दोनों देशों के मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों में एक नया अध्याय जुड़ गया है।[27] भारत और अफगानिस्तान के नेताओं ने दोनों देशों के पारस्परिक सक्रिय सहयोग, गुटनिरपेक्षता की नीति का अनुसरण एवं समर्थन को विश्वशान्ति कायम करने में सहायक बताते हुए आपसी सम्बन्धों को अधिक सुदृढ़ करने का संकल्प दोहराया।[28]

राष्ट्रपति डा0 राधा कृष्णन की अफगानिस्तान यात्रा

भारत के राष्ट्रपति डा0 राधा कृष्णन (11 से 15 मई, 1963) अफगानिस्तान की 5 दिन की राजकीय यात्रा पर काबुल पधारे। उनके साथ केन्द्रीय सूचना एवं प्रसारण मंत्री श्री बी0 गोपालरेड्डी भी गए। 11 मई, 1963 को अफगान नरेश महामहिम जहीरशाह ने भारतीय राष्ट्रपति के सम्मान में एक राजकीय भोज का आयोजन किया। अफगान नरेश ने उनके स्वागत भाषण में कहा "राष्ट्रों के बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध उन ताल्लूकातों का परिणाम है जिनका संरक्षण वहाँ की जनता को परस्पर आदर, विश्वास तथा सद्भावनाओं से करना चाहिए। समय की कसौटी पर खरे उतरे ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्ध जो भारत एवं अफगानिस्तान के मध्य सदियों से चले आ रहे हैं, इस तथ्य की पुष्टि करते हैं"।[29] परम्परागत मैत्री पूर्ण एवं सौहार्दपूर्ण सम्बन्धों की चर्चा करते हुए अफगान नरेश ने कहा कि दोनों देशों द्वारा बाण्डुंग सम्मेलन तथा बेलग्रेड सम्मेलन में अपनाए सिद्धान्तों पर विश्वास, गुटनिरपेक्षता की नीति तथा विश्वशान्ति को मजबूत करने का दृढ़ निश्चय, ऐसे तथ्य हैं जो दोनों देशों को और अधिक समीप ले आए हैं।[30] अपनी पिछली भारत यात्रा का उदाहरण देते हुए अफगान नरेश ने भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति डा0 राजेन्द्र प्रसाद के निधन पर अफगान सरकार एवं अफगान जनता की संवेदनाएँ प्रकट की। राष्ट्रपति डा0 राधा कृष्णन को अपने समय के महान दार्शनिकों एवं विद्वानों में से एक बताते हुए अफगान नरेश ने

---

26. जवाहर लाल नेहरू, 'इण्डियन फॉरेन पॉलिसी सिलेक्टिड स्पीचिज सितम्बर 1946-अप्रैल 1961' (नई दिल्ली 1961), पृ. 292
27. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 5, अंक 9, सितम्बर 1959, पृ. 209
28. वही
29. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 9, अंक 5, मई 1963, पृ. 104
30. वही

डा0 राधा कृष्णन की भूरि-भूरि प्रशंसा की तथा बताया कि जनता उन्हें आदर की दृष्टि से देखती है।[31] महामहिम जहीरशाह ने भारत के राष्ट्रपति की अफगानिस्तान की यात्रा मंगलमय एवं सुखद होने की कामना करते हुए दोनों देशों में पारस्परिक सम्बन्धों में अधिक मजबूती लाने पर बल दिया। अपने भाषण में राष्ट्रपति डा0 राधा कृष्णन ने अफगान सरकार एवं जनता का धन्यवाद करते हुए दोनों देशों के परस्पर मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों का उल्लेख किया।[32] अफगान नरेश द्वारा दोनों देशों की सरकारों का अपनी अपनी जनता का जीवन स्तर ऊँचा करने के प्रयत्नों का जिक्र करते हुए भारत के राष्ट्रपति ने कहा "आजादी एक ऐसा अवसर है जिसका प्रयोग हमें अपनी जनता को यह अहसास कराने के लिए करना है कि वे उस देश में रहते हैं जहाँ उनके हितों की सुरक्षा होती है।"[33] भारत के राष्ट्रपति ने आशा व्यक्त की कि जो आदर्श भारत एवं अफगानिस्तान की सरकारों ने अपने समक्ष रखे हैं, उनको कार्यान्वित करने से दोनों देश एक दूसरे के अनुभवों से लाभ उठाएँगें।

भारत के राष्ट्रपति डा0 राधा कृष्णन की अफगानिस्तान यात्रा की समाप्ति पर 15 मई, 1963 को काबुल में जारी की गई संयुक्त विज्ञप्ति में कहा गया कि अपने काबुल प्रवास के दौरान राष्ट्रपति का भव्य स्वागत किया गया। डा0 राधा कृष्णन ने अफगान नरेश, प्रधानमंत्री डा0 मोहम्मद युसूफ तथा अफगान नेताओं से पारस्परिक हितों पर विचार-विमर्श किया।[34] संयुक्त विज्ञप्ति में कहा गया "दोनों राष्ट्राध्यक्षों का यह विश्वास है कि दोनों देशों के नेताओं एवं अधिकारियों की एक दूसरे के देशों की सद्भावना-यात्रा से मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों को अधिक सुदृढ़ करने में सहायता मिलेगी तथा ऐसी यात्राओं के आदान-प्रदान का क्रम जारी रहेगा"।[35] भारतीय राष्ट्रपति डा0 राधा कृष्णन की अफगानिस्तान यात्रा का स्वागत करते हुए दैनिक हिन्दू ने अपने सम्पादकीय में लिखा कि जिस तरह भारतीय अतिथि का स्वागत किया गया तथा भारत के प्रति अफगान नेताओं ने अपने उद्गार व्यक्त किए उससे यह स्पष्ट होता है कि दोनों देशों में प्रगाढ़ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध हैं।[36] इसी तरह दैनिक इण्डियन एक्सप्रेस ने अपने सम्पादकीय में लिखा कि भारतीय राष्ट्रपति की अफगान यात्रा से दोनों देशों के पारस्परिक मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध और अधिक मजबूत हुए हैं।[37]

---

31. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 9, अंक 5, मई 1963, पृ. 104
32. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 9, अंक 5, मई 1963, पृ. 103
33. वही
34. वही, पृ. 105
35. वही
36. द हिन्दू (मद्रास), 15 मई, 1963
37. सम्पादकीय 'इण्डो अफगान टाईज', इण्डियन एक्सप्रेस, 17 मई, 1963

(ख) आर्थिक सम्बन्ध

भारत एवं अफगानिस्तान में राजनैतिक सम्बन्धों में मजबूती के साथ-साथ प्रारम्भ में दोनों देशों में आर्थिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्धों में भी वृद्धि हुई। 1950 में सम्पन्न हुए भारत-अफगान व्यापार समझौते को 1952 में पुन: अनुमोदित किए जाने से व्यापार के लिए एक कारगर भूमिका तैयार हो गई। परन्तु 1953-63 के काल में भारत-अफगान व्यापार का आदान-प्रदान कोई विशेष प्रगति नहीं कर पाया। इसका मुख्य कारण पाकिस्तान द्वारा स्थल मार्ग से दोनों देशों में व्यापार में अड़चनें डालना रहा। 1953-54 में भारत और अफगानिस्तान के बीच कुल व्यापार 1952-53 की अपेक्षा कम था। भारत सरकार का ध्यान जब इस ओर आकृष्ट किया गया तो तत्कालीन वाणिज्य एवं उद्योगमंत्री ने कहा कि इसका मुख्य कारण भारत के सूती कपड़ों की कीमतों तथा अफगानिस्तान के सूखे मसालों की कीमत में गिरावट आना था। यह पूछे जाने पर कि अफगानिस्तान की मंडियों में भारत के व्यापारिक हितों का सरंक्षण कैसे होगा? वाणिज्य मंत्री ने कहा "हम अपने निर्यात कर में समय समय पर सुधार करते रहते हैं, ताकि हमें किसी भी समय क्रय-विक्रय से हाथ न धोना पडे"।[38]

22 सितम्बर, 1954 को केन्द्रीय संचारमंत्री ने लोकसभा में एक प्रश्न के उत्तर में बताया कि अफगान सरकार ने काबुल में हवाई संचार-व्यवस्था तथा मौसम-विज्ञान सम्बन्धी जानकारी के लिए भारत से आवश्यक उपकरण एवं तकनीकी सहायता माँगी थी। भारत सरकार इस पर विचार कर रही है, परन्तु दोनों देशों में अभी इस दिशा में कोई समझौता नहीं हुआ है।[39]

मध्य जनवरी 1955 में अफगानिस्तान से एक औद्योगिक शिष्ट मण्डल भारत की सद्‌भावना यात्रा पर आया। यह शिष्ट मण्डल भारत सरकार के निमंत्रण पर आया था।[40] जिसका मुख्य ध्येय भारत में हैण्डलूम टैक्सटाईल तथा लघु उद्योगों का गठन एवं कार्य विधि का अध्ययन करना था। केन्द्रीय वाणिज्य एवं उद्योग उपमंत्री श्री कानूनगो ने लोकसभा में बताया कि अफगान शिष्ट-मण्डल ने बम्बई, हैदराबाद, मद्रास, दिल्ली, लखनऊ और आन्ध्रप्रदेश का दौरा किया।[41] एक सांसद द्वारा यह पूछे जाने पर कि जिस सिलसिले में अफगान शिष्ट-मण्डल भारत आया था, क्या उस सिलसिले में उनसे कोई परामर्श किया गया, जिससे भारत के औद्योगिक क्षेत्र में कोई सहयोग हो सकता है? इस पर मंत्री महोदय ने बताया कि अफगान शिष्ट-मण्डल केवल

---

38. राज्यसभा डिबेट्स, खंड 7, 13-30 सितम्बर 1954, का. 3679-81
39. लोकसभा डिबेट्स, खंड 4, अंक 23, 22 सितम्बर, 1954, का. 1445
40. लोकसभा डिबेट्स, खंड 1, भाग 1, अंक 10, 7 मार्च, 1955, का. 672
41. वही

अध्ययन एवं सर्वेक्षण हेतु आया था, जिसका उनको मौका दिया गया।[42] सांसद श्री रघुनाथ सिंह द्वारा यह पूछे जाने पर कि क्या भारत सरकार अफगानिस्तान के उद्योग धन्धों के विकास के लिए उसकी सहायता तथा सहयोग प्रदान करना चाहती है तो वाणिज्य एवं उद्योग उपमंत्री ने कहा "कुछ दिन पहले अफगानिस्तान से एक शिष्ट-मण्डल भारत आया था, जिसने भारत सरकार के अधिकारियों एवं योजना आयोग के साथ उद्योगों से सम्बन्ध रखने वाले बहुत से मामलों पर विचार किया। यह बातचीत छोटे उद्योगों के विषय में खासतौर से की गई थी। यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि इन मामलों में सरकार सभी मित्र देशों को सभी सम्भावित सहायता देने की इच्छुक है"।[43]

पाकिस्तान का प्रतिकूल रवैया भारत-अफगानिस्तान व्यापार में बाधक रहा है। 10 अगस्त, 1955 को केन्द्रीय वाणिज्य मंत्री ने लोकसभा में बताया कि भारत द्वारा अफगानिस्तान को भेजी गई दैनिक इस्तेमाल में आने वाली वस्तुएं काफी मात्रा में पाकिस्तान में रूकी पड़ी हैं। इस सन्दर्भ में मंत्री महोदय ने आगे कहा कि भारत सरकार ने यह मामला पाकिस्तान की सरकार के साथ उठाया है।[44] पाकिस्तान द्वारा स्थल मार्ग से अफगानिस्तान को सामान भेजने में अड़चनें उत्पन्न करने के परिणामस्वरूप कुछ सामान विमान द्वारा भी निर्यात किया गया। अप्रैल-मई, 1955 की अवधि में विमान द्वारा भारत से अफगानिस्तान को 1,37,000 रूपये का निर्यात हुआ और अफगानिस्तान से भारत को 6,000 रूपये का आयात हुआ।[45]

अप्रैल-सितम्बर, 1955 की अवधि में भारत ने अफगानिस्तान को 59.56 लाख रूपये का निर्यात किया तथा अफगानिस्तान से 63.11 लाख रूपये का आयात किया। इसका ब्यौरा निम्न तालिका में दिया गया है:-

तालिका 5.1

भारत द्वारा अफगानिस्तान से आयात (अप्रैल-सितम्बर, 1955)*

वस्तु का नाम	मूल्य हजार रूपये में
फल और सब्जियाँ	5,546
बीज	100
ड्रग्स एवं दवाइयाँ	83
फिल्म्स एक्सपोज्ड	65
छालें एवं खालें	418
अन्य वस्तुएं	99
कुल योग	6311

42. लोकसभा डिबेट्स, खण्ड 1, भाग 1, अंकं 10, 7 मार्च 1955, का. 673
43. लोकसभा डिबेट्स, खंड 1, भाग 1, अंक 19, 21 मार्च, 1955, का. 1208
44. लोकसभा डिबेट्स, खंड 4, अंक 13, 10 अगस्त, 1955, का. 3550
45. लोकसभा डिबेट्स, खंड 4, अंक 16, अगस्त 1955, का. 3707

* स्त्रोत: लोकसभा डिबेट्स, खंड 7, अंक 1, 21 नवम्बर, 1955, पृ. 22

तालिका 5.2

भारत द्वारा अफगानिस्तान को निर्यात (अप्रैल-सितम्बर, 1955)**

वस्तु का नाम	मूल्य हजार रू0 में
गर्म मसाले	244
चाय	1216
कपड़ा	21
जूते	42
दवाइयाँ	6
साबुन	2
टॉयलेट का सामान	13
रासायनिक पदार्थ	3
शीशे का सामान	14
चमड़े का सामान	36
हार्डवेयर, कटलरी इत्यादि	428
रबर का सामान	147
कॉटन पीस गुड्स	2575
अन्य (काटन)	146
ऊनी वस्त्र	86
पटसन का सामान	2
आर्ट सिल्क पीस गुड्स	48
अन्य वस्तुएं	927
कुल योग	5956

उपर्युक्त तालिकाओं में दिए गए विवरण से ज्ञात होता है कि भारत द्वारा अफगानिस्तान से आयातित सामान में फल, सब्जियाँ तथा छालें और खालें मुख्य वस्तुएं थी, जबकि भारत द्वारा निर्यात किये गए सामान में चाय एवं कॉटन पीस गुड्स मुख्य वस्तुएं थी। इस अवधि में

** स्त्रोत: लोकसभा डिबेट्स, खंड 7, अंक 1, 21 नवम्बर, 1955, अनुबन्ध सख्या 12, पृ. 21

कुल व्यापार अफगानिस्तान के पक्ष में रहा।

1955 में भारत ने अफगानिस्तान में ऋतु विज्ञान सम्बन्धी संस्थाओं एवं उड्डयन केन्द्रों की स्थापना के लिए संयत्र दिए। इनमें 6 पारेषक, 6 प्रापक, 6 शक्ति प्रदाय ईकाइयाँ, स्तम्भ और स्तम्भ का सामान शामिल था।[46] इन संयत्रों की स्थापना काबुल और कंधार में की जानी थी। इन संयत्रों को लगाने एवं अफगान अधिकारियों को उचित प्रशिक्षण देने के लिए भारत ने कुछ अधिकारियों को भी अफगानिस्तान भेजा।[47] सितम्बर, 1955 तक अफगानिस्तान में 13 भारतीय अधिकारी सेवारत थे और भारतीय दूतावास में भारतीयों की संख्या 28 के लगभग थी।[48]

26 अप्रैल, 1956 को जब भारत सरकार का ध्यान इस तथ्य की ओर आकृष्ट किया गया कि भारत द्वारा अफगानिस्तान को निर्यात हरी चाय की पत्ती की मात्रा में कमी हो रही है तो वाणिज्य मंत्री ने इस तथ्य को स्वीकार करते हुए यह बताया कि विगत चार वर्षो में देश में हरी चाय पत्ती के उत्पादन में भी कमी हुई है।[49] लोकसभा में इस विषय पर हो रही बहस में एक सांसद के पूछे जाने पर कि भारत में अफगानिस्तान से आने वाले व्यापारी भारतीय हरी चाय की अपेक्षा जापान की हरी चाय पत्ती को अच्छा बताते हैं तो भारत सरकार चाय की किस्म सुधारने के बारे में क्या कदम उठा रही है? वाणिज्य मंत्री ने बताया कि सरकार चाय के स्वाद को बदलने में असमर्थ है।[50]

वर्ष 1956 के आरम्भ में अफगानिस्तान से एक शिष्ट मण्डल भारत आया, जिसका उद्देश्य भारत में सामुदायिक विकास परियोजनाओं की कार्यप्रणाली का अध्ययन करना था। यह शिष्ट मण्डल मद्रास, बम्बई, राजस्थान, उत्तरप्रदेश, पंजाब, हिमाचल प्रदेश तथा दिल्ली में सामुदायिक विकास केन्द्रों का भ्रमण करके स्वदेश रवाना हो गया।[51] अफगानिस्तान ने अपने देश में सामुदायिक विकास परियोजनाओं को कार्यान्वित करने के लिए भारत सरकार से कोई सहयोग नहीं मांगा।

1955-56 के दौरान भारत और अफगानिस्तान में विमान द्वारा व्यापार में काफी वृद्धि हुई। इस अवधि में भारत ने अफगानिस्तान से 29.61 लाख रूपये का आयात किया तथा 33.12 लाख रूपये का निर्यात किया। यह आयात-निर्यात विमान द्वारा हुआ।[52] 12 मई, 1956 से भारत की विमान सेवा कम्पनी इण्डियन एयरलाइन्स कारपोरेशन ने दिल्ली और काबुल के

---

46. लोकसभा डिबेट्स, खंड 11, भाग 1, अंक 34, 6 अप्रैल, 1956, अनुबन्ध सख्या 3, पृ. 619
47. वही
48. लोकसभा डिबेट्स, खंड 2, भाग 1, अंक 39, 14 अप्रैल, 1956, का. 2253
49. लोकसभा डिबेट्स, खंड 3, भाग 1, अंक 48, 26 अप्रैल, 1956, का. 2927
50. वही, का. 2928
51. लोकसभा डिबेट्स, खंड 4, भाग 1, अंक 73, 17 मई, 1956, अनुबन्ध सं0 13, का. 3959
52. वही, का. 3976-78

मध्य यात्री एवं कारगो विमान सेवा सप्ताह में दोनों तरफ से दो बार कर दी। 1956 में इण्डो-अफगान चैम्बर ऑफ कामर्स की दिल्ली और अमृतसर शाखाओं ने भारत सरकार को एक आवेदन पत्र दिया, जिसमें अफगानिस्तान सरकार पर भारतीय व्यापारियों के साथ भेदभाव बरतने का आरोप था। भारत सरकार ने इस आवेदन पत्र की प्राप्ति की पुष्टि करते हुए आश्वासन दिया कि सरकार आरोपों की बारीकी से जाँच कर रही है।[53] इण्डो-अफगान चेम्बर ऑफ कामर्स की दिल्ली शाखा ने सुझाव रखा कि भारत-पाकिस्तान सीमा पर कस्टम चौकी के साथ ही साथ एक चेक पोस्ट और स्थापित किया जाए, जो यह तय करे कि अफगानिस्तान से आयातित फल-सब्जियाँ खाने योग्य है या नहीं। तत्कालीन वाणिज्य मंत्री ने कहा कि भारत सरकार इस सुझाव पर विचार कर रही है। इन्डो-अफगान चेम्बर ऑफ कामर्स (दिल्ली) के इस सुझाव पर कि अफगानिस्तान से सामान आयात करने के लिए अमृतसर स्थित अफगान कम्पनी की सेवाओं के लाभ के बजाय बाजार में "खुली प्रतियोगिता" की नीति अपनाई जानी चाहिए, पर टिप्पणी करते हुए केन्द्रीय वाणिज्य मंत्री ने कहा कि सीमित आयात नीति के अन्तर्गत आयात लाईसेन्स उन्हीं व्यक्तियों एवं व्यापार संस्थानों को जारी किए गए थे, जो 1945 से 1954 तक अफगानिस्तान से फल, मेवे इत्यादि निर्यात करते आए थे। मंत्री महोदय ने यह बात स्पष्ट की कि अफगानिस्तान से आयात करने के लिए व्यापारियों को अमृतसर स्थित अफगान कम्पनी को मध्यस्थ बनाना जरूरी नहीं है।[54] 30 नवम्बर, 1956 को भारत सरकार ने सूचित किया कि अफगानिस्तान द्वारा भारत के व्यापारियों के साथ भेदभाव का बरताव करने का आरोप निराधार था।[55]

भारत द्वारा अफगानिस्तान को "ट्रान्सफरेबल एकाउन्ट एरिया" वाली श्रेणी में सम्मिलित करने से भारत में यह अटकलें लगाई जाने लगी कि ऐसा करने से भारत से अफगानिस्तान को निर्यात में कमी आएगी। जब इस आशय का प्रश्न लोकसभा में उठाया गया तो केन्द्रीय वाणिज्य मंत्री ने यह स्वीकार किया कि 1954 के बाद भारत द्वारा अफगानिस्तान को निर्यात में कमी आई, परन्तु यह कहना कठिन है कि ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि अफगानिस्तान 'ट्रान्सफरेबल एकाउन्ट एरिया' में आया था।[56] 1956 के दौरान भारत द्वारा अफगानिस्तान को निर्यात की जाने वाली हरी चाय पत्ती की मात्रा में काफी कमी आई। कुछ क्षेत्रों में यह सोचा जाने लगा कि शायद ऐसा इसलिए हुआ था क्योंकि अफगानिस्तान को "ट्रान्सफरेबल एकाउन्ट एरिया" में शामिल हो गया था। केन्द्रीय वाणिज्य मंत्री ने इस विषय पर विचार व्यक्त करते हुए कहा कि हरी चाय

---

53. लोकसभा डिबेट्स, खंड 7, भाग 1, अंक 43, 12 सितम्बर, 1956, का. 2666-2667
54. लोकसभा डिबेट्स, खंड 8, भाग 1, अंक 10, 27 नवम्बर, 1956, का. 608
55. लोकसभा डिबेट्स, खंड 8, भाग 1, अंक 13, 30 नवम्बर, 1956, का. 800
56. लोकसभा डिबेट्स, खंड 9, भाग 1, अंक 25, 18 दिसम्बर, 1956, का. 1630

पत्ती के अफगानिस्तान को निर्यात में गिरावट का मुख्य कारण जापान द्वारा अफगानिस्तान को वैसी ही चाय की पत्ती कम दरों पर उपलब्ध करवाना था। उन्होंने परामर्श दिया कि यदि भारत के व्यापारी भी हरी चाय पत्ती के अन्तर्राष्ट्रीय मूल्य के मुकाबले कम मूल्य आँके तो अफगानिस्तान को भारत से हरी चाय पत्ती के निर्यात की मात्रा बढ़ाई जा सकती है।[57]

22 मई, 1957 को भारत सरकार ने लोकसभा में रहस्योद्घाटन किया कि अफगानिस्तान सरकार ने भारत से होकर अफगानी माल के गुजरने के सम्बन्ध में वर्तमान प्रक्रिया को सुधारने के लिए एक प्रस्ताव पेश किया है, जो भारत सरकार के केन्द्रीय राजस्व बोर्ड के विचाराधीन है।[58] इस विषय पर विदेश कार्य उपमंत्री श्रीमती लक्ष्मी मेनन ने लोकसभा में कहा कि 1955 तक अफगानिस्तान का माल भारत से गुजरने के मामले पर इस नीति का अनुसरण होता रहा, बाद में अफगान सरकार ने इस प्रक्रिया में परिवर्तन करने के लिए सुझाव दिए। इन सुझावों को ऐसे ही लागू करने में कुछ कठिनाइयाँ थीं। फलस्वरूप भारत सरकार ने भी कुछ सुझाव रखे, जिन पर दोनों देशों के अधिकारीगण विचार-विमर्श कर रहे हैं।[59] 1956 में भारत को अफगानिस्तान से सूखे मेवे के आयात में भारी मात्रा में कमी आई। अप्रैल से सितम्बर, 1956 तक अफगानिस्तान से भारत को सूखे मेवे का आयात 110 लाख रूपये का हुआ जबकि 1955 की इसी अवधि में यह 196 लाख रूपये था।[60] भारत और अफगानिस्तान में परस्पर व्यापार को बढ़ावा देने के लिए एक अफगान शिष्ट-मण्डल ने भारत की यात्रा की।

1955-56 में अफगानिस्तान को भारत से निर्यात 2,14,38,000 रूपये, 1956-57 की अवधि में 1,64,28,000 रूपये तथा अप्रैल 1957 में 1,45,000 रूपये का हुआ। इसका विवरण आगे तालिका 5.3 में दिया गया है:

---

57. लोकसभा डिबेट्स, खंड 9, भाग 1, अंक 25, 18 दिसम्बर, 1956, का. 1631
58. लोकसभा डिबेट्स, खंड 1, भाग 1, अंक 3, 22 मई, 1957, का. 1313
59. वही, का. 1314
60. लोक सभा डिबेट्स, खंड 2, भाग 1, अंक 13, 27 मई, 1957, का. 2083

तालिका 5.3

भारत द्वारा अफगानिस्तान को निर्यात 1955-56 से अप्रैल, 1957

(मूल्य हजार रूपये में)***

वस्तु का नाम	1955-56	1956-57	अप्रैल 1957
मसाले	771	397	13
चाय	5,887	2,981	272
रेडीमेड कपड़े	136	374	10
कटलरी और लोहे का सामान	792	820	62
कागज,गत्ता और स्टेशनरी	255	284	82
खालें और चमड़ा	518	302	20
रबड़ से बनी चीजें	608	266	10
सूत और उससे बनी चीजें	9,688	7,234	627
अन्य वस्तुएं	2,673	3,770	354
कुल योग	21,438	16,428	1,450

उपर्युक्त तालिका में प्रस्तुत विवरण के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि चाय एवं सूत और उससे बनी वस्तुओं का भारत से अफगानिस्तान को निर्यातित वस्तुओं में बोलबाला रहा। यद्यपि 1956-57 में निर्यात में कमी आई, जिसमें अन्य कारणों के अलावा अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में अन्य देशों से प्रतियोगिता भी शामिल थी।[61]

भारत-अफगान समझौता (जून 1957)

14 जून, 1957 को भारत और अफगानिस्तान के बीच एक व्यापार समझौता सम्पन्न हुआ, जिसका मुख्य उद्देश्य दोनों देशों के बीच प्रचलित व्यापार को प्रोत्साहन देना एवं दोनों देशों द्वारा परस्पर व्यापार में पेश आने वाली रूकावटों को दूर करना था। यह समझौता मित्रतापूर्ण एवं सौहार्द्रपूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुआ, जिसमें दोनों देशों ने आपसी लाभ एवं पारस्परिक संतुलन लाने के लिए अपना दृढ़ विश्वास दोहराया।[62]

इस समझौते के अन्तर्गत 1952 में सम्पन्न हुए भारत-अफगान मैत्री तथा वाणिज्य समझौते

*** स्त्रोत: लोकसभा डिबेट्स, खंड 8, अंक 4, 14 नवम्बर 1957, अनुबन्ध संख्या 69
61. लोकसभा डिबेट्स, दूसरी सीरिज, खंड 8, अंक 7, 19 नवम्बर, 1957, का. 1195
62. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 3, अंक 6, जून 1957, पृ. 117

की धारा 15 में जो सुविधाएँ प्रदान की गई थी, उनको बढ़ाया गया। इस समझौते के लागू होने के प्रथम वर्ष में परस्पर व्यापार की सीमा 330.5 लाख रूपये तक निर्धारित की गई। इसमें यह भी प्रविधान रखा गया कि अफगानिस्तान द्वारा भारत को निर्यात किए गए सामान का भुगतान भारतीय रुपये में होगा तथा व्यापार में परस्पर सतुंलन रखा जाएगा।[63] भारत के निर्यातक, जिनको अफगानिस्तान से सूखा मेवा इत्यादि मंगवाने के लिए परमिट जारी किए गए थे, से अनुरोध किया गया कि वे आयातित माल की ही मात्रा के बराबर अफगानिस्तान को निर्यात करें।

अगस्त, 1957 में इन्जीनियरिंग एक्सपोर्ट प्रोमोशन काऊन्सिल का एक शिष्ट मण्डल अफगानिस्तान गया, जिसने वहाँ सर्वेक्षण करने के बाद पाया कि अफगानिस्तान में भारतीय इन्जीनियरिंग वस्तुओं के निर्यात करने का अच्छा अवसर है।[64] नवम्बर, 1957 में भारतीय चाय बोर्ड के चेयरमैन ने अफगानिस्तान की यात्रा की, जिसका मुख्य उद्देश्य भारत से उस देश को निर्यातित चाय में लगातार आ रही कमी का कारण पता लगाना एवं चाय व्यापार को बढ़ावा देना था। जनवरी-अक्टूबर, 1957 की अवधि में भारत ने अफगानिस्तान से 360 लाख रूपये का माल आयात किया तथा 141 लाख रूपये का निर्यात किया।[65]

जनवरी-अप्रैल, 1958 की अवधि में भारत का अफगानिस्तान से आयात 162.45 लाख रूपये तथा भारत से निर्यात 85.68 लाख रूपये रहा।[66] 11 जुलाई, 1958 में काबुल में भारत एवं पाकिस्तान के प्रतिनिधियों के मध्य एक अन्य व्यापार समझौते पर हस्ताक्षर किए गए जिसमें जून, 1957 वाले समझौते की कार्यावधि एक वर्ष तक आगे बढ़ा दी गई।[67] इस अवसर पर दोनों देशों ने परस्पर व्यापार संतुलन कायम रखने एवं व्यापार को प्रोत्साहन देने का संकल्प लिया।

1957 के दौरान भारत ने अफगानिस्तान से 17,123 टन सूखे मेवे का आयात किया, जिसका मूल्य 33.42 लाख रूपये था। जनवरी-अप्रैल, 1958 की अवधि में यह मात्रा 5,821 टन थी जिसका मूल्य 12.85 लाख रूपये था।[68] जून, 1958 के दौरान अफगान-पाकिस्तान की परस्पर वार्ता सम्पन्न हुई, जिससे दोनों देशों के मध्य कुछ अवधि के लिए परस्पर सीमा व्यापार फिर शुरू हो गया। इससे भारत-अफगानिस्तान व्यापार में भी सुधार हुआ, जिसका प्रभाव 1958-59 की अवधि में भारत द्वारा अफगानिस्तान को निर्यात की मात्रा में वृद्धि से स्पष्ट होता है।[69] भारत

63. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 3, अंक 6, जून 1957, पृ. 117
64. लोकसभा डिबेट्स, खंड 15, चौथी सीरिज, 22 अप्रैल, 1958, का. 10828
65. वही, का. 10827
66. लोकसभा डिबेट्स, पाँचवी सीरिज, खंड 19, 4 सितम्बर, 1958, का. 4649
67. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 4, अंक 7, जुलाई 1958, पृ. 111
68. लोकसभा डिबेट्स, पाँचवी सीरिज, खंड 19, 4 सितम्बर, 1958, का. 4688
69. सेन, सुनन्दा, 'इण्डियन बाइलेटरल पेमेन्ट्स एण्ड ट्रेड एग्रीमेन्ट्स', (कलकत्ता 1965), पृ. 174

ने काबुल में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार प्रदर्शनी में भी भाग लिया। एक भारतीय विशेषज्ञ के अनुसार इन सुअवसरों के बावजूद भी भारत अपने निर्यात की मात्रा अफगानिस्तान को बढ़ा पाने तथा कुल व्यापारिक संतुलन को भारत के पक्ष में लाने में असमर्थ रहा।[70]

जून 1957 का भारत-अफगान समझौता जो हर वर्ष एक साल की अवधि तक बढ़ा दिया जाता था, की अवधि 21 जुलाई, 1959 को समाप्त हो गई। तदुपरान्त अफगानिस्तान से एक व्यापारिक शिष्ट-मण्डल अगस्त, 1959 में नए व्यापार समझौते का प्रारूप तैयार करने तथा समझौता सम्पन्न करने के लिए भारत आया।[71] इस संदर्भ में दोनों देशों के मध्य बातचीत हुई तथा 11 अगस्त, 1959 को दोनों देशों में व्यापार समझौता सम्पन्न हो गया। इस समझौते का मुख्य आकर्षण दोनों देशों का अपनी-अपनी आयात-निर्यात की नीतियों एवं विदेशी मुद्रा स्थिति को प्रधानता देते हुए पारस्परिक व्यापार में संतुलन लाने के लिए उचित एवं कारगर कदम उठाना था।[72] दोनों देशों ने तय किया कि वे अपने-अपने देश के व्यापरियों को परस्पर व्यापार बढ़ाने के लिए अधिक सुविधाएँ जुटाएँगे। इस समझौते में यह भी प्रविधान रखा गया कि परम्परागत भुगतान तथा व्यापार सम्बन्धों को कायम रखते हुए 'द अफगानिस्तान बैंक' भारत में 'स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया' के साथ विशेष स्वसतुंलन खाता खोलेगा। अफगानिस्तान से हाइड्स और स्किन्स (छालें और खालें) के आयात के लिए लाईसैंस नीति उदार बना दी गई तथा इनसे प्राप्त होने वाली राशि को विशेष खाते में जमा किये जाने का प्रविधान रखा गया। इस समझौते के अन्तर्गत भारत सरकार ने अफगानिस्तान द्वारा अन्य देशों को निर्यात में अपने क्षेत्र में सुविधाएँ प्रदान करने का भी वचन दिया।[73] यह भी तय किया गया कि दोनों देश विशेष कमेटियों की स्थापना करेंगें, जो परस्पर व्यापिरिक संतुलन कायम करने तथा धन के भुगतान में आने वाली अड़चनों को दूर करने में सहायक हों।

इस समझौते के सम्पन्न होने तथा अफगानिस्तान-पाकिस्तान में परस्पर सम्बन्धों में सुधार से भारत और अफगानिस्तान में परस्पर व्यापार में वृद्धि हुई। 1960-61 की अवधि में भारत का अफगानिस्तान को निर्यात बढ़कर 643 लाख तक पहुँच गया, जो 1959-60 में 486 लाख रूपये था।[74] दोनों देशों में व्यापारिक संतुलन बनाये रखने के लिए उठाए गए कारगर कदमों

---

70. जाफरी, एच0ए0एस0, 'इण्डो-अफगान रिलेशन्स 1947-67', स्टर्लिंग प्रकाशन (नई दिल्ली), 1976, पृ. 137
71. लोकसभा डिबेट्स, खंड 32, 6 अगस्त, 1959, का. 888
72. भारत-अफगान व्यापार समझौता अगस्त 1959 को पूर्ण विस्तार के लिए देखें- 'भारत सरकार इण्डियाज ट्रेड एग्रीमेन्ट्स विद अदर कंट्रीज' (नई दिल्ली), 1960, पृ. 1-7
73. वही
74. जाफरी, देखिए क्र. 70, पृ. 140

का परिणाम यह निकला कि अफगानिस्तान का भारत को निर्यात 590 लाख रूपये से घटकर 502 लाख रूपये रह गया तथा इस प्रकार कुल व्यापार संतुलन बहुत वर्षों बाद भारत के पक्ष में आ गया। एक प्रश्न का उत्तर देते हुए केन्द्रीय वाणिज्य उपमंत्री ने राज्य सभा में 1 दिसम्बर, 1959 को भारत-अफगानिस्तान के परस्पर व्यापार में सतुंलन लाने के लिए अपनाई गई रणनीति का जिक्र करते हुए कहा "आयात करने वाले व्यापारी जब परिमट के लिए प्रार्थना पत्र देते हैं तो उन्हें सरकार को यह वचन देना पड़ता है कि अफगानिस्तान से आयातित सामान के बराबर ही वे भारतीय वस्तुओं का निर्यात करेगें। ऐसे व्यापारी यदि निर्धारित समय के अन्दर अपने वचन को पूरा करने में असमर्थ रहते हैं तो उन्हें पुन: पंजीकरण करवाना पड़ेगा। मान्यता प्राप्त आयात-निर्यात करने वाले व्यापारियों पर कड़ी निगरानी रखी जाती है तथा उन्हें पाक्षिक रिपोर्ट सरकार को देनी पड़ती है"।[75]

1961[76] और 1962[77] में पुराने भारत-अफगान व्यापार समझौते का पुन: नवीनीकरण किया गया। इस नवीनीकरण में कोई नया प्रविधान नहीं जोड़ा गया। परन्तु इस व्यापार समझौते से नवीनीकरण का जो अनुकूल प्रभाव भारत-अफगान व्यापार सम्बन्धों पर पड़ना था, वह 1961 में अफगानिस्तान सम्बन्धों में गिरावट आ जाने से लगभग शून्य हो गया। भारत-अफगान व्यापार समझौता, जिसका नवीनीकरण जून, 1957 को कुछ परिवर्तनों के साथ किया गया था तथा प्रत्येक वर्ष इसका नवीनीकरण होता रहा, जबकि इसकी अवधि जुलाई 1961 को समाप्त होने वाली थी। 15 फरवरी, 1961 को भारत और अफगानिस्तान के अधिकारियों ने परस्पर विचार-विमर्श करके इसकी अवधि एक वर्ष और बढ़ा दी।[78] इस अवसर पर दोनों देशों की सरकारों ने परस्पर व्यापार सम्बन्धों को बढ़ावा देने के लिए उचित कदम बढ़ाने का अपना निश्चय दोहराया। यह भी निश्चय किया गया कि भारत से अफगानिस्तान को भेजी जाने वाली वस्तुओं में सूती और ऊनी कपड़े, चाय, काफी, इन्जीनियरिंग का सामान, रबर का सामान इत्यादि का बाहुल्य होगा।[79]

अफगानिस्तान-पाकिस्तान सम्बन्धों में तनाव आने से भारत और अफगानिस्तान के परस्पर व्यापार में काफी कमी आई। इस संदर्भ में एक प्रश्न का उत्तर देते हुए केन्द्रीय वाणिज्य एवं उद्योग उपमंत्री ने कहा "अफगानिस्तान एवं पांकिस्तान के परस्पर कूटनीतिक सम्बन्धों में गति-रोध उत्पन्न हो जाने के कारण, पाकिस्तान के साथ स्थल सीमा मार्ग बन्द हो गया। फलस्वरूप

---

75. राज्यसभा डिबेट्स, खंड 27, खंड 1, 1 दिसम्बर, 1959, का. 884-885
76. 'भारत सरकार इण्डियन ट्रेंड एग्रीमेन्ट विद अदर कन्ट्रीज' (नई दिल्ली) 1962, पृ. 1-7
77. 'भारत सरकार इण्डियन ट्रेड एग्रीमेन्ट विद अदर कन्ट्रीज' (नई दिल्ली) 1963, पृ. 1-5
78. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 7, अंक 2, फरवरी 1961, पृ. 9
79. वही

अफगानिस्तान के साथ (भारत का) व्यापार अब केवल हवाई मार्ग द्वारा ही सीमित मात्रा में हो रहा था"।[80]

20 नवम्बर, 1961 को केन्द्रीय वाणिज्य मंत्री ने लोकसभा में घोषणा की कि भारत और अफगानिस्तान के मध्य एक व्यापार समझौता सम्पन्न हुआ था, जिसका उद्देश्य दोनों देशों में संतुलित व्यापार को प्रोत्साहन देना, विशेष वस्तुओं के आयात–निर्यात के लिए सुविधाएँ जुटाना तथा आयात-निर्यात के भुगतान को विशेष प्रक्रिया द्वारा संतुलित करना था।[81] यह समझौता 1 अक्टूबर, 1961 से लागू होना था तथा इसकी अवधि एक वर्ष तक थी।

अफगान-पाकिस्तान सम्बन्धों में असमानता आने से भारत और अफगानिस्तान के व्यापारिक सम्बन्धों पर गहरा असर पड़ा। अफगानिस्तान से आयात घटकर 182 लाख रूपये तक रह गया, जबकि भारत का निर्यात 643 लाख से घटकर 487 लाख रूपये तक आ गया। लोकसभा में जब कुछ सदस्यों ने भारत सरकार का ध्यान इस ओर आकर्षित किया तो वाणिज्य तथा उद्योग उपमंत्री श्री सतीश चन्द्र ने बताया कि भारत के व्यापारियों द्वारा अफगानिस्तान को भेजा गया सारा सामान पाकिस्तान में ही पड़ा हुआ है।[82] मंत्री महोदय ने आगे बताया कि भारत सरकार द्वारा काबुल एवं कराची स्थित अपने दूतावासों से भारतीय व्यापार का पाकिस्तान में पड़ा माल छुड़वाने के प्रयत्न अब तक विफल रहे हैं। पाकिस्तान सरकार द्वारा यह घोषणा कर देने पर कि यदि पाकिस्तान में पड़ा भारतीय व्यापारियों का माल भारत ले जाने के शीघ्र प्रबन्ध न किए गए तो उसे नीलाम कर दिया जाएगा। इस पर भारत सरकार ने पाकिस्तान से अनुरोध किया कि भारतीय व्यापारियों को कुछ और अधिक समय तक सुविधाएँ दी जाएं, ताकि वे अपना सामान भारत वापिस ला सकें। एक सदस्य द्वारा यह पूछे जाने पर कि अफगानिस्तान का जो माल भारत आ रहा था, क्या पाकिस्तान में रुका हुआ है? मंत्री महोदय ने सदन को बताया कि अफगानिस्तान का जो माल पाकिस्तान से होकर आ रहा था, भारत के व्यापारी उसे ले आए हैं। जो झगड़ा है वह माल का अफगानिस्तान से पाकिस्तान में जाने का और पाकिस्तान से अफगानिस्तान ले जाने का है। जो इस झगड़े से पहले माल निकल चुका है, उसके उपर झगड़ा नहीं है, अब तो माल चल नहीं रहा है न अफगानिस्तान से न भारत से।[83] एक अन्य सदस्य द्वारा यह पूछे जाने पर कि क्या गत वर्षों से भारत का अफगानिस्तान के साथ व्यापार

---

80. राज्यसभा डिबेट्स, खंड 36, 27 नवम्बर, 1961, का. 35-37
81. लोकसभा डिबेट्स, खंड 59, अंक 1, 20 नवम्बर, 1961, का. 50
82. लोकसभा डिबेट्स, दूसरी सीरिज, खंड 59, 24 नवम्बर, 1964, का. 913
83. लोकसभा डिबेट्स दूसरी सीरिज, खण्ड 59, 24 नवम्बर, 1964, का. 913

कम हुआ है और भारत अफगानिस्तान को माल निर्यात करने वाला प्रथम श्रेणी के स्थान से हटकर पाँचवे तथा सातवें पर आ गया है तो मंत्री महोदय ने कहा कि ऐसी कोई बात नहीं है, बल्कि पिछले कुछ वर्षों में भारत-अफगानिस्तान के परस्पर व्यापार में संतोषजनक वृद्धि हुई है।[84] उधर अफगानिस्तान सरकार ने यह घोषणा कर दी कि पाकिस्तान में अफगान वाणिज्य दूतावास बन्द हो जाने की वजह से अफगानिस्तान अपनी ट्रान्जिट गुड्स को पाकिस्तान के रास्ते नहीं भेजेगा।[85] इसका परिणाम यह हुआ कि अफगानिस्तान का अधिकतर माल सोवियत संघ के रास्ते पूर्वी यूरोप के देशों में जाने लगा। यद्यपि सोवियत संघ में अफगान सूखे मेवे आदि की इतनी खपत नहीं थी, फिर भी मास्को ने अफगानिस्तान के इस माल को अपने यहाँ खपा लिया, ताकि अफगान-पाक सीमा बन्द हो जाने से काबुल के लिए जो समस्याएँ उत्पन्न हो गयी थी, उन पर काबू पाया जा सके। अफगानिस्तान ने सोवियत संघ के साथ एक समझौता किया, जिसके अन्तर्गत अफगान माल को सोवियत विमानों द्वारा सोवियत संघ एवं अन्य देशों को ले जाया गया। हवाई मार्ग द्वारा भारत को भी अफगानिस्तान से माल आता रहा, परन्तु सोवियत संघ के 15 विमानों में हर रोज लदे माल के मुकाबले में भारत और अफगानिस्तान में उस अवधि में केवल 3 या 4 उड़ाने भरी जाती थीं।[86] इस अवधि में भारत द्वारा अफगानिस्तान को निर्यात में वृद्धि हुई। इसका मुख्य कारण यह था कि अफगान-पाक सीमा बन्द होने के उपरान्त भारतीय उपमहाद्वीप से अफगानिस्तान को भेजे जाने वाले माल को केवल भारत ही भेज सकता था। इस काल में भारत में चाय पत्ती की फसल भी अच्छी हुई थी। इस संदर्भ में भारत के विदेश व्यापार मंत्री ने कहा कि "हरी चाय का अफगानिस्तान को निर्यात बढ़ा है। हवाई मार्ग द्वारा अफगानिस्तान को अधिक चाय भेजने के प्रबन्ध किए जा रहे हैं।"[87]

यह पूछे जाने पर कि अफगानिस्तान से आयात किए गए सूखे मेवे में मूल्य वृद्धि हुई है तो केन्द्रीय अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मंत्री श्री मन्नूभाई शाह ने बताया कि क्योंकि भारत को विमानों द्वारा अफगानिस्तान से सूखा मेवा मंगवाना पड़ता था इसलिए विमान भाड़ा मिलाकर कीमतों में वृद्धि हुई।[88] मंत्री महोदय ने आगे बताया कि अब इन कीमतों में काफी कमी आ गई है, क्योंकि भारत ने अफगानिस्तान का माल ईरान के बन्दरगाहों द्वारा प्राप्त करना शुरू कर दिया है।

---

84. लोकसभा डिबेट्स दूसरी सीरिज, खण्ड 59, 24 नवम्बर, 1964, का. 913
85. इण्डियन ट्रेड जरनल, खंड 218, अंक 11, 16 दिसम्बर, 1961, पृ. 618
86. वही, खंड 219, अंक 8, 24 फरवरी, 1962, पृ. 477
87. लोकसभा डिबेट्स, तीसरी सीरिज, खंड 6, 9 अगस्त, 1962, का. 867-868
88. लोकसभा डिबेट्स, तीसरी सीरिज, खंड 4, 1 जून, 1962, का. 8253

एक प्रश्न के उत्तर में विदेश व्यापार मंत्री ने अफगान-पाक सीमा बन्द होने के उपरान्त भारत-अफगानिस्तान व्यापार का उल्लेख करते हुए बताया कि सितम्बर, 1961 के बाद दोनों देशों के परस्पर व्यापार में कुछ उतार आया था। सितम्बर 1959-फरवरी 1960 तथा सितम्बर 1961 -फरवरी 1962 के बीच भारत-अफगानिस्तान का व्यापार नीचे तालिका 5.4 में दर्शाया गया है;

तालिका 5.4 (मूल्य लाख रू0 में)*

अवधि	अफगानिस्तान को निर्यात	अफगानिस्तान से आयात	कुल व्यापार
सितम्बर 1959-फरवरी 1960	293	443	736
सितम्बर 1960-फरवरी 1961	388	359	747
सितम्बर 1961-फरवरी 1962	188	88	276

भारत द्वारा विमानों एवं ईरानी बन्दरगाहों से अफगानिस्तान का माल उठाने तथा अमेरिका द्वारा अफगानी माल को 40 सप्ताह में 400 विमान उड़ानों से ले जाने के फलस्वरूप भारत-अफगानिस्तान व्यापार में चढ़ाव आना शुरू हो गया। अमरीकी विमान अफगानिस्तान से सूखा मेवा भारत लाते तथा यहाँ से चाय पत्ती एवं अन्य सामग्री अफगानिस्तान ले जाते।[89]

अफगानिस्तान-ईरान समझौते का भारत-अफगान व्यापार सम्बन्धों में प्रभाव का उल्लेख करते हुए विदेश व्यापार मंत्री ने कहा "ऐसे संकेत मिले हैं कि अफगानिस्तान-ईरान समझौता होने से अफगानिस्तान का माल ईरानी बन्दरगाहों से हो कर पहुँच रहा है, जिसके फलस्वरूप भारत-अफगान व्यापार में वृद्धि हुई है"।[90]

यह पूछे जाने पर कि क्या भारत द्वारा अफगानिस्तान को भेजी जाने वाली चाय की मात्रा में कमी आई थी तो विदेश व्यापार मंत्री ने कहा कि पाकिस्तान द्वारा स्थल मार्ग बन्द करने से इस दिशा में कुछ कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था परन्तु शीघ्र ही भारत सरकार ने विमानों द्वारा अफगानिस्तान को चाय भेजना शुरू कर दिया, जिसके परिणास्वरूप चाय का निर्यात बढ़ गया।[91]

---

* स्त्रोत: लोकसभा डिबेट्स, तीसरी सीरिज, खंड 5, अंक 5, 15 जून, 1962, का. 10780

89. इण्डियन ट्रेड जरनल, खंड 222, अंक 12, 22 दिसम्बर, 1962, पृ. 1775-76

90. लोकसभा डिबेट्स, तीसरी सीरिज, खंड 5, अंक 45, 15 जून, 1962, का. 10779-10780

91. वही, खंड 6, 14 अगस्त, 1962, का. 1670

अक्टूबर 1962 में भारत के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मंत्री श्री मन्नूभाई शाह अफगानिस्तान की यात्रा पर गए तथा काबुल में भारत और अफगानिस्तान के बीच परस्पर व्यापार सम्बन्धी पत्रों का आदान-प्रदान हुआ जिसके अन्तर्गत दोनों देशों में व्यापार का विस्तार करने एवं प्रोत्साहन देने सम्बन्धी विशेष वस्तुओं के आयात-निर्यात के लिए सुविधाएँ जुटाना तथा विशेष प्रक्रिया द्वारा भुगतान करना, ताकि फ्री फॉरेन एक्सचेंज से उत्पन्न बाधाओं से बचा जा सके, इत्यादि मुद्दों पर सहमति हो गई।[92] यह नया व्यापार समझौता प्रथम अक्टूबर, 1962 में लागू होकर दिसम्बर, 1963 तक की अवधि का था। तो स्वदेश वापसी पर मंत्री महोदय ने बताया कि "उनकी काबुल यात्रा का उद्देश्य दोनों देशों में व्यापार को बढ़ावा देना था।"[93] इस नए समझौते के अन्तर्गत अफगानिस्तान को भारत से चाय, सूती कपड़ा, लघु इन्जीनियरिंग के उत्पादक, साईकिल, मोटर साईकिल इत्यादि एक्सपोर्ट किए जाने थे। भारत का यह अनुमान था कि इस समझौते के अन्तर्गत एक वर्ष के भीतर भारत-अफगानिस्तान का व्यापार लगभग दो करोड़ रूपये और ज्यादा हो जाएगा।

अप्रैल-दिसम्बर, 1962 की अवधि में भारत ने 104 मिलियन किलोग्राम हरी चाय का अफगानिस्तान को निर्यात किया।[94] यह पूछे जाने पर कि अमृतसर में सीमा शुल्क अधिकारियों द्वारा अफगानिस्तान को ऊनी माल निर्यात में जुलाई 1963 में गंभीर अनियमितताओं का पता लगाने के बाद क्या कार्रवाई की गई तो विदेश व्यापार मंत्री ने प्रत्युत्तर में कहा कि अफगानिस्तान को निर्यात के लिए भेजे जाने वाले ऊनी माल के सम्बन्ध में कुछ अनियमितताओं, जैसे बीजक में अधिक मूल्य लगाना, माल का गलत ज्ञापन करना आदि को सीमा शुल्क अधिकारियों ने जुलाई 1963 में अमृतसर में पकड़ा था। लगभग 165 लाख रूपये का माल सीमा शुल्क अधिकारियों द्वारा रोक लिया गया था और इन अनियमितताओं के लिए कठोर कार्रवाई के सम्बन्ध में निर्यातकों को "कारण बताओं" नोटिस जारी किए गए थे। निर्यातकों से प्राप्त उत्तर इस समय न्याय निर्णय के अधीन हैं। कुछ मामलों में अभी उत्तर आने बाकी हैं।[95]

1955-63 के दशक की अवधि में भारत और अफगानिस्तान के मध्य व्यापार का क्रम आगे तालिका 5.5 में दर्शाया गया है।

---

92. लोकसभा डिबेटस, तीसरी सीरिज, खंड 9, 8 नवम्बर, 1962, का. 12
93. वही
94. लोकसभा डिबेट्स, तीसरी सीरिज, खंड 13, 2 मार्च, 1963, का. 1663
95. लोक सभा डिबेट्स, तीसरी सीरिज, खंड 23, 13 दिसम्बर, 1963, का. 4569

तालिका 5.5

भारत और अफगानिस्तान में व्यापार (1953-63)**

(मूल्य लाख रू. में)

अवधि	निर्यात	आयात	व्यापार संतुलन
1953-54	392	445	-53
1954-55	290	542	-252
1955-56	240	438	-198
1956-57	168	421	-253
1957-58	223	517	-294
1958-59	379	458	-79
1959-60	486	590	-104
1960-61	643	502	+141
1961-62	487	182	+305
1962-63	615	526	+111
1963-64	758	497	+261

1953-54 में कुल व्यापार का संतुलन अफगानिस्तान के पक्ष में रहा। इस अवधि में भारत से अफगानिस्तान को निर्यात 392 लाख रूपये तथा आयात 445 लाख रूपये का रहा। यह क्रम 1960-61 तक चलता रहा। जब दोनों देशों ने परस्पर व्यापार संतुलन बनाने की दिशा में कदम उठाये तथा भारत ने अपने निर्यात की ओर अधिक ध्यान दिया तो 1961-62 में अफगानिस्तान से आयात में भारी कमी आ गई तथा कुल व्यापार का संतुलन भारत के पक्ष में आ गया। इस अवधि में भारत ने अफगानिस्तान को 487 लाख रूपये का निर्यात किया, जबकि अफगानिस्तान से 182 लाख रूपये का आयात किया। यह क्रम 1962-63 तथा 1967-69 की अवधि में भी जारी रहा। इस अवधि में भारत के निर्यात में प्रशंसनीय वृद्धि हुई। उसी तरह अफगानिस्तान से आयात में भी बढ़ोतरी होती रही। इसलिए यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि 1953-63 की अवधि में दोनों देशों में उतार-चढ़ाव के साथ ही परस्पर व्यापार में वृद्धि होती रही।

** स्त्रोत: भारत सरकार, मन्थली स्टेटिसटिक्स ऑफ द फारेन ट्रेड ऑफ इण्डिया (दिसम्बर 1952 से फरवरी 1964 तक के अंक)

(ग) सांस्कृतिक सम्बन्ध

1953-63 की अवधि में भारत और अफगानिस्तान में परस्पर सांस्कृतिक, शिक्षा एवं विज्ञान के क्षेत्र में भी सहयोग बढ़ा। मई, 1954 में काबुल विश्वविद्यालय ने काबुल स्थित भारतीय दूतावास से उच्च प्रशिक्षित मेडिकल प्रोफेसरों की भर्ती के लिए आग्रह किया। तदुपरान्त भारत सरकार ने काबुल विश्वविद्यालयों की आवश्यकताओं के अनुरूप योग्यताओं के अनुसार प्रोफेसरों की भर्ती के लिए आवश्यक ज्ञापन दिए। परन्तु अफगानिस्तान को किसी अन्य देश से मेडिकल प्रोफेसर मिल जाने के बाद भारत की ओर से इस दिशा में कोई कदम नहीं उठाया गया।[96] एक प्रश्न के उत्तर में तत्कालीन संसद मामलों के सचिव सादत अली खान ने लोकसभा में बताया कि फरवरी 1954 को अफगानिस्तान से एक सांस्कृतिक शिष्ट-मण्डल भारत की यात्रा पर आया था। अपने भारत प्रवास के दौरान इस शिष्ट मण्डल ने भारत के ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक स्थानों का भ्रमण किया।[97] अफगानिस्तान के द्वारा आयोजित वार्षिक समारोह में प्रत्येक वर्ष भारतीय खिलाड़ी, विद्यार्थियों के शिष्ट मण्डल एवं कलाकार भाग लेने जाते रहते हैं। मंत्री महोदय ने आगे बताया कि सांस्कृतिक छात्रवृत्ति योजना के अन्तर्गत अफगान नागरिकों को प्रत्येक वर्ष भारत में अध्ययन के लिए छात्रवृत्तियाँ प्रदान की जाती हैं। 1954-55 में इस योजना के अन्तर्गत 9 अफगान विद्यार्थी भारत में शिक्षा ग्रहण कर रहे थे तथा तीन अन्य को वर्ष 1955-56 के लिए चुना गया ।[98] अफगानिस्तान में सरकार की इच्छानुसार स्कूल स्तर पर अंग्रेजी का प्राध्यापन करने हेतु शिक्षकों की आवश्यकता को भी भारत सरकार ने पूरा किया। 1953 में दस शिक्षक अफगानिस्तान में भेजे गए।

सितम्बर 1955 में भारत सरकार ने एक पुरातत्व सर्वेक्षण दल अफगानिस्तान भेजने का निश्चय कियां। इस दल का मुख्य उद्देश्य भारतीय इतिहास के सम्बन्ध में अफगानिस्तान में भारतीय संस्कृति और अफगान संस्कृति में पुरातत्व सर्वेक्षण के आधार पर प्रागैतिहासिक काल में दोनों देशों के बीच सम्बन्धों की खोज करना था।[99] इस सम्बन्ध में अफगानिस्तान सरकार भारत का पूरा सहयोग कर रही थी। सितम्बर, 1955 में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण दल अफगानिस्तान जाने को तैयार था, परन्तु मौसम अनुकूल न होने के कारण दल ने अपना प्रस्थान रद्द कर दिया। एक प्रश्न के उत्तर में केन्द्रीय संसदीय मामलों के मंत्री डा0 एम0एम0 दास ने बताया कि अफगानिस्तान

---

96. लोक सभा डिबेट्स, खंड 4, भाग 1, अंक 19, 16 सितम्बर, 1954, का. 1169
97. लोकसभा डिबेट्स, खंड 1, भाग 1, अंक 19, 21 मार्च, 1955 का. 1160
98. वही
99. लोकसभा डिबेट्स, खंड 8, भाग 1, अंक 15, 9 दिसम्बर, 1955, का. 801

के साथ भारत के सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक सम्बन्ध बहुत पुराने हैं। आर्य जाति के लोग जब भारत आए तो वे अफगानिस्तान के रास्ते आए। इस पुरातत्व सर्वेक्षण से उनकी सभ्यता के अवशेषों का मिलना सम्भव है।[100] मंत्री महोदय ने आगे कहा कि भारत में उपलब्ध प्राचीन गन्धार कला का अफगानिस्तान की कला में काफी तालमेल रहा है। भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण दल अपने अफगानिस्तान प्रवास के दौरान लगभग 35 स्थानों पर गया, जहाँ इस दल को कुछ महत्वपूर्ण जानकारी मिलने की आशा थी।[101]

1956 में भारत ने अफगानिस्तान के अनुरोध पर काबुल एवं कंधार में सरफेस एवं पॉयलट बैलून अलसरवेट्रीज की स्थापना की, जिससे विमान उड़ान में सहायता मिल सके। प्रथम दो वर्षो तक इन्हें भारतीय विशेषज्ञों को चलाना था तथा इस कार्य में उपयुक्त अधिकारियों को भारत में संचालन प्रशिक्षण दिया जाना था।[102] जनवरी-जून, 1957 की अवधि में भारत ने 3.35 लाख रूपये के चलचित्र अफगानिस्तान को भेजे।[103] केन्द्रीय पुरातत्तव सलाहकार बोर्ड ने 1958 में सुझाव दिया कि पुरातत्व सर्वेक्षण के बाद भारतीय विशेषज्ञों का एक दल अफगानिस्तान भेजा जाना चाहिए, ताकि वह दल वहाँ मिले पुराने सिक्कों का अध्ययन कर सके। केन्द्रीय शिक्षा उपमंत्री डा0 एम0एम0 दास ने 24 नवम्बर, 1956 को लोकसभा में घोषणा की कि भारत सरकार को यह सुझाव अमान्य है।[104] 9 मई, 1951 को भारत और अफगानिस्तान के बीच रेडियो-टेलीफोन सम्बन्ध स्थापित हो गया।

4 अक्टूबर, 1963 को भारत और अफगानिस्तान के मध्य एक सांस्कृतिक समझौता सम्पन्न हुआ। भारत के शिक्षा, विज्ञान अनुसंधान एवं सांस्कृतिक मामलों के मंत्री प्रो0 हुमायूँ सबीर ने अपनी अफगानिस्तान की यात्रा के दौरान, अफगानिस्तान के शिक्षा मंत्री डा0 अली अहमद पोपल के साथ इस समझौते पर हस्ताक्षर किए।[105] इस समझौते के अन्तर्गत भारत और अफगान्निस्तान सांस्कृतिक, शिक्षा एवं विज्ञान के क्षेत्रों में परस्पर सहयोग एवं आदान-प्रदान करके अपने सम्बन्धों को और अधिक मजबूत बनाएँगे। इसके अतिरिक्त एक दूसरे के देश में संगीत, कला एवं विज्ञान की प्रदर्शनियाँ, विद्वानों एवं विद्यार्थियों का आदान-प्रदान, साहित्य, चलचित्रों तथा पुरातत्व अवशेषों के आदान-प्रदान, रेडियो प्रसारण, खेलों के आयोजन इत्यादि का प्रावधान रखा गया।[106]

---

100. लोकसभा डिबेट्स, खंड 4, भाग 1, अंक 36, 4 सितम्बर, 1956, का. 2124
101. वही, परिच्छेद 9, अनुबन्ध संख्या 3, का. 21-24
102. लोकसभा डिबेट्स, खंड 8, भाग 1, अंक 16, 5 दिसम्बर, 1956
103. लोकसभा डिबेट्स, दूसरी सीरिज, खंड 8, अंक 1, 11 नवम्बर, 1957
104. लोकसभा डिबेट्स, खंड 22, अंक 46, 24 नवम्बर, 1958, का. 1206
105. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 9, अंक 10, अक्तूबर 1963, पृ. 213
106. लोकसभा डिबेट्स, तीसरी सीरिज, खंड 22, 20 नवम्बर, 1963, का. 615

इस समझौते की अवधि पाँच वर्ष रखी गई, जिसे परस्पर सहमति से बढ़ाया भी जा सकता था।

भारत और अफगानिस्तान में परम्परागत ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्धों के विषय में दोनों देशों के नेताओं ने भी समय समय पर इन सम्बन्धों को अधिक सुदृढ़ करने पर बल दिया। फरवरी 1958 में अफगान नरेश जहीरशाह तथा फरवरी 1959 में प्रधानमन्त्री दाउद[107] की भारत यात्रा के दौरान भारत एवं अफगानिस्तान में परस्पर ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्धों को अधिक बढ़ावा देने पर बल दिया गया।[108] 14 सितम्बर, 1959 में जब प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने अफगानिस्तान की राजकीय यात्रा की तो उन्होंने काबुल में एक भाषण के दौरान कहा कि भारत एवं अफगानिस्तान में परस्पर मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों का आधार दोनों देशों के परम्परागत ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक स्तम्भों पर टिका हुआ है।[109] प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू की अफगान यात्रा की समाप्ति पर काबुल में 17 सितम्बर, 1959 को जारी की गई संयुक्त विज्ञप्ति में इस बात पर बल दिया गया कि पारस्परिक सम्बन्धों को चिरस्थायी एवं यथार्थपूर्ण बनाने के लिए परस्पर सांस्कृतिक सहयोग आवश्यक है।[110] इस तरह जब मई, 1963 में भारत के राष्ट्रपति डा0 राधा कृष्णन अफगानिस्तान की राजकीय यात्रा पर गए तो उन्होंने वहाँ अपने भाषणों में भारत-अफगानिस्तान के बीच शताब्दियों से चले आ रहे सांस्कृतिक सम्बन्धों की परिचर्चा करते हुए इन सम्बन्धों को अधिक प्रगाढ़ बनाने पर बल दिया।[111]

(घ) अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर दोनों देशों की नीतियाँ

अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर भारत एवं अफगानिस्तान की नीतियों में लगभग सम दृष्टिकोण रहा है। यह मत दोनों देशों के नेताओं द्वारा समय-समय पर दिए गए भाषणों और एक दूसरे के देश में यात्रा समाप्ति पर जारी की गई संयुक्त टिप्पणियों से स्पष्ट होता है। फरवरी, 1958 में जब अफगान नरेश जहीरशाह भारत की राजकीय यात्रा पर आए तो उनकी यात्रा समाप्ति पर 14 फरवरी, 1958 को नई दिल्ली में जारी की गई संयुक्त विज्ञप्ति में यह घोषणा की गई कि "भारत और अफगानिस्तान की विदेश नीतियाँः अच्छे पड़ोसियों जैसे सम्बन्ध, परस्पर सहिष्णुता,

---

107. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 5, अंक 2, फरवरी 1959, पृ. 13
108. भारत सरकार, 'फॉरेन पालिसी ऑफ इण्डिया: टेक्ट्स ऑफ डाक्यूमेन्ट्स 1947-64' (नई दिल्ली 1966), पृ. 261
109. जवाहर लाल नेहरू, 'इण्डियन फॉरेन पॉलिसी- सिलैक्टिड स्पीचिज, सितम्बर 1946-अप्रैल 1961' (नई दिल्ली 1961), पृ. 291
110. फॉरेन पालिसी ऑफ इण्डिया, क्र. 12, पृ. 265
111. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 9, अंक 5, मई 1963, पृ. 103

आदरभाव तथा विश्व शान्ति एवं सहयोग जैसे साझे उद्देश्यों से प्रेरित होती है।"[112] अफगान नरेश एवं भारतीय प्रधानमंत्री इस बात पर सहमत थे कि सभी देशों में शान्ति एवं सहयोग की भावना को प्रोत्साहन देने के लिए वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय तनाव को कम करना जरूरी है। दोनों नेताओं का यह सुदृढ़ मत था कि निरस्त्रीकरण वार्ता में उत्पन्न गतिरोध को अविलम्ब दूर किया जाना चाहिए।[113] संयुक्त विज्ञप्ति में दोनों नेताओं ने आशा व्यक्त की कि शीघ्र ही महाशक्तियों की बातचीत के लिए उचित वातावरण तैयार किया जाएगा। उनके मतानुसार परमाणु एवं थर्मो-न्युक्लियर परीक्षणों को तत्काल बन्द करना तथा आऊटर स्पेस को शान्तिपूर्ण उद्देश्यों के लिए सुरक्षित रखना इस दिशा में पहला कदम है।[114]

मिस्र देश के संयुक्त अरब गणराज्य के रूप में बन जाने पर अफगान नरेश एवं भारतीय प्रधानमंत्री ने हर्ष प्रकट करते हुए अपना विश्वास व्यक्त किया कि नया गणराज्य अपनी शान्ति की नीति का अधिक सुचारू रूप से अनुसरण कर सकेगा। दोनों नेताओं ने उपनिवेशवाद पर भी अपने-अपने देश की नीतियों का समर्थन करते हुए अल्जीरिया की शोचनीय स्थिति पर चिन्ता व्यक्त की, जहाँ पर लाखों लोग अत्याचार का शिकार हो रहे हैं। उन्होंने आशा जाहिर की कि शीघ्र ही समस्या का हल ढूढ़ लिया जाएगा, जिससे अल्जीरिया के लोगों को स्वतंत्रता मिल सकेगी।[115]

अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर भारत और अफगानिस्तान का समान दृष्टिकोण तब भी दृष्टिगोचर हुआ, जब फरवरी, 1959 में अफगान प्रधानमंत्री सरदार मोहम्मद दाऊद भारत की यात्रा पर उनका स्वागत करते हुए प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने कहा कि "हम दोनों देशों ने निश्चय किया कि हम वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय झगड़ों का हिस्सा न बने"।[116] प्रधानमंत्री श्री नेहरू ने आगे कहा कि विश्व की सबसे बड़ी आवश्यकता है शान्ति, जिसके बिना कोई भी देश प्रगति नहीं कर सकता। इसके बाद प्रश्न है- एशिया के देशों की प्रगति एवं खुशहाली का। अफगान प्रधानमंत्री सरदार मोहम्मद दाऊद ने भी समान उद्‌गारों को व्यक्त करते हुए कहा कि वर्तमान विश्व की विकट परिस्थितियाँ प्रत्येक राष्ट्र पर यह जिम्मेदारी डालती हैं कि परस्पर सद्भाव एवं भाईचारे की भावना से सभी में सौहार्द्र एवं सहयोग उत्पन्न किया जाए।[117] सरदार मोहम्मद दाऊद ने आगे

---

112. भारत सरकार, 'फॉरेन पालिसी ऑफ इण्डिया: टेक्ट्स ऑफ डाक्यूमेन्ट्स 1947-64' (नई दिल्ली 1966), पृ. 261
113. वही
114. वही, पृ. 262
115. वही
116. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 5, अंक 2, फरवरी 1959, पृ. 13
117, वही, पृ. 14

कहा कि "यदि विश्व में शान्ति, जिसको काफी खतरा बना हुआ है, को हम कायम रखने में असमर्थ रहते हैं तो हमारा दायित्व और भी बढ़ जाता है। यह दायित्व अपने प्रति है, आने वाली पीढ़ियों के प्रति है तथा समस्त विश्व के प्रति है, जहाँ पर रहकर हम एक सुनहरे भविष्य के सपने लेते है।"[118] उन्होंने आगे कहा कि सुरक्षित भविष्य जिसमें शान्ति एवं सुरक्षा नीहित है, तभी सम्भव है, जब सभी राष्ट्रों में आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्रों में परस्पर विश्वास तथा आदर पर आधारित सच्चे सहयोग की भावना रखी जाए। प्रधानमंत्री दाऊद ने आगे कहा कि सैनिक गुट एवं शस्त्र होड़ जो न केवल विश्व में तनाव को बढ़ावा दे रहे हैं, बल्कि विश्वास की भावना में भी कमी ला रहे हैं, वे वास्तविक चिन्ता का कारण बन गए हैं। उनके मतानुसार पूर्व के देशों में विशेषकर भारत एवं अफगानिस्तान को अपने राष्ट्रीय स्रोतों का उचित प्रयोग करके आर्थिक प्रगति करनी है, ताकि समृद्धि सम्पन्न होने पर ही हम अपनी स्वंतत्रता की रक्षा कर सकते हैं। उन्होंने आगे कहा कि "अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर अफगानिस्तान ने प्रत्येक अवसर पर तटस्थता की नीति का जो निष्पक्षता पर आधारित है, का अनुसरण किया है। हमारी जनता की आकांक्षाओं पर आधारित यह मत हमारी नीति का मूल आधार है"।[119] अफगान प्रधानमंत्री का मत था कि गुटनिरपेक्षता की नीति ही अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर भारत और अफगानिस्तान के समान दृष्टिकोण का आधार है।

अफगान प्रधानमंत्री की भारत यात्रा की समाप्ति पर 8 फरवरी, 1959 को जारी की गई संयुक्त विज्ञप्ति में कहा गया "परस्पर बातचीत से महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर दोनों देशों के समान दृष्टिकोण का आभास मिलता है, विशेषकर भारत और अफगानिस्तान द्वारा सैनिक गठबन्धनों को ठुकराना, विश्व शान्ति रखने के लिए सभी देशों में परस्पर सहयोग एवं अच्छे पड़ोसियों जैसे सम्बन्ध बनाये रखने की नीति में विश्वास, आदि"।[120] संयुक्त विज्ञप्ति में आगे कहा गया कि भारत और अफगानिस्तान के नेताओं ने बड़ी शक्तियों की परस्पर प्रतिस्पर्धा में सैनिक प्रतियोगिता की बजाए आर्थिक प्रतियोगिता की तबदीली को एक उत्साहवर्धक घटना बताया।[121]

सितम्बर 1959 में प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने अपनी अफगानिस्तान की राजकीय यात्रा पर प्रवास के दौरान अफगान नेताओं के साथ विश्व समस्याओं पर विचारों का आदान-प्रदान किया। जिसके विश्लेषण से दोनों देशों के अलग अलग विषयों पर समान दृष्टिकोण का पता

118. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 5, अंक 2, फरवरी 1959, पृ. 15
119. वही
120. भारत सरकार, 'टेक्ट्स ऑफ सेकिंड इण्डिया-अफगानिस्तान ज्वाइन्ट कम्यून', फॉरेन पालिसी ऑफ इण्डिया: टेक्ट्स ऑफ डाक्यूमेन्टस 1947-64' (नई दिल्ली 1966), पृ. 263
121. वही

चला। प्रधानमंत्री नेहरू की अफगानिस्तान की यात्रा समाप्ति पर 17 सितम्बर, 1959 को काबुल में जारी की गई संयुक्त विज्ञप्ति में सोवियत संघ के नेता निकिता ख़ुश्चेव द्वारा अमेरिका की यात्रा को विश्व में तनाव कम करने तथा शान्ति कायम करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम बताया गया।[122] दोनों प्रधानमंत्रियों ने 10 सदस्यीय निरस्त्रीकरण कमेटी की स्थापना का स्वागत करते हुए इसे निरस्त्रीकरण वार्ता में आए गतिरोध को दूर करने के लिए एक उचित उपाय बताया। इन परिवर्तनों का स्वागत करते हुए दोनों प्रधानमंत्रियों ने कहा कि अभी भी कुछ विवादास्पद विषय ऐसे हैं, जिनसे विश्व शान्ति एवं सुरक्षा को खतरा पैदा हो सकता है। अतः दोनों नेताओं ने ऐसे मामलों को हल करने के लिए शस्त्रों की आड़ लेने के बजाए उन्हें शान्ति पूर्वक बातचीत द्वारा हल करने पर बल दिया।

दोनों देशों ने उपनिवेश के शिकार देशों तथा वहाँ की जनता द्वारा स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए जारी संघर्ष के प्रति अपनी पूर्ण सहानुभूति एवं लगातार सहायता की घोषणा की ।[123] संयुक्त विज्ञप्ति में आगे कहा गया "केवल स्वतंत्रता द्वारा ही पूरा विश्वास, प्रगति तथा राष्ट्रीय समानता का वातावरण, जो सभी राष्ट्रों में शान्ति कायम करने के लिए मूल आधार है, प्राप्त किए जा सकते हैं।[124]"

मई 1963 में भारत के राष्ट्रपति डा0 राधा कृष्णन ने अपनी अफगानिस्तान की राजकीय यात्रा के दौरान अफगान नेताओं के साथ सामयिक अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर विचारों का आदान-प्रदान किया। 11 मई, 1963 को भारत के राष्ट्रपति के सम्मान में दिए गए भोज में बोलते हुए अफगान नरेश जहीरशाह ने कहा कि अफगानिस्तान का ऐसा विश्वास है कि सद्भाव द्वारा शान्तिपूर्ण बातचीत से ही किसी समस्या का सही हल निकल सकता है।[125] अपने जवाबी भाषण में राष्ट्रपति डा0 राधा कृष्णन ने कहा कि भारत और अफगानिस्तान सदा ही गुटनिरपेक्षता की नीति, शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व के सिद्धान्त तथा समस्याओं का बातचीत द्वारा शान्तिपूर्ण निपटारे का समर्थन करते आए हैं। ये सिद्धान्त हमारे अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार का आधार रहे हैं तथा हम विश्व शान्ति तथा अफ्रीका-एशिया की एकता के लिए भरसक प्रयत्न करते रहेगें।[126]

राष्ट्रपति डा0 राधा कृष्णन की अफगानिस्तान की यात्रा समाप्ति पर जारी की गई संयुक्त विज्ञप्ति में भी इसी तरह के समान दृष्टिकोण को दर्शाया गया। दोनों नेताओं ने सैनिक

---

122. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 5, अंक 9, सितम्बर 1959, पृ. 209
123. वही
124. वही
125. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 9, अंक 5, मई 1963, पृ. 104
126. वही, पृ. 103

गठबन्धनों से अलग रहने की नीति, संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर में अडिग विश्वास तथा बांडूंग सम्मेलन तथा बेलग्रेड सम्मेलन में घोषित सिद्धान्तों का परिपालन करने के अपने दृढ़ निश्चय को दोहराया।[127]

संयुक्त विज्ञप्ति में दोनों देशों ने बढ़ रही शस्त्र होड़ पर चिन्ता व्यक्त करते हुए कहा कि अभी तक परमाणु परीक्षणों को बन्द करने तथा निरस्त्रीकरण का उद्देश्य पूरा करने के लिए कोई ठोस उपाय नहीं किए गए हैं। उन्होंने आशा व्यक्त की कि विश्व शान्ति को कायम रखने तथा मानव जाति की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए समस्याओं का शीध्र समाधान करने हेतु प्रयत्न किए जाएँगे।[128]

उपर्युक्त विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि विश्व की समस्याओं, विशेषकर अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति एवं सुरक्षा को कायम रखना, उपनिवेशवाद का विरोध, पूर्ण निरस्त्रीकरण प्राप्त करने का ध्येय, सैनिक गठबन्धनों का विरोध इत्यादि पर भारत एवं अफगानिस्तान की नीतियों में परस्पर तालमेल है। दोनों देशों के समान दृष्टिकोण हैं तथा दोनों ही गुटनिरपेक्षता की नीति तथा शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व के सिद्धान्तों के समर्थक रहे हैं।

(ङ) भारत-अफगान-पाक के त्रिकोणात्मक सम्बन्ध

जैसा कि पिछले अध्यायों में दर्शाया गया है कि पाकिस्तान के अफगानिस्तान के साथ पख्तून समस्या को लेकर एवं भारत के साथ मुख्यत: कश्मीर समस्या को लेकर सम्बन्ध तनावपूर्ण रहे हैं। 1953-63 की अवधि में यह सम्बन्ध और अधिक तनावपूर्ण रहे। इसका मुख्य कारण था पाकिस्तान को अमेरिका द्वारा प्रेरित सैनिक संगठनों की सदस्यता एवं भारत और अफगानिस्तान द्वारा पाकिस्तान से सम्भावित खतरे का आभास। पाकिस्तान अपनी सैनिक शक्ति क्षमता को बढ़ाना चाहता था। पाकिस्तान का शासक वर्ग भारत से खतरा महसूस करता था। यद्यपि अफगानिस्तान से उत्पन्न किसी भी खतरे का सामना करने की पाकिस्तान की क्षमता थी, परन्तु फिर भी पख्तून समस्या के संदर्भ में उत्पन्न तनाव को देखते हुए पाकिस्तान अपनी सैनिक क्षमता को अधिक सबल बनाने का इच्छुक था। एक पाकिस्तानी विद्वान के अनुसार पाकिस्तान को किसी साम्यवादी शक्ति की अपेक्षा भारत से अधिक खतरा था।[129] 12 जून, 1952 को वाशिंगटन स्थित पाकिस्तानी राजदूत मोहम्मद अली ने घोषणा की, कि "पाकिस्तान की एशिया के तटस्थ राष्ट्रों में गिनती

127. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 9, अंक 5, मई 1963, पृ. 105
128. वही
129. चौधरी, एम० ए० हसन, 'पाकिस्तान एण्ड द यूनाइटिड स्टेट्स', पाकिस्तान होराइजन (कराची), खंड 9, दिसम्बर 1956, पृ. 200

नहीं करनी चाहिए। हमारी मूल सहानुभूति पश्चिमी राष्ट्रों के साथ हैं"।[130]

1953 में जब अमेरिका में आइजनहावर प्रशासन का आगमन हुआ तथा जॉन फॉस्टर डलेज विदेश मंत्री बने तो पाकिस्तान को अपनी सैनिक इच्छा पूरी करने के सपने साकार होते दिखाई दिए। जून, 1953 में डलेज की पाकिस्तान यात्रा से इस तथ्य का पुष्टिकरण हो गया। 1953 में ही पाकिस्तान के सेनापति जनरल अय्यूब खान तथा गवर्नर जनरल गुलाम मुहम्मद की अमेरिका यात्रा तथा दिसम्बर 1953 में अमेरिकी उपराष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन की पाकिस्तान यात्रा ने पाकिस्तान को अमेरिकी सैनिक सहायता का मार्ग प्रशस्त कर दिया।

अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को सैनिक सहायता देने के निश्चय का भारत और अफगानिस्तान दोनों ने कड़े शब्दों में विरोध किया। भारत का विरोध दो मुख्य कारणों पर आधारित था: (क) इससे भारत के शीत युद्ध को उपमहाद्वीप से ज्यादा से ज्यादा दूर रखने के प्रयत्नों को धक्का लग सकता था, (ख) इससे जहाँ भारत-पाक सम्बन्धों पर बुरा असर पड़ता, वहीं भारत की सुरक्षा पर भी इसका बुरा असर होता।[131] 15 नवम्बर, 1953 को प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने एक संवाददाता सम्मेलन में कहा कि पाकिस्तान और अमेरिका क्या कर रहे हैं, इस पर हम सवैंधानिक तौर पर कुछ नहीं कर सकते। परन्तु क्रियात्मक रूप से देखा जाए तो यह हमारे लिए बड़ी चिन्ता का विषय है। एक ऐसी समस्या जिस पर दक्षिण एशिया की सारी कार्यप्रणाली विशेषकर भारत और पाकिस्तान पर गहरा असर पड़ेगा।[132] 16 नवम्बर, 1953 को वाशिंगटन स्थित भारतीय राजदूत ने अमेरिकी विदेशमंत्री से इस सम्बन्ध में और अधिक जानकारी देने के लिए आग्रह किया।[133] प्रसिद्ध राजनीति शास्त्र के वक्ता एम0एस0 राजन का मत है कि "इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं कि अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को सम्भावित सैनिक सहायता तथा उस देश में अमेरिकी सैनिक अड्डों की स्थापना की खबरें भारतीय जनता के लिए बम विस्फोट से कम नहीं थी और इसका सदमा पाकिस्तान द्वारा 1945 में कश्मीर में किए हमले से कम नहीं था"।[134]

---

130. डान (कराची), 13 जून, 1952
131. गुप्ता, शिशिर, 'कश्मीर: ए स्टडी इन इण्डिया-पाकिस्तान रिलेशन्स', एशिया पब्लिशिंग हाऊस (नई दिल्ली, 1966), पृ. 277-278
132. हिन्दुस्तान टाइम्स, 16 नवम्बर 1953
133. पोपलई, एस0 एल0 और फिलिप्स टालवोट, 'इण्डिया एण्ड अमेरिका, ए स्टडी ऑफ देअर रिलेशन्स', (नई दिल्ली, 1966), पृ. 87
134. राजन, एम0 एस0, 'इण्डिया इन वर्ल्ड अफेयर्स 1954-56', (एशिया पब्लिशिंग हाऊस, बम्बई 1964), पृ. 263

भारत की तरह अफगानिस्तान ने पाकिस्तान को सैनिक सहायता देने के अमरीकी निश्चय पर तीव्र प्रतिक्रिया व्यक्त की। 6 दिसम्बर, 1953 को अफगानिस्तान के प्रधानमंत्री श्री मोहम्मद दाऊद ने कहा कि वे पाकिस्तान में अमेरिका द्वारा सैनिक अड्डे बनाने के प्रस्ताव का कड़ा विरोध करते हैं। इस सम्बन्ध में अमेरिका के उद्देश्य चांहे जो भी हो, किन्तु इस प्रस्ताव से पाकिस्तान अत्यधिक शाक्तिशाली हो जाएगा।[135] भारत स्थित अफगान दूतावास ने एक वक्तव्य प्रसाारित करके पाकिस्तान को भविष्य में प्राप्त होने वाली अमरीकी सैन्य सहायता का विरोध इस आधार पर किया कि वह पाकिस्तान को, स्वतंत्रता प्रिय पख्तूनों पर एक "उपनिवेशवादी" शक्ति बनाने में सहायता करेगा।[136]

इन गतिविधियों में जहाँ भारत और अफगानिस्तान एक जुट हुए वहीं उनकी कड़ी प्रतिक्रिया का अमेरिका पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उल्टा वाशिंगटन में यह समझा जाने लगा कि शायद भारत, अमरीकी विदेश नीति को प्रभावित करना चाहता है। आइजनहावर प्रशासन का मत था कि सोवियत संघ, भारत और अफगानिस्तान को अमेरिका के विरूद्ध उकसा रहा है और दक्षिण एशियाई क्षेत्र में केवल पाकिस्तान ही एक मात्र ऐसा देश है जो विश्व साम्यवाद के विरूद्ध अमेरिका का साथ दे सकता है।[137] अन्तत: 28 दिसम्बर, 1953 को राष्ट्रपति आइजनहावर ने पाकिस्तान को सैनिक सहायता की योजना पर सहमति प्रदान कर दी।[138] इस घोषणा ने भी तीव्र प्रतिक्रिया दिखाई। इस सन्दर्भ में प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने 22 फरवरी, 1954 को लोक सभा में बताया कि भारत का विरोध अमेरिका या पाकिस्तान के प्रति किसी गलत धारणाओं से प्रेरित नहीं है, अपितु भारत की यह मान्यता है कि यह एक गलत कदम है जिससे एशिया में असुरक्षा की भावना को बल मिलेगा।[139] भारत के प्रमुख अंग्रेजी दैनिक हिन्दुस्तान टाइम्स ने अपने सम्पादकीय में लिखा "हम यह विश्वास नहीं कर सकते कि वाशिंगटन का उद्देश्य भारत को अमेरिका से अलग करना तथा एशिया में प्रजातंत्र की शक्तियों को कमजोर बनाना है। हम अमेरिका द्वारा प्रस्तावित समझौते को भारत के विरूद्ध अमैत्रीपूर्ण रवैये की संज्ञा दे सकते हैं"।[140]

भारत की तरह अफगानिस्तान में भी इसके विरूद्ध तीव्र प्रतिक्रिया हुई। वाशिंगटन में अफगान राजदूत मोहम्मद कबीलुद्दीन ने अमरीकी विदेशमंत्री डलेज से भेंट की। वार्ता के दौरान

---

135. न्यू टाइम्स ऑफ वर्मा (रंगून), 8 दिसम्बर, 1953
136. न्यूयार्क टाइम्स, 23 दिसम्बर, 1953
137. वही, 24 दिसम्बर, 1953
138. ईडगर, एनसेल मोरेर, 'न्यू प्रक्टियर्स ऑफ फ्रीड्स', केलियर्ज (न्यूयार्क), 25 जून, 1954
139. जवाहर लाल नेहरू, 'इण्डियन फॉरेन पॅालिसी सिलैक्टिड स्पीचिज, सितम्बर 1946-अप्रैल 1961' (नई दिल्ली 1961, पृ. 471)
140. हिन्दुस्तान टाइम्स, 12 दिसम्बर, 1953

पाकिस्तान को दी जाने वाली अमरीकी सैनिक सहायता पर जब उनकी सरकार का दृष्टिकोण रखा गया तो राजदूत लुदीन ने कहा कि हम आशा करते हैं कि कोई ऐसा कार्य न किया जाएगा जिससे वर्तमान संतुलन भंग हो।[141] इसी संदर्भ में अफगान समाचार पत्र अनीस ने लिखा कि यह सैनिक सहायता न केवल दक्षिण एशिया के लिए दुष्परिणाम वाहिनी है, अपितु यह सम्पूर्ण विश्व में तनाव उत्पन्न करेगी, क्योंकि यह युद्ध के प्रयोजन के लिए दी जा रही है।[142]

भारत और अफगानिस्तान के विरोध की परवाह किए बिना अमेरिका और पाकिस्तान में परस्पर सैनिक सहयोग बढ़ता गया। 22 फरवरी, 1954 को पाकिस्तानी प्रधानमंत्री मोहम्मद अली ने अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को सैनिक सहायता प्राप्ति की घोषणा कर दी।[143] मई, 1954 में पाकिस्तान तथा अमेरिका का आपस में सुरक्षा समझौता सम्पन्न हो गया। अमेरिका ने भारत को यह समझाने का प्रयत्न किया कि उक्त अमेरिका-पाकिस्तान समझौते का भारत पर कोई गलत प्रभाव नहीं पड़ेगा, क्योंकि वाशिंगटन इस मामले में नई दिल्ली के विरोध को ध्यान में रखे हुए था। 25 फरवरी, 1954 को राष्ट्रपति आइजनहावर ने वाशिंगटन में पाकिस्तान को अमरीकी सैन्य सहायता मुहैया करने की घोषणा कर दी।[144] इस घोषणा के एक दिन पहले 24 फरवरी, 1959 को राष्ट्रपति आइजनहावर ने भारतीय प्रधानमंत्री को एक निजी पत्र में आश्वासन दिया कि यह समझौता किसी तरह भारत के खिलाफ नहीं है। पत्र में आगे कहा गया "यदि आपकी सरकार इस निष्कर्ष पर पहुँचती है कि परिस्थितियों के अनुसार आपको भी सैनिक सहायता की आवश्यकता है जैसा कि हमारी परस्पर सुरक्षा विधि में है तो कृपया पूरा भरोसा रखें कि आपकी ऐसी प्रार्थना पर हम पूरी सहानूभूति से विचार करेंगे"।[145] अमरीकी राष्ट्रपति ने आगे आश्वासन दिया कि यदि पाकिस्तान को दी गई अमरीकी सैनिक सहायता का दुरूपयोग हुआ तो अमेरिका ऐसे "आक्रमण" को टालने के लिए प्रत्येक सम्भव कदम उठायेगा।

अमरीकी राष्ट्रपति के उपर्युक्त आश्वासनों के बावजूद भारत में अमेरिका-पाकिस्तान सैनिक समझौते पर तीव्र प्रतिक्रिया एवं रोष प्रकट किया गया। अमरीकी सहायता की पेशकश को ठुकराते हुए प्रधानमंत्री श्री नेहरू ने कहा "जब हम पाकिस्तान को दी जा रही सैनिक सहायता का विरोध करते हैं और यदि हम ही वह सहायता स्वीकार कर लें, तो हम कपटी और असैद्धान्तिक

---

141. न्यूयार्क टाइम्स, 6 जनवरी, 1954
142. अनीस (काबुल), 6 जनवरी, 1954, देखिए- वेद प्रताप वैदिक, "अफगानिस्तान में सोवियत-अमरीकी प्रतिस्पर्धा",(नई दिल्ली 1973), पृ. 89
143. डॉन, 23 फरवरी, 1954
144. डिपार्टमेन्ट ऑफ स्टेट बुलेटिन, खंड 30, अंक 768, 15 मार्च, 1954, पृ. 401
145. राष्ट्रपति आइजनहावर के प्रधानमंत्री नेहरू को भेजे गए पत्र का पूरा विवरण देखिए, वही पृ. 400-401 -न्यूयार्क टाइम्स, 26 फरवरी, 1954

अवसरवादी कहलाएगें"।[146] 1 मार्च, 1954 को प्रधानमंत्री श्री नेहरू ने कहा कि भारत इस सहायता का विरोध इसलिए कर रहा है, क्योंकि इससे तनाव बढ़ेगा तथा भारत और पाकिस्तान के मध्य पहले से ही मौजूद समस्याओं को हल करने में अड़चन आएगी। उन्होंने आगे कहा "अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को दी जाने वाली सहायता एक तरह से इन समस्याओं में हस्तक्षेप है"।[147]

'अमरीकी डिपार्टमेन्ट ऑफ स्टेट' बारम्बार एक ही बात दोहराए हुए था कि पाकिस्तान को दी जाने वाली सैनिक सहायता का उद्देश्य दक्षिण पूर्वी एशिया को साम्यवादी आक्रमण से बचाना है। 3 अप्रैल, 1954 को अमरीकी के उप सहायक विदेश मंत्री ने कहा कि पाकिस्तान को दी गई अमरीकी सैनिक सहायता का उद्देश्य सांझी सुरक्षा है तथा भारत का भय निराधार है।[148] यह तथ्य स्पष्ट नहीं है कि अमरीकी नीति निर्माता ऐसा क्यों सोच रहे थे कि उनके द्वारा प्रदत्त सैनिक सहायता का प्रयोग पाकिस्तान भारत के खिलाफ नहीं करेगा। एक अमरीकी संवाददाता ने पाकिस्तान का दौरा करने के बाद लिखा "उत्तम पाकिस्तानी नागरिक साम्यवादी खतरे के बारे में बहुत ही कम सोचता है।" उसका द्वेष भारत से है सोवियत संघ से नहीं। उसकी यह धारणा है कि भारत के साथ शक्ति परीक्षण में अमरीकी सैनिक सामग्री का इस्तेमाल किया जाएगा।[149] प्रधानमंत्री श्री नेहरू ने अमरीकी राष्ट्रपति आइजनहावर के इस आश्वासन पर कि पाकिस्तान को अमरीकी सैनिक सहायता सम्भावित आक्रमण का मुकाबला करने के लिए दी गई है, टिप्पणी करते हुए कहा कि "मुझे यह स्पष्ट नहीं होता कि पाकिस्तान को किस तरह के आक्रमण और किससे आक्रमण का भय है। मुझे पाकिस्तान पर कहीं से भी हमले की लेशमात्र आशंका नहीं दिखाई देती है।"[150]

सितम्बर, 1954 में पाकिस्तान दक्षिण पूर्वी एशिया सन्धि संगठन "सिएटो" का सदस्य बन गया। इस अमरीकी प्रेरित संगठन के अन्य सदस्य देश थे, आस्ट्रेलिया, फ्रांस, न्यूजीलैन्ड, थाईलैंड, ब्रिटेन, आयरलैन्ड और अमेरिका।[151] 1955 में पाकिस्तान सेण्टो संगठन का भी सदस्य बन गया।[152]

भारत के साथ ही साथ अफगानिस्तान ने भी अमरीकी सैनिक सहायता का पाकिस्तान को मुहैया किए जाने का विरोध किया। एक तरफ जहाँ भारत ने अमरीकी सहायता की पेशकश

146. पार्लियामैन्टरी डिबेट्स, खंड 1, भाग 42, अंक 12, का. 970
147. वही, का. 963-974
148. डिपार्टमेन्ट ऑफ स्टेट बुलेटिन, खंड 30, अंक 773, 19 अप्रैल, 1954, पृ. 593-597
149. न्यूयार्क हेरल्ड ट्रिब्यून, 7 जून, 1956
150. पार्लियामेन्ट्री डिबेट्स, खंड 1, भाग 1, अंक 12, 1954 का. 968
151. -डाक्यूमेन्ट्स ऑफ अमेरिकन फॉरेन रिलेशन्स 1954 (वाशिंगटन 1956), पृ. 320
152. वही, 1955, पृ. 342-344

ठुकरा दी वहीं अफगानिस्तान ने अमरीका से सैनिक सहायता का अनुरोध किया जो वाशिंगटन ने ठुकरा दिया। दिसम्बर 1953 को अफगानिस्तान यात्रा के दौरान अमरीकी उपराष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन ने पख्तून समस्या पर अफगान दृष्टिकोण का अनुमोदन करने के स्थान पर अफगानिस्तान को इस मुद्दे को छोड़कर पाकिस्तान के साथ सम्बन्ध सुधारने की सलाह दी। ऐसे वातावरण में अफगानिस्तान ने अमेरिका से सैनिक सहायता की मांग नहीं उठाई।[153] अक्तूबर, 1954 में अफगान विदेशमंत्री ने वाशिंगटन की यात्रा की, ताकि अमेरिका से सैनिक सहायता प्राप्त की जा सके। अमरीकी सरकार ने अफगानिस्तान का अनुरोध यह कह कर ठुकरा दिया कि इससे उसके पाकिस्तान के सम्बन्धों में और अधिक जटिलता आ जाएगी।[154] अफगानिस्तान का यह मत था कि एशिया में साम्यवाद के प्रसार को रोकने के लिए एशिया के कमजोर देशों को सैनिक सहायता देना, उन्हें सैनिक गठबन्धनों में बांधना तथा ऐसे इलाकों में हवाई अड्डे स्थापित करना इत्यादि कदम अनावश्यक हैं, क्योंकि अमेरिका स्वयं इस क्षेत्र में हजारों मील की दूरी पर है।[155] जब सैनिक गठबन्धनों के द्वारा पाकिस्तान को सैन्य सहायता मिलनी आरम्भ हुई तो अफगानिस्तान ने इसका विरोध कड़े शब्दों में करना शुरू कर दिया। अफगानिस्तान का मत था कि सिएटो एवं सेण्टो जैसे सैनिक गठबन्धन से एशिया के राष्ट्रों को मजबूती मिलने के बजाय उन्हें कमजोर कर देगी।

5 दिसम्बर, 1955 को कराची से छपने वाले अंग्रेजी दैनिक 'मॉर्निंग न्यूज' ने अपने सम्पादकीय में आरोप लगाया कि भारत-अफगानिस्तान गठबन्धन पाकिस्तान की स्वतन्त्रता एवं क्षेत्रीय अखंडता के लिए खतरा बना हुआ है। सम्पादकीय में इस गठबन्धन से सावधान रहने तथा इसके इरादों को छिन्न-भिन्न करने का आह्वान किया गया।[156] जब लोकसभा में भारत सरकार का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया गया तो तत्कालीन उपविदेश मंत्री ने कहा कि पाकिस्तान समाचार पत्रों में आए दिन ऐसे भड़कीले लेख छपते रहते है।[157] मंत्री महोदय ने आगे कहा कि भारत सरकार ने पाकिस्तानी समाचार पत्रों में भारत और अफगानिस्तान के बारे में झूठा एवं तर्कहीन प्रचार को बड़े खेद से देखा। "भारत ने अफगानिस्तान के आन्तरिक मामलों एवं उसके पाकिस्तान के साथ विषयों में कभी भी हस्तक्षेप नहीं किया। जबकि भारत के अफगाानिस्तान के साथ परम्परागत मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रहे हैं"।[158] यह पूछे जाने पर कि इस दिशा में भारत सरकार ने क्या कदम

---

153. अब्दुल समद गाऊस, देखिए क्र. 1, पृ. 80
154. लिओन, वी0 पोलादा, "अफगानिस्तान एण्ड द यूनाईटिड स्टेट्स द क्रूशियल ईयर्स", द मिडल ईस्ट जरनल, (वाशिंगटन 1981)', पृ. 187
155. गाऊस, देखिए क्र. 1, पृ. 81
156. मार्निंग न्यूज (कराची), 5 दिसम्बर, 1955
157. लोकसभा डिबेट्स, खंड 7, भाग 1, अंक 21, 17 दिसम्बर, 1955, का. 1141
158. वही

उठाया है तो मंत्री महोदय ने बताया "भारत सरकार ऐसी झूठी अफवाहों एवं प्रचार की भर्त्सना करती है और जहाँ आवश्यकता हो पाकिस्तान सरकार का ध्यान आकृष्ट कर सकती है तथा समय-समय पर ऐसा किया भी गया है"।[159]

6 अगस्त, 1962 को पाकिस्तान के राष्ट्रपति अय्यूब खान ने कराची में दिए गए भाषण में आरोप लगाया कि भारत और सोवियत संघ पाकिस्तान, अफगानिस्तान एवं ईरान को हड़पने की योजना बना रहे हैं तथा इस योजना को विफल करने के लिए यह आवश्यक है कि तीनों देश मिलकर एक इस्लामी संघ बनायें।[160] भारत सरकार का ध्यान जब इस ओर दिलाया गया तो प्रधानमंत्री श्री नेहरू ने पाकिस्तान के राष्ट्रपति के तथाकथित बयान पर खेद प्रकट किया। उन्होंने आगे कहा: "हमने यह बार-बार कहा कि भारत पाकिस्तान के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्ध चाहता है। यह सत्य है कि दोनों देशों के बीच राजनैतिक एवं अन्य विवाद हैं, किन्तु वे भारत की मूल नीति में परिवर्तन नहीं ला सकते"।[161] यह पूछे जाने पर कि क्या भारत सरकार ने ईरान और अफगानिस्तान की सरकारों को अपना रवैया ठीक तरह से स्पष्ट कर दिया था तो प्रधानमंत्री ने कहा कि आमतौर पर ऐसे विषयों पर भारत के कूटनीतिज्ञ स्वयं ही कदम उठाते हैं।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि 1953-63 की अवधि में भारत के अफगानिस्तान के साथ राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्धों में प्रशंसनीय वृद्धि हुई। राजनैतिक स्तर पर दोनों देशों के उच्च नेताओं की यात्रा के आदान-प्रदान से इन सम्बन्धों को और अधिक मजबूती मिली तथा अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर उन्होंने समान विचार व्यक्त किए। यद्यपि 1960-62 में अफगान-पाक सम्बन्धों में तनाव के कारण परस्पर व्यापार में उतार आया था, किन्तु स्थिति सामान्य होते ही आर्थिक क्षेत्रों में भी नए व्यापार समझौते सम्पन्न हुए तथा पारस्परिक सहयोग से व्यापार में वृद्धि हुई। इस अवधि की उल्लेखनीय बात थी-दोनों देशों में परस्पर व्यापार संतुलन लाना। सांस्कृतिक क्षेत्र में भी परस्पर सहयोग एवं सौहार्द्र पनपा। इस अवधि में भारत-अफगानिस्तान-पाकिस्तान के त्रिकोणात्मक सम्बन्धों में भी महत्वपूर्ण घटनाएँ घटी। विशेषकर पाकिस्तान का अमेरिका से सैनिक सहायता प्राप्त करना तथा भारत एवं अफगानिस्तान द्वारा उनका विरोध करना। यही आधार दोनों देशों की गुटनिरपेक्षता की नीति एवं शान्ति पूर्ण सहअस्तित्व के सिद्धान्तों में आस्था को दृढ़ करने में सहायक सिद्ध हुआ।

*****

159. लोकसभा डिबेट्स, खंड 7, भाग 1, अंक 21, 17 दिसम्बर, 1955, का. 1141
160. लोकसभा डिबेट्स, खंड 6, 13 अगस्त, 1962, का. 1378
161. लोकसभा डिबेट्स, खंड 6, 13 अगस्त, 1962, का. 1378

षष्ठ अध्याय

षष्ठ अध्याय

भारत-अफगानिस्तान सम्बन्ध (1964-1972)

वर्ष 1964 के दौरान भारत एवं अफगानिस्तान की आन्तरिक राजनीति में महत्वपूर्ण बदलाव हुए। मई, 1964 में भारत के प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू के निधन से एक युग का समापन हुआ तथा लाल बहादुर शास्त्री ने भारत के नए प्रधानमंत्री के रूप में देश का नेतृत्व संभाला। उधर अफगानिस्तान में 1964 में नए संविधान को लागू किया गया। नए संविधान के अंतर्गत अफगानिस्तान में प्रजातंत्र की नींव को सुदृढ़ करने के लिए कारगर प्रबन्ध किए गए तथा राजा की शक्ति को भी मजबूत किया गया। नए संविधान के अनुच्छेद 15 के अन्तर्गत "राजा शासन के किसी भी प्रभाग के प्रति उत्तरदायी नहीं होगा"।[1] नए संविधान के संदर्भ में अगस्त-सितम्बर, 1965 में अफगानिस्तान में आम चुनाव कराए गए, जिसमें डा. मोहम्मद यूसुफ पुनः प्रधानमंत्री नियुक्त किए गए। नए प्रधानमंत्री ने अफगानिस्तान की अपनी परम्परागत तटस्थता एवं स्वतंत्रता की विदेशनीति का अनुसरण करते रहने का संकल्प लिया।[2] दूसरी ओर भारत में भी लाल बहादुर शास्त्री ने प्रधानमंत्री पदभार ग्रहण करते ही नेहरू युग की परम्परागत भारतीय विदेशनीति का अनुसरण करते रहने का संकल्प दोहराया।[3]

उपर्युक्त विश्लेषण से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि भारत एवं अफगानिस्तान में 1964 में आन्तरिक परिवर्तनों के बावजूद उनकी विदेश नीतियों में कोई परिवर्तन होने का आभास नहीं हो पा रहा था। विश्व राजनीति में महाशक्तियों की प्रतिस्पर्धा पूर्ववत् कायम थी। यद्यपि अक्टूबर, 1962 के क्यूबा-मिजाइल संकट के उपरांत सोवियत संघ एवं संयुक्त राज्य अमेरिका में पारस्परिक तनाव में कुछ शैथिल्य आया था तथापि शीत युद्ध अपनी चरम सीमा पर था। अक्टूबर 1962 में भारत-चीन के युद्धोपरान्त सोवियत संघ, अमेरिका एवं अन्य पाश्चात्य देशों के साथ भारत के सम्बन्धों में सुधार हुआ था, परन्तु भारत-चीन सम्बन्धों में तनाव बढ़ गया था। चीन ने 1963 में अफगानिस्तान एवं पाकिस्तान के साथ सीमा समझौता करके इन देशों के साथ अपने सम्बन्ध सुधारने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम उठाया। इस संदर्भ में चीन की मित्रता से भारत-पाकिस्तान

---

1. रिचर्ड एस. न्यूवैल, द पॉलिटिक्स ऑफ अफगानिस्तान (इथाका 1972), पृ. 102
2. लुई डुपरी, "अफगानिस्तान", पृ. 562
3. विलियम जे बार्न्डस, "इण्डिया पाकिस्तान एण्ड द ग्रेट पावर्स" (न्यूयार्कः प्रेगर पब्लिशर्स 1972),पृ. 193

सम्बन्धों पर प्रभाव पड़ा था, परन्तु भारत-अफगानिस्तान सम्बन्धों पर इसका प्रभाव लेश मात्र भी नहीं पड़ा। नई दिल्ली एवं काबुल में कोई विवादास्पद मामला न होने के कारण महाशक्तियों की प्रतिस्पर्धा एवं क्षेत्रीय प्रभाव वाली नीति एवं शीत युद्ध का दोनों देशों के परस्पर सम्बन्धों पर प्रभाव निर्मूल रहा। इस पृष्ठभूमि में भारत-अफगान सम्बन्धों के आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक पहलुओं पर विश्लेषणात्मक दृष्टिपात आगामी पृष्ठों पर किया गया है।

(क) महाशक्तियों की राजनीति व भारत-अफगान सम्बन्ध

वर्ष 1964 में अमेरिका में राष्ट्रपति जॉनसन पुनः निर्वाचित हुए। उन्होंने पूर्व राष्ट्रपति केनेडी की उदार नीति छोड़कर कठोर दृष्टिकोण अपनाया। सोवियत संघ में भी इस वर्ष कोसीगन प्रधानमंत्री बने। उन्होंने अपनी कुशल नीतियों से देश की विशेष छवि बनाई। ये महाशक्तियाँ प्रारम्भ से ही अपने-अपने राष्ट्रीय हित व प्रभाव क्षेत्र में विस्तार के लिए पाकिस्तान, अफगानिस्तान व भारत को मदद देती रही है। क्षेत्रीय शक्ति चीन भी पाकिस्तान के साथ सम्बन्धों को बढ़ा रहा था।[4] इस काल में चीन द्वारा अफगानिस्तान के साथ सम्बन्धों में वृद्धि से महाशक्तियों के साथ चले आ रहे अफगान सम्बन्धों में एक नया आयाम जुड़ गया। वास्तव में सीमा समझौते तथा विदेशी सहायता[5] आदि कार्यों ने अफगानिस्तान में चीन की साख को बढ़ाया। किन्तु अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में अफगानिस्तान ने चीन के प्रभाव में आकर कभी भी सोवियत, अमेरिका व भारत विरोधी दृष्टिकोण नहीं अपनाया। अफगान नेताओं ने महाशक्तियों के मध्य सदैव संतुलनकारी नीति अपनाई। भारत ने भी प्रारम्भ से ही इस नीति का अनुसरण किया। फलतः 1964 में भारत में सूखा पड़ने पर खाद्य संकट के निवारण के लिए अमेरिका ने भरपूर सहायता दी। 1965 के भारत-पाक युद्ध में चीन द्वारा भारत को धमकी दिए जाने पर अमेरिका ने चीन को चेतावनी दी कि यदि किसी भी तरह वह युद्ध में कूदा तो अमेरिका भारत को सभी प्रकार की सहायता देने से नहीं हिचकिचाएगा। सोवियत संघ ने भी भारत का साथ दिया। अफगानिस्तान भी यद्यपि महाशक्तियों की प्रतिस्पर्धा का पूरा लाभ उठाना चाहता है, किन्तु वह किसी ऐसे गठबंधन में शामिल नहीं होना चाहता जिससे उसकी असंलग्नता की परम्परागत नीति को ठेस पहुँचे।[6]

1962 के भारत-चीन युद्ध के पश्चात् दोनों महाशक्तियों ने भारत को हथियार देना प्रारम्भ कर दिया, जिसने चीन तथा पाकिस्तान दोनों को विचलित कर दिया। सैन्य सन्धियों में दृढ़ता से बन्धे रहने के बाद भी पाकिस्तान को विशेष लाभ नहीं हो रहा था। ऐसी स्थिति में चीन तथा सोवियत संघ के पास विस्तार के लिए स्वर्ण अवसर था। परिणाम स्वरूप अब

---

4. जाफरी, एच.ए.एस.,"इण्डो-अफगान रिलेशन्स", दिल्ली 1976,पृ. 158
5. द हिन्दू (मद्रास), 11 जून, 1969
6. टाइम्स ऑफ इण्डिया (दिल्ली), 31 मई, 1968

पाकिस्तान को लेकर तीनों महाशक्तियों में एक प्रतिस्पर्धा प्रारम्भ हो गई। इस कूटनीति से कश्मीर व पख्तून सवाल पर सोवियत दृष्टिकोण में क्रमिक अस्पष्टता आती गई। वह भी अब अमेरिका की तरह अफगानिस्तान और पाकिस्तान के मध्य अच्छे सम्बन्धों की वकालत करने लगा। उसने अब पख्तून समस्या का उल्लेख भी बंद कर दिया।[7] अन्तर्राष्ट्रीय समर्थन के अभाव में अफगान विदेशनीति का एक प्रमुख कोण लगभग कुंठित हो गया। अब विश्व का ध्यान अफगानिस्तान से हट कर भारत-पाकिस्तान तथा भारत-चीन समस्याओं की ओर लग गया।

1964 में काहिरा सम्मेलन में लालबहादुर शास्त्री के भरसक प्रयत्नों के बावजूद चीनी आक्रमण की निन्दा नहीं की गई। क्योंकि इस युद्ध के पश्चात् चीन इस क्षेत्र की महाशक्ति माना जाने लगा था। चीन द्वारा प्रथम परमाणु विस्फोट किए जाने पर जनवरी 1965 में प्रधानमंत्री श्री शास्त्री ने दुर्गापुर कांग्रेस के अधिवेशन में कहा, "मैं भविष्य के बारे कुछ नहीं कह सकता, किन्तु हमारी वर्तमान नीति बम बनाने के पक्ष में नहीं है"।[8]

1965 की भारत-पाक लड़ाई की समाप्ति में सोवियत संघ ने निर्णायक योगदान दिया। उसने शान्ति योजना की पेशकश की और संघर्ष के निपटारे के लिए मध्यस्थता का प्रस्ताव रखा। 3-10 जनवरी, 1966 को ताशकन्द में कोसीगिन के नेतृत्व में लालबहादुर शास्त्री एवं अय्यूब के बीच सम्बन्धों के सामान्यीकरण के लिए समझौता हुआ। जिसकी सर्वत्र प्रशंसा की गई।[9] तभी वहाँ भारतीय प्रधानमंत्री की मृत्यु ने भारत की आन्तरिक राजनीति में जटिलताएँ उत्पन्न कर दीं।[10] दूसरी ओर समझौते के उपरान्त पाकिस्तान को अमेरिका के साथ ही सोवियत संघ की सहायता भी प्राप्त होने लगी। जिससे भारत तथा अफगानिस्तान का समान उद्देश्य हो गया कि महाशक्तियों के शीतयुद्ध से इस क्षेत्र को कैसे बचाया जाए।[11] वास्तव में ताशकंद समझौते के द्वारा सोवियत संघ एक विश्व शक्ति होने के साथ-साथ एक एशियाई शक्ति के रूप में भी उभरने लगा।[12] इस कार्य में जहाँ उसे अमेरिका से कोई चुनौती नहीं मिली, वहीं अफगानिस्तान द्वारा उसे पूरा समर्थन तथा सहयोग सदा सुलभ रहा।

1968 में परमाणु निरस्त्रीकरण सन्धि इस काल की महान उपलब्धि थी। यह सन्धि परमाणु

---

7. द हिन्दू (मद्रास), 24 अप्रैल, 1965
8. भाटिया, श्याम,"इण्डियाज न्यूक्लियर बॉम्ब", नई दिल्ली 1979, पृ. 121
   -द हिन्दू (मद्रास), 1 मार्च, 1965
9. हिन्दुस्तान टाइम्स (दिल्ली), 8 फरवरी, 1965
10. ग्रि0ग्रि0 कोतोव्स्की, "भारत का इतिहास", मास्को प्रकाशन, 1984, पृ. 734-46
11. पैट्रीआट (नई दिल्ली), 6 जून, 1969
12. ठाकुर, रमेश, "रीजन्स फॉर इण्डियाज डिस्टिनक्टिव एप्रोच", राउण्ड टेबल, 280, अक्टूबर 1980, पृ. 427-28

हथियारों पर पाबन्दी लगाने तथा रूस-अमरीकी सहयोग की दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम था। फ्रांस, चीन तथा पाकिस्तान ने इस सन्धि में हस्ताक्षर नहीं किए, जबकि भारत ने कुछ निगरानी शर्तो को स्वीकार किया। 20 जनवरी, 1969 को रिचर्ड निक्सन अमेरिका के 37वें राष्ट्रपति बने। उन्होंने शान्ति के प्रति अपनी आस्था व्यक्त की। उनके काल के दौरान जहाँ रूस-चीन मतभेद खुलकर प्रकट हुए, वहीं अमेरिका व चीन एक दूसरे के निकट आए।[13] निक्सन का मत था कि जब तक अमेरिका-चीन सम्बन्ध सामान्य नहीं होते, विश्व में स्थायी शान्ति स्थापित नहीं हो सकती। अमेरिका-चीन-पाक गठजोड़ को देखते हुए भारत, सोवियत संघ के निकट हुआ।[14] दूसरी ओर छठे दशक के उत्तरार्ध में अफगानिस्तान को सोवियत संघ की अपेक्षा अमरीकी सहायता में उल्लेखनीय कटौती की गई। अफगानिस्तान को चीनी सहायता की घोषणा के पश्चात् भारत ने भी अपने सहायता कार्यक्रम और व्यापार में अभिवृद्धि की। पाकिस्तान को सैन्य सहायता दिए जाने के प्रति निक्सन प्रशासन का कहना था कि वह साम्यवादी आक्रमण को रोकने के लिए दी जा रही है। किन्तु भारत-पाक युद्ध में उन्हीं हथियारों का प्रयोग किया गया। 1970 में सोवियत संघ में सत्ता परिवर्तन हुआ और ब्रझनेव सत्ता में आए। उनके काल में अफगानिस्तान, भारत व ईराक में सोवियत प्रभाव में वृद्धि हुई। इसलिए 1970 से 1972 की अवधि को सोवियत राजनय की सफलता का काल कहा जाता है।

1971 में पाकिस्तान के पूर्वी क्षेत्र में बंगला देश की स्वायत्तता को लेकर राष्ट्रीय आन्दोलन चला। भारत द्वारा उन्हें नैतिक समर्थन दिए जाने पर चीन व पाकिस्तान की ओर से युद्ध की धमकी तथा उनके समर्थन में अमरीकी घुड़की आदि ने भारत के चारों ओर स्थिति को विस्फोटक बनाया। ऐसी असुरक्षित स्थिति में भारत ने सोवियत संघ के साथ अगस्त 1971 में शान्ति व मित्रता की सन्धि कर ली।[15] जिसने भारत की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति को मजबूत बनाया। इसलिए वर्ष 1971 भारत-सोवियत मैत्री की पराकाष्ठा माना जा सकता है। अफगानिस्तान में भी नए प्रधानमंत्री डा0 अब्दुल जाहिर ने दक्षिण पूर्वी एशिया में बिगड़ती स्थिति के लिए अमेरिका को जिम्मेदार ठहराते हुए कड़ी निन्दा की। उन्होंने अमेरिका द्वारा पाकिस्तानी सैनिक शासन को लगातार सैन्य सहायता देते रहने पर भी आपत्ति प्रकट की। क्योंकि वर्तमान सैनिक शासन बंगला देश में अत्याचार कर रहा था।[16]

---

13. ठाकुर, रमेश, देखिए क्र. 12
14. वही,
    -कुमार, अशोक, "पाकिस्तान एज ए फैक्टर ऑफ इण्डो-अफगान रिलेशन्स", शोधग्रन्थ, मेरठ1981
15. बनर्जी, सुबराता, "इण्डिया-अफगानिस्तान एण्ड द वर्ल्ड- ए स्टडी इन पर्सपैक्टिव", सिकुलर डैमोक्रेसी, खण्ड 13, अंक 13, फरवरी 1980, पृ. 24-27
16. हिन्दुस्तान टाइम्स, (दिल्ली), 17 जुलाई, 1971

सोवियत समर्थन से युद्ध में भारत की विजय हुई। युद्ध के दौरान अमरीकी शासन के पाक समथर्क रवैये के कारण भारत-अमरीकी सम्बन्धों में बिगाड़ आया। किन्तु 1971 में सम्पन्न भारत-सोवियत सन्धि से भारत की गुटनिरपेक्ष छवि को बहुत क्षति पहुँची, पर इस 'संश्रय' के बिना बंगला देश का निर्माण असम्भव होता। इस प्रकार साठ के दशक में अमेरिका, चीन व अन्य पश्चिमी देशों से प्राप्त सैन्य सहायता द्वारा पाकिस्तान का भारत विरोधी प्रचार बड़ा आक्रमक रहा। किन्तु 1971 की लड़ाई के बाद स्वयं के दो टुकड़े हो जाने तथा भारत की शक्ति को देखते हुए वह भयभीत हो गया है।[17] दूसरी ओर इस दशक की घटनाओं ने इस क्षेत्र में अवस्थित देशों के प्रति महाशक्तियों के दृष्टिकोण में भी परिवर्तन कर दिया। अन्तर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय राजनीति के इस परिवर्तनमय परिवेश से अछूता रहना अफगानिस्तान के लिए असम्भव था। वास्तव में, उपमहाद्वीप में महाशक्तियों के शक्ति संतुलन से न केवल स्थिति असुरक्षित हुई है बल्कि विस्फोटक हथियारों से मानव जीवन के लिए खतरा उत्पन्न हुआ है।[18] अस्तु, बड़ी शक्तियों की तकनीकी और आर्थिक सहायता पर आश्रित होने पर भी भारत व अफगानिस्तान ने सदैव गुटनिरपेक्षता का पालन करते हुए स्वतन्त्र नीति का निर्वाह किया। उन्होंने नव साम्राज्यवाद के सभी रूपों का विरोध किया। अपनी इस नीति के कारण उन्हें समय-समय पर हानि का सामना भी करना पड़ा।

(ख) आर्थिक सम्बन्ध

21 जनवरी, 1964 में भारत-अफगानिस्तान के मध्य जो व्यापार समझौता हुआ, उसने भारत-अफगान आर्थिक सम्बन्धों में एक नवीन धारणा को जन्म दिया। अफगानिस्तान व्यापार शिष्ट-मंडल की अध्यक्षता वहाँ के उपमंत्री डा. नूर अली ने तथा भारतीय शिष्टमंडल की अध्यक्षता अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मंत्रालय के सचिव डी0एच0जोशी ने की। यह व्यापार समझौता फरवरी, 1964 से लागू माना गया और इसकी कार्यावधि एक वर्ष तय की गई। दोनों देशों के परामर्श से इसकी अवधि दो वर्ष तक और भी बढ़ाई जा सकती थी।[19] इस समझौते के अन्तर्गत भारत विभिन्न प्रकार की वस्तुएं, जैसे सूखा एवं ताजा मेवा, असफोटिडा, क्यूमिनबीज, तथा दवाई में प्रयोग होने वाली जड़ी-बूटियाँ इत्यादि अफगानिस्तान से मंगवायेगा, बदले में कपड़ा, चाय, गर्म मसाला, इन्जीनियरिंग का सामान, बिजली का सामान इत्यादि अफगानिस्तान को भेजेगा। इस समझौते के

---

17. गुप्त, अमित, "क्या पाकिस्तान आक्रमण करेगा?" माया, वर्ष 57, अंक 23, 15 दिसम्बर, 1986, पृ. 72-74
18. हिन्दुस्तान टाइम्स (दिल्ली), 6 जून, 1969
19. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 10, अंक 1, जनवरी 1964, पृ. 1

अन्तर्गत दोनों देशों में व्यापार लगभग ग्यारह करोड़ रूपये तक पहुँच जाने की संभावना थी।

दोनों देशों के व्यापार-मंडलों ने अपनी-अपनी सरकार की व्यापार प्रक्रिया को और बढ़ावा देने की इच्छा पर बल दिया।[20] उन्होंने मित्रता एवं सौहार्द्रपूर्ण वातावरण में बातचीत की तथा परस्पर व्यापार को बढ़ाने का आपसी निश्चय दोहराया। इस समझौते में अफगानिस्तान बैंक एवं स्टेटबैंक ऑफ इण्डिया द्वारा व्यापार के भुगतान का प्रविधान जो पहले से चला आ रहा था, को अनवरत रखा गया। इसके साथ यह भी निश्चित किया गया कि अफगानिस्तान से भारत को भेजी गयी कपास एवं ऊन तथा भारत द्वारा अफगानिस्तान को निर्यात की गई चीनी, ट्रैक्टरों, ड्रग्स तथा दवाइयों इत्यादि का भुगतान अमरीकी डालर या ब्रिटिश पाउण्ड में किया जाएगा। तत्कालीन भारत के विदेश व्यापार मंत्री मनु भाई शाह ने 14 फरवरी, 1964 को लोकसभा में बताया कि भारत द्वारा अफगानिस्तान से आयात होने वाली व्यक्तिगत वस्तुओं पर कोई आयात सीमा निर्धारित नहीं की गई थी।[21] इस समझौते के सम्पन्न होने से भारत और अफगानिस्तान में परस्पर व्यापार सम्बन्धों में और मजबूती आयी।

इस समझौते के सम्पन्न होने के कुछ महीने बाद ही अफगान सरकार ने भारत-अफगान व्यापार में समता लाने के लिए कुछ कदम उठाए, जिनके अन्तर्गत कुछ 'ऐश्वर्य योग्य वस्तुओं' के भारत से आयात पर पाबन्दी लगा दी गयी। अक्तूबर, 1964 में ऐसी खबरें मिलीं कि अफगान सरकार ने भारत से रेशम के आयात पर पाबन्दी लगा दी।[22] इस स्थिति में भारत का अफगानिस्तान को निर्यात वर्ष 1964-65 तक लगभग 587 लाख रू0 रह गया जबकि इसी वर्ष के लिए अफगानिस्तान से भारत को आयात माल 556 लाख रू0 की सीमा तक पहुँच गया। अगस्त, 1969 के अन्तिम सप्ताह में भारतीय विदेशमंत्री सरदार स्वर्ण सिंह जब अपनी दो दिवसीय राजकीय यात्रा पर काबुल गए तो उन्होंने अफगानिस्तान की आर्थिक प्रगति में भारत की विशेष रूचि पर वार्ता की।[23] इस विषय पर विस्तार से चर्चा करते हुए विदेशमंत्री ने कहा "अफगानिस्तान में आर्थिक क्षेत्र में हो रही प्रगति को हम बड़ी उत्सुकता से देख रहे हैं। भारत और अफगानिस्तान दोनों ही विकासशील देश हैं, जो अपने देशवासियों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के कार्य में रत हैं। भारत अपनी क्षमता के अनुसार अफगानिस्तान में विकास कार्यो में अपना योगदान करता रहेगा।"[24] अफगान नेताओं के साथ अपनी बातचीत के दौरान भारतीय विदेशमंत्री ने कृषि, लघु उद्योगों एवं तकनीकी

---

20. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 10, अंक 1, जनवरी 1964, पृ. 1
21. लोकसभा डिबेट्स, थर्ड सीरिज, खंड 25, सं. 5, 14 फरवरी, 1964, कॉलम 785-786
22. इण्डियन ट्रेड जरनल, खंड 230, अंक 3, 24 अक्तूबर, 1964, पृ. 388
23. लोकसभा डिबेट्स, थर्ड सीरिज, खंड 37, 18 दिसम्बर, 1964, कॉलम 5699
24. वही

शिक्षा सम्बन्धी क्षेत्रों में अफगानिस्तान को भारत का सहयोग प्रदान करने की पेशकश की।[25]

भारत के साथ आर्थिक एवं राजनैतिक सहयोग की वार्ता करते हुए अफगानिस्तान के वित्त एवं सूचना मंत्री कासिम रिश्तिया ने 29 अगस्त, 1964 में काबुल में पत्रकारों को सम्बोधित करते हुए कहा कि अफगान सरकार भारत के साथ आर्थिक एवं वाणिज्य सहयोग बढ़ाने में सदा ही उत्सुक रही है।[26] उन्होंने अफगानिस्तान की योजनाओं में भारतीय सहयोग की प्रशंसा की।

वर्ष 1964 में भारत-अफगान व्यापार कुल रूप से सामान्य रहा। अफगानिस्तान से फलों का निर्यात अधिक मात्रा में हुआ तथा भारत ने चाय तथा वनस्पति घी का अफगानिस्तान को निर्यात किया। अफगानिस्तान से आयात में बढ़ोतरी के कारणों का विश्लेषण करते हुए भारतीय वाणिज्य मंत्री ने स्वीकार किया कि भारत के पास विदेशी मुद्रा की कमी होने के कारण ऐसा हुआ।[27]

27 दिसम्बर, 1964 को एक भारतीय व्यापार मंडल अफगानिस्तान गया जो वहाँ 8 जनवरी, 1965 तक रहा। इस मंडल ने भारत-अफगान व्यापार समझौता 1964 के कार्य का विवरण तैयार किया तथा 7 जनवरी, 1965 में एक प्रोटोकॉल पर हस्ताक्षर किए, जिसके अन्तर्गत 1964 के भारत-अफगान व्यापार समझौते में कुछ व्यावहारिक परिवर्तन किए गए। इसके अनुसार यह तय किया गया कि अफगानिस्तान से भारत में भेजी गई वस्तुओं का मूल्यांकन भारतीय कस्टम अधिकारियों द्वारा स्वीकृत प्रतिनिधियों के विचारों के आधार पर होगा। इस विषय में लोकसभा को सूचित किया गया कि इन नए परिवर्तनों के कारण अफगानिस्तान से आयातित वस्तुओं का मूल्य अफगानिस्तान की अन्दरूनी मार्किट में उन्हीं वस्तुओं के असली मूल्य के बराबर होगा, जिससे दोनों देशों को लाभ रहेगा।[28]

फरवरी, 1965 में जब अफगान प्रधानमंत्री डा0 मुहम्मद यूसुफ भारत की राजकीय यात्रा पर आए तो तत्कालीन भारत के प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने उनके स्वागत भाषण में दोनों देशों के मध्य व्यापार को बढ़ावा देने पर बल दिया।[29] पारस्परिक कठिनाइयों एवं समस्याओं का उल्लेख करते हुए भारतीय प्रधानमंत्री ने कहा कि भारत की तरह ही अफगानिस्तान के लिए आर्थिक विकास की गति तेज करने की आवश्यकता है। उन्होंने आगे कहा कि दोनों देशों की समस्याएं लगभग समान हैं और मुझे ज्ञात है कि आपकी मुख्य समस्या भी आर्थिक समस्या

---

25. हिन्दुस्तान टाइम्स, 30 अगस्त, 1964
26. द स्टेट्समैन (नई दिल्ली), 31 अगस्त, 1964
27. लोकसभा डिबेट्स, थर्ड सीरिज खंड 37, 18 दिसम्बर, 1964, कॉलम 5699
28. लोकसभा डिबेट्स, खंड 38, 1965, कॉलम 1607-1608
29. फॉरैन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 11, अंक 2, फरवरी 1965, पृ. 17

है। हम विभिन्न क्षेत्रों में परस्पर सहयोग कर सकते हैं।[30] अफगानिस्तान के प्रधानमंत्री डा0 यूसुफ ने अपनी सरकार की आर्थिक नीतियों का उल्लेख करते हुए कहा कि अफगान सरकार भी अपनी जनता की आर्थिक एवं सामाजिक प्रगति को गतिशीलता प्रदान करने के लिए प्रयत्नशील है।[31]

अफगान प्रधानमंत्री की भारत यात्रा की समाप्ति के अवसर पर जारी की गई संयुक्त विज्ञप्ति में दोनों देशों के नेताओं ने परस्पर व्यापार सम्बन्धी प्रगति और विदेशी मुद्रा में कमी के कारण उत्पन्न हुई समस्याओं पर विचार-विमर्श करते हुए इन बाधाओं को दूर करने तथा परस्पर आर्थिक एवं व्यापारिक सम्बन्ध बढ़ाने के दिशा में ठोस कदम उठाने पर बल दिया।[32]

सितम्बर, 1965 में भारत-पाकिस्तान युद्ध के समय भारत और अफगानिस्तान के मध्य व्यापार को काफी क्षति पहुंची। चूंकि व्यापार पाकिस्तान के स्थल मार्ग से होकर जाता था, अतः युद्ध की स्थिति में 10 सितम्बर को पाकिस्तान ने सभी मार्ग बन्द कर दिए। हवाई जहाज द्वारा दोनों देशों के मध्य व्यापार 7 अक्तूबर, 1965 को तथा जल मार्ग से वाया कराची 1 फरवरी, 1966 में पुनः खुल गया।[33] किन्तु पाकिस्तान के अफगानिस्तान से सम्बन्ध सामान्य होने के कारण वह अफगानिस्तान द्वारा भारत को भेजी जाने वाली वस्तुओं को खुद ही खरीदने को उत्सुक था।[34] भारत के साथ स्थल मार्ग से व्यापार बन्द होने की स्थिति में पाकिस्तान ने दोहरी नीति अपनाई, जिससे अफगानिस्तान को व्यापारिक हानि भी न हो तथा अफगान-पाकिस्तान व्यापार में भी बढ़ोतरी हो। इन परिस्थितियों में पाकिस्तान ने अफगानिस्तान के साथ एक व्यापार समझौता किया, जिसके अन्तर्गत अफगानिस्तान से ताजा और सूखे फलों के आयात पर व्यापार कर तथा आयात कर हटा दिया। इसके अतिरिक्त पाकिस्तान ने अपनी पश्चिमी रेल सेवा को ब्लाडाक तक बढ़ाने का निश्चय किया, ताकि अफगानिस्तान के सड़क मार्ग द्वारा माल सीधा कराची तक लाया जा सके।[35] 11 से 16 सितम्बर, 1965 में काफी मात्रा में अंगूरों की खेप अफगानिस्तान से पाकिस्तान को भेजी गई।[36] पाकिस्तान द्वारा अपने पश्चिमी क्षेत्र से भारत-अफगानिस्तान के व्यापार के लिए स्थल मार्ग बन्द कर देने का प्रभाव दोनों देशों पर पड़ा। भारतीय वस्तुएँ अफगानिस्तान के बाजारों से लगभग लुप्त ही हो गयीं। भारत को कराची द्वारा अफगानिस्तान को सामान भेजने पर 10 से 15 प्रतिशत तक अतिरिक्त खर्च पड़ता था, जिससे कीमतें बढ़ गईं। परिणाम स्वरूप

30. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 11, अंक 2, फरवरी 1965, पृ. 17
31. वही, पृ. 18
32. वही, पृ. 20
33. लोकसभा डिबेट्स, खंड 51, 4 मार्च, 1966, कॉलम 3555
34. लिंक (नई दिल्ली), खंड 9, अंक 35, 19 अप्रैल, 1967, पृ. 33-34
35. एशियन रिकार्डर, खंड 12, अंक 25, 1966, पृ. 7135
36. इण्डियन ट्रेड जरनल, खंड 234, अंक 8-10, 24 नवम्बर-8 दिसम्बर, 1965 पृ. 469, 625

भारत की अपेक्षा पाकिस्तान की वस्तुएँ अफगानिस्तान के बाजारों में ज्यादा मात्रा में आने लगीं।

इन कठिनाइयों के बावजूद दोनों देशों में परस्पर आर्थिक एवं वाणिज्य सहयोग बढ़ाने की दिशा में कोई शैथिल्य नहीं आया। यद्यपि दोनों देशों के आपसी आयात-निर्यात में कुछ सीमा तक कमी आ गई। 1965-66 में अफगानिस्तान से भारत को निर्यात पिछले वर्ष से घट कर 423 लाख रूपये रह गया जबकि 1964-65 में यह 556 लाख रुपये था। अफगानिस्तान के साथ अपने निर्यात को बनाए रखने के लिए भारत ने ईरान के बन्दरगाहों का भी प्रयोग किया।

जून, 1966 के प्रथम सप्ताह में एक भारतीय शिष्ट मण्डल अफगानिस्तान पहुँचा, जिसने अफगान अधिकारियों के साथ मिलकर काबुल में भारतीय सहायता से 100 बिस्तर वाले बच्चों के अस्पताल बनाने की योजना सम्बन्धी बातचीत को अन्तिम रूप दिया।[37] 60 लाख रूपये की लागत से बनने वाले इस अस्पताल में शुरू के कुछ वर्षों में भारतीय चिकित्सक देखभाल के लिए नियुक्त करने का प्रविधान रखा गया। अफगानिस्तान में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों को वहाँ की आर्थिक प्रगति में प्रयोग लाने हेतु भारत सरकार ने वर्ष 1966 के शुरू के कुछ महीनों में औद्योगिक कार्यक्रम स्थगित करने के विचार से एक शिष्ट मण्डल भेजा। इस शिष्ट मण्डल के सुझावों के आधार पर भारत सरकार द्वारा जून, 1966 में अफगानिस्तान में वहाँ की सरकार के सहयोग से कुछ औद्योगिक इकाइयां स्थापित करने के प्रश्न पर विचार किया गया।[38]

14 जुलाई, 1966 को अपनी अफगानिस्तान की राजकीय यात्रा के दौरान भारत के उपराष्ट्रपति डा0 जाकिर हुसैन ने भारत के सहयोग से निर्माणाधीन 100 बिस्तर वाले बच्चों के अस्पताल का शिलान्यास किया। इस अवसर पर अपने उद्गार व्यक्त करते हुए उपराष्ट्रपति ने कहा कि शताब्दियों से चले आ रहे पारस्परिक मित्रतापूर्ण भारत-अफगान समझौते को और अधिक मजबूत करने की दिशा में यह एक महत्वपूर्ण कदम है।[39] सितम्बर, 1966 में एक तीन सदस्यीय भारतीय दल अफगानिस्तान गया। वहाँ इस दल ने भारत की सहायता से बन रहे बच्चों के अस्पताल के कार्य की प्रगति एवं कार्य प्रणाली का निरीक्षण किया।[40] ऐसी आशा की जा रही थी कि जब तक यह अस्पताल बन कर तैयार होगा तब तक अफगान डाक्टर और 20 अफगान नर्से भारत से अपना प्रशिक्षण पूरा करके इस अस्पताल की देखभाल के लिए आ जाएंगे।

जनवरी, 1967 के अन्तिम सप्ताह में जब अफगानिस्तान के बादशाह जहीर शाह, भारत की राजकीय यात्रा पर आए तो उनके साथ अफगान सरकार के विदेशमंत्री नूर मोहम्मद एतमादी

37. स्टेट्समैन, 10 जून, 1966
38. वही
39. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 12, अंक 7, जुलाई, 1966, पृ. 160
40. काबुल टाइम्स (काबुल), 24 सितम्बर, 1966

एवं अन्य अधिकारी गण भी थे। 30 जनवरी, 1967 को भारत एवं अफगानिस्तान के विदेश मंत्रियों के मध्य नई दिल्ली में परस्पर आर्थिक सहयोग बढ़ाने पर विचार विमर्श हुआ। यह भी निश्चय किया गया कि दोनों देशों के मध्य व्यापारिक, औद्योगिक एवं तकनीकी क्षेत्रों में भी सहयोग बढ़ाया जाए। भारतीय विदेशमंत्री, ए0 सी0 छागला ने अफगानिस्तान के विदेशमंत्री को आश्वासन दिया कि अफगानिस्तान की औद्योगीकरण की योजनाओं में भारत यथासम्भव सहयोग देने को तैयार है।[41]

भारत और अफगानिस्तान के मध्य 1964 में जो व्यापार समझौता हुआ था इसकी अवधि 1967 तक थी, उसे बिना किसी संशोधन के एक वर्ष आगे की अवधि 31 जुलाई, 1968 तक बढ़ा दिया गया।[42] वर्ष 1967-68 के दौरान भारत द्वारा अफगानिस्तान को निर्यात का स्तर पिछले वर्ष के स्तर पर ही रहा, परन्तु उसके आयातित मात्रा में लगभग दुगनी वृद्धि हो गई। इस वर्ष भारत ने 945 लाख रू0 का आयात किया। इसका मुख्य कारण यह था कि पाकिस्तान स्थल मार्ग से अफगानिस्तान के निर्यात को अपने इलाके से होकर भारत जाने देता था, परन्तु भारत द्वारा स्थल मार्ग से अफगानिस्तान को निर्यात करने पर पाकिस्तान ने पाबन्दी जारी रखी, फलतः भारत को जलमार्ग से बम्बई एवं कराची के मार्ग से अफगानिस्तान को वस्तुएं भेजने में अधिक व्यय और विलम्ब होता।[43]

30 जुलाई, 1968 को एक नया व्यापार समझौता दोनों देशों के मध्य सम्पन्न हुआ, जिसकी अवधि 1968-69 तक थी।[44] इस समझौते में व्यापारिक स्तर पर कुछ परिवर्तन किए गए। इसके अन्तर्गत बारटर ट्रेड प्रावधान बदल दिया गया तथा वस्तुओं की कीमत का भुगतान ठोस अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा में करने का निश्चय किया गया। एक माह पश्चात् जब 21 अगस्त, 1968 को भारतीय विदेशमंत्री दिनेश सिंह अफगानिस्तान गए तो दोनों देशों के मध्य व्यापार की समीक्षा के दौरान अफगान सरकार ने बैकिंग प्रणाली में उत्पन्न होने वाली समस्याओं का उल्लेख किया। इस स्थिति में भारत ने अफगानिस्तान के साथ बारटर व्यापार प्रणाली को कुछ और अधिक समय तक जारी रखने का वायदा किया। भारत और अफगानिस्तान ने परस्पर व्यापार को बढ़ाने के लिए अपना दृढ़ निश्चय दोहराया।[45]

दोनों देशों के मध्य व्यापार बढ़ाने की आवश्यकता पर प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी

41. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 31 जनवरी, 1967
42. जरनल ऑफ इण्डस्ट्री एण्ड ट्रेड, खंड 17, अंक 10, 1967, पृ. 1240
43. लोकसभा डिबेट्स, तीसरी श्रृंखला, खंड 59, 2 सितम्बर, 1966, कॉलम 8664
44. एशियन रिकार्डर, खंड 14, अंक 33, 12-18 अगस्त, 1968, पृ. 8473
45. एशियन रिकार्डर, खंड 14, अंक 39, 23-29 सितम्बर, 1968, पृ. 853

की जून, 1969 की अफगानिस्तान की यात्रा के दौरान भी बल दिया गया। 5 जून, 1969 को काबुल में आयोजित राजकीय भोज में अफगान प्रधानमंत्री के स्वागत भाषण के जवाब में प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने कहा कि ''अफगानिस्तान के लोग भारत में शिक्षा और औद्योगिक क्षेत्रों के प्राविधिक अनुभवों तथा सुविधाओं का लाभ उठा सकते हैं। भारत में शायद ही ऐसा कोई घर हो जो आपके यहाँ के फल एवं इत्र इत्यादि इस्तेमाल न करता हो।"[46]

दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों ने अपनी औपचारिक वार्ता में यह निर्णय लिया कि आपसी आर्थिक सम्बन्धों को बड़े पैमाने पर प्रोत्साहित करने के लिए एक संयुक्त आयोग स्थापित किया जाए।[47] भारत-अफगानिस्तान संयुक्त आर्थिक आयोग की स्थापना दोनों देशों के मध्य आर्थिक एवं वाणिज्य सम्बन्धों को मजबूत करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम होगा।[48] प्रेक्षकों का अनुमान था कि संयुक्त आर्थिक आयोग के अन्तर्गत मिलने वाली भारतीय सहायता अफगानिस्तान में सिंचाई योजनाओं एवं मध्यम औद्योगिक इकाइयों के विकास के लिए प्रयोग में लाई जाने वाली सहायता के रूप में होगी। 1968-69 में भारत-अफगानिस्तान व्यापार में वृद्धि हुई तथा वस्तुओं के आदान-प्रदान में भी विस्तार हुआ। अफगान प्रधानमंत्री ने आशा व्यक्त की, कि पाकिस्तान द्वारा स्थल मार्ग से होने वाले भारत-अफगानिस्तान व्यापार पर लगाए गए प्रतिबन्ध हटा लेने से दोनों देशों में व्यापार अधिक बढ़ेगा।[49]

प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी की अफगान यात्रा की समाप्ति पर जारी की गई संयुक्त विज्ञप्ति में भी भारत-अफगानिस्तान संयुक्त आर्थिक आयोग की स्थापना का उल्लेख किया गया, इसमें कहा गया कि ''भारत और अफगानिस्तान ने संयुक्त रूप से चलाये जाने वाली परियोजनाओं के अध्ययन और परिपालन के लिए मंत्री स्तर पर संयुक्त आयोग नियुक्त करने का निर्णय किया है।"[50] आयोग दोनों देशों के बीच व्यापार बढ़ाने के उपायों पर भी विचार करेगा। इस सम्बन्ध में दोनों देशों ने आशा व्यक्त की, कि इस क्षेत्र में स्थल मार्ग से होने वाले व्यापार की कठिनाइयों को भी दूर किया जा सकेगा।[51] 28 अगस्त, 1969 को अफगान प्रधानमंत्री ने पाकिस्तान से स्थल मार्ग द्वारा अफगान-भारत व्यापार को बाधा रहित बहाल करने का अनुरोध किया। उन्होंने आगे

---

46. भारत सरकार, 'सिलेक्टिड स्पीचिस ऑफ इन्दिरा गाँधी, जनवरी 1966-अगस्त 1969', (नई दिल्ली, 1970), पृ. 390
47. हिन्दुस्तान टाइम्स, 8 जून, 1969
48. चक्रवर्ती, सुभाप, ''ज्वाइंट कमीशन टु प्रमोट इण्डो-अफगान इकोनॉमिक कोओपरेशन", टाइम्स ऑफ इण्डिया, 8 जून, 1969
49. वही
50. दैनिक हिन्दुस्तान, नई दिल्ली, 11 जून, 1969
51. वही

कहा कि पाकिस्तान द्वारा व्यापार के लिए भूमार्ग बन्द करने का अर्थ अफगानिस्तान की अर्थव्यवस्था पर अनावश्यक दबाव है।[52]

16 मार्च, 1970 को भारत-अफगान आर्थिक तथा तकनीकी सहयोग संयुक्त आयोग (इण्डो-अफगान कमीशन फॉर इकोनॉमिक एण्ड टैक्नीकल कोआपरेशन) की बैठक नई दिल्ली में प्रारम्भ हुई। इस बैठक में भारतीय दल का नेतृत्व विदेश राज्यमन्त्री श्री दिनेश सिंह एवं अफगान दल का नेतृत्व वहाँ के अर्थमन्त्री अमानुल्ला मन्सूरी ने किया। 18 मार्च, 1970 को इस बैठक का समापन हुआ। परस्पर विचार विमर्श के बाद 21 मार्च, 1970 को एक संयुक्त विज्ञप्ति जारी की गई जिसमें कहा गया, कि संयुक्त आर्थिक आयोग का मुख्य उद्देश्य दोनों देशों में परस्पर आर्थिक एवं वाणिज्य सहयोग को बढ़ावा देना है।[53] यह भी तय किया गया, कि भारत अफगानिस्तान में छोटे उद्योगों के विकास तथा स्थापना में सहायता करेगा। इसके अन्तर्गत काबुल में एक औद्योगिक बस्ती की स्थापना तथा कृषि अनुसंधान केन्द्रों की स्थापना भी शामिल है। संयुक्त विज्ञप्ति में दोनों देशों के बीच तकनीकी सहयोग में हुई प्रगति पर सन्तोष व्यक्त करते हुए कहा गया कि अभी भी इस क्षेत्र में बहुत कुछ किया जा सकता है।[54] भारत ने अफगानिस्तान में सड़क निर्माण में पूर्ण सहयोग देने का भी प्रस्ताव किया। 360 किलोमीटर लम्बी यह सड़क-परियोजना कंधार को ईरान के बन्दरगाह तक जोड़ती थी। जिसका निर्माण पूर्ण होने पर भारत-अफगानिस्तान में परस्पर व्यापार का सीधा लाभकारी प्रभाव पड़ेगा।

संयुक्त विज्ञप्ति में भारत के सहयोग से बने बच्चों के अस्पताल की प्रगति पर दोनों देशों ने संतोष व्यक्त किया। भारत ने इन्जीनियरिंग शिक्षा एवं औषधि-विज्ञान के क्षेत्रों में अफगानिस्तान के साथ सहयोग करने में भी रूचि दिखाई। जिस समय भारत-अफगानिस्तान संयुक्त आर्थिक आयोग की बैठक हुई उस समय अफगानिस्तान को अधिकांश विदेशी सहायता सोवियत रूस एवं अमेरिका से मिलती थी। भारत की सहायता उन देशों की सहायता के मुकाबले तो नहीं थी, फिर भी इस दृष्टि से उल्लेखनीय थी, कि भारत की सहायता से पहली बार अफगानिस्तान में विकास की प्राथमिक आवश्यकताओं को पूरा करने और विकास के लाभ सुदूर अंचल की ग्रामीण जनता तक पहुँचाने का प्रयत्न किया गया।[55] जुलाई 1969 में भारतीय प्रतिनिधि मण्डल ने अफगानिस्तान की यात्रा के बाद भारत सरकार को अपनी जो रिपोर्ट दी, उस प्रतिनिधि मण्डल की कृषि एवं बिजली उत्पादन की सिफारिशों पर भी संयुक्त आयोग ने स्वीकृति प्रदान की। ये परियोजनाएँ

52. डेली टेलीग्रॉफ (लन्दन), 7 नवम्बर, 1969
53. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 16, अंक 3, मार्च 1970, पृ. 49
54. वही, पृ. 50
55. रंगास्वामी, के0, ''अफगानिस्तान और भारत में सहयोग", दैनिक हिन्दुस्तान, 10 अप्रैल, 1970

भारत के तकनीकी सहयोग से कम से कम समय में लागू की जा सकती हैं। इन योजनाओं में कृषि, सिंचाई, बिजली, उद्योग, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं सड़क निर्माण आदि थे।[56] कृषि के क्षेत्र में आलू, चावल, धान और गेहूँ के उन्नतशील बीजों को विकसित करने के लिए अनुसंधान केन्द्रों की स्थापना किया जाना था। इस योजना के अन्तर्गत भारतीय तकनीकी कर्मचारी, अफगानिस्तान की ग्रामीण जनता को कृषि के सम्बन्ध में नवीनतम जानकारी प्रदान करेंगे। इसी के साथ-साथ एक भारतीय विशेषज्ञ दल बिजली और सिंचाई परियोजनाओं की स्थापना की सम्भावनाओं का पता लगाने के लिए काबुल भेजा। इस परियोजना के अन्तर्गत बामियान घाटी में पहली बार बिजली पहुँचाई जाएगी।

नवम्बर, 1970 में भारत के विदेश व्यापार सचिव श्री के0बी0 लाल की अफगानिस्तान यात्रा की समाप्ति पर 15 नवम्बर, 1970 को नई दिल्ली में जारी की गई एक संयुक्त प्रेस विज्ञप्ति में कहा गया कि भारतीय विदेश व्यापार सचिव ने 13-14 नवम्बर, 1970 में काबुल में अफगानिस्तान के नेताओं के साथ बातचीत की।[57] प्रेस विज्ञप्ति में कहा गया कि वर्तमान भारत-अफगानिस्तान व्यापार समझौते की अवधि 31 जुलाई, 1971 को समाप्त हो जानी थी, इसलिए जब तक नया व्यापार समझौता सम्पन्न नहीं होता, दोनों देशों के बीच व्यापार 1968 के व्यापार समझौते के आधार पर चलता रहेगा। यह भी तय किया गया कि वर्तमान व्यापार पद्धति में आवश्यक सुधार अगस्त 1971 के बाद ही लाए जाएंगे, परन्तु इस दिशा में दोनों देश फरवरी, 1971 से पहले विचार-विमर्श कर लेगें।[58] संयुक्त प्रेस विज्ञप्ति ने कहा गया कि अफगानिस्तान सरकार द्वारा जारी किए गए ट्रान्जिट मानयन्त्रों के आधार पर भारत सरकार आयात-निर्यात पर प्रमाणपत्र जारी करती रहेगी। क्यूमिन, सीड्स, दवाई में काम आने वाली जड़ी बूटियाँ और असफोटिडा के निर्यात पर कोई निर्धारण सीमा (सीलिंग) नहीं लगाई जाएगी। यह भी तय किया गया कि भारत के व्यापारी जो अफगानिस्तान से सामान आयात करते थे, उस निर्यात का लगभग एक चौथाई भाग अपरम्परागत वस्तुओं का अफगानिस्तान को निर्यात भी करेगें। प्रेस विज्ञप्ति में यह भी आश्वासन दिया गया, कि दोनों देशों की सरकारें यह प्रयत्न करेंगी कि उनके आयात और निर्यात की वस्तुएं किसी तीसरे देश में न भेजी जाएं।[59]

फरवरी, 1972 में अफगानिस्तान के वाणिज्य मंत्री एम0आरिफ गाजी की भारत यात्रा के दौरान भारत-अफगान आर्थिक एवं वाणिज्य सम्बन्धों के विषय में विचार विमर्श किया। परस्पर

56. रंगास्वामी, के0, ''अफगानिस्तान और भारत में सहयोग", दैनिक हिन्दुस्तान, 10 अप्रैल, 1970
57. फॉरेन अफयर्स रिकार्ड, खंड 16, अंक 11, नवम्बर 1970, पृ. 213
58. वही
59. वही

बातचीत के बाद दोनों देशों ने आपस में एक नया व्यापार समझौता किया, जिस पर 20 फरवरी को हस्ताक्षर किए गए। नया समझौता जो 1 मार्च, 1972 को लागू होना था, में परस्पर व्यापार का विस्तार, विकास एवं वस्तुओं के आयात-निर्यात को बढ़ावा देना था।[60] इस समझौते के अन्तर्गत दोनों देशों ने परस्पर लाभ के लिए व्यापार को प्रोत्साहन एवं बढ़ावा देने, भारत-अफगान व्यापार को कुछ ही लोगों के हाथों में सीमित न रहने देने और व्यापार में आने वाली कठिनाइयों को दूर करने का अपना दृढ़ निश्चय दोहराया। भारत ने दवाई में काम आने वाली जड़ी-बूटियों के शोधन एवं उत्पादन के लिए अफगानिस्तान को तकनीकी सहायता देने का वचन दिया।[61] अफगानिस्तान ने भारत से मेडिकल एवं शल्य चिकित्सा सम्बन्धी उपकरण खरीदने की इच्छा व्यक्त की। अफगानिस्तान के वाणिज्य मंत्री की भारत-यात्रा की समाप्ति पर जारी की गई एक प्रेस विज्ञप्ति में कहा गया कि दोनों देश समय-समय पर अपने परस्पर व्यापार की समीक्षा करते रहेंगे।

31 मार्च से 2 अप्रैल, 1972 के दौरान भारतीय विदेशमंत्री श्री स्वर्ण सिंह अफगानिस्तान की राजकीय यात्रा पर काबुल गए। अप्रैल माह के प्रथम दो दिनों में भारत-अफगान संयुक्त आयोग की मंत्री स्तर पर काबुल में बैठक हुई। भारतीय दल का नेतृत्व विदेशमंत्री सरदार स्वर्ण सिंह ने किया एवं अफगानिस्तान दल का नेतृत्व वहाँ के विदेशमंत्री मूसा सफीक ने किया।[62] संयुक्त आयोग ने पूरी हो गयी परियोजनाओं एवं निर्माणाधीन परियोजनाओं की समीक्षा की। भारत की सहायता से बामियान, कंधार एवं काबुल में आलू, चावल तथा गेहूँ के लिए कृषि अनुसंधान केन्द्र खोले जाने के बारे में भी समीक्षा की गई। कमीशन ने प्रशिक्षण एवं तकनीकी सहायता कार्यक्रम के अन्तर्गत दी जाने छात्रवृत्तियाँ तथा प्रशिक्षण सम्बन्धी सहायता में हुई प्रगति पर संतोष व्यक्त किया। आयोग ने योजनाएं बनाने एवं उन्हें कार्यान्वित करने के लिए एक समिति स्थापित करने का फैसला किया, जो विभिन्न योजनाओं की देखरेख एवं उनकी कार्यान्वित्ता पर नजर रखेगी। माईक्रोहाइडिल परियोजना, संयुक्त औद्योगिक इकाइयों की स्थापना इत्यादि योजनाओं पर भी आयोग ने विचार विमर्श किया।[63] आयोग ने अफगानिस्तान के स्त्रोतों एवं जलसंसाधनों पर आधारित विभिन्न परियोजनाओं, जो भारत के तकनीकी सहयोग से शुरू की जानी थी, पर विचार किया। तकनीकी सहायता के क्षेत्र में 60 अतिरिक्त अध्यापक, तकनीशियन तथा विशेषज्ञ भारत द्वारा भेजे जाने पर भी सहमति हो गई। इसके अतिरिक्त भारत ने अफगानवासियों को विभिन्न क्षेत्रों में प्रशिक्षण देने का भी वायदा किया।

---

60. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 18, अंक 2, फरवरी 1972, पृ. 41
61. वही
62. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 18, अंक 4, अप्रैल 1972, पृ. 81
63. वही

जून, 1972 में अफगानिस्तान में विविध परियोजनाओं के अन्तर्गत स्थापित होने वाली लघु जलविद्युत परियोजनाओं (माइक्रोहाईडल प्रोजेक्ट्स) के सर्वेक्षण का काम भारत के जल एवं विद्युत संगठन (वाटर एंड पावर कन्सलटेन्ट्स आरगेनाईजेशन) को सौंप दिया।[64] यह परियोजना वर्ष 1973 के अन्त तक पूरी होने की संभावना है। इस परियोजना पर कुल व्यय 50 लाख रूपये तक आएगा जिसमें से 20 लाख रूपये का सहयोग तकनीकी एवं उपकरणों के रूप में भारत द्वारा दिए जाने की सहमति हुई।

जुलाई, 1972 में भारत के राष्ट्रपति श्री वी0वी0 गिरि ने अफगानिस्तान की राजकीय यात्रा की। 11 जुलाई, 1972 को भारत के राष्ट्रपति के सम्मान में आयोजित राजकीय भोज में बोलते हुए अफगान बादशाह जहीर शाह ने कहा कि "भारत के सहयोग से निर्मित काबुल में बच्चों का अस्पताल भारत-अफगान मैत्री एवं सहयोग की एक मिसाल है"।[65] दोनों देशों के बढ़ते हुए आर्थिक व वाणिज्य सम्बन्धों की चर्चा करते हुए भारत के राष्ट्रपति ने कहा कि कई कठिनाइयों के बावजूद दोनों देशों में आर्थिक सहयोग एवं संयुक्त औद्योगिक परियोजनाओं को स्थापित करने में काफी सफलता मिली है।[66] आर्थिक सहयोग के लिए भारत-अफगान संयुक्त आयोग की चर्चा करते हुए राष्ट्रपति श्री गिरि ने आशा व्यक्त की, "इससे न केवल अफगानिस्तान को अपितु भारत को भी लाभ होगा।"

भारत-अफगानिस्तान व्यापार तालिका

1964 से 1972 के बीच भारत और अफगानिस्तान के मध्य कुल व्यापार की तालिका निम्न प्रकार रही।

तालिका अ

भारत द्वारा अफगानिस्तान को निर्यात एवं आयात (1964-1972)* (लाख रूपये में)

वर्ष	निर्यात	आयात	व्यापार सन्तुलन
1964-65	587	556	+ 31
1965-66	559	423	+ 136
1966-67	690	418	+ 272
1967-68	695	945	- 250
1968-69	967	846	+ 121
1969-70	1126	1159	- 33
1970-71	1409	958	+ 451
1971-72	981	480	+ 501
1972-73	1223	1602	- 379

64. हिन्दुस्तान टाइम्स, 11 जून, 1972
65. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 18, अंक 7, जुलाई 1972, पृ. 181
66. वही, पृ. 193
* स्त्रोतः भारत सरकार, मन्थली स्टेटिसटिक्स ऑफ द फॉरेन ट्रेड ऑफ इण्डिया (1964-72)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि इस अवधि में कुल मिलाकर भारत-अफगान व्यापार संतुलन भारत के पक्ष में रहा। यद्यपि बीच में अफगानिस्तान से आयात में वृद्धि से व्यापार का पलड़ा उसके पक्ष में आ गया। किन्तु शीघ्र ही भारत ने स्थिति में सुधार किया। फलतः परस्पर व्यापार में वृद्धि से दोनों पक्षों को लाभ हुआ। अफगानिस्तान सरकार जो कि भारत-अफगान व्यापार में भारत के सरकारी क्षेत्र के प्रवेश के विरूद्ध थी, 1972 में आपसी व्यापार की समीक्षा में इस क्षेत्र द्वारा व्यापार करने के सुझाव को मान गई।

भारत और अफगानिस्तान के बीच व्यापार में वस्तुओं के आदान-प्रदान पर दृष्टि डालने से पता चलता है कि अफगानिस्तान से आयातित वस्तुएं लगभग परम्परागत थी, जबकि भारत द्वारा निर्यातित वस्तुओं में नवीनता थी। जैसा कि निम्न तालिका में दर्शाया गया है:-

तालिका 'ब'

भारत द्वारा अफगानिस्तान को निर्यातित वस्तुएं (1966-71)**

(कीमत मिलियन रूपयों में)

वस्तुएं	1966-67	1970-71
चाय	45.4	82.6
रूई व कपड़े से सम्बन्धित सामग्री	12.3	6.8
फैब्रिक्स, सिन्थेटिक्स फाइबर्स, इत्यादि	0.6	5.7
इत्र, दवाइयों आदि में प्रयुक्त होने वाली जड़ीबूटियाँ, बीज और पौधे आदि	1.1	2.2
मशीनरी तथा यातायात का सामान	1.8	3.9
गर्म मसाले	3.7	2.1
विशेष अनुरोध पर दिए गए पटसन पदार्थ	0.5	0.1
अन्य	11.4	38.1

** स्त्रोत: कॉमर्स (बम्बई) खंड 123, अंक 3165, वार्षिक 1971, पृ. 98

तालिका स

भारत द्वारा अफगानिस्तान से आयतित वस्तुएं (1966-71) ***

(कीमत मिलियन रूपये में)

वस्तुएं	1966-67	1970-71
ताजा फल और सब्जियाँ	46.5	91.1
बादाम	12.6	15.5
पिस्ता	10.0	5.4
रेजिन्स	22.2	27.4
अंगूर	-	26.5
एसफोटिडागम	2.9	3.1
अन्य	1.3	1.6

उपर्युक्त विशलेषण से यह बात स्पष्ट हो जाती है, कि 1964-72 के दौरान भारत एवं अफगानिस्तान में आर्थिक सम्बन्धों में सुधार एवं वृद्धि हुई। यद्यपि 1965 और 1971 में भारत-पाकिस्तान युद्धों के दौरान दोनों देशों के परस्पर व्यापार में बाधा पड़ी, क्योंकि स्थल मार्ग द्वारा पाकिस्तान ने व्यापार मार्ग बन्द कर दिए थे। फिर भी दोनों देशों के दृढ़ निश्चय ने इन बाधाओं के रहते अपने आर्थिक सम्बन्धों को अनवरत रखा। दोनों देशों के मध्य व्यापार समझौतों ने भी आपसी आर्थिक सहयोग को बढ़ावा दिया।

(ग) सांस्कृतिक सम्बन्ध

राजनैतिक एवं आर्थिक सम्बन्धों की तरह भारत एवं अफगानिस्तान के बीच सांस्कृतिक सम्बन्धों को भी समय समय पर बढ़ावा मिलता रहा है। फरवरी, 1965 में जब अफगानिस्तान के प्रधानमंत्री डा0 मोहम्मद यूसुफ भारत की राजकीय यात्रा पर पधारे तो दोनों देशों के मध्य विगत वर्ष में सम्पन्न हुए सांस्कृतिक समझौते को पुनः अनुमोदित किया गया। 16 फरवरी, 1965 को नई दिल्ली में भारत की तरफ से केन्द्रीय शिक्षा मंत्री एम.सी.छागला और अफगानिस्तान की तरफ से भारत में स्थित अफगान राजदूत एम. सबीर मुडिन ने इस समझौते पर हस्ताक्षर किए।[67] इस समझौते के अन्तर्गत दोनों देशों में शिक्षा, विज्ञान एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में परस्पर सहयोग को बढ़ावा देने के लिए अध्यापकों, वैज्ञानिकों एवं सांस्कृतिक संस्थानों के सदस्यों के

*** स्त्रोत: कॉमर्स (बम्बई), खण्ड 123, अंक 3165, वार्षिक 1971, पृ. 98

67. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 11, अंक 2, फरवरी 1965, पृ. 20

परस्पर आदान-प्रदान की व्यवस्था थी। इस समझौते के अन्तर्गत विद्यार्थियों एवं शोधकर्ताओं को विज्ञान और टेक्नोलोजी इत्यादि में उच्च अध्ययन एवं शोध के लिए दोनों देशों की सरकारों की ओर से छात्रवृत्तियाँ और आर्थिक सहायता देने का प्रविधान था। अफगान प्रधानमंत्री डा0 युसुफ की भारत यात्रा की समाप्ति पर जारी की गई सयुंक्त विज्ञप्ति में इस समझौते को भारत-अफगान सम्बन्धों को सुदृढ़ करने की दिशा में एक मुख्य कदम बताया गया।[68]

जुलाई, 1966 में भारत के उपराष्ट्रपति डा0 जाकिर हुसैन ने अपनी अफगानिस्तान की राजकीय यात्रा के प्रथम चरण में दोनों देशों के बीच सदियों से चले आ रहे साहित्य, कला, संगीत एवं अन्य सांस्कृतिक क्षेत्रों में सहयोग का उल्लेख करते हुए कहा कि उनकी झलक अभी भी पुराने सम्बन्धों को ताजा एवं जिन्दा रखे हुए है।[69] अफगान बादशाह जहीर शाह की भारत यात्रा पर उनका स्वागत करते हुए उपराष्ट्रपति डा0 जाकिर हुसैन ने 28 फरवरी, 1967 को कहा कि "खैबर पास के उस पार अफगानिस्तान भारतीय उपमहाद्वीप को जाने के लिए प्रवेश द्वार का काम करता रहा है। इसी प्रवेश द्वार से भारत में अनेक सभ्यताओं एवं संस्कृति ने प्रवेश किया"।[70] उपराष्ट्रपति ने आगे कहा कि "जब भी हम अपने दोनों देशों के प्राचीन ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्धों का उल्लेख करते हैं तो यह एक कल्पना मात्र नहीं, बल्कि एक मजबूत रिश्ता है"।[71]

अप्रैल 1972 में भारत - अफगानिस्तान संयुक्त आयोग की बैठक में दोनों देशों के मध्य सांस्कृतिक आदान-प्रदान में हुई वृद्धि पर संतोष व्यक्त किया गया।[72] यह निश्चय किया गया कि सांस्कृतिक सहयोग के अन्य क्षेत्रों जिनमें शिक्षार्थियों के आदान-प्रदान, शोधन एवं अभिलेखागार सम्बन्धी प्रशिक्षण सुविधाएँ, सांस्कृतिक दलों के आदान-प्रदान तथा बामियान में चल रहे खुदाई के काम में भी परस्पर सहयोग बढ़ाया जाए। दोनों देशों ने परस्पर पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक सुविधाओं को जुटाए जाने पर भी बल दिया।[73]

जुलाई 1972 में भारत के राष्ट्रपति श्री वी0वी0 गिरि ने अपनी अफगानिस्तान की यात्रा के दौरान काबुल के मेयर द्वारा दिए गए राजकीय भोज में दोनों देशों में शताब्दियों से चले आ रहे सांस्कृतिक सम्बन्धों एवं परम्पराओं का जिक्र किया। उन्होंने कहा कि "भारतीय संस्कृति

---

68. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 11, अंक 2, फरवरी 1965, पृ. 20
69. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 12, अंक 7, जुलाई 1966, पृ. 156
70. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 13, अंक 1, जनवरी 1967, पृ. 2
71. वही
72. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 18, अंक 4, अप्रैल 1972, पृ. 82
73. वही

का सही और उत्साहवर्धक प्रतिरूप इस देश (अफगानिस्तान) में दिखाई पड़ता है। भारतीय संगीत के श्रोता तो काफी हैं, परन्तु इसके असली कद्रदान अफगानिस्तान में हैं। जिससे प्रतीत होता है कि हमारे दोनों देशों की जनता के बीच सही तालमेल है।[74] काबुल के ऐतिहासिक स्थानों की परिचर्चा करते हुए राष्ट्रपति ने कहा कि काबुल में मुगल सम्राट बाबर का मकबरा दोनों देशों के पारस्परिक ऐतिहासिक सम्बन्धों को अधिक समीप लाने में सहायक है। काबुल के मेयर द्वारा राष्ट्रपति गिरि को उपहार स्वरूप दिए गए शेरशाह सूरी के काल के सिक्के के विषय में भारतीय राष्ट्रपति ने कहा कि बाबर की तरह शेरशाह सूरी भी भारतीय इतिहास का एक अभिन्न अंग था।[75]

12 जुलाई, 1972 भारत के तत्कालीन शिक्षा मंत्री, नुरूल हसन जो कि राष्ट्रपति वी0वी0 गिरि की अफगान यात्रा के दल में शामिल थे, ने अफगानिस्तान के शिक्षा मंत्री के साथ बातचीत के दौरान एक भारत-अफगान सांस्कृतिक आयोग स्थापित करने का सुझाव दिया, ताकि दोनों देशों के मध्य सांस्कृतिक सहयोग एवं आदान-प्रदान और अधिक बढ़ाया जा सके।[76] इस विषय में कलकत्ता से प्रकाशित हिन्दुस्तान स्टैन्डर्ड ने अपने सम्पादकीय में लिखा कि, सांस्कृतिक संगठन परस्पर सम्बन्धों को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, परन्तु इनकी गतिशीलता "ऑफिशियल फिलिस्टीनिज्म" के प्रभाव में नहीं आनी चाहिए।[77]

(घ) राजनैतिक सम्बन्ध

जनवरी 1964 में भारत-अफगान व्यापार समझौते के साथ ही दोनों देशों के मध्य राजनैतिक स्तर पर सम्बन्धों की प्रगाढ़ता की ओर अग्रसरता का आरम्भ हो चुका था, भारत के विदेश मंत्री सरदार स्वर्ण सिंह ने 27 अगस्त, 1964 को श्री लालबहादुर शास्त्री के नेतृत्व में नई सरकार के द्वारा अफगानिस्तान के साथ पारस्परिक मैत्री सम्बन्धों में प्रगाढ़ता लाने के उद्देश्य से काबुल की यात्रा की। अफगानिस्तान के प्रधानमंत्री डा0 युसुफ ने भारतीय विदेशमंत्री के स्वागत भाषण में बोलते हुए कहा कि तटस्थता की नीति का अनुसरण तथा दोनों देशों का विश्वशान्ति स्थापना का दृढ़ संकल्प, (जिसकी अभिव्यक्ति दोनों देश संयुक्त राष्ट्रसंघ एवं अन्य अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर कर चुके हैं) पारस्परिक सहयोग एवं सद्भाव का प्रतीक है।[78]

---

74. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 18, अंक 4, अप्रैल 1972, पृ. 185
75. वही
76. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 13 जुलाई, 1972
77. हिन्दुस्तान स्टैण्डर्ड, 14 जुलाई, 1972
78. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, अंक 8, खंड 10, अगस्त 1964, पृ. 181

अफगान प्रधानमंत्री ने नेहरू के निधन पर अपनी संवेदना प्रकट करते हुए कहा कि वे एक महान विभूति थे, जिनके निधन से सभी को गहरा आघात लगा है।[79] अफगान सरकार एवं अफगानिस्तान की जनता के प्रति अपना आभार व्यक्त करते हुए विदेशमंत्री स्वर्णसिंह ने कहा कि वह अफगान जनता द्वारा प्रदर्शित अपार स्नेह एवं सद्भाव को कभी नहीं भूल सकेंगे।[80] "दोनों देशों में परस्पर सम्बन्ध इस बात का अद्वितीय उदाहरण प्रस्तुत करते हैं कि अन्तर्राष्ट्रीय मसलों पर दोनों देशों के विचारों में काफी समानता है। आपके देश में विभिन्न क्षेत्रों में हो रही प्रगति को हम बड़ी सहानुभूति एवं प्रशंसा की दृष्टि से अवलोकन कर रहे हैं"।[81] दिवगंत प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू को श्रद्धाजंलि अर्पित करते हुए विदेशमंत्री स्वर्णसिंह ने कहा कि भारत उनके बताए हुए आदर्शों, विशेषकर धर्मनिरपेक्ष एवं तटस्थता की नीति का अनुसरण करता रहेगा।

अपनी अफगान यात्रा समाप्त कर स्वदेश लौटने पर विदेशमंत्री सरदार स्वर्णसिंह ने कहा कि दोनों देशों ने यह अनुभव किया कि तत्कालीन परिस्थितियों में तटस्थता की नीति एवं शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व की नीति का अनुसरण करने की अधिक आवश्यकता है।[82] विदेशमंत्री ने आगे स्पष्ट किया कि उनकी अफगान यात्रा से दोनों देशों में मैत्री एवं सद्भाव की नींव और अधिक मजबूत हुई है।[83] अपनी इस अफगान यात्रा के दौरान भारतीय विदेशमंत्री ने अफगान शासक जहीरशाह से भी भेंट की तथा अफगान शासक ने उनके स्वागत में रात्रि भोज भी दिया। प्रेक्षकों का मत था कि ऐसा आयोजन भारत-अफगान सम्बन्धों को एक विशेष महत्वपूर्ण स्थान प्रदान करता है, क्योंकि प्राय: अफगान शासक स्वागत के रूप में रात्रि भोज केवल राष्ट्राध्यक्षों को ही देते थे। अत: भारतीय विदेशमंत्री का विशेष सत्कार एक महत्वपूर्ण घटना थी।[84]

अफगान प्रधानमंत्री की भारत यात्रा

भारतीय विदेशमंत्री सरदार स्वर्णसिंह के निमन्त्रण पर अफगान प्रधानमंत्री की भारत की राजकीय यात्रा का कार्यक्रम फरवरी, 1965 में निश्चित हुआ। इस विषय पर भारतीय समाचार पत्रों में अफगान प्रधानमंत्री की आगामी यात्रा को लेकर भारत-अफगान सम्बन्धों पर विशेष टिप्पणियाँ

---

79. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, अंक 8, खंड 10, अगस्त 1964, पृ. 181
80. वही.
    -इण्डियन एक्सप्रेस (नई दिल्ली), 29 अगस्त, 1964
81. वही
82. हिन्दुस्तान टाइम्स (नई दिल्ली), 30 अगस्त, 1964
83. वही
84. वही

प्रकाशित हुई।[85] अंग्रेजी दैनिक 'हिन्दुस्तान टाइम्स' ने अपने 2 फरवरी, 1965 के अंक में प्रकाशित एक समाचार टिप्पणी में लिखा कि डा0 मोहम्मद यूसुफ की आगामी भारत यात्रा दोनों देशों में मैत्री प्रगाढ़ करने की दिशा में एक और महत्वपूर्ण कदम होगा। समाचार पत्र ने लिखा कि अफगानिस्तान बड़े उत्साह से गुर्टनिरपेक्षता की नीति का अनुसरण करने वाला राष्ट्र है, जिसके सम्बन्ध दोनों महाशक्तियों के साथ लगभग सौहार्द्रपूर्ण हैं।[86]

18 फरवरी, 1965 को अफगान प्रधानमंत्री डा0 मोहम्मद यूसुफ 10 दिन की राजकीय यात्रा पर भारत आए। दिल्ली आगमन पर अफगान प्रधानमंत्री का स्वागत करते हुए भारत के प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने कहा कि अफगान नेता का भारत में आगमन एक विशेष महत्वपूर्ण घटना है। अफगानिस्तान के गौरवपूर्ण इतिहास की चर्चा करते हुए प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने कहा कि अफगानिस्तान उपनिवेशवाद का विरोधी रहा है तथा सभी देशों की आजादी एवं सार्वभौमिकता में अफगानिस्तान की आस्था अटल हैं।[87] दक्षिण अफ्रीका सरकार द्वारा अपनाई जा रही रंगभेद की नीति की निन्दा करते हुए भारत के प्रधानमंत्री ने कहा कि आज के युग में इस तरह की नीति का अपनाया जाना सभी के लिए एक लज्जाजनक बात है।

अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं की चर्चा करते हुए प्रधानमंत्री श्री शास्त्री ने कहा कि इस संदर्भ में भारत एवं अफगानिस्तान के दृष्टिकोण लगभग समान रहे हैं। उन्होंने आगे कहा: "आप (अफगानिस्तान) भी तटस्थता तथा शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व की नीति में विश्वास रखते हैं तथा भारत की भी इस में दृढ़ आस्था है"।[88] स्वर्गीय प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू द्वारा गुटनिरपेक्ष आन्दोलन को दृढ़ करने की दिशा में किए गए योगदान की चर्चा करते हुए भारतीय प्रधानमंत्री ने कहा कि भारत द्वारा तटस्थता की नीति का अनुसरण किसी कारणवश या स्वार्थहित नहीं है" अपितु इसका अर्थ वचन एवं कर्म दोनों से पूर्ण स्वतन्त्रता है।"[89] तटस्थता की नीति का अनुसरण करने से शान्ति का क्षेत्र विस्तृत होता है तथा इससे शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व की नीति को अपनाने में बल मिलता है। अत: हमें इन नीतियों का अनुसरण करते हुए निरस्त्रीकरण एवं शान्ति के लिए कार्य करना चाहिए।[90] भारतीय प्रधानमंत्री ने भारत-चीन में तनाव की परिस्थितियों पर प्रकाश डालते हुए कहा कि उस क्षेत्र में शान्ति को बहुत खतरा है। भारत ने प्रयत्न किए हैं कि वहाँ झगड़ा समाप्त हो जाए तथा दोनों देश परस्पर शान्तिपूर्ण वार्ता द्वारा अपनी समस्याओं

85. हिन्दुस्तान टाइम्स, 2 फरवरी, 1965
86. वही
87. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 11, अंक 2, फरवरी 1965, पृ. 17
88. वही
89. वही
90. वही

को हल करें"। भारत-अफगान सम्बन्धों की चर्चा करते हुए प्रधानमंत्री श्री शास्त्री ने कहा "हम अच्छे एवं पुराने दोस्त हैं और मेरा यह विश्वास है कि आने वाले समय में यह मित्रता और अधिक प्रगाढ़ होगी"।[91]

अपने भाषण में अफगान प्रधानमंत्री डा0 मोहम्मद यूसुफ ने भारतीय प्रधानमंत्री द्वारा व्यक्त उद्गारों के प्रति आभार प्रकट करते हुए अपनी पूर्व यात्रा जो उन्होनें फरवरी, 1959 में अफगान शिष्ट मण्डल के सदस्य के रूप में की थी, का हवाला दिया। डा0 यूसुफ ने कहा कि "छह वर्ष बीत जाने के बाद भी मुझे यह कहते हुए हर्ष होता है कि हमारी सच्ची मित्रता एवं सद्भावनाओं में कोई परिवर्तन नहीं आया तथा हमारे सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्ध दिन व दिन बढ़ते ही जा रहे है।[92] अफगान प्रधानमंत्री ने विगत वर्षो में भारत एवं अफगान नेताओं द्वारा परस्पर की गई सद्भावना यात्राओं का उल्लेख करते हुए कहा कि उनकी वर्तमान भारत यात्रा उसी श्रृंखला की कड़ी है। अफगानिस्तान द्वारा एक शताब्दी तक साम्राज्यवाद का विरोध करने एवं अपनी आजादी की सुरक्षा के लिए उत्पन्न बाधाओं और चुनौतियों की ओर संकेत करते हुए उन्होंने कहा कि भारत द्वारा अपनी खोई हुई आजादी पुन: प्राप्त कर लेना अफगान जनता के लिए बड़े हर्ष की बात है। डा0 यूसुफ ने कहा कि दोनों देश राष्ट्रीय पुनर्निर्माण एवं अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के क्षेत्र में परस्पर सहयोग करते आ रहे हैं।" उन्होंने आगे कहा "हमारी (अफगानिस्तान की) सकारात्मक तटस्थता की नीति की परिचर्चा संयुक्त राष्ट्रसंघ एवं अन्य अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर समय-समय पर होती रही है"।[93] उन्होंने आगे कहा कि भारत एवं अफगानिस्तान मिलकर विश्व में शान्ति एवं सुरक्षा कायम करने में प्रयत्नरत है। "हमारी साझी नीति की सफलता इस बात से साबित होती है कि प्रत्येक वर्ष गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सदस्य राष्ट्रों की संख्या बढ़ रही है"।[94]

डा0 मोहम्मद यूसुफ ने इस बात पर बल दिया कि अफगानिस्तान, बेलग्रेड एवं काहिरा में सम्पन्न गुटनिरपेक्ष सम्मेलनों में यह बात दोहरा चुका है कि शान्ति कायम करना एवं जनकल्याण सभी की साझी जिम्मेदारी है। "अत: हम चिरस्थायी एवं न्यायपूर्ण शान्ति को कायम करने, अपनी जनता का जीवन स्तर ऊंचा करने तथा सभी राष्ट्रों में सद्भाव कायम करने के लिए परस्पर मिलजुल कर काम करें"।[95]

अन्त में अफगान प्रधानमंत्री ने भारतीय सरकार एवं जनता के प्रति आभार प्रकट करते हुए आशा व्यक्त की कि उनकी वर्तमान भारत यात्रा दोनों देशों में पहले से चले आ रहे मैत्री

---

91. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 11, अंक 2, फरवरी 1965, पृ. 18
92. वही
93. वही
94. वही
95. वही, पृ. 19

पूर्ण सम्बन्धों को और अधिक सुदृढ़ करेगी। अफगान प्रधानमंत्री के साथ अफगानिस्तान के वित्त मंत्री सैय्यद कासिम रिश्तिया भी भारत यात्रा पर आए। 20 फरवरी, 1965 को अफगान प्रधानमंत्री एवं भारतीय प्रधानमंत्री के मध्य नई दिल्ली में लगभग 90 मिनट तक वार्ता हुई। समाचार पत्रों में छपी खबरों के आधार पर ज्ञात हुआ कि दोनों नेताओं ने आणविक निरस्त्रीकरण पर बल देते हुए कहा कि इस तरह के सभी परीक्षणों पर पाबन्दी लगा देनी चाहिए।[96]

भारत यात्रा पर आए अफगान प्रधानमंत्री के स्वागत के लिए दिल्ली में लालकिले के प्रागण में नागरिक अभिनन्दन समारोह का आयोजन किया गया। इस अवसर पर भाषण देते हुए भारतीय प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने कहा कि अफगानिस्तान में प्रजातन्त्र का जो नया प्रयोग किया जा रहा है, वह सराहनीय है"। इस क्षेत्र में भारत की शुभकामनाएँ अफगान सरकार एवं उनकी जनता के साथ हैं।[97] प्रत्युत्तर में अफगान प्रधानमंत्री डा. यूसुफ ने कहा कि दोनों देशों की प्रजातन्त्र में आस्था पारस्परिक मित्रतापूर्ण सम्बन्धों को अधिक गहरा करेगी। उन्होंने आगे कहा कि यद्यपि दोनों देशों में सम्बन्ध काफी पुराने एवं मित्रतापूर्ण है तथापि उनको और अधिक मजबूत एवं प्रखर बनाने की आवश्यकता है।[98]

21 फरवरी, 1965 को अफगान प्रधानमंत्री के स्वागत के लिए बम्बई में भारत-अफगान मैत्री एवं अन्य स्थानीय संस्थाओं के तत्वावधान में एक समारोह का आयोजन किया गया। इस समारोह को सम्बोधित करते हुए अफगान प्रधानमंत्री डा0 यूसुफ ने कहा कि भारत-अफगान सम्बन्धों की नींव मजबूत होने का कारण दोनों देशों द्वारा आन्तरिक एवं विदेशी मामलों में एक जैसी नीति का अनुसरण करना है।[99]

अफगान प्रधानमंत्री डा0 मोहम्मद यूसुफ की दस दिवसीय भारत यात्रा की समाप्ति पर 28 फरवरी, 1965 को नई दिल्ली में एक संयुक्त विज्ञप्ति जारी की गई, जिसमें यह दर्शाया गया कि दोनों देशों के प्रधानमन्त्रियों ने पारस्परिक हित एवं क्षेत्रीय तथा विश्व मामलों पर आपस में विचार विमर्श किया। दोनों नेताओं में गुटनिरपेक्षता की नीति पर कायम रहने, सैनिक गुटों में शामिल न होने के अपने पूर्व दृढ़ निश्चय को दोहराया। उनका यह मत था कि ऐसी नीति ही अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति, सुरक्षा एवं सद्भाव उत्पन्न करने में सहायक सिद्ध हो सकती है।[100] दोनों नेताओं ने संयुक्त राष्ट्रसंघ को सहायता जारी रखने के सम्बन्ध में दोहराते हुए इस बात पर

---

96. द स्टेट्समैन, 21 फरवरी, 1965
97. द सण्डे स्टेण्डर्ड, 21 फरवरी, 1965
98. वही
99. द टाइम्स आफ इण्डिया (दिल्ली), 22 फरवरी, 1965
100. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 11, अंक 2, फरवरी 1965, पृ. 19

बल दिया कि विश्व संगठन के बढ़ते हुए खर्चे का भार वहन करना सभी सदस्य देशों की बराबर की जिम्मेदारी है। अल्जीरिया में होने वाले आगामी एफ्रो-एशियन सम्मेलन के विषय पर भी दोनों नेताओं ने विचार-विमर्श किया। उन्होंने आशा व्यक्त की कि इस सम्मेलन से अफ्रीकी-एशिया एकता को बल मिलेगा तथा संयुक्त राष्ट्रसंघ के उद्देश्यों को कार्यान्वित करने में सहायता मिलेगी।[101] वियतनाम में चल रहे संघर्ष के बारे में दोनों नेताओं ने चिन्ता व्यक्त की। उन्होंने काहिरा में हुए गुटनिरपेक्ष आन्दोलन द्वारा जारी की गई अपील की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए आशा व्यक्त की कि वियतनाम में आक्रामक सैनिक कार्रवाई बन्द हो जाएगी तथा जल्दी ही जेनेवा में अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन बुलाया जाएगा, ताकि वियतनाम के लोग स्वतंत्रता एवं शान्तिपूर्ण वातावरण में अपना जीवन बिता सके।[102]

दोनों नेताओं ने भारत-अफगान सम्बन्धों में संतोषजनक रूप से हुई प्रगति पर खुशी का इजहार करते हुए पारस्परिक राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में अधिक बढ़ोत्तरी करने का वचन लिया। इस अवसर पर अफगान प्रधानमंत्री ने भारतीय प्रधानमंत्री को अफगान यात्रा का निमन्त्रण भी दिया। संयुक्त विज्ञप्ति में यद्यपि 1964 में चीन द्वारा किए गए आणविक विस्फोट का कोई जिक्र नहीं था, परन्तु राजकीय प्रेक्षकों का मत था कि दोनों प्रधानमन्त्रियों द्वारा काहिरा घोषणा में आस्था रखना, चीन के परमाणु विस्फोट की निन्दा ही था।[103]

भारत-पाकिस्तान युद्ध एवं अफगानिस्तान

भारत एवं पाकिस्तान के पारस्परिक सम्बन्धों में इस काल में तनाव चला आ रहा था। अप्रैल, 1965 में कच्छ के रन क्षेत्र में दोनों देशों में तनाव बढ़ गया और दोनों की सेनाएँ आपसी मुकाबले के लिए लगभग तैयार थी। कच्छ क्षेत्र का कुछ भाग भारत एवं पाकिस्तान के मध्य विवादास्पद बना हुआ था। यह क्षेत्र अरब सागर में बम्बई के उत्तर पश्चिम में 350 मील की दूरी पर तथा कराची के दक्षिण पूर्व में 250 मील की दूरी पर स्थित है। इस क्षेत्र का उत्तरी भाग जिसे रन कहा जाता है, वर्ष के शेष भाग में लगभग रेगिस्तान जैसा रहता है, परन्तु वर्षा ऋतु में पानी से भर जाता है तथा इसमें दलदल हो जाती है।[104] भारत-पाकिस्तान विभाजन के उपरान्त भारत ने इस क्षेत्र पर अपने पूरे अधिकार का दावा किया। भारत का यह

---

101. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 11, अंक 2, फरवरी 1965, पृ. 19
102. वही, पृ. 20
103. द हिन्दू (मद्रास), 19 मार्च, 1965
104. विलियम जे0 बर्न्डज, इण्डिया पाकिस्तान एंड द ग्रेट पावर्स (न्यूयार्क: प्रेगर पब्लिशर्स 1972), पृ. 197

दावा था कि पाकिस्तान की सीमा के उत्तरी दिशा में कच्छ एवं पाकिस्तान के क्षेत्र सिंध से आगे नहीं थी। परन्तु पाकिस्तान ने भारतीय दावे को अमान्य करार देते हुए कहा कि पाकिस्तान की सीमा 24 पेरेल्ल के समीप थी। इस तरह लगभग 3500 वर्गमील का क्षेत्र विवादास्पद बना हुआ था।[105]

1965 में भारत ने कच्छ क्षेत्र को गुजरात राज्य का एक भाग बना दिया। पाकिस्तान ने इसका विरोध प्रकट किया एवं अपने अधिकार को जताने के लिए सीमा पर सैनिक जमाव भी शुरू कर दिया। भारत द्वारा भी सैन्य जमाव करने के उपरान्त दोनों देशों में सैनिक मुठभेड़ प्रारम्भ हो गई। 8 अप्रैल, 1965 को यह छुटपुट मुठभेड़ गम्भीर रूप धारण कर गई, जिससे पूर्ण युद्ध छिड़ जाने की सम्भावना प्रबल होने लगी।

इस सन्दर्भ में अफगान सरकार तथा प्रेस का रवैया तटस्थता पूर्ण ही रहा।[106] जब सितम्बर, 1965 में भारत-पाकिस्तान युद्ध छिड़ा तो अफगानिस्तान प्रेस ने दिल्ली, कराची एवं अन्य स्त्रोतों से समाचार छापे। अफगानिस्तान सरकार ने बिना किसी की तरफदारी करते हुए बिगड़ती हुई परिस्थितियों पर अपनी सरकार एवं जनता की गहरी चिन्ता व्यक्त की।[107] पाकिस्तान ने यह दावा किया कि अफगानिस्तान की ओर से पूरी सहानुभूति उपलब्ध है।[108] इस आशय की घोषणा जब पाकिस्तान के विदेशमंत्री ने महासभा में की तो अफगानिस्तान प्रतिनिधि ने इस बारे में कोई नकारात्मक टिप्पणी नहीं की। परन्तु भारत सरकार ने पाकिस्तान के इस दावे को बेबुनियाद आधारहीन बताते हुए इस बात पर बल दिया कि अफगान सरकार इस मामले में पूरी तरह तटस्थ रहीं है।[109] अफगान सरकार ने खुले तौर पर कोई घोषणा नहीं की तथा अशान्त पड़ोस में उत्पन्न स्थिति पर चिन्ता व्यक्त की। संयुक्त राष्ट्र संघ में अफगान प्रतिनिधि ने कहा "भारतीय उपमहाद्वीप में घटित हाल की घटनाओं के बारे में सबसे अधिक चिन्ता अफगानिस्तान को हुई है। इस क्षेत्र में शान्ति कायम करने तथा सुरक्षा प्रदान करने की हर नीति का अफगानिस्तान समर्थन करेगा"।[110]

यद्यपि सुरक्षा परिषद् के आह्वान पर भारत एवं पाकिस्तान में युद्ध विराम हो गया था तथापि स्थिति विस्फोटक रूप धारण किए हुए थी। सोवियत संघ के प्रयासों के फलस्वरूप दोनों देशों में 10 जनवरी, 1966 को भारत-पाकिस्तान में समझौता हो गया, जिसे ताशकन्द समझौता के नाम से जाना जाता है। इस समझौते को सम्पन्न करवाने में सोवियत संघ ने महत्वपूर्ण भूमिका

---

105. विलियम जे0 बार्न्डस, देखिए क्र. 3, पृ. 197
106. काबुल टाइम्स, 24 अप्रैल-1 मई, 1965
107. विदेशमंत्री स्वर्णसिंह का 24 नवम्बर, 1965 को दिया गया वक्तव्य, राज्य सभा डिबेट्स, खंड 54, भाग 2, 2 नवम्बर-11 दिसम्बर, 1965, कॉलम 2567-68
108. यू0 एन0 ऑफिसियल रिकार्ड्स ऑफ जनरल एसेम्बली (बाद़ में प्रयोग हेतु जी0ए0ओ0आर0), बीसवाँ सत्र, 1364 मीटिंग, 15 अक्तूबर 1965, पृ. 14-15
109. राज्यसभा डिबेट्स, खंड 54, भाग 2, 2 नवम्बर-11 दिसम्क्बर, 1965, कालम 2567-68
110. जी0ए0ओ0आर0, बीसवाँ सत्र, 1362 मीटिंग, 14 अक्तूबर, 1965, पृ. 4-5

निभाई। ताशकन्द समझौते के अन्तर्गत दोनों देश परस्पर युद्ध की स्थिति को समाप्त करने एवं अपनी सेनाओं की युद्ध पूर्व स्थानों पर वापसी के लिए राजी हो गए। समझौते के अनुसार भारत और पाकिस्तान 25 फरवरी, 1966 तक अपनी सेनाओं को 5 अगस्त, 1965 से पूर्व स्थिति तक ले जाने तथा युद्ध विराम की सभी शर्तो को मानने के लिए बाध्य होंगे।[111]

ताशकन्द समझौता सम्पन्न होने से कुछ दिन पूर्व अफगानिस्तान के प्रभावशाली दैनिक काबुल टाइम्स ने अपनी सम्पादकीय टिप्पणी में आशा प्रकट की कि इससे भारत एवं पाकिस्तान के पारस्परिक विवादों को शान्तिपूर्ण हल करने के लिए सुअवसर मिलेगा।[112] ताशकन्द का क्षेत्र जो सोवियत मध्य एशिया में है, अफगानिस्तान के काफी नजदीक है। ताशकन्द समझौता सम्पन्न होने के बाद तत्कालीन भारतीय प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री अपनी वापसी पर अफगानिस्तान की राजधानी काबुल में रूकने वाले थे। अफगान एवं भारतीय समाचार पत्रों ने 10 जनवरी, 1966 को प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री की अफगानिस्तान यात्रा सम्बन्धी कार्यक्रम के समाचार छापे। समाचारों से ऐसा प्रतीत होता था कि अफगान शासक वर्ग भारतीय प्रधानमंत्री के साथ बातचीत करके इस क्षेत्र में शान्ति एवं सद्भावना को कायम करने के लिए उठाए जाने वाले कदमों में उत्सुक था।[113] यह उत्सुकता स्वाभाविक थी, क्योंकि पाकिस्तान के राष्ट्रपति अय्यूबखान पहले ही अफगान नेताओं को अपने रवैये से अवगत करवा चुके थे। परन्तु प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री की ताशकन्द में 10 जनवरी, 1966 को आकस्मिक मृत्यु के कारण यह यात्रा अधूरी ही रह गई।

अफगानिस्तान द्वारा 1965 के भारत-पाकिस्तान युद्ध में तटस्थ रहने के दो मुख्य कारण थे। प्रथम, तटस्थता की नीति का अनुसरण करना अफगानिस्तान की परम्परागत नीति थी जिसे वह छोड़ नहीं सकता था। दूसरे, अफगानिस्तान भारत के साथ व्यापार के लिए काफी सीमा तक पाकिस्तान पर निर्भर था। इस युद्ध काल के दौरान अफगानिस्तान को व्यापार बन्द होने के कारण काफी क्षति उठानी पड़ी। इसलिए अफगानिस्तान के लिए भारत-पाकिस्तान के मित्रतापूर्ण सम्बन्धों का कायम रहना ज्यादा महत्वपूर्ण था।

उपराष्ट्रपति डा0 जाकिर हुसैन की अफगानिस्तान यात्रा

भारत के उपराष्ट्रपति डा. जाकिर हुसैन ने (10 से 15 जुलाई, 1966) अफगानिस्तान

---

111. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, जनवरी 1966, पृ. 9,
 -पाकिस्तान होराइजन, खंड 19, अंक 1, 1966, पृ. 97-100
112. काबुल टाइम्स, 11 जनवरी, 1966
113. हिन्दुस्तान टाइम्स, 11 जनवरी, 1966. काबुल टाइम्स, 11 जनवरी, 1966

की राजकीय यात्रा की। काबुल में अफगानिस्तान के प्रधानमंत्री मोहम्मद हाशिम मैबंदवाल और उनके सहयोगियों ने डा. हुसैन का भव्य स्वागत किया। 10 जुलाई, 1966 को अफगान प्रधानमंत्री ने भारत के उपराष्ट्रपति के सम्मान में रात्रि भोज दिया। अपने भाषण में उपराष्ट्रपति ने कहा कि उनकी अफगान यात्रा एक तीर्थयात्रा के रूप में हैं। जिसमें एक विद्यार्थी के रूप में वे भूतकाल की पुनः खोज कर रहे हैं तथा वे एक भाई की तरफ से दूसरे भाई के लिए मित्रता का सन्देश लेकर आए हैं।[114] अफगानिस्तान के गौरवपूर्ण इतिहास का उल्लेख करते हुए डा0 हुसैन ने कहा कि अफगानिस्तान के शौर्यपूर्ण लोग भारतीयों के लिए प्रेरणा के स्त्रोत रहे है तथा उनका उदाहरण अनुकरणीय है। अफगानिस्तान में रह रहे भारतीय समुदाय की चर्चा करते हुए उपराष्ट्रपति ने कहा कि यह गर्व की बात है कि भारतीयों को अफगान समाज में भेदभाव रहित सम्मान का दर्जा प्राप्त है। इसी तरह भारत में रह रहे अफगानवासी भी समानता एवं एकरूपता का जीवन यापन कर रहे हैं। डा0 जाकिर हुसैन ने आगे कहा कि भारत एवं अफगानिस्तान के बीच कोई समस्या नहीं है, बल्कि आपसी हितों को पूरा करने के लिए पारस्परिक सहयोग एवं समान विचारों के आदान-प्रदान के लिए एक बड़ा अवसर हैं।[115] उपराष्ट्रपति ने भारत सरकार एवं जनता की ओर से दोनों देशों में अधिक सहयोग का आश्वासन दोहराया।

भारतीय उपराष्ट्रपति डा0 हुसैन की अफगान यात्रा पर टिप्पणी करते हुए भारत के समाचार पत्र 'द हिन्दू' ने लिखा कि यह सद्भावना यात्रा भारत-अफगानिस्तान की ऐतिहासिक परम्परागत मित्रता को अधिक सुदृढ़ करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।[116] उपराष्ट्रपति ने अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर भारत और अफगानिस्तान के समान दृष्टिकोणों की चर्चा की। उनका कहना था कि भारत का यह दृढ़ मत है कि शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के सिद्धान्त आज के युग की समस्याओं को हल करने में सबसे अधिक सहायक सिद्ध हो सकते हैं। उनके विचार में राष्ट्रों में शान्ति व सक्रिय सहयोग के क्षेत्र को विशाल बनाने हेतु गुटनिरपेक्ष आन्दोलन को मजबूत करना अनिवार्य हैं।[117] अफगान प्रधानमंत्री द्वारा अपने भाषण में इस क्षेत्र के लोगों के लिए शान्ति एवं सुरक्षा की आवश्यकता तथा इस सदंर्भ में ताशकन्द समझौते की वैधता का उल्लेख करने पर उपराष्ट्रपति ने कहा "हम ताशकन्द समझौते का पूर्ण रूप से पालन करेगें। हमारा यह दृढ मत है कि शान्तिपूर्ण एवं अच्छे पडोसियों जैसे वातावरण में ही भारत एवं पाकिस्तान अपनी समस्याओं का समाधान

---

114. द फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 12, अंक 7, जुलाई 1966 पृ. 159
115. वही
116. द हिन्दू (मद्रास), 13 जुलाई, 1966
117. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड्स, खण्ड 12, अंक 7 जुलाई, 1966, पृ. 160

कर सकते हैं।"[118]

भारत और अफगानिस्तान में परस्पर परम्परागत एवं प्राचीन सम्बन्धों का उल्लेख करते हुए उपराष्ट्रपति ने कहा कि यदि उनकी वर्तमान यात्रा पारस्परिक सम्बन्धों को नई दिशा दे सके तो वे अपनी यात्रा को सफल मानेगें। दोनों देशों द्वारा समान समस्याओं का सामना करते रहने का जिक्र करते हुए डा0 हुसैन ने कहा कि भविष्य में दोनों देश अधिक सहयोग की कामना करते हैं।[119] अपनी यात्रा के अन्तिम चरण में उपराष्ट्रपति ने अफगान प्रधानमंत्री के साथ 14 जुलाई, 1966 को कई घंटे तक विचार-विमर्श किया। दोनों नेताओं ने वियतनाम में युद्ध बन्द करने एवं समस्या का शान्तिपूर्ण समाधान करने पर बल दिया।[120]

अफगान नेताओं के साथ अपनी बातचीत के बारे में उपराष्ट्रपति ने कहा कि यह बातचीत संतोषजनक एवं सौहार्द्रपूर्ण रही। ऐसी भावना व्यक्त करते हुए अफगान प्रधानमंत्री ने कहा कि भारतीय उपराष्ट्रपति के साथ उनका विचार-विमर्श काफी लाभदायक एवं संतोषजनक रहा।[121] 14 जुलाई, 1966 को काबुल विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों को सम्बोधित करते हुए डा0 जाकिर हुसैन ने कहा कि भारत में अफगान समाज एवं जनता के प्रति सौहार्द्र एवं अपार स्नेह है।" हमें मालूम है कि आपके सम्मुख समस्याओं का जमघट है, जिनका समाधान करना आसान काम नहीं है, क्योंकि हम भी भारत में उन्हीं समस्याओं से जूझ रहे हैं।[122] भारत के उपराष्ट्रपति का अफगानिस्तान में भव्य स्वागत होते देखकर काबुल में रह रहे एक विदेशी ने टिप्पणी करते हुए कहा कि उसने काबुल में अपने प्रवास काल में किसी विदेशी नेता को अफगानिस्तान द्वारा इतना सम्मान देते हुए नहीं देखा जितना कि भारत के उपराष्ट्रपति को उनकी यात्रा के दौरान मिला।[123]

15 जुलाई, 1966 को उपराष्ट्रपति डा0 जाकिर हुसैन की यात्रा की समाप्ति पर काबुल और नई दिल्ली से एक संयुक्त प्रेस-विज्ञप्ति जारी की गई। जिसमें पारस्परिक सम्बन्धों की वर्तमान गति पर संतोष व्यक्त करते हुए दोनों देशों के नेताओं ने इन सम्बन्धों को और अधिक गतिशील एवं प्रगाढ़ बनाने पर बल दिया।[124] संयुक्त विज्ञप्ति में दोनों देशों ने असंलग्नता की नीति, शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व तथा समान अधिकारों पर आधारित नीतियों का अनुसरण करते रहने का दृढ़ संकल्प दोहराया। उन्होंने गुटनिरपेक्ष देशों द्वारा शान्ति को सुदृढ़ करने, सभी राष्ट्रों की स्वतंत्रता को मजबूत

---

118. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड्स, खण्ड 12, अंक 7 जुलाई, 1966, पृ. 160
119. वही
120. हिन्दुस्तान टाइम्स, 15 जुलाई, 1966
121. द स्टेट्समैन (नई दिल्ली), 15 जुलाई, 1966
122. हिन्दुस्तान टाइम्स, 15 जुलाई, 1966
123. वही
124. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 10 अंक 7 जुलाई, 1966, पृ. 161

करने एवं अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देने की नीतियों का, (जिनका उल्लेख बेलग्रेड एवं काहिरा घोषणाओं में हो चुका था) अनुसरण करते रहने पर बल दिया। दोनों ओर के नेताओं ने समकालीन अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं, विशेषकर वियतनाम में चल रहे युद्ध की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए इन समस्याओं का शान्तिपूर्ण समाधान करने पर बल दिया।[125]

विश्व में बढ़ती हुई शस्त्र होड़ पर चिन्ता व्यक्त करते हुए दोनों देशों ने निरस्त्रीकरण की आवश्यकता पर जोर देते हुए संयुक्त राष्ट्रसंघ की महासभा द्वारा अपने बीसवें सत्र में 1967 से पहले विश्व निरस्त्रीकरण सम्मेलन बुलवाने के प्रस्ताव का स्वागत किया। दोनों देशों के नेताओं ने यह मत व्यक्त किया कि ताशकन्द समझौता शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व पर आधारित है तथा यह समस्याओं के निजी विश्वास एवं सहयोग पर आधारित समाधान की ओर इंगित करता है। भारतीय उपराष्ट्रपति ने अफगान प्रधानमंत्री को आश्वासन दिया कि भारत ताशकन्द समझौते को लागू करने के लिए वचनबद्ध हैं। संयुक्त विज्ञप्ति में यह कहा गया कि उपराष्ट्रपति डा0 जाकिर हुसैन की अफगानिस्तान यात्रा से दोनों देशों में राजनैतिक सम्बन्ध और अधिक मजबूत हुए।[126] अपनी अफगानिस्तान यात्रा की समाप्ति के समय उपराष्ट्रपति डा0 जाकिर हुसैन ने अफगान शासक जहीरशाह को भारत के राष्ट्रपति की ओर से भारत-यात्रा का निमंत्रण दिया, जो अफगान शासक ने स्वीकार कर लिया।[127]

अंग्रेजी दैनिक 'हिन्दुस्तान टाइम्स' ने भारत के उपराष्ट्रपति की हाल की अफगानिस्तान यात्रा पर अपने सम्पादकीय में टिप्पणी करते हुए लिखा कि आकार एवं स्त्रोतों में असमान देशों के बीच प्रगाढ़ मित्रता का पनपना अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में एक अनुकरणीय उदाहरण है।[128]

स्वदेश लौटने पर डा0 जाकिर हुसैन ने अपनी अफगान यात्रा पर विचार व्यक्त करते हुए कहा कि अफगान सरकार एवं जनता द्वारा भारत के प्रति प्रदर्शित स्नेह से वे बहुत ही प्रभावित हुए हैं।[129] भारतीय विदेशमंत्री सरदार स्वर्ण सिंह ने 8 अगस्त, 1966 को राज्यसभा में विदेश नीति पर चर्चा में उपराष्ट्रपति की अफगान-यात्रा का उल्लेख करते हुए कहा "अफगानिस्तान के साथ हमारे सम्बन्ध प्रगाढ़ एवं मित्रतापूर्ण हैं, जिसका हमें गर्व है।"[130]

---

125. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 10 अंक 7 जुलाई, 1966, पृ. 161
126. वही
127. द हिन्दू, 15 जुलाई, 1966
128. यूजफुल विजिट (सम्पादकीय), हिन्दुस्तान टाइम्स, 16 जुलाई, 1966
129. द स्टट्सेमैन, 16 जुलाई, 1966
130. वही

अफगान शासक जहीरशाह की भारत यात्रा

भारत के राष्ट्रपति के निमंत्रण पर अफगानिस्तान के शासक मोहम्मद जहीरशाह अपनी पत्नी एवं उच्चस्तरीय शिष्ट मण्डल के साथ भारत की 8 दिवसीय राजकीय यात्रा पर 28 जनवरी, 1967 को नई दिल्ली पधारे। हवाई अड्डे पर उनका स्वागत करते हुए भारत के उपराष्ट्रपति डा0 जाकिर हुसैन ने कहा कि अफगानिस्तान के महामहिम की विगत भारत यात्रा की याद अभी भी भारतवासियों के दिलों में ताजा है।[131] अपनी हाल की अफगानिस्तान यात्रा का उल्लेख करते हुए डा0 जाकिर हुसैन ने कहा कि अफगान महामहिम की भारत यात्रा दोनों देशों के मध्य मित्रता सम्बन्धों को अधिक मजबूत एवं सुदृढ़ बनाने में काफी सहायक सिद्ध होगी। अपने जवाबी भाषण में महामहिम जहीरशाह ने भारत की सरकार एवं जनता का आभार प्रकट करते हुए कहा कि उनकी वर्तमान भारत यात्रा दोनों देशों में पहले से ही मित्रतापूर्ण परस्पर सम्बन्धों में एक नई गतिशीलता का समावेश करने में सहायक सिद्ध होगी।

भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति डा0 राधाकृष्णन अस्वस्थ्य होने के कारण अफगानिस्तान के बादशाह जहीरशाह का सम्मान करने में स्वयं असमर्थ रहे। अतः उनके स्थान पर उपराष्ट्रपति डा0 जाकिर हुसैन ने अफगान महामहिम का स्वागत किया। 28 जनवरी, 1967 को अफगान बादशाह के स्वागत में उपराष्ट्रपति ने राष्ट्रपति भवन नई दिल्ली में रात्रि भोज का आयोजन किया। उनके स्वागत भाषण में डा0 जाकिर हुसैन ने भारत-अफगानिस्तान के परम्परागत एवं ऐतिहासिक सम्बन्धों का उल्लेख करते हुए कहा कि इतिहास की छाप दोनों देशों के विभिन्न पहलूओं पर दृष्टिगत होती है।[132]

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के विषय में डा. जाकिर हुसैन ने कहा कि दोनों ही देशों की नीतियों एवं सिद्धान्तों में समानता के कारण उनमें परस्पर मतभेद नहीं हैं। विदेशी मामलों में दोनों देश एक दूसरे के समीप हैं। बाण्डुंग सम्मेलन, बेलग्रेड एवं काहिरा में हुए गुटनिरपेक्ष सम्मेलनों का उल्लेख करते हुए भारतीय उपराष्ट्रपति ने कहा कि दोनों देशों के प्रतिनिधियों ने विश्वशान्ति को बढ़ावा देने, परस्पर सहयोग एवं सद्भाव के लिए प्रयत्न किए हैं।[133] जिससे उनके परस्पर सम्बन्ध मजबूत हुए है। गुटनिरपेक्षता की नीति में अडिग आस्था का जिक्र करते हुए डा0 जाकिर हुसैन ने कहा कि दोनों देश अन्य देशों के साथ बिना किसी राजनैतिक भेदभाव के मित्रतापूर्ण एवं सकारात्मक सम्बन्ध कायम करने के इच्छुक हैं। उपराष्ट्रपति ने आगे कहा कि दोनों देश इस

---

131. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 13 अंक. 1, जुलाई, 1967, पृ. 1
132. वही, पृ. 2
133. वही

बात में दृढ़ विश्वास रखते है कि सभी राष्ट्रों को राष्ट्रसंघ की सदस्यता प्रदान की जानी चाहिए, ताकि यह संस्था अपने कार्यों एवं उद्देश्यों को सुचारू रूप से कार्यान्वित कर सके। उन्होंने कहा कि दोनों देश इस विषय पर एक मत हैं कि वियतनाम के लोग बिना किसी बाहरी हस्तक्षेप के अपने भविष्य का निर्णय करें।[134]

अपने जवाबी भाषण में महामहिम जहीरशाह ने अफगान सरकार एवं जनता की ओर से आभार व्यक्त करते हुए 1957 की भारत यात्रा के संस्मरणों को दोहराया।[135] भारतीय नेताओं की अफगान यात्रा को दोनों देशों की प्रगाढ़ मित्रता का प्रतीक बताते हुए महामहिम जहीरशाह ने कहा कि अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में दोनों देशों की कारगर नीतियों से परस्पर मित्रता तथा विश्वशान्ति को बढ़ावा मिला है। अफगान शासक ने अफगानिस्तान की परम्परागत गुटनिरपेक्षता की नीति का हवाला देते हुए कहा कि हाल के वर्षो में विश्व में घटित घटनाओं ने यह साबित कर दिया कि गुटनिरपेक्षता की नीति का अनुसरण करके ही सभी राष्ट्र अपनी समस्याओं का समाधान कर सकते हैं तथा शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व एवं विश्वशान्ति को बढ़ावा दे सकते हैं।[136] उन्होंने आगे कहा "अफगानिस्तान की जनता, जिसने अपना ध्यान एवं शक्ति राष्ट्रीय विकास एवं प्रगति की ओर लगा रखी है, भारतीय जनता के अथक प्रयत्नों को प्रशंसा की दृष्टि से देखती है तथा उनकी सफलता के लिए प्रार्थना करती है।[137] विकासशील देशों द्वारा अपने प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करने सम्बन्धी विभिन्न समस्याओं का जिक्र करते हुए महामहिम जहीरशाह ने आशा व्यक्त की कि विकासशील देश परस्पर विचार विनिमय द्वारा एक जुट होकर आगामी द्वितीय अनटॉड सम्मेलन में अपनी समस्याओं का क्रियात्मक हल ढूढ़ने में सफल हो जाएंगें।"[138]

राष्ट्रसंघ के विषय में अपने उद्गार व्यक्त करते हुए अफगान शासक ने कहा "अफगानिस्तान का विश्वास है कि राष्ट्रसंघ छोटे या बड़े सभी राष्ट्रों के लिए एक साझा मंच है जहाँ वे पारस्परिक सहयोग से शान्ति की रक्षा एवं सभी देशों में एकता कायम करने हेतु सुचारू रूप से कार्य कर सकते है"।[139] उन्होंने वियतनाम समस्या के प्रति आशा व्यक्त की कि इस समस्या से सम्बन्धित देश परस्पर सहयोग से इसके शान्तिपूर्ण समाधान के लिए ठोस कदम उठायेगें।"[140]

---

134. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड खण्ड 13 अंक 7, जुलाई, 1967, पृ. 2
135. वही
136. वही
137. वही, पृ. 4
138. वही
139. वही
140. वही

29 जनवरी, 1967 को उपराष्ट्रपति डा0 हुसैन के साथ वार्ता के दूसरे चरण में अफगान शासक ने भारतीय नेताओं से हुई बातचीत के प्रति सन्तोष व्यक्त करते हुए कहा कि "वर्तमान विश्व स्थिति पर हमारे विचारों के आदान-प्रदान ने हमारा यह मत और अधिक दृढ़ कर दिया है कि अन्तर्राष्ट्रीय तनाव को कम करने तथा विश्वशान्ति को अधिक मजबूत करने के लिए सभी देशों को एक जुट होकर काम करना अनिवार्य है"।[141] उन्होंने पारस्परिक सम्बन्धों को और अधिक मजबूत करने पर बल दिया। अपने जवाबी भाषण में उपराष्ट्रपति डा0 जाकिर हुसैन ने अफगान शासक द्वारा व्यक्त उद्‌गारों के प्रति आभार व्यक्त करते हुए कहा कि महामहिम की भारत यात्रा ने दोनों देशों के नेताओं में "स्वतंत्र एवं निर्भीक" विचारों का आदान-प्रदान करने का अवसर प्रदान किया।[142] उपराष्ट्रपति ने कहा कि वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति का जायजा लेते हुए विभिन्न विषयों पर दोनों देशों के समान दृष्टिकोण एवं परस्पर सहयोग प्रगाढ़ मित्रता के प्रतीक हैं।

29 जनवरी, 1967 को अफगान शासनाध्यक्ष मोहम्मद जहीरशाह ने भारतीय प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी से भेंट की तथा उन्हें अफगानिस्तान यात्रा का निमंत्रण दिया। दो घंटों की बातचीत के दौरान दोनों नेताओं ने विभिन्न पारस्परिक क्षेत्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर विचार-विमर्श किया। ताशकन्द समझौते में आस्था व्यक्त करते हुए दोनों नेताओं ने आशा व्यक्त की कि इससे क्षेत्रीय शान्ति एवं सुरक्षा कायम करने में काफी सहायता मिलेगी। बातचीत के दौरान पाकिस्तान व चीन के साथ सम्बन्धों एवं वियतनाम समस्या पर भी चर्चा हुई।[143]

महामहिम जहीरशाह की भारत यात्रा की समाप्ति पर 6 फरवरी, 1967 को नई दिल्ली में जारी की गई संयुक्त विज्ञप्ति में दोनों देशों ने विश्वशान्ति हेतु गुटनिरपेक्ष नीति की वैधता को स्वीकारने तथा उपनिवेशवाद एवं नियो-उपनिवेशवाद के सभी रूपों व प्रयत्नों में विरोध करते रहने का अपना दृढ़ निश्चय दोहराया।[144] वियतनाम समस्या पर अपनी गहरी चिन्ता व्यक्त करते हुए दोनों नेताओं ने इसे विश्व शान्ति और सुरक्षा को खतरा बताते हुए इस समस्या का शान्तिपूर्ण बातचीत द्वारा हल करने पर बल दिया।[145]

बढ़ती हुई शस्त्र होड़ पर गहरी चिन्ता व्यक्त करते हुए संयुक्त विज्ञप्ति में इससे उत्पन्न विश्व शान्ति के खतरे की ओर सभी राष्ट्रों का ध्यान आकृष्ट करते हुए सम्पूर्ण एवं साधारण

---

141. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 13 अंक. 7, जुलाई, 1967, पृ. 4
142. वही, पृ. 5
143. हिन्दुस्तान टाइम्स, 30 जनवरी, 1967
144. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 13, अंक 2, फरवरी 1967, पृ. 9
145. वही

निरस्त्रीकरण का ध्येय यथाशीघ्र प्राप्त करने पर बल दिया। विज्ञप्ति में भारत ने अफगानिस्तान को अपना आश्वासन दिया कि ताशकन्द समझौते को पूरी तरह लागू करके भारत पड़ोसियों के साथ अच्छे सम्बन्ध करने का इच्छुक है। दोनों देशों के नेताओं ने क्षेत्रीय आर्थिक सहयोग की भावना को बढ़ावा देने पर भी बल दिया।[146]

अपनी भारत यात्रा की समाप्ति पर अफगानिस्तान के शासक ज़हीरशाह ने भारत के राष्ट्रपति डा0 राधा कृष्णन को 7 फरवरी, 1967 को भेजे गए एक संदेश में उनके स्वास्थ्य की कामना करते हुए आशा व्यक्त की कि उनकी (महामहिम की) भारत यात्रा दोनों देशों के परस्पर सम्बन्धों को और अधिक प्रगाढ़ एवं सौहार्द्रपूर्ण बनाने में सहायक सिद्ध होगी।[147] उन्होंने भारतीय जनता की खुशहाली की भी कामना की।

अफगान शासक की भारत यात्रा के दौरान परस्पर मधुर सम्बन्धों पर टिप्पणी करते हुए 'द हिन्दू' ने लिखा "भारत की प्रगाढ़ मित्रता अफगानिस्तान के लिए लाभप्रद रही है" [148] इसी सम्बन्ध में इण्डियन एक्सप्रेस ने अपने संपादकीय में लिखा "अफगान शासक ज़हीर शाह की हाल की भारत यात्रा से दोनों देशों के परम्परागत सम्बन्धों में अत्यधिक मजबूती आई है"।[149]

प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी की अफगानिस्तान यात्रा

जून, 1969 के प्रथम सप्ताह में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी की अफगानिस्तान की राजकीय यात्रा का कार्यक्रम निर्धारित किया गया। इस राजकीय यात्रा के शुरू होने से कुछ दिन पूर्व ही भारतीय समाचार पत्रों में भारत-अफगान सम्बन्धों के विभिन्न पहलूओं पर चर्चा आरम्भ हो गई। अंग्रेजी दैनिक टाइम्स ऑफ इण्डिया ने लिखा कि 10 वर्षों बाद भारत की प्रधानमंत्री अफगानिस्तान जा रहीं हैं। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में इस यात्रा को इसलिए महत्वपूर्ण माना जा रहा है कि कुछ ही मास पूर्व सोवियत प्रधानमंत्री कोसीगिन तथा अमरीकी विदेशमंत्री विलियम रोजर्स भी अफगानिस्तान की यात्रा कर चुके हैं।[150] समाचार पत्र ने प्रधानमन्त्री की काबुल यात्रा पर टिप्पणी करते हुए लिखा कि यद्यपि काबुल और नई दिल्ली के मध्य सम्बन्ध मधुर हैं विशेषकर 1967 के बाद। परन्तु कुछ मुद्दों पर जो कि क्षेत्रीय सुरक्षा के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं, दोनों देशों में कुछ "मतभेद" जान पड़ता है। ताशकन्द समझौते

146. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 13, अंक 2, फरवरी 1967, पृ. 10
147. वही
148. द हिन्दू, 8 फरवरी, 1967
149. इण्डियन एक्सप्रेस, 9 फरवरी, 1967
150. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 2 जून, 1969

के उपरान्त सोवियत संघ का इस क्षेत्र में मान ज्यादा बढ़ना तथा चीन का क्षेत्र में बढ़ता प्रभाव विशेषकर रूस-चीन की प्रतिस्पर्धा के संदर्भ में आदि कुछ ऐसे मामले हैं, जो भारत और अफगानिस्तान के नेताओं का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर सकते हैं।[151] नेशनल हेराल्ड ने अपना मत व्यक्त करते हुए लिखा कि श्रीमती इन्दिरा गांधी की आगामी अफगानिस्तान यात्रा भारत के प्रधानमंत्री के रूप में पहली यात्रा होगी।[152] समाचार पत्र ने आगे लिखा कि दोनों देशों के मध्य गहरे, नजदीकी तथा मित्रतापूर्ण सम्बन्ध हैं तथा इनमें अधिक प्रगाढ़ता का होना अवश्य-म्भावी है।[153]

निर्धारित कार्यक्रमानुसार भारतीय प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी 5 जून, 1969 को अफगानिस्तान की राजधानी काबुल पहुँची। अफगानिस्तान के प्रधानमंत्री नूर अहमद एतमादी ने श्रीमती गांधी का स्वागत करते हुए आशा व्यक्त की कि उनकी अफगानिस्तान यात्रा भारत-अफगान सम्बन्धों को अधिक मजबूत करने में सहायक सिद्ध होगी।[154] उसी दिन भारतीय अतिथि के सम्मान में अफगान प्रधानमंत्री ने राजकीय भोज का आयोजन किया। वहाँ अपने भाषण में श्रीमती इन्दिरा गांधी ने अपनी 10 वर्ष पूर्व अफगान यात्रा का उल्लेख करते हुए कहा कि स्वर्गीय प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू को अफगान जनता से विशेष लगाव था।[155] प्रधानमंत्री ने कहा "दोनों देशों ने सुनियोजित तटस्थता का मार्ग अपनाया है। हमारी तटस्थता का अर्थ विश्व की समस्याओं के प्रति उपेक्षा का भाव दिखाना नहीं है"। इसके विपरीत हम शान्ति और प्रगति के लिए प्रयत्नशील हैं और इसमें हम सैनिक गुटबन्दियों को बहुत बड़ा खतरा समझते हैं। हमारे राष्ट्रीय हितों का यह तकाजा है कि सभी के साथ मित्रता और सहयोग करें।[156] महाशक्तियों में परस्पर तनाव शैथिल्य की भावना का स्वागत करते हुए श्रीमती गांधी ने कहा कि भारत और अफगानिस्तान ने इस प्रवृति को प्रोत्साहन दिया है तथापि दोनों देशों को समकालीन परिस्थितियों में खतरों के प्रति सावधान रहना अनिवार्य है।

7 जून, 1969 को भारतीय प्रधानमंत्री एवं अफगान प्रधानमंत्री ने काबुल में पारस्परिक क्षेत्रीय एवं विश्व समस्याओं पर आपस में विचार विमर्श किया। समाचारों से ऐसा प्रतीत होता था कि दोनों नेताओं नें अपने क्षेत्र में सोवियत संघ की बढ़ती हुई भूमिका पर भी विचार किया।[157]

151. टाइम्स आफ इण्डिया, 2 जून, 1969
152. इससे पूर्व 1959 में श्रीमती इन्दिरा गाँधी तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहल लाल नेहरू के साथ अफगानिस्तान गई।
153. नेशनल हेराल्ड (नई दिल्ली), 3 जून, 1969
154. काबुल टाइम्स, 6 जून, 1969
155. भारत सरकार, डिबेट्स सिलेक्टिड सीरिज ऑफ इन्दिरा गाँधी, जनवरी 1966 -अगस्त 1969 (नई दिल्ली), 1971, पृ. 389
156. वही, पृ. 390
157. हिन्दुस्तान टाइम्स, 8 जून, 1969

प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने पाकिस्तान-चीन की धुरी के विषय में भारत के विचारों से अफगान नेता को अवगत कराया।

9 जून, 1969 को भारतीय प्रधानमंत्री ने अफगान संसद के दोनों सदनों को सम्बोधित किया। यह पहला अवसर था कि जब किसी भारतीय नेता ने अफगान संसद को सम्बोधित किया था।[158] अफगान प्रधानमंत्री नूर अहमद एतमादी ने अफगान सांसदों के सम्मुख श्रीमती इन्दिरा गांधी का परिचय देते हुए कहा कि भारत-अफगान सम्बन्ध अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में एक बेमिसाल उदाहरण कायम कर चुके हैं।[159] श्रीमती इन्दिरा गांधी ने अपने भाषण में संक्षिप्त रूप से अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं का उल्लेख करते हुए विश्व शान्ति को बढ़ावा देने पर बल दिया, ताकि आर्थिक विकास के कार्यों को बिना किसी बाधा के पूरा किया जा सके। वियतनाम, फिलिस्तीन तथा अफ्रीका में रंगभेद नीति के विरूद्ध संघर्षरत लोगों के साथ भारतीय जनता की सहानुभूति का उल्लेख करते हुए श्रीमती इन्दिरा गांधी ने कहा "इन समस्याओं पर भारत का रवैया स्थिर एवं दृढ़ रहा है तथा भारत और अफगान दृष्टिकोण में पूरी एकरूपता है।"[160]

प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी की अफगानिस्तान यात्रा दोनों देशों में बढ़ती हुई मित्रता तथा सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्धों को अधिक मजबूत करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर था। दोनों देशों के नेताओं का परस्पर मेलजोल तथा आपसी विचार-विमर्श की जो परम्परा चली आ रही थी, उसमें यह एक महत्वूपर्ण कड़ी थी।

19 सितम्बर, 1970 को भारत में नियुक्त अफगानिस्तान के नये राजदूत डा0 अब्दुल हकीम तबीवी ने अपने परिचय पत्र को भारत के राष्ट्रपति श्री वी0वी0 गिरि को प्रस्तुत करते हुए आशा प्रकट की उनके कार्य काल में भारत-अफगान सम्बन्धों में और अधिक मजबूती आएगी। गुटनिरपेक्षता के सिद्धान्तों में आस्था, शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व तथा संयुक्त राष्ट्रसंघ को सफल एवं मजबूत बनाने की कामना आदि भारत-अफगान मैत्री के आधार स्तम्भ हैं।[161]

भारत-पाक युद्ध, बंगला देश की स्थापना व अफगानिस्तान

दिसम्बर 1970 में पाकिस्तान के इतिहास में पहले आम चुनावों में पूर्वी पाकिस्तान में राष्ट्रवादी पार्टी आवामी लीग विजयी हुई। पाक फौजी शासन ने सभी निकायों को भंग कर स्वायत्तता की मांग कर रहे संगठन के अन्य नेताओं सहित मुजीबुर्रहमान को गिरफ्तार कर लिया। वहाँ

158. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 10 जून, 1969
159. वही
160. वही
161. सण्डे स्टेण्डर्ड (नई दिल्ली), 20 सितम्बर, 1970

की जनता पर पाकिस्तानी सैनिक शासन द्वारा चलाए गए दमन चक्र के प्रति अफगानिस्तान ने अपनी सहानुभूति जाहिर की। भारत के उद्योग विकास मंत्री मोइनूल हक चौधरी, जो प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के व्यक्तिगत दूत के रूप में अफगानिस्तान तथा ईरान गए थे, ने नई दिल्ली लौटने पर 1 जुलाई, 1971 को बताया कि अफगानिस्तान सरकार बंगला देश संकट की स्थिति से पूरी तरह अवगत है।[162]

जुलाई, 1971 के दूसरे सप्ताह में अफगानिस्तान में नूर अहमद एतमादी के स्थान पर डा0 अब्दुल जाहिर ने प्रधानमंत्री पद सम्भाला। उन्होंने दक्षिण एशिया क्षेत्र में सैन्य गतिविधियों के प्रति अपनी चिन्ता व्यक्त की। दूसरी ओर बंगला देश की जनता ने अपने स्वतन्त्रता संघर्ष में भारत से सहायता की मांग की। भारत सरकार द्वारा उन्हें सहायता का आश्वासन दिए जाने पर, पाकिस्तान ने इसे अपने आन्तरिक मामलों में दखल मानते हुए 3 दिसम्बर, 1971 को भारत पर आक्रमण कर दिया। जिससे दोनों देशों के बीच सशस्त्र लड़ाई शुरु हो गई।[163] 14 दिन तक चले इस युद्ध में पाकिस्तान की पराजय तथा गण-प्रजातन्त्रीय बंगला देश की स्थापना के पश्चात् भारत ने 17 दिसम्बर को युद्ध विराम की घोषणा कर दी। इस जीत से भारत की आन्तरिक व बाह्य राजनीति में प्रतिष्ठा बढ़ी। दोनों पक्षों के मध्य शिमला में 3 जुलाई, 1972 को विवादास्पद मुद्दों के शान्तिपूर्ण समाधान हेतु एक समझौता हुआ, जिसे शिमला समझौता कहा गया।[164] इस युद्ध के दौरान अफगानिस्तान ने पूर्णतया तटस्थता का रुख अपनाए रखा, किन्तु बंगलादेश की स्थापना के पश्चात् उसने इस घटना का स्वागत किया।[165]

अफगानिस्तान के विदेशमंत्री मूसा शफीक के निमंत्रण पर भारत के विदेशमंत्री सरदार स्वर्णसिंह 31 मार्च से 3 अप्रैल,1972 को अफगानिस्तान की राजकीय यात्रा पर काबुल गए। अपनी इस यात्रा में सरदार स्वर्ण सिंह ने अफगान नेताओं के साथ पारस्परिक सहयोग एवं अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर विचार-विमर्श किया। 3 अप्रैल, 1972 को भारतीय विदेशमंत्री की अफगान यात्रा की समाप्ति पर एक संयुक्त वक्तव्य जारी किया गया।[166] भारतीय विदेशमंत्री ने अपने अफगान समकक्ष के साथ विभिन्न राजनैतिक विषयों पर सौहार्द्रपूर्ण वातावरण में विचार-विमर्श किया। सरदार स्वर्ण सिंह की अफगान यात्रा दोनों देशों में बढ़ती मित्रता एवं सौहार्द्रता का प्रतीक थी।[167]

---

162. स्टेट्समैन (दिल्ली), 2 जुलाई, 1971
163. श्रीवास्तव, डा. एल. एस., वी. पी. जोशी, 'अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध', (मेरठ 1982-83), पृ. 115
164. कोतोवस्की, ग्रि. ग्रि., 'भारत का इतिहास' (मास्को प्रकाशन-1973), पृ. 752-54
165. वैदिक, वेदप्रताप, 'अफगानिस्तान में सोवियत-अमरीकी प्रतिस्पर्धा' (दिल्ली 1973), पृ. 248
166. हिन्दुस्तान टाइम्स, 17 जुलाई, 1971
167. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 18, अंक 4, अप्रैल 1972,पृ. 81-82

14 अप्रैल, 1972 को अफगान विदेशमंत्री मोहम्मद मूसा शफीक चीन जाते हुए कुछ समय के लिए भारत की राजधानी दिल्ली आए। अपने इस प्रवास के दौरान अफगान विदेशमंत्री ने भारत के प्रधानमंत्री एवं विदेशमंत्री के साथ विचार-विमर्श किया। प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी एवं विदेशमंत्री सरदार स्वर्ण सिंह ने इस अवसर पर अफगान विदेशमंत्री को भारत द्वारा पाकिस्तान के साथ अपने सम्बन्ध सामान्य बनाने की दिशा में उठाये गए कदमों से अवगत कराया।[168] अफगान विदेशमंत्री को उपमहाद्वीप में भारत द्वारा उठाये गए कदमों की जानकारी देने के दो उद्देश्य थे। एक तो अफगान सरकार को स्थिति से अवगत कराना तथा दूसरा, क्योंकि श्री शफीक चीन जा रहे थे तो ऐसे मौके पर चीनी नेताओं को भारत के दृष्टिकोण से अवगत करा सकते थे।[169]

राष्ट्रपति वी0वी0 गिरि की अफगानिस्तान यात्रा

11 जुलाई,1972 को भारत के राष्ट्रपति वी0वी0 गिरि राजकीय यात्रा पर अफगानिस्तान की राजधानी काबुल पहुँचे। भारतीय अतिथि के सम्मान में दिए गए राजकीय भोज में राष्ट्रपति वी0वी0 गिरि का स्वागत करते हुए अफगानिस्तान के बादशाह जहीरशाह ने कहा कि दोनों देशों में परस्पर मित्रता की कड़ी हजारों सालों से जुड़ी हुई है। उन्होंने आगे कहा कि जब भारत स्वतंत्र हुआ, तब अफगानिस्तान में हर्ष की लहर दौड़ गई। इसी तरह जब अफगानिस्तान ने अपनी स्वतंत्रता पुनः प्राप्त की तो भारतवासियों ने काफी प्रसन्नता अनुभव की। यह बात, भारत और अफगानिस्तान को अन्य राष्ट्रों द्वारा अपनी स्वतंत्रता प्राप्त करने, राष्ट्रीय सुरक्षा एवं आजादी की रक्षा करने के प्रयत्नों को प्रोत्साहित करने के लिए प्रेरित करती हैं।[170] उन्होंने आगे कहा कि इस संदर्भ में भारत और अफगानिस्तान के प्रतिनिधियों ने संयुक्त राष्ट्र महासभा, गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के शिखर सम्मेलनों एवं अन्य अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर अपने इरादे दोहराए हैं। महामहिम जहीरशाह ने घोषणा की कि अफगानिस्तान लोगों की स्वतंत्रता में सहायता की नीति का अनुसरण करता रहेगा तथा अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति स्थापित रखने में भी अपना सहयोग देता रहेगा।[171]

भारतीय उपमहाद्वीप में अस्थिर राजनैतिक स्थिति की चर्चा करते हुए अफगान बादशाह ने कहा कि इस महाद्वीप की जनता के साथ अफगानिस्तान के गहरे सम्बन्ध हैं। इसलिए उनकी यह कामना है कि इस क्षेत्र में चिरस्थायी शान्ति कायम रहे।[172] भारत और पाकिस्तान के

---

168. दुर्गा दास, ''पॉलिटिकल डायरी" असम ट्रिब्यून (गोहाटी), 5 अप्रैल, 1972
169. द हिन्दू (मद्रास), 15 अप्रैल, 1972
170. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 18, अंक 7, जुलाई 1972, पृ. 181
171. वही
172. वही, पृ. 182

मध्य हुए शिमला समझौते का स्वागत करते हुए उन्होंने आशा व्यक्त की, कि इससे दोनों देशों के परस्पर मतभेदों को शान्ति पूर्ण हल करने में सहायता मिलेगी।

महामहिम जहीरशाह ने भारत-चीन क्षेत्र विशेषकर वियतनाम में विस्फोटक स्थिति की चर्चा की, साथ ही कहा कि मध्य पूर्व में इजराइल द्वारा अरब क्षेत्र को वापस करने से इन्कार करना तथा फिलिस्तीन जनता के मूल अधिकारों को मान्यता न देना, उस क्षेत्र में तनाव बढ़ाने का मुख्य कारण है। इस सन्दर्भ में उन्होंने कहा "अफगानिस्तान ने अपने अरब भाइयों के अधिकारों का सदा समर्थन किया है तथा करता रहेगा।" अपने भाषण के अन्त में बादशाह जहीरशाह ने कामना की कि भारतीय राष्ट्रपति की अफगानिस्तान यात्रा पारस्परिक सम्बन्धों में अधिक सौहार्द्र एवं प्रगाढ़ता लाएगी।[173]

अपने जवाबी भाषण में राष्ट्रपति वी0वी0 गिरि ने अफगान सरकार एवं जनता के प्रति आभार प्रकट करते हुए कहा कि दोनों देशों में पारस्परिक सम्बन्ध परम्परागत होने के साथ ही साथ समय के बदलाव से अप्रभावित रहे हैं।[174] गुट निरपेक्षता की नीति की चर्चा करते हुए राष्ट्रपति ने कहा कि यह नीति भारत और अफगानिस्तान की विदेश नीतियों का मूल आधार है। उन्होंने आगे कहा "हम अफगानिस्तान को श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं, जो एशिया में एक स्वतंत्र तथा बाहरी ताकतों के प्रभाव या नियंत्रण रहित नीति का जनक रहा है। पाँच दशकों से भी अधिक समय से अफगानिस्तान ने एक स्वतन्त्र एवं गुट निरपेक्ष नीति का अनुसरण करके अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय में अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया है।"[175]

भारत एवं अफगानिस्तान के सम्बन्धों की चर्चा करते हुए राष्ट्रपति वी0वी0 गिरि ने कहा कि दोनों देश एक ही क्षेत्र से सम्बन्धित होने के नाते एक जैसी समस्याओं के समाधान के लिए संघर्षरत हैं। भारत इस बात से भलीभाँति परिचित है कि उपमहाद्वीप में होने वाली घटनाओं का अफगानिस्तान पर भी प्रभाव पड़ता है। भारत का यह उद्देश्य रहा है कि परस्पर मतभेदों का निपटारा शान्तिपूर्ण, आदर सहित, एकता के आधार पर एवं स्थायी रूप से हो। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी एवं राष्ट्रपति भुट्टो ने शिमला समझौता सम्पन्न किया। मेरा यह पूर्ण विश्वास है कि इस समझौते के अन्तर्गत पाकिस्तान के साथ सम्बन्ध सुधारने का सुअवसर मिलेगा।[176] भारत के राष्ट्रपति ने आशा व्यक्त की, कि बदली हुई परिस्थितियों में भी भारत-अफगान सम्बन्धों में मित्रता की जड़ें और गहरी होंगी।

---

173. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 18, अंक 7, जुलाई 1972, पृ. 182
174. वही
175. वही, पृ. 183
176. वही

11 जुलाई, 1972 को काबुल के मेयर ने राष्ट्रपति गिरि के सम्मान में एक राजकीय भोज का आयोजन किया। अपने स्वागत भाषण में काबुल के मेयर नूरीस्तानी ने कहा कि भारत के राष्ट्रपति की वर्तमान अफगान यात्रा दोनों देशों के ऐतिहासिक सम्बन्धों की याद ताजा कराती हुई नई दिशाओं में परस्पर अग्रसर होने को प्रेरित करती है।[177] उन्होंने आगे कहा कि अफगानिस्तान की जनता महात्मा गांधी और जवाहर लाल नेहरू जैसे नेताओं का बहुत आदर करती है, क्योंकि उन्हें इनके कार्यों का अवलोकन करने का नजदीक से अवसर मिला था। काबुल के मेयर ने आशा व्यक्त की, कि अपनी अफगान यात्रा की समाप्ति के बाद जब श्री गिरि स्वदेश लौटेंगे तो उनके मन में काबुल की जनता द्वारा प्रदर्शित स्नेह एवं आत्मीयता की भावना सदा ताजा रहेगी।[178] अपने प्रत्युत्तर भाषण में श्री गिरि ने काबुल की जनता के प्रति आभार दर्शाते हुए कहा कि भारत एवं अफगानिस्तान में मित्रता, स्नेह तथा सौहार्द्र केवल दोनों देशों के नेताओं या सरकारों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि इसकी जड़ें दोनों देशों की जनता के हृदयों में गहराई तक पहुँची हुई हैं।[179]

अफगानिस्तान के बादशाह जहीरशाह ने भारतीय राष्ट्रपति के साथ हुई अपनी बातचीत पर पूर्ण संतोष व्यक्त किया।[180] कूटनीतिज्ञ सूत्रों के अनुसार दोनों नेताओं ने क्षेत्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति का जायजा लेते हुए गुटनिरपेक्षता एवं शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व के सिद्धान्तों में अपनी आस्था दोहराई तथा इन्हें मजबूत करने का संकल्प लिया।

भारत-अफगान सम्बन्धों में प्रगाढ़ता का एक अन्य अवसर आया जब दिसम्बर, 1972 के प्रथम सप्ताह में अफगानिस्तान के क्राउन प्रिन्स अपनी पत्नी सहित भारत पधारे। 4 दिसम्बर, 1972 को अफगान मेहमानों के सम्मान में उपराष्ट्रपति गोपाल स्वरूप पाठक ने राष्ट्रपति भवन में एक राजकीय भोज का आयोजन किया। अपने स्वागत भाषण में उपराष्ट्रपति ने शाही दम्पति का सत्कार करते हुए कहा कि दोनों देशों के नेताओं का परस्पर मिलन परम्परागत मित्रता का प्रतीक होने के साथ ही भविष्य में आपसी सहयोग एवं मित्रता की भावना को बढ़ावा देने के लिए प्रेरित करता है।[181] उन्होंने आगे कहा कि दोनों देशों की गुटनिरपेक्षता की नीति में आस्था, विश्वशान्ति एवं शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व के सिद्धान्तों में विश्वास, ऐसे आधार हैं जिन पर परस्पर मित्रता और सहयोग की नींव कायम है।

---

177. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 18, अंक 7, जुलाई 1972, पृ. 184
178. वही
179. वही, पृ. 185
180. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 13 जुलाई, 1972
181. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 18, अंक 12, दिसम्बर 1972, पृ. 377

उपर्युक्त विश्लेषणात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि 1964 से 1972 तक के समय में भारत के अफगानिस्तान के साथ आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक सम्बन्धों में प्रशंसात्मक वृद्धि हुई। राजनैतिक स्तर पर दोनों देशों के नेताओं द्वारा एक दूसरे देश की यात्राओं का क्रम जारी रहा तथा परस्पर सम्बन्धों को सुदृढ़ बनाने की इच्छा पर बल दिया गया। सांस्कृतिक क्षेत्र में दोनों देशों में समझौता हुआ। आर्थिक क्षेत्र में आपसी व्यापार समझौतों के अतिरिक्त परस्पर व्यापार का स्तर एवं मात्रा भी बढ़ी। इस काल की प्रशंसनीय उपलब्धि भारत-अफगानिस्तान संयुक्त आयोग की स्थापना थी। निष्कर्षतः यह काल भारत-अफगान सम्बन्धों में एक महत्वपूर्ण काल था। इस काल में भारत को पाकिस्तान के साथ दो-दो युद्धों का सामना करना पड़ा, जिससे दोनों देशों के आर्थिक सम्बन्धों में कुछ समय के लिए अवरोध उत्पन्न हो गया, किन्तु भारत व अफगानिस्तान के शासकों की परस्पर दृढ़ सम्बन्ध बनाने की इच्छा ने सभी रुकावटों को दूर कर प्रगाढ़ सम्बन्धों को स्थापित किया।

*****

सप्तम् अध्याय

सप्तम अध्याय

गणतान्त्रिक अफगानिस्तान और भारत 1973-1978

वर्ष 1973 अफगानिस्तान के लिए काफी महत्वपूर्ण रहा, क्योंकि इस वर्ष जुलाई माह में सरदार मोहम्मद दाऊद के नेतृत्व में गणतंत्र की स्थापना की गई तथा अफगान नरेश जहीर शाह को अपदस्थ कर दिया गया। 17 जुलाई, 1973 को मोहम्मद दाऊद ने जहीर शाह का तख्ता पलट कर अफगानिस्तान की शासन सत्ता संभाली। अफगानिस्तान में सत्ता हस्तांतरण को "रक्तहीन क्रान्ति" की संज्ञा दी गई।[1] इस क्रान्ति की राजनीति पर प्रकाश डालते हुए दाऊद ने जुलाई, 1973 के कुछ समय उपरान्त कहा "कुछ दोस्तों के साथ एक वर्ष से भी अधिक समय तक इस विषय (क्रान्ति) पर विचार-विमर्श होता रहा। कई योजनाएँ बनाई गईं, लेकिन जब जहीर शाह शासन की देश विरोधी नीतियाँ तथा अराजकता अपनी चरम सीमा तक पहुँच गई तो उचित कार्रवाई करने का निश्चय किया गया"।[2] इस क्रान्ति में सोवियत संघ का हाथ होने की सम्भावना की पुष्टि नहीं हो सकी। सोवियत गुप्तचर संस्था के भूतपूर्व अधिकारी ब्लादीमीर कुजीककिन, जिसने अमेरिका में राजनैतिक शरण ली, ने प्रसिद्ध अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिका टाइम्स में दिए गए साक्षात्कार में इस तथ्य की पुष्टि की।[3] अफगानिस्तान के भूतपूर्व उप विदेशमंत्री अब्दुल समद गाऊस के अनुसार 17 जुलाई, 1973 को क्रान्ति सोवियत संघ के निर्देश पर नहीं हुई थी, बल्कि "यह स्व उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए एक अफगान खोज थी"।[4] दाऊद ने नई सरकार की विदेश नीति की घोषणा करते हुए कहा:

अफगानिस्तान की विदेश नीति तटस्थता, सैनिक गठबन्धनों में शामिल न होना, तथा विभिन्न मुद्दों पर जनता द्वारा स्वयं स्वतन्त्रता पूर्ण निर्णय लेना आदि सिद्धान्तों पर आधारित है। हमारी राष्ट्रीय आकांक्षाओं पर आधारित इस नीति का उद्देश्य जनता की भौतिक एवं आध्यात्मिक आवश्यकताओं को पूर्ण करना है। इन आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विश्व में शान्ति को कायम रखना अनिवार्य है। कोई भी राष्ट्र अपने उद्देश्यों एवं आकांक्षाओं की पूर्ति केवल शान्ति के वातावरण में ही पूर्ण कर सकता है। अब जब हम अफगानिस्तान में विकास-कार्यों में रत हैं

---

1. एन्थनी हाईमन, "अफगानिस्तान अण्डर सोवियत आरगेनाइजेशन 1964-81", (लन्दन, मैकमिलन 1982) पृ. 65
2. अफगान सरकार, "रिपब्लिक ऑफ अफगानिस्तान: स्टेटमेन्ट्स मैसेजिस एण्ड प्रेस इन्टरव्यूज", (काबुल 1975), अंक 1, पृ. 2
3. टाइम्स (न्यूयार्क), 22 नवम्बर, 1982, पृ. 33
4. अब्दुल समद गाऊस, "द फॉल ऑफ अफगानिस्तान" (वाशिंगटन 1988), पृ. 107

तो हमें विश्व में शान्ति एवं सुरक्षा को भी मजबूत बनाना है। अफगानिस्तान की गुटनिरपेक्ष नीति के मजबूत स्तम्भ हैं- निर्भीकता तथा वचन निभाने की क्षमता। अतः अफगानिस्तान के अन्य देशों के साथ मैत्री पूर्ण सम्बन्ध अपने अटल आधार स्तम्भों पर टिके रहेंगे तथा कूटनीति, व्यक्तिगत यात्राओं एवं अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग द्वारा इन सम्बन्धों को अधिक मजबूत बनाने के प्रयत्न किये जाएंगे। हमारी यह आशा है कि हमारे यह प्रयत्न सफल रहेंगे। यह प्रशासन यू. एन. चार्टर में निहित सिद्धान्तों का पालन एवं आदर करता है, जिसका मुख्य उद्देश्य है- मानव जाति का कल्याण एवं विश्व शान्ति।[5]

अफगानिस्तान में नई सरकार के अध्यक्ष मोहम्मद दाऊद के उपर्युक्त घोषणा से यह स्पष्ट था कि काबुल में नया प्रशासन अफगानिस्तान की परम्परागत विदेश नीति जो गुटनिरपेक्षता व निष्पक्ष एवं स्वतंत्र निर्णय पर आधारित थी, का अनुसरण करता रहेगा।[6]

(क) नए अफगानिस्तान के प्रति भारत का दृष्टिकोण

अफगानिस्तान में नए गणतन्त्र की स्थापना के पश्चात् भारत सरकार ने राजनैतिक स्तर पर तत्काल ही अच्छे पड़ोसी के नाते उसे मान्यता प्रदान कर दी।[7] वह अफगानिस्तान को मान्यता प्रदान करने वाला पहला देश था।[8]

वर्ष 1973 के दौरान भारतवर्ष में कोई उद्धरणीय राजनैतिक परिवर्तन नहीं हुआ। किन्तु बंगला देश के स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में उदय के बाद एक ओर भारत की प्रतिष्ठा बढ़ गई थी तो दूसरी ओर पाकिस्तान की शक्ति का ह्रास हो रहा था।[9] 1972 में शिमला समझौता सम्पन्न होने के उपरान्त पाकिस्तान के साथ सामान्य सम्बन्धों की स्थापना के आसार बढ़ गए थे।

1973 की क्रान्ति के पश्चात रूस व अफगानिस्तान के पारस्परिक सम्बन्ध व आपसी सहयोग में वृद्धि हुई तथा भारत के साथ उसके सम्बन्धों में पहले से अधिक प्रगाढ़ता आई। क्रान्ति के पश्चात् भारतीय सम्बन्धों पर चर्चा करते हुए श्री दाऊद ने कहा कि भारत-अफगानिस्तान के सम्बन्ध नए नहीं है। दोनों देशों के परस्पर सम्बन्ध गहरे व मधुर रहे हैं तथा वे अपनी उन्नति व विकास में एक दूसरे को सहयोग देते रहे हैं। राष्ट्रपति दाऊद के नेतृत्व में गणतन्त्र की स्थापना

---

5. काबुल टाइम्स, 18 जुलाई, 1975
6. मलीहा, जफर एफ, "हिस्टोरिकल एण्ड कल्चरल" क्वाटरली अफगानिस्तान, खण्ड 26, अंक (2) 100, सितम्बर 1973, पृ. 2-4
7. द हिन्दू, 7 सितम्बर 1977
8. नागपुर टाइम्स, 8 मार्च, 1978
9. साहनी आर. जी., "इन्सुरजैन्शी डिसीसिव इम्पैक्ट", वर्ड फोक्स, खण्ड 5, अंक 4, पृ. 11

के पश्चात् सम्बन्धों में तीव्रता से विकास हुआ। अफगान सरकार ने सभी देशों के साथ मित्रता का हाथ बढ़ाया और विश्व में शान्ति की इच्छा व्यक्त की। श्री दाऊद ने बताया कि पख्तूनिस्तान की समस्या को लेकर उनके पाकिस्तान के साथ सम्बन्ध सदा के लिए खराब हो गए हैं। इसलिए अपने प्रथम भाषण में ही उन्होंने पाकिस्तान से अच्छे सम्बन्धों की इच्छा व्यक्त की।[10]

अफगानिस्तान में 1973 की इस क्रान्ति के पश्चात अनेक आन्तरिक समस्याएं उत्पन्न हो गईं। इन समस्याओं का वहाँ के विकास पर गहरा प्रभाव पड़ा, जिससे देश विदेशी सहायता पर निर्भर हो गया।[11] नई सरकार के समक्ष देश की सुरक्षा का प्रश्न भी था। पाक प्रधानमंत्री श्री भुट्टो अफगानिस्तान में सत्ता परिवर्तन से बहुत आतंकित हो गए थे, इसलिए उन्होंने दिसम्बर 1974 में एक श्वेत पत्र प्रकाशित कर अफगानिस्तान पर पख्तूनों व बलूचों को लेकर विभिन्न आरोप लगाए। कई बार तो ऐसा लगा कि दोनों देशों के बीच झड़पें होना अनिवार्य है, लेकिन स्थिति टल गई।[12]

आन्तरिक व बाह्य समस्याओं से घिरे रहने के कारण अफगानिस्तान को संविधान के निर्माण की ओर तुरन्त ध्यान देने का अवसर नहीं मिला। स्थिति सामान्य होते ही अफगान सरकार ने विशेषज्ञों के दल भारत सहित कई देशों में भेजे, ताकि उन देशों के संविधानों का अध्ययन करने के उपरान्त एक अनुकूल संविधान का निर्माण किया जा सके। इसलिए जो संविधान बनाया गया वह भारत तथा अन्य तटस्थ व विकासशील देशों के संविधान से प्रेरित था। अफगानिस्तान भारत का पड़ोसी राज्य है। पाकिस्तान बनने से पूर्व तो वह उसकी उत्तरी पश्चिमी सीमा का प्रहरी था। इसलिए एक देश की घटनाओं से दूसरे देश में रूचि बढ़ना स्वाभाविक है।[13] अफगान गणराज्य प्रगति की ओर बढ़े और वहाँ लोकतन्त्र की जड़ें मजबूत हों, यही भारत चाहता है।

(ख) राजनैतिक सम्बन्धों में परस्पर विचारों की दृष्टि साम्यता

जैसा कि पिछले अध्यायों में दर्शाया जा चुका है कि भारत और अफगानिस्तान के राजनैतिक स्तर पर परस्पर सम्बन्ध प्रगाढ़ और काफी मैत्रीपूर्ण बने रहे हैं। 1973-78 की अवधि में यह सम्बन्ध और अधिक मधुर एवं सौहार्दपूर्ण हो गए। इसमें मुख्य भूमिका निभाई, दोनों देशों के

10. रजवी, मुजतवा, "पाक-अफगान रिलेशन्स सिन्स 1947, एन एनालिसिस", पाकिस्तान होराइजन क्वाटरली, खण्ड 32, अंक 4, 1979, पृ. 44
11. वेन्क, एस, "पॉलिटिकल हैण्डबुक ऑफ द वर्ल्ड", 1975, (न्यूयार्क)
12. हरिवंश, पी. के., "भारत-अफगानिस्तान सम्बन्ध - गणतंत्र की स्थापना", हिन्दुस्तान, (नई दिल्ली) 3 सितम्बर, 1977
13. वही

नेताओं के यात्रा आदान -प्रदान तथा परस्पर सम्बन्ध सुधारने की सांझी इच्छा ने। इसलिए अफगानिस्तान और भारत में सरकारें बदलने रहने के बावजूद दोनों देशों के मैत्री सम्बन्धों में सुधार एवं प्रगाढ़ता आती रही।

भारतीय उपराष्ट्रपति की काबुल यात्रा

8 जून, 1973 में भारत के उपराष्ट्रपति गोपाल स्वरूप पाठक अफगानिस्तान की राजकीय यात्रा पर काबुल पहुँचे। उनके सम्मान में अफगानिस्तान के राजकुमार अहमद शाह ने राजकीय भोज का आयोजन किया। अपने भाषण में उपराष्ट्रपति ने कहा कि भारत और अफगानिस्तान की परस्पर मैत्री की जड़ें इतिहास में काफी गहरी रही है।[14] उन्होंने आगे कहा "भारत और अफगानिस्तान ने अपनी मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों तथा भ्रातृत्वभाव की परम्पराओं को इतिहास की उथल-पुथल में जीवित रखने के लिए परस्पर सहयोग किया है, जिसकी मिसाल दुनिया के दो राष्ट्रों में सम्बन्धों को इस तरह कायम रखने में बहुत ही कम मिलती है"।[15]

भारतीय उपराष्ट्रपति ने कहा कि अफगानिस्तान भारतीय जनता के लिए स्वतन्त्रता की जीवित प्रतिमूर्ति रहा है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त भारत और अफगानिस्तान ने अपने परम्परागत सम्बन्धों को जीवन के हर क्षेत्र में मजबूत करने के भरसक प्रयत्न किए हैं।[16] दोनों देशों के मध्य निरन्तर नेताओं एवं शिष्ट मण्डलों के यात्रा आदान-प्रदान की चर्चा करते हुए उपराष्ट्रपति ने कहा हमारा यह विश्वास है कि इस तरह के आदान-प्रदान से हमारा एक दूसरे के बारे में ज्ञान बढ़ता है तथा हम एक दूसरे की उपलब्धियों, कार्यप्रणाली तथा आकांक्षाओं से भली भाँति परिचित हो सकते हैं।[17] पारस्परिक सम्बन्धों में अधिक मजबूती लाने पर बल देते हुए भारत के उपराष्ट्रपति ने कहा "भारत और अफगानिस्तान को आपसी प्रयत्नों से अभी लम्बा सफर तय करना है"। उन्होंने कहा कि सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में हम काफी मुद्दों पर एक जैसी राय रखते हैं। दोनों देश स्वीकार करते हैं कि गुट निरपेक्षता, शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व तथा आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने के सिद्धान्त का अन्तर्राष्ट्रीय तनाव कम करने में काफी महत्वपूर्ण योगदान है।[18]

जुलाई 1973 में सरदार मोहम्मद दाऊद के नेतृत्व में स्थापित नई अफगान सरकार ने

---

14. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 19, अंक 6, जून 1973, पृ. 214
15. वही
16. वही
17. वही
18. वही, पृ. 213-14

सभी देशों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्वन्ध बनाए रखने की विदेश नीति का अनुसरण करते हुए 20 सितम्बर को निजी दूत मोहम्मद नईम तथा वाहिद अब्दुल्ला (अफगानिस्तान के तत्कालीन उपविदेशमंत्री) को भारत यात्रा पर भेजा। 24 सितम्बर, 1973 को नई दिल्ली में जारी की गई एक प्रेस विज्ञप्ति में कहा गया कि अपने प्रवास के दौरान मोहम्मद नईम ने भारत के उपराष्ट्रपति, प्रधानमंत्री तथा अन्य नेताओं के साथ पारस्परिक हितों के सम्बन्ध में विचार-विमर्श किया।[19] जिसमें दोनों पक्षों ने परस्पर साँझी राय की अभिव्यक्ति की। प्रेस विज्ञप्ति में कहा गया कि विश्व में शान्ति व सुरक्षा के क्षेत्र में दोनों देशों के नेताओं ने समान विचार व्यक्त किए।

भारतीय विदेशमंत्री की अफगान यात्रा

1973 में अक्तूबर माह के अन्त में विदेश मंत्री स्वर्णसिंह की अफगानिस्तान की राजकीय यात्रा के अवसर पर टाइम्स ऑफ इण्डिया ने लिखा कि भारतीय विदेश मंत्री की आगामी यात्रा को कूटनीतिक क्षेत्रों में काफी महत्वपूर्ण माना जा रहा है।[20] समाचार पत्र के अनुसार इस यात्रा में भारतीय विदेश मंत्री को नई अफगान सरकार के सम्मुख समस्याओं का स्वयं अध्ययन करने तथा इन समस्याओं को हल करने में भारत कहाँ तक सहायक हो सकता है, यह भी जानने का अवसर मिलेगा। टाइम्स ऑफ इण्डिया ने अफगानिस्तान के राष्ट्राध्यक्ष दाऊद का वह रेडियो प्रसारण भी दोहराया, जिसमें उन्होंने कहा था कि "अफगानिस्तान भारतीय उपमहाद्वीप में चिरस्थायी शान्ति चाहता है। हमारी भारत के साथ मैत्री विचारधारा के मजबूत बन्धन में बंधी हुई है"।[21] विदेश मंत्री स्वर्णसिंह की अफगानिस्तान यात्रा की पूर्व संध्या पर प्रकाशित एक समाचार टिप्पणी में इण्डियन एक्सप्रेस ने लिखा कि अपनी आगामी अफगान यात्रा के दौरान स्वर्णसिंह अफगानिस्तान की नई गणतन्त्र सरकार के नेताओं के साथ परस्पर हितों को आगे बढ़ाने की सम्भावनाओं पर विचार करेंगे।[22] दोनों देशों के परम्परागत मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों का उल्लेख करते हुए समाचार पत्र ने आगे लिखा कि जुलाई, 1973 में दाऊद प्रशासन के सत्ता में आने के बाद भारत-अफगान सम्बन्ध और अधिक मजबूत हुए हैं।[23] पत्र के अनुसार राष्ट्रपति दाऊद ने जब भी अफगानिस्तान के अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का जिक्र किया, उसमें भारत के प्रति गर्मजोशी से उल्लेख किया गया।

निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार भारतीय विदेश मंत्री स्वर्णसिंह अफगान सरकार के निमंत्रण

19. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 19, अंक 9, सितम्बर, 1973, पृ. 313
20. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 20 अक्टूबर, 1973
21. वही
22. इण्डियन एक्सप्रेस, 29 अक्टूबर, 1973
23. वही

पर 29 अक्तूबर से 1 नवम्बर, 1973 की अवधि में काबुल पधारे। इस यात्रा के दौरान भारतीय विदेशमंत्री ने अफगान राष्ट्रपति, उपविदेशमंत्री एवं अन्य अफगान नेताओं के साथ आपसी सम्बन्धों क्षेत्रीय तथा विश्व समस्याओं पर विचार-विमर्श किया। 30 अक्तूबर, 1973 को स्वर्णसिंह एवं अफगान उपप्रधानमंत्री मोहम्मद हसन के बीच पारस्परिक सम्बन्धों पर बातचीत हुई, जिसमें दोनों नेताओं ने भारत-अफगान सम्बन्धों को अधिक प्रगाढ़ करने एवं मजबूत बनाने तथा लाभकारी क्षेत्रीय सहयोग बढ़ाने की इच्छा व्यक्त की।[24]

भारतीय विदेशमंत्री की अफगान यात्रा की समाप्ति पर जारी की गई विज्ञप्ति में कहा गया कि दोनों देश के नेता सभी क्षेत्र में परस्पर सहयोग तथा क्षेत्रीय शान्ति एवं मजबूती को बनाए रखने में सहमत रहे हैं।[25] उनका मत है कि इस क्षेत्र में चिरस्थायी शान्ति के लिए आवश्यक है कि इजराइल द्वारा हथियाए हुए अरब क्षेत्र को सुरक्षा परिषद के प्रस्ताव 242 (1967) के प्रावधानों द्वारा खाली करवाया जाए तथा फिलिस्तीनी जनता के अधिकारों को बहाल किया जाए। इसलिए विदेशमंत्री की अफगान यात्रा पर टिप्पणी करते हुए एक भारतीय समाचार पत्र ने अपने सम्पादकीय में लिखा कि दोनों देशों की शान्ति में आस्था तथा सभी राष्ट्रों में समता का विचार, परस्पर समान दृष्टिकोण का द्योतक है।[26]

दिसम्बर, 1973 में अफगान उपप्रधानमंत्री मोहम्मद हसन शर्क ने एक भारतीय समाचार पत्र से साक्षात्कार में कहा कि हाल ही की अफगान क्रान्ति ने यह स्पष्ट कर दिया कि अफगानिस्तान के असली मित्र कौन है।[27] पारस्परिक आर्थिक एवं अन्य क्षेत्रों में सहयोग की चर्चा करते हुए अफगान उपप्रधानमंत्री ने कहा ऐसी कोई शक्ति नहीं जो हमारे मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों को और अधिक प्रगाढ़ होने से रोक सके।[28] 24 फरवरी, 1974 को अफगान राष्ट्रपति दाऊद के विशेष दूत सरदार मोहम्मद नईम तथा उपविदेशमंत्री वाहिद अब्दुल्ला दो दिन की भारत यात्रा पर दिल्ली आए। अफगान नेताओं ने भारत के विदेशमंत्री के साथ पारस्परिक सम्बन्धों के विभिन्न पहलुओं पर विचार-विमर्श किया। 26 फरवरी, 1974 को नई दिल्ली में एक संवाददाता सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए अफगान उपविदेशमंत्री ने कहा कि मोहम्मद नईम एवं स्वर्णसिंह में हुई बातचीत में दोनों नेताओं ने विभिन्न क्षेत्रों में परस्पर सहयोग को बढ़ावा देने पर बल दिया।[29]

भारत द्वारा मई 1974 में किए गए शान्तिपूर्ण परमाणु विस्फोट पर अपनी सरकार की

24. नेशनल हेराल्ड (नई दिल्ली), 31 अक्टूबर, 1973
25. फॉरेन् अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 19, अंक 11, नवम्बर 1973, पृ. 379
26. नेशनल हेराल्ड, 3 नवम्बर, 1973
27. विंग, ए. आर., "बिल्डिंग ए न्यू अफगानिस्तान" हिन्दुस्तान टाइम्स, 28 दिसम्बर, 1973
28. वही
29. हिन्दुस्तान टाइम्स, 27 फरवरी, 1974

प्रतिक्रिया प्रकट करते हुए अफगानिस्तान के उपविदेशमंत्री वाहिद अब्दुल्ला ने 27 जून, 1974 को कहा कि अफगानिस्तान की दृष्टि में भारत के इस कदम से पड़ोसी देशों को कोई खतरा नहीं है।[30] भारतीय प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के इस आश्वासन पर कि भारत के परमाणु परीक्षण केवल शान्तिपूर्ण उद्देश्यों के लिए प्रयोग किए जाएंगे, पर अफगान सरकार को पूरा भरोसा है।

जून 1974 में राष्ट्रपति दाऊद की रूस यात्रा पर जलालाबाद में समाचार पत्रों में विरोधी विचारों की अटकलें लगाई जा रहीं थी। लन्दन से अब्दुल वली खान तथा भारतीय उच्चस्तरीय पदाधिकारियों ने पाकिस्तान के षड्यन्त्र के विरूद्ध अफगान राष्ट्र की ईमानदारी का पूरा समर्थन किया।[31] 24 जून, 1974 को भारत स्थित अफगान राजदूत अब्दुर्रहमान पाजवाक ने दिल्ली में आयोजित एक गोष्ठी में कहा कि सम्बन्ध सामान्य बनाने के लिए भारत और पाकिस्तान के बीच वार्ता में विलम्ब से अफगानिस्तान को निराशा हुई है।[32] अफगान राजदूत ने आगे कहा कि काबुल को आशा थी कि हाल में सम्पन्न द्विपक्षीय समझौते का उपमहाद्वीप में तथा विश्व के इस भाग के देशों में जिसमें अफगानिस्तान भी शामिल है, स्थिति पर काफी प्रभाव पड़ेगा।

पाकिस्तान सरकार ने हमेशा ही इस बात की शिकायत की कि भारत पख्तूनिस्तान के मसले पर पाकिस्तान के विरूद्ध अफगानिस्तान को सहायता दे रहा है। जुलाई 1974 में भारत के विदेशमंत्री ने लोकसभा में बोलते हुए कहा कि पाकिस्तान-अफगानिस्तान के मतभेदों को देखते हुए भारत की पूरी सहानुभूति अफगानिस्तान के साथ है, किन्तु दूसरी ओर भारत पाकिस्तान की भी उपेक्षा नहीं कर सकता।[33]

16 जुलाई, 1974 को पाक प्रधानमंत्री श्री भुट्टो ने आरोप लगाया कि भारत और अफगानिस्तान की सेनाएँ पाकिस्तानी सीमाओं पर भारी जमाव कर रही हैं तथा इसमें दोनों देशों में मिली भगत है। भारत द्वारा किए गए परमाणु परीक्षण को पाकिस्तान की सुरक्षा को खतरा बताते हुए पाकिस्तानी प्रधानमंत्री ने कहा कि जब तक भारत आवश्यक गारन्टी नहीं देता, दोनों देशों के सम्बन्ध सामान्य नहीं हो सकते हैं।[34] पाक-अफगान सम्बन्धों की चर्चा करते हुए प्रधान मंत्री श्री भुट्टो ने कहा कि अफगान राष्ट्रपति दाऊद पाकिस्तान के साथ सम्बन्ध बिगाड़ने पर तत्पर हैं।[35] इन आरोपों का खण्डन करते हुए अफगानिस्तान के विदेशमंत्री श्री वहीद अब्दुल्ला ने कहा कि "भारत एवं

---

30. इण्डियन एक्सप्रेस, 28 जून, 1974. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 28 जून, 1974
31. द मुस्लिम, 20 जून, 1974, द पैट्रआट, 21 जून, 1974
32. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 25 जून, 1974
33. कौर, कुलवन्त, "पाक-अफगान रिलेशन्स", पंजाब जरनल ऑफ पॉलिटिक्स, खण्ड 3, अक्टूबर, 1979, पृ. 157-59
34. द हिन्दू (मद्रास), 17 जुलाई, 1974
35. पेट्रीआट, 17 जुलाई, 1974

अफगानिस्तान आपसी हित के सभी मामलों में लगातार सम्पर्क बनाए रखते हैं तथा विचार-विमर्श करते रहते हैं"। पाकिस्तान के गैर जिम्मेदार नेताओं के कार्यों से इस क्षेत्र में नाजुक स्थिति पैदा हो गई है, इस कारण भारत और अफगानिस्तान के बीच लगातार मन्त्रणा एक परम्परा बन गई है"।[36]

27 जुलाई, 1974 को पाकिस्तान के प्रधानमंत्री श्री जुल्फिकार अली भुट्टो ने भारत से किये गए शिमला समझौते के आधार पर अफगानिस्तान के साथ नो बार पैक्ट का प्रस्ताव रखा, जिसमें कहा गया कि वे एक दूसरे के आन्तरिक मामलों पर हस्तक्षेप नहीं करेंगे तथा परस्परिक सम्बन्धों के लिए बाण्डुंग (गुटनिरपेक्ष) सिद्धान्तों तथा संयुक्त राष्ट्र सिद्धान्तों को आधार मानेंगे।[37]

11 अक्तूबर, 1974 को काबुल में भारत के नवनियुक्त राजदूत के.आर.पी. सिंह के कार्यभार ग्रहण के अवसर पर अफगान राष्ट्रपति दाऊद ने भारत व अफगानिस्तान के अन्तर्राष्ट्रीय मसलों पर समान विचार व नीतियों का जिक्र करते हुए पारस्परिक सम्बन्धों को व्यक्त किया।[38] प्रत्युत्तर में भारत के राजदूत ने आश्वासन दिया कि वे अपने कार्यकाल में दोनों देशों के मध्य सम्बन्धों को अधिक मजबूत बनाने में भरसक प्रयत्न करते रहेंगे।

19 दिसम्बर, 1974 को अफगानिस्तान राष्ट्रपति के विशेष दूत मोहम्मद नईम अपनी चीन यात्रा से वापसी पर स्वदेश लौटते हुए कुछ समय के लिए दिल्ली रूके तथा उन्होंने प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी और विदेश मंत्री वाई.वी. चव्हाण से लम्बी वार्ता में अपनी चीन यात्रा से लेकर भारत, चीन, पाकिस्तान व अफगानिस्तान आदि के सम्बन्धों पर विचार-विमर्श किया।[39]

अफगान राष्ट्रपति मोहम्मद दाऊद की भारत यात्रा

फरवरी 1975 में राष्ट्रपति मोहम्मद दाऊद की आगामी भारत यात्रा की घोषणा को भारतीय समाचार पत्रों में एक महत्वपूर्ण घटना बतलाया गया।[40] 5 मार्च, 1975 को दैनिक हिन्दुस्तान ने लिखा कि जुलाई 1973 में राष्ट्रपति बनने के बाद उनकी यह पहली भारत यात्रा और अब तक की दूसरी विदेश यात्रा है। इससे पूर्व वे सोवियत संघ गए थे।[41]

पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार अफगान राष्ट्रपति मोहम्मद दाऊद 10 से 14 मार्च,

---

36, हिन्दुस्तान, (नई दिल्ली) 30 जुलाई, 1974
37. रजवी, मुजतवा, देखिए क्र. 10, पृ. 45
38. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 12 अक्टूबर, 1974.
-इण्डियन एक्सप्रेस, 12 अक्तूबर, 1974
39. दैनिक हिन्दुस्तान, 20 दिसम्बर, 1974
40. हिन्दुस्तान टाइम्स, 18 फरवरी, 1975
41. दैनिक हिन्दुस्तान, 5 मार्च, 1975

1975 को भारत की राजकीय यात्रा पर नई दिल्ली पधारे। अफगान राष्ट्रपति के दिल्ली आगमन पर भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति श्री फखरूद्दीन अली अहमद ने रात्रि भोज का आयोजन किया। अपने स्वागत भाषण में उन्होंने अफगान राष्ट्रपति को एक अति सम्मानीय तथा धैर्यवान राजनीतिज्ञ तथा अफगान जनता के सर्वप्रिय नेता की उपमा दी। राष्ट्रपति फखरूद्दीन ने कहा दोनों देशों में इतिहास, संस्कृति तथा विकास के बीच कोई विभाजक रेखा नहीं है। उपमहाद्वीप में बाहरी हुकूमत, झगड़ा और कलह के बावजूद हमारे सम्बन्ध सदियों से बढ़ते तथा मजबूत होते चले आ रहे हैं।[42]

राष्ट्रपति श्री फखरूद्दीन ने दाऊद प्रशासन की उपलब्धियों की प्रशंसा करते हुए अफगान सरकार एवं जनता की सभी क्षेत्रों में सफलता की कामना की तथा भारत के पूरे सहयोग का आश्वासन दिया।[43] अपने जवाबी भाषण में राष्ट्रपति दाउद ने कहा कि हमारी मैत्री की नींव बहुत गहरी है, जो न केवल हमारी भलाई के लिए है, बल्कि इस क्षेत्र में शान्ति कायम रखने में लाभदायक एवं कारगर है।[44] अफगान राष्ट्रपति ने आगे कहा कि सदियों से चले आ रहे भारत-अफगान सम्बन्धों ने दोनों देशों के लिए यह सम्भव कर दिया है कि दोनों अपना लाभदायक सहयोग वर्तमान समय की आवश्यकताओं के अनुसार हर क्षेत्र में बढ़ाएँ। हम भारतीय सहयोग के लिए भारत के आभारी हैं।[45] भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हुई प्रगति की प्रशंसा करते हुए श्री दाऊद ने कहा कि अफगान जनता भारत की उपलब्धियों को प्रशंसा की दृष्टि से देखती है। पाकिस्तान के साथ मतभेदों का उल्लेख करते हुए अफगान राष्टपति ने कहा कि पाकिस्तान उनके प्रति सकारात्मक रूख अपनाने के लिए तैयार नहीं है।[46] राष्ट्रपति दाऊद ने कहा कि पाकिस्तान द्वारा सैनिक गठबन्धनों में शामिल होने तथा सैनिक सामग्री के इकठ्ठा कर लेने से पड़ोसी देशों की चिन्ता स्वाभाविक है। अमरीकी सरकार द्वारा हाल ही में पाकिस्तान को सैन्य सामग्री देने पर लगी पाबन्दी को हटा लेने के निर्णय पर टिप्पणी करते हुए राष्ट्रपति दाऊद ने कहा कि यह निर्णय उस समय किया गया जब पाकिस्तान, ब्लूचिस्तान और पख्तूनिस्तान में रक्तपात करने पर तुला हुआ है। अमेरिका के इस कदम से अफगान सरकार की चिन्ता बढ़ी है। उन्होंने आगे कहा कि इसके द्वारा इस क्षेत्र में असंतुलन को बढ़ावा मिलेगा, शस्त्र होड़ बढ़ेगी तथा शान्ति को एक और खतरा उत्पन्न हो जाएगा। अफगानिस्तान को आशा है कि अमरीकी सरकार दक्षिण

---

42. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 21, अंक 3, मार्च 1975, पृ. 81
43, वही
44. वही, पृ. 82
45. वही
46. वही, पृ. 83

एशिया में मजबूती लाने वाले उपायों का समर्थन करेगी, ताकि इस क्षेत्र की जनता अपने सीमित स्त्रोतों को हथियार खरीदने पर खर्च करने की बजाए अपने आर्थिक कार्यक्रमों तथा विकास की ओर लगा सके।[47]

अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक एवं व्यापार सम्बन्धी जटिल समस्याओं की चर्चा करते हुए अफगान राष्ट्रपति ने कहा कि वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था जो कि औपनिवेशिक युग की देन है, बदलती हुई परिस्थितियों के अनुकूल नहीं है। अफगान नेता ने कहा कि एक नई अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था कायम की जानी चाहिए, जो तीसरी दुनिया के सदस्य राष्ट्रों की आवश्यकताओं तथा मांगों को पूरा करने में समर्थ हो। उन्होंने तीसरी दुनिया के देशों को अपने प्राकृतिक स्त्रोतों एवं आधुनिक प्रौद्योगिकी को अपनी इच्छानुसार तथा आवश्यकतानुसार प्रयोग करने का आह्वान किया।[48] उन्होंने आगे कहा "हमारे विचार में संयुक्त राष्ट्रसंघ के घोषणा पत्र के अन्तर्गत प्रत्येक राष्ट्र को यह अधिकार है कि वह अपने आर्थिक एवं नैतिक विकास के लिए अपने स्त्रोतों का स्वेच्छानुसार उपयोग कर सकता है। इस विषय में किसी प्रकार का हस्तक्षेप, दबाव या जबरदस्ती अमान्य है। इस विषय में सभी विद्यमान मतभेदों को मैत्री, आपसी समझदारी एवं पारस्परिक सहयोग की भावना से निपटाना चाहिए"।[49]

श्री दाऊद ने कहा कि भारत-अफगान मैत्री का आधार शान्तिपूर्ण नीतियों का अनुसरण करना है। इसलिए हम सभी समस्याओं का न्याय तथा यथार्थवाद पर आधारित हल ढूढ़ने में विश्वास रखते हैं और हम सैनिक उपक्रमों तथा अवांछनीय शस्त्रीकरण को क्षेत्रीय तथा विश्व शान्ति के लिए अहितकर मानते हैं। अन्त में अफगान राष्ट्रपति ने भारत सरकार एवं जनता द्वारा प्रदर्शित स्नेह एवं आतिथ्य के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुए दोनों देशों की प्रगति एवं समृद्धि की कामना की।[50]

अफगान राष्ट्रपति की भारत यात्रा की समाप्ति पर नई दिल्ली में 14 मार्च, 1975 को जारी की गई एक संयुक्त विज्ञप्ति में कहा गया कि अफगान राष्ट्राध्यक्ष का भारत सरकार एवं जनता द्वारा भव्य स्वागत से जहाँ दोनों देशों की परम्परागत प्रगाढ़ मैत्री एवं भाई-चारे की झलक मिलती है, वहीं दोनों में सभी क्षेत्रों में सहयोग की भावना को अधिक सुदृढ़ करने का इरादा परिलक्षित होता है। विज्ञप्ति में आगे कहा गया कि भारत और अफगानिस्तान का संयुक्त राष्ट्र घोषणा पत्र में निहित सिद्धांतों पर विशेषकर शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व, सभी समस्याओं का शान्तिपूर्ण

---

47. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 21, अंक 3, मार्च 1975, पृ. 81
48. वही, पृ. 84
49. वही
50. वही, पृ. 83-84

ढंग से निपटारा, राष्ट्रों में परस्पर शक्ति प्रयोग को तिलांजलि, सार्वभौम समता के आधार पर परस्पर आदर तथा अहस्तक्षेप इत्यादि में दृढ़ विश्वास है।[51] दोनों देशों के नेताओं ने गुटनिरपेक्षता की नीति, जिसने अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय को काफी लाभ पहुँचाया है कि बढ़ती हुई वैधता पर बल दिया। दोनों नेताओं ने पूर्ण निरस्त्रीकरण, जिसमें परमाणु शस्त्रों के प्रयोग पर पूर्ण निषेध तथा विद्यमान ऐसे शस्त्रों के भंडारों को नष्ट करना भी शामिल है, की मांग की। उन्होंने परमाणु ऊर्जा का केवल शान्तिपूर्ण उद्देश्यों के लिए उपयोग तथा उससे सभी देशों की द्रुतग्रामी आर्थिक प्रगति को महत्व देने पर बल दिया।[52] उन्होंने विकसित देशों को परामर्श दिया कि विकासशील देशों के साथ उनके आर्थिक सम्बन्ध समता और न्याय पर आधारित होने चाहिए। दोनों देशों ने हिन्दमहासागर को विदेशी सैनिक अड्डों से रहित शान्ति क्षेत्र बनाए जाने तथा पश्चिम एशिया संकट, जिससे विश्व शान्ति को लगातार खतरा बना हुआ है, के शीध्र समाधान की मांग की।[53]

दोनों देशों के नेताओं ने दक्षिण एशिया में शान्ति और सहयोग का वातावरण कायम करने के अपने निश्चय को दोहराया। उन्होंने दक्षिण एशिया में शस्त्रहोड़, तनाव व खतरा उत्पन्न करने वाले तत्वों को बढ़ावा मिलने पर गहरी चिन्ता प्रकट करते हुए इस क्षेत्र में होने वाली राजनैतिक, आर्थिक तथा अन्य घटनाओं के बारे में परस्पर सम्पर्क बनाए रखने पर बल दिया।[54] अपने प्रवास के दौरान अफगान राष्ट्रपति ने भारत के प्रधानमंत्री के साथ विस्तारपूर्वक बातचीत की। जिसमें परस्पर सहयोग एवं अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर चर्चा भी हुई। उन्होंने भारत के राष्ट्रपति एवं प्रधानमंत्री को अफगानिस्तान की राजकीय यात्रा का निमंत्रण दिया जो उन्होंने सहर्ष स्वीकार कर लिया।

वर्ष 1975 में भारत के विदेशमंत्री श्री यशवन्त राव चव्हाण अपनी 11 दिवसीय (तीन देशों अफगानिस्तान, ईरान तथा संयुक्त अरब अमीरात) राजकीय यात्रा के प्रथम चरण में 28 अक्तूबर को काबुल पहुँचे। अपनी अफगान यात्रा के दौरान श्री चव्हाण ने राष्ट्रपति दाऊद, उनके विशेष दूत मोहम्मद नईम तथा अन्य अफगान नेताओं के साथ परस्पर मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों पर विचार-विमर्श किया।[55] दोनों देशों के नेताओं ने जनहित के लिए सभी क्षेत्रों में सहयोग, सीमाओं की सुरक्षा, गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के विकास तथा विश्व में शान्ति की इच्छा व्यक्त की।

---

51. इण्डो अफगान ज्वाइंट कम्यून, फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 21 अंक 3, मार्च 1975, पृ. 84 – नरसिंहाराव, पी. वी., सोसलिस्ट इण्डिया, खण्ड 10, अंक 17, 29 मार्च, 1975, वीकली ऑफ द इण्डियन नेशनल कांग्रेस, नई दिल्ली।
52. वही, पृ. 84
53. वही
54. वही
55. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 30 अक्टूबर, 1975

राष्ट्रपति दाऊद के निमंत्रण पर जून 1976 में पाकिस्तान के प्रधानमंत्री श्री भुट्टों ने अफगानिस्तान की यात्रा की। दोनों ही देशों के नेताओं ने अपने राजनैतिक एवं अन्य मतभेदों को दूर करने के लिए पारस्परिक मित्रतापूर्ण सन्धि में शान्तिपूर्ण सिद्धान्तों को शामिल किया।[56]

प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी की काबुल यात्रा

राष्ट्रपति दाऊद के निमंत्रण पर 4 जुलाई, 1976 में प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी पूर्व जर्मनी से जब काबुल पहुँची तो उनका भव्य स्वागत हुआ। उन्होंने आपसी सम्बन्धों को विस्तृत एवं व्यापक बनाना ही अपनी यात्रा का मुख्य उद्देश्य बताया। राष्ट्रपति दाऊद द्वारा उनके सम्मान में दिये गए भोज में श्रीमती गांधी ने कहा कि राष्ट्रपति दाऊद के प्रयत्न सफल हुए हैं तभी अफगानिस्तान की जनता सफलता की मंजिल तक पहुँच रहीं है। वह नई नीतियों से पूरी तरह खुश है।[57]

श्रीमती गांधी ने दाऊद को भारत की राजनैतिक-आर्थिक स्थिति से अवगत कराया और उन हालात के बारे में बताया, जिनके कारण आपात स्थिति की घोषणा करनी पड़ी।[58] अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति की चर्चा करते हुए श्रीमती गांधी ने कहा कि 'कुछ पश्चिमी तत्व' कई वर्षो से हमारी नीति के विरूद्ध रहे हैं। श्रीमती गांधी ने भारतीय दूतावास में अपने भाषण में कहा कि भारत को विदेशी शक्तियों के दिशा-निर्देश की कोई जरूरत नहीं है। यह भारत का अपना मामला है और वे ही भारत के भविष्य का स्वयं निर्माण करेंगे। उन्होंने कहा कि यदि भारत अपनी एकता, अनुशासन व समृद्धि को बनाए रख सका तो वह निश्चित ही एक ताकतवर देश बन जाएगा।[59]

श्रीमती गांधी ने कहा कि भारत विश्व के सभी देशों के साथ समानता तथा स्वतंत्रता के आधार पर सम्बन्ध कायम रखना चाहता है।[60] साथ ही वह चाहता है कि विकास के अवसर तथा सुविधा सभी को मिले, क्योंकि आन्तरिक एकता और आर्थिक सुदृढ़ता को मैत्री एवं सहयोग के आधार पर बनाये रखना ही भारत की नीति है। श्रीमती गांधी ने अपने भाषण में मतभेदों को द्विपक्षीय वार्ता के आधार पर दूर करने पर बल दिया।[61] क्योंकि दो के बीच तीसरा व्यक्ति अपना लाभ उठा ही लेता है। यह समस्या उस समय तो बड़ी गम्भीर हो जाती है, जब एक

---

56. महमूद, एम., पाकिस्तान हांराइजन, खण्ड 30, अंक 1, 1977
57. नेशनल हेराल्ड, 5 जुलाई, 1976
58. हिन्दुस्तान, 6 जुलाई, 1976
59. हिन्दुस्तान, 7 जुलाई, 1976
60. हिन्दुस्तान टाइम्स, 5 जुलाई, 1976. स्टेट्समैन, 6 जुलाई, 1976
61. वही

पक्ष का समर्थन एक बड़ा देश करने लगता है और दूसरा बड़ा देश दूसरे पक्ष का। जिससे अन्तर्राष्ट्रीय तनातनी व संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती है तथा गुटबन्दी को बढ़ावा मिलता है। इस प्रकार आपसी (द्विपक्षीय) वार्ता से परस्पर एकता, मैत्री एवं सहयोग को बनाये रखने में मदद मिलती है।[62]

श्रीमती गांधी ने कहा कि हमें एशियाई देशों तथा सम्पूर्ण विश्व में शान्ति के लिए सभी प्रयास करने चाहिए। भारत भी उपमहाद्वीप में शान्ति व स्थिरता बनाए रखने के लिए पाकिस्तान से अच्छे सम्बन्धों के लिए प्रयास कर रहा है।[63] उन्होंने कहा कि चीन में अपना राजदूत भेजकर हमने जो पहल की है, उसका वैसा ही हमें उत्तर मिलेगा। चीन के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्धों के प्रयास में भारत-रूस मित्रता पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।[64] अपनी वार्ता में श्रीमती गांधी ने श्री दाऊद से दोनों देशों के प्राचीन सम्बन्धों को दोहराने की बात कही।[65] उन्होंने कहा कि हमारे (भारत-अफगानिस्तान) उद्देश्य समान हैं, हमारे प्रयत्न एवं अनेक प्रयास भी समान हैं तथा हम समयानुरूप समान विचार स्वीकार करते हैं। दोनों देश गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सदस्य होने के नाते किसी भी गुट या सैन्य सन्धि को स्वीकार नहीं करते। दोनों देशों की मित्रता में कोई अवरोध नहीं है, जब भी उनके बीच मिथ्याभ्रम उत्पन्न हुए, उन्होंने परस्पर विचारों द्वारा उसे मिटाकर अपने सांस्कृतिक सम्बन्धों और आर्थिक सहयोग को लगातार बनाए रखा।[66]

राष्ट्रपति दाऊद ने कहा कि भारत तथा अफगानिस्तान के बीच मित्रता व सहयोग परस्पर दोनों देशों के लिए लाभप्रद है।[67] उन्होंने कहा कि भारत व अफगानिस्तान के पारस्परिक सम्बन्ध किसी दबाव या अनुरोध से उत्पन्न नहीं हुए हैं। राष्ट्रपति दाऊद ने अपने वैदेशिक सम्बन्धों पर चर्चा करते हुए कहा कि उनके ईरान, चीन तथा रूस से अच्छे सम्बन्ध हैं। रूस उनके सम्बन्धों के प्रति अधिक जागरूक है।[68]

श्रीमती इन्दिरा गांधी की यात्रा समाप्ति पर जारी की गई संयुक्त विज्ञप्ति में कहा गया कि दोनों देश विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय व राष्ट्रीय मुद्दों पर विचार-विमर्श व सहयोग को स्थायित्व प्रदान करेंगे। उन्होंने जहाँ विश्व व्यापी निरस्त्रीकरण का आह्वान किया, वहीं मध्यपूर्व में शान्ति

---

62. आज (वाराणसी), 7 जुलाई, 1976
63. पेट्रीआट, 5 जुलाई, 1976, द टाइम्स ऑफ इण्डिया, 6 जुलाई, 1976
64. चक्रवर्ती सुभाष, "इण्डो अफगान टॉक-स्ट्रेम ट्रेडिशनल फ्रैंडली रिलेशंस", द टाइम्स आफ इण्डिया, 6 जुलाई, 1976
65. स्टेट्समैन, 6 जुलाई, 1976
66. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 22, अकं 7, जुलाई 1976, पृ. 196
67. द टाइम्स आफ इण्डिया, 5 जुलाई, 1976
68. अरोड़ा, वेद प्रकाश, "प्रधानमंत्री की अफगानिस्तान: यात्रा समान दृष्टि और समान हित" हिन्दुस्तान, 5 जुलाई, 1976

व सुरक्षा के लिए [69] संयुक्त राष्ट्र की अवहेलना करने पर इजराईल की निन्दा की, और लेबनान के प्रश्न पर कहा कि वहाँ शीघ्र ही विवाद का अन्त कर शान्ति की स्थापना की जानी चाहिए। दोनों देशों ने दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद व उपनिवेशवाद के विरूद्ध संघर्ष कर रहे जातिवादी शासन पद्धति और सभी राजनैतिक, आर्थिक व सैनिक प्रभाव को समाप्त करने की मांग का समर्थन किया।[70] उन्होंने हिन्दमहासागर में महाशक्तियों की प्रतिस्पर्धा को लेकर चिन्ता प्रकट की।[71] साथ ही इस बात पर भी सहमति प्रकट की कि निर्गुट देश बड़ी शक्तियों की राजनीति से अपने को दूर रखेंगे और आपस में रचनात्मक सहयोग बढ़ाएँगे।

संवाददाता सम्मेलन में राष्ट्रपति दाऊद ने बताया कि श्रीमती गांधी की अल्पावधि की इस यात्रा में अन्तर्राष्ट्रीय महत्वपूर्ण मुद्दों, आन्तरिक समस्याओं व मधुर सम्बन्धों के प्रयोगों पर बातचीत हुई। इस यात्रा से दोनों देशों के बीच स्थापित सम्बन्धों को अधिक ठोस रूप प्रदान किया गया।[72]

भारत में सत्ता परिवर्तन

भारत में 1975-76 में आपातकालीन स्थिति तथा शासन व्यवस्था में अनेक अव्यवस्थाओं के कारण स्वतंत्रता के उपरान्त से चला आ रहा कांग्रेसी शासन समाप्त हुआ। भारतीय जनता द्वारा जनता पार्टी के हाथों में शासन की बागडोर थमा दी गई। किन्तु यह शान्तिपूर्ण परिवर्तन विश्व के लिए आश्चर्यजनक था।

1977 में जनता सरकार ने सत्ता में आते ही घोषणा की कि वह पड़ोसी देशों के साथ मित्रता और विश्व के सभी देशों के साथ समानता के आधार पर परस्पर सम्बन्धों को बनाए रखेगा। उन्होंने घोषणा की कि वे गुटनिरपेक्षता के सिद्धान्तों का पूरी तरह पालन करेंगे।[73] विदेशमंत्री श्री अटलबिहारी वाजपेयी ने विदेश नीति पर रखे गये सेमीनार में कहा कि भारत की विदेश नीति के प्रमुख आधार हैं: पड़ोसी देशों में शान्ति, सत्य, एकता व दृढ़ता स्थापित रहे तथा छोटे पड़ोसी देशों के अन्दर किसी तरह के मिथ्याभ्रम, आक्रमण का भय या धमकी को स्थान नहीं दिया जाए।[74]

---

69. पेट्रीआट, 5 जुलाई, 1976. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 6 जुलाई, 1976
70. हिन्दुस्तान टाइम्स, 8 जुलाई 1976
71. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 22, अंक 7, जुलाई 1976, पृ. 199-200
72. हिन्दुस्तान टाइम्स, 4 जुलाई 1976
73. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 23, अंक 3, मार्च 1977, पृ. 41
74. एशियन रिकार्डर, खण्ड 424, अंक 26, 25 जून से 1 जुलाई 1978, पृ. 14373
    - कौर, कुलवन्त, "पाक अफगान रिलेशन्स - ए स्टडी ऑफ इण्डियाज परसेप्सन", पंजाब जरनल ऑफ पॉलिटिक्स, खण्ड 3, अक्टूबर 1973, पृ. 148

विदेशमंत्री श्री वाजपेयी की काबुल यात्रा

भारत-अफगानिस्तान के परम्परागत सम्बन्धों को देखते हुए जनता सरकार ने भी इन सम्बन्धों की प्रगाढ़ता पर बल दिया।[75] परस्पर सम्बन्धों में स्थायित्व के लिए विदेशमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने विदेश सचिव जगत मेहता के साथ सितम्बर 1977 में अफगानिस्तान की यात्रा की[76] और भारतीय उपमहाद्वीप के राष्ट्रों के मध्य पारस्परिक सहयोग के लिए इन्दिरा सरकार द्वारा शुरू किए गए प्रयासों को आगे बढ़ाया।[77] श्री वाजपेयी ने काबुल में राष्ट्रपति दाऊद तथा अफगान विदेशमंत्री श्री वहीद अब्दुल्ला के साथ अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के अनेक प्रश्नों पर व्यापक स्तर पर विचार-विमर्श किया।[78]

श्री अटल बिहारी वाजपेयी के स्वागत में दिये गए भोज में अफगान विदेशमंत्री श्री वहीद अब्दुल्ला ने कहा कि उनकी इस यात्रा से अफगानिस्तान व भारत के परस्पर सम्बन्धों को नया मार्ग मिला है।[79] उन्होंने परस्पर वार्ता में स्वतंत्र पख्तूनिस्तान की मांग को दोहराया।[80] श्री वाजपेयी की तीन दिन की यात्रा समाप्ति पर जारी की गई संयुक्त विज्ञप्ति में अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के प्रश्नों तथा प्रगाढ़ सम्बन्धों पर चर्चा की गई। जिसमें कहा गया कि दोनों देश बड़ी शक्तियों के उपनिवेशवाद व स्वार्थ के लिए अविकसित देशों के प्रयोग का विरोध करते हैं। उन्होंने समुद्र तट पर रहने वाले देशों के साथ सहयोग व शान्ति की कामना की।[81] अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक स्थिति पर भी दोनों देशों ने समान विचार व्यक्त किए।[82]

दोनों देशों के नेताओं ने कहा कि वे संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर के अनुसार शान्तिपूर्ण तरीकों द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान, सैन्य शस्त्रों के प्रयोग में कमी, सभी देशों की सीमा क्षेत्रों का सम्मान, समानता व अहस्तक्षेप की नीति का पालन आदि को दृढ़ता से स्वीकार करते हैं।[83] उन्होंने फिलिस्तीनी जनता के अधिकारों की रक्षा के लिए जेनेवा में हुई शान्ति बैठक

---

75. नेशनल हेराल्ड, 8 सितम्बर, 1977
76. हिन्दुस्तान टाइम्स, 3 सितम्बर, 1977
77. टाइम्स आफ इण्डिया, 7 सितम्बर, 1977
    - हिन्दुस्तान टाइम्स, 5 सितम्बर, 1977
78. इन्डियन एक्सप्रेस, 7 सितम्बर, 1977
79. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 23, अंक 9, सितम्बर 1977, पृ. 147
80. स्टेट्समैन (दिल्ली), 7 सितम्बर, 1977
81. इण्डिया एण्ड फॉरेन रिव्यू, खण्ड 14, अंक 22, 15 सितम्बर, 1977, पृ. 67
82. हिन्दुस्तान, 7 सितम्बर, 1977
83. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 23, अंक 9, सितम्बर 1977, पृ. 149
    - स्टेटसमैन, 7 सितम्बर, 1977

की सफलता के प्रति आशा व्यक्त की तथा विश्व में बढ़ रहे शक्ति संतुलन का विरोध किया। श्री वाजपेयी ने भारत वापस लौटने पर संवाददाता सम्मेलन में बताया कि उनकी यह यात्रा पूरी तरह संतोषजनक रही।[84] इस दौरान दोनों देशों में मैत्री सम्बन्धों को और अधिक मजबूत व मधुर बनाने के लिए प्रयत्न किये गए।[85]

राष्ट्रपति दाऊद की भारत यात्रा

पूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी व विदेशमंत्री श्री वाजपेयी के आमन्त्रण पर 3 मार्च, 1978 को अफगानिस्तान के राष्ट्रपति श्री दाऊद ने भारत की यात्रा की। उनके सम्मान में दिए गए भोज में राष्ट्रपति नीलम संजीव रेड्डी ने कहा कि दोनों देशों में मित्रता व सहयोग के लिए वे प्रसन्नता व्यक्त करते हैं। उन्होंने कहा कि भारत और अफगानिस्तान के बीच भ्रातृत्व सम्बन्धों में नवीनता न होकर, उत्साह युक्त स्थिरता है।[86] हम अपने पड़ोसियों के साथ मित्रता चाहते हैं और उनसे पारस्परिक सहयोग के लिए प्रयासरत हैं।[87] श्री दाऊद ने कहा कि हम विश्वास करते हैं कि आज के विश्व में देशों की सुरक्षा सुनिश्चित करने का सर्वोत्तम उपाय यह है कि हम समृद्धि का क्षेत्र इतना अधिक विस्तृत बनाएँ कि वह कुछ लोगों तक सीमित न रह कर सबके लिए हो। इससे न केवल हमारे क्षेत्र का, बल्कि सारे एशिया और इसके माध्यम से विश्व का कल्याण होगा।[88] उन्होंने दक्षिण एशियाई देशों में शान्ति व स्थिरता के लिए पारस्परिक आपसी सम्बन्धों के प्रति आस्था व्यक्त की। श्री दाऊद ने भारत में सत्ता परिवर्तन के पश्चात भी सुचारू रूप से चल रहे पारस्परिक सम्बन्धों की चर्चा करते हुए कहा कि वे अपने देश में विभिन्न क्षेत्रों में निस्वार्थ भारतीय सहयोग व सहायता चाहते हैं। साथ ही अन्य सभी देशों के साथ भी अफगानिस्तान मित्रतापूर्ण व सहयोग सम्बन्धों की स्थापना करना चाहता है। भारत के साथ विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग हेतु एक बड़ा शिष्ट मण्डल श्री दाऊद के साथ भारत आया। उसने भी भारतीय नेताओं के साथ बातचीत में हिस्सा लिया।

श्री दाऊद ने तनाव मुक्त और मानवता की सेवा करने की भावना की पूर्ण व्यवस्था पर बल देते हुए दुनिया में हथियारों की होड़ समाप्त करने को अनिवार्य कर्तव्य बताया। संसद भवन के केन्द्रीय कक्ष में संसद सदस्यों ने भारत-अफगानिस्तान मित्रता के बढ़ते कदमों का उल्लेख

84. इण्डियन एण्ड फारेन रिव्यू, खण्ड 14, अंक 22, 5 सितम्बर, 1977
85. हिन्दुस्तान, 7 सितम्बर, 1977, इन्डियन एक्सप्रैस, 7 सितम्बर, 1977
86. नेशनल हेराल्ड, 3 मार्च, 1978
87. द ट्रिब्यून, 6 मार्च, 1976
88. हिन्दुस्तान, 4 मार्च, 1978

करते हुए बार-बार तालियाँ बजाकर उनका स्वागत किया। श्री दाऊद ने इस अवसर पर दोनों देशों के ऐतिहासिक सम्बन्धों का उल्लेख किया।[89] राष्ट्रपति श्री दाऊद ने प्रधानमंत्री श्री मोरार जी देसाई से विभिन्न मुद्दों पर बात की। उन्होंने स्वीकार किया कि विश्व में शान्ति व स्थिरता के लिए आवश्यक है कि दक्षिण एशिया में शान्ति व स्थिरता की स्थापना की जाए। प्रधानमंत्री श्री देसाई ने उनके स्वागत में कहा कि दोनों देशों के तथ्यों व समस्याओं में बहुत समानता है। यही एकरूपता का परिणाम है कि वे साथ साथ आगे बढ़ने के लिए सहयोग व पारस्परिक सहायता का प्रारूप बना रहे हैं।[90]

श्री दाऊद की यात्रा समाप्ति पर जारी की गई संयुक्त विज्ञप्ति में कहा गया कि दोनों देशों के नेताओं ने राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में सहयोग व उन्नति के लिए सौहार्दपूर्ण वार्ता की। श्री दाऊद ने बताया कि वे भारतीय नेताओं के साथ आपसी सहयोग व अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नों पर हुई वार्ता से संतुष्ट हैं। उनकी यात्रा ने दक्षिण एशिया में सद्भाव बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया।[91] वास्तव में इस सद्भाव को बढ़ाना खुद अफगानिस्तान के हित में ही है क्योंकि बड़े राष्ट्र अफगानिस्तान को अपने प्रभाव क्षेत्र में लाने की जी तोड़ कोशिश कर रहे थे और इनकी कोशिशों को तभी विफल किया जा सकता है, जब इस क्षेत्र के देशों के बीच पूर्ण पारस्परिक सद्भाव हो और गुटनिरपेक्षता के प्रश्न पर उनके विचार एक हों। विज्ञप्ति में आगे कहा गया है कि आणविक हथियारों के निरस्त्रीकरण से चाहे महाशक्तियों का भला न हो, किन्तु शान्ति समर्थक विकासशील देश इसका स्वागत करेंगे। उन्होंने कहा कि यदि निर्गुट देश एकता व सहयोग से काम लें तो विश्व में प्रभावी शक्ति बनकर निशस्त्रीकरण जैसी अनेक समस्याओं को हल करने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं, परन्तु अन्ततः यह प्रश्न महाशक्तियों के बीच समझौते पर ही निर्भर करेगा।[92] दोनों देशों ने आशा व्यक्त की कि संयुक्त राष्ट्रसंघ आगामी विशेष अधिवेशन में निरस्त्रीकरण के लिए समयबद्ध कार्यक्रम तैयार करने में सफल हो सकेगा।[93] उन्होंने परमाणु बमों (घातक शस्त्रों) के प्रयोग पर रोक लगाने के लिए विशेष रूप से अपील की।[94] यही कारण है कि दोनों देशों की मित्रता व शस्त्र होड़ के विरूद्ध उनकी नीति पाकिस्तान

---

89. हिन्दुस्तान, 4 मार्च, 1978
90. हिन्दुस्तान टाइम्स, 4 मार्च, 1978
91. आर्यावृत (पटना), 9 मार्च, 1978
92. हिन्दुस्तान, 5 मार्च, 1978
93. हिन्दुस्तान, 6 मार्च, 1978
94. हिन्दुस्तान, 6 मार्च, 1978
    – जेटली, नान्सी, "मेजर डवॅलपमेन्ट इन इण्डियाज फॉरेन पॉलिसी एण्ड रिलेशन्स, फरवरी – जून 1978", इण्टरनेशनल स्टडीज, खण्ड 18, अंक 3, जुलाई से सितम्बर 1978

को प्रायः असमंजस में डालती है।[95]

इस प्रकार दाऊद शासन काल में जहाँ भारत के साथ सम्बन्ध अत्यन्त प्रगाढ़ हुए वहीं अन्य पड़ोसी देशों के साथ भी अफगानिस्तान के पारस्परिक सम्बन्धों में सुधार हुआ। पाकिस्तान भी पख्तून समस्या का अहसास करने लगा था। बहुत दिनों से चले आ रहे ईरान के साथ हेलमन्द नदी के पानी को लेकर विवाद का भी श्री दाऊद की शासनावधि में समाधान हो गया। ईरान ने अफगानिस्तान को अन्य सहायता के अतिरिक्त फारस की खाड़ी में ईरान से होकर जाने वाले मार्ग के निर्माण के लिए भी सहमति दे दी।[96]

(ग) आर्थिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्ध

1973-78 की अवधि में भारत एवं अफगानिस्तान में परस्पर आर्थिक सम्बन्धों में वृद्धि हुई। दोनों देशों ने व्यापार में वृद्धि के साथ-साथ देश के विकास हेतु विभिन्न क्षेत्रों में परस्पर सहायता एवं सहयोग करने के लिए अपनी इच्छा जाहिर की। मार्च, 1973 में अफगानिस्तान से एक व्यापार शिष्टमण्डल सात दिन की भारत यात्रा पर नई दिल्ली आया। यह शिष्टमण्डल भारत अफगानिस्तान संयुक्त आयोग की आर्थिक, वाणिज्य एवं तकनीकी सहयोग की दूसरी बैठक में लिये गए निर्णय के अनुसार 22 से 29 मार्च की भारत यात्रा पर रहा।[97] उसका नेतृत्व अब्दुल करीम अमीन कर रहे थे। अपने भारत प्रवास के दौरान अफगान शिष्टमण्डल के सदस्यों ने भारतीय विदेश मंत्री श्री स्वर्णसिंह से भेंट की तथा भारतीय दल के नेता के0 श्रीनिवासन से बातचीत की। संयुक्त आयोग ने अपनी पहली व दूसरी बैठक में लिये गए निर्णय को लागू करने में हुई प्रगति का भी विवरण प्रस्तुत किया। दोनों दलों ने इस बात पर संतोष व्यक्त किया कि पारस्परिक सहयोग में वृद्धि हो रही है। यह निश्चय किया गया कि संयुक्त आयोग की योजना एवं कार्य समन्वय कमेटी की आगामी बैठक अक्तूबर 1973 में बुलाई जाए जिससे आगे सहयोग की सम्भावनाओं पर विचार किया जा सके।[98] अफगानिस्तान के शिष्ट मण्डल ने भारत सरकार एवं जनता का हार्दिक धन्यवाद किया।

3 अप्रैल, 1973 को भारत एवं अफगानिस्तान में एक सांस्कृतिक समझौता हुआ। यह

---

95. कौर, कुलवन्त, "पाक-अफगान रिलेशन्स" (1985 दिल्ली), पृ. 137
96. वैदिक वी. पी., "इण्डिया एण्ड अफगानिस्तान", इन्टरनेशनल स्टडीज, खण्ड 17, 1978
97. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 19, अंक 3, मार्च 1973, पृ. 103
98. वही

समझौता वर्ष 1973 और 1974 की अवधि तक था तथा इसे दोनों देशों के बीच अक्तूबर 1963 में हुए सांस्कृतिक समझौते के संदर्भ में ही आगे बढ़ाया गया। इस समझौते के अन्तर्गत दोनों देशों के मध्य शिक्षा, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी, कला, संस्कृति, रेडियो, दूरदर्शन, प्रेस तथा खेलों के क्षेत्र में परस्पर सहयोग का प्रावधान था। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत दोनों देश प्राध्यापकों, विशेषज्ञों, कलाकारों, नृत्य एवं संगीत, शिष्ट मण्डलों, छात्रवृत्तियों तथा उच्च शिक्षा के कार्यक्रमों का आदान-प्रदान करेंगे।[99] भारत ने काबुल विश्वविद्यालय में अंग्रेजी प्रभाग में भाषा के सिखाने, प्राध्यापकों, पुस्तकों एवं अन्य आवश्यक सामग्री जुटाने का वचन दिया। इस समझौते के अन्तर्गत भारत बामियान में बुद्ध की दो मूर्तियों की देखभाल के लिए अपना सहयोग तथा फौलादी घाटी में प्राचीन गुफाओं की खुदाई आदि में पुरातत्व विभाग के साथ पूरा सहयोग करेगा। भारत ने कला, साहित्य, संगीत आदि के क्षेत्र में अफगानिस्तान के विद्यार्थियों को उच्च अध्ययनं के लिए 30 छात्रवृत्तियाँ प्रदान करने की घोषणा की।[100]

भारत के उपराष्ट्रपति गोपाल स्वरूप पाठक ने 8 जून, 1973 को अफगान यात्रा के दौरान भारत और अफगानिस्तान के बीच आर्थिक एवं तकनीकी क्षेत्रों में सहयोग बढ़ाने पर बल दिया। इसके लिए उन्होंने भारत-अफगानिस्तान संयुक्त आर्थिक आयोग की कार्यप्रणाली पर संतोष व्यक्त किया।[101] उपराष्ट्रपति श्री पाठक ने काबुल की पहली औद्योगिक रियासत, जिसमें भारत द्वारा 30 लाख रूपये दिये जा रहे थे, की आधार शिला रखी। उन्होंने बामियान की भी यात्रा की, जहाँ भारतीय पुरातत्व विभाग का दल पिछले चार वर्षो से विश्व की सबसे बड़ी भगवान बुद्ध की प्रतिमा के पुनरूद्धार के लिए कार्य कर रहा था।

अप्रैल, 1973 में मोहम्मद आरिफ मेहर के नेतृत्व में अफगानिस्तान से एक व्यापारिक प्रतिनिधि मण्डल भारत आया। उन्होंने अफगानिस्तान की ओर से घोषणा की कि वह अपने देश में भारत की ओर से अर्थ विनियोग (धन लगाने के लिए) तथा आकर्षक व उत्प्रेरक भेंट चाहता है। अफगानिस्तान पर्याप्त मात्रा में विद्युत संचय, सस्ता श्रमिक उद्योग, प्रचुर मात्रा में ठोस व असली पत्थर का कोयला, अभ्रक, गन्धक, चमकीला रंग और प्राकृतिक गैस रखता है। वहाँ चमड़े के उद्योग को सफल बनाने के लिए पहले से प्रबन्ध किए गए हैं।[102] देश के विकास हेतु भारत द्वारा दी जाने वाली सहायता को अफगानिस्तान तकनीकी प्रबन्ध के रूप में स्वीकार

---

99. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 19, अंक 4, अप्रैल 1973, पृ. 147
100. वही
101. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 19, अंक 6, जून 1973, पृ. 214
102. कॉमर्स (बम्बई), खण्ड 126, अंक 3241, 16 जून, 1973, पृ. 1205

कर रहा है। जिसमें विशेष रूप में तापीय विद्युत योजना और सिंचाई तथा पीने के शुद्ध पानी की योजना के निर्माण इत्यादि में सहयोग, मुख्य है। इसलिए भारत सरकार की ओर से तकनीकी प्रतिनिधि मण्डल अफगानिस्तान भेजा गया, जिसके माध्यम से विभिन्न प्रकार की मशीनों एवं उपकरणों की उपलब्धि की जानकारी दी गई। जिसमें मुख्य एल्युमीनियम के बर्तन बनाने की विधि, प्रेशर कुकर, सी.आई. पाईप, बिजली की फिटिंग के लिए तार, आलपिन तथा सुइयां, कृषि सम्बन्धी सामग्री, जाली के लिए तार (नीटिंग वायर), यन्त्र चालित मोटर गाड़ी, जी.आई. पाईप एवं अन्य आवश्यक यंत्र इत्यादि।[103]

24 अक्तूबर, 1973 में भारत एवं अफगानिस्तान के मध्य काबुल में पुरातत्व विज्ञान के क्षेत्र में परस्पर सहयोग हेतु एक समझौता सम्पन्न हुआ। इस विषय में 30 अक्तूबर, 1973 में नई दिल्ली से जारी की गई एक प्रेस विज्ञप्ति में कहा गया कि इस समझौते के अन्तर्गत भारत अफगानिस्तान के बामियान एवं सिस्तान क्षेत्र में पुरातत्व अवशेषों की खुदाई में सहयोग करेगा।[104] इस अवसर पर बोलते हुए अफगानिस्तान के सूचना एवं सांस्कृतिक मामलों के मंत्री नेविन ने कहा कि अफगानिस्तान की नई सरकार द्वारा घोषित नई सांस्कृतिक नीति के अन्तर्गत यह पहला समझौता है। अफगान नेता ने आशा व्यक्त की कि इस समझौते के अन्तर्गत दोनों देशों के बीच सम्बन्ध और अधिक मजबूत होंगे।[105] भारत की तरफ से काबुल स्थित भारतीय राजदूत के.एल. मेहता ने इस समझौते पर हस्ताक्षर किए। अपने जवाबी भाषण में भारतीय राजदूत ने आश्वासन दिया कि भारत सदैव अफगानिस्तान के साथ विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग करता रहेगा।[106]

फरवरी 1974 में भारतीय समाचार पत्रों में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार भारत ने अफगानिस्तान में एक अभिलेखागार स्थापित करने में सहयोग देने की पेशकश की।[107] अफगानिस्तान के पास बड़ी मात्रा में एकत्रित मूल्यवान व ऐतिहासिक महत्व की पाण्डुलिपियों तथा कागजात की उचित देखभाल न होने की वजह से खराब हो जाने का डर है। भारत-अफगानिस्तान सांस्कृतिक समझौते के अन्तर्गत उनके रखरखाव के लिए भारत के राष्ट्रीय अभिलेखागार की ओर से कुछ वरिष्ठ अधिकारियों का दल अप्रैल 1974 में काबुल जाने वाला है, जो वहाँ पर उपलब्ध कागजातों का अध्ययन करेगा तथा अफगानिस्तान में अभिलेखागार स्थापित करने में वहाँ की सरकार की सहायता करेगा।[108] 24 फरवरी, 1974 को अफगान राष्ट्रपति के विशेष दूत मोहम्मद नईम ने अपनी

103. कॉमर्स (बम्बई), खण्ड 126, अंक 3241, 16 जून, 1973, पृ. 1205
104. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 19, अंक 10, अक्टूबर 1973, पृ. 333
105. वही
106. वही
107. पैट्रीआट (नई दिल्ली), 24 फरवरी, 1974
108. वही

भारत यात्रा पर भारतीय विदेशमंत्री स्वर्णसिंह के साथ दोनों देशों में आर्थिक एवं औद्योगिक सम्बन्धों के विस्तार के बारे में बातचीत की। उनके साथ आये उपविदेशमंत्री वाहिद अब्दुल्ला ने नई दिल्ली में 26 फरवरी, 1974 को बताया कि उनकी भारतीय नेताओं के साथ हुई बातचीत में दोनों देशों के बीच औद्योगिक क्षेत्र में अधिक सहयोग करने पर बल दिया गया।[109] इसी के तहत योजना एवं तकनीकी विशेषज्ञों का एक दल शीघ्र ही अफगानिस्तान जाएगा। इसके अतिरिक्त भारत ने अफगानिस्तान को बाढ़ नियंत्रण के क्षेत्र में भी सहायता प्रदान करने का वायदा किया।[110]

भारत-अफगानिस्तान संयुक्त आयोग की तीसरी बैठक में भाग लेने के लिए अफगानिस्तान का एक शिष्ट मण्डल वहाँ के खान एवं उद्योग मंत्री प्रो. अब्दुल कय्यूम के नेतृत्व में 19 जून, 1974 को नई दिल्ली पहुँचा। संयुक्त आयोग की बैठक शुरू होने की पूर्व संध्या पर भारतीय समाचार पत्रों में भारत-अफगान सम्बन्धों पर टिप्पणियाँ छपनी शुरू हो गई थी। नेशनल हेराल्ड के अनुसार अफगानिस्तान को कृषि, सिंचाई, बिजली उत्पादन, सार्वजनिक स्वास्थ्य, सामुदायिक विकास परियोजनाओं, दवाई बनाने तथा सिविल इन्जीनियरिंग के क्षेत्र में विशेषज्ञों की आवश्यकता है।[111] 20 जून, 1974 को संयुक्त आयोग की प्रारम्भिक बैठक में भारत-अफगान सम्बन्धों पर वार्ता हुई। इस बैठक में प्रो. कय्यूम ने कहा कि अफगान सरकार भारत द्वारा उनके देश के सामाजिक आर्थिक विकास के लिए प्रदत्त सहायता को प्रशंसा की दृष्टि से देखती है।[112] भारत के विदेश मंत्री स्वर्णसिंह ने कहा "भारत, अफगानिस्तान के साथ आर्थिक एवं औद्योगिक सम्बन्धों को और अधिक मजबूत करने का इच्छुक है। यह संयुक्त आयोग आपसी सहयोग के क्षेत्रों का विस्तार एवं वृद्धि के लिए एक महत्वपूर्ण साधन है।[113] 21 जून, 1974 को अफगानिस्तान शिष्टमण्डल ने भारतीय प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा अन्य मंत्रिगण से भेंट की तथा विचार-विमर्श किया।[114]

संयुक्त आयोग की इस बैठक का अच्छा परिणाम निकला। भारत और अफगानिस्तान के बीच आर्थिक सहयोग में एक ऐसे "दूरगामी" और व्यापक कार्यक्रम पर सहमति हो गई जिसमें यद्यपि सहयोग की कोई वित्तीय सीमा नहीं थी, किन्तु इससे अफगानिस्तान की आर्थिक व्यवस्था को काफी प्रोत्साहन मिलने की सम्भावना थी। इस सहयोग के अन्तर्गत जहाँ भारत अफगानिस्तान को उस समय चल रही परियोजनाओं व योजनाओं में निरन्तर अधिक सहायता देगा, वहीं सहायता

109. मदरलैन्ड (दिल्ली), 27 फरवरी, 1974
110. हिन्दुस्तान टाइम्स, 27 फरवरी, 1974
111. नेशनल हेराल्ड, 20 जून, 1974
112. हिन्दुस्तान टाइम्स, 21 जून, 1974
113. वही
114. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 22 जून, 1974

के नए क्षेत्र भी खोजे जाएंगे।[115] इन नई परियोजनाओं में एक कृषि अनुसंधान संस्थान व डेयरी फार्म की स्थापना, हरि खंड विद्युत परियोजना में निर्देशन व निरीक्षण में सहायता देना, उच्च प्रशिक्षण व अनुसंधान के लिए काबुल में स्वास्थ्य संस्थान का विकास करना शामिल है। आयोग की इस कार्रवाई पर भारत की ओर से विदेशमंत्री स्वर्णसिंह तथा अफगानिस्तान की ओर से खान एवं उद्योग मंत्री प्रो. अब्दुल कय्यूम ने हस्ताक्षर किए।

प्रो. कय्यूम ने कहा कि उन्हें कृषि तथा उद्योगों में पूँजी तथा तकनीक दोनों की सहायता चाहिए। आर्थिक विकास की हर दिशा में हमारे समक्ष कठिनाइयां हैं। नई सरकार इन कठिनाइयों पर काबू पाने का प्रयास कर रही है।[116] इसी मौके पर बोलते हुए भारतीय विदेशमंत्री स्वर्ण सिंह ने कहा कि भारत सहायता की सीमा नहीं बांधना चाहता। भारत, अफगानिस्तान को पूँजी और तकनीक दोनों दृष्टि से सहायता दे रहा है। हर योजना के पूर्ण होने तक उसमें सहायता देते रहना उसका कर्तव्य है।[117] भारत-अफगान संयुक्त आयोग की बैठक के उपरान्त दोनों देशों में सम्पन्न समझौते पर टिप्पणी करते हुए इण्डियन एक्सप्रेस ने लिखा "संयुक्त आर्थिक आयोग की तीसरी बैठक ने दोनों देशों में विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग एवं सहायता के नए द्वार खोल दिए हैं"।[118]

वर्ष 1974 के जुलाई माह के दूसरे सप्ताह में भारत और अफगानिस्तान में एक व्यापार समझौता हुआ जो मुख्यत: 1972 के भारत-अफगान व्यापार समझौते पर आधारित था। इस समझौते के अन्तर्गत अफगानिस्तान द्वारा शीघ्र ही भारत को ताजे फलों का निर्यात शुरू करने तथा सूखे मेवे के निर्यात की मात्रा बढ़ाने की व्यवस्था थी।[119] इस समझौते में यह भी व्यवस्था की गई कि दोनों देशों में परस्पर व्यापार बढ़ाया जाएगा।

अफगान राष्ट्रपति मोहम्मद दाऊद के भारत आगमन पर 10 मार्च, 1975 को भारत के राष्ट्रपति फखरूद्दीन अली अहमद ने भारत-अफगान सम्बन्धों की चर्चा करते हुए कहा कि भारतीय दर्शन, विज्ञान, कला एवं संस्कृति अफगानिस्तान से होकर एशिया के दूसरे भागों तथा विश्व में फैली।[120] भारत के राष्ट्रपति ने दोनों देशों के मध्य सांस्कृतिक एवं आर्थिक सम्बन्धों में हो रही बढ़ोत्तरी पर हर्ष प्रगट करते हुए कहा कि प्रत्येक वर्ष दोनों देशों में परस्पर व्यापार बढ़

---

115. हिन्दुस्तान टाइम्स, 25 जून, 1974
116. वही
117. वही
118. इण्डियन एक्सप्रेस, 26 जून, 1974
119, हिन्दुस्तान टाइम्स, 15 जुलाई, 1974
120. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 21, अंक 3, मार्च 1975, पृ. 81

रहा है। हमारे दोनों देशों के बीच आर्थिक सहयोग के कई कार्यक्रम एवं योजनाएं चल रही हैं, जो प्रगति पथ पर अग्रसर हैं।[121] अफगान राष्ट्रपति की भारत यात्रा के अन्तिम चरण में दोनों देशों के नेताओं ने पारस्परिक आर्थिक, तकनीकी एवं वाणिज्य सहयोग की समीक्षा की तथा इन क्षेत्रों में अब तक हुई प्रगति पर संतोष व्यक्त किया।[122]

27 जून, 1975 को भारत और अफगानिस्तान के बीच एक चलचित्र समझौता हुआ जिसके अन्तर्गत भारत ने प्रत्येक वर्ष लगभग 40 चलचित्र अफगानिस्तान को निर्यात करने का निर्णय लिया।[123] यह समझौता काबुल में सम्पन्न हुआ, जिस पर भारत की ओर से एम.एम. मुर्शीद (संयुक्त सचिव, भारत सरकार) तथा एफ.एम. खैरजापा (अध्यक्ष, कला और संस्कृति विभाग) ने अफगानिस्तान की ओर से हस्ताक्षर किए। इस समझौते में यह प्रविधान था कि भारतीय फिल्मों का अफगानिस्तान को निर्यात दोनों देशों द्वारा नियुक्त एजेन्सियों के द्वारा होगा। अफगान ऐजेन्सी प्रति वर्ष 50 फिल्मों की सूची तैयार करेगी जिसमें से 40 फिल्में भारतीय एजेन्सी द्वारा चुनकर अफगानिस्तान को भेजी जाएंगी। चलचित्रों का मूल्य दोनों देशों की एजेन्सियों की स्वीकृति से निश्चित होगा। अफगान चलचित्र निरीक्षण बोर्ड जिस फिल्म की अस्वीकृति दे देगा उसके स्थान पर अफगान एजेन्सी भारतीय एजेन्सी को उसी के समान दूसरी फिल्म भेजने के लिए पत्र लिखेंगे। उसके लाने ले जाने का खर्चा अफगान एजेन्सी का होगा। यह समझौता 5 वर्ष के लिए किया गया और उसी तिथि को प्रतिवर्ष इस समझौते पर पुनः हस्ताक्षर करने का प्रविधान रखा गया। इस समझौते को किसी भी देश द्वारा समाप्त करने के लिए 6 माह पूर्व नोटिस देने की बात रखी गई। इस समझौते की भूमिका में कहा गया कि भारतीय फिल्में दोनों देशों में सांस्कृतिक सम्बन्ध प्रगाढ़ करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।[124] एक अन्य सांस्कृतिक समझौता, जो भारत और अफगानिस्तान के मध्य 2 सितम्बर, 1975 को काबुल में सम्पन्न हुआ, के अनुसार दोनों देशों की साँझी विरासत के अध्ययन हेतु एक संयुक्त कार्यक्रम तय करने का उपक्रम है, जिससे भारत और अफगानिस्तान के मध्य सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक सम्बन्धों को और अधिक मजबूत किया जा सकेगा।[125] इस समझौते के अन्तर्गत जो कार्यक्रम तय किये जाने थे उनमें काबुल विश्व विद्यालय में भारत-अफगान सम्बन्धों पर एक सेमीनार का आयोजन, जम्मू-कश्मीर विश्वविद्यालय में पश्तो भाषा के अध्ययन के लिए सुविधा का प्रावधान तथा समय-समय पर सांस्कृतिक दलों

---

121. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 21, अंक 3, मार्च 1975, पृ. 82
122. वही, पृ. 85, सोसलिस्ट इण्डिया, खण्ड 10, अंक 17, मार्च 29, 1975, पृ. 18
123. "इण्डो-अफगान फिल्म एग्रीमेन्ट" फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 21, अंक 6, जून 1975, पृ. 169
124. वही
125. हिन्दुस्तान टाइम्स, 3 सितम्बर, 1975

एवं प्रदर्शनियों का आदान-प्रदान इत्यादि शामिल था।[126] इस प्रकार दोनों देशों के सांस्कृतिक सम्बन्धों में बहुविध प्रगति हो रही थी। रेडियो, समाचार-पत्रों व ग्रन्थों द्वारा एक दूसरे के सम्बन्धों में समीपता आ रही थी।[127]

भारत-अफगान व्यापार समझौता 1975

भारत और अफगानिस्तान के बीच आर्थिक और वाणिज्य सम्बन्धों को दृढ़ बनाने के अभिप्राय से 3 सितम्बर, 1975 को दिल्ली में एक नया वाणिज्य समझौता सम्पन्न हुआ। इस समझौते का विशिष्ट अंग था भारत और अफगानिस्तान के व्यावसायिक प्रतिष्ठानों के बीच लेन-देन की व्यवस्था बैंकों के माध्यम से करना।[128] अफगानिस्तान की ओर से वहाँ के विदेश वाणिज्य विभाग के अध्यक्ष श्री अब्दुल सलीम तथा भारत की ओर से वाणिज्य मंत्रालय में संयुक्त सचिव, ए.एन. वर्मा ने हस्ताक्षर किए। इस समझौते के अन्तर्गत दोनों देशों के बीच माल का जो आदान-प्रदान होना था, उससे सम्बन्धित हिसाब बैंकों द्वारा भारतीय मुद्रा में अथवा अफगानिस्तान की मुद्रा में रखने का प्रविधान था। दोनों देशों के बीच वाणिज्य प्रतिष्ठानों के लिए लेन-देन की व्यवस्थाएँ निश्चित करने की जिम्मेदारी 'द अफगानिस्तान बैंक' तथा 'भारतीय स्टेट बैंक' को सौंपी गई। साथ ही आवश्यकता पड़ने पर अपने-अपने देश के आधिकारिक बैंकों की सेवाओं का भी लाभ उठाया जा सकता था।[129]

समझौते की कार्यविधि का पर्यालोचन वर्ष में कम से कम एक बार किए जाने की व्यवस्था की गई, ताकि यह पता लगाया जा सके कि इस समझौते के उद्देश्यों को कहाँ तक कार्यान्वित किया जा सका है। 1974-75 की अवधि में भारत-अफगानिस्तान का कुल व्यापार 35 करोड़ रूपये का हुआ, जबकि 1973-74 में यह 30 करोड़ रूपये का था।

समझौता सम्पन्न होने के बाद 3 सितम्बर, 1975 को नई दिल्ली में जारी की गई संयुक्त विज्ञप्ति में कहा गया कि दोनों देश इस बात पर सहमत हैं कि परस्पर व्यापार में आपसी लाभ तथा जरूरतों को सम्मुख रखते हुए आगे बढ़ाने की दिशा में प्रयत्न किए जाने चाहिए। भारत के वाणिज्य मंत्री प्रो. चट्टोपाध्याय ने आशा व्यक्त की कि इस समझौते से भारत-अफगान व्यापार में अधिक वृद्धि होगी तथा पारस्परिक आर्थिक सहयोग बढ़ेगा।[130] जिस समय भारत-अफगानिस्तान

126. हिन्दुस्तान टाइम्स, 3 सितम्बर, 1975
127. वैदिक, वेद प्रताप "भारत-अफगान सांस्कृतिक सम्बन्ध, सहयोग, समानताएँ" नवभारत टाइम्स (नई दिल्ली), 5 जुलाई, 1976
128. "इण्डो-अफगान ट्रेड एग्रीमेन्ट", फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 21, अंक 9, सितम्बर 1975, पृ. 219
129. वही
130. वही

समझौता सम्पन्न हुआ, उस समय भारत द्वारा अफगानिस्तान को निर्यात सामान में चाय, गर्म मसालें, रबर-टायर, दवाइयां, सूत और सूती कपड़े, पटसन के उत्पादन, जूते तथा धातु उत्पादन की वस्तुएं आदि प्रमुख थीं। अफगानिस्तान से आयातित वस्तुओं में ताजे फल, सूखा मेवा, क्यूमिन, बीज तथा जड़ी बूटियाँ इत्यादि थीं।

28 अक्तूबर से 2 नवम्बर, 1975 तक भारतीय विदेशमंत्री श्री वाई.वी. चव्हाण ने अफगानिस्तान की राजकीय यात्रा की तथा भारत एवं अफगानिस्तान में व्यापक आर्थिक सहयोग के विभिन्न पहलुओं पर दोनों देशों के नेताओं में परस्पर बातचीत हुई। 30 अक्तूबर, 1975 को काबुल के बाहरी क्षेत्र में भारतीय वित्तीय व प्रौद्योगिक सहयोग से निर्मित एक औद्योगिक बस्ती (इण्डस्ट्रीयल एस्टेट) को भारतीय विदेश मंत्री ने अफगान सरकार को सौंप दिया।[131] अफगानिस्तान में अपने किस्म की पहली 80 करोड़ रूपये की उक्त योजना के प्रथम चरण के पूरा होने के अवसर पर बोलते हुए श्री चव्हाण ने कहा कि "भारत -अफगानिस्तान मैत्री की यह सबसे सुन्दर मिसाल है"।[132] भारतीय विदेश मंत्री ने आशा व्यक्त की कि इससे अफगानिस्तान की जनता को नए अवसर उपलब्ध होंगे तथा देश के द्रुत औद्योगिक विकास में भारी सहायता मिलेगी। उन्होंने कहा कि विकासशील देशों के लिए इस प्रकार की औद्योगिक बस्ती बहुत उपयोगी होती है, क्योंकि इससे लघु उद्योगों को आश्रय मिलता है।

भारतीय विदेशमंत्री का स्वागत करते हुए अफगानिस्तान के उद्योग व खान मंत्री श्री मोहम्मद तबीब आसिफी ने कहा कि उक्त योजना का अफगानिस्तान के समग्र औद्योगिकीकरण की दिशा में महत्वपूर्ण स्थान है। अफगान मंत्री ने मात्र दो वर्षो की अवधि में योजना का प्रथम चरण पूरा कर देने के लिए भारत के तकनीशियनों की भूरि-भूरि प्रशंसा की।[133] इस औद्योगिक बस्ती की नींव जून 1973 में रखी गई, जिसकी रूप रेखा भारतीय विशेषज्ञों द्वारा तैयार की गई थी। अफगान सरकार इस बस्ती में प्लास्टिक, सूती कपड़े, आटोमोबाईल्स की मरम्मत, रबर व खाने के उत्पादक तैयार करने वाले उद्योग लगाने पर विचार कर रही थी।

भारतीय विदेशमंत्री की अफगान यात्रा के दौरान भारत-अफगान संयुक्त आर्थिक आयोग की चौथी बैठक भी सम्पन्न हुई। जिसमें भारतीय दल का नेतृत्व श्री चव्हाण ने तथा अफगानिस्तान का नेतृत्व वहाँ के योजना मंत्री ए.एल. अहमद खुर्रान ने किया। आयोग की योजना एवं कार्यान्विन कमेटी द्वारा दोनों देशों ने आर्थिक तकनीकी एवं विज्ञान के क्षेत्रों में परस्पर सहयोग बढ़ाने

---

131. हिन्दुस्तान टाइम्स, 31 अक्टूबर, 1975
132. वही
133. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 30 अक्टूबर, 1975

सम्बन्धी दिये गए सुझावों पर भी विचार किया।[134] संयुक्त आयोग में विचार-विमर्श के बाद दोनों देशों ने एक आर्थिक समझौते पर हस्ताक्षर किए। इस समझौते के अन्तर्गत शिशु-स्वास्थ्य संस्थान के संचालन में भारत ने आगामी दो वर्षों तक सहायता जारी रखने का वायदा किया। साथ ही इसमें अफगानिस्तान में नाक, कान व गले की बीमारियों के संस्थान की भारत के सहयोग से स्थापना करने का भी प्रविधान था।[135] भारत, कन्धार, हैरात और मजारे शरीफ में अतिरिक्त औद्योगिक बस्तियों का सर्वेक्षण करने तथा भूगर्भ विज्ञान और खनिज के क्षेत्र में और सम्भावनाओं का पता लगाने के लिए विशेषज्ञों का एक दल अफगानिस्तान भेजेगा।[136] समझौते के अनुसार भारत कृषि अनुसंधान संस्थान स्थापित करने में भी उसे सहयोग प्रदान करेगा। भारत के सरकारी उद्यम जल एवं बिजली विभाग सलाहकार सेवा ने अफगानिस्तान के जल विद्युत विभाग के इन्जीनियरिंग सलाहकार सेवा के साथ सलमा डैम योजना के तहत एक समझौता किया, जिसके अन्तर्गत भारतीय निर्देशन व निरीक्षण द्वारा अफगानिस्तान में बहु आयामी योजना तैयार की जा सकेगी। 19 मार्च को वेपको (वाटर एण्ड पावर डवलपमेन्ट कन्सलटैन्सी सर्विस लिमिटेड) के चेयरमैन और सलमा डैम के कार्यकारी अध्यक्ष एम.क्यू. नईम ने इस समझौते पर हस्ताक्षर किए। यह बड़ी योजना देश के सिंचाई व बिजली विभाग के अन्तर्गत है। इस सलाहकार सेवा के अन्तर्गत प्रारम्भिक अनुसंधान, योजना निर्माण की विस्तृत व्याख्या व देख-रेख आदि कार्यो में लगभग 4 मिलियन रूपये खर्च होंगे।[137]

राष्ट्रपति दाऊद ने भारतीय राष्ट्रपति फखरूद्दीन अली अहमद को धन्यवाद पत्र भेजा, जिसमें अफगानिस्तान में हुए भूस्खलन और बाढ़ की स्थिति में भारतीय रेडक्रास संघ द्वारा हवाई जहाजों से 50 हजार मूल्य की राहत सामग्री व दवाइयाँ भेजे जाने पर भारतीय जनता व सरकार के सहयोग की सराहना की गई।[138]

श्रीमती गांधी ने जुलाई, 1976 में काबुल की यात्रा के दौरान जहाँ राष्ट्रपति दाऊद के शासन काल में हुई प्रगति की प्रशंसा की, वहीं उन्होंने कहा कि कारखाने विदेशी सहायता व देख-रेख में बनाये जा सकते हैं, लेकिन सही उन्नति व भरोसा तभी आता है, जब तकनीकी व प्रबन्ध सम्बन्धी ताकत (योग्यता) अपनी हो। पिछले 25 साल से भारत में वैज्ञानिक तथा योजना अभियन्ताओं (इन्जीनियर्स) ने तकनीकी क्षेत्र में अत्यधिक प्रगति की है। इसलिए भारतीय अर्थव्यवस्था

---

134. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 21, अंक 11, नवम्बर, 1975, पृ. 287
135. वही
136. दैनिक हिन्दुस्तान, 2 नवम्बर, 1975
137. नेशनल हेराल्ड, 23 मार्च, 1976
138. पैट्रीआट, 5 मई, 1976

उस स्थिति में पहुँच गई है जहाँ से वह गति से आगे बढ़ने में समर्थ है। औद्योगिक उत्पादन में भी संतोषजनक प्रगति हुई है।[139] प्रकारान्तर से भारत ने अफगानिस्तान को इसी दिशा में आगे बढ़ने की प्रेरणा दी और पूर्ण सहयोग का आश्वासन भी दिया। अफगानिस्तान में तेल उद्योग के विकास के लिए भूगर्भ वेत्ताओं और अभियन्ताओं को प्रशिक्षण देने का समझौता भारत के साथ हो चुका हैं। अफगानिस्तान में गैस के विशाल भण्डार हैं, लेकिन तेल का पता अभी कम ही चला है। इसलिए तेल की खुदाई और इसे साफ करने के लिए अफगानिस्तान अपने विशेषज्ञ प्रशिक्षित करना चाहता है। इस सम्बन्ध में वह भारत से सहायता की अपेक्षा करता है। लघु पनबिजली योजनाओं में भी भारत अफगानिस्तान की मदद कर रहा है।[140] इसके अतिरिक्त भारतीय उपकरणों द्वारा प्रतिपादित बिजली के सामान कैंची, छुरी, चीनी व काँच के बर्तन तथा उनसे निर्मित अन्य सामान व भारतीय फिल्में अफगानिस्तान भेजने का प्रस्ताव रखा गया।[141]

श्रीमती गांधी ने कहा कि बड़े देश अपनी शर्तो को ध्यान में रखकर ही सहायता कार्यक्रम का संचालन करते हैं। इसके विपरीत भारतीय नीति द्वारा विकासशील व गुटनिरपेक्ष देशों को आपसी सहायता के आधार पर आगे बढ़ने का अवसर मिलता है। उन्होंने एक संवाददाता सम्मेलन में कहा कि विकासशील देशों की आर्थिक प्रगति विकसित राष्ट्रों के भी हित में है।[142] क्योंकि इससे इन्हें विस्तृत बाजार मिलेगा तथा शान्ति की स्थापना में भी मदद मिलेगी।[143] उन्होंने आगे कहा कि कठिन परिस्थितियों में भी सदैव भारत अफगान जनता की सहायता के लिए प्रयास कर रहा है।[144] अफगानिस्तान में भारतीय सहयोग से चल रही विकास की योजनाओं से दोनों देशों के सम्बन्धों में प्रगाढ़ता आ रही है।[145] वे भारत से विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग की इच्छा रखते हैं, ताकि अफगान जनता मेहनत व परिश्रम से देश को सफलता की ओर ले जा सके।[146]

श्रीमती गांधी की यात्रा समाप्ति पर जारी की गई संयुक्त विज्ञप्ति में दोनों देशों के नेताओं ने परस्पर द्विपक्षीय सहयोग के क्षेत्र का अधिक विस्तार करने तथा अफगानिस्तान की आगामी सप्तवर्षीय योजना में भारत द्वारा मदद किए जाने के प्रश्न पर अपनी सहमति व्यक्त की।[147] उन्होंने

---

139. हिन्दुस्तान, 7 जुलाई, 1976
140. हिन्दुस्तान, 5 जुलाई, 1976
141. हिन्दुस्तान टाइम्स, 8 जुलाई, 1976
142. पैट्रीआट, 5 जुलाई, 1976
143. मिश्र, विनोद, "विकासशील देशों की आर्थिक प्रगति से उन्नत देशों का भी हित-न्याय व समानता पर आधरित आर्थिक व्यवस्था में सहयोग देने की मांग", हिन्दुस्तान, 7 जुलाई, 1976
144. द टाइम्स आफ इण्डिया, नेशनल हेराल्ड, 7 जुलाई, 1976
145. स्टेट्समैन (दिल्ली), 6 जुलाई, 1976
146. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 22, अंक 7, जुलाई 1976, पृ. 195-200
147. हिन्दुस्तान टाइम्स, 8 जुलाई, 1976

संयुक्त आर्थिक आज्ञापत्र के लाभप्रद परिणामों के प्रति संतोष व्यक्त किया।

मई, 1977 में व्यापार सम्बन्धों पर विचार-विमर्श के लिए अफगानिस्तान से विदेश व्यापार एवं व्यवसाय विभाग के अध्यक्ष जी.एच. बयाल के नेतृत्व में एक प्रतिनिधि मण्डल भारत आया। परस्पर विचार -विमर्श के लिए भारत की ओर से उसका नेतृत्व वाणिज्य मंत्रालय के उपसचिव श्री ए.एन. वर्मा ने किया। अफगान प्रतिनिधि मण्डल ने 23 मई को व्यापार सम्बन्धों में तत्कालीन विषयों पर दोनों देशों के हित के लिए परस्पर विचार-विमर्श किया। यह व्यापार व्यवस्था भारत और अफगानिस्तान के बीच 3 सितम्बर, 1975 में लिए गए समझौते पर आधारित है, जो तीन वर्ष के लिए किया गया था। किन्तु इसमें पिछले समझौते के मुताबिक 8 प्रतिशत मूल्य बढ़ा दिए गए। अफगानिस्तान देश में उत्पादित वस्तुऐं फल, सूखे मेवे, हींग इत्यादि भारत भेजेगा और भारत अफगानिस्तान को चाय, काफी, चीनी तथा तकनीकी आधुनिक उपकरण आदि भेजेगा। वास्तव में भारत अपने व्यापार के निर्यात का बड़ा हिस्सा (लगभग 50 प्रतिशत) अफगानिस्तान को भेजता रहा है।[148]

उद्योग मंत्री अब्दुल तवाब आसिफी काबुल से बैंकाक गए। वहाँ एशिया में शान्ति व स्थिरता के लिए आर्थिक व सामाजिक अधिकार सम्मेलन (कान्फ्रेन्स ऑफ द एकोनोमिक एण्ड सोशल कमीशन फॉर एशिया एण्ड द पैसेफिक) में भाग लेने के बाद नई दिल्ली पहुँचे। इस अवसर पर जिन विभिन्न क्षेत्रों पर दोनों देशों के बीच सहयोग के लिए विचार-विमर्श किया गया। उनमें विशेष रूप में अफगानिस्तान में वाल्ख और कन्धार क्षेत्रों में औद्योगिक केन्द्रों की स्थापना, तेल व प्राकृतिक गैस के अन्वेषण की जिज्ञासा, स्टील, सीमेन्ट और कपड़े के उद्योगों की उन्नति करना इत्यादि शामिल है। अफगान मंत्री ने उद्योगों के विकास और औद्योगिक क्षेत्रों के निर्माण में भारत सरकार द्वारा सहायता प्राप्त करने के उद्‌देश्य से आकर्षित व्याख्या की।[149] श्री आसिफी ने कहा कि औद्योगिक क्षेत्रों के विकास व उन्नति के लिए अफगानिस्तान में मालगोदाम तथा भूमि क्षेत्रफल की कमी नहीं है। उन्होंने भारत से योग्य व निपुण प्रशिक्षण व्यवस्था का प्रावधान रखा जिसे भारत सरकार ने स्वीकार किया। साथ ही कहा गया कि अफगानिस्तान में भारतीय भूगर्भ शास्त्री विकास के क्षेत्र में कार्य करेंगे। भारत द्वारा औद्योगिक व आर्थिक सहयोग के प्रति अफगानिस्तान में प्रसन्नता व्यक्त की गई।

भारत के साथ पाकिस्तान तथा अफगानिस्तान भी नशीली दवाइयों के विरोधी रहे हैं। 1974 तथा 1976 में पाकिस्तान तथा अफगानिस्तान में इसे रोकने के अत्यधिक प्रयास किए गए

---

148. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 22, अंक 5, मई, 1977, पृ. 77
149. जयसिंह, हरी, "ग्रोईंग इण्डो-अफगान एमिटी", ट्रिब्यून (चण्डीगढ़), 2 सितम्बर, 1977

किन्तु दोनों देशों की भौगोलिक स्थिति इसमें सबसे बड़ी बाधा रही है।[150]

1977 में जनता पार्टी की स्थापना के बाद यह आशा की गई कि सरकार पड़ोसी देशों के प्रति ऐसी मैत्रीपूर्ण नीति का सूत्रपात करेगी, जिससे या तो अफगानिस्तान को व्यापार में सुगमता के लिए पाकिस्तान के जरिए थलमार्ग की सुविधा मिलेगी या फिर पश्चिमी अफगानिस्तान से लेकर ईरान के बन्दर-ए-अब्बास तक एक वैकल्पिक सड़क का निर्माण हो जाएगा। वास्तव में इस आशा को सफलता के शिखर तक पहुँचाने का काम अफगान राष्ट्रपति श्री दाऊद की 1975 की भारत यात्रा तथा श्रीमती गांधी की 1976 की काबुल यात्रा के दौरान शुरू हो गया था। ईरान के शाह ने ईरान, अफगानिस्तान, पाकिस्तान और भारत के सहयोग से साझा व्यापार बनाने का जो प्रस्ताव रखा था, उसके ढांचे में यह बात अच्छी तरह फिट हो सकती थी।[151] यही कारण था कि विदेशमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने काबुल यात्रा के दौरान अफगानिस्तान को आर्थिक तकनीकी व अन्य क्षेत्रों में सहयोग देने का वचन दिया।[152] इसी उद्देश्य से उन्होंने काबुल में अफगान राष्ट्रपति श्री दाऊद, विदेश मंत्री श्री वहीद अब्दुल्ला के अतिरिक्त वाणिज्य मंत्री मोहम्मद खान जलालार व उद्योगमंत्री श्री अब्दुल तवाब आसिफी, श्री जुमा मुहम्मदी आदि से आपसी सहयोग के मुद्दों पर बातचीत की। भारत की ओर से विदेश मंत्री श्री वाजपेयी के साथ विचार-विमर्श में विदेश सचिव जे. एस. मेहता, काबुल में भारतीय राजदूत एस.के.सिंह और विदेश विभाग के दो महासचिव डा. आई.पी.सिंह और आर.के.जेरथ भी सहायक रहे।

श्री वाजपेयी की यात्रा समाप्ति पर संयुक्त विज्ञप्ति में विकासशील देशों के विकास में उत्पन्न कठिनाइयों पर दोनों देशों ने समान मत व्यक्त किए।[153] भारत-अफगानिस्तान के मध्य व्यापार बढ़ाने में सड़क सम्पर्क को लेकर पाकिस्तान की ओर से अभी कुछ बाधा है, जिसके कारण कराची बन्दरगाह पर बहुत विलम्ब होता है, इस प्रश्न पर भी दोनों नेताओं के मध्य चर्चा हुई।[154] अपनी 4 दिन की यात्रा समाप्ति के पश्चात् भारत आने पर हवाई अड्डे पर श्री वाजपेयी ने संवाददाताओं से बातचीत में कहा कि भारत सरकार अफगानिस्तान में तीन नए औद्योगिक केन्द्रों की स्थापना करने पर विचार कर रही हैं।[155] उन्होंने कहा कि अफगानिस्तान में 120 भारतीय

---

150. क्राइसिस इन द सबकन्टीनेन्ट अफगानिस्तान एण्ड पाकिस्तान हियरिंग्स बिफोर द सब कमेटी ऑन एशियन एण्ड पेसिफिक अफेयर्स आफ द कमेटी ऑन फॉरेन अफेयर्स, हाउस ऑफ द रिप्रेजेन्टेविस 96, कांग्रेस प्रथम सत्र, 15 मई, सितम्बर 26, 1978, वाशिंटन 1980
151. वैदिक, वेद प्रताप, "भारतीय विदेश नीति नये दिशा संकेत", (1980 दिल्ली), पृ. 38-39
152. इण्डिया एण्ड फॉरेन रिव्यू, खण्ड 14, अंक 22, 15 सितम्बर, 1977, पृ. 6-7
153. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 23, अंक 9, सितम्बर 1977, पृ. 149-50
154. हिन्दुस्तान, 7 सितम्बर, 1977
155. स्टेट्समैन, 7 सितम्बर, 1977

विशेषज्ञ विभिन्न क्षेत्रों में भारत सरकार द्वारा आरम्भ परियोजनाओं पर संतोषजनक कार्य कर रहे हैं, जिनके कार्य की प्रशंसा स्वयं अफगान सरकार ने की है।[156]

श्री वाजपेयी ने अपनी वामियान यात्रा के बारे में बताया कि वहाँ विश्व की विशालकाय बौद्ध मूर्तियों का जीर्णोद्धार भारतीय पुरातत्व विशेषज्ञ द्वारा किया गया है। उन्होंने नवीनीकरण के पश्चात् इन मूर्तियों को औपचारिक रूप से अफगान सरकार को भेंट किया।[157] उन्होंने कहा कि इन विशालकाय मूर्तियों की छाया में खड़े होकर दोनों देशों की ऐतिहासिक और सांस्कृतिक निकटता की याद ताजा होती है। उनके प्राचीन मैत्री सम्बन्ध बुद्ध की मूर्तियों के समान हर तूफान का मुकाबला करने में समर्थ होंगे।

अफगान प्रतिनिधि मण्डल की भारत यात्रा: भारत-अफगान आर्थिक सहयोग

दिसम्बर 1977 में नई दिल्ली में परस्पर व्यापार सम्बन्धों के विस्तार के लिए वाणिज्य मंत्री मोहम्मद खान जलालार ने भारतीय केन्द्रीय वाणिज्य मंत्री श्री मोहन भाटिया के साथ जल आपूर्ति, सहयोग की नई महत्वपूर्ण नीतियों, निर्यात की जाने वाली वस्तुओं के उत्पादन व उपभोक्ताओं की रूचियों पर बातचीत की। उन्होंने कहा कि दोनों देशों की भौगोलिक समीपता को देखते हुए उनका देश भारत से अधिक से अधिक मात्रा में आयात करना चाहता है।[158] श्री जलालार ने उद्योग व खान मंत्री श्री जार्ज फर्नाडीज से भी बातचीत की।

आर्थिक और तकनीकी सहयोग सम्बन्धी भारत-अफगान संयुक्त आयोग की पांचवीं बैठक में विदेशमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने कहा कि भारत सामान्यतया सद्भाव के आधार पर सहयोग देने के लिए तैयार है। भारत द्वारा काबुल में नाक, कान तथा गले की चिकित्सा का केन्द्र खोलने में मदद दिए जाने पर पुनर्विचार करते हुए दोनों देशों के नेताओं ने तय किया कि आरम्भ में इस केन्द्र में 50 शैय्या होंगी। भारत विशेषज्ञ व शिक्षक आदि भी भेजेगा। श्री वाजपेयी ने कहा कि उनके लिए आवास व उनके बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था अफगान सरकार द्वारा की जानी चाहिए।

श्री जलालार ने कहा कि उनका देश अपने औद्योगिक व आर्थिक विकास में भारत से अधिक से अधिक मदद लेने को उत्सुक है। उनके अपने साधन सीमित हैं। इसलिए वे विदेशी मदद की अधिक अपेक्षा करते है। वे लघु उद्योगों की स्थापना को प्राथमिकता दे रहे हैं, जिससे

---

156. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, देखिए क्र. 153, पृ. 147
157. रेड्डी, जे. के., 'ग्रेट स्कोप फॉर इन्क्रीज्ड कोऑपरेशन विद काबुल', द हिन्दू (मद्रास), 7 सितम्बर, 1977, इण्डियन एक्सप्रेस, 7 सितम्बर, 1977
158. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 23, अंक 12, दिसम्बर 1977, पृ. 251-52

स्थानीय कच्चा माल का उपयोग हो सके और रोजगार बढ़े। पिछले चार-पांच वर्षो में उनके देश में आर्थिक प्रगति को बल मिला है। इसमें भारत का सहयोग बहुत ही महत्वपूर्ण तथा उपयोगी रहा है। वे भारत से अधिक से अधिक विशेषज्ञ लेना चाहते हैं। साथ ही उनके विशेषज्ञों को भी भारत में प्रशिक्षण की सुविधा मिलनी चाहिए।[159]

श्री जलालार ने कहा कि भारत के सुझाव के अनुसार वह औद्योगिक बस्तियों की स्थापना बारी-बारी से करने के लिए तैयार है।[160] उन्होंने आश्वासन दिया कि भारतीय विशेषज्ञों व शिक्षकों के आवास व उनके बच्चों की शिक्षा की सुविधा का ख्याल किया जाएगा। उनका देश भारत के साथ अपने व्यापार को बढ़ाना चाहता है। बैठक की समाप्ति पर श्री वाजपेयी ने कहा कि यद्यपि अभी साधनों पर बहुत दबाव है, फिर भी हम अपने मित्र पड़ोसी देश के आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में यथा सम्भव सहायता करने को तैयार हैं।[161]

3 मार्च, 1978 को अफगान राष्ट्रपति दाऊद की भारत यात्रा पर राष्ट्रपति श्री नीलम संजीव रेड्डी ने कहा कि आपके देश में विभिन्न क्षेत्रों में विकास के मार्ग में हो रही प्रगति तथा वैज्ञानिक व तकनीकी क्षेत्र में विश्व के अन्य देशों के साथ बढ़ने की चाह को देखते हुए ही भारत अफगानिस्तान की उन्नति व चहुमुखी विकास के लिए निरन्तर जागरूक रहा है। अफगान राष्ट्रपति ने प्रत्युत्तर में भारत द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में स्वार्थरहित सहयोग व सहायता दिए जाने पर प्रसन्नता व्यक्त की।[162]

प्रधानमंत्री श्री देसाई ने दाऊद से अपनी वार्ता में कहा कि आज दोनों देश विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की सहायता से प्राकृतिक संसाधनों के प्रयोग में प्रयत्नशील हैं। ऐसा करते हुए हम अपनी परम्परागत संस्कृति और मूल्यों को बनाए रखने का भी प्रयास कर रहे हैं। दोनों ही देशों ने भूमि सुधार, ग्राम विकास, कृषि उत्पादन और औद्योगिक उत्पादन के एक विस्तृत कार्यक्रम को आरम्भ किया है। हमें आज विश्व में अपनी सुरक्षा तथा भविष्य के लिए आर्थिक विकास के क्षेत्र में अपना भविष्य उज्जवल बनाना है।[163]

अफगान राष्ट्रपति दाऊद ने कहा कि भारत से व्यापार बढ़ाने तथा इस क्षेत्र के देशों के आपसी सहयोग का विस्तार करने के रास्ते में पाकिस्तान से पर्याप्त परागमन सुविधाएं न मिलना बड़ी बाधा है। इस समस्या के समाधान के लिए वे पाकिस्तान यात्रा पर पाक नेताओं से बातचीत

---

159. नवभारत टाइम्स (नई दिल्ली), 13 दिसम्बर, 1977
160. ट्रिब्यून (चण्डीगढ़), 13 दिसम्बर, 1977
161. हिन्दुस्तान (नई दिल्ली), 13 सितम्बर, 1977
162. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 24, अंक 3, मार्च 1978, पृ. 117-122
163. हिन्दुस्तान (नई दिल्ली), 4 मार्च, 1978

करेंगे। उन्होंने संवाददाता सम्मेलन में बताया कि इस स्थल मार्ग से व्यापार सम्बन्धों द्वारा पाकिस्तान को भी लाभ होगा।

भारतीय सहयोग से बन रहे तापीय विद्युत परियोजना के बारे में श्री दाऊद ने बताया कि काबुल के निकट यह बिजलीघर 40,000 किलोवाट क्षमता का होगा, जो तीन महीने के अन्दर बनकर तैयार हो जाएगा। इसके साथ ही भारत सरकार नहरें, नलकूप लगाने की योजनाओं में सहयोग देने पर विचार कर ही है।[164] 4 मार्च, 1978 को नई दिल्ली में जारी की गई प्रेस विज्ञप्ति में कहा गया कि भारत ब्याज रहित ऋण पर 50 हजार मीटरी टन अनाज अफगानिस्तान को देगा।[165] अपने देश में अनाज की कमी के कारण भारत से गेहूँ लेने के समझौते की पुष्टि करते हुए दाऊद ने बताया कि गेहूँ पाकिस्तान के स्थल मार्ग से जाएगा। अभी इस सम्बन्ध में पाकिस्तान से समझौता नहीं हो सका है।[166] परस्पर वार्ता में कहा गया कि अफगानिस्तान भारत के द्वारा अनाज सौंपे जाने के दो वर्ष बाद उसे लौटा देगा। 40 मिनट की दाऊद-मोरारजी की वार्ता के पश्चात् दोनों देशों के प्रतिनिधि मण्डलों की वार्ता करीब सवा घंटे चली, जिसमें सहयोग की अनेक योजनाओं पर विचार किया गया। तापीय बिजली घर बनाने का प्रस्ताव एक अध्ययन दल को सौंप दिया गया और कहा गया कि अफगानिस्तान में गैस व कोयले के भण्डार मिलने से इसके निर्माण में सुविधा होगी।

भारतीय नेतृत्व द्वारा अफगानिस्तान के विकास व औद्योगिकीकरण में हर सम्भव सहायता का आश्वासन देने पर राष्ट्रपति दाऊद ने आशा प्रगट की कि भारत के तकनीकी अनुभव व क्षमता से अफगानिस्तान को लाभ पहुँचेगा।[167] उन्होंने भूवेष्टित देशों की समस्याओं को व्यक्त करते हुए[167] अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों से आग्रह किया कि वे भूवेष्टित देशों की सहायता के लिए कारगर कदम उठाएं। श्री दाऊद ने अपने भाषण में कहा कि जब तक आर्थिक सम्पदा का न्यायोचित बटवारा नहीं होगा, तब तक नई अर्थव्यवस्था सफल नहीं हो सकती।[169] पश्चिमी देश अपनी प्राविधि तथा औद्योगिक नीति से संसार के समस्त संसाधनों पर एकाधिकार कर उनसे अपना आर्थिक साम्राज्य स्थापित करते रहे हैं।[170]

---

164. इन्टरनेशनल स्टडीज, खंड 18, अंक 31, जुलाई-सितम्बर, 1978
165. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 24, अंक 3, मार्च 1978, पृ. 122
166. हिन्दुस्तान (नई दिल्ली), 5 मार्च, 1978
167. हिन्दुस्तान टाइम्स, 7 मार्च, 1978
168. अम्रिता बाजार पत्रिका, (कलकत्ता), 9 मार्च, 1978
169. पेट्रीयाट (दिल्ली), 7 मार्च, 1978
170. आज (वाराणसी), 11 मार्च, 1978

दोनों देशों के प्रतिनिधि मण्डलों के मध्य अफगानिस्तान के आर्थिक विकास में भारत के सहयोग सम्बन्धी चार प्रस्तावों पर विचार-विमर्श हुआ; जिसमें तापीय विद्युत उत्पादन, औद्योगिक संस्थान, इन्जीनियरिंग उद्योग व जल स्त्रोत योजना मुख्य है। अफगानिस्तान से निर्यात की जाने वाली वस्तुओं में से 90 प्रतिशत कृषि उत्पाद हैं। जिसमें रूई, ऊन, तिलहन, फल व मेवा प्रमुख हैं। अफगानिस्तान में बकरियां, ऊंट तथा भेड़ें व मेमने पाए जाते हैं। इसलिए वहाँ मुख्य रूप में भेड़े व मेमनें के बालों का तथा प्राकृतिक गैस का निर्यात किया जाता है। खनिज पदार्थो में तांबा, जस्ता, कोयला, लोहा, चांदी व तेल उपलब्ध हैं। यद्यपि अफगानिस्तान का व्यापार अमेरिका, रूस, चीन व भारत से है, परन्तु रूस व भारत से उसका व्यापार महत्वपूर्ण है। वहां कपड़े की मिलों, सीमेंट के कारखानों, नहरों व राज मार्गो का निर्माण कार्य पूरे वेग से चल रहा है। अफगानिस्तान एक विकासोन्मुख देश है।[171] विज्ञप्ति में दोनों देशों के बीच द्विपक्षीय सहयोग के क्षेत्रों को अधिक विस्तृत किए जाने पर बल दिया गया।

सांस्कृतिक समझौता

18 अप्रैल, 1978 को भारत और अफगानिस्तान के बीच सांस्कृतिक समझौता हुआ। जिसमें शिक्षा, वैज्ञानिक शोध, संचार माध्यम, संस्कृति व खेलों से सम्बन्धित विषयों पर विचार-विमर्श हुआ। भारत में 400 अफगान विद्यार्थियों की उच्चतर शिक्षा का भी प्रावधान रखा गया। आज अफगानिस्तान में बड़ी संख्या में भारतीय विशेषज्ञ और तकनीशियन देश की प्रगति के लिए कार्य कर रहे हैं।[172]

राष्ट्रपति दाऊद के काल में सोवियत रूस से अफगानिस्तान को अधिक मात्रा में सहायता मिलनी आरम्भ हो गई थी।[173] 1973 से 1978 के बीच अफगानिस्तान के सोवियत संघ के साथ सहयोग व सहायता के लगभग 30 समझौते हुए। राष्ट्रपति दाऊद ने सेना व नौसेना में नवीनीकरण के लिए सोवियत सहायता की इच्छा व्यक्त की।[174] उन्होंने भारत से भी अपनी सेना में प्रशिक्षण के लिए सहायता की मांग की।[175] इन पांच वर्षों में भारत-अफगान सम्बन्धों को नया आधार मिला। भारत से व्यापार व आवश्यक वस्तुओं के आदान-प्रदान के लिए अफगानिस्तान के पाकिस्तान

---

171. आज (वाराणसी), 11 मार्च, 1978
172, आनन्द, जे. पी., "अफगान कनैक्शन", द ट्रिब्यून (चन्डीगढ़), 27 सितम्बर 1978
173. डेविड, "अफगानिस्तान इन टरमौल", इन्टरनेशनल अफेयर्स, खंड 59, अंक 1, 1980, पृ. 18
- कुवाटरा, आर. डी., "इण्डिया एण्ड अफगानिस्तान", नेशनल हेराल्ड, 3 मार्च 1978
174. विवेकानन्द, वी., "अफगानिस्तान इनवेंशन व्यूः फ्रॉम इण्डिया", इण्डिया पैसिफिक कम्युनिटी (9), 1980
175. रहमान, एम, ए., "प्राव्लम्स ऑफ नॉन एलाइनमेण्ट टुवर्ड्स ए सोल्यूशन ऑन द प्रॉब्लम ऑफ इण्डिया एण्ड अफगानिस्तान", जनरल ऑफ इण्टरनेशनल अफेयर्स (1980), पृ. 50

व ईरान के साथ सम्बन्धों में भी सुधार हुआ। इस काल में भारत-अफगान व्यापारिक सम्बन्ध 484.4 मिलियन रूपये रहा, जिसमें कुल 52.4 मिलियन रूपये का व्यापार अफगानिस्तान के पक्ष में रहा। यद्यपि भारत ने कोई बड़े अनुदान या ऋण को नहीं बढ़ाया, किन्तु विभिन्न क्षेत्रों में विकास के लिए अफगानिस्तान को 130 विशेषज्ञ भेजे।[176]

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि यद्यपि भारत और अफगानिस्तान के सांस्कृतिक सम्बन्ध सदियों पुराने हैं, किन्तु उनके व्यापार सम्बन्ध अधिक विकसित नहीं हो सके। दोनों देशों में व्यापार के विस्तार में कमी का प्रमुख कारण जहाँ अफगानिस्तान का भूपर्वतीय देश होना तथा पाकिस्तान द्वारा आवागमन में अड़चनें उत्पन्न करना है, वहीं इसका एक अन्य कारण अफगानिस्तान का घरेलू व आवश्यक वस्तुओं का छोटा बाजार होना भी है।[177]

(घ) गुटनिरपेक्ष आन्दोलन व भारत-अफगानिस्तान

गुटनिरपेक्ष आन्दोलन आज अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को सामान्य व रचनात्मक बनाने में प्रभावशाली भूमिका निभा रहा है। गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों ने अपने आन्दोलन के माध्यम से विश्व राजनीति की विभिन्न समस्याओं के संदर्भ में अपने सुझाव प्रस्तुत करके अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित किया है। पहले की भाँति आठवें दशक में भी अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के क्षेत्र में भारत को गुटनिरपेक्ष देशों के समूह में एक प्रमुख स्थान प्राप्त रहा। वह सकारात्मक तटस्थता की नीति का पालन करते हुए गुटनिरपेक्ष देशों के आन्दोलन में सक्रिय भाग लेता रहा और उपनिवेशवाद, नस्लवाद, वर्ण भेद और साम्राज्यवाद के खिलाफ न्यायोचित दृष्टिकोण अपनाते हुए तनाव शैथिल्य, स्थिर व टिकाऊ शान्ति की स्थापना व निरस्त्रीकरण का समर्थन करता रहा।[178]

अफगान गणतन्त्र भी प्रारम्भ से ही गुटनिरपेक्ष आन्दोलन की बैठकों में अपनी सकारात्मक एवं कार्यकारी अभिरूचियों को प्रस्तुत करता रहा है। 7 सितम्बर, 1973 में अल्जीरिया में होने वाले गुंटनिरपेक्ष देशों के सम्मेलन में भारत में स्थित अफगान राजदूत अब्दुर्रहमान पेजवाक को अफगान प्रतिनिधि मण्डल का प्रमुख बनाकर भेजा गया। जिसमें 7 मिलियन पख्तून जनता को अपनी भूमि अफगानिस्तान से अलग करने की समस्या पर चर्चा की गई। इस सम्मेलन में भारत की ओर से श्रीमती इन्दिरा गांधी ने भाग लिया।

---

176. वैदिक, वी. पी., "इण्डिया एण्ड अफगानिस्तान", इन्टरनेशनल स्टडीज, खंड 17, 1978, पृ. 31-39
177. कॉमर्स, खंड 126, अंक 324, 16 जून, 1973, पृ. 1205
178. कोतोव्स्की, ग्रि. ग्रि., "भारत का इतिहास", नेहरू के पथ के अनुसरण के लिए आंठवे दशक में भारत 1973-79, पृ. 774-75

10 मार्च, 1975 को अफगान राष्ट्रपति दाऊद की यात्रा पर भारतीय राष्ट्रपति फखरूद्दीन अली अहमद ने गुटनिरपेक्षता की नीति को दोनों देशों की विदेशनीति का आधार स्तम्भ बताते हुए कहा कि हमारा यह दृढ़ मत है कि गुटनिरपेक्षता एवं शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व का सिद्धान्त राष्ट्रों में न्यायपूर्ण विश्व व्यवस्था तथा लाभकारी सहयोग लाने के लिए बहुत जरूरी साधन है। उन्होंने आगे कहा कि यह दुर्भाग्यपूर्ण बात है कि कुछ ताकतें अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति व स्थिरता के लिए खतरा उत्पन्न कर रहीं हैं।[179] राष्ट्रपति दाऊद ने कहा कि अफगानिस्तान की विदेशनीति सदा ही सक्रिय गुटनिरपेक्षता तथा विश्व समस्याओं के निष्पक्ष निर्णय के सिद्धान्त पर आधारित रही है। उन्होंने कहा कि प्रत्येक ऐसा कदम जो इस आदर्श को कमजोर करने वाला हो अफगानिस्तान उसकी निन्दा करता है।[180] दोनों नेताओं ने गुटनिरपेक्ष देशों की एकता और अखण्डता पर बल देते हुए कोलम्बो में होने वाली आगामी गुटनिरपेक्ष आन्दोलन की बैठक की सफलता के लिए परस्पर सक्रिय सहयोग देने का वचन लिया।

अक्तूबर, 1975 में भारतीय विदेशमंत्री श्री चव्हाण ने अपनी काबुल यात्रा के दौरान विश्व में बढ़ती हुई अराजकता तथा अन्य कूटनीतिक समस्याओं के समाधान के लिए गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सिद्धान्तों को उपयोगी ठहराया।[181] गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सिद्धान्तों में; अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं में निर्णय देने की स्वतन्त्रता, सभी स्वतन्त्रता प्रिय देशों और राजनैतिक व सैनिक गठबन्धन से अलग देशों के साथ सकारात्मक मित्रता तथा लाभप्रद सहयोग आदि इसके आधार तत्त्व हैं।[182]

प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी की अफगान यात्रा पर उनकी राष्ट्रपति दाऊद से मुलाकात में दोनों नेताओं ने गुटनिरपेक्षता को बनाए रखने की इच्छा प्रगट करते हुए राष्ट्रों की सुरक्षा व शान्ति के लिए गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सिद्धान्तों व प्रमाणों के प्रति विश्वास व्यक्त किया।[183] उन्होंने कहा कि गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सदस्य राष्ट्रों को चाहिए कि वे विश्व के अन्य देशों को गुटनिरपेक्षता के महत्व के प्रति आकर्षित करें। वास्तव में, सम्पूर्ण विश्व में मानवता की सुरक्षा व शान्ति की स्थापना ही गुटनिरपेक्ष सिद्धान्तों की सार्थकता की पुष्टि करते हैं।[184]

श्रीमती गांधी का मत था कि गुटनिरपेक्ष देशों को एकजुट न होने देने के लिए बड़ी शक्तियों द्वारा प्रयास किए जा रहे हैं। अतः ऐसी स्थिति निर्गुट देशों को आपसी मतभेदों को

---

179. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 21, अंक 3, मार्च, 1975, पृ. 81
180. वही, पृ. 83
181. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 21, अंक 11, नवम्बर 1975, पृ. 287
182. हिन्दुस्तान टाइम्स, 8 जुलाई, 1976
183. पैट्रीआट, 5 जुलाई, 1976
184. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 22, अंक 7, जुलाई 1976, पृ. 196-97

आपस में हल करके संगठित होना जरूरी है।[185] 1976 में कोलम्बो में गुटनिरपेक्ष देशों के शासनाध्यक्षों की बैठक हुई जिसमें 25 सदस्यों की सहयोग बैठक में अफगानिस्तान को शामिल करने में भारत की प्रमुख भूमिका रही।[186]

भारत व अफगानिस्तान ने कभी भी गुटनिरपेक्षता की नीति को अपनी विदेशनीति से अलग नहीं होने दिया। यद्यपि कहा जाता है कि गुटबन्दी में शामिल हुए बिना सहायता मिलनी कठिन होती है, इस दृष्टि से भारत ने गुटनिरपेक्ष नीति को सफल बनाने के लिए आर्थिक व औद्योगिक सहयोग की नीति का प्रवर्तन किया है, इसके द्वारा विकासशील देशों को लाभान्वित होने का अवसर मिलेगा।[187]

1977 में श्रीलंका में हुए गुटनिरपेक्ष देशों के शीर्ष सम्मेलन में यह स्पष्ट हो गया था कि भावी अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में गुटनिरपेक्षता की यह नीति अपनी गहरी छाप अंकित करेगी, इसमें सन्देह नहीं है। इस शिखर सम्मेलन में आर्थिक तथा औद्योगिक सहयोग की योजना बनाई गई, जिसके अनुसार गुटनिरपेक्ष देश पश्चिमी देशों की प्रौद्योगिकी पर निर्भर न रहकर अब एशियाई-अफ्रीकी देशों की राष्ट्रीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर अपने विकास की ओर ध्यान देंगे।[188]

अप्रैल 1977 में भारत की राजधानी नई दिल्ली में गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों की समन्वय समिति की बैठक में निश्चय किया गया कि गुटनिरपेक्षता की नीति को माध्यम बनाकर राष्ट्रों में सद्भावना स्थापित की जाए,[189] ताकि आर्थिक व औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े गुटनिरपेक्ष देशों को परस्पर सहयोग की नीति के द्वारा विकास की ओर अग्रसर किया जा सके। अभी तक छोटे अविकसित देश आर्थिक व प्राविधिक सहायता के लिए बड़े देशों के मुखापेक्षी बने हुए हैं। अतः गुटनिरपेक्ष देशों को बड़े देशों की इस आर्थिक प्रभुता व शोषण को समाप्त करना है। यदि गुटनिरपेक्ष देश अपनी उपलब्ध सामग्री व कच्चे माल को विकसित देशों को न देकर उनका प्रयोग नए उद्योगों की स्थापना में करें तो विकासशील देशों को समुन्नत करने में बहुत सहायता मिल सकती है। किन्तु जब तक विकसित देश आर्थिक एवं औद्योगिक विषमता को कम करने के लिए सहमत नहीं होंगे तब तक नई विश्व अर्थ नीति एवं व्यवस्था स्थापित नहीं हो सकती। वास्तव में, जब

---

185. मिश्र, विनोद, "निर्गुटता के मूल आधार से हटना उचित नही ", हिन्दुस्तान (नई दिल्ली), 6 जुलाई, 1976
186. पैट्रीआट, 5 जुलाई, 1976
 - धर,ए.एन., "बाजपेई टु विजिट काबुल नैक्स्ट मन्थ", इण्डियन एक्सप्रेस (दिल्ली), 19 अगस्त, 1977
187. आज, (वाराणसी), 7 जुलाई, 1976
188. आज, 11 मार्च, 1978
189. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 7 सितम्बर, 1977, अम्रिता बाजार पत्रिका, 7 सितम्बर, 1977

सभी गुटनिरपेक्ष देश इस दिशा में एक मत होकर बल देगें तभी इस उद्देश्य की पूर्ति होगी।[190]

सितम्बर, 1977 में श्री वाजपेयी की काबुल यात्रा पर अफगान विदेश मंत्री श्री वहीद अब्दुल्ला ने कहा कि अफगानिस्तान गुटनिरपेक्षता के दर्शन में विश्वास रखता है और इसका उपयोग वह सभी देशों के साथ समान रूप से करता है।[191] मार्च 1978 में दाऊद की भारत यात्रा पर अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नों पर दोनों देशों ने महसूस किया कि निर्गुट देशों के ब्यूरो की मई में काबुल में होने वाली बैठक के लिए सहयोग के प्रश्नों तथा निरस्त्रीकरण को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।[192] श्री दाऊद ने कहा कि निर्गुट आन्दोलन का उद्देश्य ही सहयोग व शान्ति को स्थापित करना है।[193] इसलिए सभी देशों का ध्यान उसे ही पूरा करने की ओर होना चाहिए। अन्त में यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि जहाँ गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के प्रति प्राय: भारत व अफगानिस्तान में समानता बनी रही, वहीं अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के प्रति वे एक दूसरे के पूरक रहे हैं।

इस प्रकार दाऊद के काल में दोनों देशों के बीच प्रगाढ़ मैत्री सम्बन्ध कायम रहे। दोनों देशों के नेताओं की यात्राओं के आदान-प्रदान से परस्पर राजनैतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक सम्बन्धों को बढ़ाने में अत्यधिक बल मिला। भारत में इन्दिरा शासनकाल के पश्चात् जनता शासन ने भी पूर्व शासकों की नीति को जारी रखते हुए अफगानिस्तान से मधुर सम्बन्धों को बनाए रखा। राजनीति वेत्ताओं द्वारा तो यहाँ तक कहा गया कि जनता शासन काल में विदेशमंत्री श्री वाजपेयी की सूझ-बूझ के कारण दक्षिण एशियाई पड़ोसी देशों से इन्दिरा सरकार की अपेक्षा अधिक मधुरतापूर्ण सम्बन्ध स्थापित किए गए। अफगानिस्तान में राष्ट्रपति दाऊद का प्रारम्भ से ही भारत के प्रति विशेष आकर्षण रहा है। दोनों देश गुटनिरपेक्षता, निरस्त्रीकरण व विश्व शान्ति आदि समान नीतियों का अनुसरण करने के कारण अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नों पर एक मत रहे हैं। इसलिए 1973 से 1978 का काल दोनों देशों के मध्य मित्रता का काल कहा जा सकता है।

*****

---

190. आज, (वाराणसी), 13 सितम्बर, 1977
191. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खंड 23, अंक 9, सितम्बर 1977, पृ. 147-50
192. हिन्दुस्तान (नई दिल्ली), 4 मार्च, 1978
193. क्वातरा, आर. डी., "इण्डिया एण्ड अफगानिस्तान", नेशनल हेराल्ड, 3 मार्च, 1978. द ट्रिब्यून (चण्डीगढ़), 6 मार्च, 1978

अष्टम् अध्याय

अष्टम अध्याय

अफगानिस्तान : अस्तित्व का संकट और भारत

यद्यपि अफगानिस्तान ने कभी दूसरे देशों के हस्तक्षेप को स्वीकार नहीं किया, किन्तु क्रान्ति के फलस्वरूप उत्पन्न स्थिति से लाभ उठा कर पाकिस्तान, अफगान क्रान्ति विद्रोहियों को मदद कर रहा है, इसके कारण सीमाओं पर मुडभेड़ जारी है। इस संघर्ष में अमेरिका, चीन, ईरान तथा अन्य मुस्लिम देश पाकिस्तान की मदद कर रहे हैं, वहीं सोवियत संघ ने भी इन शक्तियों से सहयोग व समर्थन प्राप्त कर रहे विद्रोहियों का सामना करने के लिए अफगानिस्तान में लगभग 1 लाख सेनानी भेज कर अपने मित्र देश की मदद की है। इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से महाशक्तियों के मध्य शक्ति-प्रदर्शन हेतु एक नए शीत युद्ध का सूत्रपात हुआ। इस संकट के प्रति भारतीय दृष्टिकोण किसी शक्ति विशेष के दबाव में न रहकर निश्चित व स्वाभाविक रहा है। उसने गुटनिरपेक्षता की नीति का दृढ़ता से पालन करते हुए इस क्षेत्र में शान्ति व स्थिरता की आवश्यकता पर बल दिया।[1]

सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण अफगानिस्तान 17 मिलियन जनसंख्या का छोटा-सा देश है, जो विश्व के पहले 10 गरीब देशों में से एक है।[2] परस्पर भौगोलिक, सांस्कृतिक तथा नीतिगत समानताओं के कारण प्रारम्भ से ही भारत का अफगानिस्तान में विशेष आकर्षण रहा है।[3] अफगानिस्तान में जहाँ बाह्य शक्तियों की सहायता से चल रही विद्रोही कार्रवाइयों से अफगान-जन-जीवन व सम्पत्ति का नुकसान हुआ है,[4] वहीं अमेरिका की दक्षिण व दक्षिण पश्चिम एशिया की ओर बढ़ती सैन्य गतिविधियों से तनाव व असुरक्षात्मक भय को प्रोत्साहन मिला है। अफगानिस्तान सोवियत संघ का सीमान्त देश है। अतः राजनैतिक दृष्टि से अफगानिस्तान का अमरीकी समर्थक तत्वों के हाथों पतन सोवियत संघ को कभी भी स्वीकार्य न होता। दूसरी ओर अफगान सरकार को भी अपने अस्तित्व को लेकर उत्पन्न हुए आन्तरिक व बाह्य संकट की स्थिति में शक्तिशाली रूस का साथ अधिक दायित्वपूर्ण लगा और दोनों देशों की निकटता ने मित्रता-सन्धियों का रूप ले लिया, जिसके फलस्वरूप रूसी सैनिकों ने अफगानिस्तान में प्रवेश किया।

---

1. रतनाम, परेला, 'अफगानिस्तान अनसरटेन फ्यूचर' 1980, पृ. 55
2. जनता, 17 फरवरी, 1980, खंड 35, अंक 2, पृ. 6, सोवियत इनवेशन इम्पीरियल्स नॉन एलाइनमेण्ट
3. माथुर, गिरीश, 'न्यू अफगानिस्तान' 1983
4. वासफी, आसिफ सैयद, 'इज पंचशील इरीलिवेन्ट इन अफगान क्राइसिस' रेडियन्स व्यूस वीकली, खंड 16, अंक 4, 8 जून, 1980, पृ. 1

अफगानिस्तान के घटनाक्रम से भारत बहुत व्याकुल व क्षुब्ध है। क्योंकि एक दिन ऐसा भी हो सकता है कि ये परिस्थितियां उसे दासता की ओर ले जाएं। फिर यह अफगानों की स्वतन्त्रता तथा उनके धर्म की मृत्यु होगी।[5] यदि सोवियत शक्ति के अधीन (उसकी सहायता से या उसे पूर्ण अधिकार देकर) तनाव को न्यूनता की ओर ले जाकर शान्ति की स्थापना की जाती है तो इससे शान्ति पाने के लिए जनता के दिल निरूत्साहित ही होंगे।

दाऊद की सरकार तथा तराकी की कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना में यद्यपि रूस प्रत्यक्ष रूप में शामिल नहीं था, लेकिन वह अफगानिस्तान का घनिष्ट मित्र था और इसलिए सरकार को हर सम्भव सहायता प्रदान करता रहा।[6] अफगानिस्तान 1978 की गतिविधियों से विश्व राजनीति का केन्द्र बिन्दु बना। तब तक वहाँ अलगाववाद व शीतयुद्ध ने अपने पैर जमा लिए थे।[7] स्वतन्त्रता सेनानी शंकरदयाल शर्मा ने कहा कि "कोई भी क्रान्ति ऐसी नहीं जिसके बाद समस्याएं उत्पन्न न हों, लेकिन इन समस्याओं का स्वरूप भीषण हो जाता है, जब बाहरी ताकतें, अपने विस्तारवादी उद्देश्यों की पूर्ति के लिए इन समस्याओं का अनुचित लाभ उठाने की कोशिश करने लगें, जो जनता के भविष्य को प्रभावित करती हैं। इस प्रकार की ताकतों तथा उनके समर्थित देशों की यह नीति केवल अफगानिस्तान तक ही सीमित नहीं, बल्कि पूरे खाड़ी क्षेत्र, हिन्द महासागर, अफ्रीका और पश्चिम एशिया तक फैली हुई है, इसलिए अफगानिस्तान की घटनाओं को शून्य में अथवा अलग-थलग करके नहीं देखा जा सकता"।[8] 30 जनवरी, 1980 को लोकसभा में प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी ने अपने भाषण में कहा कि अफगानिस्तान तथा पाकिस्तान के बीच उत्पन्न हुई समस्याएं उपमहाद्वीप के लिए एक नई चुनौती है, पिछले दो वर्षो से अफगान गणतन्त्र कई आन्तरिक व बाह्य समस्याओं का सामना कर रहा था। ऐसी रिपोर्ट मिली थी कि अफगानिस्तान पर बाहरी हमले का अन्देशा है। स्थिति का सामना करने के लिए अफगानिस्तान और सोवियत संघ के मध्य सन्धि हो चुकी थी। उसी सन्धि का अनुसरण कर अफगान सरकार ने रूसी सैनिकों को देश में आमन्त्रित किया है। यद्यपि यह अफगानिस्तान का अन्दरूनी मामला है, किन्तु विश्व जनमत को अधिकार है कि वह सोवियत संघ व अफगानिस्तान से इस सम्बन्ध में बातचीत कर सकता है।[9]

---

5. गांधी, राज मोहन, 'द अफगान रेवेल हैज सोन फेथ एण्ड गट्स, काबुल एण्ड इण्डों-पाक रिलेशनशिप', एशियन्स ब्याइस हिम्मत वीकली, शुक्रवार, 25 जनवरी, 1980 पृ. 24
6. बोस, प्रदीप, 'द अफगान क्राइसिस एण्ड इण्डियाज रोल' जनता, 28 फरवरी, 1980, पृ. 7-9
7. माथुर, गिरीश, देखिए क्र. 2
8. गोयल, डी. आर., 'अफगानिस्तान विहाइण्ड द स्मोक स्क्रीन', दिल्ली 1984, पृ. 4-5
9. इण्डियाज व्यूज ऑन द अफगान सिचुएशन, अक्टूबर 1981, पब्लिसिटी डिवीजन, मिनिस्ट्री ऑफ इक्सटरनल अफेयर्स, गवर्नमेण्ट ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली। प्राइमिनिस्टर स्टेटमेण्ट इन लोकसभा।

दक्षिण-पश्चिम एशिया में तनाव बनाये रखने और इसमें वृद्धि करने में किसका स्वार्थ निहित है तथा इस क्षेत्र की समस्याओं के शान्ति पूर्ण समाधान की कामना कौन कर सकता है। इस विषय पर हम आगे चर्चा करेंगे, किन्तु यह सत्य है कि सम्प्रभु व स्वतन्त्र राज्य तथा संयुक्त राष्ट्रसंघ के सदस्य के विरूद्ध इस आक्रामक युद्ध ने दक्षिण-पश्चिम एशिया में विस्फोटक स्थिति उत्पन्न कर दी है।[10] अफगान संकट के प्रारम्भिक दौर में भारत ने 'प्रतीक्षा करो और अवलोकन करो' की नीति अपनाई, जिस पर पश्चिमी राष्ट्रों, अमेरिका, चीन तथा पाकिस्तान ने तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की। भारत की गुटनिरपेक्षता की नीति पर प्रश्नवाचक दृष्टि डाली गई, किन्तु शीघ्र ही भारतीय नेतृत्व ने अपने रूख को स्पष्ट करते हुए रूसी हस्तक्षेप का विरोध कर गुटनिरपेक्ष अफगान राष्ट्र की स्वतन्त्रता का संयुक्तराष्ट्र संघ तथा अन्य विश्वस्तरीय सम्मेलनों व वार्ताओं में समर्थन किया।

(क) खल्की क्रान्ति व भारत

राष्ट्रपति दाऊद के पतन के पश्चात् जब अफगानिस्तान में अप्रैल क्रान्ति की घटना घटी, उस समय भारत में तत्कालीन जनता सरकार की विदेशनीति की उपलब्धियां बहुत कम थी। केन्द्र में प्रधानमंत्री श्री मोरार जी देसाई तथा विदेशमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी की सरकार विभिन्न दलों के एकीकरण से बनी थी। प्रारम्भ में सरकार का रूख अमेरिका से प्रभावित प्रतीत हो रहा था, किन्तु भारतीय विदेशनीति में गुटनिरपेक्षता आवश्यक रूप से प्रभावी बनी रही।[11]

अफगानिस्तान में दाऊद सरकार के खिलाफ असन्तोष पनप रहा था। वहाँ कामरेड तराकी के नेतृत्व में 'खल्क' तथा बबरक कारमल के 'परचम' नामक समाचार पत्रों के माध्यम से दाऊद सरकार की खामियों को उजागर किया जा रहा था। खलकियों व परचमियों में परस्पर प्रतिरोधी विचारों के कारण कुछ स्तरों पर मतभेद बने रहे।[12] 26 अप्रैल, 1978 को दाऊद को गिरफ्तार कर सरकार को बरखास्त कर दिया गया और 27 अप्रैल को फौजी क्रान्ति का बिगुल बजा दिया गया। खल्की व परचमी पार्टी ने कामरेड तराकी के नेतृत्व में गणतान्त्रिक अफगानिस्तान की घोषणा की। राष्ट्रपति पद का चुनाव क्रान्तिकारी परिषद् द्वारा सर्वसम्मत से किया गया। तराकी को राष्ट्रपति व प्रधानमंत्री, बबरक कारमल को उपप्रधानमंत्री तथा हफीजुल्लाह अमीन को विदेशमंत्री

---

10. 'अफगानिस्तान में नया शक्ति सन्तुलन' नव भारत टाइम्स, 8 नवम्बर, 1978
11. मुखर्जी, साधन, 'अफगानिस्तान फ्रॉम ट्रैजिडी टू ट्रम्फ' नई दिल्ली, 1984 पृ. 197-202
12. जेता, 'अफगानिस्तान की सौर क्रान्ति' दिल्ली, 1979, पृ. 64

नियुक्त किया गया।[13] किन्तु अमीन के साथ मतभेदों के कारण कारमल को सत्ताच्युत कर दिया गया। परचम समूह के अन्य नेताओं को भी पदच्युत कर दिया गया। इस प्रकार अप्रैल क्रान्ति द्वारा जहाँ खल्क पार्टी को अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई, वहीं परचमी पार्टी को असफलता मिली,[14] यद्यपि क्रान्ति की लड़ाई दोनों ने मिल कर लड़ी थी।

पहली कम्युनिस्ट सरकार बनने के कारण सोवियत संघ इसे मान्यता देने वाला प्रथम देश था, बाद में अन्य कम्युनिस्ट देशों ने भी मान्यता दे दी।[15]

अप्रैल क्रान्ति के पश्चात् 2 मई को अफगानिस्तान की नई क्रान्तिकारी सरकार ने भारत को सूचित किया कि वह भारत के साथ अपने सम्बन्धों को महत्व देती है और सहयोग के कार्यक्रमों को जारी रखने की इच्छुक है। उसने स्पष्ट किया कि वह पूरी तरह निर्गुट नीति पर चलेगी, यद्यपि 7 मई से होने वाली निर्गुट बैठक का आयोजन करने में उसने अपनी असमर्थता प्रगट की।

अफगान सरकार की पहल पर वहाँ भारतीय राजदूत श्री शैलेन्द्र कुमार सिंह ने राष्ट्रपति तराकी से भेंट की और भारत की ओर से नई सरकार के लिए लिखित रूप में औपचारिक मान्यता दे दी। उन्होंने कहा कि भारत अफगानिस्तान के साथ मैत्री व घनिष्ट सम्बन्धों की अपनी पारम्परिक नीति जारी रखने का इच्छुक है।[16] किन्तु मुस्लिम देशों में दाऊद सरकार का तख्ता उल्टे जाने की अनुकूल प्रतिक्रिया नहीं हुई। नई सरकार ने इसे अपने देश के आन्तरिक मामलों में अनुचित हस्तक्षेप माना। भारत ने इस बारे में शुद्ध यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाया और इन कठिन परिस्थितियों में गम्भीर क्षेत्रीय समस्याओं के प्रति स्पष्ट रूप से आदरपूर्ण नीति अपनाई।[17] अफगानिस्तान के नये राजदूत का प्रमाण-पत्र ग्रहण करते समय राष्ट्रपति श्री नीलम संजीव रेड्डी ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि जिन अनेक सूत्रों में हम (भारत-अफगानिस्तान) बंधे रहे हैं और जो आज भी हमें जोड़े हुए है, वे भविष्य में भी बने रहेंगे और सरकारों के अदल-बदल का उन पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा।[18] यही कारण था कि भारत में खल्की क्रान्ति को

---

13. गोयल, डी. आर., 'टरमौल इन अफगानिस्तान, मास्को काबुल रिलेशन्स एण्ड इण्डियाज स्ट्रेटजिक इण्टरेस्ट-ए बैक ग्राउण्ड स्टडी', सिकुलर डेमोक्रेसी, खंड 18, अंक 1, जनवरी, 1980, पृ. 31-33
14. अंथोनी, ह्यूमन, 'अफगानिस्तान अण्डर सोवियत डोमिनेशन 1964-81', (लन्दन, 1982)
15. हिन्दुस्तान (नई दिल्ली), 3 मई, 1978
16. वही
17. पंडित, सी. एस., 'इण्डिया ग्रोईग रिलेशन्स-अफगानिस्तान व्हाट लाइस अहेड', वर्ड फोकस, जरनल 52, अप्रैल 1984, खंड 5, अंक 4, पृ. 30-32
18. नवभारत टाइम्स (नई दिल्ली), 21 सितम्बर, 1978

अफगानिस्तान का आन्तरिक मामला कहा गया[19] और एशियाई देशों में बदले हुए समीकरणों को देखते हुए उनके साथ मित्रता, समानता तथा परस्पर मिलजुल कर कार्य करने की नीति को प्रधानता दी।[20] अफगान सरकार ने भारत द्वारा मान्यता दिए जाने पर प्रसन्नता व्यक्त की, [21] तथा घोषणा की कि वे भारत पाकिस्तान सहित इस क्षेत्र के सभी देशों के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्धों की इच्छा रखते हैं।[22] इसके लिए वे पाकिस्तान के साथ अपनी समस्याओं को सुलझाने के लिए तैयार हैं।[23] श्री तराकी ने कहा कि उनकी सरकार मानवाधिकारों तथा संयुक्त राष्ट्र के सिद्धान्तों का सम्मान करती है।[24]

वास्तव में काबुल की खल्की सरकार ऊपर से देखने में अवश्य राष्ट्रवादी थी, किन्तु सत्यत: वह साम्यवादी सरकार थी। क्योंकि जहाँ एक ओर खल्की सरकार के नेता तराकी व अमीन घोषणा कर रहे थे कि अफगान राज्य 50 वर्षो से चली आ रही गुटनिरपेक्षता की नीति को बनाये रखेगा,[25] वहीं जून 1978 में सरकारी प्रवक्ता ने कहा कि सोवियत समर्थन के बिना खल्की सरकार के स्थायित्व की आशा नहीं की जा सकती।[26] इसलिए खल्की सरकार और सोवियत संघ के निरन्तर हाथ मिलते गये और क्रान्ति के केवल 6 महीने के अन्तराल में 104 मिलियन डालर की सहायता सहित लगभग 9 समझौते हुए।[27] अन्य 50 समझौते परस्पर सहयोग के लिए किए गए।[28]

खल्की सरकार को लेकर पश्चिमी देशों ने कुछ समय तक चुप्पी साधे रखी।[29] वहाँ कम्युनिस्ट सरकार की स्थापना तथा विदेशनीति के क्रम में परिवर्तन को लेकर पश्चिमी राजनीतिज्ञों का विचार था कि अफगानिस्तान गुटनिरपेक्षता की नीति का परित्याग कर रूसी खेमें में शामिल हो गया

---

19. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 2 मई 1978
20. कौर, कुलवन्त, 'पाक अफगान रिलेशन्स - ए स्टडी ऑफ इण्डियाज परसेप्सन', पंजाब जनरल ऑफ पॉलिटिक्स, खण्ड 3, अक्टूबर 1979 पृ. 148. कार्यवाहक राष्ट्रपति बी0डी0 जत्ती द्वारा संसद में दिया गया भाषण, रिव्यू ऑफ फॉरेन अफेयर्स, अंक 3, 1 मार्च, 1977, पृ. 41
21. पैट्रीआट, 21 मई, 1978, अमृता बाजार पत्रिका, (कलकत्ता) 22 मई, 1978
22. कौर, कुलवन्त, देखिए क्र. 20
    - एशियन रिकार्डर, खंड 24, अंक 46, 12-18 नवम्बर, 1978, पृ. 1460
    - वैदिक, वी. पी., 'अफगान नॉन एलाइनमेण्ट चेन्जिंग फेसिस', द्वारा के. पी. मिश्रा, नॉन एलाइनमेण्ट फ्रण्टियर्स एण्ड डायनामिक्स 1984, पृ. 242
23. कौर, कुलवन्त, द टाइम्स ऑफ इण्डिया, 11 फरवरी, 1979
24. हिन्दुस्तान टाइम्स, 11 मई, 1978
25. वैदिक, देखिए क्र. 22, गुटनिरपेक्ष देशों के शासनाध्यक्षों द्वारा हवाना में छठे गुटनिरपेक्ष आन्दोलन में अभिभाषण, 3-9 सितम्बर, 1980
26. वैदिक, देखिए क्र. 22, पृ. 243, काबुल टाइम्स, 22 जून, 1978
27. वैदिक, पृ. 247, काबुल टाइम्स, 20 नवम्बर, 1978
28. बनर्जी, ब्रजेन्द्रनाथ, 'इण्डियाज एण्ड टू इट्स नैबरिंग कन्ट्रीज', नई दिल्ली, 1982, पृ. 282
29. वैदिक, पृ. 242-43

है।[30] पाकिस्तान व ईरान ने भी क्रान्ति को विस्तारवादी ताकतों का हाथ बताया। स्वयं अफगानिस्तान में तत्कालीन स्थिति से असन्तुष्ट होकर लगभग 23000 अफगानी, पाकिस्तान आ गए।[31]

नई सरकार के कर्णधारों का कहना था कि हम इस्लाम को श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं, पर हम किसी देश के अनुचर नहीं हैं, उनका कहना था कि क्रान्ति में केवल उन्हीं लोगों को मारा गया जो आत्मसमर्पण को तैयार नहीं थे।[32] परन्तु राष्ट्रपति दाऊद तथा उनके सहयोगियों की जिस निर्ममता से हत्या की गई उस पर किसी भी लोकतान्त्रिक देश में आश्चर्य व आघात पहुँचना स्वाभाविक है। किन्तु अफगानिस्तान के लिए यह कोई असमान्य घटना नहीं है, वहाँ पिछले शासक भी इसी तरह सत्तासीन हुए थे। दरअसल जिन देशों में मतदान द्वारा सत्ता परिवर्तन की व्यवस्था नहीं है, वहाँ हिंसात्मक तरीकों से शासकों को बदलने की परम्परा समाप्त नहीं की जा सकती है।

अफगानिस्तान की नई सरकार को शहरी क्षेत्रों व सेना के युवा अधिकारियों का समर्थन प्राप्त है। जहाँ तक भारत का प्रश्न है उसके अफगानिस्तान के साथ अच्छे सम्बन्ध रहे हैं। दोनों देशों के मध्य कोई विवाद न होने के कारण भविष्य में उनके मध्य लाभदायक सहयोग की आशा की जा सकती है।[33] यद्यपि खल्की नेताओं में रूस के प्रति विशिष्ट आकर्षण रहा है, किन्तु अफगान शासकों ने यह स्वीकार किया कि उनको स्वतन्त्र मार्ग पर चलते रहने की प्रेरणा देने में भारत की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण हो सकती है।[34] भारत में भी प्रधानमंत्री व विदेशमंत्री ने अफगान क्रान्ति के तुरन्त बाद अपनी ईरान, ब्रिटेन तथा अमेरिका की यात्रा के दौरान विदेशी नेताओं की आशंकाओं को दूर करते हुए उन्हें अफगानिस्तान के नए शासकों के इरादों के बारे में आश्वस्त कराया और उनके साथ अच्छे सम्बन्धों के लिए कहा।[35] भारतीय व्यापार संघ के सचिव वाई.डी. शर्मा लिखते हैं कि भारत में काम करने वाली जनता अफगानिस्तान की वर्तमान स्थिति व वहाँ की कर्मठ जनता की प्रशंसा करती है तथा देश की सुरक्षा के लिए अप्रैल क्रान्ति का समर्थन करती है।[36]

---

30. ठाकुर, रमेश, 'अफगानिस्तान द रीजन्स फॉर डिसट्रिक्टिव एप्रोच', जरनल राउण्ड टेबिल 280, अक्टूबर 1980, पृ. 422. वैदिक, वी. पी., 'ए हिस्टोरिकल पर्सपैक्टिव'
    - छावड़ा, हरिशंकर, 'अफगानिस्तान व्हाट लाइस अहेड', वर्ड फोकस, खण्ड 5, अंक 4, अप्रैल 1984
31. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 11, पृ. 104
32. हिन्दुस्तान टाइम्स, 3 जून, 1978
33. वही
34. वैदिक, वेदप्रताप, 'अफगानिस्तान में नया शाक्ति सन्तुलन, स्वतन्त्र भारतीय विदेशनीति जरूरी', नवभारत टाइम्स, 8 नवम्बर, 1878
35. वैदिक, वेदप्रताप, 'भारत-अफगान सम्बन्धों के नये आयाम', नवभारत टाइम्स, 7 नवम्बर, 1978
36. शर्मा, वाई. डी., 'सोलिडरिटी विद अफगान वर्किंग प्यूपिल' द्वारा अजहर अनसारी, 'अफगानिस्तान थ्रो इण्डियन आइज', दिल्ली, 1980, पृ. 74-75

ईरान ने नई सरकार को मान्यता तो दे दी, परन्तु उसे इससे सबसे अधिक भय रहा। इसलिए जब 28 मई, 1978 को विदेशमंत्री श्री वाजपेयी ने तेहरान की यात्रा की तो ईरान के शाह ने श्री वाजपेयी से अफगानिस्तान से फैलने वाले मार्क्सवादी खतरे का मुकाबला करने के लिए एक संयुक्त मोर्चा बनाने का सुझाव दिया। श्री वाजपेयी ने इसे घरेलू मामला बताते हुए सुझाव दिया कि उन्हें अफगानिस्तान को बीच में लाकर द्विपक्षीय व क्षेत्रीय आधार पर सम्बन्धों का विकास करना चाहिए ताकि स्थायित्व और आर्थिक सहयोग का वातावरण बना रहे।[37] इस प्रकार काबुल में साम्यवादी सरकार स्थापित हो जाने से तेहरान और इस्लामाबाद में भी दक्षिण एशिया के विशाल राष्ट्र भारत का महत्व बढ़ गया था। इन अलग-अलग कारणों से बढ़े महत्व का उपयोग भारत दोहरी मित्रता के लिए कर सकता है।[38]

कम्युनिस्ट देशों के अतिरिक्त भारत ही एक बड़ा देश था जो नई अफगान सरकार का पूरी तरह समर्थन कर रहा था। इसी कारण दोनों देशों की मित्रता अत्यधिक बढ़ी। उन्हीं दिनों पाकिस्तान के साथ चीन की मित्रता बढ़ने से दोनों देशों के सम्बन्धों पर इसका प्रभाव पड़ा। मैत्री की इस दिशा को सही व निश्चित स्वरूप प्रदान करने तथा नई सरकार के दृष्टिकोणों को जानने के लिए विदेश सचिव श्री जगत मेहता ने जून, 1978 में काबुल की यात्रा की।[39]

विदेशमंत्री की काबुल यात्रा

दाऊद की सरकार के साथ भारत के सम्बन्ध अत्यन्त मधुर थे। उनकी सरकार के पतन तथा खल्की क्रान्ति के पश्चात् भारत-अफगानिस्तान मैत्री सम्बन्धों में कोई अन्तर प्रकट नहीं हुआ और इसलिए सितम्बर 1978 में विदेशमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने काबुल की यात्रा की।[40] विदेशमंत्री श्री वाजपेयी किसी देश के पहले विदेशमंत्री थे, जिन्होंने क्रान्ति के पश्चात, नई सरकार के नेताओं से बातचीत के लिए वहाँ की यात्रा की।[41] उनके पूर्व पाकिस्तान के राष्ट्रपति जिया-उल-हक 9 सितम्बर, 1978 को तेहरान में क्षेत्रीय संयुक्त योजना पर विचार विमर्श के पूर्व काबुल की नई सरकार के विचार जानने के लिए काबुल रूके थे।[42] किन्तु उनकी यह यात्रा राजनैतिक दृष्टि

---

37. हरिवंश, पी. के., 'अफगानिस्तान ईरान व भारत', हिन्दुस्तान, नई दिल्ली, 3 जून, 1978
38. नवभारत टाइम्स, 8 नवम्बर, 1978
39. स्टेट्समैन, 25 जून, 1978
40. अप्पादोराय, ए., एम. एस. राजन, 'इण्डियाज फॉरेन पॉलिसी एण्ड रिलेशन्स', साउथ एशियन पब्लिशर्स, दिल्ली, 1985, पृ. 613
41. आनन्द, जे. पी., 'द अफगान कनेक्शन', द ट्रिव्यून (चण्डीगढ़), 27 सितम्बर, 1978
    - वैदिक, वी. पी., 'इण्डिया एण्ड अफगानिस्तान', इण्टरनेशनल स्टडीज, खण्ड 17, 1978, पृ. 535
42. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 11, पृ. 197

से महत्वपूर्ण नहीं रही।[43] किन्तु श्री वाजपेयी की काबुल यात्रा का महत्व जितना भारत के लिए था उससे कहीं अधिक वह अफगानिस्तान के लिए था।

सोवियत संघ की यात्रा के पश्चात् काबुल में तीन दिन की राजकीय यात्रा के प्रारम्भिक चरण में ही श्री वाजपेयी ने स्पष्ट कर दिया कि सरकारों का बदलना प्रत्येक देश का आन्तरिक मामला है और हम उसमें किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करते, क्योंकि हम स्वयं भी अपने मामलों में बाह्य प्रभावों को स्वीकार नहीं करते । अतः आप इस बारे में आश्वस्त रहें कि भारत आपकी इच्छा और अपने सामर्थ्य के अनुसार अफगानिस्तान की आकांक्षाओं की पूर्ति व मैत्रीपूर्ण सहयोग के लिए सदैव प्रस्तुत रहेगा।[44]

18 सितम्बर को उप प्रधानमंत्री व विदेशमंत्री हफीजुल्लाह द्वारा दिए गए भोज में श्री वाजपेयी ने कहा कि यह दोनों देशों के हित में है कि कोई भी बाहरी शक्ति हमारे क्षेत्र में अशान्ति और संघर्ष की स्थिति न उत्पन्न कर सके।[45] उन्होंने कहा कि सत्ता परिवर्तन घरेलू मामला है,[46] यदि वह जनता की इच्छा पर स्थापित किया गया हो।[47] उन्होंने अमीन को सलाह दी कि पाकिस्तान व अफगानिस्तान के मध्य किसी तरह के संघर्ष का तात्पर्य बड़ी शक्तियों के हस्तक्षेप को बुलावा देना होगा। श्री अमीन ने कहा कि दोनों देशों में मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों का इस क्षेत्र तथा विश्व में शान्ति की स्थापना में महत्वपूर्ण योगदान है।[48] उन्होंने कहा कि चीन इस कार्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।[49] दोनों नेताओं के मध्य बातचीत के दौरान देश की हाल की घटनाओं, पाक राष्ट्रपति जिया-उल-हक की काबुल की संक्षिप्त यात्रा, सोवियत संघ, चीन, ईरान सहित अन्य देशों से अफगानिस्तान के सम्बन्ध और हिन्दमहासागर आदि प्रश्नों पर भी चर्चा की गई।[50]

भारतीय विदेशमंत्री अफगानिस्तान की क्रान्तिकारी परिषद के अध्यक्ष, राष्ट्रपति व प्रधानमंत्री श्री नूर मोहम्मद तराकी से जब उनके निवास में राजनयिक वार्ता के लिए मिले तो यह वार्ता सेमीनार में बदल गई, जिसमें भारतीय पत्रकारों व दूरदर्शन को भी स्थान दिया गया। इस अवसर

---

43. वैदिक, वी. पी., देखिए क्र. 41
    - नवभारत टाइम्स, 7 नवम्बर, 1978
44. अप्पादोराय ए, एम. एस. राजन, देखिए क्र. 40
    - फॉरेन अफेयर्स रिकार्डर, सितम्बर 1978, पृ. 300
45. नेशनल हेराल्ड, 19 सितम्बर, 1978
46. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 24, अंक 9, सितम्बर 1978, पृ. 299-302
47. वैदिक, वी. पी., देखिए क्र. 41, पृ. 540. अप्पादोराय, ए., एम. एस. राजन, देखिए क्र. 40
48. द हिन्दू (मद्रास), 19 सितम्बर, 1978
49. द ट्रिब्यून (चण्डीगढ़), 21 सितम्बर, 1978
50. वही

पर श्री तराकी ने कहा कि वे अफगान क्रान्ति के प्रति भारत के मैत्रीपूर्ण रूख के आभारी है,[51] जिसने उन्हें सैद्धान्तिक समर्थन दिया। उन्होंने श्री वाजपेयी द्वारा अफगान क्रान्ति को मात्र राजनैतिक परिवर्तन कहे जाने पर कहा कि हमारी क्रान्ति, क्रान्ति है, वह राजनैतिक परिवर्तन से अलग बुनियादी चीज है।[52] उन्होंने कहा कि देश में सरकार नहीं बदली है बल्कि निरकुंश शासन का अन्त हुआ है। उन्होंने कहा कि हम श्री वाजपेयी की यात्रा को दोनों देशों के मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों को अधिक मजबूत करने की दिशा में एक कदम समझते हैं। उन्होंने राष्ट्रपति श्री संजीव रेड्डी तथा प्रधानमंत्री श्री मोरार जी देसाई को आगामी शरद ऋतु में अफगानिस्तान आने और यहाँ हो रहे पुनर्निर्माण कार्यों को अपनी आँखों से देखने का निमन्त्रण दिया।

संयुक्त विज्ञप्ति

विदेशमंत्री अमीन के निमन्त्रण पर की गई भारतीय विदेशमंत्री की (18-20 सितम्बर) यात्रा की समाप्ति पर जारी की गई संयुक्त विज्ञप्ति में कहा गया कि दोनों देश जनता की स्थिति सुधारने के लिए इस क्षेत्र के देशों में उपयोगी सहयोग को बढ़ावा देते रहेंगे।[53] वे क्षेत्रीय शान्ति व स्थिरता के लिए अपने पड़ोसियों के साथ द्विपक्षीय सम्बन्धों को सुधारने के प्रयास जारी रखेंगे।[54] दोनों देशों ने संयुक्त राष्ट्र घोषणा पत्र में अपने विश्वास की पुष्टि की। उन्होंने गुटनिरपेक्ष आन्दोलन को अधिक सशक्त और संगठित बनाये जाने पर बल देते हुए उसकी सार्थकता पर सन्तोष व्यक्त किया। विज्ञप्ति में नए अन्तर्राष्ट्रीय आज्ञा पत्र और उसकी महत्ता को भी उद्धृत किया गया। पश्चिम एशिया, दक्षिण अफ्रीका, नामीबिया, फिलिस्तीनी समस्या तथा हिन्दमहासागर में महाशक्तियों की बढ़ रही गतिविधियों पर दोनों पक्षों ने अपने विचार व्यक्त किए।[55] दोनों देशों ने प्रभुत्व के प्रति सम्मान, राष्ट्रीय स्वतन्त्रता, समानता, निरस्त्रीकरण और अहस्तक्षेप के प्रति अपना समर्थन व्यक्त किया।[56] विदेशमंत्री श्री वाजपेयी ने राष्ट्रपति श्री तराकी को भारतीय राष्ट्रपति व प्रधानमंत्री की ओर से भारत यात्रा का निमन्त्रण दिया, जिसे उन्होंने प्रसन्नता के साथ स्वीकार किया। उन्होंने विदेशमंत्री अमीन को भी भारत यात्रा का निमन्त्रण दिया।[57]

अभी काबुल की नई सरकार शासन में स्थिरता ला भी नहीं सकी थी कि खल्की पार्टी

---

51. पैट्रीआट, 28 सितम्बर, 1978
52. वैदिक, वेद प्रताप, देखिए क्र. 35
53. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 24, अंक 9, सितम्बर 1978, पृ. 299-302
54. हिन्दुस्तान (नई दिल्ली), 21 सितम्बर, 1978
55. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 11, पृ. 197-98
56. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, देखिए क्र. 53
57. वही

के अन्दर आन्तरिक झगड़े उभरने लगे। फिर भी भारतीय विदेशमंत्री ने काबुल की यात्रा की, किन्तु दोनों देशों में सम्बन्ध स्पष्ट नहीं हो सके, जबकि जनता सरकार ने स्वयं क्रान्ति को स्वीकार किया था।[58] अफगान नेता चाहते थे कि भारतीय विदेशमंत्री उनके स्वर में स्वर मिलाकर क्रान्ति के गीत गाएं, किन्तु श्री वाजपेयी ने जहाँ एक ओर प्रगाढ़ सम्बन्धों के प्रति प्रसन्नता व्यक्त की, वहीं दूसरी ओर क्रान्ति के प्रश्न पर मौन साधे रखा। इसलिए अनुमान लगाया गया कि खल्की क्रान्ति तथा पख्तून प्रश्न पर भारतीय दृष्टिकोण काबुल की नई मार्क्सवादी सरकार को पसन्द नहीं आया। किन्तु यह सत्य है कि श्री वाजपेयी ने अनेक उत्तेजक क्षणों में नियन्त्रण रखकर दक्षतापूर्ण कूटनीति का परिचय दिया।

भूवेष्टित अफगानिस्तान की बड़ी सीमा रूस से जुड़ी है।[59] फलतः अप्रैल क्रान्ति के बाद वहाँ रूसी प्रभाव अधिक बढ़ा। 5 दिसम्बर, 1978 को राष्ट्रपति तराकी की रूस यात्रा पर 1921 व 1931 के अफगान-सोवियत समझौते के सिद्धान्त व उद्देश्यों के आधार पर विकास कार्यो से संलग्न मित्रतापूर्ण सन्धि हुई।[60] इस सन्धि के अनुसार सोवियत संघ अफगानिस्तान को बाहरी तत्वों से सुरक्षा के लिए सीमित सैनिक सहायता देगा।[61] इस सन्धि की अन्तिम धारा में दोनों देशों में बढ़ रहे प्रगाढ़ सम्बन्धों को मान्यता दी गई।[62] समझौते के पश्चात् काबुल में मास्को के सैनिक सलाहकारों की संख्या बढ़कर 1000 हो गई।[63] अमेरिका ने भी 20 मिलियन डालर की मदद तराकी सरकार को दी। यद्यपि अफगानिस्तान में अमरीकी राजदूत डब्स ने कहा कि नई सरकार के आगमन के पश्चात् उनकी सरकार ने दी जाने वाली सहायता में कमी की है।[64] फरवरी 1979 में काबुल में उग्रवादियों द्वारा राजदूत डब्स की हत्या किए जाने से दोनों देशों के सम्बन्धों में तनाव उत्पन्न हुआ।[65] श्री तराकी ने कहा कि उनके बीच कुछ मिथ्याबोध व भ्रम

---

58. चारी, पी. आर., 'टरमौल इन अफगानिस्तान-सोवियत ओप्शन', मैनस्ट्रीम, खण्ड 17, अंक 45, जुलाई 7, 1979, पृ. 7-8. पंडित, सी. एस., देखिए क्र. 17
59. रेड्डी, जे. के., 'न्यू रिजीम इन कन्टीन्यू, ट्रेडिशनल टाइस', दिल्ली
60. वैदिक, वी. पी., देखिए क्र. 22, पृ. 247. काबुल टाइम्स, 9 दिसम्बर, 1978
 - ग्लोवल सिग्नीफिकैन्श ऑफ द आक्यूपेशन ऑफ अफगानिस्तान बाई यू.एस.एस.आर.,यूनाइटेड स्टेट्स इण्टरनेशनल कम्युनिकेशन एजेन्सी टेक्स्ट एज पब्लिश्ड वाई एफ. वी. आई, एस. 6 दिसम्बर, 1978.
61. बहादुर, कालिम, 'पाकिस्तान पालिसी टूवर्ड्स अफगानिस्तान' द्वारा के. पी. मिश्रा 'अफगानिस्तान इन क्राइसिस' दिल्ली 1981, पृ. 981. वनर्जी, ब्रजेन्द्र नाथ, देखिए क्र. 28
 - रिपोर्ट ऑफ वर्ड अफेयर्स, अक्टूबर-दिसम्बर, 1978 पृ. 41. रतलाम, परेला, देखिए क्र. 1
62. वैदिक, वी. पी., देखिए क्र. 22, पृ. 247-48
63. 'क्रोनोलोजी ऑफ अफगानिस्तान इवेन्ट्स', प्रिन्टिड एण्ड पब्लिशड वाई जे. डब्ल्यू ग्लहर फॉर द यू. एस. इण्टरनेशनल कम्युनिकेशन एजेन्सी, अप्रैल 1980, पृ. 9
64. बनर्जी, ब्रजेन्द्र नाथ, देखिए क्र. 28, पृ. 300
65. टाइम्स ऑफ इण्डिया (नई दिल्ली), 15 फरवरी, 1979

उत्पन्न हो गए हैं।[66] वे अमेरिका के साथ शान्तिपूर्ण सिद्धान्तों के आधार पर सम्बन्ध बनाए रखना चाहते हैं।

भारत को भी अमरीकी सहायता के विकल्प के रूप में रूस की आवश्यकता थी इसलिए सोवियत नेता भारतीय नेताओं को पारस्परिक सहयोग के अतिरिक्त खल्की सरकार के साथ पूरी तरह सहयोग व समर्थन पर जोर देते रहे।[67] प्रधानमंत्री श्री मोरार जी देसाई ने अपनी रूस यात्रा के दौरान अफगानिस्तान में खल्की सरकार द्वारा शासन में शान्ति, स्थिरता व उसकी वैधता तथा पाकिस्तान द्वारा अफगान विद्रोहियों को दी जा रही सहायता पर विस्तृत चर्चा की। उन्होंने बताया कि भारत ने अफगान विद्रोहियों को सहायता व बाहरी समर्थन दिए जाने पर रोक लगा रखी है।[68] श्री देसाई ने तराकी सरकार की खामियों पर भी बातचीत की। संयुक्त विज्ञप्ति में कहा गया कि दोनों देश अफगान सरकार के साथ मैत्री व सहयोग की इच्छा रखते हैं तथा उसके आन्तरिक मामलों में बाह्य शक्तियों के हस्तक्षेप का विरोध करते हैं।[69]

रूस की इसी नीति के तहत कहा गया कि वह पाकिस्तान, चीन व अमेरिका के विरूद्ध सोवियत संघ, भारत और अफगानिस्तान का त्रिकोण बनाना चाहता है, किन्तु भारत ने इसमें अधिक रूचि प्रदर्शित नहीं की। यद्यपि जनता सरकार की खल्की सरकार के प्रति अपनाई गई नीति रूस से प्रभावित ही जान पड़ती है।

अप्रैल 1979 में डा. जसकरन सिंह तेजा, जो रूस में भारतीय दूतावास में मंत्री थे, की अफगानिस्तान में राजदूत पद पर नियुक्ति की गई।[70] जून में कार्यवाहक राजदूत एस.के.सिंह ने तराकी व अमीन से अन्तिम विदा ली। बातचीत में तराकी ने अमीन की भूमिका की कड़ी आलोचना की और कहा कि उनका व्यवहार क्रान्ति को बदनाम करने वाला है। श्री सिंह ने सभी विषयों पर पूरी जानकारी प्रधानमंत्री श्री देसाई तथा विदेशमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी को दी और कहा कि अफगानिस्तान में दो प्रमुख हस्तियों के मध्य विरोध व तनाव को समाप्त करने में भारत को मदद देनी चाहिए, जिससे अफगान सरकार के सन्मुख उत्पन्न हुई कठिन परिस्थितियों को स्पष्ट किया जा सके। परन्तु मोरार जी व वाजपेयी दोनों ही इस बिन्दु पर कोई कार्रवाई करने के पक्ष में नहीं थे इसलिए काबुल में तत्कालीन राजदूत डा. तेजा अफगानिस्तान के राजनैतिक

---

66. काबुल टाइम्स, 19 मई, 1979
67. इण्डियन एक्सप्रेस, 13 जून, 1979
68. वैदिक, वेद प्रताप, 'भारतीय विदेशनिति नये दिशा संकेत', (दिल्ली 1980), पृ. 74
 – हिन्दुस्तान टाइम्स, 15 जून, 1979. भारत सोवियत संयुक्त वक्तव्य, 14 जून, 1979, नई दिल्ली
69. नैय्यर, कुलदीप, रिपोर्ट ऑन अफगानिस्तान', दिल्ली 1981, पृ. 30
70. एशियन रिकार्डर, 30 अप्रैल-6 मई, 1980 पृ. 14861

संकट पर कोई महत्वपूर्ण कार्रवाई किए जाने में असफल रहे।[71]

एक ओर तराकी सरकार अपनी लोकप्रियता के शिखर की ओर पहुँच रहीं थी, दूसरी ओर अमेरिका समर्थक अमीन को क्रान्तिकारी सरकार का प्रधानमंत्री बना देने से अफगानिस्तान में एक दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति उत्पन्न होने लगी। उसने तराकी के चारों ओर चापलूसी का जाल खड़ा कर दिया और अन्त में अमीन धीरे-धीरे पीपुल्स पार्टी की एकता को भंग करने में सफल हो गया। 8 अक्तूबर, 1979 को अमीन के सहायकों ने राष्ट्रपति तराकी की हत्या कर दी [72] और शासन की बागडोर स्वयं संभाल ली। जिससे शासन में अस्थिरता उत्पन्न हुई।[73] पुन: विप्लव की स्थिति में काबुल में भारतीय राजदूत को नई दिल्ली की ओर से किसी प्रकार का राजनैतिक दिशा निर्देश नहीं मिला। इसलिए उन्होंने कूटनीतिक क्षेत्र में स्वयं वक्तव्य जारी किए।[74]

रूस के बढ़ते प्रभाव को लेकर देश में गृह युद्ध प्रारम्भ हो चुका था, हजारों की संख्या में अफगान मुजाहिद्दीन पाकिस्तान पहुँच रहे थे। अमीन सरकार को भी सोवियत संघ से आर्थिक व तकनीकी सहायता प्राप्त होती रही।[75] सोवियत सेनाएं मुजाहिदों की कार्रवाइयों का भी सामान्य रूप से सामना करती रहीं।[76] पाकिस्तान का अमेरिका से अधिक मात्रा में सैन्य सहायता प्राप्त करना अफगानिस्तान की नई सरकार के लिए खतरनाक था।[77] इसलिए राष्ट्रपति अमीन ने कहा कि यद्यपि वे अमेरिका से अच्छे सम्बन्ध स्थापित करना चाहते हैं, किन्तु हमारी जनता विश्व में शान्ति पूर्ण नीति का आधार चाहती है।[78]

अमीन अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त करने के लिए भारत की यात्रा करना चाहते थे, किन्तु नई दिल्ली उनके इस प्रस्ताव के लिए तैयार नहीं थी, भारतीय राजदूत ने यह बात काबुल प्रेस में भी बता दी थी।[79] देश में क्रान्ति के बाद जहाँ अमीन उत्तेजक भूमिकाएं निभा रहे थे, वहीं बबरक कारमल सोवियत गार्ड की भूमिका निभाते हुए सहानुभूति पूर्ण रवैया अपना रहे थे।[80] अमीन ने सामाजिक सुधारों को इस प्रकार कार्यान्वित किया कि धर्मावलम्बी उनके विमुख हो

---

71. मुखर्जी, देखिए क्र. 11, पृ. 197-202
72. चौधरी, नरेन्द्र सिंह, 'भारतीय उपमहाद्वीप में शीत युद्ध', बरेली, 1981, पृ. 54-56
73. दास, सितांशु, 'दिल्ली, काबुल एण्ड इस्लामाबाद', ट्रिब्यून, 22 अक्टूबर, 1979
74. मुखर्जी, देखिए क्र. 11, पृ. 201-202
75. हेरीसन, सैलिंग, एस., 'डेटलाइन अफगानिस्तान : इक्जिट थ्रो फिन्लैण्ड', फॉरेन पॉलिसी, वाशिंगटन 1980-81, अंक 41, पृ. 172
76. रजवी, मुजतवा, 'पाक-अफगान रिलेशन्स सिन्स 1947 एन एनालिसिस', पाकिस्तान होराइजन, खण्ड 32, अंक 4, 1979, पृ. 46-48
77. दास, सितांशु, देखिए क्र. 73
78. काबुल टाइम्स, 20 दिसम्बर, 1979
79. नैय्यर, देखिए क्र. 69, पृ. 130
80. 'क्रोनोलोजी ऑफ अफगानिस्तान इवेन्ट्स', देखिए क्र. 63, पृ. 3

गए।[81]

भारत में भी जनता पार्टी के पंचमेल वर्गीय स्वरूप के कारण रस्साकशी आरम्भ हो गई थी। जुलाई 1979 में संसद के अधिवेशन के उद्घाटन के ठीक पहले मुख्य नेताओं ने जनता पार्टी से त्याग पत्र देकर अलग-अलग पार्टियाँ बना ली। संसद में बहुमत खो देने के कारण मोरार जी देसाई की सरकार को त्यागपत्र देना पड़ा। केन्द्रीय संसद में शक्तियों के पुनः नए समूहों के परिणाम स्वरूप स्वतन्त्र भारत के इतिहास में केन्द्र में पहली बार एक संयुक्त सरकार की स्थापना हुई, जिसमें लोकदल नेता चरण सिंह प्रधानमंत्री और कांग्रेस के यशवन्तराव चव्हाण उपप्रधानमंत्री व विदेशमंत्री बने। संयुक्त सरकार को संसद में जनता पार्टी के अतिरिक्त अन्य मुख्य राजनैतिक दलों से समर्थन का आश्वासन मिला था। किन्तु अगस्त में जब संसद में नई सरकार का विश्वास का प्रस्ताव पेश होना था, तो इन्दिरा गांधी ने घोषणा की कि कांग्रेस (ई) उनका समर्थन नहीं करेगी। संसद में अल्प मत में रह जाने के बावजूद राष्ट्रपति ने घोषणा की कि चरण सिंह सरकार जनवरी, 1980 में होने वाले मध्यावधि चुनावों तक कार्य करती रहेगी।[82]

भारत में, अफगानिस्तान की शासनात्मक अस्थिरता तथा उसके भारत पर प्रभाव का अध्ययन किया गया जिससे स्पष्ट हुआ कि खल्की सरकार की दो कमजोरियां थी- प्रथम, अप्रैल क्रान्ति आरम्भ से ही एक सैनिक विद्रोह था न कि जनता की क्रान्ति। दूसरा, इसकी गतिविधियां मुख्य रूप से एक नगर के घटनाक्रम पर आधारित थीं। सरकार को पहाड़ों की ओर से सुरक्षा की कठिन समस्याएं थी। पाकिस्तान तथा चीन की ओर से क्रान्ति विद्रोहियों को मदद मिल रही थी।[83] ऐसी स्थिति में सरकार पूरी तरह सोवियत संघ पर आश्रित थी।[84]

आलोच्य अध्ययन से स्पष्ट है कि गुटनिरपेक्ष देश होने के नाते भारत व अफगानिस्तान में एक दूसरे के प्रति विशेष सम्मान व्यक्त किया जाता रहा है। अतः उसकी विश्वसनीयता का लाभ उठाकर भारत काबुल के कम्युनिस्ट शासकों को न केवल लोकतान्त्रिक शासन पद्धति की ओर आकर्षित कर सकता था बल्कि उन्हें सोवियत संघ पर पूर्ण रूपेण आश्रित होने से भी बचा सकता था। किन्तु तत्कालीन भारतीय विदेशनीति के तहत ऐसा नहीं हो सका।

---

81. आशित्कोव,गार्वाक्यान, पोलांन्स्की, स्वेताजारोव, 'अफगानिस्तान सच्चाई क्या है', 1983, दिल्ली, पृ.103
82. ग्रि. ग्रि. कोतोव्स्की, 'समकालीन भारत का इतिहास', मास्को 1984, 'आठवें दशक में भारत 1973-79', पृ. 767-770
83. बोस, प्रदीप, 'द अफगान क्राइसिस एण्ड इण्डियाज रोल' जनता, 28 फरवरी, 1980, पृ. 7-9
84. वही

(ख) परचमी क्रान्ति व भारत

राष्ट्रपति नूर मोहम्मद तराकी की हत्या के बाद हफीजुल्लाह अमीन की दमनकारी नीतियों के कारण परचमी और खल्की एक दूसरे के निकट आ गए। अक्टूबर से दिसम्बर के बीच इन राजनैतिक दलों ने अपना सांगठनिक कार्य प्रारम्भ कर दिया।[85] किन्तु अमीन को सत्ताच्युत करना कोई सरल कार्य नहीं था, उसने अपने प्रधानमंत्रित्व काल में लगभग सभी देशभक्त नेताओं को बन्दी बना लिया था। सेना में अपने समर्थक नियुक्त कर दिए थे। दूसरी ओर अमीन की ज्यादतियों से तंग आकर बहुत से सैनिक क्रान्ति विद्रोहियों से मिल गए थे। चीन व अमरीकी हथियारों से सज्जित तथा पाकिस्तान में प्रशिक्षित हजारों अफगान विद्रोही अफगानिस्तान में घुसने की प्रतीक्षा कर रहे थे। पाकिस्तान और ईरान भी अफगान क्षेत्रों में सैनिक हस्तक्षेप कर रहे थे।[86] ऐसी स्थिति में अमीन तथा उनके मंत्री परिषद के सदस्यों ने दिसम्बर 1978 की सन्धि की चौथी धारा के तहत सोवियत सैनिक सहायता प्राप्त करना उचित समझा।[87]

नवम्बर में परचमी नेता श्री कारमल गुप्त रूप से अफगानिस्तान आ गए। उनकी पार्टी के नेताओं का मत था कि सोवियत सहायता के बिना पार्टी पूरी तरह संगठित नहीं रह सकती।[88] इसलिए 27 दिसम्बर, 1979 को काबुल स्थित रूसी सैन्य अधिकारियों से तत्कालीन घटनाक्रम पर व्यापक स्तर पर गुप्त बातचीत हुई। सोवियत सेनाएं तुरन्त ही काबुल में प्रवेश करके सभी सूचनात्मक एवं अन्य महत्वपूर्ण ठिकानों पर नियन्त्रण कर ईरान तथा पाक-अफगान सीमा की ओर फैल गईं। सोवियत सेनाओं ने अपनी कार्रवाई इतनी तीव्र गति से की कि अमरीकी, चीन व पाक साजिश असफल हो गई।[89] रूसी व अफगान सैनिकों तथा परचम ग्रुप के 3000 प्रशिक्षणार्थियों ने राष्ट्रपति भवन में आक्रमण कर [90] राष्ट्रपति अमीन को गोली मार दी। इस प्रकार 27 दिसम्बर, 1979 को अमीन की खल्की सरकार समाप्त हो गई।[91] अप्रैल 1978 से यह अफगानिस्तान में तीसरा रक्त रंजित सत्ता परिवर्तन था।[92] इससे यह स्पष्ट होता है कि भारत में जनता सरकार

85. गोयल, देशराज, 'जागृत अफगानिस्तान' 1982, पृ. 113-16
86. बनर्जी, सुबराता, 'इण्डिया अफगानिस्तान एण्ड द वर्ल्ड - ए स्टडी इन पर्सपैक्टिव' सैकुलर डेमोक्रेसी, खण्ड 13, अंक 3, फरवरी 1980, पृ. 24-27, साथ ही देखिए अजहर अन्सारी, 'अफगानिस्तान थ्रो इण्डिया आईस' (दिल्ली 1980), पृ. 67-68
87. नूरानी, ए. जी., 'अफगानिस्तान एण्ड द रूल आला', दि रिव्यू (जेनेवा), अंक 24, जून 1980, पृ. 37.52
88. बनर्जी, देखिए, क्र. 86
89. चौधरी, नरेन्द्रसिंह, देखिए क्र. 72
90. बनर्जी, देखिए क्र. 86, पृ. 67-68
91. वैदिक, वी. पी., देखिए क्र. 22, पृ. 251.
    - 'अफगानिस्तान रूसी मदद से परचमी इन्कलाब' धर्मयुग, 20 जनवरी, 1980
    - टाइम्स ऑफ इण्डिया, (नई दिल्ली) 29 दिसम्बर, 1979, काबुल न्यू टाइम्स, 2 जनवरी, 1980
92. अन्थोनी, ह्यूमन, देखिए क्र. 14, पृ. 176-77

ने तराकी सरकार को मान्यता प्रदान कर बड़ी भूल की थी।[93] अब सोवियत संघ के खुले समर्थन से परचमी क्रान्ति हो गई और अफगान विदेशनीति में एक नया अध्याय प्रारम्भ हुआ।[94]

27 दिसम्बर को काबुल रेडियो ने घोषणा की कि हफीजुल्लाह अमीन को हटा कर परचमी नेता बबरक कारमल को अफगानिस्तान का राष्ट्रपति बनाया गया है।[95] श्री कारमल ने पद संभालते ही विद्रोहियों से अपनी सरकार की सुरक्षा के लिए सोवियत संघ से सैनिक मदद का प्रस्ताव रखा। उन्होंने घोषणा की कि उनकी सरकार शान्ति पूर्ण नीतियों को जारी रखेगी और संयुक्त राष्ट्रसंघ व गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सिद्धान्तों का पालन करेगी।[96] श्री कारमल ने काबुल रेडियो में दिए गए अपने भाषण में कहा कि उनका देश भारत के साथ अपने सम्बन्धों को बनाए रखेगा।[97] साथ ही वे पाकिस्तान, ईरान व चीन से मित्रतापूर्ण सम्बन्धों के प्रयास जारी रखेंगे।[98]

अफगानिस्तान की नई डेमोक्रेटिक रिपब्लिक पार्टी देश में सैनिक व अन्य हस्तक्षेप रोकने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय गारण्टी चाहती थी।[99] 31 दिसम्बर को श्री कारमल ने ईरान के साथ दोस्ती की पहल करते हुए वहाँ हुई राजतन्त्र विरोधी राष्ट्रीय क्रान्ति का स्वागत किया। पाकिस्तान को भी उन्होंने आश्वासन दिया कि वे उनके अधिकारियों के साथ शान्तिपूर्ण बातचीत के जरिए मतभेदों को समाप्त करने के लिए तैयार हैं। किन्तु ईरान व पाकिस्तान ने क्रान्ति के प्रति सकारात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की। वे कारमल सरकार को मान्यता देने के लिए तैयार नहीं थे। उन्होंने रूसी सेनाओं के रहते किसी प्रकार की बातचीत से इन्कार किया। श्री कारमल ने 1 जनवरी को अपने भाषण में अफगानिस्तान की स्थिति को लेकर अन्तर्राष्ट्रीय विवाद तथा क्रान्तिकारी परिषद् की वैधता पर प्रश्न चिन्ह लगाये जाने पर आपत्ति प्रकट की।[100]

दिसम्बर 1979 में जब अफगानिस्तान में परचमी क्रान्ति हुई, तब दिल्ली में चरण सिंह

---

93. चौधरी, नीरजा, 'इण्डियाज स्टेण्ड ऑफ अफगानिस्तान', हिम्मत वीकली, 22 फरवरी, 1980, पृ. 7-8
94. धर्मयुग, 20 फरवरी, 1980
    - वैदिक, 'अफगानिस्तान में सोवियत कार्रवाई - क्या दक्षिण एशिया महाशक्तियों का अखाड़ा बन जाएगा', साप्ताहिक हिन्दुस्तान, नई दिल्ली, 20 फरवरी, 1980
95. बुद्धराज, विजयसेन, 'इण्डिया रिसपोन्स टू द क्राइसिस इन अफगानिस्तान', पंजाब जनरल ऑफ पॉलिटिक्स, खण्ड 4, अंक 1, जनवरी-जून 1980, पृ. 1
    - द ट्रिब्यून, 29 दिसम्बर, 1979. ठाकुर, रमेश, देखिए क्र. 30
96. काबुल न्यू टाइम्स, 1 जनवरी, 1980
97. हिन्दुस्तान टाइम्स, 29 दिसम्बर, 1979
    - गुप्ता, भवानी सेन, 'अफगान सैन्ड्रोम, हाउ टु लिव विद सोवियत पॉवर', दिल्ली, 1982, पृ. 95-96
98. एशियन रिकार्डर, खण्ड 26, अंक 7, फरवरी 12-18, 1980, पृ. 15311-12
    - मुखर्जी, देखिए क्र. 11, पृ. 250-51
99. मुखर्जी, क्र. 11, पृ. 250-51
100. अप्पादोराय, राजन, देखिए क्र. 40, पृ. 625-27
    - यही प्रश्न इस्लामिक देशों की बैठक में अफगानिस्तान के मध्य मतभेद का विषय रहा।

की अल्पमत सरकार थी। चरणसिंह के बारे में भवानी सेन गुप्ता ने लिखा कि उन्हें सामान्य अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की गूढ़ता का पता नहीं था। इसलिए उन्होंने अफगानिस्तान के बारे में गलत बयान जारी किए। लेकिन सत्य यह है कि भारतीय विदेश विभाग को स्थिति की सही जानकारी नहीं थी।[101] इन्दिरा गांधी के सत्ता में आते ही राष्ट्रपति कारमल ने प्रधानमंत्री को एक व्यक्तिगत पत्र लिखा कि अफगानिस्तान गुटनिरपेक्षता की नीति का पालन करता रहेगा। देश के आन्तरिक मामलों में लगातार अमरीकी, चीनी व पाकिस्तानी हस्तक्षेप के कारण ही उन्हें रूसी सैनिक सहायता लेनी पड़ी। ऐसा ही सन्देश उन्होंने अयातुल्ला खुमैनी के पास भी भेजा।[102]

26 जनवरी को भारतीय गणतन्त्र दिवस पर अफगान विदेशमंत्री शाह मोहम्मद दोस्त व अन्य 7 केबिनेट मंत्री काबुल स्थित भारतीय दूतावास में राजदूत डा. जे.एस. तेजा से मिले। श्री दोस्त ने भारतीय पत्रकारों को अफगानिस्तान की स्थिति की जानकारी देते हुए कहा कि चीन व पाकिस्तान क्रान्ति विद्रोहियों को सैन्य सामग्री व प्रशिक्षण प्रदान कर रहे हैं। उन्होंने कहा कि रूसी सैनिक उपस्थिति से उनकी गुटनिरपेक्ष नीति पर आँच नहीं आएगी। उदाहरण के लिए कुछ गुटनिरपेक्ष अफ्रीकी देश भी अपनी सीमाओं की रक्षा के लिए विदेशी सेना रखे हुए हैं।[103]

भारत ने अपने ही दरवाजे पर शीत युद्ध की बढ़ोत्तरी और उसके फलस्वरूप हथियारों की होड़ से बचने के लिए अपनी घोषित नीति के अनुरूप अधिक रचनात्मक दृष्टिकोण अपनाया। 10 फरवरी, 1980 को प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी के विशेषदूत एस.के. सिंह के काबुल आगमन पर अफगानिस्तान की गणतान्त्रिक सरकार ने प्रसन्नता व्यक्त की,[104] कि इससे दोनों देशों के मध्य परम्परागत मित्रता व सहयोग बढ़ेगा।[105] श्री सिंह ने प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी का सन्देश राष्ट्रपति कारमल को दिया। उन्होंने विदेशमंत्री मोहम्मद दोस्त तथा अन्य नेताओं से अफगान संकट पर बातचीत की। 11 फरवरी को अफगान सरकार द्वारा जारी किए गए वक्तव्य में कहा गया कि वे सभी पड़ोसी देशों के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्ध बनाए रखना चाहते हैं, ताकि स्वतन्त्रता, राष्ट्रीय सुरक्षा तथा आन्तरिक सम्बन्धों में बाह्‌य हस्तक्षेप समाप्त किया जा सके। साथ ही कहा गया कि अफगान सरकार की प्रार्थना पर उपस्थित सीमित सोवियत सेनाएं देश में चल रहे आन्तरिक संघर्ष तथा विदेशी हस्तक्षेप समाप्त होते ही वापस चली जाएंगी।[106] वक्तव्य में यह भी कहा गया कि अफगान सरकार के तत्कालीन विकास का प्रभाव अफगानिस्तान व भारत के परम्परागत

101. मुखर्जी, देखिए क्र. 11, पृ. 202. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 2
102. गुप्ता, पृ. 95-96. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 8 जनवरी, 1980
103. गुप्ता, भवानी सेन, पृ. 95-96
104. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 26, अंक 2, फरवरी 1980, पृ. 31-32
105. अफगानिस्तान स्टेटमेण्ट, देखिए क्र. 9
106. अप्पादोराय, राजन, देखिए क्र. 40, पृ. 625-27. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, क्र. 104

मित्रतापूर्ण और सहयोग पूर्ण सम्बन्धों पर पड़ेगा। दोनों देशों के नेताओं ने विभिन्न क्षेत्रों में पारस्परिक सहयोग की इच्छा व्यक्त की।[107]

श्रीमती गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस पार्टी के पुनः सत्तारूढ़ होने के पश्चात् चार महीने में सरकार ने इस क्षेत्र में जो उल्लेखनीय सक्रियता दिखाई, वह विश्व राजनीति और गुटनिरपेक्ष आन्दोलन में भारत की भूमिका तथा प्रभाव में वृद्धि की परिचायक थी। उन्होंने पड़ोसी देशों से सम्बन्ध बढ़ाने और उन्हें बेहतर बनाने में पहले से चले आ रहे प्रयत्नों को जारी रखा। भारतीय शान्ति एकता संगठन के महासचिव श्री ओ.पी. पालीवाल का मत है कि अफगानिस्तान भारत का एक गुटनिरपेक्ष मित्र देश है, हम अफगानिस्तान की गणतान्त्रिक पार्टी का समर्थन करते हैं। हम इस तथ्य को भी स्वीकार करते हैं कि अफगान सरकार को सोवियत संघ द्वारा प्राप्त हो रही वर्तमान सहायता किसी पड़ोसी देश के विरूद्ध नहीं है।[108]

भारतीय विदेश विभाग के प्रवक्ता ने बताया कि विदेशमंत्री श्री नरसिंह राव की रूस यात्रा के दौरान अफगान राष्ट्रपति कारमल भी वहाँ उपस्थित थे। दोनों नेताओं के मध्य विभिन्न क्षेत्रों पर विचार-विमर्श हुआ, जिसमें उन्होंने पाकिस्तान के प्रति अपने समान विचार व्यक्त किए। श्री राव ने कारमल के इस प्रस्ताव का समर्थन किया कि विश्व के किसी भी सम्मेलन में अफगानिस्तान मुजाहिदों को अलग रखेगा।[109]

14 अप्रैल को अफगान संविधान में क्रान्तिकारी परिषद को अन्तिम सहमति प्राप्त हुई। 21 अप्रैल को अफगानिस्तान का राष्ट्रीय ध्वज हटाकर क्रान्तिकारी ध्वज स्वीकार किया गया।[110] बबरक कारमल ने कावुल स्थित भारतीय राजदूत डा. जे. एस. तेजा द्वारा प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी के पास शुभकामना सन्देश भेजा, जिसमें कहा गया कि पुराने लाल झंडे को हटा कर नया झण्डा काला, लाल और हरे रंग का रखा गया है, जो पूर्व शासक अमानुल्लाह के स्वतन्त्र अफगानिस्तान के झण्डे का ही प्रतीक है। उन्होंने अफगानों तथा भारतीयों में परम्परागत मित्रता को लम्बे समय तक बनाए रखने की कामना की।[111]

14 मई को राष्ट्रपति कारमल द्वारा जारी किए गए वक्तव्य में कहा गया कि सरकार ने समस्याओं के राजनैतिक समाधान का पक्ष लिया है और आन्तरिक मामलों में बाहरी हस्तक्षेप

---

107. वही, पैट्रीआट, 12 फरवरी, 1980
108. पालीवाल, ओ. पी., 'डिफीट इम्पीरियलिस्ट कान्सपिरेसिस' द्वारा अजहर अन्सारी, देखिए क्र. 86, पृ. 76-77
109. वही,
110. एशियन रिकार्डर, 20-26 मई, 1980, खण्ड 26, अंक 21, पृ. 15463
- इण्डियन एक्सप्रेस (नई दिल्ली), 24 अप्रैल, 1980
111. हिन्दुस्तान टाइम्स, 25 अप्रैल, 1980

का विरोध किया है। उनकी सरकार पड़ोसी देशों से दूरियाँ समाप्त कर शान्तिपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करेगी। उन्होंने हिन्दमहासागर तथा खाड़ी के देशों में अमरीकी सेनाओं की उपस्थिति पर चिन्ता व्यक्त करते हुए वहाँ शान्ति की कामना की।[112] अफगान विदेशमंत्री श्री दोस्त ने कहा कि अफगान क्रान्ति तथा वर्तमान संकट के प्रति भारत तथा अफगानिस्तान के विचार समान हैं।[113]

पश्चिमी पर्यवेक्षकों के अनुसार काबुल में कारमल सरकार पूरी तरह मास्को की कूटनीति और विदेशनीति पर आधारित है।[114] श्री कारमल अफगान समाज में अपनी राष्ट्रीय नीति सर्वोपरि रखना चाहते हैं, वे अब वहाँ लोकप्रिय नेता नहीं माने जाते।[115] क्योंकि किसी देश की जनता अपनी विदेशनीति का दायित्व दूसरे पर सौंपकर शान्ति को खरीदना नहीं चाहती।[116] यही कारण है कि अफगान जनता महाशक्तियों की मशीनी सैनिक कार्रवाई के विरूद्ध संघर्ष कर रही है। बबरक कारमल खल्कियों के गृह युद्ध के विरूद्ध संघर्ष में व्यस्त हैं। परचम ग्रुप के कुछ हजार लोग ही उनका समर्थन कर रहे हैं, किन्तु जहाँ विद्रोहियों के साथ लड़ाई में उनकी पार्टी स्वयं विभाजित है,[117] वहीं देश में रूसी सेनाओं की उपस्थिति पर भी उनमें परस्पर मतभेद है।[118]

भारत-अफगानिस्तान परस्पर अच्छे मित्र

सदियों से भारत-अफगानिस्तान ने एक दूसरे की खुशियाँ-गम, विचार-दर्शन, संस्कृतियाँ-आकांक्षाए, विजय-पराजय, उपलब्धियां और कुंठाएँ बाँटी है। आज भी हमारे विचार एवं मित्र व शत्रु समान हैं। अफगान राष्ट्रपति कारमल ने 26 जनवरी, 1981 को गणतन्त्र दिवस पर भेजे गए शुभकामना सन्देश में लिखा कि अफगानिस्तान गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सिद्धान्तों द्वारा स्थापित सम्बन्धों का समर्थन करता है [119] तथा परस्पर मैत्री के लिए भारत के साथ अपने सम्बन्धों को विशेष रूप से मूल्यवान समझता है। दोनों देशों के बीच मित्रता व सहयोग के सम्बन्धों से न केवल उनके हितों की पूर्ति होती है, बल्कि इस महाद्वीप के सामान्य राजनीतिक वातावरण पर लाभकारी प्रभाव पड़ता है।[120]

---

112. स्टेटमेन्ट ऑफ द डी. आर. ए. गवर्नमैण्ट, 14 मई, 1980
    - मुखर्जी, देखिए क्र. 11, पृ. 244-45, 47
113. वही, श्री दोस्त की बर्लिन यात्रा के दौरान जारी किया गया वक्तव्य।
114. रतनाम, परेला, देखिए क्र. 1, पृ. 59
115. नैय्यर, देखिए क्र. 69, पृ. 186
116. मोहन, सुरेन्द्र, 'इडिण्यन इनीसिएटिव फंल्ड' जनता, 22 जून 1980, खण्ड 35, अंक 19, पृ. 9
117. मिश्र, पंचानन, 'इण्डिया एण्ड द अफगान क्राइसिस: विल प्लाकेशन हेल्प ?', जनता, इण्डिपेन्डेन्स डे, 1980, पृ. 7-8
118. रतनाम, परेला, देखिए क्र. 1, पृ. 59
119. हिन्दुस्तान टाइम्स, 29 जनवरी, 1981
120. अफगानिस्तान सच्चाई क्या है, देखिए क्र. 81, पृ. 86

21 जनवरी, 1982 को विदेश मन्त्रालय में संयुक्त सचिव जे.एन. दीक्षित ने अफगानिस्तान में भारतीय राजदूत का पद सम्भाला। उन्होंने काबुल में राष्ट्रपति कारमल से भेंट की और उन्हें राष्ट्रपति व प्रधानमंत्री की ओर से शुभकामनाएं दी। [121] परस्पर बातचीत में श्री दीक्षित ने भारत-अफगान सम्बन्धों तथा अन्तर्राष्ट्रीय घटनाक्रम पर अपनी स्थिति स्पष्ट की।

समय-समय पर दोनों देशों के नेताओं की यात्रा से परस्पर सम्बन्ध अधिक जागरूक हुए। क्रान्ति की पाँचवीं वर्षगाँठ में भाग लेने के लिए गए भारतीय शिष्टमण्डल के नेता डा. शंकरदयाल शर्मा ने कहा कि अफगानिस्तान और भारत के लोगों के बीच पारस्परिक सम्बन्ध समय-समय पर होने वाले राजनैतिक विकास और परिवर्तनों से परे रहे हैं, हमारी नीतियों व विचारों में समानता के दो कारण हैं: प्रथम, ऐतिहासिक सम्बन्ध और दूसरा उद्देश्यों में समानता। उन्होंने अफगानिस्तान के आन्तरिक मामलों में हो रहे हस्तक्षेप की निन्दा की और समस्या के शीघ्र समाधान की कामना की।[122]

इस प्रकार अफगानिस्तान के साथ पारस्परिक ऐतिहासिक सम्बन्धों तथा रूस से मधुर सम्बन्धों के कारण ही भारत ने परचमी क्रान्ति को स्वीकार किया, किन्तु दक्षिण एशिया की क्षेत्रीय शक्ति भारत गुटनिरपेक्ष अफगानिस्तान में रूसी सैनिकों की उपस्थिति को प्रमाणित नहीं कर सका।

(ग) आर्थिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्ध

अफगानिस्तान में क्रान्ति से हुए व्यापक परिवर्तनों तथा राजनैतिक बदलाव के पश्चात भी भारत व्यापक स्तर पर आर्थिक सहयोग करता रहा है। वह अफगानिस्तान को विभिन्न क्षेत्रों में सहायता जैसे; शिक्षा, जल-विद्युत परियोजना, चिकित्सा, स्वास्थ्य एवं अन्य विकास से सम्बन्धित योजनाओं हेतु आवश्यक सभी सामग्री देता रहा है। इसलिए डा. सलेह मोहम्मद जियरी ने कहा कि हम भारत से प्राप्त आर्थिक सहायता को भुला नहीं सकते। 1 अप्रैल 1978 की क्रान्ति के पश्चात्, दोनों देशों के मध्य लाभप्रद सन्धियाँ हुई हैं।[123]

भारत ने अप्रैल क्रान्ति के पश्चात् घोषणा की कि वह अफगानिस्तान को समृद्धि और प्रगति की ओर बढ़ने में सहयोग देता रहेगा।[124] 24 जून को काबुल में दोनों देशों के मध्य एक नए व्यापार व भुगतान समझौते पर हस्ताक्षर किए गए, जिसके अनुसार परस्पर व्यापार विदेशी

121. स्टेट्समैन (नई दिल्ली), 21 जनवरी, 1982
122. गोयल, डी. आर., देखिए क्र. 8
123. 'नॉन एलाइनमेण्ट कन्ट्रीज' (लन्दन), 1982 हवाना, पृ. 20
124. हिन्दुस्तान, 3 जून, 1978

मुद्रा (ऐसी मुद्रा जो अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में आसानी से बदली जा सके) में करने का फैसला लिया गया। समझौते पर भारत की ओर से वाणिज्य मन्त्रालय के निदेशक पी.एम.एस. मलिक तथा अफगानिस्तान की ओर से विदेश व्यापार के अध्यक्ष जी.एच. वयार ने दस्तखत किये। इस समझौते में कहा गया कि इस नई व्यापार प्रक्रिया द्वारा मान्यता प्राप्त बाजारों में जैसे-जैसे माँग व सप्लाई की मात्रा बढ़ेगी, व्यापार भी उसी गति से चलेगा।[125] भारत द्वारा मुख्य रूप से चाय, सूती कपड़ा व सूत, मशीनरी, परिवहन-संयत्र, साईकिल व उसके पुर्जे, दवाइयाँ, धातु की शिल्पकारी, जूट का सामान तथा हरी सब्जियां आदि भेजे जाते हैं। बदले में अफगानिस्तान भारत को ताजे फल, सूखे मेवे, हींग, मुलेटी व दवाइयों के लिए जड़ी बूटियाँ इत्यादि निर्यात करता है।[126] जुलाई 1978 में भारत ने लगभग 50 करोड़ रूपये मूल्य की खनिकर्म साधन सामग्री को अफगानिस्तान निर्यात किया।[127]

सितम्बर 1978 में विदेशमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने अपनी काबुल यात्रा के दौरान खल्कियों को आश्वस्त किया कि उनके आर्थिक आन्दोलन में भारत यथेष्ट सहयोग करेगा।[128] दोनों पक्षों के अधिकारियों ने जल विद्युत परियोजनाओं, औद्योगिक उपनगरियों और लघु उद्योगों के सम्बन्ध में द्विपक्षीय आर्थिक सहयोग पर चर्चा की।[129] श्री वाजपेयी ने श्री तराकी व अमीन से बातचीत के दौरान अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक स्थिति विशेषकर विकासशील देशों पर इसके प्रभाव की समीक्षा की। उन्होंने विकसित देशों से अपील की कि वे विकासशील देशों के साथ समानता के आधार पर सम्बन्ध कायम करें, ताकि विश्व में नई अर्थव्यवस्था का जन्म हो सके। श्री वाजपेयी ने अफगानिस्तान की पंचवर्षीय विकास योजना के लिए सहायता की पेशकश की।[130] उनकी यात्रा की समाप्ति पर जारी की गई संयुक्त विज्ञप्ति में कहा गया कि दोनों देश विभिन्न क्षेत्रों में आर्थिक व सांस्कृतिक सहयोग के बहुमुखी विकास के लिए समय-समय पर विचारों का आदान-प्रदान जारी रखेंगे।[131] इस प्रकार श्री वाजपेयी द्वारा पड़ोसी देशों से सम्बन्ध सुधारने की दिशा में किए गए प्रयत्नों को देखते हुए सन्देह नहीं कि भविष्य में भारत और अफगानिस्तान

---

125. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 24, अंक 6, जून 1978, पृ. 229. अफगानिस्तान न्यू ट्रेड एण्ड पेमेंण्ट्स एग्रीमेंण्ट
126. वही
127. बनर्जी, ब्रजेन्द्र नाथ, देखिए क्र. 28, पृ. 307
128. वैदिक, वेद प्रताप, देखिए क्र. 34-35, नवभारत टाइम्स 7-8 नवम्बर, 1978
129. हिन्दुस्तान (नई दिल्ली), 21, सितम्बर, 1978
130. वही, द ट्रिब्यून, 27 सितम्बर, 1978
131. वैदिक, वी. पी., 'इण्डिया एण्ड अफगानिस्तान', इण्टरनेशनल स्टडीज, खण्ड 17, 1978, पृ. 537 - नवभारत टाइम्स, 21 सितम्बर, 1978

के बीच आर्थिक सहयोग में वृद्धि होगी।[132]

यह सत्य है कि आर्थिक स्थिति में सुधार किए बिना किसी बड़े परिवर्तन की आशा नहीं की जा सकती[133] इसलिए काबुल की खल्की सरकार को अपनी महत्वाकांक्षी योजनाओं को पूरा करने के लिए पिछली सरकारों की तरह, डालर, रूबल, मार्क, पौंड, रूपये तथा येन चाहिए, किन्तु यदि उसकी नजर उत्तरी पड़ोसी के रूबल पर थम गई तो अमेरिका के साथ-साथ ईरान व पाकिस्तान के खेमों में भी हड़कम्। हुए बिना नहीं रहेगा। आज अफगानिस्तान का पुनर्निर्माण कोरी सद्भावना से नहीं हो सकता। उसे विपुल धनराशि की आवश्यकता है। इसलिए अफगान प्रधानमंत्री ने विश्व के सभी राष्ट्रों से मदद के लिए खुली अपील की है। भारत, अफगानिस्तान की उपेक्षा यह समझ कर नहीं कर सकता है कि वह साम्यवादी हो गया है और न ही वह अफगानिस्तान को सोवियत संघ से विमुख करने की पहल कर सकता है। वह यह अवश्य कर सकता है कि यदि पश्चिमी राष्ट्र अपनी थैलियाँ खोलें तो उनका सदुपयोग करने के लिए भारतीय तकनीशियनों की एक फौज काबुल भेज दे।

जनवरी, 1979 में अफगान योजना उप-मन्त्री के नेतृत्व में पाँच सदस्यीय प्रतिनिधि मण्डल ने भारत की यात्रा की, जिसमें भारत ने विभिन्न योजनाओं व उद्योगों में प्रयुक्त होने वाला पेपर, माचिस, कास्टिक सोडा, अदाह धातु, कृषि सम्बन्धी सामग्री तथा विभिन्न योजनाओं के लिए वित्तीय सहायता की स्वीकृति दी। इसके साथ ही कहा गया कि भारत सड़कों के पुनरूद्धार तथा प्रौढ़-शिक्षा के कार्यक्रम में सहायता के लिए एक शिष्ट मण्डल अफगानिस्तान भेजेगा।[134]

मई 1979 में एक संयुक्त कार्यक्रम के अन्तर्गत अफगान योजनाओं को प्रधानता दी गई, जिसमें स्टील, सिल्क-उद्योग, पेपर और कागज की लुग्दी (पल्प) का उद्योग, सीमेन्ट और सीमेन्ट का उद्योग, लघु उद्योगों का विकास, ग्रामीण विकास कार्यक्रम, चावल मिल आदि के लिए विभिन्न प्रकार के ऋण के लिए दोनों पक्ष सहमत हुए। भारत पूर्व निर्दिष्ट शर्त के आधार पर रेलवे से सम्बन्धित तकनीकी सामग्री भेजेगा जिसके अन्तर्गत 1400 किलोमीटर क्षेत्र में (पाकिस्तान और ईरान की सीमा से हेरात, कन्धार एवं काबुल से होते हुए जहीदन तक) रेलवे लाइन बिछायी जाएगी। इसमें 800 से 900 करोड़ रूपये तक खर्च होगा। इस कार्य के लिए अफगान सरकार भारत के अतिरिक्त तेल के धनी देशों से भी मदद लेगा। ईरान द्वारा भी 20 मिलियन डालर की सहायता लघु उद्योगों तथा रेलवे योजनाओं के लिए देने की सम्भावना है। भारत इस योजना

---

132. हिन्दुस्तान, 21 सितम्बर, 1978
133. बनर्जी, सुबराता, देखिए क्र. 86
134. बनर्जी, ब्रजेन्द्र नाथ, देखिए क्र. 28, पृ. 307-8

को सम्पन्न करने के लिए बड़ी संख्या में तकनीकी विशेषज्ञ भेजेगा। भारत सरकार अफगानिस्तान के शहर बामियान में दुगुनी क्षमता वाले सूक्ष्म जल विद्युत परियोजना (माइक्रो हाइडिल प्रोजेक्ट) में आवश्यक सभी सामग्री व तकनीकी सहायता देगा।[135] भारत आई.टी.ई.सी. प्रोग्राम के तहत, सजावटी सामान, मशीनरी, दवाइयाँ, किताबें तथा अन्य आवश्यक वस्तुएं विभिन्न देशों को भेंट के रूप में देता रहा है। इसी के तहत भारत ने अफगानिस्तान को एक अस्पताल भेंट के रूप में दिया है, जिसमें लगभग 20 लाख रूपये प्रतिवर्ष खर्च आता है। भारत ने अफगान सरकार की माँग पर 10,000 रूपये के खसरा के टीके भेजे।[136] इस प्रकार वर्ष 1978-79 में भारत और अफगानिस्तान के मध्य आयात-निर्यात लगभग 37 करोड़ रूपये रहा।[137] किन्तु यह सत्य है कि 1978 के पश्चात् अफगानिस्तान के विकास में 60 प्रतिशत सहायता साम्यवादी देशों द्वारा तथा अन्य सहायता यूरोपीय संघ, भारत, जापान तथा ईराक द्वारा प्राप्त हुई।[138]

अफगानिस्तान में परचमी क्रान्ति तथा रूसी सेनाओं के प्रवेश के पश्चात पश्चिमी देशों ने अपनी सहायता के साथ-साथ व्यापार भी खत्म कर दिया। जिससे सोवियत संघ के साथ उसकी आर्थिक निर्भरता बढ़ी।[139] भारत ने भी रूसी हस्तक्षेप के कारण कोई विशेषज्ञ अफगानिस्तान नहीं भेजा। विभिन्न योजनाओं तथा काबुल के विभिन्न विभागों में कार्यरत तकनीकी विशेषज्ञों को छोड़कर शेष सभी भारतीय अफगानिस्तान छोड़ चुके हैं। अफगान क्रान्ति के प्रति भारत की असमंजस पूर्ण नीति [140] के कारण व्यापार के स्तर में भी गिरावट आई है। इसका दूसरा कारण यह भी रहा कि व्यापार अब तक बड़ी मात्रा में निजी तौर पर किया जाता था तथा सरकार उन पर आयात कर के अतिरिक्त कोई प्रतिबन्ध नहीं लगा रही थी।

फरवरी 1980 में भारतीय कूटनीतिक मिशन ने काबुल की यात्रा की, जिसमें दोनों देशों के मध्य रेडीमेड कपड़े का व्यापार, बिजली का सामान, सूखे मेवे, सब्जियाँ तथा होटल का व्यापार और नवीन विकास योजनाओं पर बातचीत हुई।[141] इस दौरान उन्होंने आर्थिक तकनीकी क्षेत्र में एक दूसरे के साथ सहयोग की बात दोहराई।[142] अफगान कृषि और भूमि सुधार मंत्री फजल रहीम ने बताया कि देश को कृषि से सम्बन्धित विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग की आवश्यकता

---

135. बनर्जी, ब्रजेन्द्र नाथ, देखिए क्र. 28, पृ. 307-8
136. वही, पृ. 306
137. वही, पृ. 309. कॉमर्स रिसर्च ब्यूरो (बम्बई), 1 मार्च, 1980
138. चौधरी, नरेन्द्र सिंह, देखिए क्र. 72, पृ. 76
139. गोयल, देशराज, देखिए क्र. 85, पृ. 76-82
140. रतनाम, परेला, देखिए क्र. 1
141. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 9 फरवरी, 1980
142. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड-26, अंक 2, फरवरी 1980, पृ. 30-31

है। इसके लिए भारत कृषि सम्बन्धी, जानवरों के रख-रखाव तथा सिंचाई विशेषज्ञ अफगानिस्तान भेज सकता है।[143] भारत और अफगानिस्तान के मित्र सोवियत संघ व कुछ अन्य साम्यवादी देश उनके आर्थिक ढाँचे में सुधार के लिए मदद कर रहे हैं।[144] भारत द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में समर्थन के बदले में सोवियत संघ ने भारत के सैनिक व आर्थिक विकास में पर्याप्त योगदान दिया है। सन् 1980 के अन्त तक रूस के साथ भारतीय व्यापार 1900 करोड़ रूपये की सीमा को भी पार कर गया। जबकि अमेरिका के साथ व्यापार 1978 में 1542 करोड़ रूपये था।[145] दूसरी ओर नवम्बर 1980 में अफगान राष्ट्रपति कारमल ने बताया कि 80 प्रतिशत विदेशी सहायता उसे मास्को से प्राप्त हो रही है और सोवियत संघ के औद्योगिक विकास के लिए अफगानिस्तान से कम दामों में प्राकृतिक गैस वहाँ जा रही है।[146] सोवियत संघ 1980-81 से उनको 10,000 टन खाद्य सामग्री निःशुल्क सप्लाई कर रहा है। वह 5 हजार टन गेहूँ, कृषि सम्बन्धी तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं की बड़ी मात्रा में सप्लाई कर रहा है।[147] फिर भी काबुल में भारतीय राजदूत एस.के. सिंह ने नई दिल्ली में श्रीमती गांधी को बताया कि अफगानिस्तान में हो रहे विकास कार्यो में भारत की भूमिका, पड़ोसी देशों द्वारा की जा रही सुविधाओं की दृष्टि से, महत्वपूर्ण है, ऐसा वहाँ की सरकार स्वीकार करती है।[148] जनवरी 1981 में आर्थिक व्यापार और तकनीकी सहयोग के लिए भारत-अफगानिस्तान के मध्य संयुक्त बैठक हुई, जिसमें खाद्य सामग्री, माचिस, पेपर, अदाह धातु व कृषि सम्बन्धी उपकरणों के उत्पादन पर चर्चा हुई।[149]

14 दिसम्बर को केन्द्रीय कृषि, सिंचाई व जलापूर्ति मंत्री राव बृजेन्द्रसिंह ने प्रेस के एक वक्तव्य में कहा कि भारत ने अफगानिस्तान को जल संसाधन के विकास तथा अन्य सम्बन्धित क्षेत्रों में सहायता के लिए प्रस्ताव रखा है। इसके प्रति अफगान जल और ऊर्जा मंत्री डा. राज मोहम्मद पकतीन ने प्रसन्नता व्यक्त की। उन्होंने जल संसाधन के विकास कार्यो व गतिविधियों पर विचार-विमर्श के लिए भारत की यात्रा की। वे इस दौरान रूड़की इन्जीनियरिंग इन्स्टीट्यूट देखने गए। उन्होंने भारत के विकास कार्यों और विशेष रूप में योजनाओं और बहुआयामी

---

143. चक्रवर्ती, सुमित, "रिपेयरिंग अमीन'स डेमेज, द अगरेरियन शेयर", द्वारा अजहर अन्सारी, देखिए क्र. 95, पृ. 81
144. चक्रवर्ती, सुमित, "डेटलाइन काबुल", एन आई विटनेस रिपोर्ट ऑन अफगानिस्तान टुडे, "ग्रोईंग टाइस विद इण्डिया" दिल्ली 1983, पृ. 79-86
145. चौधरी, नरेन्द्र सिंह, देखिए क्र. 72, पृ. 76
146. 'अफगानिस्तान, टु ईयर्स ऑफ आक्यूपेशन', यू. एस. डिपार्टमेण्ट ऑफ स्टेट पेपर ऑन अफगानिस्तान, रिलीज्ड ऑन दिसम्बर 23, 1981, अमेरिकन सेण्टर, न्यू दिल्ली
147. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र.11, पृ.192
148. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 10 अगस्त 1981
149. बनर्जी, बृजेन्द्र नाथ, देखिए क्र. 28, पृ. 300

परियोजनाओं के निर्माण की सराहना की तथा भारतीय विशेषज्ञों द्वारा उनके देश में भी इस क्षेत्र में परामर्श दिए जाने का अनुरोध किया।[150]

3 अप्रैल को अफगान विदेशमंत्री श्री दोस्त की भारत यात्रा पर, श्रीमती गांधी के साथ बातचीत में दोनों नेताओं ने परस्पर आर्थिक सहयोग पर चर्चा करते हुए कहा कि भारतीय सहायता से स्थापित कोल्ड स्टोरेज द्वारा अफगानिस्तान की स्थिति में सुधार होगा। वहाँ विभिन्न परियोजनाओं व क्षेत्रों में कार्य कर रहे भारतीय विशेषज्ञों की संख्या और अधिक बढ़ाने की बात भी कही गई।[151] अफगान सरकार ने सामाजिक सेवाओं के क्षेत्र में दवाइयों और स्वास्थ्य साधनों की सहायता का अनुरोध किया। इसके लिए उन्होंने एक सामान्य अस्पताल और एक नाक, कान व गला के विशेष अस्पताल के निर्माण की इच्छा व्यक्त की।[152]

भारत-अफगान संयुक्त आयोग

अफगान विदेशमंत्री की नई दिल्ली यात्रा के दौरान परस्पर आर्थिक सम्बन्धों के लिए दोनों देशों के मध्य संयुक्त आयोग का प्रावधान रखा गया। उसी के तहत काबुल स्थित भारतीय राजदूत श्री दीक्षित उच्च स्तरीय शिष्ट मण्डल लेकर दिल्ली आए। उन्होंने अर्थशास्त्रियों के साथ भारत-अफगान संयुक्त आर्थिक आयोग की विस्तृत रूपरेखा तैयार की। जिस पर मई में होने वाली बैठक में विचार-विमर्श किया जाएगा। इस वार्ता में अफगानिस्तान में रेलवे के अनुसंधान पर विचार नहीं किया गया।[153]

विदेश सचिव नटवर सिंह भारत-अफगान संयुक्त आयोग की बैठक में भाग लेने के लिए काबुल पहुँचे। वहाँ सोवियत हस्तक्षेप के बाद पहली बार अफगान राष्ट्रपति के अनुरोध पर भारत-अफगान आर्थिक सहयोग के लिए प्रशिक्षण केन्द्र का प्रारूप तैयार किया गया।[154] श्री सिंह ने वहाँ व्यापार, व्यावसाय व स्वास्थ्य मन्त्रियों से सरकारी स्तर पर बातचीत की।[155] जिसमें दोनों देशों द्वारा वहाँ चल रही परियोजनाओं को पूर्ण करने के लिए संयुक्त रूप से कार्य करने को कहा गया। काबुल में भारतीय सहयोग से निर्मित 100 बिस्तरों वाले अस्पताल में 16 भारतीय डाक्टर तथा मेडिकल स्टाफ भी है। इसके अतिरिक्त भारत द्वारा 100 बिस्तरों वाले

---

150. फॉरन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड-27, अंक 12, दिसम्बर 1981, पृ. 337
151. चक्रवर्ती, सुमित, देखिए क्र. 144, पृ. 44
152. टाइम्स ऑफ इण्डिया, (दिल्ली) 14 मई, 1982
153. हिन्दुस्तान टाइम्स, 8 अप्रैल, 1982
154. द हिन्दू (मद्रास), 28 अप्रैल, 1982
155. इण्डियन एक्सप्रेस, 16 मई, 1982

"पौली क्लीनिक" अस्पताल के लिए सहायता देने का निश्चय किया गया। जिसमें नया शल्य चिकित्सा विभाग तथा बाहरी मरीजों के लिए अलग व्यवस्था की जाएगी। इस योजना को पूर्ण करने के लिए भारतीय स्वास्थ्य विभाग की टीम ने नवम्बर 1982 में काबुल की यात्रा की।

मुख्य रूप से भारत-अफगान सहयोग काबुल के निकट पुले-चर-चर्खी के बीच सड़क के लिए एक औद्योगिक भू-सम्पत्ति से सम्बन्धित हुआ। इस कार्य के निरीक्षण व प्रबन्ध के लिए भारत से दो इंजीनियर (मैकेनिकल व सिविल) भेजे गए। इसके आधार पर दिल्ली के निकट ओखला में औद्योगिक केन्द्र की स्थापना की गई। 42 अफगान इकाइयाँ भारतीयों के साथ सहयोग कर रहीं हैं। वे कपड़े के उद्योग, जूते, मिठाइयाँ, प्लास्टिक की वस्तुएं सूती धागे, मकान बनाने की सामग्री, साबुन और सर्फ के निर्माण इत्यादि अनेक क्षेत्रों में सहयोग कर रही हैं। लगभग 5 भारतीय विशेषज्ञ पश्चिमी अफगानिस्तान के हेरात के उत्तर में सेल्मा जल विद्युत परियोजना में कार्य कर रहे हैं । तीन माइक्रो हाइडिल पावर प्रोजेक्ट भी भारतीय सहयोग से बामियान, सामनगान और फैजाबाद में बन रहे हैं, जिसमें सम्बन्धित सामग्री की सप्लाई का प्रावधान था, किन्तु इन क्षेत्रों में विद्रोही कार्रवाइयाँ प्रारम्भ हो जाने से उसे नहीं भेजा जा सका। फैजाबाद क्षेत्र में भारतीय योजना इंजीनियरों द्वारा कार्य प्रारम्भ किया जा रहा है।[156]

संयुक्त आयोग के प्रति प्रसन्नता प्रकट करते हुए श्री कारमल ने कहा कि अफगानिस्तान की उन्नति व प्रगति के लिए भारत उनके साथ सहयोग कर रहा है। आयोग के छठे सत्र में आर्थिक, व्यावसायिक और तकनीकी सहयोग के प्रति उपयोगी कार्य के लिए कहा गया। इसके अतिरिक्त कृषि और ग्रामीण विकास, जन स्वास्थ्य कल्याण, यातायात के साधन (ट्रक-बसें इत्यादि) तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं का आयात-निर्यात शामिल है।[157] अफगान डेमोक्रेटिक पार्टी के प्रथम सचिव डा. सलेह मोहम्मद जियरी ने कहा कि भारत-अफगान संयुक्त आयोग परस्पर आर्थिक सम्बन्धों के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है [158] जिसके तहत इन सम्बन्धों में अधिक वृद्धि हुई।[159] नई सहयोग व्यवस्था का कार्य भारतीय विशेषज्ञों द्वारा किया जाएगा। किन्तु यह कार्य सहज नहीं है।[160] कुल मिलाकर दोनों देशों का व्यापार अफगानिस्तान के पक्ष में जाता है। भारत से उसको निर्यात लगभग 15 करोड़ रूपये का होता है और अफगानिस्तान से निर्यात लगभग दो करोड़ रूपये है, क्योंकि भारत मुख्य रूप से सूखे मेवे अफगानिस्तान से मंगाता है।[161]

156. चक्रवर्ती, सुमित, देखिए क्र. 144, पृ. 44-47
157. वही, पृ. 66-73
158. "नॉन एलाइनमेंट कन्ट्रीज" (लन्दन), 1982 हवाना, पृ. 20
159. मुखर्जी, साधन देखिए क्र. 11, पृ. 209
160. टाइम्स ऑफ इण्डिया (दिल्ली), 14 मई, 1982
161. वही

राष्ट्रपति कारमल ने अमेरिका में श्रीमती गांधी से अपनी भेंट में कहा कि पश्चिम ने आर्थिक सहायता देना बन्द नहीं किया है। अफगानिस्तान में उद्योग, खेती, काश्तकारी और विदेश व्यापार बढ़ रहा है, स्थिति पहले से अधिक उन्नत हुई है, बाजारों में किसी चीज की कमी नहीं है, वस्तुओं के मूल्य भी समान हैं।[162] दोनों देशों के मध्य उन्नत व्यापार व आर्थिक सम्बन्धों के लिए पी.एच. वयार के नेतृत्व में तीन सदस्यीय प्रतिनिधि मण्डल ने 7 सितम्बर को भारत की यात्रा की। अफगान प्रतिनिधि मण्डल ने भारत से आयातित वस्तुओं तथा विशेष रूप से आधुनिक वस्तुओं की मात्रा बढ़ाये जाने का अनुरोध किया। भारतीय प्रतिनिधि मण्डल का नेतृत्व वाणिज्य मन्त्रालय के निदेशक श्री के. शानडलया ने किया। दोनों पक्षों ने भारत से निर्यात की जाने वाली चाय, आयात किए जाने वाले सूखे मेवे, दोनों देशों के मध्य बैकिंग संस्थाओं द्वारा गठजोड़ तथा विभिन्न क्षेत्रों में परस्पर आर्थिक सहयोग की रूपरेखा तैयार की। दूसरी बैठक में श्री वयार ने भारत से अभियान्त्रिक सामग्री के निर्यात पर विचार-विमर्श किया। उन्होंने अफगानिस्तान में विकास योजनाओं, उद्योगों और देश में उन्नति के साधनों को उपलब्ध कराने के लिए सहयोग का प्रस्ताव रखा।

भारत से पिछले कुछ वर्षो में लगभग 3 करोड़ रू. के इंजीनियरिंग साज-सामान अफगानिस्तान को निर्यात किए गए, जिसमें साइकिल और उसके पुर्जे, डीजल इंजन, स्टील निर्माण सम्बन्धी सामग्री, खानों की मशीनरी, आटोमोबाइल्स पुर्जे, तार और केबिल, बांधने की डोरियाँ (सामग्री) व ढले हुए लोहे से उत्पादित वस्तुएं इत्यादि मुख्य हैं। ई. ई. पी. सी. के अन्तर्गत अफगानिस्तान को उत्पादन और विभिन्न योजनाओं के लिए इस वर्ष 9 करोड रूपये के सम्बन्धित साज-सामान के निर्यात की सम्भावना है। अगस्त 1982 में व्यापार में सुगमता के लिए जून 1978 में किए गए स्वतन्त्र मुद्रा में भुगतान के समझौते को निर्धारित समय से एक वर्ष और बढ़ा दिया गया और इसे आगे भी बढ़ाने का प्रविधान रखा गया।[163]

अफगानिस्तान और भारत जन स्वास्थ्य एवं विकलांग लोगों की सुविधाओं के प्रतिष्ठापन के लिए सहमत हो गए हैं। इस सम्बन्ध में 6 दिसम्बर, 1982 को काबुल में एक समझौते पर हस्ताक्षर किए गए, जिसके तहत एक नया 300 बिस्तरों वाला प्रसूति अस्पताल का प्रावधान रखा गया। साथ ही कहा गया कि काबुल में बच्चों के अस्पताल का विस्तार, एक सर्व साधारण जनता के लिए अस्पताल तथा विकलांगों की सुविधा के लिए केन्द्र की पुनर्स्थापना आदि के

---

162. टाइम्स ऑफ इण्डिया (दिल्ली), 30 अगस्त, 1982
163. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड-28, अंक 9, सितम्बर 1982, पृ. 225-26

लिए भारत चिकित्सा सम्बन्धी विशेषज्ञ भी भेजेगा।[164]

1978 से पूर्व भारतीय तकनीकी विशेषज्ञों की संख्या अफगानिस्तान में लगभग 100 थी, किन्तु धीरे-धीरे ये कम होती गई और 1981 में इनकी संख्या 20 ही रह गई थी, पुनः स्थिति में सुधार किया गया और नवम्बर, 1982 में इनकी संख्या 30 हो गई। वैसे भारतीय पक्ष 50 विशेषज्ञ भेज सकता है, किन्तु समस्या उनके रहने की व्यवस्था को लेकर है। यद्यपि यह अफगान पक्ष की समस्या है, किन्तु वहाँ की परिस्थितियों को देखते हुए अभी यह सम्भव नहीं है।[165]

सोवियत-अफगान व्यापार 1982 में निर्धारित सीमा से बढ़कर 700 मिलियन रूबल हो गया जो 1981 में 400 मिलियन रूबल था।[166] जबकि भारत से अफगानिस्तान को आयात-निर्यात इस प्रकार हुआ:

भारत से अफगानिस्तान को आयात-निर्यात

(व्यापार मिलियन डालर में)

वर्ष	भारत से निर्यात	भारत में आयात
1978-79	37.54	37.85
1979-80	42.16	21.58
1980-81	54.75	20.57
1981-82	43.21	17.02

यद्यपि अफगानिस्तान में सरकार बदलने से व्यापार के स्तर में गिरावट आई, किन्तु अब स्थिति में सुधार हुआ है। अफगान प्रधानमंत्री सुल्तान अली किश्तमन्द ने बताया कि 1983 में अफगानिस्तान ने 101 टाटा बसें और 10,000 टन अतिरिक्त चाय भारत से खरीदी है। यद्यपि उसका 45 मिलियन डालर रूस के साथ अतिरिक्त व्यापार हुआ था, किन्तु जापान व जर्मनी को छोड़कर आवश्यक वस्तुओं का आयात भारत से होना महत्वपूर्ण बात थी। श्री किश्तमन्द ने बताया कि उनकी सरकार अब सरकारी स्तर पर व्यापार बढ़ाए जाने पर विचार-विमर्श कर रही है। उन्होंने बताया कि कुछ भारतीय व्यापारिक कम्पनियां खराब वस्तुओं के व्यापार के लिए अनुग्रह करती हैं। काबुल में एक भारतीय के नाम से चलने वाला साझे का व्यवसाय विशेष रूप से जापान के साथ व्यापार कर रहा है। इसके लिए भारत सरकार द्वारा सही निर्देश दिए

164. एशियन रिकार्डर, 29 जनवरी - 4 फरवरी, 1983, अंक 5, खण्ड 29
165. चक्रवर्ती, सुमित, देखिए क्र. 144, पृ. 44-45
166. एशियन रिकार्डर, 18-24 जून, 1983, अंक 25, पृ. 17225 इकोनोमिक्स टाइम्स (नई दिल्ली)

जाने की आवश्यकता है।[167] अप्रैल क्रान्ति की वर्षगाँठ पर गए भारतीय शिष्ट मण्डल से बातचीत में श्री किश्तमन्द ने कहा कि उन्हें इन कठिन परिस्थितियों में आर्थिक सहायता के साथ ही परस्पर व्यापार की आवश्यकता है।[168] काबुल में भारतीय कम्पनी वैप्को (डब्ल्यू.ए.पी.ओ.) पानी व बिजली की सप्लाई में मदद कर रही है। सेल्मा जल विद्युत परियोजना, ग्रामीण विकास योजनाएं, उद्योग प्रशिक्षण तथा कुछ अन्य क्षेत्रों में भी भारतीय वहाँ सहयोग कर रहे हैं। इन कार्यक्रमों व योजनाओं को बढ़ाने के लिए न केवल परीक्षण किया जा रहा है बल्कि बहुत से तकनीकी हाथ इसे योग्य बनाने में लगे हुए हैं। इसके लिए बहुत से तकनीकी विशेषज्ञों को पुन: भारत द्वारा अफगानिस्तान भेजा गया है।[169] दोनों देशों में जनस्वास्थ्य व लघु उद्योगों के क्षेत्र में सहयोग में वृद्धि हुई है। अक्टूबर 1983 में काबुल में भारत-अफगान संयुक्त आयोग की मध्यावधि समीक्षा की गई।[170] जिसमें परस्पर व्यापार और तकनीकी सहयोग को बेहतर बनाने के लिए कहा गया।[171]

अफगान बैंकिंग प्रतिनिधि मण्डल ने दिसम्बर 1983 में भारत की यात्रा की। जिसके द्वारा बैंकिंग (अधिकोषण) सहयोग के लिए दोनों देशों की मुद्रा में व्यापार की व्यवस्था की गई। अफगानिस्तान की ओर से भारतीय व्यापारियों को शीघ्र लेन-देन (विनिमयन) के लिए विशेष सुविधा दी गई।[172] अफगान केन्द्रीय बैंक के गवर्नर मि. मेहराबुद्दीन पख्तियावाल ने 25 सितम्बर को वांशिगटन में विश्व बैंक की वार्षिक बैठक में कहा कि 1982 में अफगानिस्तान की अर्थ-व्यवस्था क्रान्ति विद्रोहियों के संघर्ष के कारण तितर-बितर हुई थी। पश्चिम द्वारा आयात-निर्यात में प्रतिबन्ध से विदेशी लेन-देन से उपार्जित धन में प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। अफगान उत्पादन के मूल्य गिरे हैं। उन्होंने कहा कि हम अभी स्थिति में सुधार की आशा नहीं रखते।[173]

23-28 जनवरी, 1984 को भारत सरकार के बैंकिंग डिवीजन के निमंत्रण पर अफगानिस्तान बैंक के गवर्नर खलील सिद्दीकी के नेतृत्व में एक प्रतिनिधि मण्डल भारत आया। परस्पर विचार-विमर्श के लिए भारतीय प्रतिनिधि मण्डल का नेतृत्व रिजर्व बैंक आफ इण्डिया के उप गवर्नर श्री ए. घोष ने किया। दोनों देशों के मध्य हुए समझौते में कहा गया कि परस्पर व्यापार में सुविधा के लिए दोनों देशों में एक दूसरे की बैंकों की शाखाएं स्थापित होगीं। जिससे व्यापारियों को बैंकों में खाता खोलने की सुविधा होगी। भारत ने इसके लिए अफगान पक्ष को प्रशिक्षण

---

167. मुखर्जी साधन, देखिए क्र. 11, पृ. 208-9
168. पेट्रीआट, 28 अप्रैल, 1983
169. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 11, पृ. 208-9
170. वार्षिक रिपोर्ट 1983-84, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित, पृ. 64
171. मुखर्जी, देखिए क्र. 11, पृ. 209-10
172. वही
173. एशियन रिकार्डर, मार्च 18-24, 1984

व्यवस्था का प्रावधान रखा और स्वीकार किया कि इस वार्ता को अन्तिम रूप देने के लिए भारतीय प्रतिनिधि मण्डल काबुल जाएगा।[174] दोनों देशों के मध्य 20 फरवरी, 1984 को एक समझौता हुआ, जिसमें विभिन्न चरणों में व्यापार व तकनीकी कार्यों में सहयोग का प्रावधान रखा गया। दोनों देशों की बैंकों के मध्य प्रत्यक्ष व्यापार सम्पर्क की स्थापना के लिए कहा गया कि यह समझौता भारतीय प्रतिनिधि मण्डल की अफगान प्राधिकारी वर्ग के साथ वार्ता के पाँच दौरों के पश्चात् हुआ। भारतीय प्रतिनिधि मण्डल में वाणिज्य मंत्री, विदेश विभाग, वित्त विभाग, भारतीय स्टैट बैंक और अन्य राष्ट्रीयकृत बैंकों के प्रतिनिधि सम्मिलित हुए।[175]

6 मई को भारत-अफगानिस्तान के मध्य काबुल में एक संविदा पर हस्ताक्षर किए गए, जिसके अन्तर्गत भारत से 5 मिलियन डालर के मोदी रबर के 40,000 ट्रक-टायर की सप्लाई होगी।[176] 27 सितम्बर को सैटेलाइट द्वारा टेलीफोन सम्पर्क जुड़ जाने से आशा व्यक्त की गई कि इससे दोनों देशों के मध्य वाणिज्य सम्बन्धों में सुधार होगा।[177] इस प्रकार वर्ष 1984 में भारत के साथ अफगानिस्तान का व्यापार 160 करोड़ रूपये का रहा।[178]

21 जुलाई, 1985 को अफगान वाणिज्य मन्त्रालय के अध्यक्ष मि. जियाउद्दीन जिया के नेतृत्व में एक प्रतिनिधि मण्डल भारत आया। परस्पर वार्ता में दोनों देशों द्वारा लगभग 40 करोड़ रूपये के व्यापार के लिए कहा गया। इस प्रतिनिधि मण्डल का मुख्य उद्देश्य व्यापार में भुगतान प्रक्रिया को अधिक उन्नत बनाना था। अफगान प्रतिनिधि मण्डल ने बैंकिंग संस्थाओं, राजकीय व्यापार निगम, इंजीनियरिंग निर्यात परिषद् और अन्य निर्यात करने वाली कम्पनियों के साथ विचार-विमर्श किया।[179]

भारत-अफगान संयुक्त आयोग की सातवीं बैठक में भाग लेने के लिए 5 अगस्त को अफगान विदेशमंत्री श्री दोस्त एक उच्चस्तरीय प्रतिनिधि मण्डल के साथ नई दिल्ली आए। बातचीत के दौरान भारतीय प्रतिनिधि मण्डल का नेतृत्व विदेश राज्य मंत्री खुर्शीद आलम खान ने किया। उन्होंने स्वास्थ्य, व्यवसाय और योजना आयोग पर बातचीत की।[180] परस्पर बातचीत में भारत ने

---

174. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 30, अंक 1, जनवरी 1984, बैकिंग एग्रीमेण्ट, पृ. 1
 - द हिन्दू, 30 जनवरी, 1984
175. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 30, अंक 2, फरवरी 1984, पृ. 41
 - एशियन रिकार्डर, मार्च 18-24, 1984 अफगानिस्तान ट्रेड एग्रीमेण्ट विद इण्डिया
176. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 11, पृ. 10
177. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 30, अंक 9, सितम्बर 1984
178. नेशनल हेराल्ड, 10 अगस्त, 1985
179. प्रेस इनफोरमेशन ब्यूरो, गवर्नमेण्ट ऑफ इण्डिया, इण्डो अफगान ट्रेड टु वी रिव्यूड, नई दिल्ली, 21 1985.
180. हिन्दुस्तान टाइम्स, 6 अगस्त, 1985

अफगानिस्तान के आर्थिक, औद्योगिक विकास तथा समाज सेवाओं के विस्तार के लिए मदद में वृद्धि का फैसला किया। बैठक की समाप्ति पर कहा गया कि भारत काबुल में बाल स्वास्थ्य संस्थान के विस्तार के लिए संयत्र तथा दवाइयों की सप्लाई करेगा। इस संस्थान में 100 मरीजों के रहने वाला एक सर्जिकल वार्ड का निर्माण किया जाएगा। जिसमें लगभग 500 मरीजों के प्रतिदिन जाँच की व्यवस्था की जाएगी।[181] काबुल में बिजली की सप्लाई में वृद्धि के लिए भारत तीन डीजल जनरेटिंग सैट की सप्लाई करेगा। इसके अतिरिक्त वह वहाँ निर्मित औद्योगिक बस्ती में दस और औद्योगिक इकाइयों की स्थापना में सहयोग करेगा। इस केन्द्र के लिए 20 लाख रूपये के संयंत्र उपलब्ध कराने का भी फैसला किया गया। बातचीत के दौरान अफगान सरकार की ओर से कपड़े के कारखाने के निर्माण में मदद का अनुरोध किया गया तथा वहाँ लघु उद्योगों के विकास के अध्ययन के लिए भारत से विशेषज्ञ भेजने का प्रस्ताव रखा गया। समझौते के अनुसार भारत कृषि अनुसंधान सामग्री के निर्यात में सुधार करेगा। अफगानिस्तान भारत से इंजीनियरिंग सामान आयात कर सकेगा। इस सम्बन्ध में अफगानों को प्रशिक्षण का प्रावधान रखा गया।[182] भारत द्वारा अफगानिस्तान को यह सहायता आई.टी.ई.सी. प्रोग्राम के अन्तर्गत प्रदान की गई।[183] अफगान विदेशमंत्री ने स्वदेश जाते हुए दिल्ली हवाई अड्डे पर पत्रकारों से बातचीत में कहा कि संयुक्त आयोग की बैठक में दोनों देशों के मध्य आर्थिक और तकनीकी सहयोग का नया प्रारूप तैयार किया गया।[184]

भारत और अफगानिस्तान के मध्य समुद्री मार्ग न होने के कारण परस्पर व्यापार में जहाँ पाकिस्तान की स्वीकृति एक बड़ी कठिन समस्या है। वहीं उससे अच्छे सम्बन्ध न होने के कारण दोनों देशों को व्यापार में हानि भी उठानी पड़ती है।[185] व्यापार के लिए भारतीय सामान बम्बई से भेजा जाता है, उसके बाद कराची पहुँचकर वहाँ से रेलगाड़ी द्वारा क्वेटा और इसके बाद ट्रकों से अफगानिस्तान भेजा जाता है। इसमें न केवल पैसा अधिक खर्च होता है, बल्कि समय भी अधिक लगता है। एक ही उपाय रह जाता है कि वस्तुओं को वायुयान द्वारा भेजा जाए, किन्तु इससे अत्यधिक खर्च आएगा। कुछ आवश्यक वस्तुओं, विशेष रूप से शीघ्र खराब होने वाली वस्तुओं को इस प्रकार भेजा जा सकता है। इसलिए अफगान फल इत्यादि के आयात

---

181. राज्य सभा में विदेश राज्य मन्त्री खुर्शीद आलम खान ने सदस्यों को एक प्रश्न के उत्तर में यह जानकारी दी। राज्य सभा डिबेट्स, प्रश्न नं. 440, 22 अगस्त, 1985
182. हिन्दुस्तान टाइम्स, 9 अगस्त, 1985. नवभारत टाइम्स, 9 अगस्त, 1985 - नेशनल हेराल्ड, 10 अगस्त, 1985
183. राज्य सभा में विदेश राज्य मन्त्री खुर्शीद आलम खान का वक्तव्य, देखिए क्र. 181
184. हिन्दुस्तान टाइम्स, 6 अगस्त, 1985
185. नेशनल हेराल्ड, 10 अगस्त, 1985

में भारत द्वारा न केवल हवाई जहांज के भाड़े में रियायत दी जाती है, बल्कि यह आयात कर से भी मुक्त होता है।[186] व्यापार में आवागमन की इसी परेशानी के कारण अफगानिस्तान पाकिस्तानी वस्तुओं का बहुत बडा आयातक रहा है और पड़ोसी रूस सबसे बड़ा बाजार।[187] भारत-अफगानिस्तान के मध्य व्यापार में कमी का एक कारण यह भी है कि अफगान समाचार पत्र संघ वख्तर सूचना एजेन्सी स्थायी रूप से दिल्ली में अपने संवाददाता नियुक्त किए हुए है, किन्तु भारतीय समाचार संघ का एक भी संवाददाता काबुल में नहीं हैं। यही कारण है कि भारत का व्यापार अन्तर्राष्ट्रीय समाचार मीडिया द्वारा अछूता ही रह जाता हैं। इस स्थिति में सम्भवतः शीघ्र ही सुधार होगा।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि आने वाले समय में भारत-अफगानिस्तान के बीच सम्बन्ध पहले से उन्नत होगें। सभी अफगान शरणार्थी स्वदेश लौट जाएगें तथा अन्य आन्तरिक समस्याएं समाप्त होने से एक तकनीकी युग की शुरूआत होगी, साथ ही सम्बन्धों को सही दिशा देने की आवश्यकता है। इसलिए भारत सरकार दिल्ली तथा अन्य शहरों में रह रहे अफगान शरणार्थियों की गतिविधियों को सावधानी से देख रही है। वे यहाँ चोरी से माल को भेजने व मंगाने का कार्य (स्मगलिंग), नशीली दवाइयों तथा गैरकानूनी मुद्रा व्यापार से जुड़े हुए हैं। इनमें से बहुत से व्यक्ति पकड़ लिए गए हैं और कुछ देश से बाहर निष्कासित कर दिए गए हैं। इनमें से कुछ अफगान पासपोर्ट न मिलने पर वापस लौट रहे हैं। यहाँ रह रहे अफगान नागरिक अब अफगान-भारत मित्रता परिषद् स्थापना के लिए भी बातचीत कर रहे हैं।

सांस्कृतिक सम्बन्ध

अप्रैल 1978 की क्रान्ति के पश्चात् अफगानिस्तान में नई सरकार ने भारत के साथ नजदीकी सांस्कृतिक सम्बन्ध स्थापित करने का फैसला किया। नई दिल्ली में वर्ष 1978-79 के लिए भारत-अफगानिस्तान के मध्य सांस्कृतिक समझौता हुआ, जिसके अनुसार दोनों देश शिक्षा, सूचना, संस्कृति और खेलों के क्षेत्र में सहयोग करेंगे। वे शोध व प्रशिक्षण कार्य में भी सहयोग करेगें। दोनों देश चुनिन्दा विश्व विद्यालयों से साहित्य व प्रकाशनों को एक दूसरे को प्रदान करेंगे। भारतीय विशेषज्ञ अफगानिस्तान में टेलीविजन संगठन की स्थापना तथा उसकी कार्यप्रणाली में सहयोग देंगे। परस्पर समझौते के अनुसार, ऐतिहासिक इमारतों और धार्मिक स्मारक चिह्नों के पुनरूद्धार का कार्य भी भारतीय विशेषज्ञ करेंगे। परस्पर मधुर सम्बन्धों के लिए दोनों देशों के मध्य लम्बे समय

---

186. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 11, पृ. 208
187. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 14 मई, 1982

से चले आ रहे सांस्कृतिक सम्बन्धों पर सेमीनार होगा। समझौते में कहा गया कि भारत 40 अफगान विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति प्रदान करेगा। खेल के क्षेत्र में भारत हॉकी-कोच अफगानिस्तान भेजेगा। परस्पर वार्ता में अफगानिस्तान का नेतृत्व सूचना व संस्कृति मंत्री श्री अब्दुल रहीम नवीन ने किया।[188]

काबुल में सबसे अधिक अंग्रेजी अध्यापकों की मांग है। इस क्षेत्र में 29 भारतीय अध्यापक वहाँ कार्य कर रहे हैं। भारतीय केन्द्रीय विद्यालय संगठन के तहत काबुल में उसकी एक शाखा को स्थापित किया गया है, जिसमें भारतीय दूतावास के कर्मचारियों, तकनीकी विशेषज्ञों तथा वहाँ भारतीय मूल के हिन्दू व सिंघवों के बच्चे पढ़ते हैं।[189] भारत सरकार ने अपने यहाँ अफगान विद्यार्थियों की शिक्षा के लिए लगभग 300 सीटें निश्चित की हैं । वे यहाँ पर सामान्य ज्ञान और कला, औषधि शास्त्र, अभियान्त्रिकी, स्थानीय विमान चालन प्रशिक्षण, समाजशास्त्र तथा योजना सम्बन्धी विषयों पर अध्ययन कर सकते हैं।

1982 के मध्य में काबुल में भारतीय राजदूत श्री दीक्षित तथा अफगान औद्योगिक विभाग के चैयरमैन सैयद अफगानी द्वारा नये आशामाई मन्दिर की आधार शिला रखी गई जिसमें कारमल सरकार ने पूरा सहयोग व्यक्त किया। इसमें लगभग 8 मिलियन अफगानी (13 लाख रूपये) खर्च होगा। जिसे स्थानीय हिन्दू तथा सिक्ख संगठन वहन करेंगे। जनता के ज्ञानवर्धन के लिए अफगानिस्तान में विज्ञान विद्यापीठ के एक सदस्य डा. अहमद जावेद ने फारसी में रवीन्द्र नाथ टैगोर की कहानी "काबुली वाला" का अनुवाद किया। इसके अतिरिक्त उन्होंने टैगोर की गीतांजली और मालांचा का भी फारसी में अनुवाद किया। इस कार्य में उन्होंने भारतीय भाइयों की मदद ली।

अफगानिस्तान ने नई दिल्ली में भारतीय अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मेला में भाग लिया। जिससे सांस्कृतिक सम्बन्धों का आदान-प्रदान बढ़ा। नवम्बर-दिसम्बर 1982 में नई दिल्ली में होने वाले नवीं एशियाई खेलकूद प्रतियोगिता में लगभग 40 अफगान कसरती पहलवानों (एथेलेटिक) ने हिस्सा लिया। इनके साथ ही एशियाई सांस्कृतिक उत्सवों में भाग लेने के लिए अफगान सांस्कृतिक विभाग के 18 सदस्य भारत आए।[190]

27 सितम्बर, 1984 को नई दिल्ली में सैटेलाइट द्वारा भारत-अफगानिस्तान के मध्य सीधी टेलीफोन व्यवस्था का उद्घाटन संचार मंत्री वी. एल. गाडगिल ने किया। उन्होंने अफगान

---

188. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 24, अंक 4, अप्रैल 1978, पृ. 167
189. चक्रवर्ती, सुमित, देखिए क्र. 144, पृ. 44
190. वही

संचारमंत्री मोहम्मद असलमवतनजार को शुभकामनाएं देते हुए कहा कि इसके द्वारा परस्पर सम्बन्धों व सहयोग में वृद्धि होगी और सांस्कृतिक सम्बन्धों को पहले से अधिक सुदृढ़ बनाया जा सकेगा। श्री नजार ने भी इस व्यवस्था पर प्रसन्नता व्यक्त की। इस टेलीफोन सेवा द्वारा दोनों देशों में प्रतिदिन कुछ निर्धारित घंटों के लिए रेडियों प्रसारण हो सकेगा। इसके द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय टेलीफोन सेवा से जुड़ने का लाभ मिलेगा। भारत इस तरह की व्यवस्था 42 अन्य देशों के साथ कर चुका है।[191]

भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्धों की परिषद् के साथ एक समझौते के तहत काबुल में शास्त्रीय संगीत के प्रशिक्षण के लिए भारतीय संगीत और सांस्कृतिक केन्द्र बनाने का निश्चय किया गया।[192] अगस्त 1984 में इसकी स्थापना की गई। इस सम्बन्ध में दोनों देशों के मध्य हुए समझौते में कहा गया कि भारत संगीत प्रशिक्षक तथा बाद्ययंत्र उपलब्ध कराएगा।[193] जबकि अफगानिस्तान उन्हें आवास व परिवहन की सुविधाएं देगा। अफगान सरकार ने भारतीय सहायता के प्रति आभार व्यक्त किया। संचारमंत्री अब्दुल कादिर अशना ने भारत से चार संगीत प्रशिक्षक तथा एक नृत्य प्रशिक्षक भेजने का अनुरोध किया, ताकि संगीत के केन्द्र में नृत्य का पाठ्यक्रम प्रारम्भ किया जा सके। अभी इस केन्द्र में गायन, तबला और सितार का प्रशिक्षण दिया जाता है। भारतीय संगीत के प्रति अफगानों में बढ़ती हुई रूचि को देखते हुए आशा व्यक्त की गई कि इस तरह के संगीत केन्द्र अन्य प्रान्तों में भी खोले जा सकते हैं।

अगस्त 1985 में अफगान विदेशमंत्री श्री दोस्त ने भारत यात्रा के दौरान एक सांस्कृतिक समझौते का प्रावधान रखा। 7 अगस्त को दोनों देशों के मध्य त्रिवर्षीय (1985-87) सांस्कृतिक समझौता हुआ। जिसमें विद्यालयों की कार्य प्रणाली, लाइब्रेरियन, इतिहासकार, कलाकार, क्रियात्मक ग्रुप, पत्रकार, खेल समूह (टीम), प्रबन्धात्मक सलाहकार, वैज्ञानिक व तकनीकी सहयोग के लिए शिष्ट मण्डल का आदान-प्रदान, किताबें तथा अन्य पत्र-पत्रिकाएं, माइक्रो फिल्मों के लिए आवश्यक पुस्तकें व कला प्रकाशन आदि की व्यवस्था की गई। इस समझौते के अन्तर्गत भारत 10 अफगान विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति प्रदान करेगा। अफगान शोध छात्रों को विशेषज्ञता के आधार पर फैलोशिप तथा अफगान बच्चों के विकास तथा जन सहयोग के लिए शोध-वृति प्रदान की जाएगी। भारत ऐतिहासिक खंडहरों की सुरक्षा तथा मरम्मत के लिए अफगानों को प्रशिक्षण प्रदान करेगा। वह किताबों, हस्तलिपि और प्राचीन ग्रन्थ इत्यादि की रक्षा व सुरक्षित रखने में सहयोग करेगा। इस

191. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 30, अंक 9, सितम्बर 1984, पृ. 257
192. चक्रवर्ती, देखिए क्र. 144
193. इण्डो-अफगान ट्रेड टॉक, राज्य सभा, देखिए क्र. 182

समझौते में भारत की ओर से सांस्कृतिक विभाग के सचिव वाई. एस. दास तथा अफगानिस्तान की ओर से राज्य योजना समिति के उपमंत्री माहिद्दीन साहवाज ने हस्ताक्षर किए।[194]

अफगान संचार मंत्री श्री अशाना ने कहा कि उनकी सरकार भारत के साथ सांस्कृतिक सम्बन्धों को अधिक मजबूत करना चाहती है। उन्होंने कहा कि सरकार वर्ष 1986 के अन्त तक नई दिल्ली में अफगानिस्तान की राष्ट्रीय कलाओं की प्रदर्शनी लगाने पर विचार कर रही है।[195]

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि भारत-अफगानिस्तान के मध्य आशा के अनुरूप सांस्कृतिक सम्बन्धों में वृद्धि नहीं हुई है। यह आश्चर्य की बात है कि काबुल में अभी तक भारत ने न कोई स्वतन्त्र सांस्कृतिक मिशन खोला है और न ही सहायता मिशन। जबकि अमेरिका व फ्रांस जैसे दूर दराज के देश ये काम बखूबी कर रहे हैं। अफगानिस्तान की समस्याओं के अध्ययन के प्रति भारत में जैसा अपेक्षा भाव है, वैसा बर्मा के अलावा अन्य किसी पड़ोसी देश के बारे में नहीं है। इसी कारण अफगान विश्वविद्यालयों में भारतीय शिक्षाविदों की संख्या नगण्य है। आज अन्तर्राष्ट्रीय परिपेक्ष्य में बदलते हुए समीकरण को देखते हुए यदि अफगानिस्तान के साथ व्यापार और उद्योग को फैलाने के साथ-साथ बड़े पैमाने पर सांस्कृतिक आदान-प्रदान का कार्यक्रम प्रारम्भ किया जाय तो वह भारत-पाकिस्तान और अफगानिस्तान तीनों को ही नजदीक लाने का कार्य करेगा।

(घ) अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप और भारतीय दृष्टिकोण

24 दिसम्बर, 1979 की रात्रि को जब शेष विश्व क्रिसमस का त्यौहार मनाने की तैयारी कर रहा था, काबुल की घाटी माल वाहक विमान की आवाज से गूंज रही थी। रूसी सेना विमानों द्वारा जलालाबाद पार करते हुए पाकिस्तानी सीमा से लगे महत्वपूर्ण खैबर शहर होते हुए अफगान अधिकारियों के सहयोग के लिए आ रही थी।[196]

उस समय भारत की आन्तरिक राजनीति अनोखे ढंग के संकट का सामना कर रही थी। जनता पार्टी का आन्तरिक ढाँचा छिन्न-भिन्न हो चुका था तथा चौ. चरण सिंह की अल्पमत सरकार की कोई साख नहीं जम सकी। चुनावों का दौर शुरू हो चुका था। ऐसी स्थिति में हर पार्टी की निगाह विदेशों से हट कर आन्तरिक राजनीति पर टिकी थी। 27 दिसम्बर को

---

194. कलचरल एक्सचेन्ज प्रोग्राम विद अफगानिस्तान साइन्ड, प्रेस इनफोरमेशन ब्यूरो, गवर्नमेण्ट ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली, अगस्त 7, 1985
- हिन्दुस्तान टाइम्स, 8 अगस्त, 1985
195. दैनिक जागरण, 26 मई, 1986
196. एशियन रिकार्डर, 29 जनवरी - 4 फरवरी, खण्ड 26, अंक 5, पृ. 15287

अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप के कुछ घंटे पश्चात ही रात 11.15 पर नई दिल्ली में सोवियत राजदूत ने विदेश सचिव आर.डी. साठे को यह जानकारी दी कि सोवियत सेनाएं अफगान सरकार की प्रार्थना पर, परस्पर मित्रता सन्धि व संयुक्त राष्ट्र के 51वें अनुच्छेद के अनुरूप [197] विदेशी आक्रमण और हस्तक्षेप से रक्षा के लिए अफगानिस्तान भेजी गई हैं।[198] 28 दिसम्बर को भारत सरकार द्वारा अफगान सरकार के लिए जारी किए गए वक्तव्य में कहा गया कि उन्हें गुटनिरपेक्षता के सिद्धान्तों पर चलना चाहिए। भारत किसी देश द्वारा दूसरे देश के आन्तरिक मामलों में बाहरी हस्तक्षेप (दबाव) का सदैव विरोध करता है। क्योंकि कोई भी विदेशी शक्ति आक्रामक स्थिति पर सही कदम उठाने और सामान्य स्थिति बहाल करने में समर्थ नहीं हो सकती।[199]

इस अन्तर्राष्ट्रीय समस्या के प्रति भारत ने तटस्थता का रूख अपनाते हुए न तो निन्दा की और न ही रूस का साथ दिया। यद्यपि वह इस कार्रवाई पर अप्रसन्न था किन्तु जहाँ मास्को के साथ उसकी 20 वर्षीय मित्रता सन्धि, सैनिक सहायता व 300 मिलियन का वार्षिक लाभप्रद व्यापार था, वहीं दूसरा पहलू यह भी रहा कि भारत स्वयं उस समय अस्थिरता की स्थिति से गुजर रहा था।[200] चौ. चरण सिंह तथा अन्य मंत्री चुनावी दौरों में व्यस्त थे। इसलिए केन्द्र से इस स्थिति पर कोई महत्वपूर्ण वक्तव्य प्रसारित नहीं किया जा सका। इस प्रश्न की महत्ता का ज्ञान तब हुआ, जब तीन दिन बाद अमेरिका ने बड़ी मात्रा में पाकिस्तान को शस्त्र सामग्री भेजने का निर्णय लिया, जिसके फलस्वरूप उपमहाद्वीप में रूस-अमरीकी शीतयुद्ध का खतरा बढ़ गया।[201] यही कारण था कि प्रारम्भ से ही भारत ने रूसी हस्तक्षेप से अधिक पाकिस्तान को अमेरिका द्वारा सहायता दिए जाने पर ध्यान केन्द्रित किया। समाचार पत्रों में भी यह खबर सुर्खियों में रही।[202]

30 दिसम्बर को प्रधानमंत्री चरण सिंह को अमरीकी राष्ट्रपति कार्टर का एक पत्र प्राप्त हुआ, जिसमें अफगानिस्तान में रूसी कार्रवाई की निन्दा की गई थी। किन्तु उसमें पाकिस्तान को

---

197. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 13
 - यू. एन. डाक्यूमेण्ट्स ए/एस-6/पी. वी. 2, पृ. 31-32
198. बुद्धराज, विजय सेन, देखिए क्र. 95
 - मिखाइलोव के., 'प्रोवोक्टरी कम्यूनिज्म ओवर अफगानिस्तान', इण्टरनेशनल अफेयर्स
 - (मास्को) अंक 1, जनवरी 1980, नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69
 - द ट्रुथ अवाउट अफगानिस्तान, मास्को पब्लिकेशन, हिन्दुस्तान टाइम्स, 4 जनवरी 1980
199. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, दिसम्बर, 1979, पृ. 217
200. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 48-50
201. कौर, कुलवन्त, "रीसेन्ट डवलपमेण्ट इन अफगानिस्तान एण्ड इट्स इम्पैक्ट ऑन इण्डियाज सिक्योरिटी", पंजाब जनरल ऑफ पॉलिटिक्स, खण्ड 4, अंक 1, जनवरी से जून, 1980 पृ. 10-27
202. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 15-29

दी जाने वाली शस्त्र सामग्री का जिक्र नहीं था, जबकि भारत को इस सम्बन्ध में प्रेस से जानकारी मिल गई थी।[203] इसलिए प्रधानमंत्री ने पत्र के जबाब में लिखा कि भारत अफगानिस्तान में शान्ति व स्थिरता चाहता है, किन्तु अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को शस्त्र सप्लाई इस मार्ग में बाधा है। अतः उन्हें अपनी नीति बदलनी चाहिए।[204] भारत में अमरीकी राजदूत के समक्ष भी इस प्रश्न पर विरोध प्रगट किया गया,[205] कि जब भी पाकिस्तान को सैन्य सहायता मिली है, दक्षिण एशिया में तनाव उभरा है।[206]

अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप पर काबुल स्थित भारतीय दूतावास अधिक जानकारी हासिल नहीं कर सका था।[207] यद्यपि इस सम्बन्ध में कुछ सांकेतिक जानकारी 21 दिसम्बर को भारत भेजी गई थी, किन्तु इसमें अफगानिस्तान-पाकिस्तान के बीच सीमा पार हस्तक्षेप तथा ईरान व चीन के साथ अफगानिस्तान की सीमा के विषय में कुछ नहीं कहा गया। सोवियत उपविदेशमंत्री पिरोवियन ने रूस में स्थित भारतीय राजदूत श्री गुजराल से बातचीत में अफगानिस्तान के विरूद्ध पाकिस्तानी षड्यन्त्रों की बात अवश्य की, पर इस बात का कोई संकेत नहीं दिया कि उनकी सेनाएं आगे बढ़ रही हैं। किन्तु बी.बी.सी. की खबरों ने सबको चौंका दिया।[208]

31 दिसम्बर को चौ. चरण सिंह ने अपना चुनावी कार्यक्रम रोककर अफगानिस्तान में रूसी सेनाओं की उपस्थिति पर अधिक जानकारी के लिए दिल्ली स्थित सोवियत राजदूत यूरी वोरोन्तसोव को बुलाया और कहा कि उनकी इस कार्रवाई से क्षेत्र में तनाव की स्थिति आई है, इसलिए वे आशा करते हैं कि सोवियत सेनाएं शीघ्र ही वापस लौट जाएगी।[209] गुटनिरपेक्ष अफगानिस्तान की जनता अपने देश में किसी हस्तक्षेप को स्वीकार नहीं करेगी। जब तक आक्रमण की स्थिति न हो किसी देश को ऐसे कदम नहीं उठाने चाहिए। राजदूत वोरोन्तसोव एक बड़े कूटनीतिज्ञ रहे हैं, उन्होंने कहा कि वे इस सम्बन्ध में सोवियत सरकार को सूचना दे देंगे, कि यह विचार

---

203. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 11, पृ. 202-5
204. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 1-13
205. अप्पादोराय, राजन, देखिए क्र. 40, पृ. 621-22
206. बुद्धराज, विजयसेन, देखिए क्र. 95
 - इण्डियन एक्सप्रेस 1 जनवरी, 1980
207. नैय्यर, देखिए क्र. 69, पृ. 9-13
208. गुजराल, इन्द्रकुमार, "भारत अफगानिस्तान में रूस के फौजी हस्तक्षेप के विरूद्ध रहा है", पंजाब केसरी (जालन्धर), 13 जुलाई, 1988
209. अप्पादोराय, राजन, देखिए क्र. 40, पृ. 621-622
 - टाइम्स ऑफ इण्डिया, 2 जनवरी, 1980
 - प्रसाद, विमल, "इण्डिया एण्ड द अफगान क्राइसिस", इन्टरनेशनल स्टडीज़, खण्ड-4, अंक 19, अक्टूबर-दिसम्बर 1980, पृ. 635-41
 -मिश्रा, के0पी0, "अफगानिस्तान इन क्राइसिस", नई दिल्ली 1980, पृ. 77-83

भारतीय प्रधानमंत्री द्वारा व्यक्त किए गए हैं।[210] प्रधानमंत्री स्वयं सोवियत संघ की प्रभावी कार्रवाई देख रहे थे।[211] इसलिए नये वर्ष पर रूसी राजदूत के निवास स्थल पर भेजे गये सन्देश में पूर्ण सावधानी बरती गई, उसमें लिखा गया कि भारत अफगानिस्तान में रूसी सेनाओं की उपस्थिति और उसकी भूमिका का अध्ययन कर रहा है।[212] वास्तव में जनता व लोकदल सरकारों की नीति रही है कि वे एक शक्ति से सम्बन्ध सुधारने के लिए दूसरे के साथ सम्बन्धों को तोड़ना नहीं चाहती, क्योंकि इससे भारत की सुरक्षा को खतरा हो सकता था।[213] दूसरी ओर भारत सरकार के तटस्थ रवैये को देखते हुए भी अधिकांश भारतीय कूटनीतिज्ञ सोवियत कार्रवाई की निन्दा कर रहे थे। उनका मानना था कि रूसी हस्तक्षेप इस्लाम पर एक आक्रमण है।[214] इस सम्बन्ध में बहुत सी जनसभाएं हुईं।[215] नेतागण मुस्लिम वोटों की खातिर रूसी सेनाओं की वापसी की मांग कर रहे थे।[216] लगभग सभी समाचार पत्रों में इसे दुखद घटना कहा गया, किन्तु संचार साधनों (रेडियो, टेलीविजन) में इस कार्रवाई का समर्थन किया गया। मद्रास से प्रसारित "द हिन्दू" में कहा गया कि एक छोटे देश अफगानिस्तान के विरूद्ध सोवियत संघ का यह कदम सैनिक आक्रमण का ही हिस्सा है, साथ ही दो विचार रखे गये कि क्या इस तरह के हस्तक्षेप से अन्तर्राष्ट्रीय कानून और संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा राष्ट्रीय प्रभुत्व की सुरक्षा की गारण्टी मिल सकती है। द्वितीय, महाशक्तियों की नीतियां ही शान्ति के लिए खतरा हैं।[217] ट्रिब्यून (चण्डीगढ़) ने लिखा कि अफगानिस्तान की कम्युनिस्ट क्रान्ति को जैसे ही सोवियत संघ द्वारा अपने नियन्त्रण में लिया गया, वैसे ही ईरान व पाकिस्तान में स्थिति से निपटने के लिए राजनैतिक व सैनिक विप्लव-सा आ गया।[218] द टाइम्स आफ इण्डिया ने अपने सम्पादकीय में अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप के पश्चात् भारत की स्थिति को प्रकाशित किया। उसने लिखा कि रूस वर्तमान क्रान्ति को निर्देशित करना चाहता है। तीन दिन बाद समाचार पत्र ने स्पष्ट किया कि वहाँ रूसियों की पकड़ मजबूत हो रही है।[219] इण्डियन एक्सप्रेस ने कहा कि इस संकट से भारत को पाकिस्तान

---

210. मुखर्जी, देखिए क्र. 11, पृ. 202-5
211. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ.48-50
212. वही, पृ. 250-51
 - वी0 विवेकानन्द, "अफगानिस्तान इनवेशन व्यूस फ्रॉम इण्डिया", समर एशिया पैसिफिक कम्युनिटी (9), 1980, पृ. 72. इण्डियन एक्सप्रेस, 2 जनवरी, 1980
213. बुद्धराज, देखिए क्र. 95, पृ.1-8. द संडे ट्रिब्यून, 3 जनवरी, 1980. प्रसाद, विमल, देखिए क्र. 211
214. गोयल, डी.आर. देखिए क्र. 8
215. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 50-51
216. कौर, कुलवन्त, देखिए क्र. 201
217. द हिन्दू (मद्रास), 1 जनवरी, 1980
218. द ट्रिब्यून (चंडीगढ़), 2 जनवरी, 1980
219. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 2 जनवरी, 1980

की ओर से खतरा बढ़ गया है।[220] द हिन्दुस्तान टाइम्स ने लिखा कि अफगान संकट के लिए दोनों महाशक्तियाँ जिम्मेदार हैं। जहाँ एक ओर रूसी कार्रवाई निन्दनीय है, वहीं अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को सैनिक सहायता एक शक्तिशाली खतरनाक खेल का ही हिस्सा है। अतः रूसी सैनिकों को शीघ्र वापस जाना चाहिए।[221]

सोवियत सरकार ने इस ओर ध्यान इस लिए नहीं दिया, क्योंकि प्रथम तो महाशक्तियाँ प्रायः अपनी ताकत के घमण्ड में इस तरह के विरोध पर कम ही ध्यान दिया करती हैं। द्वितीय, उनकी विचार धारा थी कि यदि बात करनी भी पड़ी तो चुनाव के बाद बनने वाली सरकार से करेंगे। तब तक उनके पैर अफगानिस्तान की धरती पर मजबूती से जम चुके होंगे।[222]

श्रीमती इन्दिरा गांधी जो उस समय विपक्ष की नेता थी, ने राष्ट्रीय सुरक्षा व हित के लिए 31 दिसम्बर को संवाददाता सम्मेलन में कहा कि हम किसी भी प्रकार के विदेशी हस्तक्षेप के खिलाफ हैं।[223] किन्तु उन्होंने रूस के प्रति उदार रूख अपनाते हुए कहा कि अफगानिस्तान में रूसी सेनाओं का प्रवेश एक तरफा कार्रवाई नहीं है। वहाँ दूसरी ओर से हस्तक्षेप किए जा रहे हैं, पूरे क्षेत्र में व्याप्त अव्यवस्था से शान्ति को खतरा उत्पन्न हो गया था।[224] कांग्रेसी नेता सी.एम. स्टीफेन ने कहा कि अफगानिस्तान में दाऊद के काल (1973-78) से ही लगातार बाह्य हस्तक्षेप हो रहे थे, इसलिए अमेरिका को अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप के विरूद्ध शिकायत करने का कोई अधिकार नहीं है।[225] भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) अफगानिस्तान में रूसी कार्रवाई पर समर्थन दिए जाने का विरोध कर रही थी और रूसी प्रभाव वाली कम्युनिस्ट पार्टी सोवियत संघ का समर्थन कर रही थी। किन्तु दोनों ही पार्टियों ने खल्की व परचमी पार्टी के प्रति अपना समर्थन व्यक्त किया।[226]

वास्तव में श्रीमती गांधी की नीति प्रारम्भ से ही रूस से प्रभावित रही है। बीच में जनता पार्टी की सरकार ने नीति में कुछ फेर बदल करना चाहा था, किन्तु पुनः श्रीमती गांधी ने सत्ता में आते ही रूसी कार्रवाई पर विश्वास व्यक्त किया और कहा कि काबुल सरकार अनेक कठिन परिस्थितियों से गुजर रही थी और वह मदद चाहती थी, इसलिए सोवियत संघ ने काबुल में

---

220. इण्डियन एक्सप्रेस, 1 जनवरी, 1980
221. द हिन्दुस्तान टाइम्स, 1 जनवरी, 1980
222. गुजराल, इन्द्रकुमार, देखिए क्र. 208
223. बुद्धराज, देखिए क्र. 95
224. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 11, पृ. 72. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 51
225. प्रसाद, विमल, देखिए क्र. 209. द ट्रिब्यून, 3 जनवरी 1980
226. नैय्यर, देखिए क्र. 69, पृ.57

प्रवेश किया।[227] प्रधानमन्त्री 9 जनवरी को अमरीकी ब्रोड कास्टिंग कम्पनी में दिए गए पहले साक्षात्कार में कहा कि सोवियत हस्तक्षेप की अपेक्षा अमेरिका व चीन के मित्रतापूर्ण सम्बन्धों का विकास अधिक अचम्भित करने वाली घटना है।[228] फ्रेंच रेडियो स्टेशन पर एक अन्य साक्षात्कार में श्रीमती गांधी ने कहा कि अमेरिका ने सर्वप्रथम इस क्षेत्र में अस्थिरता की नींव डाली थी, परन्तु उन्होंने स्वीकार किया कि रूसी सेनाएं वापस जानी चाहिए क्योंकि इससे उनके देश के लिए भी खतरा हुआ है।[229]

लोकसभा चुनावों में श्रीमती गांधी तथा उनकी पार्टी के जीत के पश्चात उनके पास ऐसे लोगों का जमघट था जो पिछली सरकार की नीतियों को पूरी तरह बदलना चाहता था। इसलिए जल्दबाजी में विचार-विमर्श व स्थिति का ठीक जायजा लिए बिना एक सक्रिय सलाहकार ने संयुक्त राष्ट्रसंघ में भारतीय राजदूत श्री बृजेश मिश्रा को आदेश दिया कि वे रूस के इस कदम की सराहना करें तथा अपना मत उसके पक्ष में दें। किन्तु विश्व जनमत को देखते हुए श्रीमती गांधी ने शीघ्र ही अपने दृष्टिकोण को परिवर्तित कर लिया।

नई दिल्ली में स्थिरता का दौर प्रारम्भ हो चुका था। कांग्रेस सरकार के सत्ता में आते ही अमेरिका व रूस के राजदूतों ने भारतीय विदेश विभाग से अलग-अलग उनकी नई कूटनीति की जानकारी ली। रूसी राजदूत ने कहा कि स्थिति के सामान्य होते ही रूसी सेनाएं शीघ्र ही अफगानिस्तान से लौट जाएंगी। अमरीकी राजदूत ने राष्ट्रपति कार्टर के सन्देश में कहा कि इस संकट से दक्षिण एशिया में भारत की स्थिति कमजोर हुई है।[230] भारत के लिए यह दोहरा संकट था, इसलिए श्रीमती गांधी ने कहा कि रूसी सैनिकों की उपस्थिति से जहाँ शीत युद्ध प्रारम्भ होगा, वहीं दूसरी ओर हथियारों की होड़ को बढ़ावा मिलेगा।[231] किन्तु रूस ने कठिन परिस्थितियों पर भारत को आर्थिक, सैनिक तथा नैतिक समर्थन प्रदान किया है, इसलिए हम रूसियों के अन्तर्मन में गलत फहमियां नहीं उत्पन्न करना चाहते। पर इस तथ्य को अस्वीकार नही किया जा सकता कि सोवियत संघ के अपने कूटनीतिक स्वार्थ हैं।[232] 1968 में चेकोस्लोवाकिया में सोवियत संघ

---

227. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 57
228. अमरीकी रक्षा सचिव हरोल्ड ब्राउन की (6-10 जनवरी) पीकिंग यात्रा पर श्रीमती गांधी द्वारा प्रतिक्रिया स्वरूप चीन-अमेरिका के कूटनीतिक सम्बन्ध पर विस्तार से विचार किया गया।
229. ए टेलीफोनिक इण्टरव्यू रिपोर्टिड बाई न्यू चायना न्यूज एजेन्सी, 10 जनवरी, 1980
230. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 106-40
231. कौर, कुलवन्त, "पाक-अफगान रिलेशन नेबरिंग कन्ट्रीस रिसपोन्स", दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1985, पृ. 138-39
  - द हिन्दुस्तान टाइम्स, "द दोस्त विजिट", 9 सितम्बर, 1981
232. मिश्रा, पंचानन, देखिए क्र. 117. भसीन, प्रेम, "इण्डियाज रोल इन अफगान ट्रैन्गल", जनता, फरवरी 10, 1980, खण्ड 1, अंक 35, पृ. 5-7

द्वारा सैनिक हस्तक्षेप किए जाने पर भी भारत ने रूस के साथ अपनी मित्रता को ही प्रस्तुत किया था। दूसरी ओर अफगानिस्तान के साथ भी मधुर सम्बन्धों के कारण भारत उसकी पूरी स्वतन्त्रता का समर्थन करता है। वह चाहता है कि रूसी सेनाएं वापस लौट जाएं और अफगानिस्तान स्वयं अपनी समस्याओं के समाधान की पहल करे।[233] किन्तु दुर्भाग्य से काबुल की वर्तमान सरकार का दृढ़ व निश्चित गठन नहीं है और न ही वह अधिक विस्तृत है। जमींदार व मुल्लाह मिलकर सरकार को तोड़ने में लगे हैं। जिन्हें विदेशी समर्थन प्राप्त है।[234] इस प्रकार नई सरकार ने विदेश मन्त्रालय की नीतियों द्वारा स्पष्ट कर दिया था कि भारत न तो रूस को नाराज करना चाहता है और न ही अमेरिका के साथ चल सकता है। श्रीमती गांधी ने कहा कि हमें अलग एक स्वतन्त्र और गुटनिरपेक्ष सिद्धान्तों पर आधारित निर्णय लेना है तभी अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में उनकी स्थिति स्पष्ट हो सकेगी।[235] इसमें सन्देह नहीं कि अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप से एशियाई राजनीति में भारत की भूमिका महत्वपूर्ण हुई।[236]

अफगान समस्या के प्रति विश्व प्रतिक्रिया

यह प्रथम सत्य है कि इतनी बड़ी संख्या में रूसी सेनाओं के प्रवेश के समय विश्व राजनीति में तुरन्त कोई वाद-विवाद नहीं हुआ। वास्तव में, 1978 की अफगान-रूस मैत्री सन्धि के अनुसार अफगानिस्तान को रूस से सहायता का अनुरोध करने तथा रूस को अनुरोध के अनुसार सहायता देने का अधिकार है। स्वयं श्रीमती गांधी ने इसको स्वीकार करते हुए कहा कि यह कार्रवाई दोनों ही पक्षों का संयुक्त निर्णय है।[237]

अफगानिस्तान में तराकी सरकार की स्थापना के पश्चात् ही आन्तरिक विद्रोह व बाह्य हस्तक्षेप प्रारम्भ हो गया।[238] किन्तु तराकी की हत्या और अमीन द्वारा सत्ता हथियाने से यह उग्र रूप में फैल गया। अमीन अमेरिका से आर्थिक, सैनिक और राजनैतिक समर्थन की आशा कर रहा था, जबकि अमेरिका पाकिस्तान को अत्याधुनिक हथियार देकर उनके विरूद्ध तैयार कर रहा

---

233. दत्त, वी0 पी0,"इण्डियाज फॉरेन पॉलिसी", 1984, नई दिल्ली, पृ. 371-75
234. बुद्धराज, विजयसेन, देखिए क्र0 95
235. मुखर्जी, साधन देखिए क्र0 11, पृ. 205-7. अप्पादोराय, राजन, देखिए क्र0 40, पृ. 670-71
236. बोस, प्रदीप, "द अफगान क्राइसिस एण्ड इण्डियाज रोल-II", जनता, मार्च 2, 1980, खण्ड 35, अंक 4, पृ. 13-14
237. भसीन, प्रेम, देखिए क्र. 232
238. अप्रैल, 1978 से देश पर पाकिस्तान व ईरान की ओर से सशस्त्र प्रहार हो रहा था जिसे अमेरिका, चीन, सउदी अरब, मिस्र और इजरायल की सैनिक सहायता प्राप्त थी। इस अघोषित युद्ध की चुनौती का सामना करने के लिए रूसी सैनिक सहायता प्राप्त करना अप्रैल क्रान्ति के नेताओं का सर्वसम्मत दृष्टिकोण था।

था। स्थिति की गम्भीरता को देख अमीन ने सोवियत संघ से सहायता का अनुरोध किया,[239] किन्तु रूस अमीन की अमेरिका परस्त नीतियों का विरोध करता था।[240] अतः रूस के खुले समर्थन से अफगानिस्तान में पुनः क्रान्ति द्वारा सोवियत समर्थित सरकार की स्थापना हुई। जिसका मत था कि देश में अमरीकी साम्राज्यवादियों के खतरे के कारण ही रूसी सैनिक यहाँ बुलाये गए है।[241] सोवियत संघ द्वारा इस तरह अफगानिस्तान में सैनिक हस्तक्षेप उसकी विदेशनीति से थोड़ा अलग था। किसी भी निर्गुट देश पर उसकी सबसे बड़ी सैनिक कार्रवाई थी। जिसकी सभी गैर साम्यवादी राष्ट्रों ने निन्दा की।[225] विश्व भर में प्रतिक्रिया व्यक्त की गई कि सोवियत संघ खाड़ी क्षेत्र में गरम पानी (अरब सागर) की ओर बढ़ना चाहता है।[243] विश्व जनमत का दबाव था कि रूस को अपनी सेना हटा लेनी चाहिए।[244]

27 दिसम्बर को जब रूसी सैनिकों ने अफगानिस्तान में प्रवेश किया तब अमेरिका व ब्रिटेन के नेता इस कार्रवाई पर फोन से विचार-विमर्श कर रहे थे कि क्या रूस, अफगानिस्तान के जरिये खाड़ी के तेल क्षेत्र पर अपना कब्जा करना चाहता है।[245] राष्ट्रपति कार्टर ने सोवियत संघ की इस नीति के विरोध में अमरीकी रक्षा नीति में परिर्वतन कर सैनिक महत्व के अनेक निर्णय लिए। पाकिस्तान के मध्य सम्बन्धों को नया रूप दिया गया।[246] 28 दिसम्बर को भेजे गए संदेश में उन्होंने सोवियत राष्ट्रपति ब्रझनेव को चेतावनी दी कि वे शीघ्र ही अपनी सेनाएं अफगानिस्तान से वापस बुला लें, नहीं तो इसका उनके अमेरिका के साथ सम्बन्धों में गम्भीर प्रभाव पड़ेगा।[247] श्री कार्टर ने रूस पर सेनाओं की वापसी तक आर्थिक प्रतिबन्ध लगा दिए। ब्रिटेन ने भी अमरीकी नीति का अनुसरण किया। वहाँ की प्रधानमत्री मारगेट थैचर ने कहा कि संयुक्त राष्ट्र की अध्यक्षता में रूसी सैनिकों को तुरन्त बिना शर्त अफगानिस्तान से वापस जाना चाहिए।[248] फ्रांस तथा जापान ने भी रूसी सेनाओं की वापसी के लिए कहा।[249] दूसरी ओर 1 जनवरी को अफगान राष्ट्रपति कारमल ने कहा कि सोवियत सैनिक सौर (अप्रैल) क्रांति की

---

239. वासफी, सैयद, देखिए क्र. 4.
240. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ 85-86. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 9 दिसम्बर, 1979
241. गोयल, डी0आर0, देखिए क्र. 8
242. चौधरी, नरेन्द्र सिंह,देखिए क्र.72,पृ 59-60
243. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 27, अंक 4, अप्रैल 1981, पृ. 110-13
244. रतनाम, परेला, देखिए क्र. 1, पृ 46
245. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 1-2
246. दत्त, वी0पी0, देखिए क्र. 233
247. एशियन रिकार्डर, 29 जनवरी-4 फरवरी, 1980, खण्ड 26, अंक 5, पृ. 15287
 - बगदाद आब्जर्वर, (कराची) 30 दिसम्बर, 1979. न्यूयार्क टाइम्स, 19 दिसम्बर, 1979
248. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 2 मार्च, 1980
249. वी0 विवेकानन्द, देखिए क्र. 212. इण्डियन एक्सप्रेस, 25 जनवरी, 1980

उपलब्धियों की रक्षा के लिए अपने सम्प्रभु अधिकार का उपयोग करते हुए संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के अनुरूप अनुरोध करके बुलाये गए हैं। श्री ब्रझनेव ने 'प्रावदा' में दिए गए अपने साक्षात्कार में कहा कि अफगानिस्तान में वाह्य शक्तियों द्वारा सशस्त्र हस्तक्षेप के कारण उनके पास मित्र देश के अनुरोध को स्वीकार करने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं बचा था। स्थिति शान्त होते ही रूसी सैनिकों को वापस बुला लिया जाएगा।[250] यद्यपि रूस व अफगान सरकार द्वारा कहा जा रहा था कि सेनाएं थोड़े समय के लिए अफगानिस्तान आई हैं, किन्तु अमरीकी मत था कि सोवियत संघ ने सुनियोजित ढंग से अफगानिस्तान पर आक्रमण कर अफगान जनता के आत्म निर्णय के अधिकार का शोषण किया है। अफगान सीमाओं पर रूसी सेनाओं की उपस्थिति से उसकी लम्बे समय तक बने रहने की योजना का पता लगता है।[251] स्वयं अमेरिका के दक्षिण पश्चिम एशिया और खाड़ी के देशों में स्वार्थ हैं। वह 25 प्रतिशत तेल के लिए इन देशों पर निर्भर है। अमेरिका का मत है कि वे इस क्षेत्र में शान्ति, स्थिरता व आर्थिक उन्नति चाहते हैं, किन्तु हजारों की संख्या में रूसी सेनाओं की उपस्थिति से इस क्षेत्र के देशों को खतरा उत्पन्न हुआ है।[252]

रूसी हस्तक्षेप पर सबसे अधिक शोर पाकिस्तान में हुआ, क्योंकि अन्य पड़ोसी देशों की अपेक्षा वह इस समस्या से अधिक प्रभावित हुआ था।[253] पाकिस्तानी रेडियो व समाचार पत्रों में पाक-अफगान सीमाओं पर लगातार झड़पों की खबरें मिल रहीं थीं।[254] पाक राष्ट्रपति जिया ने 28 दिसम्बर को जारी किये गये वक्तव्य में कहा कि रूसी सैनिक हस्तक्षेप से पाकिस्तान, ईरान व अन्य पड़ोसी देशों की सुरक्षा को खतरा हुआ है।[255] इसलिए पाकिस्तानी अधिकारियों ने अफगानिस्तान के साथ लगने वाली पश्चिमी सीमाओं की सुरक्षा के लिए अमेरिका से सैनिक सहायता के साथ ही सुरक्षा सन्धि की मांग की।[256] रूसी सेनाओं द्वारा खैबर पास के रास्ते में मार्च पास्ट किए जाने पर इतिहास में पहली बार पकिस्तानी जनता व सरकार ने भारत की ओर सहायता और एकजुटता की दृष्टि से देखा।[257] किन्तु रूसी हस्तक्षेप पर दोनों देशों के दृष्टिकोणों

---

250. प्रावदा, 13 जनवरी, 1980. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 15-29
251. क्रोनोलोजी ऑफ अफगानिस्तान इवेन्टस, देखिए क्र. 63, पृ. 2-5
252. वही
253. दामोदरन, ए0के0, "सोवियत एक्शन इन अफगानिस्तान", द्वारा के0पी0 मिश्रा, देखिए क्र. 61, पृ. 39
254. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 13 फरवरी, 1980
255. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ 15-29. बहादुर, कालिम, देखिए क्र. 61.
 - टाइम्स ऑफ इण्डिया, 3 जनवरी, 1980. डान 4 जनवरी, 1980
256. एशियन रिकार्डर, मार्च 4-10, 1980, खण्ड 26, अंक 16, पृ. 15331
 - डान (कराची), 14 फरवरी, 1980. बहादुर, कालिम
257. मिश्रा, पंचानन, देखिए क्र. 117

में अन्तर बना रहा।[258] जब श्री जिया ने 'न्यूजवीक' पत्रिका के वरिष्ठ लेखक मि0 वर्चिग्रेव द्वारा काबुल में रूसी हितों के प्रति पूछा गया तो उन्होंने कहा कि रूस के लिए यह कोई नई बात नहीं है। अफगानिस्तान तो बहुत गरीब देश है, जिसमें 15 से 17 मिलियन लोग रहते हैं, वहाँ तेल भी नहीं है, किन्तु सामरिक दृष्टि से उसका बहुत महत्व है। अफगानिस्तान और पाकिस्तान के पीछे खाड़ी देश हैं और सामने हिन्दमहासागर है। यह कार्रवाई सोवियत विस्तारवादिता का प्रतीक है।[259]

चीन अफगानिस्तान का पड़ोसी देश है, इसलिए उसने भी तुरन्त रूसी सैनिकों की वापसी की माँग की। एक सरकारी वक्तव्य में कहा गया कि सोवियत सैनिक आक्रमण से चीन की सुरक्षा को खतरा हुआ है, अत: चीनी जनता इसका विरोध करती है।[260] चीनी सरकार ने इस कार्रवाई की निन्दा करते हुए क्रान्ति विद्रोहियों को प्रशिक्षण तथा अन्य सहायता के लिए अमेरिका व पाकिस्तान के साथ सहयोग को स्वीकार किया।[261] किन्तु यहाँ यह भी नहीं भूलना चाहिए कि चीन ने भी कोरिया में अपनी सेनाएं भेजी थीं। वास्तव में बड़ी शक्तियाँ प्रारम्भ से ही अपने लाभ के लिए संघर्ष करती रही हैं।[262]

ईरान के नव निर्वाचित राष्ट्रपति ने 13 जनवरी को रूसी हस्तक्षेप को उसकी विस्तार-वादिता करार देते हुए कहा कि यह ईरान पर उसका दबाव तथा हिन्दमहासागर तक पहुँचने की तैयारी है।[263] तभी एशियाई देशों की यात्रा पर आए ब्रिटेन के विदेशमन्त्री लार्ड कैरिंगटन ने रियाद में कहा कि रूसी कूटनीति से पश्चिम एशियाई देशों की स्थिति कमजोर हुई है। इसलिए उन्हें अपने मित्र देशों के साथ विचार-विमर्श की आवश्यकता है।[264] ईरान के समाचार पत्र केहन इण्टरनेशनल में 14 जनवरी को प्रकाशित लेखों में अफगान राष्ट्रपति द्वारा अयातुल्ला खुमैनी से अपील की गई कि वे उनके साथ देश में उत्पन्न खतरे के लिए अमेरिका तथा उसके साथी देशों की निन्दा करें।[265] ईरान में इस वक्तव्य पर दोहरी प्रतिक्रिया व्यक्त की गई। इस प्रकार

---

258. बोस, प्रदीप, "इण्डो-पाकिस्तानी टॉक एप्राइसल II", जनता, 3 अगस्त, 1980 खण्ड 35, अंक 25, पृ. 3-5. जहाँ पाकिस्तान व उसके सहयोगी रूस पर दबाव बनाये रखना चाहते हैं वहीं भारत केवल अफगानिस्तान से मास्को की वापसी चाहता है।
259. एशियन रिकार्डर, फरवरी 19-25, 1980, खण्ड 26, अंक 8, पृ. 15328-30
260. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 20-29
 -एशियन रिकार्डर, मार्च 4-10, 1980, खण्ड 26, अंक 10, पृ. 15344
 -पीपुल्स डेली (पीकिंग), 7 जनवरी, 1980
261. रतनाम, परेला, देखिए क्र. 1, पृ. 53
262. वही, पृ. 21
263. एशियन रिकार्डर, फरवरी 26-मार्च 3, 1980, अंक 9, पृ. 15339
264. वही
265. वही, फरवरी 12-18, 1980, अंक 7, पृ. 15311-12

जहाँ मुस्लिम देशों में सऊदी अरब, इजिप्ट, कुवैत व सऊदी यमन तथा जर्मनी, इटली, स्पेन, दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों ने संयुक्त राष्ट्र संघ तथा पंचशील के सिद्धान्तों के खिलाफ रूसी कार्रवाई का कड़ा विरोध किया[266] वहीं बंगला देश, नेपाल, श्रीलंका सहित सभी गुटनिरपेक्ष देशों ने इसकी स्पष्ट शब्दों में निन्दा की।[267]

अमरीकी राष्ट्रपति कार्टर के आह्वान पर आस्ट्रेलिया व नीदरलैण्ड ने सोवियत संघ में ओलम्पिक खेलों का बहिष्कार किया।[268] क्योंकि पश्चिमी देशों ने रूसी कदम को अन्तर्राष्ट्रीय कानून के तहत अस्वीकार किया था।[269] जेम्स रेस्टोन न्यूयार्क टाइम्स में लिखते हैं कि काबुल में रूसी कम्युनिस्ट सरकार से डरे हुए लोग उसे उखाड़ना चाहते हैं और उसके स्थान पर मुस्लिम राष्ट्र की स्थापना करना चाहते है। जबकि भारत वहाँ रूसी सैनिक हस्तक्षेप के द्वारा अपने प्रभाव का प्रयोग कर पाकिस्तानी व पश्चिमी प्रभाव तथा मुल्लाओं के बढ़ते प्रभाव को समाप्त करना चाहता है।[270]

विश्व में निन्दात्मक प्रतिक्रिया को देखते हुए रूस ने स्थिति के लिए अमेरिका व उसके साथी देशों को जिम्मेदार ठहराया।[271] उनका कहना था कि रूसी सेनाएं बाह्य हस्तक्षेप से देश की स्वतन्त्रता की रक्षा में प्रशासन की मदद कर रही हैं।[272] उन्होंने इस कार्रवाई को कानूनी दृष्टि से उचित बताया।[273]

एशिया में महाशक्तियों की गतिविधियों के साथ ही अस्थिरता का दौर प्रारम्भ होने पर[274] श्रीमती गांधी ने अपने वक्तव्यों में थोड़ा परिवर्तन किया। प्रधानमन्त्री बनने के बाद 16 जनवरी, 1980 को पहले खुले पत्रकार सम्मेलन में उन्होंने कहा कि वे विदेशी शक्ति द्वारा किसी ऐसे

---

266. रतनाम, परेला, देखिए क्र. 1, पृ. 49
- नई दिल्ली न्यूज लैटर,"रसियन्स आर कमिंग...."जनता, दिसम्बर 7, 1980, खण्ड 35, अंक 41, पृ. 3-4. राय, सुबोध, "वैदर इण्डियाज नॉन एलाइनमेण्ट?" जनता, अगस्त 10, 1980, खण्ड 35, अंक 26, पृ. 9-10
267. बी0 विवेकानन्द, देखिए क्र. 212, पृ. 75
268. क्रोनोलोजी ऑफ अफगानिस्तान इवेन्टस, क्र. 63, पृ 12
269. वही, पृ 21. रतनाम, परेला, देखिए क्र. 1, पृ. 49
270. भट्टाचार्य, विवेकरंजन, "इन्दिरा गांधी - हर रोल इन वर्ल्ड पीस", फारवर्ड बाई पी0वी0नरसिंहाराव (विदेशमन्त्री) दिल्ली,1984, पृ. 191-218
271. चौधरी, नरेन्द्र सिंह, देखिए क्र.72, पृ. 155
272. एशियन रिकार्डर, मई 13, 1980, खण्ड 26, अंक 20, पृ. 15351-52
- पैनोरमा ऑफ इण्डियन डिप्लोमेसी बाई एन0एम0 खिलनानी विद फारवर्ड बाई डा0 नागेन्द्र सिंह, नई दिल्ली 1985, पृ. 240-42
273. खलील ज़ाद, "द सुपर पावर्स एण्ड द नार्दन टाई", इन्टरनेशनल सिक्योरिटी विनटर, 1979-80, पृ. 10-11. कौर, कुलवन्त, देखिए क्र. 201. द ट्रिब्यून, 13 जनवरी, 1980
274. बुद्धराज, देखिए क्र. 95
-"हाई कास्ट ऑफ सोवियत मूव्स इन काबुल", टाइम्स ऑफ इण्डिया, 10 जनवरी, 1980

हस्तक्षेप को स्वीकार नहीं करतीं जिनसे दूसरे देशों के साथ सम्बन्धों में प्रभाव पड़े। उन्होनें कहा कि अफगानिस्तान में रूसी सेनाओं की उपस्थिति से जहाँ इस क्षेत्र में तनाव बढ़ा है, वहीं भारतीय सीमाओं पर सैनिक गतिविधियां भी बढ़ी हैं।[275] प्रधानमन्त्री ने रूसी कार्रवाई के लिए अमेरिका, चीन, पाकिस्तान को उत्तरदायी ठहराते हुए[276] कहा कि यदि चीन, अमेरिका पाकिस्तान को बड़ी मात्रा में शस्त्र सहायता जारी रखते है तो अपनी सुरक्षा के लिए भारत को भी सोवियत संघ के साथ कूटनीतिक समझौते की पुनरावृत्ति करनी होगी।[277]

16 जनवरी को ब्रिटिश विदेशमन्त्री लार्ड कैरिंगटन ने अपनी भारत यात्रा के दौरान श्रीमती गांधी से कहा कि मैं नहीं मानता कि हम सोवियत संघ का समर्थन करेंगे।[278] 17 जनवरी को विदेशमन्त्री श्री नरसिंहाराव से बातचीत में दोनों नेताओं ने इस क्षेत्र में व्याप्त तनाव को समाप्त करने के लिए सम्बन्धित सम्भावित कदम उठाने से पूर्व रूसी सेनाओं की वापसी के लिए कहा। कैरिंगटन ने कहा कि ब्रिटेन और पश्चिमी यूरोपीय गठबन्धन वाले देश रूस पर आर्थिक प्रति-बन्ध लगाए जाने पर विचार कर रहे हैं, जिससे वह किसी गुटनिरपेक्ष देश पर सैनिक हस्तक्षेप नहीं कर सकेगा।[279] उनकी यात्रा की समाप्ति पर श्रीमती गांधी ने पत्रकारों को बताया कि कोई देश दूसरे देश में विदेशी सैनिक उपस्थिति को न्यायिक नहीं बता सकता। एक ब्रिटिश पत्रकार के प्रश्न का उत्तर देते हुए श्रीमती गांधी ने कहा कि यदि अफगान शरणार्थी भारत आते हैं तो मै चाहूँगी कि वे अपने घरों को लौट जाएं, किन्तु यह वहाँ की स्थिति पर निर्भर करता है।[280] वास्तव में ब्रिटिश नेता कैरिंगटन भारत को अपने अभियान में शामिल करने में सफल नहीं हो सके थे। श्रीमती गांधी ने कहा कि, 'भारत ऐसे मार्ग को ढूढ़ने की कोशिश कर रहा है जिससे वहाँ स्थिति और न बिगड़े। उन्होंने 18 जनवरी को त्रिवेंद्रम में हुए पत्रकार सम्मेलन में कहा कि यद्यपि भारत विदेशी हस्तक्षेप को स्वीकार नहीं करता, किन्तु सोवियत संघ द्वारा लम्बे समय के पश्चात् हस्तक्षेप की कार्रवाई के ऐतिहासिक कारण हैं।[281] किन्तु भारत देश के

---

275. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 60. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 101 -इण्डियन एक्सप्रेस (नई दिल्ली), 17 जनवरी, 1980
276. अनातिया, एस0एन0, " अफगान क्राइसिस एण्ड इण्डियाज स्टेक्स", मेनस्ट्रीम, खण्ड 18, अंक 24, फरवरी 9, 1980, पृ. 5-7
277. देखिए क्र. 275
278. चारी, पी0आर0, "द अफगान सिचुएशन: इण्डियास इनीसिएटिव्स", जनरल स्ट्रेटजिक एनालिसिस" खण्ड III, अंक 12, मार्च 1980, पृ. 431-34
279. एशियन रिकार्डर, फरवरी 19-25, 1980, खण्ड 26, अंक 8, पृ. 152324-26
280. श्रीमती गांधी, इण्डिया इज नॉट बैक "सोवियत एक्शन इन अफगानिस्तान", देखिए क्र. 9 पृ.57-58 प्राईमिनिस्टर प्रेस कान्फ्रेन्स एट न्यू दिल्ली, हिन्दुस्तान टाइम्स, 17 जनवरी, 1980
281. वही, पृ. 58, अमृता बाजार पत्रिका (कलकत्ता),18 जनवरी, 1980

स्वार्थ की अपेक्षा विश्व शान्ति पर विचार करता है।[282] हेमवर्ग में स्टर्न के साथ साक्षात्कार में अफगान संकट पर बोलते हुए श्रीमती गांधी ने कहा कि वे सैनिक व राजनैतिक दबाव का विरोध करती हैं क्योंकि इससे तनाव बढ़ता है।[283]

23 जनवरी, 1980 को संसद के खुले सत्र में राष्ट्रपति श्री नीलम संजीव रेड्डी ने कहा कि भारत बड़ी शक्तियों के शक्ति संतुलन को समाप्त करने तथा इस क्षेत्र की जनता के विकास व उन्नति के लिए विचार-विमर्श और सहयोग की किसी भी कार्रवाई के लिए तैयार है।[284] लोक सभा में विदेशमंत्री श्री नरसिंहाराव ने अफगान समस्या पर चर्चा करते हुए सदन का ध्यान अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को सैन्य सहायता की ओर आकृष्ट करते हुए बताया कि इससे महाशक्तियों के मध्य प्रत्यक्ष संघर्ष की सम्भावनाएं बढ़ गई हैं। हम अपने मित्र देश अफगानिस्तान की सुरक्षा के प्रति चिन्तित हैं। हम आशा करते हैं कि अफगान जनता बिना किसी हस्तक्षेप के अपनी आन्तरिक समस्याओं का समाधान कर लेगी।[285] 25 जनवरी को प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी ने सदन के सदस्यों को आश्वस्त किया कि स्थिति सामान्य होते ही रूसी सेनाएं अफगानिस्तान से लौट जाएंगी।[286] उन्होंने 30 जनवरी को लोक सभा में अपने भाषण में कहा कि रूसी सैनिकों को अफगानिस्तान की क्रांतिकारी परिषद् ने आमन्त्रित किया था, इसलिए वे एक तरफा दण्ड संहिता में विश्वास नहीं करतीं। उन्होंने अपनी पार्टी की नीति स्पष्ट करते हुए कहा कि उनकी नीति किसी विशेष देश से प्रभावित न होकर भारतीय हित के लिए है।[287] उन्होंने राज्य सभा में क्षेत्र विशेष में बढ़ते हुए शक्ति संतुलन की ओर सदन का ध्यान आकृष्ट करते हुए कहा कि हम क्रमबद्ध तरीके से विकास चाहते हैं।[288]

दक्षिण एशिया में अपनी नीति निर्धारित करने के लिए अमरीकी राष्ट्रपति कार्टर ने राष्ट्रीय रक्षा सचिव ब्रजेन्जिस्की और राज्य उपसचिव वारेन क्रिस्टोफर को पाकिस्तान भेजा। साथ ही लार्ड कैरिगंटन के तर्कों को समर्थन प्रदान करने और परस्पर सम्बन्धों के सुधार के लिए एक विशेष दूत क्लीफोर्ड को भारत भेजा। 31 जनवरी को 75 मिनट की बातचीत में क्लीफोर्ड ने रूसी हस्तक्षेप पर अधिक बल दिया तो प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी ने उससे भी अधिक अमेरिका द्वारा

282. रतनाम, परेला, देखिए क्र. 1, पृ. 56
283. इण्टरव्यू विद स्टर्न, हेमबर्ग, जनवरी 24, 1980, देखिए क्र. 9, पृ. 60
284. प्रसाद, विमल, देखिए क्र. 209
285. एशियन रिकार्डर, फरवरी 19-25, 1980, पृ. 152324-26
-मिनिस्टर ऑफ इक्सटरनल अफेयर्स स्टेटमेण्ट इन लोक सभा, देखिए क्र. 9, पृ. 27
-अप्पादाराय, राजन, देखिए क्र. 40, पृ. 622-28. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, जनवरी 1980, पृ. 19
286. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 60. राय, सुबोध, देखिए क्र. 269
287. ठाकुर, रमेश, देखिए क्र. 30, पृ. 422-33. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 110-20
288. प्राइमिनिस्टर्स स्टेटमेण्ट इन राज्य सभा, जनवरी 30, 1980, देखिए क्र. 9, पृ. 10

पाकिस्तान को हथियार दिए जाने से उत्पन्न खतरे पर जोर दिया। श्री क्लीफोर्ड ने विश्वास दिलाया कि पाकिस्तान अमेरिका द्वारा दिये गए हथियारों का प्रयोग भारत के विरूद्ध नहीं करेगा।[289] दूसरी ओर ब्रजेन्जिस्की ने पाकिस्तान को बड़ी मात्रा में शस्त्र सामग्री और अफगान मुजाहिदों को सैन्य व आर्थिक सहायता की पेशकश की।[290]

अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप भारत के लिए कठिन परीक्षा की घड़ी का समय रहा। 5 फरवरी को विदेश सचिव रामसाठे के नेतृत्व में भारतीय मिशन की इस्लामाबाद यात्रा पर जनरल जिया ने कहा कि लगभग 1 लाख सैनिकों की पड़ोस में उपस्थिति को अनदेखा नहीं किया जा सकता। 6 फरवरी को श्री जिया ने भारतीय पत्रकारों के साथ बातचीत में कहा कि प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी की नीति रूस से प्रभावित है।[291] उन्होंने अफगानिस्तान के प्रति प्रभावी कार्रवाई को अस्वीकार करते हुए कहा कि वहाँ से आए हुए शरणार्थी उनके भाई हैं।[292] वास्तव में अफगान संकट से पाकिस्तान को फायदा हुआ था, क्योंकि जहाँ एक ओर उसे अमेरिका, चीन व यूरोपीय देशों से बड़ी मात्रा में आर्थिक व सैन्य सहायता प्राप्त होने लगी, वहीं दूसरी ओर इस्लामी देशों में उसका महत्व बढ़ रहा था।

अफगानिस्तान की स्थिति की समीक्षा के लिए भारतीय कूटनीतिज्ञों तथा पत्रकारों ने अफगानिस्तान की यात्रा की । यद्यपि अफगान नेताओं ने बताया कि सरकारी कार्यों में रूसी हस्तक्षेप नहीं है, किन्तु सूचना व सांस्कृतिक मन्त्री अब्दुल मजीद सरबुलन्द ने बताया कि नीतियों को निर्धारित करने के लिए सभी विभागों में सोवियत सलाहकार अवश्य हैं।[293] 8 फरवरी को काबुल में कुलदीप नैय्यर के साथ बातचीत में राष्ट्रपति कारमल ने कहा कि इस क्षेत्र में शान्ति के लिए उत्पन्न खतरे को देखते हुए रूसी सेनाओं की वापसी का समय निर्धारण करना सम्भव नहीं है।[294] कारमल ने भारतीय राजदूत जी0 एस0 तेजा को भी वर्तमान राजनैतिक स्थिति से अवगत कराया।[295] भारत सरकार के विशेष दूत एस0 के0 सिंह के साथ बातचीत में कारमल ने कहा कि जब तक आन्तरिक व बाहरी खतरा समाप्त नहीं हो जाता, रूसी सैनिक यहीं रूके रहेंगे।[296] उन्होंने पड़ोसी देशों को आश्वासन दिया कि विशेष परिस्थितियों के कारण बुलाए गए सीमित सैनिक शीघ्र ही देश से वापस लौट जाएंगे। श्री सिंह ने भारत वापस आकर बताया

289. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 110-20. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 11, पृ. 206-7
290. मुखर्जी,
291. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 115-20
292. चारी, पी0आर0, देखिए क्र. 278
293. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 40-47
294. वी0, विवेकानन्द, देखिए क्र. 212, पृ. 78
295. सिंह, जे0डी0, "काबुल विद वेलकम पीस, रोल बाई दिल्ली", टाइम्स ऑफ इण्डिया, 5 फरवरी, 1980
296. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 116-20

कि कम्युनिस्ट सरकार की सहायता के लिए आए रूसी सैनिकों को बहुत थोड़ी जनता का समर्थन प्राप्त है।[297] भारतीय पत्रकार कुलदीप नैय्यर (इण्डियन एक्सप्रेस) और जे. डी. सिंह (टाइम्स ऑफ-इण्डिया) ने बताया कि वहाँ सर्वत्र रूसी छाप है।[298] किन्तु विश्व में उड़ती हुई रूसी कब्जे की खबरें तथा वहाँ उनकी गतिविधियां, जैसा कुछ नहीं देखा।[299] मुख्य रूप से जलालाबाद तथा कन्धार क्षेत्र में सैनिकों की उपस्थिति का अत्यधिक विरोध किया जा रहा है।[300] वास्तव में स्वतन्त्रता प्रिय अफगानों ने सब कुछ खोकर कम्युनिस्ट सरकार को स्वीकार किया था, किन्तु उसकी नीतियों ने देश को पूरी तरह हिला दिया।[301]

अफगानिस्तान में रूसी कार्रवाई पर भारतीय समर्थन प्राप्त करने तथा क्षेत्रीय राजनीति में भारत की भूमिका पर विचार-विमर्श के लिए रूसी विदेशमन्त्री ग्रोमिको ने 12 फरवरी को भारत की यात्रा की।[302] उनके स्वागत में दिये गए भोज में विदेशमन्त्री श्री नरसिंहाराव ने भारतीय रूख स्पष्ट करते हुए कहा कि दूसरे देशों के साथ सम्बन्ध शान्तिपूर्ण सिद्धान्तों पर आधारित होने चाहिए; मुख्य रूप से प्रभुत्व की स्वतन्त्रता, परस्पर सम्बन्धों में सेना का प्रयोग नहीं, सीमाओं की अजेयता, प्रादेशिक स्थिरता का सम्मान और दूसरे के आन्तरिक सम्बन्धों में अहस्तक्षेप।[303] भारत चाहता है कि प्रत्येक देश अपनी मान्यताओं व परम्पराओं के विस्तार के लिए स्वतन्त्र होना चाहिए, जिससे वह समस्याओं के समाधान पर स्वयं विचार कर सके।[304] श्री ग्रोमिको ने श्रीमती गांधी के साथ बातचीत में रूसी कार्रवाई की आवश्यकता पर बल देते हुए कहा कि अमेरिका व चीन के सहयोग से पाकिस्तान में प्रशिक्षित व शस्त्र सज्जित अफगान विद्रोही अफगानिस्तान में आंतक फैला रहे हैं। वे कारमल सरकार का तख्ता पलटना चाहते हैं, इसलिए अफगान सीमाओं पर सुरक्षा की आवश्यकता है।[305] श्रीमती गांधी ने अपनी नीति स्पष्ट करते हुए कहा कि हम आपके इस हस्तक्षेप की सराहना नहीं कर सकते। श्री ग्रोमिको जान गए थे कि जहाँ हम रूस की दखलन्दाजी पसन्द नहीं कर रहे थे, वहीं हमें अमेरिका व पाकिस्तान की साँठ-गाँठ सचेत कर रही थी।[306] रूसी विदेशमन्त्री ने अपनी यात्रा के दौरान तथा संयुक्त विज्ञप्ति में रूसी सेनाओं

297. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 86, 95
298. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 9-13, इण्डियन एक्सप्रेस, 9 फरवरी, 1980
299. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 31 जनवरी, 1980
300. सीलोन डेली न्यूज, 12 फरवरी, 1980. पैट्रीआट, 12 फरवरी, 1980
301. द कम्पटीशन मास्टर, खण्ड 27, अंक 8, मार्च 1986, पृ. 607
302. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 118-20
303. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, फरवरी 1980, पृ. 44
304. अप्पादोराय, राजन, देखिए क्र. 40, पृ. 626-27
305. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 76-77. चारी, पी0आर0, देखिए क्र. 278
306. गुजराल, इन्द्रकुमार, देखिए क्र. 208. चौधरी, नीरजा, देखिए क्र. 93
- श्रीवास्तव, बी0के0,"यूनाइटेड स्टेट्स ऑफ रीसेन्ट डवलपमेंट्स इन अफगानिस्तान", द्वारा के0पी0 मिश्रा, देखिए क्र. 61, पृ. 66

की वापसी के सम्बन्ध में कोई संकेत नहीं दिए।[307] इस सम्बन्ध में दोनों देशों के मतों में भिन्नता स्पष्ट हो चुकी थी।[308]

अफगानिस्तान के प्रश्न पर रूसी नेताओं का मत है कि यह भारतीयों के बंगलादेश प्रश्न से मिलता जुलता है। भारत ने भी पूर्वी पाकिस्तान की जनता की पश्चिमी पाकिस्तानी सेना की आंतकवादी कार्रवाइयों से रक्षा के लिए अपनी सेनाएं भेजी थीं किन्तु भारतीय नेता इस तर्क में भिन्नता मानते हैं, क्योंकि पूर्वी पाकिस्तान में प्रत्येक बंगाली इस्लामाबाद की अधीनता से मुक्त होना चाहता था। अतः भारत इसे राष्ट्रीय स्वतन्त्रता संग्राम की संज्ञा देता है, जबकि रूस अफगानिस्तान में राष्ट्रीय स्वतन्त्रता चाहने वालों को समाप्त करना अपना लक्ष्य समझता है, इसलिए रूसी सेनाएं वहाँ अफगान जनता के आदर की पात्र नहीं हैं।[309] एक अन्य उदाहरण में, नई दिल्ली में रूसी राजदूत यूरी वोरोन्तसोव ने अफगानिस्तान की स्थिति की तुलना भूटान से की, जो अपनी रक्षा व विदेशनीति पर सलाह के लिए भारत पर निर्भर है। वहाँ एक गैर मित्रतापूर्ण सरकार भारत कैसे स्वीकार कर सकता है। यही बात अफगानिस्तान पर लागू होती है।[310] रूसी नेताओं का मत है कि अफगानिस्तान से उनके ऐतिहासिक सम्बन्ध हैं। इतिहास साक्षी है कि हमने इस क्षेत्र में दखल नहीं दिया, हम वहाँ स्थायी व मैत्रीपूर्ण शासन चाहते हैं।[311] वर्तमान संकट को देखते हुए अमरीकी राष्ट्रपति कार्टर भी अफगानिस्तान में सामान्य स्थिति बहाल करना चाहते हैं, किन्तु वे किसी प्रकार के समाधान से पूर्व रूसी सैनिकों की पूर्ण वापसी पर बल देते हैं।[312]

श्रीमती गांधी यद्यपि रूसी हस्तक्षेप को लेकर सोवियत वक्तव्य को स्वीकार कर रहीं थी, किन्तु वे लम्बे समय तक अफगानिस्तान में रूसी सेनाओं के रूके रहने को प्रमाणित नहीं कर सकीं। क्योंकि तीसरे विश्व के बहुत से देश अमरीकी विचारों को स्वीकृत दे रहे थे, तो कुछ नहीं भी। सोवियत संघ को विश्व की बड़ी शक्ति मानने में भी देशों में अलग-अलग विचार थे।[313] फ्रांसीसी पत्रकार को दिए गए साक्षात्कार में श्रीमती गांधी ने कहा कि वास्तव में अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप से एक स्थिर युग का अन्त हुआ है, इसलिए इसको अनदेखा नहीं किया जा सकता। वास्तव में मुस्लिम बहुसंख्या वाला देश होने तथा अरब देशों से घनिष्ट सम्बन्धों के कारण भारत ने इस संकट के प्रति पर्याप्त सावधानी बरती।[314]

---

307. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 77
308. प्रसाद, विमल, देखिए क्र. 209
309. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 77-78
310. वही, पृ. 90
311. गुजराल, इन्द्रकुमार, देखिए क्र. 208
312. 13 जनवरी को अमेरिकी राष्ट्रपति द्वारा जारी किया गया वक्तव्य देखिए क्र. 63, पृ.68
313. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 48-49
314. ठाकुर, रमेश, देखिए क्र. 30, पृ. 425-33

जहाँ तक पाकिस्तान के दृष्टिकोण का सवाल है, इस्लामाबाद की सैन्य सरकार देशवासियों को अपनी अफगान नीति का समर्थक बना पाने में असफल रही है। अफगान शरणार्थियों की लगातार मौजूदगी और संघर्ष में हो रहे सैनिक व्यय को लेकर वहाँ व्यापक असन्तोष व्याप्त है।[315] अमेरिका, चीन, ईरान व पाकिस्तान मुजाहिदों का सहारा लेकर काबुल में रूस व भारत विरोधी सरकार की स्थापना करना चाहते हैं। इससे वे कई फायदे उठा सकेंगे –प्रथम, ईरान व पाकिस्तान भावनात्मक आधार पर वहाँ प्रवेश कर सकेंगे, द्वितीय, अमेरिका का हिन्द महासागर में प्रवेश आसान होगा। चीन इस क्षेत्र की महाशक्ति बनने के लिए व्यापक क्षेत्रीय समर्थन प्राप्त कर सकेगा। यही कारण था कि उन्होंने तराकी, अमीन व कारमल सरकार को मान्यता प्रदान नहीं की थी।[316] किन्तु भारत वहाँ सोवियत संघ विरोधी सरकार नहीं चाहता। अफगान शासक अमानुल्लाह से लेकर दाऊद खान तक सभी पड़ोसी सोवियत संघ के साथ मित्रता बनाए रखना चाहते थे।[317] अफगान मन्त्री रेतवजाद ने कहा कि रूसी सहायता से ही उनका देश साम्राज्यवादियों के कब्जे से बच सका है।[318] अफगान सरकार के कुछ प्रतिनिधियों ने अपनी समस्या के प्रति भारतीय दृष्टिकोण पर गहरा दुख व्यक्त किया, उन्हें आशा थी कि भारत सरकार पाकिस्तान व चीन की नीति का विरोध करते हुए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सोवियत नीति का समर्थन करेगी, किन्तु भारत ने क्षेत्रीय राजनीति को देखते हुए शान्तिपूर्ण नीतियों के आधार पर अफगानिस्तान में सभी बाह्य हस्तक्षेप का विरोध किया।[319] एक पत्रकार सम्मेलन में जब यह पूछा गया कि किसी ऐसे देश को, जिसमें किसी बड़ी ताकत के लगभग 1 लाख सैनिक मौजूद हों, उसे गुटनिरपेक्ष कैसे कहा जा सकता है, इस पर श्रीमती गांधी ने कहा कि यह तो इस बात पर निर्भर है कि ये सैनिक उस देश पर कब्जा किए हुए हैं अथवा उसकी मदद इसलिए कर रहे हैं, ताकि देश के लोग अपनी रक्षा कर सकें।[320] सोवियत संघ के पक्ष में दृढ़ रवैये को देखते हुए अमरीकी प्रेस में कहा गया कि भारत अपनी गुटनिरपेक्षता की नीति से हटने लगा है, परन्तु वास्तव में श्रीमती गांधी का उन नीति निर्माताओं के लिए कड़ा प्रत्युत्तर था जो उपमहाद्वीप के मामलों में भारत के महत्व की लगातार उपेक्षा करते आ रहे थे। किन्तु यह सत्य है कि भारत के लिए रूसी सैनिक हस्तक्षेप कोई चौंकाने वाली घटना नहीं थी, क्योंकि स्वयं भारत ने 1950 में नेपाल,

---

315. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 13 फरवरी, 1980
316. गुप्ता, एम0जी0, "इण्डियन फॉरेन पॉलिसी-थ्योरी एण्ड प्रेक्टिस", आगरा 1985, पृ. 153
317. मिश्रा, पंचानन, देखिए क्र.117
318. एशियन रिकार्डर, मई 13, 1980, खण्ड 26, अंक 20, पृ. 15451-52
319. रहमान, एम0ए0, "टूवर्डस ए सौल्यूशन ऑफ द प्राब्लम ऑफ अफगानिस्तान, प्राब्लम्स ऑफ नॉन एलाइनमेंट", जनरल ऑफ इन्टरनेशनल अफेयर्स, खण्ड-2, अंक 1, मार्च-मई 1984, पृ. 59-60
320. गोयल, देशराज, देखिए क्र. 85

1971 में श्रीलंका तथा बंगलादेश और 1984-85 में पुनः श्रीलंका में अपनी सेनाएं भेजी थीं।[321]

विदेशमन्त्री श्री नरसिंहाराव ने हाल की रूस की सरकारी यात्रा का विवरण देते हुए 17 जून को संसद में बताया कि रूसी नेताओं के साथ बातचीत से स्पष्ट हुआ है कि अफगानिस्तान में रूसी सेनाएं सीमित समय के लिए हैं, इस क्षेत्र में सुरक्षा व स्थिरता स्थापित होते ही रूसी सेनाएं वापस लौट जाएंगी। भारत जैसे अन्य देश तनाव समाप्त कर समस्या का शान्तिपूर्ण समाधान चाहते हैं। इसलिए जब तक अफगानिस्तान में विद्रोहियों को प्रोत्साहन व समर्थन मिलता रहेगा, भारत की ओर से रूसी कार्रवाई पर दबाव नहीं डाला जाएगा।[322]

15 से 17 जुलाई को पाकिस्तानी विदेशमन्त्री श्री आगाशाही ने भारत की यात्रा की। उन्होंने श्री नरसिंहाराव को बताया कि अफगानिस्तान में अधिकांश जनता रूसी कब्जे के खिलाफ है, इसलिए वहाँ उनका राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष चल रहा है। रूसी सेनाओं की उपस्थिति का न केवल गैर कम्युनिस्ट देश बल्कि चीन, युगोस्लाविया जैसे कम्युनिस्ट देश तथा इटली व स्पेन की कम्युनिस्ट पार्टियां भी इसका विरोध कर रही हैं। पाकिस्तान एवं अन्य दक्षिण व दक्षिण पश्चिम एशियाई देश रूसी सेनाओं की वापसी के लिए दबाव बनाए हुए हैं। जब श्री राव ने श्री शाही से कारमल सरकार के साथ परस्पर सम्बन्धों के लिए कहा तो उन्होंने बताया कि वे इस्लामिक सम्मेलन में लिए गए निर्णय से प्रतिबन्धित हैं। काबुल से पाक राजदूत को भी वापस बुला लिया गया है तथा रूसी सेनाओं के रहने तक सभी कूटनीतिक सम्बन्ध समाप्त कर दिए गए हैं।[323] प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी ने श्री आगाशाही से अपनी बातचीत में कहा कि सोवियत संघ अफगानिस्तान में कम्युनिस्ट शासन को मज़बूत करने के लिए प्रयासरत है। श्री शाही ने कहा कि पाकिस्तान भी सोवियत संघ से मित्रता चाहता है, किन्तु इसके लिए आवश्यक है कि रूसी सेनाओं की वापसी हो।[324]

श्रीमती गांधी के सत्ता में आने के पश्चात् से मास्को में उन्हें अपनी ओर लाने का प्रयास किया जा रहा था, ताकि वे अफगान प्रश्न पर उनकी प्रशंसा कर सकें। 8-11 दिसम्बर को ब्रझनेव की नई दिल्ली यात्रा का उद्देश्य यही था।[325] उनके साथ सोवियत शिष्ट मण्डल व पत्रकार भी भारत आए। प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी ने रूसी नेता के साथ बातचीत में कहा कि भारत ऐसे सभी हस्तक्षेप का विरोध करता है, जिससे उसके पड़ोसी देश अफगानिस्तान की गुटनिरपेक्षता,

---

321. वी, विवेकानन्द, "ए न्यू प्वाइन्ट प्रदीप बोस, के. सुंब्रमन्यम", जनता, 7 दिसम्बर, 1980, पृ. 90-100
322. प्रसाद, विमल, देखिए क्र. 209. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, खण्ड 26, अंक 6, जून 1980, पृ. 128 -मिनिस्टर ऑफ एक्सटरनल अफयर्स स्टेटमेण्ट इन लोकसभा, देखिए क्र. 9, पृ. 28
323. बोस, प्रदीप, देखिए क्र. 258
324. वही
325. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 173

स्वतन्त्रता, विकास तथा उसकी सुरक्षा पर प्रभाव पड़े। उन्होंने वहाँ से सेना की वापसी की तीसरे विश्व के देशों की मांग को दोहराया। ब्रझनेव भारत की राजनैतिक स्थिति समझते हुए किसी तरह के दबाव के पक्ष में नहीं थे।[326] इसलिए उन्होंने कहा कि विदेशों से लगातार हस्तक्षेप के कारण ही रूसी सेनाएं अफगानिस्तान से नहीं लौटी हैं।[327] वे अफगान नागरिकों की सफलता की कामना करते हैं।[328]

जनता पार्टी व भारतीय जनता पार्टी ने श्री ब्रझनेव की यात्रा पर रूसी हस्तक्षेप का कड़ा विरोध किया और सेनाओं की वापसी की मांग की।[329] जनता पार्टी के नेताओं ने कहा कि बड़ी शक्तियों की इन्हीं कार्यवाइयों के कारण भारतीय सीमाओं पर खतरा उत्पन्न हुआ है।[330] मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी के नेता इन्द्रजीत गुप्त ने रूस-अफगान मित्रता तथा परस्पर सहयोग की सन्धि को आधार मानते हुए रूसी दृष्टिकोण का समर्थन किया।[331] भारत स्थित अफगान छात्रों में ब्रझनेव की भारत यात्रा पर कडा असंतोष व्याप्त था। इसलिए श्री ब्रझनेव की सुरक्षा के कड़े प्रबन्ध किए गए थे। श्रीमती गांधी ने कहा कि श्री ब्रझनेव की यात्रा किसी देश के विरोध में नहीं थी। इसलिए पाकिस्तान को इससे घबराने की आवश्यकता नहीं है। वे पड़ोसी देशों से अच्छे सम्बन्ध चाहती हैं।[332] उन्होंने 15 दिसम्बर को लोक सभा में कहा कि सभी हस्तक्षेप शीघ्र ही समाप्त होने चाहिए, जिससे समाधान सम्भव हो सके।[333] इण्डोनेशिया के राष्ट्रपति सुहार्तो की भारत यात्रा पर श्रीमती गांधी ने कहा कि यद्यपि सोवियत संघ कठिन परिस्थितियों में उनके काम आया है, किन्तु वे अपनी विदेशनीति से हट कर अफगानिस्तान के प्रति अपने विचार नहीं बदल सकते। वे सुदृढ़ व स्वतन्त्र अफगानिस्तान की स्थापना चाहती हैं।[334]

इस्लामाबाद में भारतीय राजदूत श्री शंकर ने पाक राष्ट्रपति जिया तथा विदेश मन्त्री से बातचीत की। जिसमें उन्होंने अफगान संकट से उत्पन्न स्थिति की गम्भीरता को देखते हुए कहा कि यदि इस्लामाबाद भारत की सरहद से अपनी सेनाएं हटा कर उत्तर की ओर ले जाना चाहे तो हमारा देश इस बात की गारंटी विश्व की बड़ी शक्तियों के आगे भी दे सकता है कि

---

326. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 175
327. ब्रझनेव इज वेलकम, सम्पादकीय समीक्षा, जनता, दिसम्बर 14, 1980, खण्ड 35, अंक 42 -अप्पादोराय, राजन, देखिए क्र. 40, पृ. 622-28. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, दिसम्बर 1980, पृ. 271
328. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 178-81
329. न्यू दिल्ली न्यूज लैटर, "द रसियन हैव एराइव्ड", जनता, देखिए क्र. 327, पृ.13-14
330. एशियन रिकार्डर, दिसम्बर 23-31, 1980, पृ. 15808-9
331. "अफगानिस्तान सच्चाई क्या है", इन्द्रजीत गुप्त, महासचिव, अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस बख्तर संवाद समिति, 4 नवम्बर, 1981
332. जनता, दिसम्बर, 1980, पृ. 271
333. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, दिसम्बर 1980, पृ.271. अप्पादोराय, राजन, देखिए क्र. 40 पृ. 628
334. देखिए क्र. 329, पृ. 13. इण्डिया-इण्डोनेशिया ज्वांइट कम्यून, देखिए क्र. 9, पृ. 42

इस नाजुक घड़ी का हम फायदा नहीं उठायेंगे और पाकिस्तान की अखण्डता को सुरक्षित रखेंगे। परन्तु जनरल जिया की आँखें तो वाशिंगटन की ओर लगी हुई थीं।[335]

3 अप्रैल को विदेशमन्त्री श्री नरसिंहाराव ने लोकसभा में बताया कि पिछले एक वर्ष में अफगानिस्तान में स्थिति अधिक तनाव पूर्ण हुई है।[336] श्रीमती गांधी ने एक साक्षात्कार में कहा कि वे अफगानिस्तान में रूसी सैनिकों की उपस्थिति से पूर्व की स्थिति देखना चाहती हैं।[337] उन्होंने कहा कि मेरे विचार में पाकिस्तान इस समस्या का समाधान नहीं चाहता। उनके लिए लगातार समस्या बनाये रखना लाभप्रद है।[338] इसलिए वे सभी सम्भव लाभ उठाना चाहते है। श्रीमती गांधी ने कहा कि स्वयं पश्चिमी देशों ने मध्य अमेरिका, एशिया और अफ्रीका में हस्तक्षेप कर रखा है,[339] और ये ही देश अब रूसी हस्तक्षेप की निंदा कर रहे हैं।

अगस्त 1982 में अमेरिका में अफगान राष्ट्रपति कारमल ने श्रीमती गांधी से भेंट की और कहा कि कानूनी रूप से स्थापित अफगान सरकार के बुलावे पर रूसी सैनिक वहाँ आए हैं। ये सेनाएं अफगानिस्तान में तब तक रहेंगी, जब तक आक्रमण व हस्तक्षेप न करने की अन्तर्राष्ट्रीय गारन्टी नहीं मिल जाती। यह उनका अन्दरूनी मामला है। इससे स्वतन्त्र अफगानिस्तान की विदेशनीति व गुटनिरपेक्षता का हनन नहीं हुआ है।[340] किन्तु पश्चिमी नेता यह स्वीकार नहीं करते।[341] श्रीमती गांधी ने विदेशी पत्रकारों से अपनी बातचीत में कहा कि अफगान सरकार की प्रमुख समस्या है विद्रोहियों को बाहरी शक्तियों द्वारा हथियार दिया जाना, जिनकी कोटि निरन्तर आधुनिक होती जा रही है। भारत का मत है कि अफगानिस्तान को अपनी आन्तरिक समस्याओं के समाधान तथा देश की रक्षा के लिए विदेशी सहायता प्राप्त करने का अधिकार है।[342] श्रीमती गांधी के पश्चात् प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी ने उनकी ही नीति का अनुसरण किया। उन्होंने कहा कि वे अफगान समस्या के प्रति अपनी नीति को नहीं बदलेंगे।[343] मई 1985 में रूसी यात्रा के दौरान

---

335. गुजराल, इन्द्रकुमार, देखिए क्र. 208
336. मिनिस्टर ऑफ इक्सटरनल अफेयर्स, स्पीच इन लोक सभा ऑन डिमाण्डस फॉर ग्राण्टस 1981-82, 3 अप्रैल 1981, देखिए क्र. 9, पृ.29
337. ट्रान्सक्रिप्ट्र ऑफ इन्टरव्यू विद डा0 थॉमस रोज एण्ड पीटर रिण्डल, 2 मार्च 1981, "आउट साईड इन्टरफिरेन्स शुड स्टॉप", देखिए क्र. 9, पृ. 65-66
338. ट्रान्सक्रिप्ट ऑफ इन्टरव्यू विद नाथाली ब्लाइम ऑफ ली फिगांरोऑन सितम्बर 3, 1981, इट इज वेरी कनवेनियंट फॉर पाकिस्तान टू हैव दिस कन्ट्यूनिंग प्राब्लम, देखिए क्र. 9, पृ. 71
339. प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी का न्यूयार्क में 2 अगस्त 1982, को विदेशनीति एसोसिएशन एवं द एशिया सोसायटी द्वारा आयोजित भोज में दिया गया भाषण, प्रधानमन्त्री के विचार 59, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित व आकल्पित
340. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 30 अगस्त, 1982. हिन्दुस्तान टाइम्स, 30 अगस्त, 1982
341. नूरानी, ए0जी0, "इण्डियाज फॉरेन पॉलिसी ऑन अफगानिस्तान", इण्डियन एक्सप्रेस, 15 जून, 1985
342. दत्त, वी0पी0, देखिए क्र. 233, पृ.371-375
343. खिलनानी, एम0एन0,"रियलटीस ऑफ इण्डियाज फॉरेन पालिसी", नई दिल्ली, 1984, पृ.85

प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी ने कहा कि अफगानिस्तान से रूसी सैनिकों को हटना चाहिए, इससे कोई इन्कार नहीं करता। लेकिन इसके लिए आवश्यक है कि अफगानिस्तान में बाहरी हस्तक्षेप बन्द हों, लेकिन इसके विपरीत हस्तक्षेप बढ़ता जा रहा है। राष्ट्रीय हितों का तकाजा है कि भारत को काबुल में वही सरकार मान्य हो जो अफगानिस्तान जैसे सामरिक महत्त्व वाले क्षेत्र को अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का अखाड़ा न बनने दे।

वास्तव में श्रीमती गांधी अपने काल में महान गतिशील भारतीय नीति का परिचायक रही हैं। उनकी शान्ति व सहयोग पूर्ण नीतियों के तहत राष्ट्रों के मध्य लाभकारी सम्बन्ध बढ़े तथा दक्षिण एशिया में भारत की भूमिका महत्वपूर्ण हुई।[344] तत्कालीन परिस्थितियों में भारत के समक्ष इसके अलावा अन्य कोई विकल्प नहीं था कि वह अफगान समस्या के विषय में सोवियत-संघ के साथ सहयोग करे, इससे उपमहाद्वीप में स्थायित्व को बढावा मिलता। कोई भी अनिश्चित भूमिका भारत-रूस के सम्बन्धों को प्रभावित करती और भारत को दूसरा विश्वसनीय सहयोगी नहीं मिलता। भारत किसी भी स्थिति में पाकिस्तान, चीन व अमेरिका का पक्ष नहीं लेगा, क्योंकि इससे तीसरे विश्व के देशों मे उसकी विदेशनीति की साख गिर जायेगी। विदेशनीति न तो नैतिक बातों पर और न ही सुधारवादी ख्याली पुलावों पर निर्भर होती है, इन्हें बनाने में देश के राष्ट्रीय हितों का ध्यान रखना पड़ता है। इसलिए भारत की नीति इस सम्बन्ध में कुछ अनिश्चित- सी रही।[345] कुछ भारतीय विचारकों का मत है कि जिन महाशक्तियों ने अफगान संकट उत्पन्न किया है, वे ही शक्तियां हिन्दमहासागर में उपस्थित हैं।[346] अतः उत्पन्न हुए इस शीत युद्ध के दौर में भारत को रूस पर सेनाओं की वापसी के लिए दबाव डालना चाहिए तथा परस्पर सभी पड़ोसी देशों के साथ क्षेत्रीय स्थिरता व सहयोग को बढ़ावा देते हुए बड़ी शक्तियों की प्रतिस्पर्धा को अस्वीकार करना चाहिए।[347] वह यह कार्रवाई गुटनिरपेक्ष आन्दोलन द्वारा भी कर सकता है।

अफगानिस्तान के शिक्षामन्त्री डा0 अनाहिता रेतव्जाद ने भारत यात्रा के दौरान कहा कि काबुल के साथ पाकिस्तान व ईरान को स्थिति में शान्ति के लिए वार्ता करनी चाहिए। रूसी सैनिकों की वापसी से पूर्व अमेरिका व चीन सहित इन राष्ट्रों से अहस्तक्षेप की गारण्टी आवश्यक है।[348] पश्चिमी विशेषज्ञों का विचार है कि जिन परिस्थितियों पर रूसी सैनिकों की वापसी निर्भर करती है, उनका पूरा होना कठिन प्रतीत होता है। यदि रूस अफगानिस्तान में पर्याप्त रूप में

---

344. पैट्रीआट, 5 जून, 1985
345. गुजराल, इन्द्रकुमार, देखिए क्र. 208
346. मिश्रा, पंचानन, देखिए क्र. 117
347. प्रसाद, विमल, देखिए क्र. 209
348. पैट्रीआट, 5 जनवरी, 1987

इतना शक्तिशाली सुरक्षा ढाँचा तैयार करने में सफल हो जाता, जिससे आन्तरिक विरोध व पाकिस्तान तथा ईरान में रह रहे छापामारों की छोटी-मोटी कार्रवाइयों को कुचल सके, तो अब तक विभिन्न चरणों में रूसी टुकड़ियां वापस जाने को तैयार हो जातीं, इसकी कोई सम्भावना प्रतीत नहीं होती। इसके अतिरिक्त रूस द्वारा सैनिक हस्तक्षेप से स्वयं उस पर राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर दबाव बढ़ा है। अफगान जनता उनको पसंद नहीं करती तथा प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप में मुजाहिदों से सहानुभूति रखती है। पाक-अफगान सीमा पर अमेरिका, चीन व मुस्लिम देशों से सहायता प्राप्त विद्रोहियों की गतिविधियाँ जारी है।[349]

उपर्युक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप के कारण अस्थायी रूप से भारत-पाक सम्बन्धों में सुधार दिखाई दिया है। दूसरी ओर पाकिस्तान द्वारा अमेरिका से बड़ी मात्रा में सैन्य सहायता प्राप्त करने से वह गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के लिए एक प्रश्न बन गया है। 1980 के पश्चात् अफगान प्रश्न को लेकर भारत-चीन सम्बन्धों में भी कुछ सकारात्मक रूख देखने का मिला है। इस संकट का भारत के अन्य छोटे पड़ोसी देशों के साथ सम्बन्धों पर भी गहरा प्रभाव देखने को मिला। अफगानिस्तान में पारस्परिक मित्रता के कारण यद्यपि भारत ने कारमल सरकार के प्रति समर्थन व्यक्त किया, किन्तु सोवियत संघ पर सेनाओं की वापसी के लिए दबाव बनाये रखा। इस प्रकार विश्व के प्रमुख देशों में भारत की प्रतिक्रिया अत्यन्त संतुलित एंव गम्भीर थी। उसने आन्तरिक और वैदेशिक दोनों ही प्रकार के दबावों के बावजूद उन्मादपूर्ण कोरस में शामिल होने से इन्कार कर दिया।

(ड.) अफगान संकट समाधान के भारतीय प्रयास

अमेरिका तथा अन्य दूसरे देशों में अफगान संकट पर अत्यधिक जोर दिया जा रहा है, हमें खुद कम चिन्ता नहीं है, क्योंकि वह हमारा एक ऐसा पड़ोसी देश है, जिसके साथ हमारी ऐतिहासिक मैत्री है। हमने अपनी नीति स्पष्ट कर दी है कि अफगानिस्तान से विदेशी सैनिक हटाए जाने चाहिए। साथ ही वहाँ हो रही दूसरों की दखलन्दाजी को ध्यान में रखा जाना चाहिए। इसका राजनैतिक समझौते के सिवाय और कोई चारा नहीं है, जिसमें सभी सम्बद्ध पक्षों की बात सुनी जानी चाहिए। हमारी विदेशनीति का उद्देश्य है- सबके साथ मैत्री और गुटनिरपेक्षता। हम बातचीत के जरिए समस्याएं सुलझाने में विश्वास करते हैं। इसलिए भारत, अफगान समस्या के शान्ति पूर्ण समाधान के पक्ष में है।[350]

(श्रीमती इन्दिरा गांधी)

---

349. बोस, प्रदीप, देखिए क्र. 6
350. प्रधानमन्त्री के विचार 61, "राष्ट्रों के बीच मैत्री सम्बन्ध", अमेरिका के राष्ट्रपति द्वारा व्हाइट हाउस में 30 जुलाई, 1982 को भारत की प्रधानमन्त्री के सम्मान में दिए गए भोज के अवसर पर श्रीमती गांधी का भाषण

श्रीमती गांधी ने सत्ता में आने के पश्चात् ही अफगान संकट के समाधान के लिए पर्याप्त कूटनीतिक प्रयास किए। जिनमें महत्वपूर्ण पहलू थे; रूसी सेनाओं की वापसी तथा पाकिस्तान व अमेरिका के प्रत्यक्ष हस्तक्षेप के तहत अफगान विद्रोहियों को हथियार आपूर्ति पूर्णतया बन्द की जाए,[351] जिससे अफगानिस्तान में सामान्य स्थिति बहाल की जा सके और जनता शान्ति पूर्वक बिना किसी बाहरी हस्तक्षेप के संयुक्त होकर रह सके।[352] भारत स्वीकार करता है कि राजनैतिक समाधान में सबसे अधिक बाधक विश्व में व्याप्त तनाव, बाह्य हस्तक्षेप तथा बड़ी शक्तियों का शक्ति संतुलन है।[353] भारत-अफगान समस्या के समाधान के लिए किसी भी पहलू पर विचार करने तथा मध्यस्थता के लिए तैयार है।

अफगानिस्तान से सेनाओं की वापसी के लिए मास्को तैयार है, लेकिन इसके पूर्व वह गारंटी चाहता है कि सम्बन्धित देश अमेरिका, चीन व पाकिस्तान अफगान मुजाहिदों को सैनिक व अन्य सहायता देना बन्द कर देंगे। भारत उनके इस वक्तव्य का समर्थन करता है । परन्तु अन्य गुटनिरपेक्ष देश इस समस्या के प्रति इतना मुलायम रवैया अपनाने के लिए तैयार नहीं, उनका मत है कि रूसी कब्जा पूरी तरह समाप्त होना चाहिए, उसके पश्चात् अफगानिस्तान को अन्य मुस्लिम देशों की ओर कर देना चाहिए।[354]

23 जनवरी को श्रीमती गांधी ने संयुक्त राष्ट्र महासचिव कुर्ट बाल्ड हाइम के साथ बातचीत में विश्वास दिलाया कि भारत, अफगानिस्तान से सैनिकों की वापसी के लिए रूस पर दबाव बनाए रखेगा।[355] भारत ने अफगान समस्या को समाप्त करने के लिए सर्वप्रथम क्षेत्रीय समस्याओं को असैनिक पद्धति से सुलझाने पर बल दिया तथा प्रभावित पड़ोसी देशों का पुनः विश्वास प्राप्त करने को अधिकतम प्रधानता दी।[356] अपने प्रयत्नों को साकार रूप देने के लिए श्रीमती गांधी ने विदेश सचिव आर. डी. साठे को पाकिस्तान तथा काबुल में पूर्व राजदूत एस. के. सिंह को अफगानिस्तान भेजा।[357]

श्री साठे पाकिस्तान में राष्ट्रपति जिया तथा कुछ अन्य अधिकारियों से मिले, किन्तु उन्होंने अपनी स्थिति स्पष्ट नहीं की, न ही वे अफगान समस्या की आड़ में ली जा रही अमरीकी सैन्य

---

351. चौधरी, नरेन्द्र सिंह, देखिए क्र० 72, पृ. 97
352. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 5 फरवरी, 1980
- प्राइमिनिस्टर स्टेटमेण्ट इन राज्य सभा, जनवरी 30, 1980, देखिए क्र. 9, पृ. 10
353. वार्षिक रिपोर्ट, देखिए क्र. 170, पृ. 4
354. मिनिस्टर ऑफ इक्सटरनल अफेयर्स स्टेटमेंण्ट इन राज्य सभा, जनवरी 24, 1980, क्र. 9 पृ. 13-14
355. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 52
356. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 116-17
357. खिलनानी, एन०एम०, देखिए क्र. 343, पृ. 23

सामग्री में रोक लगाने को तैयार थे। जिया की राय थी कि अफगानिस्तान की स्वतन्त्रता के लिए भारत को मित्र सोवियत संघ को उसकी इस भूल के लिए अहसास कराना चाहिए।[358] भारतीय पत्रकारों के साथ बातचीत में श्री जिया ने भारत के लिए पाकिस्तान व ईरान के साथ शान्ति सेना में शामिल होने का प्रस्ताव रखा, जिसके द्वारा अफगानिस्तान से रूसी सेनाओं की वापसी, शरणार्थियों की स्वदेश वापसी और वहाँ की जनता को अपना भविष्य संवारने में मदद मिलेगी।[359] साठे ने पाकिस्तान को सचेत किया कि वह अपनी भूमि को बाहरी शक्तियों के उपयोग का अड्डा न बनाएं और अफगान शरणार्थियों को छापामार कार्रवाइयों की आज्ञा व सुविधा न दें। उन्होंने पाकिस्तान के समक्ष नो वार पैक्ट का प्रस्ताव रखा, जिसको पाकिस्तान ने स्वीकार नहीं किया।[360] श्री साठे ने अफगान संकट के राजनैतिक समाधान की सम्भावनाओं पर विचार किया तथा सैनिक समाधान से उत्पन्न खतरों से भी पाक अधिकारियों को अवगत कराया।[361] किन्तु श्री साठे को न तो भारत-पाक सम्बन्धों के सुधार में सफलता मिली और न ही इस्लामाबाद द्वारा नई दिल्ली के साथ अफगान समस्या के समाधान में साथ-साथ हाथ बढ़ाने में ही।[362]

पाकिस्तान ने राजनैतिक समाधान में सहायता के बजाय इस्लामी देशों के मंच से रूसी हस्तक्षेप की निन्दा की और अमेरिका व चीन के साथ तालमेल कर उपमहाद्वीप में शीतयुद्ध का श्री गणेश कर दिया।[363] यही कारण था कि भारत ने श्री जिया के शान्ति सेना के प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया।[364]

एस.के. सिंह अफगान राष्ट्रपति के नाम प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी का एक पत्र लेकर काबुल पहुँचे। जिसमें उन्होंने लिखा कि वे आशा करती हैं कि स्थिति सुधरते ही सोवियत सेनाएं अफगानिस्तान से वापस चली जाएंगी। श्री कारमल ने कहा कि भारत को उनकी सरकार व देश को सुरक्षा की गारण्टी देनी चाहिए। वे रूसी सहयोग के बिना क्षेत्रीय ताकतों से कैसे निपट सकते हैं।[365] इसलिए हिन्दू पत्र ने लिखा कि जहाँ हम समस्या के राजनैतिक समाधान के लिए रूसी सैनिकों की वापसी चाहते हैं, वहीं यह भी आशा करते हैं कि सभी पड़ोसी देशों से बातचीत करके

---

358. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 116-21
359. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 147-48. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 73
 - एशियन रिकार्डर, खण्ड 26, अंक 11, मार्च 11-17, 1980, पृ. 15355
360. चौधरी, नरंन्द्र सिंह, देखिए क्र. 72, पृ. 31
361. वही, पृ. 68
362. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 74
363. चौधरी, नरेन्द्र सिंह, देखिए क्र. 72, पृ. 32
364. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97. द हिन्दू, 8 फरवरी, 1980
365. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 74-75. न्यूयार्क टाइम्स, 25 जून, 1979
 -डान ओवरसीज वीकली, खण्ड 5, अंक 8, मार्च 8-14, 1980, पृ. 1

नई सरकार को अहस्तक्षेप की गारण्टी मिले।[366]

भारत किसी भी अन्तर्राष्ट्रीय समस्या का महाशक्तियों द्वारा सैनिक समाधान स्वीकार नहीं करता इसलिए अफगानिस्तान में रूसी कार्यवाई पर यहाँ सदैव प्रतिक्रिया व्यक्त की जाती रही।[367] लोकदल नेता जार्ज फर्नाडीज ने कहा कि अफगान समस्या के समाधान के लिए बड़ी शक्तियों का खेल समाप्त होना चाहिए तथा संयुक्त राष्ट्र की मध्यस्थता में बातचीत द्वारा रूसी सैनिकों को वापस जाना चाहिए, ताकि शरणार्थियों की स्वदेश वापसी की प्रक्रिया निधारित की जा सके।[368] भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कार्यकारी सदस्य अजीज इमाम का मत है कि क्षेत्र में अहस्तक्षेप से उनका तात्पर्य हिन्द महासागर तथा खाड़ी के क्षेत्र से अमरीकी सेनाएं वापस हों और भारतीय सीमाओं पर पाकिस्तान व चीन की उत्तेजक कार्रवाइयाँ समाप्त हों।[369] दूसरी ओर जम्मू-कश्मीर के मुख्यमन्त्री शेख अब्दुल्ला ने कहा कि इस क्षेत्र में रूस को अपना स्वार्थ त्याग देना चाहिए। भारत को भी अपना स्वार्थ त्याग कर अफगान समस्या के समाधान के प्रयास करने चाहिए।[370] दूसरी ओर यह भी सत्य है कि रूस भी अपने लगभग 1 लाख सैनिकों को अफगानिस्तान में स्थायी रूप से रखना नहीं चाहता।[371]

वास्तव में, अफगान संकट के समाधान के लिए सम्बन्धित सभी देशों सहित दोनों महाशक्तियों को निम्नलिखित तथ्यों को स्वीकार करना चाहिए, प्रथम- अफगानिस्तान से रूसी सेनाओं की वापसी हो, द्वितीय- अफगान विद्रोहियों को शस्त्र सहायता बन्द हो और बिना किसी डर के उन्हें स्वदेश आने की आज्ञा हो, तृतीय- संयुक्त राष्ट्रसंघ के नेतृत्व में वहाँ चुनाव कराए जाएं तथा अफगानिस्तान को एक सामान्य देश घोषित किया जाए, जिसे अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त हो। भारत, पाकिस्तान, ईराक, ईरान और अन्य दक्षिण पूर्व एशियाई देशों को संयुक्त रूप से अफगानिस्तान में शान्ति व गुटनिरपेक्षता की स्थापना की मांग करनी चाहिए, ताकि वहाँ सभी विदेशी हस्तक्षेप समाप्त हो और वह अपने विकास कार्यों की निश्चित आधारशिला रख सके। टोक्यो में सोवियत राजदूत ने कहा कि अफगान समस्या पूरी तरह अमेरिका व चीन पर निर्भर हैं और इस संकट को समाप्त करने में भी इनकी प्रमुख भूमिका है। श्रीमती गांधी भी चाहती हैं कि यदि अमेरिका, चीन व ब्रिटेन सहयोग दें तो पाकिस्तान व अफगानिस्तान के मध्य रूसी सेनाओं की वापसी से सम्बन्धित

---

366. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 116-21. द हिन्दू, 8 फरवरी, 1980
367. कौर, कुलवन्त, देखिए क्र. 201, पृ. 22, द हिन्दुस्तान टाइम्स, 7 जनवरी, 1980
368. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 19 अप्रैल, 1980
369. इमाम, अजीज, "इम्पीरियलस्टि कैलकुलेशन्स मिस फायर", द्वारा अजहर अंसारी, देखिए क्र. 36 पृ. 42-45
370. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 6 मार्च, 1980
371. मोहन, सुरेन्द्र, देखिए क्र. 116

प्रत्यक्ष वार्ता हो सकती है। जिससे कारमल सरकार शान्ति के लिए पहल कर सकेगी।[372] अफगान विदेशमन्त्री का भी मत है कि जब तक सोवियत विस्तारवाद के नाम पर अमेरिका दक्षिण एशिया में अपनी उपस्थिति बनाए रखेगा, तब तक अफगान समस्या का राजनैतिक हल सम्भव नहीं है।[373] जबकि पाक नेता अफगानिस्तान से रूसी सेनाओं की वापसी को समस्या का वास्तविक हल मानते हैं।

भारत, अफगान संकट के समाधान में निरन्तर प्रयासरत रहा है।[374] जनवरी से अप्रैल के बीच लगभग 30 विदेशी नेताओं ने भारत की यात्रा की और श्रीमती गांधी ने उनके साथ अफगानिस्तान में सामान्य स्थिति बहाल करने के लिए विचार-विमर्श किया।[375] वहीं दूसरी ओर भारतीय प्रधानमन्त्री तथा कूटनीतिक विशेषज्ञों ने न्यूयार्क, लन्दन, मास्को, पेरिस, बोन, टोकियो व पीकिंग में अफगान समस्या के समाधान पर विस्तृत चर्चा की।[376]

काबुल सरकार द्वारा फरवरी में इस्लामाबाद में हुए इस्लामिक देशों की बैठक में प्रस्ताव रखा गया कि समस्या के राजनैतिक समाधान के लिए पाकिस्तान व ईरान अफगान विद्रोहियों को मदद देना बन्द कर बातचीत की प्रक्रिया प्रारम्भ करे।[377] भारत ने इस प्रस्ताव के समर्थन में 16 मई को भारतीय विदेश सचिव, आर. डी. साठे को काबुल भेजा। उन्होंने अफगान नेताओं से संकट के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा की[378] और कहा कि भारत चाहता है कि रूसी सेनाओं की वापसी से पूर्व काबुल, इस्लामाबाद व तेहरान के मध्य राजनैतिक समाधान की भूमिका तैयार की जाए और अमेरिका तथा सोवियत संघ अफगानिस्तान को सुरक्षा की गारण्टी प्रदान करें।[379] किन्तु भारत का संकट-समाधान का प्रयास लगभग टूटता-सा नजर आ रहा था, क्योंकि अभी काबुल के विचारों में परिवर्तन नहीं था। वे रूसी सैनिकों की वापसी से पूर्व देश में शान्ति तथा स्थायित्व चाहते हैं।[380]

अफगान संकट के समाधान के उद्देश्य को लेकर 3 जून को विदेशमन्त्री नरसिंहाराव ने मास्को की यात्रा की। राष्ट्रपति ब्रझनेव तथा विदेशमन्त्री ग्रोमिको से बातचीत में श्री राव ने कहा कि भारत, अफगानिस्तान में एक ऐसी सरकार चाहता है जो परम्परागत सम्बन्धों को बनाए

372. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 125-126
373. चौधरी, नरेन्द्र सिंह, देखिए क्र. 72 पृ. 8
374. बोस, प्रदीप, देखिए क्र. 236, पृ. 13-16
375. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ.106-10
376. वही, पृ.130-34
377. हैरीसन, सैलिंग एस0, देखिए क्र. 75, पृ.181
378. वही, पृ. 130-34. नैय्यर, देखिए क्र. 69, पृ.81. द हिन्दुस्तान टाइम्स, 20 मई, 1980
379. हैरीसन, पृ. 134-35
380. नैय्यर, पृ. 81-84

रखते हुए गुटनिरपेक्ष नीति का पालन करे तथा क्षेत्रीय अखण्डता व स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए उचित कदम उठाए। मास्को से लौटने पर विदेशमन्त्री श्री राव ने नई दिल्ली में बताया कि रूस, अफगानिस्तान के सम्बन्ध में बहुत ही सीमित सहयोग देने को तैयार है। उन्होंने लोकसभा में भारत और सोवियत संघ के मध्य अफगान प्रश्न पर उत्पन्न मतभेदों के बारे में जानकारी दी।[381] 22 जून को सोवियत संघ ने एक वक्तव्य जारी किया, जिसमें कहा गया कि वह अपनी कुछ सेना अफगानिस्तान से वापस बुला रहा है। किन्तु भारत सरकार व प्रेस ने इस पर कोई विशेष प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की।[382] किन्तु पाकिस्तान सहित कुछ मुस्लिम देशों ने सीमित स्वरों में रूसी कदम का स्वागत करते हुए नए सिरे से अफगानिस्तान से सम्बन्धों के लिए आशा व्यक्त की।[383]

श्रीमती गांधी ने इटालियन पत्रिका में दिए गए अपने साक्षात्कार में कहा कि सोवियत संघ को अफगानिस्तान में सामान्य स्थिति बहाल करने के लिए प्रत्येक प्रयास को स्वीकार करना चाहिए।[384] श्रीमती गांधी ने कहा कि सभी देशों को अहस्तक्षेप की नीति के आधार पर बिना शर्त रूसी सैनिकों की वापसी की मांग करनी चाहिए, इसमें पश्चिमी सहायता का व्यापार नहीं करना चाहिए। तभी क्षेत्रीय सम्बन्धों में सुधार का युग प्रारम्भ होगा।[385] पख्तून नेता अब्दुल गफ्फार खान ने भारतीय प्रधानमन्त्री के विचारों पर समर्थन व्यक्त किया।[386]

15-17 जुलाई, 1980 में जब पाक विदेशमन्त्री आगाशाही नई दिल्ली आए, उन्होंने बताया कि राष्ट्रपति जिया शरणार्थी समस्या को इस्लामिक कान्फ्रेन्स में रखना चाहते हैं। किन्तु वे पाकिस्तान व अफगानिस्तान के मध्य बातचीत में भारत की महत्वपूर्ण भूमिका के पक्ष में नहीं हैं।[387]

भारत प्रारम्भ से ऐसी नीति की खोज में रहा है, जिससे रूसी सेनाओं की वापसी में आसानी हो, किन्तु रूसी राष्ट्रपति ब्रझनेव की यात्रा के पश्चात् यह अनुमान लगाया जाने लगा था कि अभी भविष्य में अफगानिस्तान से रूसी सेनाओं की वापसी की कोई योजना नहीं है।[388] श्री ब्रझनेव ने 15 दिसम्बर को भारतीय संसद को सम्बोधित करते हुए कहा कि दोनों देशों के

---

381. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 135-138
382. वही, पृ. 138-40
 - यद्यपि कुलदीप नैय्यर ने अपनी पुस्तक "रिपोर्ट ऑन अफगानिस्तान", में लिखा कि भारत इस घोषणा का स्वागत करने वाला पहला देश था, जिसने कहा कि यह सोवियत संघ की अच्छी कार्रवाई है, पृ. 85
383. "विन्डो ऑफ अफगानिस्तान-प्रेशर फॉर चेन्ज इन अफगानिस्तान पॉलिसी, ए स्पेशल कॉरेस्पोण्डेन्स", सैकुलर डेमोक्रेसी, खण्ड 3, अंक 8, अगस्त, 1980, पृ. 17-18
384. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 11, पृ. 207
385. ठाकुर, रमेश, देखिए क्र. 30, पृ. 206
386. बनर्जी, ब्रजेन्द्रनाथ, देखिए क्र. 28, पृ. 325-27
387. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 138-49
388. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 166. अप्पादोराय, राजन, देखिए क्र. 40, पृ.627-28

मध्य हुए समझौते के तहत पहुँचे रूसी सैनिक बीच में वहाँ (अफगानिस्तान) से वापस कैसे आ सकते हैं। श्रीमती गांधी ने भी अपने भाषण में श्री ब्रझनेव के समक्ष विश्व में शान्ति का प्रस्ताव रखा तथा खाड़ी युद्ध व अफगानिस्तान में शान्ति की प्रार्थना की। श्री ब्रझनेव ने कहा कि वे आशा करते हैं कि भारत इसी तरह स्थिति में सुधार और शान्तिपूर्ण राजनैतिक समाधान के लिए प्रमुख-प्रभावशाली भूमिका निभाता रहेगा।[389]

वास्तव में, श्रीमती गांधी रूस से सम्बन्ध बिगाड़े बिना अफगान समस्या का समाधान चाहती हैं तथा विश्व में अपनी छवि बनाये रखना चाहती हैं। वैसे भी छापामार दलों में परस्पर विभाजन होने तथा उन्हें सहायता कर रहे देशों द्वारा छापामारों को रूसी सेनाओं का विरोध करने योग्य बनाने में असफल होने से रूस पर अपनी सेनाओं की वापसी के लिए कोई भारी दबाव नहीं है। निष्कर्षत: किसी बाहरी या आन्तरिक शक्ति के दबाव में आकर अफगान संकट का समाधान नहीं हो सकता। इस संकट के राजनैतिक समाधान के उद्देश्य से ब्रिटिश विदेशमन्त्री लार्ड कैरिंगटन ने अफगानिस्तान का फिनलैण्डीकरण* का फार्मूला रखा था, जिसके अन्तर्गत पाकिस्तान व ईरान का तटस्थ रहना भी सम्मिलित था। रूस भी इस प्रस्ताव को स्वीकार करने में पीछे नहीं रहेगा क्योंकि इसके अनुसार सरकार रूस के इच्छानुकूल होगी।

अफगान समस्या के समाधान में अन्य देशों का योगदान

जहाँ भारत ने अफगान संकट के समाधान में सामान्य व अनुकूल प्रतिक्रिया व्यक्त की, वहीं विश्व के विभिन्न देशों ने इस दिशा में भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण रखे। अमरीकी राज्य सचिव एतमन्द मुस्काए ने कहा कि अफगान संकट के राजनैतिक समाधान के लिए चार प्रमुख आधार हैं:- 1. स्थायी और सभी रूसी सैनिकों की पूर्ण वापसी हो, 2. आन्तरिक सम्बन्धों में बाह्य हस्तक्षेप समाप्त हो, 3. अफगान जनता द्वारा चुनी गई सरकार की स्थापना तथा 4. वह एक स्वतन्त्र गुटनिरपेक्ष देश रहे। किन्तु अमरीकी राष्ट्रपति सर्वप्रथम रूसी सैनिकों की वापसी चाहते है।[390] जिसे सोवियत संघ स्वीकार नहीं कर रहा है।[391] 12 मार्च को पश्चिमी जर्मनी के चान्सलर हेलमेट कौल ने अपने 4 पत्रों में राष्ट्रपति ब्रझनेव को लिखा कि वे आशा करते हैं कि शीघ्र ही रूसी सेनाओं की अफगानिस्तान से वापसी होगी।[392] यूरोपीय समुदाय के समानान्तर दृष्टिकोण

---

389. एशियन रिकार्डर, जनवरी 8-14, 1981, खण्ड 2, पृ. 15827-31

* फिनलैण्डीकरण से तात्पर्य अफगानिस्तान को फिनलैण्ड की तरह स्वतन्त्र राष्ट्र बनाने से है।

390. रतनाम, परेला, देखिए क्र. 1, पृ. 28-29
391. "क्रोनोलोजी ऑफ अफगास्तिान इवेन्टस", क्र. 63, पृ. 5
392. वही, पृ. 15

अपनाते हुए ब्रिटिश विदेशमन्त्री लार्ड कैरिंगटन ने कहा कि रूसी सेनाओं की वापसी होते ही पड़ोसी देशों द्वारा गारण्टी स्वत: ही मिल जाएगी। सैलिंग हैरीसन कहते हैं कि जितनी आवश्यकता अफगानिस्तान से रूसी सैनिकों की वापसी की है, उतनी ही आवश्यकता है कि ईरान, पाकिस्तान और भारत उसे गुटनिरपेक्ष रहने की गारण्टी दे।[393] दूसरी ओर अफगान जनता चाहती है कि उनकी सरकार ऐसी हो जिसमें आर्थिक, राजनैतिक व सामाजिक किसी प्रकार का हस्तक्षेप न हो।[394] भारत का भी यही मत है कि जब रूसी सेनाएं अफगान सरकार के कहने पर आई हैं तो मित्र राज्य सोवियत संघ पुन: उनके कहने पर अपनी सेनाएं वापस बुला लेगा। परस्पर विचारों की समानता के कारण अफगान नेता भारतीय नीतियों की सराहना करते हैं और अफगान समस्या के समाधान के लिए भारत-पाकिस्तान व अफगानिस्तान के मध्य प्रत्यक्ष वार्ता की आवश्यकता पर बल देते हैं।[395]

अफगान सरकार ने बातचीत की प्रक्रिया शुरू कर शान्ति पूर्ण समाधान के लिए गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के अध्यक्ष के रूप में क्यूबा की पहल का समर्थन किया। जिसमें निम्न बातें शामिल हैं:-

1. पड़ोसी देशों के साथ अहस्तक्षेप के आधार पर मित्रतापूर्ण सम्बन्ध तथा पाकिस्तान व ईरान के साथ द्विपक्षीय समझौतों की रूपरेखा तैयार करने के लिए बातचीत।
2. अफगान शरणार्थियों की स्वदेश वापसी में सहायता।
3. अफगानिस्तान के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न किए जाने की गारण्टी।
4. वे हिन्दमहासागर व खाड़ी क्षेत्र को शान्ति क्षेत्र बनाये जाने तथा वहाँ विदेशी सैनिक अड्डों को खत्म किए जाने का समर्थन करते हैं।
5. अमेरिका के विरोध के बावजूद समझौता अमल किया जा सकता है, बशर्ते कि पाकिस्तान की जनता अपनी सरकार को विवश करे कि वह अमेरिका से स्वाधीन होकर कार्रवाई करे अथवा यदि अफगान सरकार अपने ही बलबूते पर 'बाहरी हस्तक्षेप' की चुनौती का मुकाबला करने की सामर्थ्य जुटाले।[396]

कारमल सरकार द्वारा 25 अगस्त को जारी किए गए इस प्रस्ताव के प्रति पाकिस्तान

---

393. हैरीसन, सैलिंग एस0 देखिए क्र. 75, पृ. 181
-मेहता, जगत. एस, "ए नेचुरल सोल्यूशन", फॉरेन पॉलिसी, वाशिंगटन 1982, अंक 47, पृ. 146
394. एशिया वीक, 16 मई, 1980. एन्थोनी, ह्यूमैन, देखिए क्र. 14,पृ. 164
395. चक्रवर्ती, सुमित, देखिए क्र. 144, पृ. 66-73
396. गोयल, देशराज, देखिए क्र. 85
-अफगानिस्तान सच्चाई क्या है देखिए क्र. 81, पृ. 80-89
-बख्तर संवाद समिति, 14 मई, 1981

तथा ईरान ने किसी प्रकार की प्रतिक्रिया से इन्कार किया, किन्तु विदेशमन्त्री नरसिंहाराव ने कहा कि भारत अफगान प्रस्ताव का समर्थन करता है।[397] एफ्रो-एशियाई एकजुटता संगठन के अध्यक्ष मण्डल के विचार में अफगान संकट के समाधान के लिए संयुक्त राष्ट्र की सहभागिता में अफगानिस्तान, पाकिस्तान और ईरान के बीच द्विपक्षीय वार्ता अनिवार्य है।[398] अफगान समस्या के समाधान के लिए राष्ट्रपति जिया और प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी सहित 8 देशों के नेता बेलग्रेड में मिले, किन्तु समाधान की दिशा में कोई प्रगति न हो सकी।[399]

जनवरी, 1981 में विदेश सचिव आर0डी0 साठे ने अफगानिस्तान की यात्रा की और राष्ट्रपति कारमल तथा अन्य नेताओं से विभिन्न मुददों पर बातचीत की। उन्होंने कहा कि समस्या के शान्ति पूर्ण समाधान के लिए पाकिस्तान तथा ईरान को अफगानिस्तान की क्रान्तिकारी सरकार को स्वीकार करना चाहिए।[400] राष्ट्रपति कारमल ने श्रीमती गांधी से अपने सन्देश में कहा कि पड़ोसी देश तथा अन्य दूसरी शक्तियां जो विद्रोहियों का समर्थन कर रही हैं, वे काबुल में अहस्तक्षेप की गारण्टी दें तो वहाँ दो-तीन महीने में स्वतन्त्र चुनाव कराए जा सकेंगे।[401] राष्ट्रपति कारमल ने नव भारत टाइम्स के सह-सम्पादक डा0 वैदिक द्वारा लिए गए साक्षात्कार में कहा कि वे आशा करते हैं कि भारतीय प्रधानमंत्री अफगान समस्या के प्रति महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती हैं।[402]

ब्रिटिश प्रधानमन्त्री श्रीमती थ्रेचर ने 16 अप्रैल को नई दिल्ली की 5 दिन की यात्रा की। उन्होंने भारतीय संसद में दिए गए अपने भाषण में कहा कि अफगान संकट के समाधान के लिए आवश्यक है कि उसे विदेशी सेनाओं से मुक्त कराया जाए, जिससे वह परम्परागत गुटनिरपेक्षता की नीति का पालन कर सके।[403] श्रीमती गांधी ने कहा कि सोवियत संघ का मत है कि पाकिस्तान ने हस्तक्षेप पहले प्रारम्भ किया था, इसलिए उसे पहले इसको समाप्त करना चाहिए। वे पाकिस्तान द्वारा हस्तक्षेप किए जाने की निन्दा करती हैं।[404] प्रधानमन्त्री ने अपनी स्विट्जरलैण्ड,

---

397. इण्डियन एक्सप्रेस, 9 सितम्बर, 1981
398. अफगानिस्तान सच्चाई क्या है, देखिए क्र. 81, अफगानिस्तान के सम्बन्ध में एफ्रो-एशियाई एक जुटता संगठन के अध्यक्ष मण्डल का संदेश 21 नवम्बर, 1981, पृ. 132-35
399. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 11, पृ. 219
400. हिन्दुस्तान टाइम्स (दिल्ली), 8 जनवरी, 1981
-द टाइम्स ऑफ इण्डिया, 8 जनवरी, 1981. द हिन्दू 8 जनवरी, 1981
401. -वैदिक, वी0पी0, "कारमल प्रोमिसिस पोल, आफ्टर आउट साइड इन्टरफेरेन्स इन्ड्स", टाइम्स ऑफ इण्डिया, 11 फरवरी, 1981. स्टेट्समैन 10 फरवरी, 1981
402. द टाइम्स ऑफ इण्डिया, 30 मार्च, 1981
403. एशियन रिकार्डर, मई 14-20, 1981, अंक 20, पृ. 16023-25
404. ट्रान्सक्रिप्ट ऑफ इण्टरव्यू विद एम0वी0नकवी ऑफ पाकिस्तान ऑन 2 मई, 1981, "वी विल वान्ट पॉलिटिकल सोल्यूशन", देखिए क्र. 9, पृ. 69

कुवैत तथा संयुक्त अरब अमीरात की यात्रा के दौरान और जाम्बिया के प्रधानमंत्री राबर्ट मुगाबे की भारत यात्रा पर अफगान संकट के राजनैतिक समाधान पर विस्तृत चर्चा की।[405]

विदेशमन्त्री श्री राव ने मास्को यात्रा के दौरान वहाँ एक बैठक में भाग लेने आए राष्ट्रपति कारमल से अपनी भेंट वार्ता में कहा कि भारत मध्य एशिया में स्थिरता के लिए सभी अन्तर्राष्ट्रीय मंचों द्वारा अफगान समस्या के शीघ्र समाधान में सहयोग देने के लिए तैयार है[406] वह इसके लिए पाकिस्तान के साथ सामान्य सम्बन्ध बनाने के लिए प्रयासरत है। यद्यपि अफगानिस्तान से अपनी सेनाओं की वापसी के तथ्य को सोवियत संघ ने भी स्वीकार कर लिया, किन्तु इसके पूर्व वह चाहता है कि (क) वहाँ बाहरी शक्तियाँ, अमेरिका, चीन, सऊदी अरब व पाकिस्तान का हस्तक्षेप नहीं होगा, (ख) अफगान विद्रोहियों को सैन्य प्रशिक्षण न देकर उन्हें स्वदेश वापस कर दिया जाए, (ग) अफगान सरकार को गिराने के बाहरी प्रयास बन्द हों और पाकिस्तान एक तटस्थ व गैर परमाणु राष्ट्र रहे।[407] किन्तु संकट के समाधान के लिए राष्ट्रपति रीगन तथा जिया इन शर्तों को स्वीकार नहीं करना चाहते।[408]

3 सितम्बर, 1981 को लोकसभा में प्रो0 मधु दण्डवते द्वारा पाकिस्तानी विदेशमन्त्री द्वारा अफगान संकट के सम्बन्ध में दिए गए वक्तव्य के लिए पूछे जाने पर विदेशमन्त्री श्री नरसिंहाराव ने बताया कि जहाँ तक रूसी सेनाओं की वापसी का सवाल है, दोनों देश एक दूसरे के बहुत करीब हैं।[409] वास्तव में, अफगान समस्या का कूटनीतिक समाधान पाकिस्तान सरकार के लिए लाभप्रद तथा अनिवार्य है।[410]

27 सितम्बर, 1981 को अफगान विदेश मन्त्री शाह मोहम्मद दोस्त राष्ट्रपति कारमल का संदेश लेकर नई दिल्ली आए। श्रीमती गांधी से अपनी मुलाकात में उन्होंने कहा कि अमेरिका एक ओर अफगान समस्या के राजनैतिक समाधान का समर्थन करता है वहीं दूसरी ओर उसने अफगानिस्तान के खिलाफ अघोषित युद्ध छेड़ रखा है।[411] भारत तथा अफगान विदेशमन्त्रियों ने अपनी बातचीत में कहा कि शीत युद्ध फैलाने वाले अमेरिका और उसके दोस्तों को अपनी नीति का परित्याग करना चाहिए।[412] श्री दोस्त की यात्रा की समाप्ति पर जारी की गई संयुक्त विज्ञप्ति

---

405. एशियन रिकार्डर, जून 25-जुलाई 1, 1981,अंक 26, पृ.16091-94. साथ ही देखिए अंक 27, पृ. 18101-2
406. इण्डियन एक्सप्रेस, 4 अगस्त, 1981
 -द कम्पटीशन मास्टर, खण्ड 27, अंक 7, फरवरी 1986, पृ. 526
407. चौधरी, नरेन्द्र सिंह, देखिए क्र. 72, पृ. 105
408. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 11, पृ. 231
409. लोकसभा सैक्रेटियट, सितम्बर 3, 1981, खण्ड 19, अंक 14, छठा सत्र, पृ.232
410. कौर, कुलवन्त, देखिए क्र. 231, पृ. 138-39. द हिन्दुस्तान टाइम्स, 10 सितम्बर, 1981
411. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 11, पृ. 223, 226
412. नेशनल हेराल्ड, 10 सितम्बर, 1981. स्टेटसमैन, 7 सितम्बर, 1981

में श्रीमती गांधी ने संकट समाधान के लिए अफगान प्रस्ताव का समर्थन कर परम्परागत सम्बन्धों को व्यक्त किया[413] और कहा कि कारमल सरकार को आन्तरिक समर्थन प्राप्त करना चाहिए, ताकि पद के अनुरूप शक्ति प्राप्त हो सके। श्री दोस्त ने कहा कि पश्चिमी खबरों में विद्रोही गतिविधियों को बहुत बढ़ा-चढ़ा कर बताया गया है। अफगान जनता आन्दोलन चलाने के लिए स्वतन्त्र है।[414] विज्ञप्ति में श्री दोस्त की भारत यात्रा को पड़ोसी देशों की शान्ति व स्थिरता के लिए महत्वपूर्ण कदम बताया गया।[415]

अफगान सरकार द्वारा समस्या के राजनैतिक समाधान के लिए लाए गए प्रस्ताव को नामंजूर करते हुए राष्ट्रपति जिया ने 12 अक्टूबर को कहा कि पाकिस्तान अपने सिद्धान्तों के विरूद्ध कोई समझौता नहीं करेगा। उन्होंने संयुक्त राष्ट्रसंघ के तहत रूसी सेनाओं की वापसी के लिए कहा। अफगान शरणार्थियों की स्थिति की आलोचना करते हुए उन्होंने आशा व्यक्त की कि वे शीघ्र ही स्वदेश लौटें जिससे देश की सत्ता में भागीदार बन सकें। इस समय लगभग 25 लाख शरणार्थी पाकिस्तान में हैं।[416] 10 नवम्बर को तेहरान में अफगान समस्या के समाधान के लिए पाकिस्तान तथा ईरान द्वारा प्रस्तावित शान्ति योजना के उद्देश्यों में कहा गया कि इस्लामिक शान्ति सेना अफगानिस्तान में सोवियत सैनिकों को हटाएगी और वहाँ स्वतन्त्र संविधान के चुनाव में मदद करेगी।

22 मार्च को बी0बी0सी0 टेलीविज़न पर अपने साक्षात्कार में राष्ट्रपति कारमल ने कहा कि वे अफगान समस्या के समाधान हेतु अपने प्रस्ताव पर पड़ोसी देशों के साथ विचार-विमर्श के लिए तैयार हैं, लेकिन वे सोवियत संघ का विरोध नहीं चाहते। वे उपनिवेशवाद, पृथकतावाद, फासीवाद, रंगभेद और भेदभाव की नीति का विरोध करते हैं।[417] पाकिस्तान के बलूचिस्तान क्षेत्र के पूर्व राज्यपाल सरदार अकबर खान बुग्गी ने पाकिस्तान को सलाह दी कि उन्हें कारमल सरकार को मान्यता देनी चाहिए तथा भारत व रूस से अच्छे सम्बन्ध स्थापित करना चाहिए। उन्होंने कहा कि वे पश्चिमी पत्रकारों से सहमत नहीं हैं कि रूस गरम पानी तक पहुँचना चाहता है। अमेरिका स्वयं सोवियत विस्तारवाद का नाम लेकर तैलीय देशों को भयभीत कर रहा है।[418] अमेरिकी राजदूत जनरल बरनन वाल्टार्स और उनके घनिष्ट सलाहकार राज्य सचिव अलैक्जैण्डर हैंग ने कहा कि रूस के दवाव के बिना अफगान समस्या के निश्चित समाधान के लिए भारत

413. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 8 सितम्बर, 1981
414. एशियन रिकार्डर, 5-11 नवम्बर, 1981, अंक 45, पृ. 16307
415. नेशनल हेराल्ड, 10 सितम्बर, 1981
416. एशियन रिकार्डर, अक्टूबर 29-नवम्बर 4, 1981, अंक 44, पृ. 16296
417. एशियन रिकार्डर, मई 7-13, 1982, अंक 19, पृ. 16583
418. हिन्दुस्तान टाइम्स, 7 अप्रैल, 1982

प्रारम्भिक और स्थायी भूमिका निभा सकता है।[419]

अप्रैल 1982 में काबुल में भारत-अफगानिस्तान संयुक्त आयोग की पहली बैठक में भाग लेने के लिए गए विदेश सचिव नटवर सिंह ने राष्ट्रपति कारमल तथा श्री दोस्त से अफगान समस्या के शान्ति पूर्ण समाधान हेतु विचार-विमर्श किया। पिछले ढाई वर्षों में कड़े मुकाबले के बाद भी न अफगान विद्रोहियों ने अपनी कार्रवाइयाँ बन्द की और न ही पड़ोसी देशों के सतत् प्रयासों द्वारा रूसी सैनिकों की वापसी का मार्ग मिला।[420] 29 अगस्त को भारतीय समाचार संस्था के साथ साक्षात्कार में श्री कारमल ने कहा कि उन्होंने पकिस्तानी नीति निर्माताओं से प्रत्यक्ष बातचीत का प्रावधान रखा है, इस उद्देश्य से जेनेवा वार्ता बहुत उपयोगी होगी।[421] उन्होंने विदेशों में रह रही अफगान जनता तथा शरणार्थियों से अपील की कि वे स्वदेश लौटें और पाकिस्तान के रास्ते अपने आक्रमणों को बन्द करें।[422] उन्होंने कहा कि पश्चिम द्वारा आर्थिक प्रतिबन्ध लगाए जाने पर भी उनके देश का विकास रूका नहीं है। श्री कारमल ने अमेरिका में श्रीमती गांधी के साथ हुई भेंट में उनके द्वारा परस्पर मित्रता के लिए व्यक्त किए गए विचारों पर प्रसन्नता व्यक्त की।[423]

18 मार्च को भारतीय विदेश मन्त्रालय की 1982-83 की वार्षिक रिपोर्ट में जहाँ आपसी बातचीत के आधार पर समस्या के समाधान के लिए कहा गया, वहीं स्थिति में सुधार के लिए अमेरिका के साथ अच्छे सम्बन्धों की आवश्यकता पर भी बल दिया गया।[424] जनता पार्टी ने भी मांग की कि सरकार द्वारा स्वच्छ व पुष्ट सूत्रपात किया जाए, ताकि अफगानिस्तान से रूसी सेनाओं की वापसी हो सके।[425]

24 मई को अमरीकी राजकीय विभाग द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट में कहा गया कि अफगानिस्तान में सभी देशों को परस्पर बातचीत द्वारा राजनैतिक समाधान की मांग करनी चाहिए, ताकि रूसी कब्जा समाप्त हो सके। क्योंकि अफगान जनता अविश्वास तथा कष्ट से गुजर रही है।[426] 10 जुलाई को इस्लामाबाद में मज़लिस-ए-शूरा को सम्बोधित करते हुए राष्ट्रपति जिया ने भारत और पाकिस्तान के मध्य तनाव मुक्त मित्र-वत सम्बन्धों के लिए कहा। उन्होंने आशा व्यक्त की कि जेनेवा वार्ता के लाभकारी परिणाम होंगे। जिया ने अफगान प्रश्न पर भारत की भूमिका

419. हिन्दुस्तान टाइम्स, 4 अप्रैल, 1982
420. द हिन्दू (मद्रास), 28 अप्रैल, 1982
421. एशियन रिकार्डर, सितम्बर 24-30, 1982, अंक 39, खण्ड 28
422. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 30 अगस्त, 1982
423. देखिए क्र. 421
424. एशियन रिकार्डर, मई 14-20, 1983, अंक 20, पृ. 17171
425. वही, सितम्बर 17-23, 1982, पृ. 17373-74
426. वही, जून 25-जुलाई 2, 1983, अंक 26, पृ. 17237

की निन्दा करते हुए कहा कि अब जबकि बहुत से देश अफगान जनता का समर्थन कर रहे हैं, भारत अपने पूर्व रूख पर अड़ा हुआ है।[427]

भारत, अफगान संकट के समाधान के लिए संयुक्त राष्ट्र तथा गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के प्रयासों का समर्थन करता है। वहाँ उपनिवेशवाद व साम्राज्यवाद तथा बाह्य हस्तक्षेप की समाप्ति हेतु[428] विचार-विमर्श के लिए प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी ने राष्ट्रपति जिया तथा रूसी नेता गोर्वाच्योव से भेंट की।[429] मई 21-26 को प्रधानमन्त्री श्री गांधी ने रूस यात्रा के दौरान राष्ट्रपति गोर्वाच्योव से बातचीत में कहा कि अफगान समस्या के समाधान में भारत के गुटनिरपेक्ष अस्तित्व से किसी प्रकार का समझौता नहीं होगा।[430]

अफगानिस्तान से रूसी सैनिकों की वापसी के लिए समय निर्धारण के सम्बन्ध में मतभेद हैं। पाकिस्तान ने रूस पर दबाव डाला कि वह 4 से 6 महीने में अफगानिस्तान से अपनी सेनाएं हटा ले, जबकि अफगानिस्तान ने इस कार्य के लिए 8 महीने की सलाह दी है। पाकिस्तान ने कहा कि रूसी सेनाओं की वापसी के पश्चात् ही अहस्तक्षेप की गारन्टी प्राप्त हो सकेगी।[431] राष्ट्रपति जिया ने कहा कि अफगान समस्या का हल सोवियत संघ के पास है।[432] श्री राजीव गांधी ने जून में अमेरिका की यात्रा के दौरान अफगान समस्या के समाधान के लिए राष्ट्रपति रीगन से बातचीत की।[433] तदुपरान्त उन्होंने कहा कि श्री गोर्वाच्योव व रीगन इस सम्बन्ध में महत्व पूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। किन्तु दुर्भाग्य से अमेरिका का रुख अनुकूल नहीं है।[434]

17 जुलाई को पाक प्रधानमन्त्री श्री जुनेजो ने अफगान संकट के समाधान में हो रहे प्रयासों की जानकारी को लेकर वाशिंगटन की यात्रा की।[435] वहाँ बातचीत में उन्होंने समस्या के सैनिक समाधान से इन्कार किया। इसी माह पाक विदेशमन्त्री अयूब खान[436] तथा अफगान विदेशमन्त्री श्री दोस्त ने क्रमशः नई दिल्ली आकर प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी को संयुक्त राष्ट्र के प्रयासों तथा जेनेवा वार्ता में हो रही प्रगति से अवगत कराया। उन्होंने पाक-अफगान सीमाओं पर होने वाली

427. एशियन रिकार्डर, अगस्त 26-सितम्बर 1, 1984, अंक 35, पृ. 17914-15
428. पैट्रीआट, 25 जनवरी, 1985
429. हिन्दुस्तान टाइम्स, 12 अप्रैल, 1985
430. एशियन रिकार्डर, जून 18-24, 1985, अंक 25, पृ. 18370-73
 - नूरानी, ए0जी0,"इण्डियाज पालिसी ऑन अफगानिस्तान" इण्डियन एक्सप्रेस, 15 जून, 1985
431. वही
432. आज, (कानपुर), 19 जून, 1985
433. आज, 18 जून, 1985
434. इण्डियन एक्सप्रेस, 20 जून, 1985
 -चोपड़ा, वी0डी0,"अफगानिस्तान-अमेरिकन परसैप्सन" पैट्रीआट, 4 नवम्बर, 1985
435. एशियन रिकार्डर, अगस्त 27-सितम्बर 2, 1985, अंक 35
436. गुप्ता, भवानी सेन, "अफगानिस्तान डेड लाक्ड वार" इण्डिया टूडे, 31 जुलाई, 1985

घटनाओं की भी सूचना दी।[437] श्री गांधी ने कहा कि भारत अफगान समस्या के समाधान में सहायक भूमिका निभाता रहेगा।[438] दूसरी ओर अमेरिका तथा सोवियत संघ ने इस संकट के समाधान में रोड़े अटकाने के लिए एक दूसरे पर आरोप लगाया।[439]

वर्तमान संदर्भ में भारत का प्रयास अफगान संकट का राजनैतिक समाधान ढूढ़ने का है, ताकि भारतीय उपमहाद्वीप से महाशक्तियों की प्रतिस्पर्धा का अन्त हो जाए। यदि अमेरिका व चीन पाकिस्तान में अपनी भूमिका पर जोर देते हैं तो उपमहाद्वीप में सोवियत संघ की भूमिका की भी उपेक्षा नहीं की जा सकती, क्योंकि पाकिस्तान रूस के दक्षिण किनारे पर स्थित है। वास्तव में बड़ी शक्तियों के शक्ति संतुलन के कारण ही भारत, अफगान-समस्या के समाधान में किसी प्रभावी कार्रवाई में असमर्थ रहा है। आज आवश्यकता इस बात की है कि अफगानिस्तान की गुटनिरपेक्षता, स्वतन्त्रता तथा क्षेत्रीय अखण्डता की रक्षा की जाए। इसके लिए रूसी सैनिकों की वापसी के साथ ही गुरिल्लाओं को सैनिक प्रशिक्षण देने की प्रक्रिया बन्द होनी चाहिए। क्योंकि यदि कारण बने रहते हैं तो समस्या के समाधान का कोई औचित्य नहीं है। अन्त में, अफगानिस्तान में स्थायित्व तथा एशियाई राष्ट्रों में दृढ़ आधार के लिए महाशक्तियों से राजनैतिक व आर्थिक स्तर पर गारंटी आवश्यक है, तभी एशिया में महाशक्तियों का हस्तक्षेप समाप्त होगा।

(च) अन्तर्राष्ट्रीय संगठन व अफगान-समस्या

अफगानिस्तान में सोवियत सेना की उपस्थिति की सभी अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों द्वारा निन्दा की गई, जिसमें संयुक्त राष्ट्रसंघ, गुटनिरपेक्ष आन्दोलन, इस्लामिक संगठन, राष्ट्रमण्डल तथा यूरोपियन कम्युनिटी के सदस्य देशों ने समस्या का राजनैतिक समाधान करने के लिए रूसी सेनाओं की वापसी तथा पाक-अफगान सीमा पर चल रहे क्रान्ति विद्रोहियों की युद्धपरक कार्रवाइयां बन्द करने का आह्वान किया।[440]

(i) संयुक्त राष्ट्रसंघ व अफगान-समस्या

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् विभिन्न राष्ट्रों के अथक प्रयासों से विश्व में शान्ति, सुरक्षा एवं पारस्परिक मित्रता के लिए[441] 24 अक्टूबर, 1945 को विधिवत संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना

437. हिन्दुस्तान टाइम्स, 8 अगस्त, 1985
438. भार्गव, जी0एस0,"अफगानिस्तान व्हाट इण्डिया केन डू", इण्डियन एक्सप्रेस, 5 जनवरी, 1986
439. आई, ग्लेलोव,"सोवियत संघ अफगानिस्तान से सैनिक वापस करने के लिए तैयार है" आज, 29 मार्च, 1986
440. रतनाम, परेला, देखिए क्र. 1, पृ. 59
441. मिश्रा, डा0 सी0 पी0 पंकज, "संयुक्त राष्ट्र" प्रतियोगिता दर्पण, अंक 12, वर्ष 8, जुलाई 1986, पृ. 939-40

हुई। यद्यपि प्रारम्भ से ही संयुक्त राष्ट्र संघ मेजबान देश की जेब में रहा और महाशक्तियों ने इसका उपयोग प्रोपेगण्डा की खातिर किया, फिर भी इसकी उपयोगिता को नकारा नहीं जा सकता। क्योंकि यह एक ऐसा अन्तर्राष्ट्रीय मंच है जहाँ प्रत्येक देश को अपनी बात कहने का मौका दिया जाता है।[442] संयुक्त राष्ट्र चार्टर के अनुछेद 52 के अनुसार कोई भी, किसी स्वाधीन राज्य को, जिसे अपनी आत्म रक्षा का अधिकार है, उन राज्यों से मदद मांगने से नहीं रोक सकता, जिनके साथ इस प्रकार की मदद के बाबत अन्तर्राष्ट्रीय संन्धियों पर हस्ताक्षर हो चुके हैं। अफगानिस्तान के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप की स्थिति में इसी सन्धि के तहत उपस्थित सोवियत सैनिकों को लेकर उत्पन्न हुए विवाद में संयुक्त राष्ट्र जैसी प्रतिष्ठित और मान्य संस्था का उपयोग किया जा रहा है। वहाँ वर्तमान अफगान सरकार के प्रतिनिधियों के विचारों को अनसुना किया जा रहा है। अफगानिस्तान की स्थिति की जानकारी देते हुए संयुक्त राष्ट्रसंघ में सोवियत प्रतिनिधि ओलेगट्रोयानोवस्की ने महासभा में जारी किए गए वक्तव्य में कहा कि पाकिस्तान एक बहुत बड़े हिस्से में अफगान सरकार विरोधी कार्रवाइयाँ कर रहा है। यदि अफगानिस्तान में बाहरी हस्तक्षेप समाप्त नहीं होता तो सोवियत संघ वहाँ सैनिक सहायता मांगे जाने की प्रतीक्षा नहीं करेगा।[443]

रूसी हस्तक्षेप के पश्चात् पश्चिमी शक्तियों ने पहली बार 5 जनवरी को संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् में अफगानिस्तान की स्थिति और अन्तर्राष्ट्रीय शन्ति व सुरक्षा के प्रयासों पर चर्चा की।[444] 7 जनवरी को सुरक्षा परिषद् में विचार-विमर्श के दौरान पश्चिमी देशों सहित 5 गुटनिरपेक्ष देशों ने तुरन्त रूसी सेनाओं की वापसी की मांग की।[455] तो रूस ने इस प्रश्न पर पहली बार, वीटो का प्रयोग किया। जर्मनी ने उसका समर्थन किया। वाशिंगटन में राष्ट्रपति कार्टर के प्रमुख प्रवक्ता जैडी पोवेल ने वीटो का विरोध करते हुए कहा कि संयुक्त राष्ट्र के सिद्धान्तों का आदर करने का तात्पर्य धार्मिक स्वतन्त्रता और गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों की क्षेत्रीय सुरक्षा होना चाहिए।[446] 8-9 जनवरी को संयुक्त राष्ट्र महासभा के खुले आपातकालीन सत्र में तीसरे विश्व के 17 देशों ने तथा चीन व जापान ने रूसी कार्रवाई के प्रति विरोध व्यक्त किया।[447]

---

442. व्यास, हरिशकंर, "बटी बिखरी दुनिया का संयुक्त राष्ट्र", नवभारत टाइम्स, 13 जनवरी, 1986
443. कौर, कुलवन्त, देखिए क्र. 201, पृ. 12-13
 - यू0एन0 डाक्यूमेन्ट ए/इ एस-6, पी.वी. 2, पृ. 27, 62-65
 - द ट्रिब्यून, 13 जनवरी, 1980 डान ओवरसीज वीकली, खण्ड 5, अंक 10, मार्च 1980, पृ. 2
444. "क्रोनोलोजी ऑफ अफगानिस्तान इवेन्ट्स", देखिए क्र. 63, पृ. 11
 - नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 51
445. मिश्रा, पंचानन, देखिए क्र. 117, पृ 8
446. एशियन रिकार्डर, फरवरी 12-18, 1980, खण्ड 26, अंक 7, पृ. 15311-12
447. एशियन रिकार्डर, मार्च 4-10, 1980, खण्ड 26, अंक 10, पृ. 15343-44

ऐसे समय जबकि अमेरिका व उसके मित्र देश तथा गुटनिरपेक्ष देश संयुक्त राष्ट्र महासभा में रूसी हस्तक्षेप पर विरोध प्रकट कर रहे थे।[448] जनवरी 1980 में भारत में नई सरकार के आगमन के पश्चात् 11 जनवरी को भारतीय प्रतिनिधि श्री ब्रजेश मिश्रा ने अपने भाषण में कहा कि वे किसी देश में विदेशी सेनाओं की उपस्थिति के खिलाफ हैं, किन्तु भारत यह स्वीकार करता है कि देश की वैधानिक सरकार की प्रार्थना पर सोवियत सैनिक अफगानिस्तान आए हैं।[449] वे आशा करते हैं कि सोवियत संघ अफगानिस्तान की स्वतन्त्रता का हनन नहीं करेगा और काबुल सरकार जब कहेगी, सेनाएं वापस लौट जाएंगी।[450] बाहरी शक्तियां वहाँ आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप कर क्रान्ति विद्रोहियों को प्रशिक्षण, सैनिक सहायता तथा अन्य साज सामान देकर देश में अव्यवस्था फैला रही हैं। भारत, अफगानिस्तान में शान्ति व सुरक्षा की बहाली चाहता है।[451] इस प्रकार भारतीय प्रतिनिधि ने रूसी सेनाओं की वापसी में जोर न देकर उनकी उपस्थिति पर जोर दिया।[452] लेकिन यह स्थिति लम्बे समय तक नहीं रही। भारत, अफगान प्रश्न पर दक्षिण एशियाई देशों से अलग कैसे रह सकता है। इसलिए संयुक्त राष्ट्र महासभा की तीसरी बैठक में भारत के दृष्टिकोण में क्रमशः परिवर्तन हुआ।[453]

14 जनवरी, 1980 को जब भारत में श्रीमती गांधी ने प्रधानमन्त्री पद की शपथ ली। इसी दिन संयुक्त राष्ट्र महासभा में बहुत बड़े बहुमत के साथ रूसी हस्तक्षेप का विरोध किया गया। प्रस्ताव में कहा गया कि अफगान जनता को बिना किसी बाहरी हस्तक्षेप के अपनी सरकार बनाने का अधिकार हो तथा विदेशी सेनाओं की तुरन्त वापसी हो। संयुक्त राष्ट्र के 152 सदस्यों में से 140 ने इसमें हिस्सा लिया। 24 गुटनिरपेक्ष देश तथा तीसरे विश्व के देशों सहित 104 ने इसके पक्ष में वोट दिया 18 ने इसके विरोध में और 18 देशों के प्रतिनिधि अनुपस्थित रहे।[454]

---

448. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 16-17
449. सक्सेना, के0पी0, "अफगानिस्तान कनफिलिक्ट एण्ड द यूनाइटेड नेशन्स", द्वारा के0पी0 मिश्रा, देखिए क्र. 61, पृ. 112-13
 - यू0 एन0 डाक्यूमेंण्ट्स/एफ.एस./पी.वी. 13, 11 जनवरी, 1980
 - मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 11, पृ. 216-17
450. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 17. वी0 विवेकानन्द, देखिए क्र. 212, पृ. 73
 - द हिन्दू, जनवरी 13, 1980. अनतिया, एस0एन0, देखिए क्र. 276, पृ. 5-7
 - बुद्धराज, विजयसेन, देखिए क्र. 95
 - इण्डिया एण्ड अफगानिस्तान चेन्जड स्टेन्स इकोनोमिक एण्ड पॉलिटीकल वीकली, खण्ड 15, अंक 3, जनवरी 19, 1980, पृ. 88
 - चारी, पी0आर0, देखिए क्र. 278, पृ. 431-34
451. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ.17
452. कृपलानी, आचार्य, जी0वी0, "डबल टॉक", आचार्य कृपलानी इण्डियाज रिस्पोन्स टू अफगान इवेन्टस, द हिन्दू, फरवरी 1, 1980. वी. विवेकानन्द, देखिए क्र. 212, पृ. 73
453. प्रसाद, विमल, देखिए क्र. 209 पृ. 635-41. बोस, प्रदीप देखिए क्र. 236
454. एशियन रिकार्डर, मार्च 4-10, 1980, खण्ड 26, अंक 10, पृ. 15343-44
 - श्रीवास्तव, वी0के0, देखिए क्र. 306, पृ. 62-63. न्यूयार्क टाइम्स, 15 जनवरी, 1980
 - वी. विवेकानन्द, देखिए क्र. 212, पृ. 70-71

गुटनिरपेक्ष देशों में भारत ही एक ऐसा देश था जो अनुपस्थित रहा।[455] तीन दिन तक चले इस आपात-कालीन सत्र के भाषण में पाकिस्तानी राजदूत नियाज ए नाइक ने कहा कि यह बात स्पष्ट हो चुकी है कि अन्तर्राष्ट्रीय संघ अफगानिस्तान के आन्तरिक मामलों में रूसी हस्तक्षेप का कड़ा विरोध करता है।[456] भारतीय प्रतिनिधि ने अपने भाषण में रूसी हस्तक्षेप की निन्दा करते हुए कहा कि ऐसी स्थिति जितनी शीघ्र सम्भव हो सके, समाप्त हो।[457] अफगान क्रान्ति का विरोध करने वाले देशों ने संयुक्त राष्ट्रसंघ के मूल सिद्धान्तों के आधार पर सैनिकों की वापसी तथा संयुक्त राष्ट्र शान्ति सेना के नेतृत्व में अफगानिस्तान में यथास्थिति बहाल किए जाने की मांग की।[458]

किन्तु सोवियत संघ के विरूद्ध बड़ा विश्व जनमत तैयार करने की अमेरिका की इस कूटनीतिक सफलता का कोई ठोस परिणाम नहीं निकला, क्योंकि सोवियत संघ की आर्थिक नाकेबन्दी के लिए ब्रिटेन के अलावा कोई राष्ट्र तैयार नहीं था, तीसरे विश्व के देशों द्वारा अमेरिका के साथ मतदान करने का अर्थ यह कदापि नहीं था कि उन्होंने अफगान समस्या पर उसके रवैये को स्वीकृति प्रदान कर दी है।[459]

संयुक्त राष्ट्र महासभा में अफगानिस्तान की पूर्व स्थिति बहाल किए जाने की मांग का कड़ा विरोध करते हुए अफगान विदेशमन्त्री श्री दोस्त ने कहा कि अफगानिस्तान में सैन्य उपस्थिति सोवियत संघ और उनके देश के मधुर सम्बन्धों का प्रमाण है, इससे क्षेत्र में किसी प्रकार की शान्ति को खतरा उत्पन्न नहीं हुआ है। प्रत्येक देश अपनी सुरक्षा के लिए सही कदम उठाने और विदेशी सहायता प्राप्त करने के लिए स्वतन्त्र है।[460] उनकी सरकार अपनी आन्तरिक समस्या को विश्व संगठन में घसीटे जाने के पक्ष में नहीं है। किन्तु संयुक्त राष्ट्र का सदस्य होने के बावजूद अफगान शिकायत की अवहेलना की गई।

13 फरवरी, 1980 को राष्ट्रपति कार्टर ने जेनेवा में संयुक्त राष्ट्र संघ के मानवाधिकार संगठन से मांग की कि वे अफगानिस्तान से तुरन्त रूसी सैनिकों की वापसी की मांग पर अपना समर्थन दें।[461] 14 फरवरी को इस आयोग ने अफगानिस्तान में रूसी कार्रवाई का विरोध करते

---

455. सक्सेना, के0पी0, देखिए क्र. 449, पृ. 113
456. एशियन रिकार्डर, देखिए क्र. 454
457. प्रसाद, विमल, देखिए क्र. 209. बोस, प्रदीप, देखिए क्र. 236
458. जी0ए0 रिसोल्यूसन ई. एस. 6/2, जनवरी 1080, पैराग्राफ 4, एम्फासिस एडिड
 - सक्सेना, के0पी0, देखिए क्र. 449, पृ. 106-7
 - वी. विवेकानन्द, देखिए क्र. 212, पृ. 70-71. इण्डियन एक्सप्रेस, फरवरी 28, 1980
459. चौधरी, नरेन्द्र सिंह, देखिए क्र. 72, पृ0 77
460. एशियन रिकार्डर, मार्च 4-10, 1980, पृ. 15343-44
461. "क्रोनोलोजी ऑफ अफगानिस्तान इवेन्ट्स", देखिए क्र. 63, पृ. 12

हुए रूसी प्रतिनिधि से कहा कि यह क्रान्ति गैर कानूनी थी, इससे अफगानिस्तान की मुस्लिम जनता के अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा[462] तथा इसके कारण इस क्षेत्र में अत्यधिक तनाव उत्पन्न हुआ है। आयोग के 43 राष्ट्रों के इस वार्षिक सत्र में पाकिस्तान व कुछ अन्य मुस्लिम देशों सहित 28 वोट स्वीकृति में पड़े, 9 विरोध में और भारत सहित 6 देश अनुपस्थित रहे। इस बैठक में सदस्य देशों से काबुल सरकार के विरूद्ध विद्रोहियों को संघर्ष में मदद के लिए कहा गया। रूसी प्रतिनिधि मि0 जोरिन ने कहा कि अफगानिस्तान की स्थिति को खतरनाक नहीं कहना चाहिए, क्योंकि क्रान्ति से स्थिति में सुधार हुआ है। भारत और युगोस्लाविया ने स्थिति में सुधार का प्रावधान रखा। किन्तु आयोग की इस कार्रवाई द्वारा अफगान प्रश्न पर कोई महत्वपूर्ण कदम नहीं उठाया जा सका।[463]

1 अक्टूबर को राष्ट्रपति जिया-उल-हक ने संयुक्त राष्ट्र महासभा में इस्लामिक विश्व के प्रवक्ता के रूप में सम्बोधित करते हुए कहा कि एक छोटे, स्वतन्त्र और गुटनिरपेक्ष मुस्लिम देश में सैनिक हस्तक्षेप उस राज्य पर आक्रमण है। उन्होंने अफगानिस्तान के गुटनिरपेक्ष अस्तित्व की पुनर्स्थापना हेतु संयुक्त राष्ट्र द्वारा त्वरित कार्रवाई किये जाने पर बल दिया।[464]

अफगान संकट का प्रस्ताव 20 नवम्बर, 1980 को पुनः संयुक्त राष्ट्र महासभा में प्रस्तुत किया गया, जिसमें सदस्य देशों ने रूसी सेनाओं की वापसी के साथ ही समस्या के राजनैतिक समाधान की आवश्यकता पर बल दिया। इस बैठक में 40 मुस्लिम देशों सहित सभी गुटनिरपेक्ष देशों ने भी भाग लिया। मतदान में 111 मत पक्ष में पड़े और 22 विरोध में तथा 12 देशों ने मतदान में भाग नहीं लिया। संयुक्त राष्ट्र महासभा के इस दूसरे मतदान के प्रस्ताव में एक नई धारा को शामिल किया गया कि संयुक्त राष्ट्र के एक विशेष प्रतिनिधि द्वारा संकट के शान्तिपूर्ण समाधान के प्रयास किए जाएं।[465]

भारत इस प्रस्ताव से पृथक रहा। बैठक से पूर्व 19 नवम्बर को संयुक्त राष्ट्र महासभा में भारत के स्थायी प्रतिनधि श्री ब्रजेश मिश्रा ने कहा कि संयुक्त राष्ट्र में बड़ी पार्टियों के निर्णय स्वीकार करने योग्य नहीं हैं। उन्होंने उनसे तनाव समाप्त करने की अपील की, जिससे यथास्थिति बहाल हो सके।[466] श्री मिश्रा ने कहा कि अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप से राजनैतिक दबाव और कूटनीतिक शक्ति की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई है। इसके कारण उपमहाद्वीप में भारत सहित

462. श्रीवास्तव, वी0के0, देखिए क्र. 306. न्यूयार्क टाइम्स, 15 फरवरी, 1980
463. एशियन रिकार्डर, मई 6-12, 1980, खण्ड 26, अंक 19, पृ. 15448-49
464. वही, नवम्बर 18-24, 1980, पृ. 15755-56
465. वही, दिसम्बर 24-31, 1982, अंक 52, पृ. 16949-50
466. वही, दिसम्बर 23-31, 1980, अंक 52, पृ. 15803

सभी देश अव्यवस्थित हुए हैं तथा अफगानिस्तान का विकास भी अवरूद्ध हुआ है।[467]

27 अगस्त को अमरीकी प्रशासन ने कहा कि हमें खेद है कि काबुल में लगातार संयुक्त राष्ट्र महासभा की रूसी सेनाओं की वापसी की मांग को अनदेखा किया जा रहा है। हम यह स्वीकार नहीं करते कि कारमल सरकार के प्रतिनिधि अफगान जनता के किन्ही विचारों को प्रस्तुत कर रहे हैं। हम वर्तमान काबुल सरकार को वैधानिक दर्जा दिए जाने के खिलाफ हैं।[468]

न्यूयार्क में संयुक्त राष्ट्र महासभा के 35वें सत्र में विदेशमन्त्री श्री नरसिंहाराव ने अपने वक्तव्य में कहा कि भारत सरकार अफगानिस्तान के विकास के लिए गम्भीरता पूर्वक विचार कर रही है। पारस्परिक ऐतिहासिक एवं मित्रतापूर्ण सम्बन्धों के आधार पर ही वह उसकी सुरक्षा, स्वतन्त्रता व स्थिरता के लिए प्रतिबद्ध है।[469] श्री राव ने 28 सितम्बर को संयुक्त राष्ट्र महासभा में अपने भाषण में सदस्य देशों को भारतीय विचारों से अवगत कराया।[470]

अफगान संकट पर महासभा द्वारा तीसरा प्रस्ताव 18 नवम्बर, 1981 को स्वीकार किया गया, जिसमें तुरन्त रूसी सेनाओं की वापसी के साथ अफगानिस्तान की सीमाओं की रक्षा, राजनैतिक स्वतन्त्रता और गुटनिरपेक्ष अस्तित्व स्थापित करने की बात दोहराई गई, इसमें 44 प्रमुख देशों सहित 157 देशों ने भाग लिया। 116 सदस्यों ने प्रस्ताव के पक्ष में मत दिया, 23 सदस्यों ने विरोध में और 12 अनुपस्थित रहे।[471] बैठक में संयुक्त राष्ट्र महासचिव द्वारा राजनैतिक समाधान के प्रयासों को लगातार जारी रखने के लिए कहा गया[472] तथा सभी राष्ट्रों से अपील की गई कि संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी संगठन को मदद दे। महासचिव ने कहा कि अफगानिस्तान की राजनैतिक स्वतन्त्रता, सुरक्षा के लिए सैन्य प्रयोग न किए जाने की गारन्टी दी जाए। अमरीकी राजदूत ने कहा कि अफगानिस्तान में सोवियत आक्रमण से उत्पन्न तनाव की स्थिति में पाकिस्तान तथा ईरान की सरकारों के साथ प्रत्यक्ष वार्ता की आवश्यकता है।[473] जब महासभा में कारमल सरकार के प्रतिनिधि द्वारा रूसी सेनाओं की वापसी से पूर्व शर्तें रखी गईं तो अन्तर्राष्ट्रीय संघ और तीसरे विश्व के देशों ने उनके इस प्रस्ताव का विरोध किया।[474] सोवियत संघ ने उनका समर्थन किया।

---

467. चक्रवर्ती, सुमित, देखिए क्र. 144, पृ. 98-102
468. एशियन रिकार्डर, सितम्बर 17-23, 1981, अंक 38
469. मिनिस्टिर ऑफ इक्सटरनल अफेयर्स स्टेटमेण्ट एट 35 सेशन ऑफ यू0एन0 जनरल असेम्बली, देखिए क्र. 9, पृ. 41
470. वही, पृ. 53
471. एशियन रिकार्डर, दिसम्बर 24-31, 1982, अंक 52, पृ. 16949-50
- एशियन रिकार्डर, दिसम्बर 17-23, 1981, अंक 52, पृ. 16363
472. एशियन रिकार्डर, दिसम्बर 24-31, 1982
473. एशियन रिकार्डर, दिसम्बर 17-23, 1981, अंक 52, पृ. 16363
474. "अफगानिस्तान टु इयर्स ऑफ आक्यूपेशन", देखिए क्र0 146

यद्यपि पिछले दो वर्षों में रूसी सैनिकों की वापसी के सम्बन्ध में संयुक्त राष्ट्रसंघ कुछ नहीं कर सका था। लेकिन पिछले एक साल में क्रेमलिन को वहाँ महत्वपूर्ण समर्थन नहीं मिल सका। सोवियत समर्थक देश इस प्रश्न पर अपनी स्थिति स्पष्ट नहीं कर पा रहे थे। दूसरी ओर भारत ने इन बैठकों में अनुपस्थित रह कर अपनी सामान्य स्थिति का परिचय दिया।[475]

20 नवम्बर, 1982 को अफगान प्रश्न पर संयुक्त राष्ट्र महासभा की चौथी बैठक में अफगानिस्तान की तात्कालिक स्थिति और अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति एवं सुरक्षा पर प्रश्न उठाया गया। इस प्रश्न पर मतदान में 114 मत समर्थन में, 21 विरोध में और 13 देशों ने इसमें हिस्सा नहीं लिया। इस बैठक में अफगानिस्तान की स्थिति पर विचार-विमर्श के लिए 10 सदस्यों को अधिकार दिया गया।[476] बैठक से पूर्व संयुक्त राष्ट्रसंघ में भारतीय प्रतिनिधि श्री कारमल नाथ ने अपने भाषण में तीन मुख्य धाराओं को अफगान समस्या के समाधान का आधार बताया, प्रथम, राज्य के आन्तरिक सम्बन्धों में पूरी तरह से हस्तक्षेप व व्यवधान की समाप्ति, द्वितीय, देश से विदेशी सेनाओं की वापसी व तृतीय, सभी देशों द्वारा हस्तक्षेप न करने की पूर्ण गारन्टी। श्री नाथ ने कहा कि वर्तमान सभी पहलुओं पर विचार किया जाना चाहिए। उन्होंने 1981 में दिल्ली में सम्पन्न हुए गुटनिरपेक्ष आन्दोलन की नीतियों को स्पष्ट किया। संयुक्त राष्ट्र महासभा की बैठक के आखिरी तीन दिनों में पाकिस्तान तथा अन्य सम्बन्धित देशों ने इन धाराओं को स्वीकार किया।[477]

23 नवम्बर, 1983 को पांचवीं बार संयुक्त राष्ट्र महासभा में अफगान प्रश्न पर एक बार फिर 1982 में स्वीकार किए गए संकल्पों पर विचार किया गया। जिसके पक्ष में 116 मत और विपक्ष में 20 मत पड़े, 17 सदस्यों ने मतदान में भाग नहीं लिया। इस प्रस्ताव में सोवियत संघ का नाम नहीं लिया गया।[478] गत वर्षों की ही तरह भारत ने मतदान में भाग नहीं लिया। बहस में हिस्सा लेने वाले भारतीय प्रतिनिधि ने इस क्षेत्र में तनाव में वृद्धि को रोकने और उसे कम करने के लिए प्रभावी कार्रवाई की आवश्यकता पर जोर दिया। उन्होंने सम्बन्धित सभी पक्षों से आग्रह किया कि वे प्रत्यक्ष रूप से बातचीत द्वारा राजनैतिक समाधान ढूढ़ने के लिए विस्तृत व अनुकूल कार्य करे।[479] इसके लिए उन्होंने "प्रतिरोध और संयम" का विचार रखा। पाकिस्तानी

---

475. द ट्रिब्यून, 21 नवम्बर, 1981
476. एशियन रिकार्डर, दिसम्बर 24-31, 1982, अंक 52, पृ. 16949-50
477. अतरचन्द, "नान एलाइनमेण्ट सोलिडिरटी एण्ड नेशनल सिक्योरिटी", अफगानिस्तान सेल्फ डिटरमिनेशन एण्ड इण्डिपेंडेंस, सिलेक्टिड डाक्यूमेण्ट्स, स्पीचिज मैसिजिस 1961-83 (1985 दिल्ली), पृ. 173-74. इण्डियन एक्सप्रेस, 25 नवम्बर, 1982. पैट्रीआट, 25 नवम्बर, 1982
478. मुखर्जी, साधन, क्र. 11, पृ. 231
    - एशियन रिकार्डर, जनवरी 1-7, 1984, अंक 1, खण्ड 30, पृ.17533
    - वार्षिक रिपोर्ट, 1982-83, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित, पृ. 40-41
479. वार्षिक रिपोर्ट, 1982-83

प्रतिनिधि द्वारा रूसी कार्रवाई को बढ़ा-चढ़ा कर प्रस्तुत किए जाने पर अफगान प्रतिनिधि ने उसका बहिष्कार किया। उनका कहना था कि यह उनके आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप है।[480] 30 नवम्बर को संयुक्त राष्ट्र महासचिव पेरेज द कुइयार ने घोषणा की कि अफगानिस्तान में स्थिरता के लिए संयुक्त राष्ट्रसंघ कूटनीतिक प्रयासों को पुनः आरम्भ करेगा।[481]

15 नवम्बर, 1984 को छठी बार संयुक्त राष्ट्र महासभा में पहले की भांति अफगानिस्तान से तुरन्त विदेशी सेनाओं की वापसी तथा संकट के शान्तिपूर्ण समाधान की आवश्यकता पर बल दिया गया। महासभा में इस प्रस्ताव पर 46 देशों ने स्वीकृति दी । मतदान के दौरान 119 वोट पक्ष में, 20 विरोध में और 14 देशों ने इसमें भाग नहीं लिया।[482]

13 नवम्बर, 1985 को संयुक्त राष्ट्र महासभा में मुस्लिम देशों ने बड़े बहुमत के साथ सोवियत संघ को आक्रमण के लिए जिम्मेदार मानते हुए अफगानिस्तान से सेनाओं की वापसी की मांग की। 159 सदस्यों ने इस प्रस्ताव को स्वीकार किया। 46 इस्लामिक व गुटनिरपेक्ष देशों द्वारा इसका अनुमोदन किया गया। 12 सदस्य देश अनुपस्थित रहे।[483] बैठक में जहाँ भारत ने पड़ोस में विद्यमान स्थिति पर चिन्ता व्यक्त की, वहीं पाकिस्तान और अफगानिस्तान ने एक दूसरे पर सोवियत सेना की वापसी सम्बन्धी समझौते के सम्पन्न होने में बाधा डालने का आरोप लगाया। संयुक्त राष्ट्र महासभा को सम्बोधित करते हुए भारतीय प्रतिनिधि सांसद अमरजीत कौर ने चेतावनी दी कि अफगानिस्तान की स्थिति का कोई नाजायज फायदा न उठाए। उन्होंने कहा कि आधुनिकतम हथियारों की होड़ से हालात और बिगड़ेंगे। श्रीमती कौर ने आशा व्यक्त की कि सम्बद्ध पक्षों में रचनात्मक वार्ता से व्यापक समझौते की खोज सम्बन्धी प्रक्रिया को प्रोत्साहन मिलेगा। उन्होंने संयुक्त राष्ट्र महासचिव द्वारा इस सम्बन्ध में मिली सफलता का उल्लेख किया।[484]

17 सितम्बर, 1986 को संयुक्त राष्ट्र का 41वाँ अधिवेशन न्यूयार्क में आरम्भ हुआ। जिसमें अफगानिस्तान का प्रश्न सोवियत विरोध के बावजूद उठाया। संयुक्त राष्ट्र महासचिव ने बताया कि पिछले सात वर्षों से रूस द्वारा विभिन्न प्रतिक्रियाओं के व्यक्त किये जाने पर भी यह प्रश्न प्रतिवर्ष उठाया जाता रहा है। यह निश्चित है कि पहले से अब तक इस प्रश्न पर प्रगति हुई है। 1980 में जब इस प्रश्न को उठाया गया तो 111 देशों ने इसका विरोध किया और 22 ने रूस का साथ दिया। जब कि गत अधिवेशन में 122 देशों ने रूसी कार्रवाई का

---

480. एशियन रिकार्डर, देखिए क्र. 478
481. एशियन रिकार्डर, देखिए क्र. 478
482. एशियन रिकार्डर, जनवरी 1-7, 1985, अंक 1, खण्ड 31, पृ.18103
483. एशियन रिकार्डर, दिसम्बर 24-31, 1985, अंक 52, पृ. 18663
484. आज (कानपुर), 13 नवम्बर, 1985

विरोध किया और 19 देशों ने समर्थन व्यक्त किया। ईराक, निकारागुआ और भारत इस प्रश्न पर तटस्थता ग्रहण किए रहे। अफगानिस्तान और पाकिस्तान दोनों ही संकट के शान्तिपूर्ण समाधान के पक्ष में हैं, किन्तु संलिप्त शक्तियों की गतिविधियों के कारण समस्या ज्यों की त्यों बनी हुई है।

नेपाल के विदेशमन्त्री ने 27 सितम्बर को संयुक्त राष्ट्र महासभा में अपने वक्तव्य में कहा कि संयुक्त राष्ट्र के निर्देशों के अनुसार रूसी सैनिकों को वापस चले जाना चाहिए, ताकि अफगान जनता को राष्ट्र के नेतृत्व सम्भालने का दायित्व प्राप्त हो सके। 29 सितम्बर को पाक विदेशमन्त्री ने कहा कि अफगान समस्या के समाधान के प्रयास अब नाजुक मोड़ पर पहुँच गए हैं, अत: अफगानिस्तान को सम्प्रभुता सम्पन्न गुटनिरपेक्ष राष्ट्र की मान्यता दी जाए। यही अफगान जनता का मत है, जिससे पाकिस्तान में रह रहे लगभग 50 लाख शरणार्थियों को सम्मान के साथ स्वदेश लौटने की अनुमति मिल सकेगी। अमरीकी सरकार ने पाक मत की प्रशंसा की।

प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी ने कहा कि भारत का दृढ़ विश्वास है कि वर्तमान संकट संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर के सिद्धान्तों के प्रति प्रतिबद्धता जाहिर करके ही हल किया ज़ा सकता है। उन्होंने कहा कि शान्ति और सम्पन्नता की दिशा में संयुक्त राष्ट्र के प्रयासों के समक्ष अब बहुत-सी नई चुनौतियां आ गई हैं, जिनके कारण हम इन समस्याओं को हल करने के बजाय पीछे हट रहे हैं। वास्तव में ईरान-ईराक युद्ध, कम्पूचिया, मध्य अमेरिका व अफगानिस्तान जैसी हर समस्या में संयुक्त राष्ट्र की समझौता कोशिशें बेकार रही हैं। कुछ कर सकने में उसकी असमर्थता का बोध सर्वव्यापी है। इसे दूर करने में महाशक्तियों की दिलचस्पी नहीं है, क्योंकि तब उनकी स्वतन्त्रता मारी जाती है।

(ii) जेनेवा-वार्ता

जहाँ एक ओर संयुक्त राष्ट्रसंघ में बातचीत द्वारा समस्या के समाधान पर बल दिया जा रहा था, वहीं पाक राष्ट्रपति जिया ने रूसी सेनाओं के रहते अफगान सरकार के साथ किसी प्रकार की वार्ता से इन्कार किया। संयुक्त राष्ट्र महासचिव कुर्ट वाल्ड हाइम ने स्थिति की उग्रता को मिटाने व बातचीत के ज़रिये संकट का हल किए जाने के प्रयास प्रारम्भ किए। उन्होंने संयुक्त राष्ट्र के वरिष्ठ कार्यकर्ता पेरेज-द-कुइयार को सम्बद्ध पक्षों से सम्पर्क साधने और ऐसी प्रक्रिया अपनाने के लिए नियुक्त किया जिससे अफगानिस्तान की वर्तमान स्थिति, विश्वव्यापी संघर्ष का रूप न धारण कर ले। श्री कुइयार ने अप्रैल व अगस्त में काबुल और इस्लामाबाद में उनके

विदेशमन्त्रियों से भेंट कर[485] संकट समाधान की प्रक्रिया में सक्रिय भूमिका निभाई। उनके संयुक्त-राष्ट्र महासचिव निर्वाचित होने के बाद डियागोकोर्दोवेज को अफगान समस्या हल किए जाने की दिशा में प्रयास के लिए नियुक्त किया गया। उन्होंने अप्रैल 1982 में काबुल, तेहरान और इस्लामाबाद में विस्तार से विचार-विमर्श किया। जिसके फलस्वरूप बातचीत की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। 3 जून को पाक-अफगान विदेशमन्त्रियों के मध्य जेनेवा में वार्ता का पहला दौर प्रारम्भ हुआ। यह स्पष्ट किया गया कि बातचीत संयुक्त राष्ट्र के तत्वावधान में नहीं हो रही है, बल्कि संयुक्त राष्ट्र महासचिव के प्रतिनिधि मध्यस्थता के रूप में कार्य कर रहे हैं। एक हफ्ते तक चली इस बैठक में महाशक्तियां किसी तरह के समाधान के लिए तैयार नहीं थीं।[486]

भारत, अफगान समस्या के समाधान के लिए संयुक्त राष्ट्र महासचिव के प्रयासों का समर्थन करता है। 1983 में जेनेवा में दूसरे दौर की वार्ता में अत्यन्त सीमित प्रगति हुई, किन्तु यह आशा व्यक्त की गई कि शीघ्र ही बातचीत के द्वारा राजनैतिक समाधान की दिशा में और अधिक प्रगति सम्भव हो सकेगी।[487] एक सप्ताह चली यह वार्ता 24 जून को समाप्त हुई। इस बैठक में बातचीत के चार प्रमुख आधार बिन्दु रहे- अफगानिस्तान से रूसी सैनिकों की वापसी, विद्रोहियों को मिलने वाली सहायता में रोक, शरणार्थियों की स्वदेश वापसी, सुरक्षा के लिए अहस्तक्षेप की अन्तर्राष्ट्रीय गारण्टी। बैठक से प्राप्त सूत्रों में कहा गया कि अफगान प्रतिनिधि लगातार विद्रोहियों को मिलने वाली सहायता बन्द किए जाने पर जोर देते रहे।[488] सोवियत संघ ने भी आपसी बातचीत में अनौपचारिक रूप से संकेत दिया कि डेढ़-दो वर्ष में अफगानिस्तान से अपनी सेनाएं हटा लेगा। पर जब पाकिस्तान ने दो-चार माह की बात की तब सोवियत संघ ने चार साल का तर्क दिया। समझौते के लिए दोनों को दो-चार माह और 48 माह के बीच कहीं खड़ा होना होगा।[489]

दिसम्बर 1983 में वाशिंगटन पोस्ट ने लिखा कि अमेरिका अफगानिस्तान-पाकिस्तान के बीच समझौते से संकट समाधान की कोई आशा नहीं रखता।[490] जेनेवा वार्ता अफगान समस्या के राजनैतिक समाधान के लिए संयुक्त राष्ट्र की मध्यस्थता में अफगानिस्तान, पाकिस्तान व ईरान के मध्य विभिन्न चरणों में की जा रही है।[491] अगस्त 1984 में जेनेवा वार्ता का तीसरा दौर प्रारम्भ हुआ, लेकिन कोई ठोस नतीजा नहीं निकल सका। ब्रिज खिण्डरिया ने नेशनल हेराल्ड

485. अफगानिस्तान टू इयर्स ऑफ आक्यूपेशन, देखिए क्र. 146
486. स्टेट्समैन, 15 अगस्त, 1982
487. वार्षिक रिपोर्ट, 1982-83, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित, पृ. 3-4
488. एशियन रिकार्डर, 30 जुलाई-5 अगस्त, 1983, अंक 31, पृ. 17289
489. सिंह, रामपाल, ''अफगानिस्तान से अंगद पांव कैसे हटे?", अफगानिस्तान- पाकिस्तान वार्ता, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, 31 अगस्त, 1986, पृ. 14
490. श्रीवास्तव, गोविंद नारायन, ''इण्डिया नॉन एलाइनमेण्ट एण्ड वर्ल्ड पीस", नई दिल्ली, 1984, पृ. 42-43
491. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 11, पृ. 208

ट्रिब्यून में लिखा कि पाकिस्तान और अफगानिस्तान के विदेश मन्त्रियों में अभूतपूर्व सहमति हो गई कि वे इस इमारत के अलग-अलग कमरों में एक ही समय मौजूद रहेंगे, जहाँ कोर्दोवेज, इस कमरे से उस कमरे में चक्कर लगाते रहेंगे। इससे पूर्व हुई बैठकों में दोनों देशों के प्रतिनिधि मण्डल अलग-अलग दिन आकर कोर्दोवेज से मिला करते थे। जहाँ तक ईरान का सम्बन्ध है, उसने अभी तक बातचीत में भाग नहीं लिया है। लेकिन हर बातचीत के दौर के बारे में सूचना मध्यस्थ से प्राप्त करता रहा है, अगर पाकिस्तान किसी समझौते पर पहुँच गया तो आशा है कि ईरान भी टकराव की स्थिति नहीं चाहेगा। संयुक्त राष्ट्र महासभा में भारतीय प्रतिनिधि जी0एस0 रन्धावा ने इस वार्ता के प्रति आशा व्यक्त करते हुए कहा कि पड़ोसी देशों के मध्य सामीप्य से वार्ता समस्या के राजनैतिक समाधान की दृष्टि से महत्वपूर्ण साबित होगी। तथापि आवश्यकता है कि पड़ोसी देशों के सम्बन्ध उन्नत हों और उनमें परस्पर सहयोग स्थापित हो, जिससे इस क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति व सुरक्षा की दृढ़ता से स्थापना की जा सके।[492]

फरवरी 1985 में जेनेवा में होने वाली बैठक को स्थगित कर दिया गया। संयुक्त राष्ट्र उपमहासचिव डिएगोकोर्दोवेज ने 4 जून को प्रेस कान्फ्रेन्स में यह घोषणा की कि मूलतः इन बैठकों का उद्देश्य उन कागजों को तैयार करना है जिसके आधार पर समझौते को अन्तिम रूप दिया जाएगा। उन्होंने कहा कि महाशक्तियों के बीच तनाव ने लगातार अहम् भूमिका निभाई है, लेकिन उन्होंने प्रसन्नता जाहिर की कि अफगानिस्तान के मसले पर दोनों पक्षों में शीघ्र ही बैठक होगी।[493] उन्होंने जेनेवा वार्ता को रचनात्मक व फलदायी बताया।[494]

19, जून को आशावादी वातावरण में अफगान व पाक विदेशमन्त्रियों के मध्य चौथे दौर की बातचीत हुई, जिसमें समझौते के लिए पुनः उन्हीं चार सूत्रों पर चर्चा की गई।[495] वार्ता में मध्यस्थता कर रहे कोर्दोवेज ने इस बात पर बल दिया कि समस्या का राजनैतिक समाधान हो। इसी उद्देश्य से उन्होनें मई में काबुल, इस्लामाबाद, नई दिल्ली, वाशिंगटन व मास्को में विचार-विमर्श किया।[496] पाक प्रधानमन्त्री श्री जुनेजो ने कहा की हम संयुक्त राष्ट्र द्वारा जेनेवा वार्ता के प्रयास को महत्वपूर्ण मानते हैं, साथ ही वे अफगान समस्या के हल के लिए अतिरिक्त प्रयास के तौर पर सोवियत संघ से सीधे बातचीत के लिए तैयार हैं।[497] किन्तु बैठक में दोनों

492. स्टेट्समैन, 16 नवम्बर, 1984
493. आज (कानपुर), 6 जून, 1985
494. आज, 20 जून, 1985
495. नूरानी, ए0जी0, "इण्डियाज पालिसी ऑन अफगानिस्तान", इण्डियन एक्सप्रेस, 25 जून, 1985
- जनसत्ता, 21 जून, 1985. आज, 22 जून, 1985
- एशियन रिकार्डर, जुलाई 30-अगस्त 5, 1985, अंक 31, पृ.18431
496. वही
497. आज, 19 जून, 1985

पक्षों के मध्य सोवियत सेना हटाये जाने के सवाल पर गम्भीर मतभेद बना रहा।[498] अफगान राष्ट्रपति कारमल ने कहा कि अमेरिका को इस बातचीत में सहयोग कर समस्या के समाधान का प्रयास करना चाहिए तथा पाकिस्तान में अफगान शरणार्थियों की स्वदेश वापसी के लिए स्थिति तैयार करनी चाहिए।[499]

27-29 अगस्त को जेनेवा में पाँचवे दौर की बातचीत हुई, जिसमें अमेरिका व सोवियत संघ ने संयुक्त राष्ट्र शान्ति योजना के चार मुख्य सूत्रों में से एक, महाशक्तियों की गारण्टी के प्रति समर्थन व्यक्त किया।[500] महाशक्तियों के मध्य शस्त्र होड़ समाप्त करने के लिए नवम्बर 1985 में जेनेवा में राष्ट्रपति रीगन तथा सोवियत नेता गोर्वाच्योव ने शान्ति वार्ता की। संयुक्त बयान में कहा गया कि कोई भी देश दूसरे देश पर सैनिक वर्चस्व कायम करने की कोशिश नहीं करेगा। उन्होंने परमाणु अप्रसार सन्धि व उसके परिसीमन पर बल दिया।[501]

16-20 दिसम्बर, 1985 को जेनेवा में छठे दौर की बातचीत में जहाँ पाक विदेशमन्त्री साहबजादा याकूब खानने रूसी सेनाओं की वापसी के लिए समय-सारिणी निर्धारित करने की मांग की,[502] वहीं अफगान पक्ष ने सोवियत सैनिकों की चरणों में वापसी के प्रति सहमति व्यक्त की।[503]

मई में जेनेवा में चल रही सातवें दौर की बातचीत का अन्त हो गया, किन्तु अभी तक रूसी सेना की वापसी का कार्यक्रम निर्धारित नहीं हो सका।[504] क्योंकि पाकिस्तानी विदेशमन्त्री महीनों की बात करते है और सोवियत संघ वर्षो की।[505] श्री कोर्दोवेज ने इसे अल्पकाल के लिए इसलिए स्थगित किया था कि दोनों पक्ष अपने-अपने देश की सरकार से इस मामले में सलाह कर लें। जेनेवा में पाक-अफगान वार्ता के आठवें दौर में शुरू होने से पूर्व सोवियत संघ ने घोषणा की कि वह अपने छः रेजीमेन्टों को अफगानिस्तान से वापस बुला रहा है। डिएगोकोर्दोवेज़ ने सोवियत संघ की इस घोषणा को शुभ संकेत माना।

8 अगस्त को जेनेवा में पुनः डिएगोकोर्दोवेज ने बिचौलिए की भूमिका ओढ़ी और पाक-अफगान विदेश मन्त्रियों ने दो अलग-अलग कमरों में बैठ कर अप्रत्यक्ष वार्तालाप का आठवां दौर शुरू

---

498. आज, 30 जून, 1985
499. अय्यर, शहनाज के,"यू0एस0क्वाइट, यू0एन0 टॉक ऑन अफगानिस्तान", इण्डियन एक्सप्रेस, 6 मई 1986
500. एशियन रिकार्डर, नवम्बर 5-11, 1985, अंक 45, पृ.18587
501. त्रिवेदी, शैलेन्द्र कुमार,"जेनेवा वार्ता व विश्व शान्ति", राष्ट्र धर्म, फरवरी 1986, अंक 9, वर्ष 23, पृ. 91-99. भार्गव, जी0एस0, देखिए क्र. 438
502. ओहरी, मेजर वी., "अफगानिस्तान, सोवियत विदड्रावल लाईक लीव", करेन्ट टोपिक्स स्वरन पब्लिकेशन, अप्रैल 1986, अंक 5, खण्ड 12
503. आई, ग्लेलोव, देखिए क्र. 439
504. हिन्दुस्तान टाइम्स, 7 जुलाई, 1986
505. इण्डियन एक्सप्रेस, 6 मई, 1986

किया। अब तक तीन मुद्दे तय किये जा चुके हैं (1) अफगानिस्तान गुटनिरपेक्ष रहेगा, (2) पारस्परिक हस्तक्षेप की अन्तर्राष्ट्रीय गारंटी, (3) अफगान शरणार्थियों की दोनों पक्षों की सहमति से वापसी, चौथा उलझन भरा मुद्दा है कि 1,20,000 रूसी सैनिकों की वापसी कैसे हो। रूसी नेता गोर्वाच्योव का कहना है कि अफगानिस्तान के साथ बातचीत करके हमने तय कर लिया है कि सोवियत सेनाओं की वापसी का क्रम क्या होगा। दूसरी ओर पाकिस्तान व अफगानिस्तान द्वारा एक दूसरे पर हस्तक्षेप के आरोपों-प्रत्यारोपों के कारण श्री कोर्दोवेज ने न्यूयार्क में कहा कि यह समय उनके बीच प्रत्यक्ष वार्ता के अनुकूल नहीं है। वास्तव में जब तक हस्तक्षेप समाप्त नहीं होता समझौते की आशा नहीं की जा सकती।[506]

अन्त में कहा जा सकता है कि 1982 से चल रही अप्रत्यक्ष जेनेवा वार्ता अफगान समस्या को समझौते के निकट ले आई है। यह समझौता वास्तव में अमेरिका और रूस के बीच होना है। पाकिस्तान और अफगानिस्तान की सरकारों को अपनी नुमाइंदगी इन्हीं बड़े भाइयों के जरिए करनी है।

(iii) गुटनिरपेक्ष आन्दोलन

गुटनिरपेक्ष आन्दोलन का जन्म पूरब और पश्चिम के बीच टकराव से उत्पन्न शीत युद्ध के कारण हुआ था। इस आन्दोलन के दो मुख्य उद्देश्य घोषित किए गए-विश्व शान्ति बनाए रखना और नव स्वतन्त्र देशों में चयन की आजादी का विस्तार। राष्ट्रीय हितों को दृष्टिगत रखते हुए गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सदस्य देशों ने महाशक्तियों और उनकी गुटनीति की कटु आलोचना की। किन्तु वर्तमान विश्व में प्रगतिशील परिवर्तनों और सैनिक गुटों के सम्भावित अवमूलन के कारण गुटनिरपेक्षता के लिए मुख्य मानदण्ड महाशक्तियों के गुटों में गैर भागीदारी ने अपनी अर्थवेत्ता ही खो दी।[507]

भारत तथा अफगानिस्तान गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के संस्थापक व सक्रिय सदस्य हैं। कठिन परिस्थितियों में भी उन्होंने इस नीति का परित्याग नहीं किया। किन्तु अफगानिस्तान में खल्की और परचमी क्रान्ति द्वारा स्थापित सरकारों ने देश में गुटनिरपेक्षता को अलग-अलग रूप में स्वीकार किया।[508] 16-19 अगस्त, 1978 को श्रीलंका की राजधानी कोलम्बो में पांचवा गुटनिरपेक्ष सम्मेलन हुआ। इसमें अफगान प्रतिनिधि मण्डल ने गुटनिरपेक्षता के प्रति प्रगाढ़ समर्थन व्यक्त करते हुए

---

506. सिंह, रामपाल, देखिए क्र. 489
507. विभाकर, जगदीश, "गुटनिरपेक्ष आन्दोलन कौनसा पथ है-विकासशील और विकसित अर्थतन्त्रों के बीच की खाई को पाटना है", दिनमान टाइम्स, 6-12 मई, 1990, अंक 23
508. वैदिक, वी0पी0, देखिए क्र. 22, पृ. 254-55

भूवेष्टित राष्ट्रों की समस्याओं के प्रति चिन्ता व्यक्त की।[509] गुटनिरपेक्ष देशों का छठा सम्मेलन क्यूबा की राजधानी हवाना में 3-7 सितम्बर, 1979 में हुआ जिसमें अफगान राष्ट्रपति तराकी ने गुटनिरपेक्षता के आधार पर मित्रता व सहयोग द्वारा पड़ोसी देशों से सामान्य सम्बन्धों के लिए आशा व्यक्त की।[510] उन्होनें आरोप लगाया कि पाकिस्तान ईराक, अमेरिका व चीन क्रान्ति विद्रोहियों को मदद कर रहे हैं। श्री तराकी का विचार था कि ऐसे देश जोकि बहुत से क्षेत्रीय सैनिक गुटों में संलग्न हैं, उनको बैठक में केवल पर्यवेक्षक के रूप में हिस्सा लेने का अधिकार होना चाहिए।[511] भारत ने सम्मेलन में पाकिस्तान के इस्लामी बम योजना की निन्दा की।

हवाना सम्मेलन के तीन महीने पश्चात् कारमल सरकार के आमन्त्रण पर दिसम्बर 1979 में लगभग 1 लाख रूसी सैनिकों ने अफगानिस्तान में प्रवेश किया।[512] सोवियत हस्तक्षेप के पश्चात् अफगानिस्तान का गुटनिरपेक्ष आन्दोलन में भूमिका निभाना असम्भव था, किन्तु उसने गुटनिरपेक्ष आन्दोलन की सदस्यता का परित्याग नहीं किया।[513] उसका मत था कि विश्व में प्राचीन काल से ही गुटनिरपेक्षता को समाप्त करने के प्रयास किए जाते रहे हैं, किन्तु उसने सदैव स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष किया है।[514] आन्दोलन के सदस्य देशों ने अफगानिस्तान की गुटनिरपेक्ष स्थिति भंग किए जाने पर रूस की निन्दा की [515] और वहाँ की जनता के अधिकारों का समर्थन करते हुए तत्काल सैनिकों की वापसी की मांग की।[516] चाहे कम्पूचिया समस्या हो या अफगान समस्या, श्रीमती गाँधी के नेतृत्व में भारत ने इस आन्दोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।[517] विदेशमन्त्री श्री नरसिहांराव ने संसद में अपने भाषण में कहा कि भारत का मुख्य सिद्वान्त शान्ति व गुटनिरपेक्षता है। हमारे सभी दक्षिण एशियाई पड़ोसी देश गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सदस्य हैं, अतः हम चाहते है कि किसी बाहरी शक्ति द्वारा यहाँ इस सिद्वान्त की अवहेलना न की जाए।[518]

फरवरी 1980 में बेलग्रेड में हुए गुटनिरपेक्ष सम्मेलन में सदस्य देशों ने बड़ी शक्तियों के सैनिक हस्तक्षेप का विरोध किया ।[519] भारत ने गुटनिरपेक्ष देशों से अफगान संकट के निश्चित

---

509. वाकमैन, मोहम्मद अमीन, "अफगानिस्तान एट द क्रास रोड", दिल्ली 1985, पृ. 68-73
510. वही, टाइम्स ऑफ इण्डिया, 9 दिसम्बर, 1980
511. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र 69, पृ. 128
512. वाकमैन, मोहम्मद अमीन, "अफगानिस्तान नॉन एलाइनमेण्ट एण्ड सुपर पावर", दिल्ली 1984, पृ. 11
513. वैदिक, वी0पी0, देखिए क्र. 22, पृ. 255
514. जनता, फरवरी 17, 1980, देखिए क्र. 2
515. वही
516. बोस, प्रदीप, देखिए क्र. 258, पृ. 4
517. राय, सुबोध, देखिए क्र. 266
518. मिनिस्टर ऑफ इक्सटरनल अफेयर्स स्टेटमेण्ट इन राज्यसभा, 24 जनवरी, 1980, देखिए क्र. 9, पृ. 13-14. एशियन रिकार्डर, फरवरी 19-25, 1980, खण्ड 26, अंक 8, पृ. 15324-25
519. इण्डियन एक्सप्रेस (दिल्ली), 28 फरवरी, 1980

समाधान के लिए प्रभावशाली भूमिका निभाने के लिए कहा, क्योंकि इससे गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सिद्धान्तों की एकता के लिए खतरा उत्पन्न हुआ है।[520] किन्तु बेलग्रेड में हुई बैठक कोई महत्वपूर्ण निर्णय नहीं ले सकी। परस्पर विचार-विमर्श के लिए कुछ गुटनिरपेक्ष देशों के नेताओं को दिल्ली बुलाया गया। उन्होंने स्वीकार किया कि अफगानिस्तान में सभी ओर से प्रतिरोध समाप्त होना चाहिए जिससे एक स्वतन्त्र प्रभुत्व राज्य की स्थापना की जा सके। गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के दो तिहाई सदस्यों ने रूसी हस्तक्षेप की निन्दा की।[521] किन्तु जहाँ कुछ सदस्य देशों ने अफगानिस्तान की क्रान्तिकारी सरकार का समर्थन किया वहीं गुटनिरपेक्ष देशों के दूसरे गुट ने इसे स्वीकार नहीं किया।[522] रूस से दोस्ताना सम्बन्ध होते हुए भी भारत सहित अनेक गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों ने रूसी कदम को आन्तरिक हस्तक्षेप कहते हुए तत्काल सैनिकों की वापसी की मांग की तथा इस क्षेत्र में अस्थिरता के लिए अमेरिका की कूटनीतिक कार्रवाइयों का विरोध किया।

9 से 19 फरवरी को नई दिल्ली में गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों के विदेश मन्त्रियों का सम्मेलन हुआ, जिसमें मुख्य मुद्दे, अफगानिस्तान में रूसी सैन्य उपस्थिति कम्पूचिया में वियतनामी सेनाएं, डियागोगार्सिया अमरीकी प्रभावित क्षेत्र, अरब के अन्दर मतभेद, अफ्रीका में रंगभेद की समस्या और ईरान-ईराक युद्ध आदि रहे।[523] उद्घाटन भाषण में श्रीमती गांधी ने कहा कि हस्तक्षेप या दबाव गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के लिए खतरा है। वे अफगानिस्तान की स्थिति से दु:खी हैं। श्रीमती गांधी ने कहा कि गुटनिरपेक्ष देशों के सामने जो समस्याएं है उनकी जड़ें बाहर से पैदा किए गए और बाहरी तत्वों द्वारा बढ़ाए गए मतभेद हैं। हमें आन्दोलन के भीतर ही अधिक सामंजस्य बढ़ाने के लिए स्वयं मार्ग तैयार करने चाहिए।[524] संगठन के सदस्य देशों ने अफगान प्रश्न पर सोवियत संघ व अफगान सरकार की नीतियों को असफल बताते हुए समस्या के राजनैतिक समाधान की मांग की।[525] अफगानिस्तान ने भी इस बैठक में हिस्सा लिया। श्रीमती गांधी ने मत व्यक्त किया कि अफगानिस्तान लगातार रूसी सेनाओं की उपस्थिति से जहाँ बड़ी शक्तियों में अपने स्वार्थों के लिए मतभेद हुआ है, वहीं गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सदस्यों के लिए नई समस्याएं

---

520. अप्पादोराय, राजन, देखिए क्र. 40 पृ. 629-30
521. क्रोनोलोजी ऑफ अफगानिस्तान इवेन्ट्स, देखिए क्र. 63, पृ. 8
522. रतनाम, परेला, देखिए क्र. 1, पृ. 51
523. एशियन रिकार्डर, मार्च 12-18, 1981, खण्ड 27, अंक 11, पृ.15924-25
-इण्डियन एक्सप्रेस, 17 फरवरी, 1981. अप्पादोराय, राजन, देखिए क्र. 40
524. प्रधानमन्त्री के विचार 23, "गुटनिरपेक्षता की सतत सार्थकता", गुटनिपरेक्ष देशों के सम्मेलन में प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी का 9 फरवरी, 1981 को नई दिल्ली में भाषण। भारत सरकार द्वारा प्रकाशित व आकल्पित
525. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 11, पृ. 222

उत्पन्न हुई हैं। इस पर एफ्रो-एशियाई देशों की चिन्ता व परस्पर विचार-विमर्श स्वाभाविक है।[526] मार्च 1982 में राष्ट्रीय पार्टी के अधिवेशन में राष्ट्रपति कारमल ने अपनी सरकार की गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सिद्धान्तों के प्रति समर्पण भावना और निष्ठा की पुनः पुष्टि की।

भारत और अफगानिस्तान के हितों और भावनाओं की समानता का प्रतिबिम्ब गुटनिरपेक्ष देशों के सातवें शिखर सम्मेलन में मिला, जब शासनाध्यक्षों की बैठकों में प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने अफगान प्रधानमन्त्री सुलतान अली किश्तमन्द के साथ अधिकतम समय बिताया। शिखर सम्मेलन से पूर्व विदेशी पत्रकारों को सम्बोधित करते हुए श्रीमती गांधी ने कहा कि मुझे जो नवीनतम सूचनाएं काबुल से प्राप्त हुई हैं, उनके अनुसार सरकार वहाँ स्थिति को सहज बनाने की कोशिश में जुटी हुई है।[527]

7 से 12 मार्च तक चल रहे शिखर सम्मेलन की राजनैतिक घोषणाओं में कहा गया कि क्षेत्र में परस्पर सम्बन्धों के लिए गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सिद्धान्तों के आधार पर शान्तिपूर्ण गठजोड़, प्रादेशिक पूर्णता और अहस्तक्षेप को स्वीकार करना चाहिए, ताकि शान्ति व सुरक्षा की स्थापना की जा सके। अमरीकी प्रशासन जहाँ एक ओर अफगान समस्या के प्रति अघोषित युद्ध की कार्रवाई कर रहा है, वहीं वह गुटनिरपेक्ष देशों के विचारों की अवहेलना तथा उनकी एकता को समाप्त करने के प्रयास भी करता रहा है।[528]

इस सम्मेलन में 101 गुटनिरपेक्ष देशों में से 99 देशों ने भाग लिया। अफगानिस्तान ने भी सम्मेलन में हिस्सा लिया, किन्तु वहाँ रूसी सेनाओं की उपस्थिति से गुटनिरपेक्ष सम्मेलन में उसकी छवि धूमिल हुई थी।[529] पाकिस्तान द्वारा अफगान प्रश्न को तूल देने और वर्तमान अफगान सरकार की आन्दोलन की सदस्यता को चुनौती देने पर प्रधानमन्त्री किश्तमन्द ने इस प्रयास का जोरदार खण्डन किया और कहा कि, "किसी को भी अफगान जनता की ओर से बोलने का अधिकार स्वयं ग्रहण कर लेने का साहस नहीं करना चाहिए। हमारे देश के लोगों ने अप्रैल क्रान्ति के मार्ग को अपना कर अपने भविष्य के बारे में संकल्प सदा-सर्वदा के लिए ले लिया है"। विदेशमन्त्री श्री दोस्त ने रूसी सेनाओं के प्रवेश पर हस्तक्षेप शब्द का कड़ा विरोध किया और कहा कि अफगानिस्तान की गुटनिरपेक्षता की रक्षा की जाएगी।[530]

सम्मेलन में संयुक्त राष्ट्र महासचिव द्वारा जेनेवा वार्ता की पहल की सराहना की गई। सदस्य देशों ने अनुरोध किया कि इसे गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के आदर्शों व सिद्धान्तों के अनुरूप

526. गुप्ता, भवानी सेन, देखिए क्र. 97, पृ. 133
527. एशियन रिकार्डर, अप्रैल 16-22, 1983, अंक 16, पृ.17126-33
528. श्रीवास्तव, गोविन्द नारायन, देखिए क्र. 490, पृ. 42-44
529. वाकमैन, मोहम्मद अमीन, देखिए क्र. 512, पृ. 12
530. वाकमैन, मोहम्मद अमीन, देखिए क्र. 509, पृ. 73-74

समस्या के शीघ्र समाधान के संवर्धन की दृष्टि से जारी रखा जाए। बैठक में संयुक्त राष्ट्र महासचिव ने कहा कि अफगानिस्तान एक गुटनिरपेक्ष देश है, वह इस समय परिस्थितियों से गुजर रहा है। उन्होंने वहाँ सेनाओं की वापसी और सभी प्रकार के विदेशी हस्तक्षेप की समाप्ति के प्रति अपना प्रभावकारी समर्थन व्यक्त किया।[531] गुटनिरपेक्ष देशों ने भी सर्वसम्मति से संयुक्त राष्ट्र महासचिव के विचारों का समर्थन किया।[532] श्रीमती गांधी ने खाड़ी के देशों से भी अपील की कि वे अपने इस संघर्ष को खत्म कर शान्ति की स्थापना में सहयोग दें।[533]

श्रीमती गांधी ने गुटनिरपेक्षता आन्दोलन के अध्यक्ष पद पर नियुक्ति के पश्चात् 12 मार्च को संवाददाता सम्मेलन में अफगान प्रश्न पर कहा कि देश में विदेशी सेनाओं के रहते हुए समाधान में मदद नहीं की जा सकती। बहुत लोग अब इसी विषय पर बात कर रहे हैं, लेकिन वे अफगानिस्तान में वियतनाम का रूप नहीं दोहराना चाहती। जहाँ पर कई वर्षों तक युद्ध जैसी स्थिति से गुजरना पड़ा था। यदि एक छोटा देश बाह्य खतरा अनुभव करता है और विदेशी सेनाओं को आमन्त्रित करता है तो यह उसका अपना कार्य है। उन्होंने कहा कि यद्यपि विदेशनीति में गुटनिरपेक्षता का पूरी तरह प्रयोग नहीं किया जा सकता, किन्तु विश्व समस्याओं को सुलझाने के लिए यह अच्छा संगठन है। इसके द्वारा बहुत से देश मिलकर अपनी समस्याओं का समाधान कर सकते हैं।[534] 13 मार्च को नई दिल्ली में सम्मेलन में हिस्सा लेने के बाद श्री किश्तमन्द ने कहा कि कारमल सरकार के विरोध में गृह युद्ध आखिरी मार्ग नहीं है।[535] उन्होंने भारतीय पत्रकारों से भेंट वार्ता के दौरान बताया कि सीमित सोवियत सैनिकों की उपस्थिति बाहरी हस्तक्षेप का परिणाम है, कारण नहीं।

27 अप्रैल को जेनेवा में अफगान राजदूत हबीब मंगल ने संवाददाता सम्मेलन में कहा कि गुटनिरपेक्ष आन्दोलन में अफगान प्रतिनिधियों का भाग लेना महत्वपूर्ण कार्य है। इसलिए प्रगतिशील सदस्य देशों को सरकार को मान्यता दे देनी चाहिए।[536]

गुटनिरपेक्ष आन्दोलन का आठवां शिखर सम्मेलन हरारे में सम्पन्न हुआ जिसमें प्रस्तुत घोषणा-पत्र से अमेरिका बेहद नाराज है, क्योंकि उसमें जहाँ अमेरिका के विरूद्ध आरोपों की लम्बी श्रृंखला है, वहीं सोवियत संघ पर कोई विशेष आरोप लगाया ही नहीं गया। उसकी अफगान नीति पर

531. चितरंजन, सी0एन0, "डाक्यूमेण्ट नेशनल कानसेनसस ऑन नॉन एलाइनमेण्ट", मेनस्ट्रीम, खण्ड 21, मार्च 1983, पृ. 17
532. सिंह, दिनेश, "नई दिल्ली सम्मिट" मेनस्ट्रीम, वही, पृ. 21. इण्डियन एक्सप्रेस, 15 जून, 1985 -चव्हाण, यशवन्तराव, "नान एलाइनमेण्ट एण्ड द कन्ट्रीस", मेनस्ट्रीम, वही पृ. 24-25
533. वार्षिक रिपोर्ट 1983-84, विदेश मन्त्रालय भारत सरकार द्वारा प्रकाशित, पृ. 49
534. एशियन रिकार्डर, अप्रैल 16-22, 1983, अंक 16, पृ. 17126-31
535. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 11, पृ. 103
536. एशियन रिकार्डर, मई 21-27, 1983, अंक 21, पृ. 17181

यही कहा गया कि विदेशी सैनिकों को हटाकर अफगानिस्तान की प्रभुसत्ता, स्वतन्त्रता तथा अखण्डता का आदर किया जाना चाहिए।[537] वास्तव में, रूस गुटनिरपेक्ष देशों का स्वाभाविक मित्र है, इसलिए वह इस आन्दोलन का खात्मा नहीं चाहता। किन्तु इस तथ्य को अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि गुटनिरपेक्ष आन्दोलन तथा दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय संघ दोनों ने ही समय-समय पर आपत्ति प्रकट की है कि सोवियत संघ को अफगानिस्तान का अपने स्वार्थों के लिए प्रयोग नहीं करना चाहिए।

आज गुटनिरपेक्ष से जुड़े राष्ट्रों की संख्या जहाँ बढ़ी है, वहीं दूसरी ओर उसकी स्थिति निम्नतर होती जा रही है। इसमें दो राय नहीं कि गुटनिरपेक्ष आन्दोलन की जितनी आवश्यकता 1961 में थी, आज उससे भी अधिक है।[538] आज गुटनिरपेक्षता के नाम पर एकत्रित होने वाले देश न केवल लड़ रहे हैं और अपने द्विपक्षीय विवादों को सम्मेलन में घसीट रहे हैं, बल्कि सम्मेलन मंच से महाशक्तियों की राजनीति को प्रतिबिम्बित करने का प्रयत्न कर रहे हैं।[539] इस आन्दोलन में जहाँ श्रीमती गांधी ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई वहीं श्री राजीव गांधी ने भी बेलग्रेड में मेजमान और मेहमान देशों के बीच खाई पाटने और आन्दोलन में सन्तुलन के पुनर्स्थापन में महत्वपूर्ण योगदान दिया।[540]

अफगान संकट भारत को निर्गुट राष्ट्रों के मंच का प्रभावशाली उपयोग करने के लिए श्रेष्ठ अवसर प्रदान करता है। क्योंकि मार्शल टीटो के बाद निर्गुट राष्ट्र आन्दोलन के संचालन के लिए कोई प्रभावी व्यक्तित्व नहीं है। भारत का प्रयास अफगानिस्तान को महाशक्तियों की प्रतिस्पर्धा व गतिविधियों से छुटकारा दिलवाकर उसे पूर्णत: स्वतन्त्र कराने का होना चाहिए। यह तभी सम्भव है जबकि अफगानिस्तान से सोवियत सेनाओं की पूर्णत: वापसी हो जाय। इसके पूर्व अमेरिका व चीन को काबुल की वर्तमान सरकार को गिराने के लिए अफगान विद्रोहियों को सभी सहायता बन्द करनी होगी।

अन्त में कहा जा सकता है कि गुटनिरपेक्ष आन्दोलन की तीसरे विश्व के देशों की विदेशनीति में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इस आन्दोलन के द्वारा जहाँ तनाव में शिथिलता आई है, वहीं विश्व शान्ति व अर्थव्यवस्था के लिए यह लाभकारी सिद्ध हुआ है। आज विश्व युद्ध का अन्त हुए लगभग आधी सदी व्यतीत हो चुकी है। यदि गुटनिरपेक्ष आन्दोलन पहले की भाँति अधिक शक्तिशाली व प्रभावशाली बनता गया तो मानव जाति अपने को तृतीय विश्व युद्ध के संहार

537. आज, 7 सितम्बर, 1986
538. नारायण, विजय, "हरारे से आगे", आज, 12 अक्टूबर, 1986
539. वैदिक, वेदप्रताप, देखिए क्र. 76
540. विभाकर, जगदीश, देखिए क्र. 507

से बचाने में निश्चित ही सफल हो सकेगी। इसलिए प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने इसकी प्रासंगिकता पर बोलते हुए कहा था कि गुटनिरपेक्ष आन्दोलन तृतीय विश्व ही नहीं बल्कि इससे बहुत आगे है। यह आन्दोलन अभी भी उपयोगी है तथा भविष्य में भी रहेगा।[541]

(iv) इस्लामिक संगठन और अफगान-समस्या

अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप पर इस्लामिक देशों में सबसे अधिक प्रतिक्रिया व्यक्त की गई। 15 जनवरी को इस्लामिक संगठन के सदस्य देशों ने अफगानिस्तान में सोवियत आक्रमण को सयुंक्त राष्ट्र के सिद्धान्तों के खिलाफ बताया और कहा कि यह कार्रवाई एक गुटनिरपेक्ष देश के अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों पर हस्तक्षेप है।[542]

27-29 जनवरी, 1980 को इस्लामाबाद में इस्लामिक देशों के विदेशमन्त्रियों की 11वें सत्र के अन्तर्गत विशेष बैठक हुई। सम्मेलन के उद्घाटन भाषण में पाक राष्ट्रपति जिया उल हक ने अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप से उत्पन्न गम्भीर स्थिति के प्रति विचार व्यक्त करते हुए कहा कि यह मुस्लिम विश्व समुदाय के लिए दु:खद घटना है।[543] अफगान जनता की सुरक्षा के लिए सर्वप्रथम वहाँ से विदेशी सेनाओं की पूरी वापसी आवश्यक है। इस संकट की स्थिति में हमारी सहानुभूति अफगान भाइयों के साथ है।[544] सम्मेलन में मुस्लिम देशों में व्याप्त तनाव, बड़ी शक्तियों की प्रतिस्पर्धा, सैन्य आक्रमण व राज्यों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप पर गहन विचार-विमर्श किया गया।[545] 29 जनवरी को सत्र की समाप्ति पर कहा गया कि जब तक अफगानिस्तान से आखिरी रूसी सैनिक वापस नहीं चला जाता, तब तक अफगानिस्तान को इस्लामिक संगठन की सदस्यता से निलम्बित किया जाता है। सम्बन्धित सभी देशों ने कारमल सरकार को मान्यता दिए जाने से इन्कार किया। सदस्य देशों ने संयुक्त बयान में कहा कि रूसी सेनाओं की बिना शर्त वापसी हो और अफगान जनता द्वारा एक ऐसी राष्ट्रीय सरकार की स्थापना हो जिसमें मुजाहिदों को भी शामिल किया जाय। किन्तु सोवियत संघ ने इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया।[546] इस सम्मेलन में 36 देशों ने भाग लिया। सभी ने पाकिस्तान की नीतियों का समर्थन करते हुए

541. प्रधानमन्त्री के विचार 65, "गुटनिरपेक्षता की प्रासंगिकता", श्रीमती इन्दिरा गांधी, जवाहरलाल नेहरू भाषण माला में यू0एन0 विश्वविद्यालय के रेक्टर 8 ख सुजातमोको के आगमन पर 13 नवम्बर 1982 को श्रीमती इन्दिरा गांधी का अध्यक्षीय भाषण। भारत सरकार द्वारा आकल्पित व प्रकाशित
542. रतनाम, परेला, देखिए क्र. 1, पृ. 48
543. नैय्यर, कुलदीप, देखिए क्र. 69, पृ. 61
544. एशियन रिकार्डर, मार्च 4-10, 1980, अंक 10, खण्ड 26, पृ.15352-54
545. ग्लोवल सिग्नीफिकैन्स ऑफ अफगानिस्तान वाई द यू0एस0एस0 आर. यूनाइटेड स्टेट, इण्टरनेशनल कम्यूनिकेशन एजेन्सी.
546. बोस, प्रदीप, देखिए क्र. 261

वर्तमान अफगान सरकार को दी जाने वाली सभी सहायता राशि बन्द करने का निर्णय लिया।[547] बैठक में अफगानिस्तान की ओर से विदेश मन्त्री शाह मोहम्मद दोस्त ने भाग लिया।[548]

अमेरिका की ओर से विश्वसनीय गारण्टी के अभाव में पाकिस्तान ने इस्लामी एकता व कूटनीति पर चलने को प्राथमिकता दी। सम्मेलन के सदस्य अरब देशों ने पाकिस्तान की आर्थिक व सैनिक स्थिति सुदृढ़ करने की अपनी इच्छा व्यक्त की।[549] पाक विदेशमन्त्री ने कहा कि पाकिस्तान सर्वप्रथम तो अपनी सुरक्षा आवश्यकताओं को स्वयं ही पूरी करेगा, साथ ही चीन की सुदृढ़ मैत्री पर विश्वास करेगा,[550] किन्तु बुनियाद के लेखक सलामत अली मेंहदी का विश्वास है कि अमरीका और चीन कभी मुस्लिम देशों के मित्र नहीं हो सकते।[551]

मई 1980 में द्वितीय इस्लामिक शिखर सम्मेलन से पहले पाकिस्तान ने सोवियत कूटनीतिक प्रयासों का अनुकूल उत्तर दिया और अफगान संकट के शीघ्र समाधान पर बल दिया। 20 मई को प्रारम्भ हुए इस्लामिक देशों के विदेशमन्त्रियों की बैठक में इस आशय के लिए एक समिति गठित की गई जिसमें ईरान, पकिस्तान के विदेशमन्त्री और इस्लामिक संगठन के महासचिव सम्मिलित हुए।[552] उन्होंने कहा कि भारत को भी संकट के निश्चित समाधान के लिए मदद करनी चाहिए।[553] अन्त में इस दिशा में पाक विदेशमन्त्री श्री शाही के सतत् प्रयासों के बावजूद भी कोई ठोस परिणाम नहीं निकला।[554]

कुवैत में हुए तीसरे इस्लामिक सम्मेलन में अफगानिस्तान से रूसी सैनिकों की वापसी के साथ ही उसकी सुरक्षा व गुटनिरपेक्षता को बनाये रखने के लिए संयुक्त राष्ट्रसंघ के प्रयासों का समर्थन किया गया।[555] तईफ में 19 जनवरी, 1981 को इस्लामिक देशों के विदेश मन्त्रियों की बैठक हुई जिसमें अफगान प्रश्न पर सदस्य देशों में मतभेद बने रहे। दिसम्बर 1983 में ढाका में भी सभी देश इस प्रश्न पर एक मत नहीं रहे।[556]

अफगान प्रधानमन्त्री सुल्तान अली किश्तमद ने कहा कि भारत ने संयुक्त राष्ट्रसंघ, गुटनिरपेक्ष आन्दोलन व अप्रत्यक्ष रूप में इस्लामिक सम्मेलन में भी साम्राज्यवादियों द्वारा आन्तरिक मामलों

547. रतनाम, परेला, देखिए क्र. 1, पृ. 50. बहादुर, कालिम, देखिए क्र. 61
548. रतनाम, परेला, देखिए क्र. 1, पृ. 50
549. श्रीवास्तव, बी0के0, देखिए क्र. 306, पृ. 63
550. चौधरी, नरेन्द्र सिंह, देखिए क्र. 72, पृ. 19
551. मेंहदी, सलामत अली, "ट्रू एण्ड फाल्स फ्रेंडस ऑफ इस्लाम", पृ. 57-60, द्वारा अजहर अंसारी, देखिए क्र. 87
552. एशियन रिकार्डर, जुलाई 15-21, 1980, पृ. 15560-61
553. क्रोनोलोजी ऑफ अफगानिस्तान इवेन्टस, देखिए क्र. 63, पृ. 7
554. वही, अप्पादोराय, राजन, देखिए क्र. 40,पृ. 627
555. हैरीसन, सैलिंग एस., देखिए क्र. 75, पृ. 181
556. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 11, पृ. 222

में हस्तक्षेप तथा संकट के समाधान के प्रति सन्तोषप्रद भूमिका निभाई है।[557] दूसरी ओर पाक विदेशमंत्री श्री शाही ने जहाँ इस्लामिक सम्मेलन की कार्यविधि की प्रशंसा की वहीं गुटनिरपेक्ष आन्दोलन की निन्दा करते हुए कहा कि वह इस विषय में महत्वपूर्ण निर्णय लेने में असफल रहा है।[558]

(v) राष्ट्रमण्डल

राष्ट्रमण्डल में संयुक्त राष्ट्रसंघ के लगभग एक तिहाई सदस्य हैं। यह एक ऐसा मंच है, जहाँ गुटनिरपेक्ष देश उन देशों से मिलते हैं, जो सैनिक सन्धि के सदस्य हैं। इस प्रकार राष्ट्र मण्डल जो कि विकसित व विकासशील देशों का सर्वग्राही मंच है, का जन्म व विचार-विमर्श इस विश्वास पर हुआ कि अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को सद्भाव के द्वारा हल किया जाना चाहिए।[559]

4-8 सितम्बर, 1980 को नई दिल्ली में राष्ट्रमण्डलीय देशों के शासनाध्यक्षों की बैठक हुई। जिसमें 16 देशों ने हिस्सा लिया।[560] बैठक के उद्घाटन सत्र को सम्बोधित करते हुए प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी ने कहा कि भारत एक ही पक्ष की निन्दा करने में विश्वास नहीं रखता। यदि हम एक ओर हस्तक्षेप का विरोध करते हैं तो दूसरी ओर उसके कारणों तथा उसके साथ होने वाली गतिविधियों को अनदेखा नहीं कर सकते।[561] सम्मेलन की समाप्ति पर संयुक्त विज्ञप्ति में भारत ने सभी पक्षों की स्वीकृति के आधार पर अफगान समस्या के राजनैतिक समाधान की मांग करते हुए[562] कहा कि राज्य के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप व दबाव को समाप्त करने के लिए सम्बन्धित सभी देशों को गारण्टी देनी चाहिए।[563] विचार-विमर्श के दौरान सदस्य देशों ने इस क्षेत्र में शान्ति के लिए गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सिद्धान्तों के प्रति सम्मान व्यक्त किया।[564]

1 अक्टूबर 1980 को अजेण्डा में राष्ट्रमण्डल के विशेष सत्र में विश्व राजनीति पर बोलते हुए प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी ने कहा कि अफगानिस्तान में महाशक्तियों की अलग प्रकार की कूटनीति है। हम केवल यही चाहते हैं कि अफगानिस्तान गुटनिरपेक्ष राज्य रहे, यह तब तक

---

557. चक्रवर्ती, सुमित, देखिए क्र. 144, पृ. 57-65
558. बोस, प्रदीप, देखिए क्र. 258
559. प्रधानमन्त्री के विचार 93, "राष्ट्रमण्डल की सहयोग भावना", 23 नवम्बर, 1983 को नई दिल्ली में राष्ट्रमण्डल देशों के शासनाध्यक्षों के सम्मेलन में भारत की प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी का भाषण, -भारत सरकार द्वारा प्रकाशित व आकल्पित
560. एशियन रिकार्डर, अक्टूबर 7-13, 1980, अंक 41, पृ. 15683-84. कॉमनवैल्थ रीजनल सम्मिट
561. अप्पादोराय, राजन, देखिए क्र. 40, पृ. 626
562. वही
563. एशियन रिकार्डर, देखिए क्र. 560
564. फायनल कम्यून ऑफ द मीटिंग ऑफ कॉमनवेल्थ हैड्स ऑफ गवर्नमेण्ट ऑफ द एशियन एण्ड पैसिफिक रीजन, नई दिल्ली, 4-8 सितम्बर, 1980, देखिए क्र. 9, पृ.38. एशियन रिकार्डर, देखिए क्र. 560

नहीं हो सकता, जब तक कि यह क्षेत्र तनाव मुक्त नहीं होता।[565]

आस्ट्रेलिया (मैलबोर्न)में 30 सितम्बर से 7 अक्टूबर तक 42 देशों की राष्ट्रमण्डल की खुली बैठक हुई जिसमें ब्रिटिश प्रधानमन्त्री मारगेट थ्रैचर ने कहा कि अफगानिस्तान में रूसी महत्वाकांक्षा से जहाँ विश्व में तनाव उत्पन्न हुआ है, वहीं हिन्दमहासागर और प्रशान्त महासागर में उसका प्रभाव बढ़ा है। दूसरी ओर भारतीय प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी ने रीगन प्रशासन द्वारा पाकिस्तान को दी जाने वाली सैनिक सहायता की आलोचना की।[566]

1983 में राष्ट्रमण्डल की सबसे बड़ी बैठक का नई दिल्ली में आयोजन किया गया। इस शिखर सम्मेलन में पांच महाद्वीपों के 42 विकसित तथा विकासशील देशों के प्रतिनिधियों ने हिस्सा लिया।[567] बैठक से पूर्व अफगान प्रश्न पर चर्चा करते हुए श्रीमती गांधी ने कहा कि भारत एशियाई देशों में इन शक्तिशाली देशों की बढ़ती हुई रूचि से चिन्तित है। हम पड़ोसी देशों में शान्ति व स्थिरता चाहते हैं। बैठक में सम्मिलित अधिकतम सदस्य देशों ने श्रीमती गांधी के विचारों के प्रति समर्थन व्यक्त किया।[568]

किन्तु यह सत्य है कि राष्ट्रमण्डल अफगान समस्या के समाधान में प्रभावशाली भूमिका निभाने में असफल रहा। संगठन के सदस्य देशों की अलग-अलग विचारधाराओं के कारण उनमें परस्पर विरोधाभास प्रकट होता रहा है।

(vi) यूरोपीय साझा बाजार

यूरोपीय साझा बाजार विकसित देशों का ऐसा संगठन है जिसके द्वारा न केवल विश्व राजनीति बल्कि आर्थिक व्यवस्था भी संचालित होती है। इस संस्था की स्थापना यूरोप ही नहीं, अपितु विश्व के इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना है। फ्रांस के नेतृत्व में साझा बाजार ने आर्थिक व राजनैतिक एकता के लिए महत्वपूर्ण मार्ग प्रशस्त किया। इसलिए यह यूरोपीय आर्थिक समुदाय अमेरिका तथा रूस के बाद तीसरी महानतम आर्थिक शक्ति के रूप में उदित हुआ। इसका मुख्य उद्देश्य सदस्य देशों के लिए स्वतन्त्र व्यापार क्षेत्र की स्थापना करना है। 19 फरवरी, 1980 को 9 यूरोपीय साझा बाजार के विदेश मन्त्रियों ने अफगानिस्तान में सामान्य स्थिति बहाल करने की घोषणा के साथ ही कहा कि सोवियत सेनाओं की वापसी के पश्चात् ही अन्तर्राष्ट्रीय गारंटी दी जाएगी।[569] 22 जून को पुनः यूरोपीय आर्थिक समुदाय के 7 बड़े देशों ने अपनी बैठक में

565. प्राइमिनिस्टर्स रिमार्कस एट एक्जीक्यूटिव सैशन ऑफ चोग्म, देखिए क्र. 9, पृ. 54
566. एशियन रिकार्डर, 5-11 नवम्बर, 1981, पृ. 16306-10
567. वार्षिक रिपोर्ट 1983, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित, पृ. 4
568. खिलनानी एम0एन0, देखिए क्र. 343, पृ. 160-61
569. एशियन रिकार्डर, सितम्बर 16-22, 1980, अंक 38, खण्ड 26, पृ. 15654

विश्व में शान्ति के लिए संयुक्त राष्ट्र महासभा और इस्लामिक सम्मेलन के विचारों के प्रति आदर व्यक्त करते हुए कहा कि अफगानिस्तान में सोवियत कब्जा अभी और न ही भविष्य में स्वीकार होगा। उन्होंने कहा कि वहाँ रूसी सैनिकों की वापसी के पश्चात् ही समस्या का पूर्ण समाधान सम्भव है।[570]

30 जून को समुदाय के सदस्य देशों ने बताया कि रूसी विदेशमन्त्री के द्वारा जारी किए गए बयान से निष्कर्ष निकलता है कि सोवियत संघ अफगानिस्तान से वापस आना चाहता है, क्योंकि वह इस कारण ही तीसरे विश्व में निन्दा का पात्र हुआ है।[571] सोवियत विदेशमन्त्री मि0 ग्रोमिको ने ब्रिटिश विदेशमन्त्री लार्ड कैरिंगटन से इस प्रस्ताव की निन्दा करते हुए कहा कि यह प्रस्ताव न तो सत्यता की ओर है और न ही स्वीकार किए जाने के योग्य है। केवल पत्राचार द्वारा अफगानिस्तान के राजनैतिक समाधान की आशा नहीं की जा सकती, क्योंकि इस सम्मेलन में अफगान सरकार के प्रतिनिधि को शामिल नहीं किया गया है।[572]

लन्दन में 13-14 अक्टूबर को यूरोपीय आर्थिक समुदाय तथा दक्षिण पूर्वी एशियाई संगठन (एशियान) के सदस्य देशों के विदेश मन्त्रियों की बैठक हुई जिसमें कहा गया कि सोवियत संघ को शान्ति व स्थिरता के लिए सकारात्मक रूख अपनाना चाहिए।[573]

वास्तव में अफगान प्रश्न पर यूरोपीय आर्थिक समुदाय की प्रभावी योजना और भारतीय क्षेत्रीय सूत्रपात में महत्वपूर्ण अन्तर है। इन यूरोपीय शक्तियों ने जहाँ इसे आक्रमण की संज्ञा दी वहीं भारत ने संयुक्त राष्ट्रसंघ, गुटनिरपेक्ष आन्दोलन, राष्ट्रमण्डल व अन्य अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में अफगान समस्या के प्रति नरम रूख अपनाया। क्योंकि पश्चिमी देशों के साथ मिलकर रूस तथा वर्तमान अफगान सरकार के प्रति अपनाया गया कड़ा रूख न स्वयं भारत के लिए, बल्कि उपमहाद्वीप की सुरक्षा व स्थायित्व के लिए प्रतिकूल होता। अफगान समस्या का वास्तविक हल बाह्य हस्तक्षेप समाप्त होने से ही हो सकता है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि भारत, रूस की नीतियों में विश्वास व्यक्त करते हुए समस्या का शान्ति पूर्ण समाधान चाहता है ,ताकि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में उसे पूरा सहयोग मिलता रहे। साथ ही वह अपने मित्र अफगानिस्तान की भी इन संकट के दिनों में मदद करना चाहता है, क्योंकि अफगानिस्तान की स्वतन्त्रता, सीमाओं की सुरक्षा व गुटनिरपेक्षता में भारत का सुरक्षात्मक स्वार्थ निहित है।

*****

570. "क्रोनोलोजी ऑफ अफगानिस्तान इवेन्ट्स", देखिए क्र. 63, पृ. 13
571. एशियन रिकार्डर, अगस्त 13-19, 1981, अंक 33, पृ. 16167
572. एशियन रिकार्डर, 27 अगस्त-9 सितम्बर, 1981, अंक 35, पृ. 16187-88
573. एशियन रिकार्डर, नवम्बर 5-11, 1981, पृ. 16310

नवम् अध्याय

नवम अध्याय

बदले सन्दर्भों में भारत-अफगान सम्बन्ध

जब 27 दिसम्बर, 1979 को सोवियत सेनाओं ने अफगानिस्तान में कदम रखे, तो शायद उन्हें पक्का विश्वास रहा होगा कि इस देश को पटरी पर ले आना कोई मुश्किल कार्य नहीं हैं, क्योंकि दूसरे विश्व युद्ध के बाद और उससे पहले भी सोवियत संघ कई पूर्वी-पश्चिमी देशों का इतिहास झिंझोड़ चुका था। अफगान संकट को लेकर युद्ध और वार्ता का द्वन्द्वात्मक राजनय चलता रहा। सोवियत सेना के जमें पाव उखड़ते भी रहे, अर्थव्यस्था पर एक भयानक बोझ के अलावा अफगानिस्तान सोवियत संघ को लहुलुहान करने वाला स्थायी साधन बन गया। सोवियत नेता गोर्वाच्योव ने 6 जुलाई, 1986 को ब्लादीवोस्तोक में घोषणा कर दी कि अफगानिस्तान एक रिसता घाव है, वहां से रुसी सेनाएं बुला लेने में ही सोवियत संघ की खैर है, अफगानिस्तान की खैर हो या न हो।[1] अफगानिस्तान में रुसी हस्तक्षेप की छठी वर्षगांठ पर राष्ट्रपति रीगन ने कहा कि हम समस्या के राजनैतिक समाधान की किसी भी खोज का स्वागत करते है।[2] इस प्रकार सोवियत संघ व अमेरिका की नीति में परिवर्तन आ रहा था किन्तु अमेरिका पाकिस्तान व मुजाहिदों के साथ अपने सैनिक सम्बन्धों में परिवर्तन करने को तैयार न था।

अफगानिस्तान, रूस और अमेरिका की शतरंज का एक मोहरा बना रहा। इस क्रिया में जहां रूस ने अपना प्रतिनिधित्व स्वयं किया, वहीं अमेरिका अपने अलावा ब्रिटेन व आजादी का डमरु बजाने वाली नई आधुनिक ताकतों का सिरमौर बन अफगानिस्तान की सीमा के बाहर पैठ बनाये रहा।[3] रूस व अमेरिका की प्रतिद्वन्द्विता ने भारत की सुरक्षा के लिए कई विकट परिस्थितियां पैदा कर दी। पहले रूस और अमेरिका के सीधे टकराव में पाकिस्तान का इस्तेमाल किया जाता रहा, अब वही काम अफगानिस्तान के जरिये शुरु हो गया, किन्तु असली लड़ाई अफगानी व पाकिस्तानी करते रहे।

अफगान राष्ट्रपति कारमल ने सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी की 21 वीं कांग्रेस में टिप्पणी की कि सोवियत संघ निकट भविष्य में अपनी सेनाएं हटाना चाहेगा। लेकिन शर्त है कि बाहरी हस्तक्षेप समाप्त हो जाए। दूसरी ओर इस्लामाबाद की शर्त है कि अफगान संकट के राजनैतिक समाधान

1. जोशी, त्रिनेत्र, "एक त्रासद सच्चाई है अफगानिस्तान" जनसत्ता, 14 फरवरी, 1986
2. ओहरी, मेजर वी0, "अफगानिस्तानः सोवियत विदड्रावल लाइकली 1" 283, करेण्ट टोपिक्स, स्वरन पब्लिकेशन्स अप्रैल 1986, खण्ड 12 अकं 5, पृ0 22
3. जोशी, त्रिनेत्र, "अफगानिस्तान का अतीत ही भविष्य का आईना है", जनसत्ता, अप्रैल 1989

के समझौते पर दस्तखत और काबुल-इस्लामाबाद बातचीत के लिए पहले कारमल को हटाया जाए, वे जेनेवा वार्ता में बाधक है।[4] वास्तव में कारमल सोवियत आधिपत्य के प्रतीक मात्र थे।[5] वे काबुल में सत्ता की जड़ों को फैला नहीं पाए। इसलिए रूस के पास डा0 नजीबुल्ला को सत्ता में बैठाने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं था। दूसरे शब्दों में, सातवें दौर की बातचीत के ठीक दो दिन पहले कारमल की जगह नजीब की नियुक्ति का तात्पर्य है, सीधे मुंह बात न करने की जिया शासन की हठवादिता खत्म करवाना। इस नेतृत्व परिवर्तन के साथ कहा जा सकता है कि काबुल परिवर्तन के दौर में है। क्रेमलिन अफगानिस्तान को लाल रंगी बनाने के बजाय फिनलैण्ड जैसा तटस्थ व बहुरंगी बनाने को तैयार है।[6] विश्व में हो रहे परिवर्तन के दौर में गोर्वाच्यौव चीन से सम्बन्ध सुधारना चाहते हैं, जिसका प्रभाव सम्पूर्ण दक्षिण एशियाई देशों पर होगा।[7] यही कारण है कि कुछ देशों द्वारा भारत की अफगान नीति में परिवर्तन की मांग की जा रही है। किन्तु यह सत्य है कि आज की दुनिया में कोई किसी की लड़ाई नहीं करता। जब पाकिस्तान की फौजी सरकार हमारी सीमा पर गड़बड़ करने पर तुली हो, तब पाक अफगान सीमा पर जिया के लिए शान्ति सुनिश्चित करने की मांग भारत के राष्ट्रीय हितों के अनुरुप नहीं हो सकती। पाकिस्तान के साथ परस्पर सम्बन्धों के लिए भारत चाहता है कि प्रस्तावित सन्धि में यह शर्त हो कि पाकिस्तान में विदेशी अड्डे नहीं बनने दिए जाएंगे। किन्तु पाकिस्तान सीधे युद्ध निषेध सन्धि पर जोर दे रहा है। वह अफगान मसले पर यद्यपि रूस में सीधी बातचीत तो शुरु करना चाहता है किन्तु अमेरिका के साथ सैनिक सम्बन्धों में बदलाव के लिए तैयार नहीं है। वास्तव में काबुल में पाकिस्तान व अमेरिका समर्थक सरकार भारत के लिए उलझन पैदा करेगी। राष्ट्रीय हितों का तकाजा है कि भारत को काबुल में वहीं सरकार मान्य है जो अफगानिस्तान जैसे सामरिक महत्त्व वाले क्षेत्र को अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का अखाड़ा न बनने दे।[8]

सोवियत नेता मिखाइल गोर्वाच्योव ने कम्युनिस्ट पार्टी की 27 वीं कांग्रेस में कहा कि हम अफगान पक्ष के साथ इस बात के लिए सहमत हुए है कि राजनैतिक समाधान होते ही विभिन्न चरणों में सैनिकों की वापसी की जाएगी।[9] किन्तु अमरीकी राष्ट्रपति रीगन ने गोर्वाच्योव के समक्ष अपने दृष्टिकोण को प्रस्तुत करते हुए कहा कि सेनाओं की वापसी बिना शर्त होनी

4. व्यास, हरिशंकर, "अफगानिस्तान फिनलैण्ड हो सकता है" जनसत्ता, 7 मई 1986
5. यूथ कम्पटीशन टाइम्स, अंक 5, जून 1986, पृ. 15
6. व्यास, हरिशंकर, देखिए क्र0 4
7. चौपड़ा, प्रान, "सिनो-सोवियत टाक्स एण्ड इण्डिया" इण्डियन एक्सप्रेस, 22 सितम्बर, 1986
8. जोशी, त्रिनेत्र, देखिए क्र0 1
9. आई0 ग्लेवोव, "सोवियत संघ अफगानिस्तान से सैनिक वापस करने के लिए तैयार" आज, 29 मार्च, 1986

चाहिए।[10] प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी ने अफगान संकट के प्रति आशावादी दृष्टिकोण अपनाते हुए[11] कहा कि भारत, अफगानिस्तान से रूसी सेनाएं हटाने के लिए विदेशी हस्तक्षेप दूर करने की शर्त को अनुचित नहीं समझता।[12] अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप की सातवीं वर्षगांठ पर न्यूयार्क में ब्रिटेन के विदेश सचिव जैफरी हाओ ने कहा कि अफगानिस्तान से रूसी सैनिकों को वापस जाना चाहिए, क्योंकि सेना द्वारा समाधान सम्भव नहीं है।[13] चीन तथा पाकिस्तान ने भी उनके समान ही विचार व्यक्त किए।[14] ईरान के विदेशमन्त्री अकबर अली विलायती ने कहा कि वे अफगानिस्तान में रूसी सेनाओं की उपस्थिति पर किसी तरह का विचार-विमर्श नहीं चाहते वे संयुक्त राष्ट्र की वार्ता को ही मान्यता प्रदान करते हैं।[15] न्यूयार्क में कोलम्बिया विश्वविद्यालय में एक सोवियत राजनीतिज्ञ ने कहा कि अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप एक बड़ी भूल थी।[16] तत्कालीन स्थिति को देखते हुए अमेरिका व सोवियत संघ संकट-समाधान तथा स्थायी सरकार के लिए पूर्व अफगान शासक जहीरशाह को बातचीत में शामिल करना चाहते हैं।[17] दूसरी ओर वे यह भी स्वीकार करते हैं कि समस्या का समाधान अफगानिस्तान व उसके पड़ोसियों के बीच सहमति तथा विश्वसनीय गारण्टियों के आधार पर होना चाहिए।[18]

वर्ष 1987 के मई माह के प्रथम सप्ताह में विदेशमन्त्री श्री नारायण दत्त तिबारी ने काबुल की यात्रा की। उन्होंने नजीबुल्ला से अपनी बातचीत में कहा कि भारत चाहता है कि अफगानिस्तान एक शान्त, स्थिर व गुटनिरपेक्ष देश के रूप में रहे।[19] भारत उनकी सुलह योजना का समर्थन करता है। अफगान विदेशमन्त्री श्री अब्दुल वकील ने कहा कि पाकिस्तान उनके देश के विरुद्ध अघोषित युद्ध का अड्डा बन चुका है। इस मामले में इस्लामाबाद राष्ट्रीय हितों की भी परवाह नहीं कर रहा है।[20] दोनों नेताओं के मध्य स्वास्थ्य, उद्योग, शिक्षा एवं संस्कृति और तकनीकी सहायता पर सहयोग के आधार पर विचार-विमर्श हुआ। श्री तिवारी ने भारतीय सहायता से बने

---

10. इण्डियन एक्सप्रेस, 1 अगस्त, 1986
11. वही, 10 अगस्त, 1986
12. गोयल, देशराज, "राजीव गांधी गोर्वाच्योव मिलन, राष्ट्रीय सुरक्षा के नये सन्दर्भ" आज, 20 नवम्बर 1986
13. इण्डियन एक्सप्रेस 29 दिसम्बर, 1986
14. पाकिस्तान समाचार, आलमी सर्विस, प्रातः 10.30, 23 जून, 1987
15. नकवी, सईद, "ईरान्स न्यू मोव ऑन अफगान ट्रैन्गल" द हिन्दुस्तान टाइम्स, 22 फरवरी 1987
16. इण्डियन एक्सप्रेस, 23 मार्च, 1987
17. इण्डियन एक्सप्रेस, 10 मार्च, 1987, पाकिस्तान ने भी अफगानिस्तान में शान्ति के लिए इसी प्रकार का आग्रह किया। इण्डियन एक्सप्रेस, 1 अगस्त, 1988
18. आशित्कोव, गोर्वोक्यर्नि, पोलोन्स्की, स्वेतोजारोव, "अफगानिस्तान सच्चाई क्या है? नवयुग प्रेस (दिल्ली) पृ. 5
19. ट्रिब्यून (चण्डीगढ़) 5 मई 1987
20. दैनिक पंजाब केसरी (जालंधर), 5 मई 1987

250 बिस्तरों वाले अस्पताल की आधारशिला रखी, जिसका नामकरण इन्दिरा गांधी के नाम पर किया जाएगा।[21] अपनी वार्ता के अन्त में विदेशमन्त्री श्री तिवारी ने आशा व्यक्त की कि अफगानिस्तान शीघ्र ही स्वतन्त्र, मजबूत और शक्तिशाली देश होगा।[22]

डा० नजीबुल्ला ने काबुल में गुटनिरपेक्ष देशों के नेताओं के बीच पत्रकार सम्मेलन में कहा कि राष्ट्रीय सुलह नीति के तहत अब तक 60 हजार शरणार्थी वापस स्वदेश आ चुके हैं।[23] उन्होंने आशा व्यक्त की कि एक दिन युद्ध की स्थिति समाप्त हो जाएगी और संकट का राजनैतिक हल निकल आएगा। डा० नजीबुल्ला ने कहा कि मुजाहिद्दीन राष्ट्रीय असेम्बली और स्थानीय सरकार में होने वाले चुनावों में भाग लें।[24] किन्तु सत्ता में भागीदारी के सरकार के इस प्रस्ताव को मुजाहिदों ने अस्वीकार कर दिया।[25] इस प्रकार जहां एक ओर पाकिस्तान व अमेरिका अफगान सरकार के प्रति आक्रामक रुख अपनाए हुए हैं, वहीं दूसरी ओर मुजाहिदों के रुख में परिवर्तन की उम्मीद भी दिखाई नहीं देती, अतः अफगानिस्तान में युद्ध लम्बा चलेगा।

भारतीय राष्ट्रपति आर० वैंकटरमन ने अपनी मास्को यात्रा के दौरान पड़ोसी देशों से अच्छे सम्बन्धों की इच्छा व्यक्त करते हुए कहा कि अफगानिस्तान में बाहरी हस्तक्षेप की नहीं, बल्कि शान्ति की जरुरत है, ताकि वे अपने आन्तरिक मामलों को सुलझा कर भविष्य खुद बना सके। उन्होंने आश्वासन दिया कि भारत अफगान समस्या के सभी मानवीय पहलुओं पर दो तरफा और बहुपक्षीय रूप से मदद के लिए तैयार है।[26] अस्तु, यह कहा जा सकता है कि भारत, अफगानिस्तान की समस्याओं से निरन्तर चिन्तित तथा परस्पर मित्रता व सहयोग के आधार पर उसके विकास के लिए प्रयासरत रहा है।

(क) एशिया में शक्ति सन्तुलन

एशिया का क्षेत्र अपनी सामरिक व आर्थिक ध्रुवीकरण की विशेषता के लिए प्रसिद्ध है, जिसके कारण इस क्षेत्र के अधिकतर देशों की राजनैतिक व्यवस्था मूलतः अस्थायी है। दूसरी ओर तेल की शक्ति के बाहुल्य के कारण यह क्षेत्र महाशक्तियों को हस्तक्षेप करने और अपना प्रभुत्व स्थापित करने के लिए आकर्षित करता रहा है। यही कारण है कि अफगानिस्तान में रूसी सैनिक हस्तक्षेप तथा खाड़ी क्षेत्र में अपने हितों की सुरक्षा के लिए शक्ति प्रयोग की धमकी

21. द टाइम्स आफ इण्डिया, 5 मई, 1987
22. वही, 6 मई, 1987
23. रेडियो मास्को, 24 जून, 1987
24. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 18 जनवरी, 1988
25. इण्डिया एक्सप्रेस, 18 जनवरी, 1988
26. जनसत्ता, 7 जुलाई, 1988

के रूप में प्रकट अमरीकी प्रतिक्रिया ने विश्व की दो महाशक्तियों को संघर्ष के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया।[27] चीन को भी इससे अपने प्रमुख विरोधी रूस के समक्ष कठिनाइयाँ उत्पन्न करने का अवसर मिला है। पश्चिम एशिया के तेल उत्पादक देशों को भय है कि सोवियत संघ कूटयोजनात्मक रीति से खाड़ी पर जबरदस्ती अधिकार करके हिन्दमहासागर तक आगे बढ़ सकता है। पाकिस्तान को इससे अपनी सेनाओं को शक्तिशाली व आधुनिकतम बनाने, परमाणु गुट में सम्मिलित होने के लिए अपने दावे को प्रस्तुत करने तथा इस्लामी देशों से वित्तीय सहायता प्राप्त करने का अवसर मिला है। यूरोप और जापान को यह भय है कि उनकी तेल व अन्य सामग्री की पूर्ति में कठिनाइयां होगी जबकि भारत के लिए सीमा पार पाकिस्तान में होने वाली सैन्य गतिविधियों की अधिक चिन्ता है जिन पर भारतीय विदेशनीति आधारित होगी। महाशक्तियों की गुटबन्दियों तथा आधुनिक विस्फोटक अस्त्रों के निर्माण से गुटनिरपेक्षता की स्थिति नगण्य हुई है।[28] भारत इस सम्पूर्ण क्षेत्र में बड़ी शक्तियों के शक्ति सन्तुलन को पूरी तरह अस्वीकार करता है, क्योंकि इनकी विस्तारवादी नीतियों ने अस्थिरता तथा दूसरी अनेक समस्याओं को जन्म दिया है।[29]

अफगानिस्तान में रूसी सेनाओं के प्रवेश के पश्चात् अमेरिका को भय है कि सोवियत संघ न केवल खाड़ी में, बल्कि यूरोप, अफ्रीका और एशिया के महत्वपूर्ण क्षेत्रों में एक बड़ी शक्ति के रूप में उभरेगा। इसलिए अमेरिका का लक्ष्य पाकिस्तान से लेकर मिस्त्र तक सोवियत संघ के विरुद्ध एक संयुक्त जनमत तैयार करना है। इसके बदले में जहां पाकिस्तान सैन्य सामग्री की बड़े पैमाने पर आपूर्ति के लिए दबाव डाल रहा है, वहीं अमेरिका, पाकिस्तान की सहायता के बदले में अफगान-विद्रोहियों को हथियारों की आपूर्ति का अधिकार चाहता है, ताकि सोवियत संघ को अफगानिस्तान में उलझाए रखा जा सके[30] और तेल क्षेत्रों में अपने विस्तार के लिए सोवियत प्रभाव को कम किया जा सके। इसके लिए अमेरिका किसी भी तरह के टकराव के लिए तैयार प्रतीत होता है। रीगन प्रशासन की पाकिस्तान के पक्ष में एक तरफा नीति से भारत का सोवियत समर्थक होना स्वाभाविक है।[31] किन्तु अफगान संकट के दौर में भारत के लिए सबसे बड़ी कठिनाई यह रही कि वह किस तरह सोवियत संघ के साथ मित्रता बनाये रखे, जिससे चीन व अमेरिका के साथ उसके सामान्य सम्बन्धों में व्यवधान न पड़े और न ही पड़ोसी

27. स्टेट्मेण्ट विदेशमन्त्री श्री नरसिंहाराव, लोकसभा डिबेट्स, खण्ड 1, अंक 3, 23 जनवरी, 1980, कॉलम 41-45
28. त्रिवेदी, शैलेन्द्र कुमार, "जेनेवा वार्ता और विश्व शान्ति", राष्ट्रधर्म, फरवरी 1, 1986, वर्ष 22, अंक 9, पृ. 91-99
29. मेहता, जगत, एस., "एनेचुरल सौल्यूसन" फॉरेन पॉलिसी (वाशिंगटन) 1982, अंक 47, पृ. 139-53
30. बनर्जी, ब्रजेन्द्रनाथ, "इण्डियाज एण्ड टु इट्स नैबरिंग कन्ट्रीज", (दिल्ली 1982), पृ. 32
31. गुप्ता, भवानी सेन, "अफगान सेन्ड्रोम, हाउ टु लिव विद सोवियत पावर", दिल्ली 1982, पृ. 166-67

पाकिस्तान के साथ भी सम्बन्ध समाप्त हो सके[32]। एक क्षेत्र विशेष में महाशक्तियों की शक्ति प्रतिस्पर्धा, परस्पर विरोध का अनुसरण, बड़े स्तर पर हथियारों की खरीद फरोक्त तथा भड़काने वाले बयानों से अविश्वास की स्थिति उत्पन्न हुई है।[33] चीन व अमेरिका द्वारा अपने-अपने स्वार्थो तथा पृथकतावादी नीतियों के तहत पाकिस्तान को प्रदत्त सैन्य सामग्री से[34] भारत व पाकिस्तान के मध्य सैन्य होड़ प्रारम्भ हुई है। इससे उनकी परराष्ट्र निर्भरता बढ़ी है और एक बड़े अलगाववाद का जन्म हुआ है।[35]

5 जनवरी को विदेश सचिव श्री राम साठे के नेतृत्व में भारतीय मिशन की पाकिस्तान यात्रा पर राष्ट्रपति जिया ने कहा कि अफगान संकट क्षेत्रीय प्रश्न न होकर विश्व स्तर का प्रश्न है। महाशक्तियाँ हमारे पड़ोसी देश तक आ गई हैं, जिससे इस क्षेत्र में तनाव उत्पन्न हुआ है। बड़ी शक्तियों के परस्पर शक्ति संघर्ष तथा बढ़ते हुए सैनिक गठजोड़ के प्रति श्रीमती गांधी द्वारा चिन्ता व्यक्त किए जाने पर भारत यात्रा पर आए ब्रिटिश विदेश सचिव लार्ड कैरिंगटन ने बताया कि अफगानिस्तान में रूसी कब्जे के कारण पाकिस्तान को दी जाने वाली अमरीकी सहायता में वृद्धि की गई है। उन्होंने कहा कि यदि एक ओर अमेरिका-चीन-पाक गठजोड़ है तो दूसरी ओर सोवियत संघ व भारत का गठजोड़ भी तो है, किन्तु श्रीमती गांधी का मत था कि वस्तुत: महाशक्तियों को क्षेत्रीय राजनीति से अलग रहना चाहिए,[36] किन्तु अमरीकी नेतृत्व ने पाकिस्तान के साथ सैनिक सम्बन्धों में परिवर्तन से इन्कार किया। इस प्रकार अमेरिका की नाटो सम्बन्धी नीतियों के कारण शीत युद्ध भारत के द्वार तक आ गया।

हिन्द-महासागर

अमेरिका की दृष्टि में नए सिरे से शीत युद्ध प्रारम्भ करने का प्रमुख कारण अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप है, जिसने अमेरिका को यह सोचने पर विवश कर दिया कि हिन्द महासागर, खाड़ी के क्षेत्र तथा उत्तरी अफ्रीका के आसपास के क्षेत्र में नौ सैनिक गतिविधियां बढ़ाना आवश्यक है। दूसरी और रूस का मत है कि अफगान समस्या की आड़ में अमेरिका ने हिन्द महासागर में शस्त्रों का भारी भंडार एकत्र कर लिया है। जबकि वास्तविकता यह है कि हिन्द महासागर

32. गुप्ता, भवानी सेन, "अफगान सेन्ड्रोम, हाउ टु लिव विद सोवियत पावर", दिल्ली 1982, पृ. 128-30
33. ठाकुर, रमेश, "अफगानिस्तान द रीजन्स फॉर इण्डियास डिस्कनक्टिव एप्रोच", जनरल राउण्ड टेबिल (280,) अक्टूबर 1980 पृ. 422
34. पैट्रीआट, 5 अगस्त, 1981, अमरीकी नीति का तर्क यह है कि शक्तिशाली पाकिस्तान खाड़ी के क्षेत्र में ईरान के विकल्प के रूप में असाधारण भूमिका निर्वाह कर सकेगा
35. वरघेस वी. जी., "प्रोओरिटीज फॉर न्यू गवर्नमेंट, अफगानिस्तान इण्डियाज वॉइस", हिम्मत वीकली, जनवरी 25, 1980, पृ. 13-14
36. एशियन रिकार्डर, फरवरी 19-25, 1980, खण्ड 26, अंक 8, पृ. 15324-25

का अफगान समस्या से कोई सम्बन्ध नहीं है। यह अमरीकी योजना का पूर्वकालिक, सुनियोजित प्रयास है।

सामुद्रिक शक्ति के विशेषज्ञ अल्फ्रेड महान ने कहा था कि, "जो भी हिन्द महासागर पर नियन्त्रण कर लेगा, वह एशिया को अपने प्रभुत्व में रखेगा। यह समुद्र सातों समुद्रों की कुंजी है। इक्कीसवीं शताब्दी में विश्व के भाग्य का निर्णय इसी के जल से होगा"। महान के ये शब्द वर्तमान परिस्थितियों में सही प्रमाणित हो रहे हैं। आज इसके निर्जन द्वीपों को आधुनिक सुविधाओं से सुसज्जित सैनिक अड्डों में परिवर्तित किया जा रहा है। आणविक पनडुब्बियां सर्वाधिक विनाशकारी हथियार लेकर विचरण कर रहीं है। वायुयान इसके सुनसान आकाश की निगरानी करते हैं। यह सम्पूर्ण क्षेत्र महाशक्तियों के शीतयुद्ध से प्रभावित होकर तनावग्रस्त हो गया है।[37]

हिन्दमहासागर भारत के लिए राजनैतिक, आर्थिक तथा सुरक्षात्मक दृष्टि से महत्वपूर्ण है।[38] अतीत में समुद्र की तरफ से हुए आक्रमणों को हम भूल नहीं सकते।[39] भारत की गुलामी का एक बड़ा कारण अनारक्षित हिन्द महासागर रहा है। शक्तिशाली देशों द्वारा विश्व में अपना प्रभाव फैलाने के उद्देश्य से यहां बढ़ता हुआ सैन्यीकरण भारत, अफगानिस्तान तथा अन्य एशियाई देशों के लिए चिन्ता का विषय बना रहा है।[40]

अतः अपने जलक्षेत्र को सुरक्षित करने के लिए[41] भारत अन्य तटवर्ती और गुटनिरपेक्ष राज्यों के साथ मिल कर हिन्द महासागर को शान्त क्षेत्र बनाने से सम्बद्ध संयुक्त राष्ट्र घोषणा पर शीघ्र कार्यान्वयन की दिशा में सक्रिय रूप से कोशिश करता रहेगा।[42] वास्तव में महाशक्तियों के कटुतापूर्ण सम्बन्ध, एशिया में हथियारों की होड़, आर्थिक विकास की अनदेखी और अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अनुचित व्यापार आदि समस्याओं के लिए हमें स्वयं प्रयास करने हैं।[43]

जहां तक शस्त्रीकरण का सवाल है रूस अपने विशाल भू-भाग के कारण पश्चिम से आगे रहा है।[44] किन्तु अफगानिस्तान में सैनिक हस्तक्षेप के पश्चात् विश्व राजनीति में सोवियत

37. चौधरी, नरेन्द्रसिंह, "भारतीय उपमहाद्वीप में शीत युद्ध", बरेली 1981, पृ. 1-6
38. कौल, जवाहर, "हिन्दमहासागर में भारतीय राजनय", जनसत्ता 1987
40 प्रधानमन्त्री के विचार 93, "राष्ट्रमण्डल की सहयोग भावना", 23 नवम्बर, 1983 को नई दिल्ली में राष्ट्रमण्डल देशों के शासनाध्यक्षों के सम्मेलन में भारत की प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी का भाषण -टाइम्स ऑफ इण्डिया, 8 सितम्बर, 1981
39. कुमार, प्रदीप, "राजीव गांधी की सोवियत यात्रा, कुछ अहम् सवाल", आज, 21 मई, 1985
41. कौल, जवाहर, "भारत की सुरक्षा से पश्चिम परेशान क्यों" जनसत्ता, 8 अक्टूबर, 1989
42. वार्षिक रिपोर्ट 1983-84, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित, पृ. 10
43. प्रधानमन्त्री के विचार 23, "गुटनिरपेक्षता की सतत् सार्थकता", 9 फरवरी, 1981 को गुटनिरपेक्ष देशों के विदेशमन्त्रियों के सम्मेलन में प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी का भाषण, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित
44. त्रिवेदी, शैलेन्द्रकुमार, कृ0 28, पृ. 94

संघ बिल्कुल अलग-थलग पड़ गया है, जबकि अमेरिका को विश्व की बड़ी शक्तियों, पश्चिमी यूरोप, चीन व जापान का समर्थन मिलने लगा है। इन बड़ी शक्तियों द्वारा तेल बाहुल्य क्षेत्रों में अपना प्रभाव स्थापित करनेकी प्रतिस्पर्धा से सबसे गम्भीर स्थिति दक्षिण पूर्व एशिया की हुई है। भारत और अन्य गैर तेल उत्पादित देश नहीं चाहते कि तेल बाहुल्य देशों की सुरक्षा को खतरा हो।[45] इस प्रकार तनाव शैथिल्य के पश्चात् उत्पन्न नए शीत युद्ध के प्रति विदेशमंत्री श्री नरसिंहाराव ने 11 जून को राज्यसभा में कहा कि चीन के अमेरिका व जापान के साथ सैनिक गठबन्धन से एशिया की व विशेष रूप से भारत की शान्ति व सुरक्षा को गम्भीर खतरा हुआ है।[46] अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण भारत दक्षिण पश्चिम एशिया व दक्षिण पूर्व एशिया में बढ़ते हुए तनाव की स्थिति को अनदेखा नहीं कर सकता।[47]

अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को 300 मिलियन डालर की सैन्य आर्थिक सहायता का तात्पर्य अफगानिस्तान से रूसी सेनाओं की वापसी के पश्चात् उसको क्षेत्रीय शक्ति बनाना है, यह भारत के लिए अवश्य ही चिन्ता की बात है।[48] विदेशमन्त्री श्री राव ने 12 अगस्त, 1983 को संसद में कहा कि अमरीकी प्रशासन द्वारा पाकिस्तान को शस्त्र सप्लाई से अफगानिस्तान की स्थिति और बिगड़ी है।[49] वास्तव में जितने हथियार बढ़ेंगे उतना ही तनाव बढ़ेगा।[50] यही वजह है कि गुटनिरपेक्ष आन्दोलन ऐसी किसी भी पहलकदमी का पूरी तरह समर्थन करता है, जिससे निरस्त्रीकरण का संबर्द्धन होता हो।[51]

अब जबकि अरब सागर और दक्षिण पश्चिम एशिया में अमेरिका पहले से मौजूद है, सोवियत सेनाएं अफगानिस्तान में घेरा डाले हुए हैं, चीन भी दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों में विशेष रूचि ले रहा है।[52] ऐसी स्थिति में अमेरिका, ब्रिटेन, चीन, फ्रांस व जर्मनी से खरीदकर प्राप्त किए गये हथियारों से पाकिस्तानी फौज की प्रहार शक्ति में प्राप्त नया बल उपमहाद्वीप में हलचल व उत्तेजना पैदा करने वाला है। उसके द्वारा भारत में आंतकवादियों को हिंसात्मक घटनाओं के

45. बोस, प्रदीप, "द अफगान क्राइसिस एण्ड द इण्डियाज रोल II", जनता मार्च 2, 1980, खण्ड 35, पृ. 13-16।
46. फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, 20 जून, 1980, अंक 6, खण्ड 26, पृ. 127-28
47. अप्पादोराय, ए., एम. एस. राजन, "इण्डियाज फॉरेन पॉलिसी एण्ड रिलेशन्स", दिल्ली 1985, पृ. 624-25
48. श्रीवास्तव, वी0के0, "द यूनाइटेड स्टेटस एण्ड रीसेन्ट डबलपमेण्ट्स इन अफगानिस्तान", द्वारा के0पी0 मिश्रा, "अफगानिस्तान इन क्राइसिस", (दिल्ली 1981), पृ. 65
49. मुखर्जी, साधन, "अफगानिस्तान फ्रॉम ट्रेजिडी टु ट्रम्फ", दिल्ली 1984, पृ. 148
50. प्रधानमन्त्री के विचार 39, "कानकुन सम्मेलन की उपलब्धियां", 27 अक्टूबर, 1981 को नई दिल्ली के पालम हवाई अड्डे पर श्रीमती गांधी द्वारा सम्वाददाता सम्मेलन में व्यक्त किये गये विचार
51. गांधी, राजीव, "नामीबिया की स्वतन्त्रता का समर्थन", नामीबिया पर गुटनिरपेक्ष देशों के समन्वय ब्यूरों की असाधारण मन्त्री स्तर की बैठक, 19 अप्रैल, 1985 को प्रधानमन्त्री श्री राजीवगांधी का उद्घाटन भाषण, भारत सरकार द्वारा आकल्पित व प्रकाशित
52. आज (कानपुर), 13 नवम्बर, 1986

लिए प्रशिक्षण व प्रोत्साहन देने जैसे इरादों को नजर अंदाज करना भारतीय सुरक्षा के लिए घातक सिद्ध हो सकता है।[53] दूसरी ओर हिन्दमहासागर में अमरीकी सैनिक उपस्थिति ने इस क्षेत्र में श्रीलंका का हौसला बढ़ाया है। यही कारण है कि वह भारत के सम्बन्ध में प्रतिकूलता का रुख दिखाने का साहस कर रहा है।[54] इस प्रकार इसमें सन्देह नहीं कि अमरीकी रक्षा मन्त्रालय की नीतियाँ भारत की सुरक्षा व राष्ट्रीय एकता के लिए बड़ा खतरा है।[55]

विश्व में चल रहे छोटे-छोटे देशों में युद्ध अथवा गृहयुद्ध वृहत स्तरीय शीतयुद्ध के उपांग है। जहां विश्व शक्तियां न केवल बढ़े हुए शस्त्रास्त्रों का उपयोग करती हैं, अपितु आधुनिकतम श्रेणी के हथियारों व यन्त्रों का व्यावहारिक परीक्षण भी। रूस व अमेरिका द्वारा शस्त्र परिसीमन वार्त्ताएं भी हुई, किन्तु सन्देह के वातावरण में असफलता ही हाथ लगी। किसी भी महाशक्ति ने अपने प्रस्ताव को ईमानदारी से नहीं रखा। इसी कारण दूसरी शक्तियों ने भी शान्ति वार्त्ताओं की सदैव अवमानना की है।[56] जनरल जिया भारत से अपना समीकरण बराबर रखना चाहते हैं।[57] उनका मत है कि पाकिस्तान परमाणु शस्त्र परिसीमन सन्धि पर हस्ताक्षर तभी करेगा, जब भारत इस पर हस्ताक्षर करे।[58] प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी ने कहा कि पड़ोसी चीन की फौजी ताकत तथा पाकिस्तान की सैन्य तैयारी को देखते हुए देश को परमाणु बम की आवश्यकता है।[59] यद्यपि सिद्धान्त: भारत बम बनाने के पूरी तरह खिलाफ है। किन्तु वह अपनी राष्ट्रीय सुरक्षा का पूरा ध्यान रखेगा।[60] श्री गांधी ने कहा कि हम उनकी अन्धाधुन्ध हथियारों की खरीद तथा परमाणु कार्यक्रम से चिन्तित है।[61] इस प्रकार जब अमेरिका से पाकिस्तान व अफगान विद्रोहियों को भारी मात्रा में शस्त्र आपूर्ति हो रही हो, अफगान छापामारों को चीनी प्रशिक्षण प्राप्त हो रहा हो, पाकिस्तान विस्फोट की तैयारी कर रहा हो और सोवियत संघ अफगान सरकार की सहायता से पाकिस्तान में असन्तुलन उत्पन्न कर रहा हो, भारत की भूमिका निश्चित रूप से सोवियत समर्थक होगी क्योंकि शेष परिस्थितियाँ भारत के सुरक्षा हितों के प्रतिकूल है। दूसरे शब्दों में,भारत-रूस मित्रता

---

53. कुल बिहारी द्वारा श्री सुशील चतुर्वेदी, "भारतीय सीमा पर बढ़ता हुआ युद्ध का खतरा", देवदारु, सितम्बर-अक्टूबर, 1985, पृ. 41-43
54. आज (कानपुर), 1 अप्रैल, 1985
55. फ्रेन्साइन, आर. फैकेव, "भारत को वास्तविक खतरा अमेरिकी सुदूर रक्षा नीति से ही है", आज, 24 मई, 1985
56. त्रिवेदी, शैलेन्द्र कुमार, देखिए क्र. 28
57. नवभारत टाइम्स, 14 जुलाई, 1985
58. वही 16, जुलाई, 1985
59. वही,
60. वही, 18 जुलाई, 1985
61. राजीव गांधी, "सुदृढ़ और सक्रिय विदेश नीति", लोकसभा में 10 अप्रैल, 1985 को विदेश मन्त्रालय की अनुदान मांगों पर बहस के जवाब में प्रधानमन्त्री श्रीगांधी का वक्व्य, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित

का कारण यह भी है कि दोनों देश समस्याओं के समाधान के लिए हथियारों के बजाय कूटनीति पर निर्भर रहना चाहते है।[62]

मई में प्रधानमंत्री श्री गांधी की मास्को यात्रा पर उनके अभूतपूर्व स्वागत की चर्चा करते हुए न्यूयार्क टाइम्स ने लिखा कि रूस के लिए भारत का अत्यधिक महत्त्व है। वह न केवल एशिया में चीन की शक्ति को सन्तुलित करता है, अपितु अफगान समस्या पर रूस की आलोचना से भी इन्कार करता है। जहां तक भारत का प्रश्न है रूस उसे पाकिस्तान और चीन के आक्रमण से सुरक्षा की गारण्टी दिए हुए है।[63]

इस प्रकार राजनीति वेत्ताओं द्वारा कहा गया कि सैनिक वर्चस्व को लेकर प्रारम्भ हुई महाशक्तियों की प्रतिस्पर्धा में यदि सोवियत संघ कभी विश्व विजय कर जाए तो सारी पृथ्वी पर वह साम्यवाद लागू कर देगा और महाशक्ति के रूप में यदि अमेरिका को प्रसार का मौका मिला तो वह साम्यवाद के किले की हर प्राचीर को ढहा देगा। इसलिए रूस अमेरिका की हर विजय को अन्तर्राष्ट्रीय पूंजीवाद की विजय यात्रा मान कर आशंकित हो उठता है।[64]

19-20 नवम्बर, 1985 को जेनेवा में राष्ट्रपति रीगन तथा गोर्वाच्योव ने शिखर वार्ता के पश्चात् संयुक्त वयान में कहा कि कोई भी देश दूसरे पर सैनिक वर्चस्व कायम करने की कोशिश नहीं करेगा। तभी 40 देशों के निरस्त्रीकरण सम्मेलन में रासायनिक हथियारों पर रोक लगाने पर सहमति हुई, किन्तु गुटनिरपेक्ष देशों द्वारा पारमाणुविक अस्त्रों पर पूर्ण प्रतिबन्ध की मांग को अमेरिका ने अस्वीकृत कर मात्र परिसीमन पर बल दिया।[65] सोवियत महासचिव मिखाइल गोर्वाच्योव ने अपने भाषण में कहा कि वे एशिया में हथियारों की होड़ से बढ़ रहे तनाव के प्रति आंशकित है।[66] इसलिए उनकी शान्ति नीतियों के तहत 1986 के अन्त तक अफगानिस्तान से सोवियत सैन्य दल का एक भाग हटा लिया जाएगा।[67]

वास्तव में, यदि रूस और अमेरिका शक्ति सन्तुलन द्वारा शस्त्रों का आदान-प्रदान बढ़ाते रहे तो न केवल अफगानिस्तान विस्फोट का शिकार होगा, बल्कि उसके आस-पास के देश भी इसके शिकार होंगे और जो विनाशकारी कार्रवाइयाँ व नुकसान होगा, वह अमेरिका व रूस का नहीं बल्कि दूसरे देशों का होगा। इसलिए शस्त्रों के व्यापार को रोका जाना चाहिए।[68] 6 मई

62. गोयल, देशराज, देखिए क्र. 12
63. आज (कानपुर), 24 मई, 1985
64. माथुर, राजेन्द्र, "महाशक्तियां है लेकिन महाविचार कहीं नहीं", नवभारत टाइम्स 7 जुलाई 1985
65. त्रिवेदी, देखिए क्र. 28
66. मिखाइल गोर्वाच्योव, "अवसर हाथ से न जाने दे", सोवियत संघ मासिक पत्रिका, अंक (368), 1986 पृ. 1-2
67. व्लादलेन कुज्नेत्सोव, "एशिया के शान्ति कार्यक्रम", वही, पृ. 5
68. आल इण्डिया रेडियो, आज की बात 'अफगानिस्तान', प्रात: 9 बजे, 5 मई, 1987

को विदेशमंत्री श्री नारायण दत्त तिवारी ने काबुल यात्रा के दौरान प्रेस कान्फ्रेन्स में पाकिस्तान द्वारा खरीदे जा रहे आवाक्स विमान के प्रति चिन्ता व्यक्त करते हुए कहा कि निश्चित ही अमेरिका ही पाकिस्तान को परमाणु बम बनाने से रोक सकता है।[69] दूसरी कोई भी ताकत पाकिस्तान को मिलने वाली सैनिक व आर्थिक सहायता को न कम करवा सकती है और न ही खत्म। पाकिस्तान पर अपना आधिपत्य जमा कर अमेरिका न केवल हिन्दमहासागर क्षेत्र पर अपना कब्जा मजबूत कर सकता है, बल्कि अफगानिस्तान, ईरान और खाड़ी क्षेत्र के छोटे राज्यों पर सोवियत संघ के खिलाफ अपने साम्राज्यवादी इरादों को फैला सकता है। वह पाकिस्तान के माध्यम से भारत को भी भयभीत करना चाहता है।[70] अफगानिस्तान में अस्थिरता फैलाने के लिए पाकिस्तान की भूमिका की स्वयं देश में विरोधी पार्टियों ने आलोचना की है। दूसरी ओर उसके मास्को काबुल विरोधी रवैये से प्रसन्न होकर अमेरिका ने 1987 से 1992 तक इस्लामाबाद को 50 अरब रुपये से भी अधिक की सैनिक सहायता देना सुनिश्चित कर दिया।[71]

भारत का मत है कि वह महाशक्तियों के साथ अपने रिश्तों में एक सन्तुलन कायम करना चाहता है, किन्तु भारत-अमेरिका सम्बन्धों में पाकिस्तान एक बड़ा कांटा है। पाकिस्तान बनाने में अमेरिका का हाथ भले ही न रहा हो, किन्तु उसके शैशव से प्रौढ़ावस्था तक अमेरिका पाकिस्तान का धर्म पिता रहा है, भले ही उसका पालन पोषण उसने अपने स्वार्थ के लिए किया हो। यदि पाकिस्तान की सैन्य शक्ति का विश्लेषण किया जाय तो उसके शस्त्रागार का 70 प्रतिशत हिस्सा अमरीकी सहायता और बाकी का 30 प्रतिशत भाग चीनी मदद से बन कर तैयार हुआ।[72] अमरीकी व चीनी हथियारों से लैस पाकिस्तान सरकार भारतीय कश्मीर को हड़पने के लिए उतावली हो रही है, जबकि स्वयं पाक अधिकृत कश्मीर स्वतन्त्र होने का सपना देख रहा है। जिसमें इस्लामी जगत सहित सारी दुनिया उनकी मदद करेगी।[73] बदल रही अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों के बावजूद अफगानिस्तान और भारत के आन्तरिक मामलों में दखल देने और इस क्षेत्र में शीत युद्ध चलाये रखने के लिए अफगान राष्ट्रपति डा0 नजीबुल्ला ने पाकिस्तान की कड़ी भर्त्सना की।[74]

अफगानिस्तान की भौगोलिक स्थिति कुछ ऐसी है कि अमेरिका व रूस की विश्वव्यापी खींचतान के अलावा अनेक क्षेत्रीय देशों के रक्षा हित सीधे इस देश में होने वाले बदलावों से

69. आज (कानपुर), 7 जून, 1985
70. इसहास, यदुल्लाही, "पाकिस्तान अमेरिकी युद्ध नीति का छोड़ा", दैनिक वीर प्रता, 4 अक्टूबर 1987
71. सिंह, रामपाल, "अफगानिस्तान से अगंद पांव कैसे हटे", साप्ताहिक हिन्दुस्तान, 31 अगस्त, 1986 पृ014
72. चतुर्वेदी, राधानाथ, "समृद्धि या आर्थिक दासता का नियंत्रण", नवभारत टाइम्स, 27 जून, 1994
73. हुसैन, मुजफ्फर, "पाक अधिकृत कश्मीर भी अलग होने की फिराक में", अमर उजाला (मेरठ), 4 अगस्त, 1990
74. दूरदर्शन समाचार, 30 अगस्त, 1990

जुड़े है। जिया उल हक के जमाने में पाकिस्तान की अर्थव्यवस्था का मजबूत आधार ही अफगानिस्तान का मसला बन चुका था।[75] जर्मनी के एकीकरण ने छोटे व अविकसित देशों के लिए क्षेत्रीय व जातीय समस्याएं पैदा कर दी हैं। अब एक पक्ष या दूसरे का साथ देना महाशक्तियों की आपस की साझेदारी से ही सम्भव होगा, क्योंकि नाटो संगठन में यूरोप और अमेरिका की एकजुटता के सामने सोवियत संघ अकेला पड़ेगा।[76]

कुवैत पर ईराकी कब्जा

विश्व जनमत की परवाह न करते हुए प्राचीन राष्ट्रवाद के नाम पर ईराकी फौजों द्वारा कुवैत पर कब्जा इस बात का प्रमाण है कि आजकी दुनियां में भी ताकतवर देशों को न तो अन्तर्राष्ट्रीय कायदे कानून की कोई चिन्ता है और न ही कमजोर राष्ट्रों को सुरक्षा की गारण्टी देने वाली महाशक्तियां ही मौके पर काम आती हैं।[77] ईराक का यह कदम संयुक्त राष्ट्र घोषणा पत्र का स्पष्ट उल्लंघन है। फिर भी तृतीय विश्व के बहुत से देश इस कार्रवाई से प्रसन्न है, क्योंकि सद्दाम हुसैन ने सीधे अमरीकी शक्ति को चुनौती दी है। कूटनीतिक दृष्टि से यह भारत के हित में भी है। ईराक, भारत का निकट दोस्त है, जबकि कुवैत और सऊदी अरब पाकिस्तान के समर्थक हैं। भारत के लिए दुविधा की बात यह थी कि अभी कुछ ही दिन पूर्व ईराक ने कश्मीर के मुद्दे पर भारत का साथ देकर पाकिस्तान की कूटनीतिक साजिशों की हवा निकाल दी थी। अत: अब ईराक की प्रसारवादी कार्रवाई की निन्दा कैसे करे।[78] किन्तु इस सत्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि किसी भी देश को इस तरह सैन्य शक्ति का दुरुपयोग करने का प्रोत्साहन नहीं मिलना चाहिए। दूसरी ओर आज की दुनिया के तेजी से बदलते हालात में बड़ी शक्तियां पश्चिम एशिया में अन्तर्राष्ट्रीय सन्तुलन बिगड़ने नही देंगी।[79]

खाड़ी के देशों की अपनी विकसित फौजें नहीं हैं।[80] इसलिए सऊदी अरब, मिस्त्र व खाड़ी के अन्य देशों ने अमेरिका के जहाजी बेड़े को ईराक के विरुद्ध सभी सैनिक सुविधाएं देने का निर्णय लिया।[81] इस प्रकार ईराकी प्रकरण से जहां अमेरिका व इजराइल की स्थिति मजबूत हुई और खाड़ी के छोटे देशों को अमेरिका का दामन थामने की प्रेरणा मिली वहीं मित्र देश

---

75. जोशी, त्रिनेत्र, "एक त्रासद सच्चाई है अफगानिस्तान", जनसत्ता, 14 फरवरी, 1989
76. सिंह, राय, "नये शीत युद्ध की तैयारी है", जनसत्ता, 30 जुलाई, 1990
77. कुवैत पर इराकी हमला, अमर उजाला (मेरठ), 4 अगस्त, 1990
78. कुमार, रंजीत, "खाड़ी संकट से भारत की विकट स्थिति", नवभारत टाइम्स, 30 अगस्त, 1990
79. सिंह, राय, "पीछे नहीं हटे तो मिट जायेंगे सद्दाम हुसैन", जनसत्ता (दिल्ली), 17 अगस्त, 1990
80. "साम्राज्यवादी ईराक", नवभारत टाइम्स, 9 अगस्त, 1990
81. देखिए क्र. 79

ईराक पर संकट होने से रूस की स्थिति कमजोर हुई।[82] पाकिस्तान के लिए खाड़ी संकट अफगान संकट के समान वरदान साबित हुआ। अफगानिस्तान में सोवियत सैनिकों की वापसी और महाशक्तियों के तनाव शैथिल्य से वाशिंगटन के लिए पाकिस्तानी सेना का महत्त्व काफी घटने लगा था।[83] किन्तु ईराक के साथ युद्ध के पश्चात् अमरीकी राष्ट्रपति ने यह कहते हुए कि पाकिस्तान के पास परमाणु बम है, प्रैसलर कानून के तहत उसे आर्थिक व सैन्य सहायता बन्द कर दी। पाकिस्तान ने अपने परमाणु बम को इस्लामी बम का नाम दिया, ताकि मुस्लिम देशों का समर्थन प्राप्त हो सके। पाकिस्तान के विदेशमंत्री आसिफ अली अहमद ने पिछले दिनों उजबेकिस्तान की यात्रा के दौरान कहा कि अगर कश्मीर पर भारत के साथ पाकिस्तान का विवाद नहीं सुलझा तो दक्षिण एशिया में परमाणु युद्ध का भारी खतरा है। किन्तु भारत का मत है कि वह अपनी परमाणु क्षमता का उपयोग पहले नहीं करेगा, लेकिन यदि पाकिस्तान ने ऐसा किया तो उसका जवाब दिया जाएगा। वैसे अमेरिका और सोवियत संघ के बीच तीसरा विश्व युद्ध इसलिए नहीं हुआ कि दोनों के पास परमाणु हथियार थे तो दोनों देशों पाकिस्तान व भारत के पास परमाणु बम होना एक स्तर पर युद्ध को रोक भी तो सकता है। लेकिन पाकिस्तान कोई रूस नहीं है, पाकिस्तान के हाथ में परमाणु बम बन्दर के हाथ में उस्तरे की तरह है, हमें चौकन्ना रहना होगा।[84]

निष्कर्षत: अमेरिका व सोवियत संघ द्वारा विभिन्न देशों में महाशक्तियों के रूप से किए गए हस्तक्षेप का यदि वस्तुनिष्ठ और ईमानदारी से अध्ययन किया जाए तो स्पष्ट होता है कि जहां मास्को ने कूटनीति व सम्वाद के माध्यम से अपने हितों की रक्षा की, वहीं वाशिंगटन ने धमकी और बल प्रयोग का अपना चिर परिचित व्यवहार नहीं छोड़ा।

वर्तमान बदलते हुए क्षेत्रीय समीकरण को देखते हुए जब सोवियत संघ चीन के साथ सम्बन्धों में सुधार के प्रयास कर रहा है तब भारत को भी चीन के साथ सीमा-विवाद सुलझा लेना चाहिए। वास्तविकता यह है कि पाकिस्तान से हम निपट सकते हैं, चीन से नहीं। चीन द्वारा लाए गए तिब्बत में प्रक्षेपास्त्रों का लक्ष्य दक्षिण एशिया ही है। जो पर्यावरण की दृष्टि से भी भारतीय उपमहाद्वीप के लिए खतरा पैदा कर सकता है। दूसरी ओर दक्षिण एशिया में शक्ति सन्तुलन समाप्त करने के लिए भारत और पाकिस्तान के बीच वैमनस्य को समाप्त करने का कोई भी अवसर गँवाया नहीं जाना चाहिए। दोनों देशों के बीच दोस्ती और भाईचारा कठिन जरूर है, नामुमकिन नहीं। एक मजबूत और स्थिर पाकिस्तान भारत के हित में है। लेकिन मजबूती

82. आनन्द, मधुसूदन, "फिर अपने स्वभाव का बंधक अमेरिका, ईराक प्रकरण के वहाने एक पड़ताल", नवभारत टाइम्स, 18 अगस्त, 1990
83. कुमार, रंजीत, क्र. 78
84. आनन्द, मधुसूदन, "परमाणु युद्ध की धमकी", नवभारत टाइम्स, 13 जनवरी, 1994

और स्थिरता हथियारों से नहीं आती, वह जनता के समर्थन और सही आर्थिक विकास से पैदा होती है।

मुजाहिद्दीन की समस्या

अफगानिस्तान में खल्की क्रान्ति के पश्चात् ही रूसी प्रभाव वाली कम्युनिस्ट सरकार से असन्तुष्ट होकर बड़ी संख्या में अफगान जनता ने पलायन आरम्भ कर दिया।[85] दिसम्बर 1979 में सोवियत सैनिकों के काबुल में प्रवेश के पश्चात् लगभग 30 से 35 लाख शरणार्थी पाकिस्तान में पेशावर के पास आकर बस गए तो पन्द्रह लाख से भी अधिक ईरान की ओर कूच कर गए, इनमें बहुत से राजनैतिक नेता भी थे। सीमा पार पाकिस्तान से उनके धार्मिक व जातिगत सम्बन्धों[86] के कारण पाक सरकार विद्रोहियों को प्रत्यक्ष सहायता प्रदान कर रही थी।[87] साथ ही पाकिस्तान व ईरान में रह रहे इन मुजाहिदों को अमेरिका, चीन, ब्रिटेन व इजिप्ट द्वारा भी अपने-अपने कूटनीतिक स्वार्थों के लिए आधुनिक अस्त्र-शस्त्र तथा आर्थिक मदद दी जाती रही।[88] जहाँ पाकिस्तान का उद्देश्य इस संकट के सहारे पश्चिमी शक्तियों से अधिक से अधिक सहायता प्राप्त करना था।[89] वहीं अमेरिका पाकिस्तान को अफगान विद्रोहियों का मुख्यालय बनाकर तथा उन्हें अधिक से अधिक हथियार पहुंचा कर रूस के लिए अनिश्चतता व अस्थिरता की स्थिति बनाए रखना चाहता था। ताकि अफगानिस्तान उसके लिए वही परिणाम दे, जो अमेरिका को वियतनाम में प्राप्त हुए[90]। चीन ने सोवियत कदम को चुनौती मानते हुए मुजाहिदों के प्रति समर्थन व्यक्त किया[91] और उन्हें सैनिक सप्लाई व प्रशिक्षण के लिए भारतीय सीमा का उल्लंघन करते हुए कराकोरम मार्ग का निर्माण किया।[92] ब्रिटिश विदेशमंत्री लार्ड कैरिंगटन ने भी अफगान विद्रोहियों को हथियार

---

85. न्यूयार्क टाइम्स, 6 सितम्बर, 1979
86. रिजवी, अमीनुल हसन, "द प्रोब्लम्स ऑफ अफगान रिफ्यूजीस", रेडियन्स व्यूज वीकली, 29 सितम्बर से 5 अक्टूबर, 1985, अंक 21, खण्ड 21, पृ. 12
87. बुद्धराज, विजयसेन, "इण्डियाज रिसपोन्स टु द क्राइसिस इन अफगानिस्तान", पंजाब जनरल ऑफ पॉलिटिक्स, जनवरी से जून 1980, अंक 1, खण्ड 4, पृ. 1-8
    - दत्त, विधा प्रकाश, "अफगान वार", सण्डे, 18 फरवरी, 1980, पृ. 15
    - 'द क्रेमलिन आन्सर्स कार्टर' न्यूजवीक 4 फरवरी 1980
88. - वाकमेन मोहम्मद अमीन, "अफगानिस्तान एट द क्रास रोड", (दिल्ली 1985) पृ. 43
    - द कम्पटीशन मास्टर, मार्च 1986, अंक 8, खण्ड 27, पृ. 607
    - पंडित, सी. एस., "इन इण्डिया ग्रोइंग रिलेशन्स, अफगानिस्तान व्हाट लाइज अहेड", वर्ड फोकस जनरल, अप्रैल 1984, अंक 4 खण्ड 5, पृ. 30-32. बनर्जी, ब्रजेन्द्रनाथ, देखिए क्र. 30, पृ. 322-23
89. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 5 फरवरी, 1980
90. चौधरी, नरेन्द्र सिंह, देखिए क्र. 37, पृ. 64-65
91. राय, राहुल, "स्ट्रिगल फॉर सैन्ट्रल एशिया", विकास पब्लिसिंग हाउस, दिल्ली 1982, पृ. 24-44
92. गोयल डी. आर., "टरमौल इन अफगानिस्तान", सिकुलर डेमोक्रेसी, जनवरी 1980, खण्ड 13, अंक 1, पृ. 32-34. लोकसभा डिबेट्स, 21 जुलाई, 1978, अंक 5, खण्ड 16, कॉलम 250-52

आपूर्ति की वकालत की।[93] प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी ने पत्रकार सम्मेलन में कहा कि अफगान विद्रोहियों को मिल रहे प्रचुर सैनिक समर्थन के कारण अफगान सरकार कड़े संघर्ष का मुकाबला कर रही है।[94] किन्तु यह सत्य है कि जिन राष्ट्रों ने भी किसी अन्य देश के विद्रोहियों को शस्त्रापूर्ति में प्रत्यक्ष सहायता की उन्हें उस कार्रवाई का भारी मूल्य चुकाना पड़ा।[95]

अफगान मुजाहिद नेता जिया खान नसेरी ने अपनी भारत यात्रा के दौरान एक साक्षात्कार में कहा कि हम भारत से धन व सैन्य सहायता नहीं चाहते। हम केवल उनका नैतिक और राजनैतिक समर्थन चाहते हैं। उन्होंने बताया कि अफगानिस्तान में रह रहे हिन्दू उनके आन्दोलन को पूरा समर्थन दे रहे हैं। श्री नसेरी ने बताया कि उनके बहुत से संगठन अफगानिस्तान में रूसी आक्रमण को लेकर संघर्ष कर रहे हैं। उनका उद्देश्य एक ऐसे इस्लामिक राज्य की स्थापना है जो पूरी तरह इस्लामिक नीतियों व सिद्धान्तों पर आधारित हो। अमेरिका व रूसी साम्राज्यवाद का उस पर प्रभाव न हो।[96] हिजबे इस्लामी अफगान नेता गुलबुद्दीन हिकमतयार ने पाकिस्तानी समाचार पत्रों में प्रकाशित एक बयान में बड़ी वेदना के साथ कहा कि अगर सोवियत संघ ने हस्तक्षेप न किया होता तो वे अपने मित्रों की मदद से सत्तासीन होते। किन्तु मुजाहिदों को एक झंडे के नीचे एकत्रित करने और उनकी गतिविधियों को एकरूपता प्रदान करने के लिए दल में एक शक्तिशाली प्रतिभावान नेता का अभाव प्रारम्भ से ही रहा है। अफगान मुजाहिदों को सरकार गिराने में पाकिस्तान द्वारा सहयोग दिए जाने पर सोवियत संघ उसे चेतावनी देता रहा है, लेकिन पाकिस्तान ने इसे कभी गम्भीरता से नहीं लिया।[97]

असल में सोवियत सेनाओं को अमेरिका, चीन, पाक के सशस्त्र हस्तक्षेप से इतना खतरा नहीं है, जितना देश के अन्दर अफगान विद्रोहियों के प्रतिरोध से। ये विद्रोही सोवियत सेना से संख्या से अधिक, परन्तु शस्त्रों के मामलें में कमजोर हैं।* फिर भी विदेशियों के प्रति सामान्य घृणा के कारण उनके इस विरोध ने जेहाद का रूप ले लिया है। इन छापामारों के पास टेलीफोन व वायर लैस की सुविधाएं भी हैं। उनके जासूस व मुखबिर काबुल तथा अन्य महत्वपूर्ण इलाकों

93. द टाइम्स, 6 जनवरी, 1981
94. गोयल, डी. आर, "अफगानिस्तान-स्प्रिंग इन द एयर", मैनस्ट्रीम, मार्च 1983, खण्ड 21, पृ. 85-87
हिन्दुस्तान टाइम्स, 18 जनवरी, 1981
- भुट्टाचार्य विवेकरंजन, "इन्दिरा गांधी हर रोल इन वर्ल्ड पीस फारवर्ड वाई पी.वी नरसिंहाराव विदेशमन्त्री", दिल्ली 1984, पृ. 191-218
95. चौधरी, नरेन्द्रसिंह, देखिए क्र. 37, पृ. 64-65
96. इण्टरव्यू विद अमीनुल हसन रिजवी, "अफगानिस्तान, ए मैटर आफ रियल कन्सर्न फॉर इण्डिया", रेडियन्स व्यूज वीकली, 13 जनवरी, 1980, अंक 35, खण्ड 35, पृ. 311
97. गुप्ता, भवानीसेन, देखिए क्र. 31, पृ. 41-15
* विद्रोहियों के पास गोला-वारूद का अभाव है।

में फैले हैं। उन्हें गाँवों की जनता का समर्थन प्राप्त है। सोवियत संघ को चिन्ता इस बात से और भी बढ़ गई कि ईरान-रूस सीमा पर सात डिवीजन सोवियत सेना लगी होने के बावजूद भी ईरान ने विद्रोहियों की सहायता करने की घोषणा कर दी। अब युद्धकला में प्रशिक्षित तथा नए हथियारों से युक्त विद्रोहियों से निपटने के लिए अफगान सेना की कुछ टुकड़ियों को आधुनिक शस्त्रास्त्रों से सज्जित किया जा रहा है। दूसरी ओर अफगान सेना से भागे हुए सैनिक विद्रोहियों से मिल रहे हैं। जिससे विद्रोहियों की संख्या व शक्ति में वृद्धि हो रही है। उनकी कूटयोजना काबुल को समस्त देश से अलग-थलग करके सरकार द्वारा आत्मसमर्पण कराने की है लेकिन सोवियत सेना का प्रमुख हवाई अड्डों व मार्गों पर अभी पूर्ण नियन्त्रण है। विद्रोहियों की कार्रवाइयों के कारण सोवियत संघ द्वारा काबुल व अन्य प्रमुख नगरों में मार्शल ला की घोषणा कर दी गई, जिसका देश में विरोध किया गया।

संसद में भारतीय विदेशमंत्री श्री राव ने एक प्रश्न के उत्तर में बताया कि बहुत से अफगान शरणार्थी भारत आ रहे हैं, उनमें कुछ संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी संगठन से सम्पर्क बना रहे हैं।[98] अमरीकी सूत्रों के अनुसार, भारतीय मुसलमानों द्वारा मुजाहिदों को खाद्य, धन और सैन्य सामग्री भेजे जाने पर विचार किया जा रहा है।[99] भारत की यात्रा पर आए अफगान विदेशमंत्री मोहम्मद दोस्त ने बताया कि पाकिस्तान में मुजाहिदों को दी जा रही सैन्य सहायता अफगान सरकार के लिए खतरनाक है।[100] इसलिए राष्ट्रपति कारमल ने मुजाहिदों से विद्रोही कार्रवाई छोड़कर स्वदेश लौट आने की अपील की है।

अमेरिका की यात्रा के दौरान राष्ट्रपति कारमल ने प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी को बताया कि यद्यपि संकट के समाधान के लिए पाक सरकार सीधे बातचीत के लिए तैयार हो गई है, किन्तु उसने अपने क्षेत्रों में विद्रोहियों के कैम्प, उनका प्रशिक्षण व सैन्य सहायता देना जारी रखा है।[101] विद्रोहियों को अरब देशों से आर्थिक व सैनिक सहायता प्राप्त हो रही है।[102] पाकिस्तान की उत्तरी व दक्षिण सीमाओं पर 70 प्रशिक्षण केन्द्र चलाए जा रहे हैं।[103] श्री कारमल के 20 दिसम्बर, 1982 को मास्को में सम्वाददाता सम्मेलन में कहा कि जब तक विद्रोही सेना पूरी तरह हार नहीं जाती, तब तक देश से रूसी सेनाएं वापस नहीं लौटेगीं।[104]

---

98. लोकसभा डिवेट्स छठा सत्र, सातवीं श्रंखला, 1981 अंक 9, खण्ड 18, पृ. 166-67
99. पैट्रीआट, 5 अगस्त, 1981
100. हिन्दुस्तान टाइम्स, 9 सितम्बर, 1981
101. वही, 30 अगस्त, 1982
102. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 30 अगस्त 1982
103. इण्डियन एक्सप्रेस, 4 अप्रैल, 1982
104. एशियन रिकार्डर, जनवरी 29 से फरवरी 4, 1983, अंक 5, खण्ड 29, पृ. 17005

5 मई, 1983 को यूनाइटेड इण्डिया ने काबुल से जारी रिपोर्ट में कहा कि हजारों शरणार्थी स्वदेश लौट रहे हैं।[105] कड़ी सुरक्षा व्यवस्था के कारण विद्रोहियों के मुख्य केन्द्र कन्धार, काबुल, जलालाबाद, मजार-ए-शरीफ में उनकी कार्रवाइयों में कमजोरी प्रदर्शित हो रही है।[106] पाकिस्तान में रह रहे 35 लाख मुजाहिदों को 1983 में अमेरिका द्वारा 250 मिलियन डालर, तथा अन्य देशों द्वारा 200 मिलियन डालर की सहायता प्राप्त हुई, जबकि 1984 में उन्हें 600 मिलियन डालर की सहायता प्राप्त हुई।[107] जिसमें अमेरिका द्वारा 441 मिलियन डालर सहायता दी गई। पाकिस्तान ने इसमें से 49 प्रतिशत मुजाहिदों पर खर्च की।[108] अमेरिका ने घोषणा की है कि वह 1985 में हथियार, गोला बारूद, दवाइयाँ तथा अन्य सामग्री की अतिरिक्त सहायता देगा।[109] ये विद्रोही पाकिस्तानी सेना के सहयोग से[110] अफगानिस्तान में घुसपैठ कर खून खराबा करते हैं तथा विद्रोही अमरीकी हथियारों से लैस होकर सरकारी इमारतों, स्कूलों अस्पताल, पुल, सड़कों, विकास के संसाधनों व सम्पत्ति को नष्ट कर रहे हैं।[111] अमेरिका द्वारा पाकिस्तान में स्थित मुजाहिदों की मदद से भारत का चिन्तित होना स्वाभाविक है, क्योंकि 20,000 अफगान शरणार्थी पाकिस्तान द्वारा कब्जा किए गए कश्मीर में रह रहे हैं। उनकी विद्रोही कार्रवाइयों से भारत की सुरक्षा को खतरा हो सकता है।[112] उनके पास स्वचालित शस्त्र, एंटी एयर क्राफ्ट हथियार तथा बन्दूकें है।[113] अफगान युद्धक विमानों द्वारा पाकिस्तान में मुजाहिद कैम्पों पर हमले का आरोप लगाते हुए पाकिस्तान ने अमेरिका से अतिरिक्त विमान मांगे हैं।[114] पाक प्रधानमन्त्री मोहम्मद जुनेजो ने प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी के साथ बातचीत में बताया कि जैसे ही रूसी सेनाएं अफगानिस्तान से वापस लौट जाएँगी, सी.आई.ए. शरणार्थियों को सहायता देना बन्द कर देगा और वह अहस्तक्षेप की गारण्टी भी देगा।[115] मुजाहिद नेता मोहम्मद कबीर ने साक्षात्कार में बताया कि "क्षेत्रीय स्वार्थों के कारण ही अफगानिस्तान की यह स्थिति हुई है। पाकिस्तान पश्चिमी देशों तथा मुस्लिम देशों से सहायता

---

105. मुखर्जी, साधन, देखिए क्र. 49, पृ. 213
 - द टाइम्स ऑफ इण्डिया, 29 जून, 1983, अफगान उपप्रधानमन्त्री अब्दुल मुजीद सरबुलंद ने भी इसकी पुष्टि की।
106. मुखर्जी, देखिए क्र. 49, पृ. 241
107. नूरानी, ए.जी., "इण्डियाज पॉलिसी ऑन अफगानिस्तान", इण्डियन एक्सप्रेस, 15 जून, 1985
108. रिजवी, अमीनुल हसन, देखिए क्र. 86
109. चौपड़ा, बी.डी., "इण्डिया अफगानिस्तान कॉमन डेन्जरस", पैट्रीआट, 21 जनवरी, 1985
110. एशियन रिकार्डर, नवम्बर 19-25, 1985, अंक 47, पृ. 18607
111. इण्डियन एक्सप्रेस, 5 मई, 1986
112. मुखर्जी, देखिए क्र. 49, पृ. 148
113. रहमान, एम.ए., "टूवर्ड्स ए सोल्यूशन ऑन द प्राब्लम ऑफ पाकिस्तान, प्राब्लम्स ऑफ नान ए लाइनमेण्ट", जनरल आफ इण्टरनेशनल अफेयर्स मार्च-मई 1984, अंक 2, खण्ड1, पृ. 50-51
114. "क्या पाकिस्तान आक्रमण करेगा", माया, 15 दिसम्बर, 1986, वर्ष 57, अंक 23, पृ. 14
115. गुप्ता, भवानीसेन, "अफगानिस्तान डेड लाक्ड वार", इण्डिया टुडे, जुलाई 31, 1985, पृ. 91

प्राप्त कर विद्रोहियों की मदद कर रहा है। समस्या के समाधान के लिए जहां रूसी सैनिकों को वापस जाना चाहिए, वहीं मुजाहिद्दीन व विद्रोही ग्रुपों को सैन्य सहायता बन्द होनी चाहिए। संयुक्त राष्ट्र के नेतृत्व में वहां एक लोकप्रिय सरकार की स्थापना होनी चाहिए। उन्होंने रूस के साथ ही अमरीकी नीति की भी कड़ी निन्दा की"।[116]

अमरीकी राष्ट्रपति रीगन द्वारा अफगान मुजाहिदों का आर्थिक मदद दिए जाने के दृढ़ संकल्प[117] के फलस्वरूप जहाँ पाकिस्तान नये से नये हथियार अर्जित कर रहा है वहीं दूसरी ओर अफगानिस्तान में संघर्ष की स्थिति में तीव्रता आई है। विरोधी ग्रुपों को पहले से ज्यादा वित्तीय एवं सैनिक सहायता प्राप्त होने से भारत सरकार क्षेत्र की शान्ति और स्थायित्व पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों की ओर से निरन्तर चिन्तित बनी हुई है।[118]

राष्ट्रपति कारमल के त्याग पत्र के पश्चात् नये राष्ट्रपति डा0 नजीबुल्ला ने शरणार्थियों की स्वदेश वापसी हेतु रूसी विदेशमन्त्री शेर्वेत्नात्से के सुझाव पर[119] शान्ति का प्रस्ताव रखा, जिसे पाकिस्तान स्थित मुजाहिदों ने अस्वीकार किया है।[120] वे स्टिंगर विमानों का प्रयोग कर अफगान व रूसी सेना को नुकसान पहुंचा रहे है।[121] इसलिए अफगान सरकार ने चेतावनी दी है कि यदि विद्रोहियों ने संघर्ष जारी रखा तो सरकार उनके प्रति कड़ा रुख अपनाएगी[122] डा0 नजीबुल्ला ने ईरान व चीन द्वारा विद्रोहियों को 200 मिलियन डालर की वार्षिक मदद दिये जाने का विरोध किया।[123] उन्होंने बताया कि शान्ति प्रस्ताव के परिणाम स्वरूप 1000 अफगान मुजाहिदों ने आत्मसमर्पण कर दिया है। वास्तव में मुजाहिद, सरकार की बदली हुई नीति से दुविधा में है[124] उन्होंने सोवियत संघ के साथ शान्ति के लिए इच्छा जाहिर की है।[148] दूसरी ओर सरकार की सुलह योजना के तहत 59 हजार स्वदेश लौटे हुए शरणार्थियों को विभिन्न सुविधाओं के साथ रोजगार की सुविधा दी जा रही है। किन्तु पाकिस्तान इन शरणार्थियों को लौटने में अड़चन उत्पन्न कर रहा है।[126] वहाँ 95 प्रतिशत शरणार्थी कैम्पों में रह रहे हैं।[127]

---

116. द पैट्रीआट, 16 अप्रैल, 1985
117. द हिन्दुस्तान टाइम्स, 8 जून, 1986
118. वार्षिक रिपोर्ट 1983-84, पृ. 3
119. इण्डियन एक्सप्रेस, 8 जनवरी, 1987
120. इण्डियन एक्सप्रेस, 4 जनवरी, 1987
121. वही, 16 दिसम्बर, 1986
122. वही, 17 जनवरी, 1987
123. हिन्दुस्तान टाइम्स, 10 जुलाई, 1986
124. इण्डियन एक्सप्रेस, 19 जनवरी, 1987
125. वही, 5 मार्च, 1987
126. रेडियो मास्को, 19 जून, 1987, सायं 5.10
127. नकवी, सईद, "काबुल स्ट्रगल्स फॉर रिकोन्सिलेशन", हिन्दुस्तान टाइम्स, 6 जनवरी, 1987

एक मुजाहिद नेता मोहम्मद नवीं मोहम्मदी ने कहा कि 104 महीनों में 10 लाख विद्रोही मारे गए हैं।[128] उन्होंने भारत में सिक्ख विद्रोहियों के साथ किसी तरह के सम्बन्ध से इन्कार किया।[129] एमनेस्टी इण्टरनेशनल संस्था (मानवाधिकार संगठन) द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट में कहा गया कि अफगानिस्तान के अन्दरुनी भागों में हुई घटनाओं की रिपोर्ट सरकार द्वारा जारी किए प्रतिबन्धों के कारण देश से बाहर कम ही मिल पाती है, फिर भी प्राप्त सूचनाओं के अनुसार वहां नागरिकों, सरकारी सदस्यों, दुकानदारों, गुप्तचर संस्था के सदस्यों तथा अन्य विभागों के लोगों को सरकार ने विद्रोहियों के साथ मिल जाने व सरकार के विरुद्ध कदम उठाने के आरोप में बन्दी बना रखा है, उन्हें कठोर दण्ड दिया जाता है। इस संस्था ने अफगान सरकार से कहा कि इन बन्दियों के प्रति क्रूर रुख न अपनाकर उन पर मुकद्मे चलाए जाने चाहिए।[130] अफगान विदेशमंत्री ने आरोप लगाया कि जिया के समय में ही अफगानिस्तान को पाकिस्तान के राजनैतिक झंडे के नीचे लाने की योजना बनाई गई थी। जिसके तहत काबुल में मुजाहिद्दीन की सरकार बनने पर, वह आर्थिक निर्भरता तथा इस्लामीकरण के नाते इस प्रस्ताव को मानने के लिए मजबूर होती, किन्तु बेनजीर के काल में मुजाहिदों की असफलता और नजीबुल्ला सरकार की स्थिरता के कारण यह योजना धरी की धरी रह गई।[131]

आठ साल के अनुभव में 50 लाख मुजाहिदों का एक अलग वर्ग बना दिया है, हथियारों की सौदेबाजी, नशीले पदार्थों की तस्करी, मैदान में रहने का अनुभव आदि के बाद जब ये शरणार्थी अफगानिस्तान लौटेंगे, तो बदले हुए होंगे। लाल सेना स्वदेश लौट रही है, पर अपनी सीमा पर आष्ट्रिया अथवा फिनलैण्ड जैसा तटस्थ देश बना कर नहीं।[132] अत: फिलहाल अभी अफगानिस्तान में शान्ति व स्थिरता की उम्मीद दिखाई नहीं देती। मुजाहिद्दीन, रूस का विरोध करने में तो आपस में इकट्ठे हो सकते हैं, परन्तु बाद में इसकी सम्भावना नहीं है। कबीलों में परस्पर मतभेद है। दूसरी बात यह है कि संकट के समय में पाकिस्तान के रास्ते अमरीकी मदद लेना एक बात थी, उसका पिट्ठू बनना बिल्कुल अलग बात है। इसके अतिरिक्त यदि अफगानिस्तान में कट्टरवादिता का ही वातावरण बनता है तो ईरान के शिया कट्टर पंथी पाकिस्तान के सुन्नी कट्टर पंथी से टकरा सकते हैं।[133]

---

128. इण्डियन एक्सप्रेस, 6 जनवरी, 1987
129. वही, 27 दिसम्बर, 1986
130. ब्रिटिश बोर्ड कास्टिंग, विश्व भारती, 19 नवम्बर, 1986, प्रात: 6.40
131. कौल, जवाहर, "पाकिस्तान के बारे में दूरगामी नीति", जनसत्ता, 1987
132. व्यास, हरीशंकर, "अफगानिस्तान में समस्या अन्तरिम सरकार की है", जनसत्ता, 18 फरवरी, 1988
133. गुजराल इन्द्रकुमार, "भारत, अफगानिस्तान के घटनाक्रम के प्रति आंखें नहीं मूंद सकता है", पंजाब केसरी (जालंधर), 14 जुलाई, 1988

अफगान मुजाहिद्दीन भारत के रुख से अधिक सन्तुष्ट नहीं रहे हैं। अफगान राजदूत तथा शिक्षामन्त्री रह चुके अली अहमद पोपली ने रूस में पूर्व भारतीय राजदूत श्री गुजराल से बातचीत में कहा कि आपकी मुश्किलों के समय जब कभी हमें भारत व पाकिस्तान के मध्य चुनाव करना पड़ा तो हमने सदैव आपका ही हाथ पकड़ा और अब हमारा पुराना दुश्मन हमारा साथ दे रहा है, परन्तु आप खुलकर साथ न देकर पल्ला छुड़ा रहे हैं।[134] वास्तव में अफगान विद्रोहियों को लेकर उत्पन्न गम्भीर स्थिति को समाप्त करने के लिए अफगान सरकार को शीघ्रता से प्रयास करने चाहिए। इसके लिए धार्मिक नेताओं से अपील करनी चाहिए, ताकि संघर्ष की स्थिति समाप्त हो सके।

अमेरिका-चीन-पाक गठजोड़

शीतयुद्ध के प्रारम्भ होने पर अमेरिका, चीन व पाकिस्तान सोवियत संघ के खिलाफ संयुक्त रूप से जुड़ गये, जिससे भारत के पास एक ही रास्ता रह गया था कि वह रूस के साथ अपने सम्बन्ध कायम रखे।[135] यद्यपि कार्टर प्रशासन ने आश्वासन दिया कि यह धुरी भारत के विरुद्ध नहीं है। किन्तु अमेरिका की चीन पर विश्वसनीयता और सऊदी अरब की महत्ता को भारत विरोधी कदम स्वीकार किया गया।[136] अमेरिका व चीन पाकिस्तान को बिलियन डालर की सैनिक सहायता देकर विश्व राजनीति की दिशा को ही परिवर्तित कर देना चाहते हैं।[137] इस शस्त्र होड़ से जहां आर्थिक विकास से अधिक सैन्य खर्च में वृद्धि हुई, वहीं भारत-पाकिस्तान के सामान्य सम्बन्धों के प्रयास में रुकावट आई।[138] अमेरिका व चीन पृथक्करण व दबावकारी भूमिका निभा रहे हैं[139] और शक्ति के विस्तार के लिए पाकिस्तान का प्रयोग कर रहे है।[140] वे अफगानिस्तान के खिलाफ अघोषित युद्ध जारी कर[141] वहां सामान्य स्थिति बहाल करने में बाधा उत्पन्न कर रहे हैं।[142] दूसरी ओर भारत-पाक सीमा पर अतिक्रमण से कश्मीर में पाक समर्थक

134. गुजराल इन्द्रकुमार, देखिए क्र. 133
135. गुप्ता, भवानीसेन, देखिए क्र. 31
136. चौधरी, नरेन्द्र सिंह, देखिए क्र. 37 पृ. 98
137. कौल, टी.एन., "सिनो यू.एस. कोल्यूशन, ए सीरियस थ्रेट टू पीस", द्वारा अजहर अन्सारी, "अफगानिस्तान थ्रो इण्डियन आइज", पृ. 25-27
138. कौर, कुलवंत, 'रीसेन्ट डवलपमेण्ट्स इन अफगानिस्तान एण्ड इट्स इम्पैक्ट ऑन इण्डियाज सिक्योरिटी' पंजाब जरनल ऑफ पालिटिक्स, जनवरी-जून 1980, खण्ड 4, अंक 1, पृ. 14
    - द ट्रिब्यून, 4 जनवरी, 1980
139. बनर्जी, सुबराता, "इण्डिया अफगानिस्तान एण्ड द वर्ड- ए स्टडी इन पर्सपैक्टिव", द्वारा अजहर अन्सारी, देखिए क्र. 137, पृ. 70-71
140. कौल, टी.एन., देखिए क्र. 137
141. श्रीवास्तव, गोविंद नारायण, "इण्डिया नॉन एलाइनमेण्ट एण्ड वर्ड पीस", नई दिल्ली 1984पृ. 42-44
142. एशियन रिकार्डर, मार्च 29-अप्रैल 1, 1981, अंक 13, पृ. 15947 श्रीवास्तव, देखिए क्र. 141

तत्वों और पंजाब में खालिस्तानियों को हौसले बुलन्द रखने में मदद मिल रही है।[143] अमेरिका भी आतंकवाद ही चाहता है[144] इसलिए भारतीय अधिकारियों द्वारा दबाव डाले जाने पर भी उसने पाकिस्तान को आतंकवादी राष्ट्र घोषित नहीं किया।

विदेशनीति के मामले जिया बहुत सफल रहे हैं। भारत और अफगानिस्तान के खतरे के नाम पर अमेरिका से हथियार खरीद कर वह पाक जनता को यह विश्वास दिलाने में सफल रहे हैं कि देश की रक्षा के लिए हथियार बहुत जरुरी है।[145] जब भारतीय पत्रकार कुलदीप नैय्यर ने पाक नेता बेनजीर भुट्टो से अफगानिस्तान की मौजूदा हालत के विषय में पूछा तो उन्होंने कहा कि अफगानिस्तान में रूसी फौज के कारण पाकिस्तान पर अमेरिका की पकड़ और ज्यादा मजबूत हुई है। दूसरी ओर पाकिस्तान में इन हथियारबन्द अफगानी छापामारों की वजह से असुरक्षा का भाव पैदा हुआ है। अतः सर्वप्रथम अफगानिस्तान से रूसी फौजे हटें और अफगानिस्तान के साथ शरणार्थियों की वापसी का मसला तय किया जाए।[146] दरअसल, जबसे शाहे ईरान, कम्पुचिया में लोन सरकार गिरी और अमेरिका को वियतनाम खाली कराना पड़ा, इस इलाके में जिया ही ऐसे शासनाध्यक्ष रह गए हैं जिनसे अमेरिका को इस क्षेत्र में सैन्य गतिविधियाँ चलाए रखने में मदद मिल रही है। यही कारण है कि सोवियत संघ को पाकिस्तान की फौजी सरकार पसन्द नहीं।[147]

अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को आधुनिकतम आवाक्स विमान, एफ 16 विमान लेसर टैंक तथा अन्य सैन्य सामग्री दिए जाने पर अफगान सरकार का चिन्तित होना स्वाभाविक है, क्योंकि इससे अफगान मुजाहिदों को अपनी जंग जारी रखने में मदद मिलेगी। किन्तु जहाँ अफगान-पाक सीमा पर पर्वतीय भूमि होने के कारण लेसर टैंक नहीं चल सकेंगे। वही, छापामारों व अफगान सरकार के मध्य चल रही मुठभेड़ों में आवाक्स व एफ 16 जैसी शक्तिशाली प्रणाली की भी आवश्यकता नहीं है। इसीलिए दक्षिण एशिया के सैन्य विशेषज्ञों ने इसे भारत के लिए बहुत ही अशुभ बताया है, इससे तनाव में वृद्धि होगी।[148] प्रधानमन्त्री श्री राजीवगांधी ने कहा कि अमेरिका

143. सक्सेना, राजीव, "पाक सियाचेन को हड़पना चाहता है", रविवार 30 जून-6जुलाई 1985, अंक 42, खण्ड 8, पृ.8
144. स्नेही, भूपेन्द्रकुमार, "क्या खूब है पाकिस्तान के बहाने", रविवार, 14 जून, 1986, खण्ड 9, अंक 41, पृ. 9
145. कृपाल राम, "बेनजीर अकिंचनों नहीं है", रविवार, 27 अप्रैल-3 मई 1986, अंक 35, खण्ड 9, पृ. 56-57
146. "अब तो होगी भुट्टो, बेनजीर भुट्टो से कुलदीप नैय्यर की बातचीत", रविवार, 11-17 मई, 1986, खण्ड 9, अंक 37, पृ 30, 34, 37
147. वैदिक, वेद प्रताप, "क्या चुनाव तक ठहर पाएगा बेनजीर का जादू", धर्मयुग, 11 मई, 1986
148. आज, 13 नवम्बर, 1986

उनका मित्र नहीं हो सकता, पिछले 6 वर्षो में रीगन प्रशासन ने पाकिस्तान को सबसे अधिक सहायता 4.02 बिलियन डालर की सैन्य सहायता प्रदान की।[149]

वास्तव में अमेरिका-पाक सम्बन्ध विश्वास के आधार पर न होकर परिस्थितियों की विवशता के अनुसार बिगड़ते व बनते रहे हैं। पाकिस्तान अमेरिका के दो सैनिक संगठनों सीटो और सेण्टो का सदस्य होते हुए भी अपनी स्वतन्त्र नीति पर चलता रहा और अमेरिका से अधिक साम्यवादी चीन का घनिष्ट मित्र बन गया। समय-समय पर उसने रूस से भी निकट सम्बन्ध स्थापित करने के प्रयास किए, क्योंकि भौगोलिक दृष्टि से सोवियत संघ ही पाकिस्तान को पूर्ण सुरक्षा की गारण्टी प्रदान कर सकता है। किन्तु यह सत्य है कि पाकिस्तान द्वारा चीन व अमेरिका की निर्भरता में विश्वास करना तथा महाशक्तियों के टकराव में फंसना बुद्धिमत्ता नहीं होगी, क्योंकि इससे पाकिस्तान की सुरक्षा को खतरा उत्पन्न हो सकता है। भारत-पाकिस्तान के बीच तनाव रहित सम्बन्ध कायम होने से जहां इस क्षेत्र में शान्ति व स्थिरता को बल मिलेगा, वहीं हमारे आन्तरिक मामलों में विदेशी हस्तक्षेप का खतरा भी दूर हो सकेगा। महज अफगान समस्या के बलबूते पर अमेरिका से पक्का रिश्ता पाकिस्तान के लिए कभी भी घाटे का सौदा साबित हो सकता है। अब जबकि सोवियत संघ अफगानिस्तान से सेनाएं हटाने की तैयारी कर रहा है, अमेरिका, पाकिस्तान में हथियारों का नया अम्बार लगाने चला है। दक्षिण एशिया में शान्ति, मैत्री तथा पाकिस्तान की अखण्डता एवं एकता की रक्षा की गारण्टी इसी में है कि अमेरिका द्वारा प्राप्त होने वाली सैन्य सहायता बन्द हो, नहीं तो तनाव, संशय और दुरभि सन्धियों का वातावरण बना रहेगा।

रूसी विस्तारवादिता

अफगानिस्तान में सोवियत प्रभाव नई घटना नहीं है। परम्परागत रूप से रूस व ब्रिटेन उपनिवेशवाद का प्रतीक रहे है।[150] किन्तु भारत-सोवियत मित्रता सन्धि होते हुए भी उसके विस्तारवाद में भारत का कोई हिस्सा नही रहा।[151] 27 दिसम्बर, 1979 को सोवियत संघ ने एक सन्धि की आड़ लेकर अफगानिस्तान में प्रवेश किया, तब से अफगानिस्तान में सोवियत सैनिक जमे हुए हैं। वहाँ उन्हें जबरदस्त प्रतिरोध का सामना करना पड़ा। इस दौरान हजारों की संख्या में अफगान नागरिक रूसी सैनिकों के हाथों मारे जा चुके हैं।[152] इन 9 वर्षो में लगभग तीन हजार सोवियत सैनिक मारे गये, 35 हजार घायल हुए तथा तीन सौ लापता है। अफगानिस्तान में सेनाएं भेज

149. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 18 जनवरी, 1988
150. चौधरी, नीरजा, 'इण्डिया स्टेण्ड ऑन अफगानिस्तान', हिम्मत वीकली, 22 फरवरी, 1980, पृ. 7-8
151. नैय्यर, कुलदीप, 'रिपोर्ट ऑन अफगानिस्तान', दिल्ली 1981, पृ. 164
152. एशिया चौथी दुनिया, 1988, अफगानिस्तान

कर सोवियत संघ एक अन्तर्राष्ट्रीय जाल में फंस गया। उस पर सोवियत विस्तारवाद तथा क्रान्ति के निर्यात के आरोप है। इसी कारण उसे विश्व राजनीति में अपमानित होना पड़ा।[153] मुख्य रूप से अमेरिका व उसके गठबन्धन के देशों ने इसकी कड़ी आलोचना की और इसे विस्तारवाद का ठोस उदाहरण बताया।

पाक राष्ट्रपति जिया ने अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप पर कहा कि एक महाशक्ति ने कूटनीतिक लाभ के लिए इस क्षेत्र का नक्शा ही बदल दिया। इससे न केवल पाकिस्तान को गम्भीर खतरा उत्पन्न हुआ है बल्कि दक्षिण व दक्षिण पूर्व एशिया की सुरक्षा व स्थिरता को भी खतरा हुआ है।[154] श्री जिया ने कहा कि सोवियत संघ ने निश्चय किया था कि वह सैनिक शक्ति द्वारा समस्या का समाधान खोज लेगा, किन्तु वह असफल हुआ।[155] वास्तव में दुनिया में किसी बड़ी शक्ति को यह हक नहीं है कि वह किसी कमजोर राष्ट्र को दबा सके। विश्व में हो रहे परिवर्तन के दौर में वह दिन दूर नहीं जब अफगानिस्तान को स्वतन्त्र राष्ट्र घोषित किया जाएगा।

(ख) अफगानिस्तान से रूसी सेनाओं की वापसी

अफगानिस्तान में राष्ट्रपति कारमल का त्यागपत्र इस बात का संकेत देता है कि रूस वहां के राजनैतिक हल तथा सेना की वापसी के लिए तैयार है। वह अफगानिस्तान के आन्तरिक मामलों से दूर रहना चाहता है। वास्तव में कारमल रूसी सहायता के बावजूद सत्ता में पूरी तरह सफल नहीं हुए। उनके शासन काल में विद्रोहियों की विघटनकारी व अलगाववादी नीति कायम रही।[156] नये राष्ट्रपति नजीबुल्ला ने कहा कि उनकी सरकार गुरिल्लों को पराजित कर शान्ति स्थापित करने के लिए संकल्प बद्ध है। वे इसके लिए अफगान जनता का सहयोग चाहते हैं।[157]

सत्तासी के पूरे साल सोवियत कूटनीति द्वारा इसी उद्देश्य के लिए काम होता रहा कि लाल सेना की स्वदेश वापसी के बाद सत्तारुढ़ पी.डी.पी.ए. की अहम् भूमिका बनी रहे। सेना की वापसी की अवधि में भी धीरे-धीरे परिवर्तन आ रहा है। 1986 में जहां सोवियत सेना चार साल की मोहलत चाहती थी, फरवरी 1987 में सोवियत नेताओं ने 16 महीने का प्रस्ताव रखा। दिसम्बर में वाशिंगटन में रीगन-गोर्वाच्योव की शिखर वार्ता के दौरान सोवियत प्रवक्ता ने

---

153. जनसत्ता, 30 जुलाई, 1988
154. एशियन रिकार्डर, 12-18 मार्च, 1983, अंक 11, पृ. 170277-78
155. स्टेट्समैन, 16 नवम्बर, 1984
156. बत्स, दिनेश कुमार, 'अफगान समस्या जिनेवा वार्ता की सार्थकता', आज, 29 जुलाई, 1986
157. दैनिक जागरण, 26 मई, 1986

12 महीनों में लाल सेना का लौटना सम्भव बताया। अब कहा जा रहा है कि दस महीने में सभी सैनिक अफगानिस्तान छोड़ देंगे।[158]

विश्व शासन व्यवस्था में अपनी बदली हुई नीति के तहत सोवियत नेता गोर्वाच्योव ने कहा कि अगली सरकार का मामला अफगानों का अपना है, जिसे वे स्वयं सुलझा सकते हैं। क्रेमलिन अफगानिस्तान में बाहरी दखलन्दाजी नहीं होने की गारण्टी चाहता है। किन्तु छापामारों के संयमित रहने की कोई गारण्टी नहीं दे सकता, मुजाहिद, कम्युनिस्टों को उखाड़ने की हर सम्भव कोशिश करेंगे। यही कारण है कि राष्ट्रपति नजीब द्वारा 15 जनवरी, 1988 को छह महीने की लडाई बन्दी की घोषणा का सिर्फ दो सप्ताह अमल हुआ। तत्पश्चात् मुजाहिदों को देश की मुख्य धारा से जोड़ने के लिए 15 जुलाई को नए संविधान का प्रारुप जारी हुआ। देश में नजीब के राजनैतिक दांव और लाल सेना के बृहद अभियान, दोनों भविष्य के कार्यक्रम को ध्यान में रख कर चलाये जा रहे हैं।[159] 8 फरवरी को सोवियत टेलीविजन पर श्री गोर्वाच्योव ने जेनेवा वार्ता की शर्तो को मानते हुए 15 मई से दस महीने के भीतर पूरी सेना की वापसी की राजनैतिक घोषणा की। काबुल में बिना साझा सरकार की स्थापना के सेना की वापसी मुजाहिद, पाकिस्तान और अमेरिका के लिए हतप्रभ करने वाली बातें हैं।[160] वर्तमान सरकार के लिए भी यह कदम कठिनाई भरा हो सकता है। इसी घोषणा के साथ ही पाकिस्तान व ईरान में रहने वाले लाखों मुजाहिदों और बड़े विद्रोही संगठनों में सहयोग के लिए बातचीत प्रारम्भ हो गई[161]

अफगान समझौता

अफगान समझौता बीसवीं सदी का चमत्कार ही है कि जहां एक अपराजित समझी जाने वाली महाशक्ति को कुछ हजार स्वाभिमानी अफगानों के सामने झुकना पड़ा। किन्तु मोहरा बना कर महाशक्तियां जिस हाल में अफगानिस्तान को छोड़ रही हैं, उससे अफगान संकट खत्म नहीं होगा।

समझौते में अफगानिस्तान, पाकिस्तान के साथ सोवियत संघ और अमेरिका के प्रतिनिधि मण्डलों ने शिरकत की, किन्तु अपनी अस्मिता की आजादी के लिए लड़ने वाले अफगान समझौते में कहीं नहीं है। यद्यपि कोर्दोवेज ने अफगानों के बीच सुलह करा कर काबुल की सत्ता में

---

158. व्यास, हरीशंकर, 'अफगानिस्तान में समस्या अन्तरिम सरकार की है', जनसत्ता, 18 फरवरी, 1988
159. व्यास, हरीशंकर, देखिए क्र. 158
160. वही
161. चाखो, अरूण, 'अफगानिस्तान विदड्रावल सिमटम्स, व्हाट विल हैपिन आफ्टर द सोवियत्स लीव', इण्डिया टुडे, 15 मार्च, 1988

सभी की भागीदारी की कोशिश का भरोसा दिलाया है, फिर भले ही अफगानिस्तान, ईरान या लेबनान बन जाए या निरंकुश साम्यवादी शिंकजे में जकड़ जाए। क्या यह महाशक्तियों की नैतिक जिम्मेदारी नहीं थी कि वे काबुल में वही व्यवस्था कायम करा कर अपने हाथ खींचे जो सोवियत हस्तक्षेप से पहले थी। गृहयुद्ध की स्थितियां पैदा करके हाथ खींचना तो अपराध है। वास्तव में समझौता तो महाशक्तियों के स्वार्थो की खातिर हुआ। इसलिए समझौते के बाद महाशक्तियों का शक्ति परीक्षण रुक सकता है, मगर अफगान समस्या नहीं सुलझने वाली।[162]

सोवियत सेना अफगानिस्तान में न जीती और न हारी। गत्यवरोध की स्थिति बनी रही। अफगानिस्तान में लाल सेना के कारण निर्गुट विरादरी और अरब इस्लामी देश सहित सभी पश्चिमी देशों को अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में सोवियत संघ की घेराबन्दी का मौका मिला। दूसरी ओर सोवियत अर्थव्यवस्था में सुधार के लिए भी आवश्यक था कि उनके संशाधनों की बचत हो* इसलिए सोवियत नेता समझौते के मार्फत सेना वापसी के सम्मानजनक रास्ते की तलाश में है।[163] यदि इन सबका पूर्वानुमान होता तो शुरु से अन्तरिम सरकार की शर्त होती और महाशक्तियों के बीच निरस्त्रीकरण आदि मामलों की सौदेबाजी आसान बनती।

अफगान समस्या के समाधान हेतु सम्पन्न जिनेवा समझौता दोनों महाशक्तियों की यह स्वीकारोक्ति है कि ताकत के बूते पर वे जो चाहे वह नहीं कर सकते। इस नाते अब उम्मीद की जा सकती है कि वियतनाम, अफगानिस्तान जैसे किस्से कम होंगे। चार हिस्सों में बँटे समझौते के मुताबिक अफगानिस्तान और पाकिस्तान एक दूसरे के मामलों में दखलन्दाजी नहीं करेंगे। अफगान शरणार्थियों की स्वेच्छा से और सुरक्षित वापसी हो सकेगी। सोवियत संघ को इस समझौते से अपनी अन्तर्राष्ट्रीय छवि सुधारने का निश्चित ही लाभ मिलेगा, पर समझौते को आंशकाओं से मुक्त नहीं कहा जा सकता। पेशावर में रह रहे मुजाहिद्दीन नेता गुलबुद्दीन ने कहा कि समझौता मानने को हम बाध्य नहीं हैं। रूसी सैनिकों की वापसी होने लगे तब भी हम हमला करेंगे। दूसरी ओर दोनों महाशक्तियां अपने-अपने पक्षों के पास हथियारों का भारी जखीरा छोड़ कर और जंग में बराबर की स्थिति बना कर हाथ पीछे खींच रही हैं। महाशक्तियों के हस्तक्षेप नहीं करने की गारण्टी देने के बाद काबुल में राष्ट्रीय सरकार बने और विदेशनीति निर्गुट हो तो अफगानिस्तान स्वतन्त्र व तटस्थ राष्ट्र की पहचान प्राप्त कर सकता है। वास्तव में सोवियत हस्तक्षेप

---

162. व्यास, हरीशंकर, 'अफगान समझौता, मोहरा बने, जीते और छले भी गए', जनसत्ता, 1988

* अफगानिस्तान अभियान में 208 अरब रूपये (आर्थिक मदद की लागत अलग) मास्को को खर्च करने पड़े

163. कौल, जवाहर, 'अफगान युद्ध पाकिस्तान पर भारी पड़ सकता है', जनसत्ता, अक्टूबर 1989

ने अफगानों को एक राष्ट्रीय पहचान दी है। उससे पहले अफगान कबीलों और भाषायी व नस्लीय परकोटों में बटे हुए थे। एक महाशक्ति को पीछे हटने के लिए मजबूर करना इन अफगानों की बड़ी कामयाबी है।[164]

रूसी सेना की वापसी के सम्बन्ध में समझौते पर देरी के दो प्रमुख कारण है; एक, अमेरिका चाहता था कि रूस को उसी तरह अफगानिस्तान से कालिख पोत कर जाना पड़े जैसे अमेरिका को वियतनाम से जाना पड़ा था। उधर पाकिस्तान को दर्द है कि 30 लाख शरणार्थियों की उपस्थिति से न केवल उसकी अर्थव्यवस्था गड़बड़ा रही है, बल्कि 'ड्रगमाफिया' भी पाकिस्तानी राजनीति और सामाजिक रिवायतों के सिर पर चढ़ कर बोलने लगा है।[165] दूसरा, वाशिंगटन समझौते के पश्चात् भी सोवियत संघ को उलझाये रखना चाहता है। इसलिए उसने घोषणा की कि अमेरिका तब तक अफगान विद्रोहियों को हथियार देता रहेगा जब तक सोवियत संघ अफगान सरकार को हथियार देता रहेगा।[166]

अफगानिस्तान में भविष्य की शासन प्रणाली को लेकर समझौते की धाराओं में पूरी तरह अमल न होने की वजह से अनिश्चय उत्पन्न हुआ है। रूसी विदेशमन्त्री शेवेर्दनात्से डा0 नजीब को ही मान्य करना चाहते हैं, किन्तु इसके लिए अमेरिका, पाकिस्तान व मुजाहिद्दीन तैयार नहीं है।[167] जब सोवियत सेनाओं के रहते नजीब सरकार का सिर्फ काबुल और उसके इर्द-गिर्द के बीस मील क्षेत्र और कुछ प्रान्तों के बड़े शहरों पर नियन्त्रण है, तब सोवियत सेना की वापसी के बाद वह बढ़ने वाला नहीं है। अफगान सैनिकों की संख्या तीस से पैंतालीस हजार के बीच मानी जाती है। सरकार की स्थिति सुदृढ करने के लिए सोवियत सेना हथियारों का इतना बड़ा जखीरा अफगान सेना के लिए छोड़े जा रही है कि वे मुजाहिदों पर हावी रहेंगे। सेना का हौंसला बनाये रखने के लिए जहां सीमा पर सोवियत सैनिकों का जमाव रहेगा, वहीं रूसी सलाहकार भी काबुल में बने रहेंगे।

किन्तु देश के 85 प्रतिशत हिस्से पर नियन्त्रण रखने वाले 300 छापामार मोर्चे में सक्रिय किसी छापामार गुट ने अफगान समझौते को मन से नहीं स्वीकारा। वास्तव में ये मुजाहिद्दीन तथा इनका समर्थन कर रहे मुस्लिम देश एक तो कम्युनिस्टों को अपने आसपास से दूर देखना चाहते हैं, तथा दूसरी ओर रूसियों के हटने पर उनकी पुनर्वापसी भी नहीं देखना चाहते।[168]

---

164. व्यास, हरीशंकर, देखिए क्र. 162
165. जोशी, त्रिनेत्र, 'अफगानिस्तान का अतीत ही भविष्य का आईना है', जनसत्ता, 14 अप्रैल, 1988
166. जनसत्ता, 24 अप्रैल, 1988
167. दीत्रि, 'रूसी सैनिकों की वापसी के बाद', दिनमान, 28 फरवरी, 1989, पृ. 70-71
168. जोशी, त्रिनेत्र, देखिए क्र. 165

महाशक्तियों ने अफगानिस्तान को जिस अन्तहीन गृह युद्ध में धकेल दिया है, उससे उम्मीद है कि समझौते के बाद अफगानिस्तान में न तो कम्युनिस्ट शासन, न खुमैनीवाद और न ही पाक इस्लामी क्रान्ति का शासन होगा, बल्कि लेबनान की तरह अलग-अलग गुटों के प्रभाव में रहेगा।[169] ये स्थितियां भारत तथा पाकिस्तान दोनों के लिए चिन्ताजनक हो सकती है। किन्तु अफगानिस्तान में दोनों देशों के हित समान नहीं है। अगर पाकिस्तान से लगाकर ईरान तक कट्टर इस्लामी कड़ी बनाने में अफगानिस्तान सहायक होता दिखाई दिया तो पाकिस्तान खुश होगा, मगर यह भारत के लिए एक नई चुनौती साबित होगी[170] और यदि अफगानिस्तान में धर्मनिरपेक्ष सरकार बन गई तो जिया स्वयं को सुरक्षित अनुभव नहीं करेंगे। जिया का अफगानिस्तान में फँसाव भारत के हक में है, क्योंकि ऐसी स्थिति में पंजाब तथा जम्मू कश्मीर के उग्रवादियों को हथियार व गोला बारूद देते रह कर जिया भारत को नाराज करना नहीं चाहेंगे। किन्तु भारत इसमें सफल होगा, यह कठिन प्रश्न है। अफगानिस्तान के मुल्ला अपने बूते पर गद्दी हथियाने की कोशिश नहीं कर सकते, वे पाकिस्तान की ही तरह दूसरों के मार्फत असरदार हो सकते हैं।[171] दूसरी ओर पाक नेताओं को डर है कि अफगान समस्या के समाधान हो जाने तथा शरणार्थियों के स्वदेश चले जाने पर पाकिस्तान को मिल रही अनाप-सनाप सैनिक व आर्थिक सहायता से काफी हद तक हाथ धोना पड़ेगा, जो उनके राष्ट्र के अस्तित्व के लिए कम खतरनाक नहीं होगा।[172] किन्तु अमरीकी रक्षामन्त्री क्रोनॉजी ने इस्लामाबाद को विश्वास दिलाया कि चाहे सोवियत संघ द्वारा अफगान समस्या का समाधान हो जाए फिर भी अमेरिका पाकिस्तान को सहायता देना बन्द नहीं करेगा।[173] पाकिस्तान तथा अमेरिका की गतिविधियों पर भारतीय संसद (लोकसभा) में रक्षा राज्यमन्त्री श्री संतोष मोहनदेव द्वारा चिन्ता व्यक्त की गई।[174] वास्तव में भारत, अफगानिस्तान के घटनाक्रम के प्रति आँखें नहीं मूँद सकता। क्योंकि अफगानिस्तान की आन्तरिक अस्थिरता उसकी सीमाओं तक ही सीमित नहीं रहेगी। बल्कि यह लावा वहीं बह निकलेगा, जहाँ इसको कमजोर जमीन नजर आएगी।[175]

दिल्ली में एक राष्ट्रीय सम्मेलन में भारतीय विदेश सचिव ने अपने भाषण में कहा कि अफगानिस्तान में सभी गुटों को एक हो जाना चाहिए। भारत चाहता है कि गुटनिरपेक्ष देश के

---

169. व्यास, हरीशंकर, देखिए क्र. 162
170. जनसत्ता, 22 अप्रैल, 1988
171. जैन, गिरिलाल, "पाकिस्तान का दो मुँहापन 'इस्लामीकरण' इलाज नहीं है", दिनमान, 15 जुलाई, 1988
172. जोशी, त्रिनेत्र, देखिए क्र. 165
173. दूरदर्शन समाचार, 14 अप्रैल, 1988
174. इण्डियन एक्सप्रेस, 5 मई, 1988
175. गुजराल, इन्द्र कुमार, देखिए क्र. 133

रूप में अफगानिस्तान को मान्यता दी जाए। इस सम्मेलन में रूस व अफगानिस्तान के राजदूत भी उपस्थित थे।[176] श्री राजीव गांधी ने कहा कि दोनों देशों के बीच साहित्य, संस्कृति व अन्य क्षेत्रों में आदान-प्रदान बढ़ना चाहिए। हम मजबूत सार्वभौम अफगानिस्तान के पक्ष में है। इसके लिए वहाँ स्थायी सरकार का होना जरुरी है।[177] किन्तु अफगानिस्तान के भविष्य की चिन्ता में हमें न तो रूस की ओर उन्मुख होकर चलना चाहिए और न ही अफगानिस्तान में किसी एक पक्ष की उंगली थामते दिखाई देना चाहिए। अफगानिस्तान की आन्तरिक हालत अभी इतनी अनिश्चित है कि उसके भविष्य के बारे में कोई निश्चित बात नहीं की जा सकती। अतः नजीबुल्ला के बजाय संयुक्त राष्ट्र की कोशिशों से अपने को जोड़ना अधिक लाभदायक होगा। यद्यपि यह सत्य है कि नजीबुल्ला का सत्ता में टिके रहना भारत के हित में है। इससे पाकिस्तान अपने मंसूबे में कामयाब नहीं होगा, सोवियत संघ का काबुल से जुड़ाव बना रहेगा और मास्को व पेइचिंग निकट नहीं आ सकेंगे।

प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी ने अफगान राष्ट्रपति नजीब को जेनेवा समझौते की प्रशंसा तथा सुदृढ़ सरकार की स्थापना[178] के लिए भारत यात्रा का निमन्त्रण दिया। दरअसल, सोवियत सेना की वापसी भारत के लिए सबक है। जिस प्रकार अफगानिस्तान में लाल सेना को कुछ हजार जुनूनी छापामारों का सामना करना पड़ा था, भारतीय शान्ति सेना भी श्रीलंका में ऐसे ही तमिल लड़ाकों से लड़ रही है, परन्तु समस्या और स्थिति में बहुत फर्क है। अमेरिका को भी वियतनाम में सालों तक गलतफहमी रही कि उसकी सेना कम्युनिस्टों को खत्म कर देगी। हमें भी वियतनाम और अफगानिस्तान के अनुभव से मान लेना चाहिए कि श्रीलंका अब भारत का 'रिसता घाव' है। अफगान छापामारों को हराने में जैसे लाल सेना असफल रही, शान्ति सेना की भी वही दशा हो सकती है।[179]

अफगान राष्ट्रपति नजीबुल्ला ने 4 मई को भारत की यात्रा की। उन्होंने राष्ट्रपति वैंकटरमन, प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी तथा अन्य भारतीय नेताओं से बातचीत में जेनेवा समझौते द्वारा उत्पन्न अफगानिस्तान की स्थिति से अवगत कराया। श्री वैंकटरमन ने कहा कि वे अफगानिस्तान को एक शक्तिशाली स्वतन्त्र व गुटनिरपेक्ष राष्ट्र के रूप में देखना चाहते हैं, ताकि वहाँ जनता शान्ति व विकास को अपना सके।[180] डा0 नजीब ने श्री राजीव गांधी से बातचीत में आशा प्रकट की

---

176. दूरदर्शन समाचार, 15 फरवरी, 1988
177. दैनिक जागरण, 21 अप्रैल, 1988
178. देखिए, क्र. 176
179. व्यास, हरिशंकर, "क्या अफगानिस्तान से सबक लेंगे", जनसत्ता, 5 मई, 1988
180. इण्डियन एक्सप्रेस, 5 मई, 1988

कि अफगान समस्या पर जेनेवा समझौते का सम्बन्धित सभी देश पालन करेंगे।[181]

वास्तव में डा0 नजीबुल्ला की यात्रा सामान्य यात्रा नहीं थी। भारत ने पहले कभी अफगानिस्तान के कम्युनिस्ट नेता तराकी, अमीन और बबरक कारमल को अपने यहां यात्रा का निमन्त्रण नहीं दिया। सोवियत सेना की वापसी तय होने के बाद भारत ने नजीब सरकार से अपने को जोड़ना शुरु किया। भारत पहला गैर कम्युनिस्ट देश है। जिसने नजीबुल्ला को बुलाकर उनकी सरकार को समर्थन दिया। नजीब को इसकी आवश्यकता थी, पहल भारत की रही, आखिर भारत का नजीब सरकार से जुड़ना निर्गुट बिरादरी, सार्क और दक्षिण-पश्चिम एशिया की राजनीति आदि हर दृष्टि से महत्वपूर्ण है।[182]

सोवियत सेना की वापसी के पहले चरण के साथ ही डा0 नजीबुल्ला ने काबुल में मुजाहिदों को राष्ट्रीय सुलह के लिए निमन्त्रण दिया। एक तरफ राष्ट्रपति की प्रेस कान्फ्रेन्स चल रही थी और दूसरी तरफ पहाड़ियों से छापामार काबुल पर राकेट से हमले कर रहे थे। इसका अर्थ यह नहीं कि काबुल में नजीबुल्ला की स्थिति कमजोर है। किन्तु लम्बे समय तक उनका सत्ता पर बने रहना असम्भव है। यद्यपि भारत सरकार ऐसी सम्भावनाओं को महत्त्व नहीं देती, किन्तु भारत की अपनी भू-राजनैतिक सामरिक चिन्ताएं है। सोवियत सेना की वापसी के बाद पाकिस्तान और ईरान समर्थक सरकार बनने की सम्भाबना है। मुजाहिद्दीन गुट के प्रमुख नेता गुलबुद्दीन हिकमतयार अपने आप को पाकिस्तान का इतना अहसानमन्द मानते हैं कि अफगानिस्तान और पाकिस्तान के एक संघ की बात करते हैं। इससे भारत-अफगानिस्तान के बेहतर सम्बन्ध समाप्त होंगे।[183] परन्तु यह सत्य है कि रूस की फौजें हटने के बाद भी दिल्ली और मास्को के हित अफगानिस्तान से जुड़े रहेंगे। अमेरिका भी भले ही काबुल में मास्को की कठपुतली सरकार न चाहता हो, पर शायद वहां कोई कट्टरपंथी सरकार भी उसको स्वीकार नहीं होगी।[184]

अमरीकी सरकार के प्रवक्ता ने भारत द्वारा नजीबुल्ला सरकार को समर्थन दिये जाने को अनुचित ठहराया।[185] उन्होंने कहा कि मौजूदा सरकार गैर कानूनी है। अमेरिका अफगानिस्तान में लोकतान्त्रिक सरकार बनने पर, वहां लड़ाई की वजह से देश की खराब हुई आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए तथा 50 लाख शरणार्थियों के पुनर्वास के लिए, मानवीय आधार पर 14.20 करोड़ डालर की मदद दे सकेगा।[186]

181. दूरदर्शन समाचार, 6 मई, 1988
182. व्यास, हरिशंकर, "हारते घोड़े पर भारत का दाँव", जनसत्ता, मई 1988
183. वही
184. गुजराल, इन्द्र कुमार, देखिए, क्र. 175
185. इण्डियन एक्सप्रेस, 7 जुलाई, 1988
186. जनसत्ता, 9 जुलाई, 1988

15 मई से रूसी सैनिकों की वापसी प्रारम्भ हो गई।[187] इस बीच रूस व अफगानिस्तान की ओर से पाकिस्तान द्वारा अफगान विद्रोहियों को मदद दिए जाने पर चेतावनी दी जाती रही कि पाकिस्तान यदि समझौते को तोड़ने की हरकतें करता रहा तो रूस भी अपने वायदे से मुकर सकता।[188] दूसरी ओर पाकिस्तानी पत्रकार शाहनवाज ने कहा कि रूस, अफगानिस्तान से लौटते हुए अफगान सेना को एक अरब डालर के सैनिक साजो सामान देकर जा रहा है, यह जेनेवा समझौते के खिलाफ है।[189] संयुक्त राष्ट्र महासचिव ने भी कहा कि रूस को अफगानिस्तान में जनता द्वारा निर्वाचित सरकार व देश की परम्पराओं को स्वीकार करना चाहिए।[190] प्रधानमन्त्री श्री गांधी ने संयुक्त राष्ट्र के प्रस्तावों का समर्थन करते हुए जहाँ निर्वासित सरकार बनाए जाने पर खेद प्रकट किया, वहीं देश में हस्तक्षेप न करने की जोरदार मांग की। उन्होंने कहा कि इस वक्त सबसे ज्यादा जरुरत राष्ट्रीय एकता, पुनर्निर्माण और विकास की है, जिसके लिए अफगान सरकार पूरी कोशिश कर रही है, हमें उनकी मदद करनी चाहिए।[191]

जेनेवा समझौते के तहत 15 फरवरी को अफगानिस्तान से अन्तिम रूसी सैनिक ने विदा ली। एक सौ दस महीने बाद सोवियत सैनिकों और मुजहिदों दोनों ने राहत की सांस ली। इस लड़ाई में लगभग 10 लाख लोगों की जानें गई। पहली बार सोवियत संघ किसी देश में अपनी विजय पताका लहराये बिना खाली हाथ स्वदेश लौटा। सोवियत संघ की कुल मिला कर वैसी ही स्थिति रही, जैसी वियतनाम में अमेरिका की थी।[192] यद्यपि गोर्वाच्योव के नेतृत्व में सोवियत संघ ने कई व्यावहारिक व महत्त्वपूर्ण निर्णय लिए। किन्तु उनकी नीतियाँ अफगानिस्तान में परस्पर सहमति से बनने वाली सरकार का आधार बना सकने में विफल रही।[193]

सोवियत सेना की वापसी के बाद अफगानिस्तान में घटनाक्रम तेजी से चला है। राष्ट्रपति नजीब व विद्रोही मुजाहिद्दीन के बीच बातचीत की कोशिशें नाकाम रही हैं।[194] अत: गृहयुद्ध की सम्भाबना से इन्कार नहीं किया जा सकता। देश में अपनी पकड़ मजबूत बनाये रखने के लिए डा0 नजीब ने 45000 अवकाश प्राप्त सैनिकों की सेवाएं प्राप्त करने का ऐलान किया है, किन्तु

---

187. इण्डियन एक्सप्रेस, 1 जून, 1988
188. इण्डियन एक्सप्रेस, 15 जून, 1988
 -दूरदर्शन समाचार, 28 जून, 1988
189. आल इण्डिया रेडियो, उर्दू सर्विस, जहाँनुमा, 26, जून, 1988
190. इण्डियन एक्सप्रेस, 6 जुलाई, 1988
191. जनसत्ता, 18 जुलाई, 1988, इण्डियन एक्सप्रेस, 18 जुलाई, 1988
192. दीत्रि, देखिए क्र. 167
193. हुसैन, मुशाहिद, "सोवियत संघ अफगानिस्तान से सम्मानजनक ढंग से बाहर निकलने के चक्कर में", भूतपूर्व सम्पादक द मुस्लिम, पंजाब केसरी (जालन्धर), 25 अक्टूबर, 1988
194. गंगबार, महेश्वर दयाल, "अफगानिस्तान शान्ति छली गई", दिनमान, 31 मार्च, 1989, पृ. 49

आम अफगान जहीरशाह की वापसी के हक में है।[195] सोवियत संघ के आग्रह पर भारत ने कूटनीति क्षेत्र में कुछ ऐसे कदम उठाये जिसके अन्तर्गत अफगान समस्या के शान्तिपूर्ण समाधान हेतु काबुल में मिली-जुली सरकार की स्थापना के लिए भूतपूर्व अफगान नरेश जहीरशाह से सम्पर्क स्थापित किया गया, किन्तु उन्हें कार्यान्वित करने में वरती गई लापरवाही के कारण सारी कोशिशें विफल हुई।[196] डा. नजीब ने जहाँ क्षेत्रीय स्थिरता के लिए अपने समर्थकों से पाकिस्तानी विस्तारवाद के खतरों से देश की रक्षा की अपील की, वहीं ईरान से सम्बन्ध सुधारने के प्रयास किए। किन्तु ईरान सरकार का मत था कि जब तक मुजाहिद्दीन नजीब सरकार के खिलाफ लड़ाई जीत नहीं जाते, ईरान-अफगान सम्बन्धों में सुधार नहीं हो सकेगा[197] सच तो यह है कि नजीबुल्ला आए तो अपनी शर्तो पर थे, लेकिन भाषा वह भी सोवियत संघ की बोलते रहे।[198]

पेशावर में मुजाहिद्दीन के 7 गुटों के गठबन्धन की शूरा की पहली बैठक में अन्तरिम सरकार कायम करने के मुद्दे पर विचार किया गया, किन्तु शिया और सुन्नी गुटों में परस्पर असहमति के कारण बातचीत बिना किसी निष्कर्ष के समाप्त हो गई।[199] वास्तव में मुजाहिद्दीन के जो धड़े एक हुए हैं, उनमें स्वार्थ अनेक हैं, कुल मिला कर अफगानिस्तान में शान्ति पूर्ण सरकार की स्थापना स्थायित्व पा सकेगी, यह आशा शंकाओं और निराशाओं से घिरी है। देश के कुछ उदारवादी नेता समाज को अगर कम्युनिस्ट रास्ते पर नहीं तो कम से कम अयातुल्ला खुमैनी के रास्ते पर भी नहीं चलाना चाहते।[200]

जब राष्ट्रपति नजीबुल्ला राष्ट्रीय सहमति के लिए प्रयास कर रहे थे, तभी विद्रोहियों ने जलालाबाद में कब्जा करने की नीयत से देश के सबसे बड़े अस्त्रागार समर खेल पर जबर्दस्त हमला कर दिया। इस लड़ाई में अफगान सेना और नागरिकों ने जिस साहस का परिचय दिया, उससे नजीब सरकार के हौसले बुलन्द हुए हैं।[201] दरअसल विद्रोही जलालाबाद में अपनी अन्तरिम सरकार के मन्त्रिमण्डल की पहली बैठक करना चाहते थे। इससे उनकी अन्तरिम सरकार को मान्यता मिलने का अवसर खुल जाता। फिलहाल तो पाकिस्तान की प्रधानमन्त्री बेनजीर भुट्टो ने भी उनकी सरकार को मान्यता देने से इन्कार किया है। किन्तु इस्लामी सम्मेलन संगठन ने अन्तरिम सरकार को संगठन में अफगानिस्तान का स्थान देकर इस दिशा में पहल की है।[202]

195. दीत्रि, देखिए क्र. 167
196. सिंह, राय, "अफगानिस्तान में कूटनीति के दाँवपेच", जनसत्ता, 14 अप्रैल, 1989
197. पंजाब केसरी (जालन्धर), 13 फरवरी, 1989
198. दीत्रि, देखिए क्र. 202
199. इण्डियन एक्सप्रेस, 15 फरवरी, 1989
200. जोशी, त्रिनेत्र, "एक त्रासद सच्चाई है अफगानिस्तान", जनसत्ता, 14 फरवरी, 1989
201. गंगबार, महेश्वर दयाल, देखिए क्र. 194
202. वही

बुश सरकार ने निर्णय लिया है कि वह विद्रोहियों की सरकार को तब तक मान्यता नहीं देगी, जब तक उसका नियन्त्रण अफगानिस्तान की धरती के खास हिस्से पर नहीं हो जाता और वे लोकप्रिय सरकार का गठन नहीं करते।[203] पाकिस्तान व अमेरिका से समर्थन प्राप्त विद्रोही काबुल पर दबाव बनाये रखने की कोशिश में है, उन्हें बातचीत की कोई पेशकश मंजूर नहीं है। नजीबुल्ला के पूरे दबाव के बावजूद खोस्त कस्बे में अन्तरिम सरकार के लिए मन्त्रिमण्डल की पहली बैठक हुई।[204] पाकिस्तान व ईरान स्थित मुजाहिदों के प्रतिनिधियों की संयुक्त बैठक (शूरा) में आगामी अफगान सरकार की रूपरेखा तैयार की गई। इस दौरान मुजाहिद्दीन दो धड़ों में बट गये हैं, एक पेशावर में सात पार्टियों का गठजोड़, दूसरा, देहाती इलाकों के तेहरान में जमा आठ गुट। इससे कामयाबी के फल के बटवारे के प्रयास में बागियों की एकता का प्रयास ढह गया।[205] यद्यपि ईरान व पाकिस्तान इस बात पर सहमत हो गए हैं कि वे परस्पर सहयोग से नजीबुल्ला का तख्ता पलट कर इस्लामी शासन की नींव रखे।[206]

सोवियत विदेशमन्त्री शेवेर्दनात्से चीन यात्रा के पश्चात् इस्लामाबाद आए, ताकि पाकिस्तान से समझौता करके पेशावर स्थित छापामार मुजाहिदों द्वारा अफगानिस्तान में किए जा रहे खून-खराबे की रोकथाम की जा सके। इसके लिए पाकिस्तान ने मांग की कि यदि सोवियत नेता अफगानिस्तान में शान्ति चाहते हैं, तो उन्हें अपने भारत व पाकिस्तान के साथ सम्बन्धों में सन्तुलन करना चाहिए। रूसी विदेशमन्त्री ने उन्हें आर्थिक सहायता की पेशकश करते हुए नजीब को समर्थन देने की बात की, किन्तु पाकिस्तान ने मुजाहिदों द्वारा बनाई गई सरकार में सहयोग की मांग की। इस प्रकार बातचीत बिना किसी स्थायी समझौते के समाप्त हो गई।[207]

इस प्रकार रूसी सेनाओं की वापसी के पश्चात् जहां चीन के रुख में परिवर्तन आया है, वहीं अमेरिका व पाकिस्तान पहले से अधिक मुजाहिदों की मदद कर रहे है। इसके बावजूद मुजाहिद्दीन किसी मोर्चे पर कामयाब नहीं हो पाए हैं, मुकाबले के लिए सुप्रशिक्षित अफगान सेना के साथ घमासान लड़ाई जारी है। सम्भवतः यदि अमेरिका व पाकिस्तान विद्रोहियों को सहायता बन्द कर दे तो वे अपनी आक्रामक मुद्रा त्याग कर बातचीत के रास्ते पर आ सकते है।[208] भारत ने संयुक्त राष्ट्र संघ में पाकिस्तान का नाम लिए बिना कहा कि अफगानिस्तान में हस्तक्षेप समाप्त

---

203. पंजाब केसरी (जालन्धर), 20 मार्च, 1989
204. गंगवार, देखिए क्र. 194
205. गुप्ता, शेखर, "पाकिस्तान में मुशहिद हुसैन और ब्यूरो रिपोर्ट, अफगानिस्तान बिरादरों में दो-दो हाथ" इण्डिया टुडे, वर्ष 3, अंक 9, 1-15 मार्च, 1989 पृ. 28-31
206. सिंह, राय, देखिए क्र. 196
207. वही
208. दिनमान, 30 अप्रैल, 1989, पृ. 53

होना चाहिए, इससे देश की सुरक्षा को खतरा उत्पन्न हो गया है।[209] अफगान विदेशमन्त्री अब्दुल वकील ने अफगानिस्तान की स्थिति से अवगत कराते हुए बताया कि उन्हें संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा खाद्य सामग्री दवाइयां व अन्य आवश्यक वस्तुएं प्राप्त हो रही हैं, साथ ही भारत द्वारा गुटनिरपेक्ष देशों को दी जाने वाली मानवीय सहायता के रूप में सहायता सामग्री प्राप्त हो रही है।[210]

शान्ति समझौता हुए पूरा एक साल हो गया, लेकिन युद्ध समाप्त होते नजर नहीं आ रहा है।[211] काबुल इलाके के शक्तिशाली छापामार नेता अब्दुल हक के गुट ने धमकी दी थी कि अगर सोवियत समर्थक नजीबुल्ला सरकार एक पखवाड़े में हथियार नहीं डालती तो वे प्रक्षेपास्त्रों से पूरे शहर को खाक कर देंगे। एक दशक पहले शुरु हुई लड़ाई में पहली बार अफगान-अफगानों के खिलाफ खड़े हैं। महाशक्तियों ने अपने आपसी रिश्ते ठीक बनाये रखने के लिए अफगानिस्तान की यही किस्मत तय की है।[212]

राष्ट्रपति नजीबुल्ला पस्त होने को तैयार नहीं, वे विद्रोहियों के साथ मुकाबला तथा शान्ति के लिए अपील, दोनों ही रास्ते अपना रहे हैं। एक वरिष्ठ अधिकारी ने बताया कि नजीब सरकार यदि तीन चीजें बचा ले जाएं तो बच सकती है- जिसमें जलालाबाद को हाथ से न निकलने दे, सोवियत संघ के रास्ते सलांग राजमार्ग पर कोई बाधा न आने दे और काबुल हवाई अड्डे को कामकाज लायक बनाये रखे, ताकि रूसी मालवाहक विमान वहां हर हफ्ते हजारों जरुरी चीजें पहुंचा सके।[213] अफगान विद्रोही पाक सेना की मदद से जलालाबाद में बमबारी कर रहे है। यदि जलालाबाद पर मुजाहिद्दीन कब्जा कर लेते हैं तो उनके लिए काबुल पहुँच जाना सरल हो जाएगा[214] दूसरी ओर ईरान में रह रहे मुजाहिदों की ओर से दक्षिणी-पश्चिमी सीमा पार कर हेरात क्षेत्र की ओर से आक्रमण किया जाता रहा है।[215] किन्तु जबसे जलालाबाद की ओर जंग तेज हुई है, यह सीमा शान्त है। भारत में सोवियत राजदूत ने चेतावनी दी कि अगर पाकिस्तान ने विद्रोहियों के साथ अफगानिस्तान में अपनी फौजें भेजना बन्द नहीं किया तो दोनों देशों के बीच सीधी जंग हो जाएगी।[216] दूसरी ओर राष्ट्रपति नजीब ने पूर्ण युद्ध विराम की शर्त पर देश में नई सरकार के गठन के लिए निष्पक्ष चुनाव कराने का प्रस्ताव रखा।

---

209. इण्डियन एक्सप्रेस, 21 अप्रैल, 1989
210. इण्डियन एक्सप्रेस, 16 मार्च, 1989
211. दिनमान, 30 अप्रैल, 1989, पृ. 53
212. गुप्ता, शेखर, देखिए क्र. 205
213. वही
214. पंजाब केसरी (जालन्धर), 20 मार्च, 1989
215. गुप्ता, शेखर, "अफगानिस्तान स्टेज ऑफ साइज", इण्डिया टुडे, 31 मार्च, 1989, पृ. 154-57
216. कौल, जवाहर, "अफगानिस्तान युद्ध पाकिस्तान पर भारी पड़ सकता है", जनसत्ता, अक्टूबर 1989

अफगानिस्तान से रूसी सैनिकों की वापसी के पश्चात् भी समस्या का समाधान नहीं होने से[217] चिन्तित भारत भी है और शान्तिकामी दूसरे देश भी। युद्ध जर्जर अफगानिस्तान के पुनर्निर्माण में हाथ बटाने की भारत की आकांक्षा भी सहज व मानवीय संवेदना का परिणाम है।[218] भारत तुरन्त युद्ध विराम व बातचीत के पक्ष में है। भारत द्वारा अफगानिस्तान को असैनिक सहायता भेजे जाने पर पाकिस्तान ने आरोप लगाया कि भारतीय सेना अफगान सेना के साथ युद्ध में भाग ले रही है, जबकि हकीकत इसके विपरीत है।

अफगान समस्या का तत्काल कोई समाधान न देख नजीबुल्ला ने एक बार फिर संयुक्त राष्ट्रसंघ का दरवाजा खटखटाया है। यह विश्व संगठन युद्ध विराम कराने में किस हद तक कामयाब होता है, यह महत्त्वपूर्ण बात होगी।[219] यद्यपि संयुक्त राष्ट्र के अथक प्रयास के पश्चात् 1988 में सम्बद्ध पक्षों के बीच जिनेवा में समझौता हो सका था, किन्तु यह सत्य है कि अफगान सरकार और बाह्य शक्तियों द्वारा सहायता प्राप्त मुजाहिदों के संघर्ष को समाप्त कराने में संयुक्त राष्ट्र संघ असफल रहा है।[220]

20 अगस्त, 1989 को अफगान स्वतन्त्रता की 70वीं वर्षगांठ पर डा0 नजीब ने गृहयुद्ध समाप्त करने के उद्देश्य से नई शान्ति योजना में काबुल में व्यापक आधार वाली सरकार बनाने की बात रखी है।[221] यद्यपि मुजाहिदों में परस्पर एकता का अभाव है।[222] फिर भी सशस्त्र संघर्ष के जरिए उन्होंने पूरे देश में आतंक व अस्थिरता का राज्य कायम किया। इस नई शान्ति योजना को सोवियत संघ ने समर्थन प्रदान किया है। पर मुजाहिदों की अन्तरिम सरकार ने इसे मानने से इन्कार कर दिया है, वे पी.डी.पी.ए. सरकार का पूर्ण पतन चाहते हैं।[223] वास्तव में मुजाहिदों को काबुल पर कब्जा करने में जितनी देर होगी, उनका लक्ष्य उतना ही दूर होता जाएगा।[224]

नजीब की शान्ति योजना तीन प्रमुख घटनाक्रमों से प्रभावित है; प्रथम- मुजाहिद्दीन तथा वर्तमान अफगान सरकार को संरक्षक महाशक्तियों द्वारा अत्यधिक शस्त्रों की आपूर्ति से गृहयुद्ध का जोर पकड़ना, द्वितीय- अफगान समस्या पर कूटनीति क्रियाकलापों का नवीनीकरण तथा तृतीय-

---

217. यूरी वन्दूरा, "अफगानिस्तान न्यू डाइमेन्शन", इण्डियन एक्सप्रेस, 13 अप्रैल, 1989
218. गंगवार, देखिए, क्र. 194
219. दिनमान, 30 अप्रैल, 1989
220. गुप्ता, शेखर, "अफगानिस्तान स्टोपिंग अप द फायर", इण्डिया टुडे, 15 अप्रैल, 1989, पृ. 44-47,
221. प्रभाकर, प्रवीण, "अफगानिस्तान, मज़बूत स्थिति में आ गए हैं नजीब", दिनमान, 15 सितम्बर, 1989, पृ. 51
222. गुप्ता, शेखर, "अफगानिस्तान इण्ड गेम मैनी ईयर्स", इण्डिया टुडे, 15 जुलाई, 1989, पृ. 107-8
223. प्रभाकर, देखिए क्र. 221
224. कौल, जवाहर, देखिए क्र. 216

अमेरिका व पाकिस्तान का अफगान सरकार के प्रति अपरिवर्तनीय रुख।[225] बेलग्रेड में शुरु होने वाले निर्गुट सम्मेलन से ठीक पहले डा0 नजीब की नई शान्ति योजना पर स्वाभाविक रूप में चर्चा हुई। इस सम्मेलन में उन्हें समर्थन की उम्मीद है। किन्तु अमेरिका व पाक की नीतियों के कारण नजीब की योजना कामयाब हो पाएगी, इसमें संदेह है।[226]

यद्यपि मुजाहिद्दीन ग्रुप के नेता प्रोफेसर शिब्धातुल्लाह-अल-मुजाद्दीदी ने कहा कि अब स्वयं मुजाहिद्दीन युद्ध नहीं चाहते।[227] किन्तु पूरे देश में शान्ति कायम करने के लिए आवश्यक है कि मुजाहिद वार्ता के लिए तैयार हो। परन्तु सरकार के साथ लड़ाई करते हुए स्वयं विभिन्न मुजाहिद गुटों में टकराव उत्पन्न हुआ है। एक ओर जमायत-ए-इस्लामी और बहरुद्दीन रब्बानी गुट ने मोर्चा सम्भाला है तो दूसरी ओर हिजबे इस्लामी और मौलवी यूनिस गुटों ने। काफी समय बाद अब अफगानिस्तान में रहने वाले ताकतवर अहमद शाह गुट ने उत्तरी अफगानिस्तान के सलांग राजमार्ग पर हमले शुरु किए हैं। उनका मकसद इस मार्ग से काबुल सरकार को मिल रही रूसी मदद को रोकना व तबाह करना है। नजीबुल्ला ने अपनी कूटनीति के तहत अफगानिस्तान के अन्दर सक्रिय मुजाहिद्दीन गुटों और पाकिस्तान में टिके हुए मुजाहिद्दीन गुटों के बीच दरार डालते हुए देश के भीतर रहने वाले मुजाहिदों को सत्ता में पूरी भागीदारी की पेशकश की है।[228] इस प्रकार रूसी सेनाओं की वापसी के बाद अफगान सरकार के जबर्दस्त मुकाबले से न केवल मुजाहिद कमजोर पड़े हैं, बल्कि अपने कूटनीतिक अभियानों द्वारा अमेरिका, ब्रिटेन व पाकिस्तान ने जो नजीब सरकार को गिरने की आस लगाई थी, बेकार सिद्ध हुई।[229]

महाशक्तियों के मध्य हुई माल्टाशिखर वार्ता विश्व शान्ति एवं निरस्त्रीकरण की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण प्रयास है। इससे सामरिक शस्त्रों की कटौती के लिए रास्ता आसान हुआ है तथा यूरोप में व्यापक परिवर्तन की सम्भावना बढी है।[230] ऐसा प्रतीत होता है कि गुटनिरपेक्षता का महत्त्व कम हो रहा है, क्योंकि बड़ी शक्तियां लड़ाई नहीं, बल्कि शान्ति से एक दूसरे के साथ रहने को तैयार हैं।[231] पाकिस्तान में अमरीकी राजदूत रॉबर्ट ओक्ले द्वारा इस्लामाबाद में 24 जुलाई को जारी की गई प्रेस विज्ञप्ति में कहा गया कि बहुआयामी राजनैतिक

---

225. प्रभाकर, देखिए क्र. 221, पृ. 51
226. वही
227. गुप्ता, शेखर, देखिए क्र. 222
228. कौल, जवाहर, देखिए क्र. 216
229. वही, प्रभाकर, देखिए क्र. 221,
230. मनोज कुमार, 'माल्टा शिखर वार्ता-व्यापक परिवर्तन पर सहमति', दिनमान टाइम्स, 17-23 दिसम्बर, 1989
231. कायल, एम. वी., 'गुटनिरपेक्ष आन्दोलन-क्या साख कायम रहेगी, अपने को बचाए रखने के लिए निर्गुट देशों को फिर से सोचना होगा', दिनमान टाइम्स, 12-18 अगस्त, 1990

और आर्थिक परिवर्तनों के साथ सोवियत संघ के विरुद्ध अमरीकी लड़ाई समाप्त हो गई है।[232]

रूस और अमेरिका के बीच शीत युद्ध की समाप्ति से तनाव शैथिल्य का जो सिलसिला शुरु हुआ उससे अफगानों को अपनी समस्या खुद हल करने जैसी स्थितियां पैदा हो रही हैं। नजीब ने सत्ता में स्थायित्व के लिए रूस से सहायता प्राप्त कर अपने बयानों और प्रशासन में इस्लाम को उचित महत्त्व देकर, अफगानों की कम्युनिस्ट विरोधी मानसिकता की एक हद तक भर पाई कर, मुजाहिदों से पहल छीन ली है। ईराक द्वारा ईरान की हार तथा पाकिस्तान में लोकतन्त्र की वापसी के बाद जहाँ मुजाहिद्दीन का महत्त्व कम हुआ है। वहीं इससे नजीब को अप्रत्यक्ष सहायता मिली है। रूस व अमेरिका के बीच बढ़ती सहजता से पेशावर स्थित मुजाहिद्दीन गुटों को हथियार मिलना भी कम हुआ है। इसलिए अब न तो रूस नजीबुल्ला को अतिरिक्त समर्थन देने की विवशता अनुभव कर रहा है और न अमेरिका इस पुरानी जिद पर अड़ा है कि नजीबुल्ला को हटाये बिना कोई समाधान हो ही नहीं सकता। अब उनका मत है कि नजीबुल्ला पद पर बने रहेंगे, पर चुनाव इस तरह करवाये जाएँ कि नजीबुल्ला उन्हें प्रभावित न कर सकें।[233]

अफगान विदेशमन्त्री अब्दुल वकील की भारत यात्रा पर भारतीय विदेशमन्त्री श्री गुजराल ने कहा कि भारत, अफगानिस्तान के साथ आर्थिक, व्यापारिक व तकनीकी सहयोग में रुचि रखता है। श्री वकील ने कहा कि अफगानिस्तान में राजनैतिक, आर्थिक परिवर्तन हो रहे है। इसलिए आवश्यकता है कि अफगानिस्तान के मित्र देश उसके पुनर्निर्माण में अधिक से अधिक सहयोग करें।[234] एक करोड़ 60 लाख की आबादी वाले इस देश में पिछले 12 वर्षों से चल रही लड़ाई में करीब दस लाख लोगों की जान ली है, पन्द्रह लाख व्यक्ति अपंग हो गए हैं और अर्थव्यवस्था बुरी तरह लड़खड़ा गई है।[235] डा0 नजीबुल्ला की शान्ति योजना के फलस्वरूप संयुक्त राष्ट्र की देखरेख में पाकिस्तान से शरणार्थी अफगानिस्तान लौट रहे हैं। विभिन्न एजेंसियाँ उनको बसाने तथा सुरक्षा का प्रबन्ध कर रही है।[236] डा0 नजीब के अनुसार कि 1988 में जेनेवा समझौते के बाद पाकिस्तान ने 10,523 बार उसका उल्लंघन किया है और इस पर अफगानिस्तान ने 1,324 बार संयुक्त राष्ट्र का ध्यान दिलाया है। उन्होंने कहा कि संयुक्त राष्ट्रसंघ इस समझौते का गारण्टी दाता है, उसे इसका अनुपालन कराना चाहिए।[237] दूसरी ओर मुख्य मुजाहिद्दीन ग्रुपों में सरकार

---

232. अख्तर, खालिद, "अमेरिका की अफगान नीति में बदलाव", दिनमान टाइम्स, 12-18 अगस्त, 1990
233. काबुल में स्थानीय होती समस्या, नवभारत टाइम्स, 7 अगस्त, 1990
234. दूरदर्शन समाचार, 13 जून, 1990
235. नवभारत टाइम्स, 6 अगस्त, 1990
236. दूरदर्शन समाचार, 28 जुलाई ,1990
237. नवभारत टाइम्स, 31 अगस्त, 1990

बनाने के लिए समझौते के संकेत मिले है। किन्तु ये मुजाहिद्दीन इतने समझौते कर चुके है कि अब इनके किसी समझौते पर विश्वास नहीं किया जाता।[238]

अफगान उपराष्ट्रपति अब्दुल रहीम हतीफ ने कहा कि अफगान समस्या का समाधान युद्ध के जरिए नहीं हो सकता। अतः विपक्ष भी सरकार में भागीदारी करे और पुनर्वास के कार्य में सहयोग करे। संशोधित नए संविधान के अनुसार अफगानिस्तान एक स्वतन्त्र, एकात्मक, अविभाज्य एवं इस्लामी राष्ट्र है। किन्तु विदेशमन्त्री वकील कहते है कि अफगानिस्तान में धार्मिक कट्टरता के लिए कोई जगह नहीं है।[239] उन्होंने बी.बी.सी. में एक साक्षात्कार में कहा कि पाक प्रधानमन्त्री बेनजीर भुट्टो की बर्खास्तगी से अफगान समस्या सुलझाने में बाधा उत्पन्न होगी।[240]

नजीब की भारत यात्रा

राष्ट्रपति डा0 नजीब की भारत यात्रा पर प्रधानमन्त्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह ने बातचीत में कहा कि सभी देशों को गुटनिरपेक्षता को स्वीकार कर उसके सिद्धान्तों पर चलना चाहिए।[241] राष्ट्रपति वैंकटरमन ने आशा व्यक्त की कि संयुक्त राष्ट्रसंघ की देख-रेख में हो रहे चुनाव में डा0 नजीब को समर्थन मिलेगा। उन्हें दुःख है कि जेनेवा वार्ता से सम्बद्ध सभी पक्षों ने समझौते का पूरी तरह पालन नहीं किया है।[242] उन्होंने विघटन कारी शक्तियों से प्रभावशाली ढंग से निपटने पर नजीबुल्ला की प्रशंसा करते हुए[243] कहा कि वहाँ बिना किसी हस्तक्षेप के बातचीत द्वारा शान्ति व स्थिरता की स्थापना की जा सकती है।[244] राष्ट्रपति नजीब ने सम्वाददाता सम्मेलन में कहा कि कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है, वहां किसी तरह की अशान्ति तथा अस्थिरता भारत तथा पाकिस्तान दोनों के लिए हानिकारक है।[245] उन्होंने कहा कि अफगान समस्या के समाधान में रूस और भारत की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है।[246] अफगान राष्ट्रपति ने कहा कि कुछ समूहों को छोड़ कर सारा अफगान समाज बातचीत से समाधान चाहता है। उन्होंने एक सवाल के जवाब में कहा कि चुनाव शान्ति फार्मूलों का एक भाग है। डा0 नजीब ने अफगानिस्तान व भारत के आन्तरिक मामलों में दखल देने के लिए पाकिस्तान की कड़ी भर्त्सना की।[247]

---

238. बी.बी.सी. लन्दन, इस्लामाबाद से लीस डोसेज की रिपोर्ट, 30 सितम्बर, 1990
239. नवभारत टाइम्स, 6 अगस्त, 1990
240. दूरदर्शन समाचार, 8 अगस्त, 1990
241. दूरदर्शन समाचार, 8.40 सांय, 29 अगस्त, 1990
242. आकाशवाणी, 30 अगस्त, 1990
243. नवभारत टाइम्स, 8 अगस्त, 1990
244. दूरदर्शन समाचार, 31 अगस्त, 1990
245. दूरदर्शन समाचार, 30 अगस्त, 1990
246. नवभारत टाइम्स, 31 अगस्त, 1990
247. वही

अमेरिका ने कहा है कि जब तक मुजाहिदों का सरकार से किसी प्रकार का समझौता नहीं होगा, अमेरिका इन मुजाहिदों को शस्त्र सहायता देता रहेगा।[248] इस खतरे को देखते हुए अफगान विदेशमन्त्री अब्दुल वकील ने संयुक्त राष्ट्र महासभा में कहा कि पाकिस्तान विद्रोहियों को अमेरिका से प्राप्त ऐसे अस्त्र-शस्त्र दे रहा है जो जान-माल को अधिक नुकसान पहुंचाते है। श्री वकील ने कहा कि अफगान समस्या के समाधान के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन बुलाना चाहिए।[249]

अफगान विदेशमन्त्री की भारत यात्रा पर भारतीय विदेशमन्त्री श्री विद्याचरण शुक्ल ने एक सुदृढ़, स्वतन्त्र तथा गुटनिरपेक्ष अफगानिस्तान के आर्थिक व तकनीकी विकास में भारतीय सहयोग का विश्वास दिलाया।[250] उन्होंने अफगान जनता द्वारा समस्या के स्वयं समाधान किए जाने पर बल दिया। अफगानिस्तान से रूसी सेनाओं की वापसी हुए दो वर्ष हो चुके हैं। किन्तु वहां युद्ध अभी भी चल रहा है। यद्यपि अल्प परिवर्तन हुए हैं, उसका श्रेय डा0 नजीबुल्ला को जाता है।[251]

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि यदि रूसी सेनाओं के पश्चात् की स्थिति पर दृष्टिपात करें तो मुजाहिद्दीन अफगान रक्षाबलों को चुनौती देने की स्थिति में नहीं है, केवल पाकिस्तानी सेना की खुली भागीदारी ही उनके इरादों में दम भर सकती है, अगर अमेरिका सख्त एतराज करे तो पाकिस्तान इस किस्म का समर्थन जारी नही रख सकता। नैतिक और वित्तीय दृष्टि से दुर्बल हो चुके सऊदी अरब के बहावी शासन से कितना भी समर्थन क्यों न मिले, वह ऐसे विद्रोह को बनाये रखने के लिए काफी नहीं होगा। इस प्रकार बड़ी शक्तियों को अपने प्रभाव का प्रयोग करते हुए काबुल में सर्वसम्मत की सरकार की स्थापना का मार्ग प्रशस्त करना चाहिए।

(ग) सोवियत संघ का विखण्डन एवं एक ध्रुवीय शक्ति का प्रादुर्भाव

शीत युद्ध की समाप्ति पर दुनिया भर में राहत की सांस ली गई और शान्ति की बीन बजाई गई। लेकिन अब भी इस दुनिया में कम से कम बीस जगह युद्ध चल रहे हैं। वोस्निया-हर्जेगोबिना, रवांडा, यमन, अफगानिस्तान और सोमालिया में काफी खून खराबा हो रहा है। हजारों निरपराध लोग मारे जा रहे है। जिससे स्पष्ट है कि अब लड़ाई दो देशों के बीच नहीं, बल्कि एक ही

248. बी.बी.सी. लन्दन, प्रात: 6.20, 3 अक्तूबर, 1990
249. दूरदर्शन समाचार, 8.45 सांय, 6 अक्टूबर, 1990
250. नवभारत टाइम्स, 10 फरवरी, 1991
251. बी.बी.सी. लन्दन, विश्व भारती, 6.30 प्रात:, 11 अक्टूबर, 1990

देश के विभिन्न सम्प्रदायों या जातियों में होगी।[252]

सोवियत संघ प्रारम्भ से ही भारत का अच्छा दोस्त रहा है। दोनों को कहीं न कही एक दूसरे की जरुरत रही है। जब उसका अमेरिका के साथ शीत युद्ध चल रहा था, तब सोवियत संघ को भारत के रूप में एक सच्चा शुभ चिन्तक मिला। भारत अपने सैनिक साज-सामान के लिए पूरी तरह सोवियत संघ पर निर्भर होता गया। सोवियत संघ के दोस्त हमारे दोस्त हुए और पश्चिमी यूरोप तथा अमेरिका में हमें सोवियत संघ का पिट्ठू माना जाने लगा। सोवियत संघ दुनिया के मुक्ति संग्रामों का शुभचिन्तक, गुटनिरपेक्ष आन्दोलन का मददगार तथा पूंजीवादी लड़ाई लड़ने वाला योद्धा था। किन्तु यथार्थ यह है कि अमेरिका के साथ प्रतिस्पर्धा में वह सैनिक दृष्टि से भले ही महाशक्ति हो, पर दिन-प्रतिदिन वह अन्दर से खोखला होता गया, वहाँ का समाज भी भीषण बुराइयों से ग्रसित था, जो मीडिया के नियन्त्रण के कारण कभी सामने नहीं आया। फिर भी गोर्वाच्योव के सोवियत संघ के साथ हमारी हमदर्दी बनी रही।[253] वास्तव में सोवियत नेता मिखाइल गोर्वाच्योव ने अपनी गतिशीलता और कल्पना शीलता से कई ऐसे काम किए कि वे लेनिन के बाद सबसे बड़े नेता के रूप में उभरे, लेकिन उनका देश लगातार कमजोर होता गया। देश को एक विचार सूत्र में बांधने वाली कम्युनिस्ट पार्टी लोकतान्त्रिक आकांक्षाओं की राष्ट्रव्यापी आंच में पिघलकर अपना एकाधिकार छोड़ने को विवश हो चुकी थी।[254]

सोवियत संघ के सबसे बड़े गणतन्त्र रूस में गैर कम्युनिस्ट राष्ट्रपति वोरिस येल्तसिन बागी थे। उनके अनुसार सोवियत संघ के कानून उनके यहां नहीं चलेंगे। अन्य गणराज्य मोल्डाविया, उक्रेन, वाइलोरशिया, तीन वाल्टिक गणतन्त्र, लिथुआनिया, लात्विया और एस्तोनिया अलग होने को अमादा थे। राष्ट्रपति गोर्वाच्योव की ओर से एक नये महासंघ की योजना पेश की गई, ताकि साम्यवाद के केन्द्रीय दुर्ग को किसी तरह बचा लिया जाए किन्तु स्वयं उनकी सरकार का तख्ता पलटने की असफल कोशिश की गई। अब रूस पश्चिमी जर्मनी, फ्रांस और इटली की ओर, अजरबैजान ईरान की ओर, तो वाल्टिक गणतन्त्र फिनलैण्ड और नार्वे की ओर देख रहे हैं, भारत की ओर देखने वाले गणतन्त्र में प्रमुख है उजबेकिस्तान। ऐसी स्थिति में सोवियत संघ चीन के साथ विचारधारागत मतभेदों के बावजूद सम्बन्धों को फिर प्रज्ज्वलित करना चाहता है। जिसका अर्थ है कि सोवियत संघ के लिए नई दिल्ली की अहमियत अब पहले जैसी नहीं रह जाएगी।

---

252. आनन्द, मधुसूदन, "रक्षा पर जितना समूची दुनियां खर्च करती है उतना अकेले ही अमेरिका करता है", नवभारत टाइम्स, 2 जून, 1994
253. आनन्द, मधुसूदन, "राव की रूस यात्रा की धूम ज्यादा क्यों नहीं मची", नवभारत टाइम्स, 6 जुलाई, 1994
254. आनन्द, मधुसूदन, "भारत-सोवियत के रिश्तों का बदलता यथार्थ", नवभारत टाइम्स, 31 जुलाई, 1990

वैसे भी अफगानिस्तान, कम्बोडिया और दक्षिण अफ्रीका के मुद्दों पर भारत की जो जरुरत पहले सोवियत संघ को थी, वह अब नहीं रही है। जहां तक सोवियत संघ के साथ आर्थिक सम्बन्धों का सवाल है, वे भी अब पूर्ववत् नहीं रह सकते। दूसरी ओर रूस के परमाणु हथियार मुक्त विश्व बनाने के आग्रह इतने प्रबल हैं कि भविष्य में वह अमेरिका और पश्चिमी देशों की तरह भारत को परमाणु अप्रसार सन्धि पर हस्ताक्षर करने के लिए विवश कर सकता है। इस तरह हथियारों के क्षेत्र में भी भारत को रूस के साथ आगे चल कर कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है।[255]

सोवियत संघ के बिखरने से कम्युनिस्ट नेतृत्व का मसला भी समाप्त हो गया। इसके दो महत्त्वपूर्ण नतीजे हुए है। एक, सोवियत संघ का एकीकृत एवं केन्द्रित राष्ट्र के रूप में विघटन और दूसरा, इसके परिणामस्वरूप बारसा सन्धि के सैनिक गुट एवं सोवियत संघ का एक अतिसक्षम सैनिक शक्ति के रूप में अन्त। इससे दुनिया का दो शक्तिशाली फौजी ध्रुवों का विभाजन खत्म हो गया और सैनिक शक्ति के रूप में अमेरिका का संसार पर वर्चस्व कायम हो गया। आर्थिक क्षेत्र में सोवियत गणराज्यों की स्थिति अमेरिका और पश्चिमी देशों के सामने याचक की बन गई है। यही कारण है कि सोवियत रूस अब अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में पश्चिमी गुट के विरोध में कोई प्रतिरोधात्मक भूमिका अदा नहीं कर सकता।[256]

इस शक्ति समीकरण का प्रथम उदाहरण ईराक द्वारा कुवैत पर कब्जा करने के बाद साल के प्रारम्भ की घटनाओं में देखने को मिला। पहली बार वीटों का प्रयोग नहीं होने से संयुक्त राष्ट्र महासभा और सुरक्षा परिषद् अपने पारम्परिक पक्षाघात से मुक्त रहे और ईराक के विरुद्ध निषेध व बहिष्कार के प्रस्ताव लागू किए जाते रहे। सम्भवतः दुनियों के अधिकांश देशों का बहिष्कार एक लम्बी अवधि में सद्दाम हुसैन को कुवैत छोड़ने पर मजबूर करता। लेकिन अमेरिका को अपने शक्ति परीक्षण और प्रदर्शन के मौके की तलाश थी।[257] सोवियत संघ का कहना था कि ईराक से कुबैत खाली कराने के लिए जो भी सेना बने वह संयुक्त राष्ट्र संघ के दिशा निर्देश में बने, पर अमेरिका ने इसे नहीं माना। सुरक्षा परिषद् द्वारा की गई ईराक की नाकेबन्दी की तामील कराने के लिए संयुक्त राष्ट्र निर्देशों की अवहेलना कर अमेरिका ने स्वयं ही जज और पुलिस मैन की दोहरी भूमिका निभाई।[258] संयुक्त राष्ट्र की बेबसी का आलम यह

---

255. आनन्द, मधुसूदन, "भारत-सोवियत के रिश्तों का बदलता यथार्थ", नवभारत टाइम्स, 31 जुलाई, 1990
256. सिन्हा, सच्चिदानन्द, "विश्व 1991 दूर तक जाने वाला साल", नवभारत टाइम्स, 18 सितम्बर, 1991
257. वही
258. आनन्द, मधुसूदन, "ईराक प्रकरण के बहाने एक पड़ताल, फिर अपने स्वभाव का बन्धक बना अमेरिका", नवभारत टाइम्स, 18 अगस्त, 1990

था कि वह अमरीकी कार्रवाई को अनुचित मानते हुए भी उसे रोक नहीं पाया। इस प्रकार की कार्रवाई को रोकने के लिए विश्व बिरादरी के पास कोई यन्त्र अवश्य होना चाहिए। तीसरी दुनिया के देशों के लिए निर्गुट आन्दोलन निश्चय ही अहम् भूमिका निभा सकता है।

इस तरह अमेरिका ने संयुक्त राष्ट्र की अनुमति का सहारा लेकर एक ऐसा सैनिक हस्तक्षेप किये जो अनाणविक हथियारों द्वारा किया गया आज तक का सबसे बड़ा विध्वंस और नरसंहार था। इस युद्ध ने यह साबित कर दिया कि तीसरी दुनिया द्वारा खरीदे गए अति आधुनिक हथियारों का प्रयोग वे इनके निर्माता पश्चिमी देशों के विरुद्ध नहीं कर सकते। इसमें चेतावनी थी कि आने वाले युद्ध तकनीकी क्षमता और इलैक्ट्रानिक उपकरणों के होंगे। इसलिए तीसरी दुनिया का हथियारों की होड़ में शामिल होना मूर्खता का चरम नमूना है। कम्युनिस्ट देशों से शीत युद्ध की समाप्ति के पश्चात् अमेरिका विभिन्न देशों के साथ अपने सम्बन्धों को नया रूप देने लगा है।[259] जबकि इस युद्ध में सोवियत संघ को मित्र देश ईराक के विरुद्ध खड़ा होना पड़ा इसलिए पश्चिम एशिया में उसकी स्थिति कमजोर हुई है।[260]

प्रधानमन्त्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह का मत था कि खाड़ी संकट का हल सैनिक शक्ति से नहीं, अपितु संयुक्त राष्ट्र के जरिए साझा प्रयासों से निकाला जाना चाहिए।[261] किसी भी एक तरफा सैनिक एडवेंचर से खाड़ी की स्थिति खराब ही होगी। उन्होंने यूगोस्लाव टेलीविजन में इण्टरव्यू देते हुए कहा कि ईराक व कुवैत गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सदस्य हैं। इसलिए भारत की राय है कि इस संकट को सुलझाने में निर्गुट आन्दोलन को पहल करनी चाहिए।[262] श्री सिंह ने कहा कि खाड़ी में बढ़ते हुए टकराव का सीधा असर हमारी अर्थव्यवस्था पर पड़ेगा, क्योंकि इससे तेल की आपूर्ति ठप्प पड़ सकती है।[263] इस संकट के परिणाम स्वरूप ईराक तथा कुवैत में रहने वाली पौने दो लाख भारतीय कामगारों से भेजी जाने वाली विदेशी मुद्रा की आमदनी भी तुरन्त ठप्प हो गई।[264]

वास्तव में अमेरिका अपनी विस्तारवादी नीतियों के कारण किसी क्षेत्रीय शक्ति को उभरते हुए नहीं देखना चाहता। वह पश्चिम एशिया में अपने स्वार्थों के लिए आक्रामक तेवर अपना कर शक्ति-प्रदर्शन कर रहा है। किन्तु अमेरिका व दूसरे पश्चिमी देशों की सैनिक कार्रवाई के

---

259. सिन्हा, देखिए क्र. 256
260. आनन्द, मधुसूदन, देखिए क्र. 258
261. नवभारत टाइम्स, 19 अगस्त, 1990
262. वही, 27 अगस्त, 1990
263. जनसत्ता, 19 अगस्त, 1990
264. कुमार, रंजीत, "खाड़ी संकट से भारत की विकट स्थिति", नवभारत टाइम्स, 30 अगस्त, 1990

लिए सद्दाम हुसैन भी कम जिम्मेदार नहीं है।[265]

सोवियत संघ के टूटने से मध्य एशिया में कजाकिस्तान, उजबेकिस्तान तुर्कमेनिस्तान, तजाकिस्तान और किरगिस्तान नामक नए देशों का उदय हुआ। इन देशों में आर्थिक संकट और राजनैतिक अस्थायित्व तो है ही, इस्लाम के प्रति अनुराग भी बढ़ा है। पहले इन देशों में धर्मनिरपेक्षता की परम्परा रही है। आज तुर्की, ईरान, सऊदी अरब, पाकिस्तान आदि देश इन देशों में अपने हितों को बढ़ाने में लगे है। यदि इन मध्य एशियाई देशों में इस्लामी लहर चलने लगे तो रूस के लिए मुश्किल हो जाएगी, क्योंकि उसकी सीमाएं न केवल इन देशों के साथ लगती हैं, बल्कि वहां रूसी मूल के एक करोड़ लोग रहते हैं। ये देश रूस के लिए आर्थिक, राजनैतिक और सामरिक नजरिए से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। अत: रूस उनकी अवहेलना नहीं कर सकता, दूसरी ओर स्वयं रूस में बीसियों उपराष्ट्रीयताएं है।[266]

सोवियत संघ के विखण्डन के बाद उत्तराधिकारी रूस अपनी लड़ाई लड़ते हुए इतना आत्मकेन्द्रित और पश्चिम मुखापेक्षी हो गया कि उसने एशियाई देशों के साथ अपने पारम्परिक रिश्तों को महत्त्व देना बन्द कर दिया। उसने अमेरिका के इशारे पर भारत को क्रायोजनिक इंजन की प्राविधि बेचने पर रोक लगा दी।[267] किन्तु वर्ष 1993 में येल्तिसिन ने जितना अपने को पश्चिमी यूरोप और अमेरिका से जोड़ने की कोशिश की उतना ही उन्हें लगा कि पश्चिम में उनकी पूछ नहीं है। 'नाटो' का जन्म सोवियत विस्तारवाद को रोकने के लिए किया गया था। किन्तु सोवियत संघ व वारसा सन्धि तन्त्र टूटने[268] के बाद भी नाटो का विस्तार हो रहा है।[269] पश्चिमी देश लोकतन्त्र और बाजार उन्मुख अर्थव्यवस्था के नाम पर रूस का समर्थन करते हैं। किन्तु वे कोई बड़ा त्याग स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है। इसलिए रूस ने खुद को यूरोप के बजाय एशिया का हिस्सा मानने का महत्त्व समझा है और विश्व राजनीति में स्वतन्त्र आचरण दिखाना आरम्भ किया है। वह उत्तर कोरिया के खिलाफ आर्थिक प्रतिबन्धों में अमेरिका के साथ नहीं है। दूसरी ओर रूस चाहता है कि भारत परमाणु अप्रसार सन्धि और मिसाइल टेक्नोलॉजी कन्ट्रोल रिजीम को स्वीकार करे, लेकिन इसके लिए भी वह अमेरिका की तरह भारत पर दबाव डालने का पक्षधर नहीं है। आज रूस के विश्व व्यापार का एक तिहाई हिस्सा एशियाई और प्रशान्त

---

265. नवभारत टाइम्स, 18 अगस्त, 1990
266. आनन्द, मधुसूदन, "रूस एशिया मुखापेक्षी हो रहा है", नवभारत टाइम्स, 22 जून 1994
267. वही,
-बाली, सूर्यकान्त, "दुनिया के नक्शे पर उभर रहा है एशिया", नवभारत टाइम्स, 23 जून, 1994
268. आनन्द, मधुसूदन, देखिए क्र. 253
269. नवभारत टाइम्स, 23 जुलाई, 1994

क्षेत्र के देशों के साथ होता है।[270] एक दूसरे की जरुरतों को देखते हुए रूस, भारत-सोवियत दोस्ती का स्थान लेने को उत्सुक है। दोनों ही देशों की विदेशनीति में अमेरिका एक बड़ा फैक्टर है।[271]

आज जब भी विश्व राजनीति पर चर्चा होती है तो बात यूरोप, वहां भी खासकर पश्चिमी यूरोप और अमेरिका तक सिमट कर रह जाती है। दुनिया में कहाँ, कब, कितनी लड़ाई होनी है, यह सब यूरोप व अमेरिका तय करते रहे हैं। भारत और पाकिस्तान के बीच लड़ाई के भी यही कारण हैं। पाकिस्तान जैसे उन्मादी देश को अपना चमचा बनाकर, उसे हथियारों का नशा देकर भारत के खिलाफ खड़ा कर लड़ाई के लिए उकसा दिया ताकि भारत एक बड़ी ताकत के रूप में कभी न उभर सके। पश्चिम एशिया में इजराइल और अरबों के बीच जितनी लड़ाइयाँ हुई, उनमें भी इन देशों का हाथ रहा। फिर कहाँ कैसी शान्ति रहेगी, कितनी तथा कब तक रहेगी, इस सबका निर्धारण भी ये गोरे देश करते रहे। अफगान मुजाहिद्दीन और पंजाब व कश्मीर में आतंकवाद इसके प्रमुख उदाहरण हैं। अमेरिका ने अफगान मुजाहिद्दीन को भरपूर मदद दी और फिर अचानक बन्द कर दी। इस प्रकार अमेरिका एशिया की राजनीति को अपने हिसाब से दिशा-निर्देश देता रहा है।

अब जबकि शीत युद्ध समाप्त हो चुका है, दुनिया निरस्त्रीकरण की ओर धीरे-धीरे बढ़ रही है। अमेरिका की अस्त्र नियन्त्रण और निरस्त्रीकरण एजेन्सी को आशा है कि अन्तर्राष्ट्रीय सैनिक तनाव खत्म हो सकते हैं, जिससे सुरक्षा की मद में खर्च किया जाने वाला पैसा आवश्यक गैर सैनिक जरुरतों में खर्च होने लगेगा। एजेन्सी के अनुसार दुनिया भर में 1987 के मुकाबले 1991 में 10 प्रतिशत सैनिकों में कमी आई। कम्युनिस्ट सेना में सर्वाधिक कटौती की गई। एजेन्सी ने चीन व भारत के लिए कहा कि ये दोनों देश रूस से सैनिक उपकरण खरीद रहे हैं, लेकिन दूसरे देशों ने सेना के आधुनिकीकरण पर रोक लगाई है। भारत को चीन और पाकिस्तान से तो डर है ही, उसे कश्मीर में पाकिस्तान की शह पर शुरु किए गए पृथकतावादी आन्दोलन से भी निपटना पड़ रहा है।[272]

दुनिया भर में हथियारों की बिक्री में भी 1987 के मुकाबले 1991 में 62 प्रतिशत की गिरावट आई। विकसित देशों में सैनिक खर्च में 320 प्रतिशत की गिरावट आई है, दूसरी ओर विकासशील देशों में यह खर्च 9 प्रतिशत बढ़ा है। लेकिन ताईवान और पाकिस्तान अपवाद है, वहां प्रतिरक्षा बजट 50 प्रतिशत तक बढ़ा है। अमेरिका में 1987 की तुलना में सैनिक बजट

---

270. आनन्द, मधुसूदन, देखिए क्र. 266
271. आनन्द, मधुसूदन, देखिए क्र. 253
272. आनन्द, मधुसूदन, देखिए क्र. 252

में 17 प्रतिशत की कटौती की, पर रूस की तुलना में यह कुछ भी नहीं है। जब अमेरिका को रूस से खतरा नहीं है, तो किससे है। जितना समूची दुनिया रक्षा पर खर्च करती है उतना अकेले ही अमेरिका खर्च करता है।[273]

सोवियत किला ढह जाने के बाद अमरीकी विदेशनीति दुनिया में अणु प्रसार को सबसे बड़ा मुद्दा बना कर चल रही है। राष्ट्रपति क्लिंटन ने अपने देश के पास अणु अधिकार सुरक्षित रखते हुए घोषणा की कि दुनिया के किसी भी अणु विहीन देश को अणु शक्ति नहीं बनने दिया जाएगा।[274]

गोर्वाच्योव के कार्यकाल के अन्तिम दिनों में सोवियत संघ के चीन के समीप आने पर ऐसी धारणा बनी थी कि सोवियत संघ भारत और चीन की दूरी को कम कराने का प्रयास करेगा, जिससे एशियाई क्षेत्र में एक मजबूत त्रिकोण बन सके, किन्तु सोवियत संघ के विखण्डन के साथ ही यह कल्पना भी खण्ड-खण्ड हो गई। अब जब तक कोई नई सन्तुलनकारी महाशक्ति उभरकर सामने नहीं आती, तब तक दुनिया अमेरिका के एक छत्र प्रभाव में रहने के लिए बाध्य है। बदली हुई अन्तर्राष्ट्रीय राजनैतिक परिस्थितियों में भारत और चीन की दोस्ती इस समय युग की मांग है, जिसे दोनों देशों के नेताओं को समझना चाहिए। इनकी मित्रता पूरे एशिया के लिए ही नहीं पूरे विकासशील विश्व के लिए हितकर होगी।

(घ) अफगानिस्तान में गृहयुद्ध

शीत युद्ध के चलते संग्राम स्थलियों में बदल गए निकारागुआ, अंगोला, इथोपिया और कम्बोडिया जैसे देशों में तो जैसे-तैसे ऊपरी तौर पर शान्ति स्थापित हो गई, लेकिन पिछले 13 सालों से जंग का मैदान बना अफगानिस्तान अब भी जैसे अंगारों में लौट रहा है। उसकी समस्या न तो लम्बी खूनी लड़ाई से सुलझ सकी और न ही वहाँ किसी शान्ति वार्ता के कोई आसार दूर-दूर तक नजर आ रहे हैं। विद्रोही संगठन तमाम ऐसे छोटे-छोटे गुटों में बट चुके है, जो अब आपस में लड़ने लगे हैं।[275]

मुजाहिदों की अफगानिस्तान में किसी क्षेत्र विशेष में कब्जा करने में बार-बार हुई विफलता ने उनके अन्तर्राष्ट्रीय समर्थकों को नजीब सरकार का विकल्प बन पाने की उनकी क्षमता पर विचार करने को बाध्य किया है। इसलिए पाकिस्तान समर्थक विद्रोहियों के एक गुट ने अफगानिस्तान

---

273. आनन्द, मधुसूदन, देखिए क्र. 252
274. नवभारत टाइम्स, 7 अक्टूबर, 1994
275. डेसमंद, एडवर्ड डब्ल्यू, "अफगानिस्तान टूटने का खतरा", माया, वर्ष 63, अंक 1, 15 जनवरी, 1992, पृ. 50-52

में शान्तिपूर्ण समाधान की प्रक्रिया में खलल डालने के उद्देश्य से पाक सीमा से 23 किलोमीटर दूर खोस्त शहर पर 10,000 पाक सैनिकों की भागीदारी से आक्रमण कर दिया। जिसमें शहर के 1500 रक्षकों सहित हजारों नागरिक मारे गये। खोस्त पर कब्जा कर लिया गया यह दुर्भाग्यपूर्ण नरसंहार उस समझौते की मृत्यु का संकेत है, जिस पर तीन साल पहले पाकिस्तान ने भी हस्ताक्षर किए थे और जिसकी गारण्टी अमेरिका व सोवियत संघ ने दी थी।[276] भारत में अफगान राजदूत अहमद सरवर के अनुसार पाक सेना के अतिक्रमण का उद्देश्य अफगानिस्तान का विभाजन करके उसे अपने ऐजेण्ट हिकमतयार की मदद से पाकिस्तान में मिलाना है, जिया से लेकर बेग तक पाकिस्तानी सेना के प्रमुख यही महत्त्वाकांक्षा पाले हुए है।[277]

अफगान सरकार ने इस कार्रवाई के लिए पाकिस्तान को हमलावर करार देते हुए संयुक्त राष्ट्रसंघ, अमेरिका व सोवियत संघ से अनुरोध किया है कि क्षेत्रीय टकराव के लिए वे तत्काल कुछ ठोस कदम उठाये नहीं तो उसके और पाकिस्तान के बीच सीधा संघर्ष हो सकता है।[278] 5 अप्रैल को सामरिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण खोस्त नगर को मुक्त कराने के उद्देश्य से अफगान सेना व वायु सेना द्वारा हवाई फायर किए गए जिससे बहुत जन-धन की हानि हुई।[279]

सोवियत संघ में हाल में हुए विफल विद्रोह के बाद अनुमान लगाया गया कि वह अफगान सरकार को हथियारों की आपूर्ति बन्द कर देगा। इसलिए राष्ट्रपति नजीब ने रूसी गणराज्य के अध्यक्ष बोरिस येल्तिसिन से अपील की कि सोवियत संघ ने जो वायदे किए थे, उन्हें पूरा किया जाना चाहिए।[280] तभी अमेरिका व सोवियत संघ के विदेशमंत्रियों के बीच मास्को में 1 जनवरी, 1992 से अफगानिस्तान के संघर्षरत गुटों को हथियारों की आपूर्ति रोकने के लिए समझौता हो गया। इस दौरान हथियारों की आपूर्ति में बढ़ोत्तरी नहीं की जाएगी। दोनों देशों ने संयुक्त राष्ट्र संघ तथा इस्लामी देशों तथा अन्य सम्बद्ध सरकारों से अनुरोध किया है कि वे अफगानिस्तान को एक उचित व निष्पक्ष अन्तरिम व्यवस्था स्थापित करने के लिए तैयार करे, जिसे व्यापक स्तर पर जनता का समर्थन प्राप्त हो।

14 सितम्बर को संयुक्त राष्ट्र महासचिव पेरेज द कुइयार ने अमेरिका व सोवियत संघ के बीच हुए इस समझौते का स्वागत किया। ईरान के नेता अकबर अली विलायती ने कहा

---

276. गोयल, देशराज, "अफगानिस्तान को दोबारा जंग में धकेलने की कोशिश", आज (कानपुर), 13 अप्रैल, 1991
277. वही, नवभारत टाइम्स, 3 अप्रैल, 1991
278. "अफगास्तिान व पाक में सीधा संघर्ष हो सकता है", नवभारत टाइम्स (नई दिल्ली) 3 अप्रैल, 1991
279. आल इण्डिया रेडियो, 5 अप्रैल, 1991
280. नवभारत टाइम्स, 14 सितम्बर, 1991

कि अफगानिस्तान में समस्या के समाधान के लिए पूरी पृष्ठभूमि तैयार की जा चुकी है।[281] किन्तु पर्यवेक्षकों के अनुसार यह समझौता 60 लाख अफगान शरणार्थियों को स्वदेश वापसी पर उनकी सुरक्षा तथा पुनर्निर्माण की प्रक्रिया पर शायद ही आश्वस्त कर पाए। लेकिन इस समझौते ने अमेरिका और सोवियत संघ को अस्सी के दशक के सबसे खर्चीले और खून खराबे वाले संघर्ष से अलग होने का मौका दे दिया।[282]

पाकिस्तान में कार्यरत सात बड़े छापामार संगठनों में सबसे बड़े हिज्बे इस्लामी के प्रवक्ता कुतुबुद्दीन हिलाल ने कहा कि 'अफगानिस्तान में बिदेशी हस्तक्षेप बन्द होने के बाद वहां के लोग मामला आपस में सुलझा लेंगे। इस बात की सम्भावना कम है कि कट्टरपंथी छापामारों को हथियारों की सप्लाई तुरन्त बन्द हो जाएगी। काबुल और इस्लामाबाद के राजनयिकों के विचार से कट्टरपंथी मुजाहिद गुट हिरोइन के व्यापार से मिलने वाले धन से खुले बाजार से हथियारों की खरीद जारी रखेंगे। दूसरी ओर, इस समझौते के बाद भी पाकिस्तान, ईरान और सऊदी अरब ने शस्त्र आपूर्ति रोकने जैसी किसी इच्छा का इजहार नहीं किया है।[283]

नजीबुल्ला सरकार के एक प्रवक्ता ने कहा कि सरकार युद्ध को समाप्त करने के प्रयासों का स्वागत करती है, किन्तु मुजाहिद्दीन नजीबुल्ला सरकार के रहते युद्ध समाप्त करने के लिए तैयार नहीं।[284] अफगान सरकार वर्तमान स्थिति से चिन्तित है, इसलिए अफगान प्रधानमन्त्री ने मुजाहिदों को मिल रही सैनिक सहायता बन्द किए जाने के उद्देश्य से सम्बद्ध देशों की यात्रा की।[285]

3 अक्टूबर को संयुक्त राष्ट्र महासभा में अफगान समस्या पर मुजाहिद्दीन, सोवियत संघ और अमेरिका के मध्य बैठक हुई जिसमें कहा गया कि वहां निष्पक्ष सरकार की स्थापना हो, जिससे स्वतन्त्र चुनाव कराये जा सके।[286] संयुक्त राष्ट्र महासचिव पेरेज द कुइयार ने कहा कि राजनैतिक समझौते से ही अफगानिस्तान में स्थायी शान्ति सम्भव है। इसके लिए सभी पक्षों में संयम तथा एक दूसरे के प्रति विश्वास की जरुरत है। उन्होंने कहा कि जनता की सुरक्षा की गारण्टी के लिए संक्रमण कालीन व्यवस्था को पर्याप्त अधिकार दिए जाने चाहिए। उन्होंने राजनैतिक कैदियों की रिहाई का आग्रह किया। श्री कुइयार ने कहा कि अफगानिस्तान के अन्दरुनी मामलों में दखल देने वाले युद्ध को ही एक मात्र विकल्प मानते हैं, किन्तु युद्ध से अफगानिस्तान की

---

281. दूरदर्शन समाचार, रात्रि 8.40 13 सितम्बर, 1991
282. नवभारत टाइम्स, 14 तथा 15 सितम्बर, 1991
283. नवभारत टाइम्स, 15 सितम्बर, 1991
284. बी0बी0सी0 लन्दन, समाचार प्रात: 6.15 20 सितम्बर, 1991
285. आकाशवाणी समाचार, प्रात: 9.00, 26 सितम्बर, 1991
286. बी0बी0सी0 लन्दन, विश्व भारती, प्रात: 6.30, 27 सितम्बर, 1991

जनता की कठिनाइयां बढ़ेंगी।[287]

महासचिव ने आश्वासन दिया कि नये चुनावों के लिए सहयोग के रूप में नजीब व अन्य वरिष्ठ नेता पद छोड़ने के लिए तैयार हैं।[288] श्री कुइयार की इस घोषणा के बाद पाकिस्तान तथा अरब देशों ने मुजाहिदों को अफगान संकट के समाधान में शरीक होने का सुझाव दिया।[289] रूस ने भी भारत के इस रुख पर सहमति व्यक्त की है कि काबुल में एक ऐसी सरकार हो जिससे क्षेत्रीय स्थिति और न बिगड़े।[290] कुइयार के व्यक्तिगत प्रतिनिधि बेनन सेवान ने कहा कि, "अफगानिस्तान की वर्तमान दशा लेबनान से भी बुरी है। जब तक वहाँ जातीय, कबीलाई और मजहबी टकराव खत्म नहीं होते तथा वहाँ आम बहुमत वाली सरकार नहीं बनती, तब तक यही स्थिति बनी रहेगी"।[291]

अफगानिस्तान को कई टुकड़ों में बँटने से बचाने का एक ही तरीका है कि सबकी राय से कोई समाधान खोजा जाए ताकि फिर देश में शान्ति व व्यवस्था कायम हो सके। दिसम्बर में बुरहानुद्दीन रब्बानी के नेतृत्व में मुजाहिदों का एक प्रतिनिधि मण्डल मास्को गया, ताकि युद्ध को रोकने के लिए कोई नया रास्ता खोजा जा सके। सोवियत नेतृत्व ने स्पष्ट किया कि वे अफगानिस्तान में इस्लामी आधार पर गठित होने वाली किसी सरकार का विरोध नहीं करेंगे। वे केवल अपने उन सैनिकों की रिहाई चाहते हैं जो अभी भी विद्रोही सेनाओं की कैद में है। लेकिन मुजाहिद्दीन आपस में इतना बँटे हुए हैं कि उनमें मास्को वार्ता पर भी एक राय नहीं बन सकी। पेशावर स्थित 7 में से 3 गुटों ने इसमें शामिल होने से इंकार कर दिया।[292]

तत्कालीन स्थिति को देखते हुए अफगान मुजाहिदों का लगभग हर गुट यही चाह रहा है कि किसी प्रकार वह नजीबुल्ला सरकार को हटा कर खुद सत्ता पर काबिज हो जाए, किन्तु यह आसान कार्य नहीं है। इससे अफगानिस्तान की अखण्डता के लिए संकट उत्पन्न हो जाएगा। इन संघर्षरत विद्रोहियों से अब पाकिस्तान भी किनाराकशी करने लगा है। उसके इस कदम से अफगानिस्तान में गृहयुद्ध खत्म होने और मध्य एशिया के साथ व्यापार वृद्धि में मदद मिलेगी। अफगान छापामारों में पाकिस्तान की बदली हुई नीति से रोष है। वास्तव में सोवियत संघ के टूटने से पाकिस्तान को अपनी नीति पर पुनर्विचार करना पड़ा, क्योंकि सभी सोवियत गणराज्य काबुल में कट्टरपंथी इस्लामी शासन स्थापित नहीं होने देना चाहते। इसलिए पाकिस्तान अफगान

287. नवभारत टाइम्स, 24 अक्टूबर, 1991
288. वही, 20 नवम्बर, 1991
289. बी0बी0सी0 लन्दन, 25 अक्टूबर, 1991
290. नवभारत टाइम्स, 19 नवम्बर, 1991
291. एडवर्ड, डब्लयू डेसमंद, देखिए क्र. 275
292. वही

मसले के समाधान में जहीरशाह की भूमिका को महत्त्वपूर्ण मानने लगा है।[293] पाकिस्तान की नीति में परिवर्तन का दूसरा बड़ा कारण है मुजाहिदों के लिए अन्तर्राष्ट्रीय मदद का बन्द हो जाना।[294]

संयुक्त राष्ट्र महासचिव बुतरस गाली ने अफगान समस्या के सर्वस्वीकार्य राजनैतिक समाधान के लिए सम्बन्धित पक्षों का महासम्मेलन बुलाने का प्रस्ताव रखा। उन्होंने सुझाव दिया कि यह सम्मेलन अफगानिस्तान के बाहर आयोजित किया जा सकता है, जहां देश में स्वतन्त्र और निष्पक्ष चुनाव के द्वारा व्यापक जनाधार वाली सरकार की स्थापना तक एक संक्रमण कालीन व्यवस्था पर सहमति बनाई जा सकती है। श्री गाली ने सम्बद्ध सभी सरकारों से अफगान गुटों को हथियार खरीदने के लिए आर्थिक मदद न देने की अपील की।[295] पाकिस्तान ने अफगानिस्तान में शान्ति के लिए संयुक्त राष्ट्र महासचिव के प्रयासों का समर्थन किया।

विभिन्न मुजाहिद गुटों ने सरकार बनाने के उद्देश्य से एक समझौते पर हस्ताक्षर किये। जिसके अनुसार अफगानिस्तान में सभी वर्गों के प्रतिनिधियों को लेकर एक नेतृत्व परिषद् का गठन किया जाए परन्तु उसमें डा0 नजीब और जहीरशाह के लिए कोई स्थान न हो।[296]

16 अप्रैल को राष्ट्रपति नजीबुल्ला ने इस्तीफा दे दिया। यद्यपि रूसी सैनिकों की वापसी के पश्चात् से ही राष्ट्रपति नजीबुल्ला का हटना तो तय था, किन्तु वह जिस तरह इस्तीफा देकर हटे, उसकी सम्भावना नहीं थी। उन्होंने रूसी मदद के बिना तीन वर्षों तक देश पर शासन किया और किसी मुजाहिद्दीन गुट को हावी नहीं होने दिया। किन्तु अमेरिका व संयुक्त राष्ट्र न तो अफगानिस्तान में शान्ति सुनिश्चित करा सके और न नजीब को सुरक्षा दे सके।[297] रूसी मदद बन्द होने के बाद भी नजीब के सत्ता में टिके रहने के पीछे राजनैतिक पर्यवेक्षक चार महत्त्वपूर्ण कारण बताते हैं, पहला यह कि पूर्व सोवियत संघ के टूटने के बाद शीतयुद्ध ही खत्म हो गया। अमेरिका ने भी कट्टरपंथियों को सहायता देने से हाथ खींच लिए, जिससे मुजाहिद्दीन कमजोर पड़ गये। इसका फायदा डा0 नजीब उठाते रहे। दूसरा अहम् कारण था नजीब में राजनैतिक आवश्यकता के अनुरूप रंग बदलने की भरपूर क्षमता। उन्होंने छोटे-छोटे छापामार गुटों के कमाण्डरों से हाथ मिला कर सत्ता में महत्त्वपूर्ण पद दिए तथा शान्ति की अपील करते हुए उग्र व मध्यम मार्गीय मुजाहिदों, पूर्व शाह के समर्थकों, ईरान व पाकिस्तान में शरण लेने वाले अफगान प्रतिनिधियों और पुरानी कम्युनिस्ट पार्टी के दोनों गुटों खल्क व परचम से समझौते के प्रयास किए।

---

293. अमर उजाला (मेरठ), 19 जनवरी, 1992
294. वही, 30 जनवरी, 1992
295. नवभारत टाइम्स, 29 जनवरी, 1992
296. "अफगान विद्रोहियों के हौसले ढीले पड़ रहे हैं", नवभारत टाइम्स, 30 जनवरी, 1992
297. अमर उजाला, 18 अप्रैल, 1992

तीसरा, अफगानिस्तान में लगभग 250 साल के इतिहास में सियासी तौर पर पख्तूनों का बोलबाला रहा है, डा0 नजीब स्वयं पख्तून थे। अपना पक्ष मजबूत करने के उद्देश्य से नजीब ने लगभग सभी महत्त्वपूर्ण पदों पर अपने वफादार पख्तून बैठा रखे थे। यही कारण था कि उनके खिलाफ मार्च 1990 का विद्रोह विफल हुआ। चौथा महत्त्वपूर्ण कारण था, रूस द्वारा समर्थित सरकार का 13 वर्षों से विरोध करने वाले मुजाहिद्दीन राजनैतिक, धार्मिक और जातीय आधार पर बँटे रहना, नजीब ने इसका फायदा उठाया। जैसे डा0 नजीब ने अहमद शाह मसूद को रोके रखने के लिए इस्माइली फिरके के छापामार सैयद जाफरनदेरी को इस्तेमाल किया। किन्तु जब सलांग हाइवे* मसूद के कब्जे में चला गया तब नजीब के लिए सत्ता में बने रहना सम्भव न था। इसलिए उन्होंने 18 मार्च, 1992 को संयुक्त राष्ट्र शान्ति योजना के तहत एक अन्तरिम सरकार को सत्ता हस्तान्तरित करने की पेशकश की। लेकिन इसे नजीब के समर्थकों ने उनकी कमजोरी माना और उनका साथ छोड़ने लगे। जिससे सत्तारुढ़ वतन पार्टी में विखराव आ गया, मजबूरन डा0 नजीब ने इस्तीफा दे दिया।[298] सबसे पहले बगावत करने वाले विश्वासपात्र कमाण्डर जनरल दोस्तम ने नजीब को अफगानिस्तान से भागने नहीं दिया, उन्हें काबुल स्थित संयुक्त राष्ट्र कार्यालय में शरण लेनी पड़ी। नजीब के एक अन्य सहयोगी विदेशमन्त्री अब्दुल वकील भी अब उन्हें क्रूर तानाशाह की संज्ञा से विभूषित कर रहे हैं। ऐसी स्थिति में सम्भावना है कि अन्तरिम सरकार का फैसला वार्ता की मेज के बजाय गलियों में बन्दूकों के बीच हो।

डा0 नजीब के बाद उपराष्ट्रपति अब्दुर्रहीम हतीफ ने अफगानिस्तान की सत्ता सम्भाली। दूसरी ओर मसूद ने कई मुजाहिद गुटों से मिल कर 20 सदस्यों की इस्लामी जेहाद परिषद् का गठन कर समानान्तर सरकार की घोषणा कर दी। किन्तु हिज्बे-ए-इस्लामी के गुलबुद्दीन हिकमतयार के नेतृत्व में प्रो0 सैय्याफ और मौलवी यूनिस खालिस के गुटों ने मसूद का नेतृत्व स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। उन्होंने संयुक्त राष्ट्र की शान्ति योजना को भी यह कह कर अस्वीकार किया कि अफगानिस्तान के भविष्य का फैसला स्वयं अफगान करेंगे। जिससे मुजाहिदों के बीच पहले से चल रहे मतभेद खुलकर सामने आ गये।[299] ऐसी स्थिति में पाकिस्तान, ईरान व अमेरिका जैसे देशों को तत्काल हस्तक्षेप करके वहां सबसे पहले यह सुनिश्चित करना चाहिए कि मुजाहिदों में आपसी भिड़न्त न होने पाए। नए राजनैतिक ढांचे का फैसला तो बाद में भी हो जाएगा।[300]

---

* काबुल को ओक्सस नदी के समीप के उत्तरी शहरों से इसी हाइवे के जरिए दैनिक जीवन की आवश्यक बस्तुएँ मिलती है।

298. चौधरी, ए शाहिद, "अफगानिस्तान: नजीबुल्ला का पतन", माया, 31 मई, 1992, पृ. 42-45

299 वही

300. अमर उजाला (मेरठ), 18 अप्रैल, 1992

भारतीय विदेश मन्त्रालय के प्रवक्ता ने बताया कि यदि अपदस्थ राष्ट्रपति नजीबुल्ला भारत में शरण मांगते है तो इस मामले में महत्त्व के आधार पर विचार किया जायेगा।[301] 'भाषा' के सम्पादक डा0 वेद प्रताप वैदिक के अनुसार पूर्व सोवियत संघ के विघटन के बाद नजीब की सरकार भारत को ही अपना मानती थी, रूस तो किसी पूर्व कम्युनिस्ट पार्टी के दोस्त को शरण देना नहीं चाहता। पाकिस्तान व ईरान की मुजाहिदों के कारण अपनी-अपनी मजबूरियां हैं।[302] प्रवक्ता ने कहा कि अफगानिस्तान में शान्ति के लिए भारत संयुक्त राष्ट्र के सभी प्रयासों का समर्थन करेगा। हम अफगानिस्तान की मौजूदा अनिश्चित स्थिति पर पूरी नजर रखे हुए हैं। दिल्ली में अफगान राजदूत सरवर ने काबुल में अस्थायी परिषद् द्वारा सत्ता संभाले जाने की निन्दा की।[303]

17 अप्रैल को सामूहिक नेतृत्व के सत्ता में आते ही भारत में राजदूत सरवर को पद मुक्त कर उनके स्थान पर प्रभारी राजूदत जियाउद्दीन नासिरी को राजदूत बना दिया गया। उन्होंने श्री सरवर के बयान को गलत करार देते हुए कहा कि नई व्यवस्था, वास्तविक राष्ट्रीय सहमति एवं मुस्लिम हितों पर आधारित महागठबंधन को प्रतिबिम्बित करती है।[304] जमायते इस्लामी के दिल्ली प्रतिनिधि उमर ने कहा कि "दोनों देशों के जो परम्परागत मजबूत सम्बन्ध है, उनको बनाए रखने के लिए भारत को डा0 नजीब को बचाव कवच नहीं प्रदान करना चाहिए।[305]

वास्तव में नजीबुल्ला 1986 से 1992 तक काबुल की सत्ता में सबसे बड़े सबार थे, जिन्होंने अद्भुत संगठन क्षमता और नेतृत्व का परिचय दिया। सोवियत संघ के बिखराव के बाद जहाँ नजीब सरकार को हथियारों की सप्लाई बन्द हो गई थी, वहीं विद्रोहियों को निरन्तर भारी पैमाने पर पाकिस्तान के माध्यम से अमरीकी तथा अन्य मुस्लिम देशों से हथियार तथा अन्य सामग्री प्राप्त होती रही। विद्रोहियों के बढ़ते दबाव और काबुल के उत्तर में दो महत्त्वपूर्ण सैनिक छावनियों पर कब्जे तथा काबुल की ओर से उनके कूच ने नजीब के हाथ बांध दिए। नजीब के पतन के पश्चात् अफगानिस्तान की सत्तारुढ़ वतन पार्टी ने मुजाहिद नेता शाह मसूद के नेतृत्व वाली जमायते इस्लामी गुट के साथ हाथ मिला लिए।[306]

पेशावर व अफगानिस्तान में सैनिक क्रान्ति के प्रयासों और सत्ता में भागीदारी के लिए सौदेवाजियों की अफवाहों का बाजार गर्म होने लगा है।[307] ऐसी स्थिति में पेरिस में फ्रांस की

301. अमर उजाला (मेरठ), 18 अप्रैल, 1992
302. चौधरी, ए शाहिद, देखिए क्र. 298
303. देखिए क्र. 300
304. अमर उजाला (मेरठ), 19 अप्रैल, 1992
305. चौधरी, ए शाहिद, देखिए क्र. 298
306. राय, प्रभात कुमार, "क्या अफगास्तिान में शान्ति टिक सकेगी", अमर उजाला (मेरठ), 7 मई, 1992
307. अमर उजाला (मेरठ), 18 अप्रैल, 1992

सरकार ने अफगानिस्तान में सभी पक्षों से अपील की कि वे उदारवादी दृष्टिकोण अपनाते हुए संयुक्त राष्ट्र के विशेष दूत बेनन सेवान को अन्तरिम परिषद् के गठन में सहयोग दें, जिससे सत्ता का शान्तिपूर्ण हस्तांतरण किया जा सके।

ईरान के विदेशमन्त्री अकबर अली बिलायती ने संयुक्त राष्ट्र प्रस्तावों का समर्थन करते हुए कहा कि सभी पक्षों को शान्तिपूर्ण तरीके से सत्ता हस्तांतरण में सहयोग देना चाहिए। जिससे अफगानिस्तान की अखण्डता और प्रभुसत्ता पर कोई आंच नहीं आए। पाकिस्तान में सरकारी सूत्रों ने कहा कि सब कुछ उनकी उम्मीद के अनुसार हुआ है। अमेरिका ने भी पाकिस्तान स्थित अफगान मुजाहिदों से आग्रह किया है कि वे काबुल की ओर अपनी कूच को रोक दें और 12 वर्ष से चल रहे गृहयुद्ध को संयुक्त राष्ट्र के तत्वावधान में राजनैतिक समाधान निकालने का प्रयास करें।[308]

संयुक्त राष्ट्र के विशेष दूत वेनन सेवान काबुल पहुंच गए हैं और उन्होंने हिंसा को रोकने के लिए विभिन्न गुटों के बीच मध्यस्थता के प्रयास तेज कर दिए हैं। दूसरी ओर शाह मसूद ने सैनिकों को आदेश दिया है कि वे राजधानी में मुजाहिद्दीन छापामारों के हमले को रोकने के लिए काबुल की घेराबन्दी कर लें। हिकमतयार ने भी 17 अप्रैल को धमकी दी थी कि अगर अफगान सरकार ने तत्काल आत्मसमर्पण कर सत्ता विरोधियों को नहीं सौंपी तो सशस्त्र मुजाहिद्दीन काबुल में घुस जाएँगे। इसके लिए वे एक तरफा कार्रवाई से पीछे नहीं हटेंगे।[309]

इस बीच वरिष्ठ सरकारी और सत्तारुढ़ वतन पार्टी के सदस्य अफगानिस्तान में संयुक्त राष्ट्र के विशेष दूत बेनन सेवान से अन्तरिम सरकार और नजीबुल्ला के भविष्य के बारे में बातचीत कर रहे हैं। जिसमें सेवान जहां नजीबुल्ला को सही सलामत देश छोड़ देने पर जोर दे रहे हैं, वहीं कुछ सरकारी अधिकारी डा0 नजीबुल्ला पर मुकदमा चलाने की मांग कर रहे हैं। मुजाहिद्दीन उन्हें नाजियों से ज्यादा खतरनाक अपराधी मानते है। उनका कहना है कि नजीब को देश छोड़कर जाने देना मानवता के प्रति घोर अन्याय होगा।

पाकिस्तान सरकार में शामिल एक दल जमायते इस्लामी पार्टी भी मुजाहिद्दीन गुटों में मेल-मिलाप का प्रयास कर रही है। जेद्दा में इस्लामी सम्मेलन संगठन के महासचिव हमीद अल गोविद ने भी प्रतिद्वन्द्वी अफगान छापामार नेताओं से आग्रह किया कि वे देश में स्थिरता लाने के लिए प्रयास में एकजुट हों। उन्होंने आशा व्यक्त की कि इस नाजुक क्षण में अफगान मुजाहिद्दीन नेता संयम से काम लेंगे।

---

308. अमर उजाला (मेरठ), 18 अप्रैल, 1992
309. वही, 19 अप्रैल, 1992

राष्ट्रपति नजीबुल्ला के सत्ता में हटने के बाद से काबुल में भीषण रक्तपात और सत्ता के लिए प्रतिद्वन्द्वी गुटों में संघर्ष की आशंका बढ़ गई है। पेशावर में ज़मियत के प्रवक्ता नजीबुल्ला लफारी ने दावा किया कि देश में तटस्थ सरकार के गठन की दिशा में संयुक्त राष्ट्र द्वारा बातचीत की अब कोई सम्भाबना नहीं है। किन्तु संयुक्त राष्ट्र सूत्रों ने बताया कि अफगानिस्तान में सभी संघर्षरत गुटों के बीच त्वरित गति से समझौता और अन्तरिम सरकार के गठन की जरुरत अब पहले से कहीं अधिक है। संयुक्त राष्ट्र महासचिव बुतरस गाली ने कहा कि अफगानिस्तान की स्थिति नियन्त्रण से बाहर हो रही है। कट्टरपंथी विद्रोही टैंकों के साथ काबुल की ओर बढ़ रहे हैं।

अफगानिस्तान के कार्यवाहक राष्ट्रपति अब्दुर्रहीम हतीफ ने कहा कि उनकी सरकार काबुल को घेरने वाले मुजाहिद्दीन छापामारों को सत्ता सौंपने के लिए तैयार है। किन्तु जरुरत इस बात की है कि मुजाहिद्दीन संगठित होकर एक सरकार बना लें, जिससे सत्ता का हस्तान्तरण शान्तिपूर्ण तरीके से हो सके। हिकमतयार की धमकी के विषय में हतीफ ने कहा कि उनकी सरकार किसी एक गुट को सत्ता नहीं सौंपना चाहती। इस्लामी जिहाद परिषद् और सरकारी बलों पर नियन्त्रण रखने वाले मसूद बुरहानुद्दीन रब्बानी के नेतृत्व वाले पेशावर स्थित जमायते इस्लामी गुट से सम्बिन्धित हैं, इस गुट ने फिलहाल काबुल पर हमला नहीं करने का निर्णय लिया है। लेकिन वे हिकमतयार के नेतृत्व में काबुल पर कब्जा करने की हर कोशिश को नाकाम कर देंगे। ईरान ने भी काबुल प्रशासन में हिकमतयार गुट के वर्चस्व का कड़ा विरोध किया है। श्री सेवान ने बताया कि काबुल में अन्तरिम सरकार बनाने के लिए समझौता काफी नजदीक था, लेकिन कट्टरपंथियों ने इसे अस्वीकार कर दिया।

लोकसभा में विदेशराज्य मन्त्री एदुआर्दो फ्लेरियो ने विदेश मन्त्रालय की अनुदान माँगों पर चल रही चर्चा के दौरान सदन को जानकारी दी कि डा0 नजीब अभी भी संयुक्त राष्ट्र कार्यालय में हैं, उन्हें शरण देने के लिए सरकार को कोई औपचारिक आवेदन नहीं मिला है। उन्होंने बताया कि काबुल में रह रहे लगभग सौ भारतीय नागरिक व कर्मचारी सुरक्षित हैं। काबुल में अनिश्चय का माहौल बना हुआ है, स्थिति तनावपूर्ण है। सदन में मार्क्सवादी सैफुद्दीन चौधरी ने कहा कि पड़ोसी देशों में कट्टरपंथी शासन भारत के हित में नहीं होगा। श्री फ्लेरियो ने आशा व्यक्त की कि अफगानिस्तान में शीघ्र ही स्वतन्त्र तथा गुटनिरपेक्ष सरकार गठित होगी, जो दोनों देशों के बीच मधुर सम्बन्ध बनाये रखने में सहायक होगी।[310]

---

310. अमर उजाला (मेरठ), 22 अप्रैल, 1992

19 अप्रैल को कुछ मुजाहिद्दीन संगठनों ने एक व्यापक समझौता करके जमायते इस्लामी के अहमद शाह मसूद के नेतृत्व में 20 सदस्यीय मुजाहिद्दीन परिषद् के गठन की घोषणा की, जिसके साथ सत्ता हस्तान्तरण की बातचीत चल रही है, पर हिकमतयार गुट इसके विरुद्ध है। एक ओर जहाँ नजीब के विरुद्ध तख्ता पलटने वाले विदेशमन्त्री वकील ऐसी व्यवस्था चाहते हैं जिसमें विविध मुजाहिद संगठनों के साथ वे तथा उनके साथी भी शामिल रहें। दूसरी ओर हिकमतयार वर्तमान काबुल सरकार के किसी अंश को नई सरकार में शामिल होते नहीं देखना चाहते। हिकमतयार इस्लामी विश्वासों के बावजूद सुधारवादी विचारों के होने के कारण न तो पश्चिमी देश व पाकिस्तानी उन्हें पसन्द करते हैं और न ही देश में उन्हें मसूद जैसा समर्थन मिल पा रहा है।[311]

सत्ता हस्तान्तरण की मध्यस्थता में लगे नेताओं का मत है कि जब तक सभी गुटों में आम सहमति नहीं हो जाती, टिकाऊ शान्ति स्थापित नहीं की जा सकती। पर यह भी सम्भव है कि सत्ता हस्तान्तरण हो जाने के बाद भी वहाँ शान्ति स्थापित न हो। मुजाहिदों में नस्ली, धार्मिक व भाषाई मदभेद इतने हैं कि उनकी आपसी टकराहट चलती ही रहेगी। शस्त्र बल से सत्ता पाने वालों का किसी विचारधारा से कोई सरोकार नहीं होता, वे तो अधिक से अधिक ताकत हथियाना चाहते हैं। चाहे वह शान्ति से मिले या अशान्ति से। ऐसे में संयुक्त राष्ट्र की भूमिका अहम् है।

शाह मसूद ने हिकमतयार को चेतावनी दी कि वह या तो देश के वर्तमान संकट के शान्तिपूर्ण समाधान के लिए तैयार हो अथवा रास्ते से हट जाएँ। मसूद और हिकमतयार गुटों में मतभेदों को देखते हुए उनकी सेना के बीच अफगानिस्तान के बट जाने का खतरा पैदा हो गया है। मसूद की सेना में उत्तरी अफगानिस्तान के जातीय अल्पसंख्यक हैं तो हिकमतयार की ओर दक्षिण अफगानिस्तान के पख्तून। शाह मसूद ने कहा कि सबसे पहले हम अन्तरिम मुजाहिद्दीन सरकार चाहते हैं और उसके बाद संयुक्त राष्ट्र की देखरेख में आम चुनाव। मसूद ने सभी मुजाहिद्दीन गुटों से अन्तरिम व्यवस्था कायम करने के लिए वार्ताओं में शामिल होने की अपील की। उन्होंने कहा कि पूर्व विदेशमन्त्री वकील से उनका गठजोड़ कायम रहेगा। श्री अब्दुल वकील ने संवाददाता सम्मेलन में बताया कि कमाण्डर मसूद उनके साथ मिलकर शान्ति के लिए प्रयास कर रहे है।[312]

अफगानिस्तान में कवायलियों में सत्ता संघर्ष कोई नई बात नहीं है। इतिहास गवाह है कि इनमें कभी स्थायी सुलह नहीं रही। वतन परस्ती और इस्लामी जज्बे के बावजूद मुजहिदों का विभिन्न गुटों में विभाजित रहना और अमेरिका, पाकिस्तान व ईरान के हाथों खेलना भी

311. अमर उजाला (मेरठ), 23 अप्रैल, 1992
312. अमर उजाला, (मेरठ), 20 अप्रैल, 1992

उनके स्वतन्त्रता आन्दोलन के रास्ते में एक बड़ी अड़चन रहा है। इस समय मुजाहिदों के लगभग दस गुट पख्तून, ताजिक, उजबेक, हजारा, दारी आदि कबीलों का प्रतिनिधित्व करते है। परस्पर पुश्तैनी बैर के कारण एक दूसरे से कोई भी दबने को तैयार नहीं है। इनमें जहाँ मसूद का जमायते इस्लामी सबसे मजबूत गुट है, वहीं हिकमतयार के हिज्बे-ए-इस्लामी के पास सबसे अच्छे हथियार तथा संगठनात्मक ढांचा अव्वल है। तीन अन्य गुटों की बागडोर मुल्लाओं के हाथ में है, जो बादशाह जहीर की पार्टी के होने के नाते उनके लौटने की वकालत करते हैं। इनके अलावा तीन शिया गुटों को ईरान में पनाह मिली हुई है तो इतिहाद-ए-इस्लामी गुट को सऊदी अरब में। इन मुजाहिद गुटों के अतिरिक्त ईरान व पाकिस्तान जैसे पड़ोसी देशों के भी अफगानिस्तान में अपने स्वार्थ हैं। क्षेत्रीय शक्ति बनने का इच्छुक ईरान अपनी पसन्द की सरकार काबुल में देखने के लिए ही तेहरान मे कार्यरत मुजाहिद गुटों को भरपूर समर्थन दे रहा है। दूसरी और पाकिस्तान तुर्कमेनिस्तान, तजाकिस्तान और उजबेकिस्तान से सम्पर्क कायम करने के लिए काबुल में अपनी मन पसंद सरकार बैठाना चाहता है, इसके लिए उसने अपना समर्थन हिकमतयार गुट को दिया है।[313]

यद्यपि अफगानिस्तान में गृहयुद्ध का एक दौर समाप्त हो गया है, पर ऐसा नहीं लगता कि वहाँ के दिन वापस आ गए हैं। सत्तारुढ़ गुट जमायते इस्लामी के नेता शाह मसूद अपनी सारी लोकप्रियता के बावजूद जातीय आधार पर कमजोर हैं। वे ताजिक मूल के हैं, जिन्हें अफगान बाहरी मानते हैं, जबकि हिकमतयार पख्तून होने के कारण इसकी मौखिकी लड़ाई लड़ सकते हैं।[314]

अफगानिस्तान विवाद से एशिया विशेषकर दक्षिण व पश्चिम एशिया का अछूता रहना कैसे सम्भव हो सकता है। उर्दू अखबारों ने अफगानिस्तान में हुए सत्ता परिवर्तन को जहाँ इस्लाम की फतह के रूप में उसका स्वागत किया है, वही परस्पर विरोधी मुजाहिद्दीन गुटों के बीच जारी झड़पों और खूनखराबे के कारण अफगानिस्तान में नये सिरे से गृहयुद्ध की आशंकाओं ने इन्हें चिन्तित भी कर दिया है। हफ्ता रोजा नई दुनिया का कहना है कि अफगानिस्तान एक गृहयुद्ध के मुंह से निकलकर दूसरे गृहयुद्ध की ओर मुड़ रहा है। जबकि साप्ताहिक हमारा कदम का विचार है कि अगर मसूद और हिकमतयार गुट के बीच किसी तरह का तालमेल नहीं हुआ तो अफगानिस्तान को दूसरे गृहयुद्ध की विभीषिका से कोई नहीं बचा सकेगा। अखबार का दावा है कि अमेरिका मुजाहिद्दीन गुटों में सम्पर्क नहीं होने देना चाहता। किन्तु सामाज्यवादी ताकतों

---

313. चौधरी, ए शाहिद, देखिए क्र. 298
314. राय, प्रभात कुमार, देखिए क्र. 306

की साजिशों के बावजूद परस्पर विरोधी गुटों के बीच आपसी सामंजस्य के लिए प्रयास जारी है। सिबगतुल्ला मुजाद्दिदी को अफगानिस्तान का कार्यवाहक राष्ट्रपति बनाने में हिकमतयार और मसूद की रजामन्दी ही अहम् रही है। दूसरी ओर पाकिस्तान, सऊदी अरब व तुर्की के प्रयास से 15 सदस्यीय परिषद् का गठन हुआ। अब हिकमतयार को देश का कार्यवाहक प्रधानमन्त्री बनाये जाने पर विचार किया जा रहा है। उन्हें सद्दाम हुसैन, यासर अराफात, कर्नल कज्जाकी और नवाजशरीफ का समर्थन प्राप्त है, किन्तु यदि परस्पर विरोधी गुटों में किसी तरह का तालमेल नहीं हो सका तो इसका सबसे अधिक खामियाजा पाकिस्तान को उठाना पड़ेगा। पाकिस्तान के सीमान्त प्रान्त तथा बलूचिस्तान जैसे अफगान प्रभावित क्षेत्रों में जातीय टकराव और खून खराबे की स्थिति पैदा हो सकती है। किन्तु सी.आई.ए. के अनुसार अफगानिस्तान में शान्ति किसी तरह भी अमेरिका के हित में नहीं होगी। क्योंकि वहां शान्ति से पूरे उपमहाद्वीप में धीरे-धीरे माहौल सुधरेगा और विघटित सोवियत संघ के मुस्लिम राष्ट्र; ईरान, तुर्की व अफगानिस्तान आदि एक नया गठबन्धन बना कर अपने विकास के लिए नए मार्ग तैयार कर सकेंगे, जो अमरीकी नई विश्व व्यवस्था की परिकल्पना के प्रतिकूल है। साप्ताहिक क्लिट्ज का भी विचार है कि अफगानिस्तान केवल गृहयुद्ध जातीय नफरत, वर्ग संघर्ष तथा धार्मिक साम्प्रदायिकता की आग में जल रहा है। संयुक्त राष्ट्र के विशेष दूत, पाकिस्तान, ईरान तथा मसूद व हिकमतयार के मेल-मिलाप की जी तोड़ प्रयास कर रहे हैं, इसकी सफलता पर ही टिका है अफगानिस्तान का भविष्य।[315]

7 मार्च, 1993 को इस्लामाबाद में पाकिस्तान, ईरान व सऊदी अरब के प्रतिनिधियों के बीच अफगानिस्तान में पहली बार सत्ता बंटवारे पर आम सहमति हुई। जिसके अन्तर्गत बुरहानुद्दीन रब्बानी 18 माह के भीतर चुनाव प्रक्रिया पूरी किए जाने तक राष्ट्रपति रहेंगे और उनके पुराने प्रतिद्वन्द्वी गुलबुद्दीन हिकमतयार प्रधानमन्त्री पद संभालेंगे। राष्ट्रपति व मुजाहिद्दीन अन्य पार्टियों के नेताओं के परामर्श पर दो सप्ताह के भीतर प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल का गठन करेंगे। परन्तु मन्त्रिमण्डल में विभागों के बटवारे में सहमति न होने से मुजाहिद्दीन गुट इस सन्धि को लागू नहीं कर पाए और पुनः सत्ता संघर्ष शुरु हो गया। वास्तव में हिकमतयार अपनी जाति व कट्टरपंथियों के समर्थन से अफगान राजनीति पर हावी होना चाहते है, वहीं उदारवादी व समन्वयवादी नेता मसूद पख्तूनों की जातीय राजनीति के खिलाफ अल्पसंख्यकों तथा ईरान समर्थित शिया गुटों से परस्पर अच्छे सम्बन्ध बना कर अफगान राजनीति पर अपना अस्तित्व बरकरार रखना चाहते हैं। इसके अलावा कम्युनिस्ट सरकार में जनरल रसीद दोस्तम भी अपनी फौजी ताकत के बल पर अस्तित्व

---

315. आलिफ, शीन, "अफगान मसला, इस्लाम की फतह", अमर उजाला, 8 मई, 1992

की लड़ाई लड़ रहे हैं। इस प्रकार मुजाहिद्दीन गुरिल्लों के निजी स्वार्थों व महत्त्वाकांक्षाओं के कारण देश में जो हिंसा व आपसी संघर्ष के बादल छाये हैं उनसे अफगानिस्तान की पृष्ठभूमि अस्थिर हुई है।[316] दरअसल जब तक अफगानिस्तान में सोवियत फौजें थीं तब तक सभी गुटों का एक ही लक्ष्य था किन्तु अथक प्रयासों से हुई सैनिकों की वापसी के बाद मुजाहिद्दीन आपस में ही लड़ने लगे। अफगानिस्तान जैसा शायद ही कोई देश होगा जहां राष्ट्रपति, प्रधानमन्त्री और रक्षामन्त्री की अपनी-अपनी सेनाएं हों। कोई राष्ट्रीय लक्ष्य न होने के कारण अब हर कबीला सत्ता में हिस्सा मांग रहा है। जब तक सेनाओं में ऐक्य नहीं होगा, अफगानिस्तान में गृहयुद्ध चलता रहेगा। ईरान, अमेरिका व पाकिस्तान से मुजाहिदों को मिले हथियार समाप्त नहीं हुए हैं,[317] परन्तु अमेरिका व पाकिस्तान का मुजाहिदों पर वह असर अब नहीं रहा। यही कारण है कि वे स्वतन्त्र होकर खूनी लड़ाई लड़ रहे हैं।

सोवियत सेनाओं की वापसी के बाद अफगानिस्तान में विभिन्न कबीलों के बीच छिटपुट लड़ाई होती रही है। लेकिन वर्ष 1994 में नववर्ष के प्रथम दिवस से जो सत्ता संघर्ष शुरु हुआ वह धीरे-धीरे देश के कई राज्यों में फैल गया और उसका अन्त निकट भविष्य में दिखाई नहीं पड़ रहा है। यद्यपि बुरहानुद्दीन रब्बानी राष्ट्रपति हैं, पर वास्तविकता यह है कि उनका नियन्त्रण काबुल में भी पूरी तरह नहीं है।[318] ये संघर्ष उनका तख्ता पलटने के लिए है, लेकिन उनके वफादार सैनिकों ने उत्तरी अफगानिस्तान के शक्तिशाली नेता जनरल दोस्तम की सेनाओं को खदेड़ दिया है। इस संघर्ष में हिकमतयार और दोस्तम आपस में मिल गये हैं। दोस्तम इस बात को लेकर क्षुब्ध हैं कि उन्हें मुजाहिदों की संयुक्त सरकार ने कोई पद देने से इंकार कर दिया है, वे उन्हें कम्युनिस्ट घोषित करते रहे हैं।

हिज्बे इस्लामी के नेता हिकमतयार ने 'फ्रटियर पोस्ट' को दी गई भेंट वार्ता में कहा कि वे राष्ट्रपति रब्बानी के साथ अपने मतभेदों को निपटाने के लिए पाक प्रधानमन्त्री बेनजीर भुट्टो की मध्यस्थता स्वीकार करने के लिए तैयार हैं। संकट समाधान के लिए रब्बानी अपने पद से त्याग पत्र देकर अन्तरिम सरकार के लिए मार्ग प्रशस्त करें। उन्होंने संघर्ष की स्थिति के लिए राष्ट्रपति रब्बानी को जिम्मेदार ठहराया।[319] रब्बानी के सैनिकों ने महत्वपूर्ण भवनों और सैनिक स्थलों पर कब्जा बनाये रखा है, यद्यपि हिकमतयार ने इस दौरान काफी क्षति पहुंचाने का दावा किया। प्रतिद्वन्द्वी गुटों के बीच राकेट और गोलों से लड़ाई जारी है। जनवरी माह में

316. मिश्र, नरेन्द्रनाथ, "अफगानिस्तान में समाधान का रास्ता", नवभारत टाइम्स (दिल्ली), 9 फरवरी, 1994
317. नवभारत टाइम्स, 4 जनवरी, 1994
318. मिश्र, देखिए क्र. 316
319. नवभारत टाइम्स, 19 जनवरी, 1994

ही संघर्ष में लगभग एक हजार लोग मारे जा चुके हैं और चार हजार घायल हुए हैं। काबुल में इतनी दहशत है कि करीब डेढ़ लाख लोग काबुल छोड़कर जलालाबाद आ गए हैं। शरणार्थियों ने बताया कि असली नुकसान तो नागरिकों का हो रहा है।[320] पाकिस्तान जहां सभी गुटों से स्थायी युद्ध विराम पर सहमत होने और कूटनीति से मसले का हल खोजने की अपील कर रहा है, वहीं 12 जनवरी से उसने तुर्खम के साथ लगने वाली अपनी सीमा भी बन्द कर दी है। जिससे विस्थापित अफगानों की विपदा और अधिक बढ़ गई।[321] इन प्रतिबन्धों के बावजूद मौजूदा संघर्ष के दौरान बीस हजार से अधिक लोग पाक-सीमा पार कर चुके है।[322] लोग खाना व कपड़े के अभाव में दूसरे शरणार्थी भाइयों की उदारता पर जिन्दा हैं, क्योंकि संयुक्त राष्ट्र की राहत एजेन्सियों के पास बड़ी मात्रा में सहायता सामग्री का अभाव है। राहत शिवरों के आसपास कई जगह बारूदी सुरंग बिछी हुई हैं। समीक्षक, काबुल में संघर्ष जारी रहने की आशंका जाहिर कर रहे हैं।[323]

विश्व के अन्य राष्ट्रों की भांति अफगानिस्तान भी विविध समुदाय व सम्प्रदायों के लोगों के कारण जातिवाद की समस्या से पीड़ित रहा है। तत्कालीन कट्टरवादी इस्लामी सरकार की हिन्दू-सिक्ख विरोधी नीति के कारण पिछले दो साल से हजारों हिन्दू-सिक्ख परिवार अपना कारोबार छोड़कर भारत आ गए। भारत सरकार ने जब इस पर विरोध प्रकट किया तो काबुल सरकार ने कहा कि उसका पूरे काबुल पर नियन्त्रण नहीं है।[324] वह कश्मीर में जनमत संग्रह की माँग का समर्थन कर रही है। भारतीय गुप्तचर सूचना के अनुसार कई सौ अफगान मुजाहिदों ने कश्मीर घाटी में आतंकवादी गतिविधियों के लिए प्रवेश किया है। इस स्थिति से निपटने के लिए भारत द्वारा सर्वप्रथम शरणार्थियों के नाम पर रह रहे गैर कानूनी धन्धों में लिप्त हजारों अफगान नागरिकों की कार्यविधि पर निगरानी रखी जानी चाहिए। दूसरा, अफगान सरकार को यह स्पष्ट कर दिया जाय कि भारत कश्मीर में किसी भी प्रकार के हस्तक्षेप को शत्रुतापूर्ण समझेगा।

संयुक्त राष्ट्र महासचिव बुतरस गाली ने 24 मार्च को अपने प्रतिनिधि मोहम्मद-अल-मिस्त्री के नेतृत्व में एक दल लड़ाई में शामिल दोनों पक्षों के बीच विवाद समाप्त करने के उद्देश्य से भेजा। किन्तु संयुक्त राष्ट्र सूत्रों ने बताया कि अनेक इलाकों में लड़ाई छिड़ गई है। 1992 से अफगानिस्तान में शुरु हुई लड़ाई में कम से कम 11 हजार अफगान मारे जा चुके हैं।[325]

320. नवभारत टाइम्स, 12 जनवरी, 1994
321. नवभारत टाइम्स, 19 जनवरी 1994
322. नवभारत टाइम्स, 14 जनवरी, 1994
323. आनन्द, मधुसूदन, "काबुल में दहशत", नवभारत टाइम्स, 8 मार्च, 1994
324. मिश्र, नरेन्द्र, देखिए क्र. 368
325. दूरदर्शन समाचार, रात्रि 8.30, 4 अप्रैल, 1994

भारतीय विदेश मन्त्रालय ने अफगानिस्तान में जारी हिंसा पर गहरा क्षोभ प्रकट करते हुए संयुक्त राष्ट्र महासचिव द्वारा किए जा रहे शान्ति प्रयासों का स्वागत किया है। उसने इस मौके पर काबुल सरकार को सभी मानवीय सहायता देने का प्रस्ताव किया है। विदेशमन्त्रालय के प्रवक्ता ने कहा कि इस समय अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय को अफगानिस्तान में तत्काल लड़ाई समाप्त करने तथा समझौते के प्रयत्न करने चाहिए। पड़ोसी अफगानिस्तान से ऐतिहासिक सम्बन्धों के कारण अफगान जनता के कल्याण तथा खुशहाली के प्रति हमारी चिन्ता स्वाभाविक है।[326] वहाँ स्वतन्त्रता, स्थिरता व मजबूती के लिए भारत ने सम्बन्धित पक्षों से शान्ति की अपील की है।

कुर्सी के लिए प्रारम्भ हुए इस युद्ध से अफगानिस्तान की स्थिति सुधरने की आशा दिखाई नहीं देती। वास्तव में जिस धर्मराज्य के सपने मुजाहिद्दीन गुटों ने अफगान जनता को दिखाए थे, उसकी जगह आपसी मारकाट, हिंसा और अराजकता ही सामने आई। अब यद्यपि राष्ट्रपति रब्बानी का कार्यकाल समाप्त हो चुका है, लेकिन वहाँ किसी चुनाव की खबरें आने के बजाय छापामार लड़ाइयों की खबरें ही आ रहीं हैं।[327] इस बीच मुजाहिद्दीन नेता मोहम्मद नवीं मोहम्मदी ने सभी अफगान गुटों से अपील की है कि वह विवाद के हल के लिए आयोजित की जा रही परम्परागत "लोया जिरगा" सभा में अपना प्रतिनिधि भेजें। वे संयुक्त राष्ट्र के शान्ति प्रयासों का समर्थन करते हैं और बिना किसी बाहरी हस्तक्षेप के समस्या का हल चाहते हैं। इस प्रयास में हिकमतयार को भी शामिल होना चाहिए।

पाकिस्तान, अफगानिस्तान में भारत के खिलाफ भ्रम फैला रहा है कि भारत के द्वारा जमायते इस्लामी को सैनिक सहायता दी जा रही है। किन्तु भारतीय विदेश विभाग ने इस खबर का खण्डन करते हुए कहा कि अफगानिस्तान में चल रहे दु:खद संघर्ष के लिए पाकिस्तानी हस्तक्षेप जिम्मेदार है।[328] अफगानिस्तान का उदाहरण कश्मीरी जंगजुओं के लिए आंखे खोलने वाला होना चाहिए, कि पाकिस्तान किस तरह अपना स्वार्थ सिद्ध कर लोगों को आपस में लड़ने के लिए छोड़ देता है। वास्तव में, अफगानिस्तान में जब तक सर्वसम्मति से राजनीति नहीं होगी, समस्या का समाधान मुश्किल है। भारत के लिए यह परीक्षा की घड़ी है कि वह विभिन्न कूटनीतिक सूत्रों का प्रयोग कर, संयुक्त राष्ट्र शान्ति प्रयासों को कामयाब बनाते हुए अफगानिस्तान में एक उदार लोकतान्त्रिक सरकार की स्थापना में अहम् भूमिका निभाए।

---

326. नवभारत टाइम्स, 24 अप्रैल, 1994
327. वही, 29 जून, 1994
328. दूरदर्शन समाचार, प्रात: 7.00, 8 जुलाई, 1994

इस प्रकार पूर्ण विवरण से स्पष्ट है कि अफगानिस्तान में रूसी सैनिकों के हस्तक्षेप के पश्चात् प्रारम्भ हुए शीत युद्ध ने विकराल ग्रहण कर लिया। महाशक्तियों के शक्ति प्रसार में विकासशील देश उनका शिकार बन रहे है। एशिया में व्याप्त भय व तनाव से शक्ति सन्तुलन को बढ़ावा मिला तथा परस्पर शक्ति की श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए गठबन्धन भी उभरे हैं। अमेरिका व उसके मित्र देशों ने अफगानिस्तान में रूसी कार्रवाई को विस्तारवाद की संज्ञा दी और अफगान क्रान्ति विद्रोहियों को सशस्त्र सहायता दिए जाने पर बल दिया। ये विद्रोही देश में इस्लामी राज्य की स्थापना करना चाहते हैं। उनके संघर्ष और संयुक्त राष्ट्र के सतत् प्रयासों के तहत सोवियत संघ ने अफगानिस्तान से अपने सैनिकों को वापस बुला लिया, किन्तु बाहरी शक्तियों की मदद से वहां विद्रोही गतिविधियाँ जारी रहीं। तभी सोवियत संघ में विश्व को चौकाने वाली घटना घटित हुई, वह थी सोवियत संघ का विघटन। जिससे अमेरिका का विश्व में केन्द्रीय शक्ति के रूप में उदय हुआ। जो सम्पूर्ण विश्व में अपनी ही नीति का आधार चाहता है। अफगानिस्तान में संघर्षरत विद्रोहियों में सत्ता के विकेन्द्रीकरण को लेकर परस्पर सामंजस्य स्थापित नहीं हो सका है। भारत का प्रयास रहा है कि अफ़गानिस्तान में सैन्य गतिविधियाँ समाप्त हों और अफगान जनता द्वारा चुनी हुई सरकार की स्थापना हो।

*****

दशम् अध्याय

दशम अध्याय

भारत-अफगान सम्बन्धों का भविष्य

भारत का उत्तरी-पश्चिमी सीमान्त आज सबसे अधिक असुरक्षित है। भारत इस सीमा पर एक नहीं तीन युद्धों में संघर्षरत हो चुका है। साम्राज्यवादी और विस्तारवादी शक्तियाँ अभी भी इस महाद्वीप के लिए सबसे गम्भीर खतरा हैं। अत: आवश्यकता इस बात की है कि भारत अपनी सुरक्षा के लिए अपने छोटे पड़ोसी देशों के प्रति अपनाई नीति पर पुनर्विचार करे। पड़ोसी देशों की आकांक्षाओं एवं समस्याओं को समझे और इन देशों से सम्बन्धित नीतियों को बदले संदर्भों में नया रूप और सार्थकता दे। भारत का भविष्य इन आस-पास के देशों से ही जुड़ा है, क्योंकि निर्धन व अशांत एशिया भारत के लिए सबसे बड़ा अभिशाप है।

भारत का पड़ोसी व मित्र अफगानिस्तान पिछले एक दशक से महाशक्तियों की विस्तारवादी व साम्राज्यवादी नीतियों का शिकार रहा। वहाँ सरकार व जनता में कशमकश चलती रही, शान्ति वार्ताएं भी होती रहीं, किन्तु स्वतन्त्रता प्रिय अफगानों ने अपना संघर्ष जारी रखा। रूसी सेनाओं की वापसी व कम्युनिस्ट शासन के अन्त के बाद अफगान मुजाहिदों में सत्ता के लिए संघर्ष छिड़ गया। वास्तव में, जो देश इतने लम्बे समय तक एक महाशक्ति की वैशाखियों पर जबरन उठाए रखा गया हो, उसे बिना किसी दूसरी शक्ति की स्थापना के मुक्त कर दिया जाए तो वह देश आन्तरिक रूप से बुरी तरह बँट सकता है। अफगानिस्तान की वह स्थिति भारत तथा पाकिस्तान दोनों के लिए चिन्ता जनक हो सकती है।

अफगानिस्तान अपनी महत्वपूर्ण सामरिक स्थिति के कारण सदैव रूस, चीन, भारत, पाकिस्तान, ईरान, अमेरिका और पश्चिमी ताकतों के लिए एक महत्वपूर्ण चौकी बना रहा है। वहाँ चल रहे गृहयुद्ध के दौर में नजीब सरकार भारत के हित में थी। वहाँ किसी लोकप्रिय सरकार की स्थापना में यदि संयुक्त राष्ट्र के प्रयास असफल होते हैं और कट्टर पंथी सरकार की स्थापना का मार्ग प्रशस्त होता है तो परस्पर सम्बन्धों में व्यवधान होगा।[2] अफगानिस्तान में सत्ता के लिए प्रारम्भ हुआ गुरिल्ला युद्ध थमता नहीं दिखाई पड़ता और अब इनके पास उपलब्ध हथियारों के ढेर से भारतीय उपखण्ड भी तनाव वाला क्षेत्र बनता जा रहा है। इससे पहले भारत कभी ऐसा नहीं घिरा था, उसके पड़ोसी उसे किसी भी हाल में विश्व की छठी शक्ति नहीं बनने देना चाहते।

1. जोशी, त्रिनेत्र, "अफगानिस्तान का अतीत ही भविष्य का आईना है", जनसत्ता, 14 अप्रैल, 1988
2. व्यास, हरशिंकर, "हारते घोड़े पर भारत का दांव", जनसत्ता, 28 अप्रैल, 1988

इसलिए भारत को खण्डित करके अमेरिका सभी तटस्थ राष्ट्रों पर अपना वर्चस्व बना लेना चाहता है।[3] दूसरी ओर मुज़ाहिदों को समर्थन दिए जाने के बावजूद पाकिस्तान को पख़्तून समस्या के पुनर्जीवित होने का खतरा है।

अफगानिस्तान में गृहयुद्ध की स्थिति को देखते हुए सभी पड़ोसी देश अपने-अपने राष्ट्रीय हित को लेकर न केवल चिन्तित हैं, बल्कि वे वहाँ पूर्ण रूपेण शान्ति चाहते हैं। मध्य एशियाई गणतन्त्र भी क्षेत्रीय विकास को बढ़ावा देने के लिए अफगान समस्या के हल पर जोर दे रहे हैं। अफगानिस्तान के अन्दर और उसको लेकर पड़ोसी देशों में ध्रुवीकरण हो रहा है। एक ओर उदारवादी धर्मनिरपेक्ष मुसलमान हैं तो दूसरी ओर कट्टरवादी मुसलमान हैं। दोनों ही अफगानिस्तान में अपनी पकड़ मजबूत करने के लिए प्रयत्नशील हैं। आज दुनियां में सबसे अधिक अफगान शरणार्थी हैं।[4] वास्तव में, अफगानिस्तान का अन्तहीन गृहयुद्ध विस्तारवादी व साम्राज्यवादी शक्तियों की गतिविधियों का ही परिणाम है।[5] एक ओर अमेरिका व अन्य पश्चिमी देश मुजाहिदों को मदद देकर काबुल में अपने प्रभाव को स्थापित करने के लिए उतावले हैं वहीं दूसरी ओर पाकिस्तान व ईरान मिल-बाँट कर कम्युनिस्ट व साम्राज्यवादी प्रभाव को समाप्त कर अफगानिस्तान में इस्लाम को बहाल करना चाहते है।[6] वास्तव में, पड़ोसी पाकिस्तान व ईरान को अफगानिस्तान की एकता व अखण्डता की चिन्ता कभी नहीं रही। वे तो इस भूवेष्टित राष्ट्र को पूरी तरह अपने प्रभाव में देखना चाहते है, ताकि उसके द्वारा स्वहितों की पूर्ति की जा सके। जबकि भारत एक मजबूत व स्थिर अफगानिस्तान चाहता है, जिससे पाकिस्तान पर अंकुश रखा जा सके।

(क) सम्बन्धों का विश्लेषण

स्वतन्त्रता के पश्चात् से ही भारत की अफगान-नीति मूलरूप से पाकिस्तान आश्रित रही है। पाकिस्तान के विरोधी के रूप में हमें अफगानिस्तान की मैत्री हमेशा उपयोगी लगी।[7] अफगानिस्तान भी जहाँ एक ओर धार्मिक आधार पर पाकिस्तान से जुड़ा रहा है वहीं दूसरी ओर उपमहाद्वीप में भारत के सहयोगपूर्ण व अनुकूल रुख ने उसे विशेष रूप में आकर्षित किया। भारत दक्षिण एशिया की महान शक्ति है, वह इस क्षेत्र में शान्ति, स्थायित्व तथा विकास चाहता है। पड़ोसी अफगानिस्तान ने उसे इस कार्य में पूर्ण सहयोग व समर्थन दिया है। भारत के निकट पड़ोसी

---

3. हुसैन मुजफ्फर, "घिर रहा है हिन्द महासागर", जनसत्ता, 27 अप्रैल, 1989
4. "अफगानिस्तान में सेवान के प्रयास", नवभारत टाइम्स (लखनऊ), 28 फरवरी, 1992
5. जनसत्ता 15 अप्रैल, 1989
6. सिंह, राय, "अफगानिस्तान में राजनीति के दांवपेंच", जनसत्ता, 14 अप्रैल, 1989
7. वैदिक, वेदप्रताप, "अफगानिस्तान में नया शक्ति सन्तुलन", नवभारत टाइम्स, 8 नवम्बर, 1978

देशों में चीन व पाकिस्तान सर्वाधिक शक्तिशाली, किन्तु भारत के शत्रु देश रहे हैं। अन्य दक्षिण एशियाई देशों के प्रति भारत की सहयोग भावना रही है, ताकि क्षेत्रीय समर्थन प्राप्त हो सके। समान नीतियों व परिस्थितियों के कारण अफगानिस्तान भारत का निकटतम पड़ोसी एवं अनन्य मित्र रहा है। दोनों देश चिरकाल से ऐतिहासिक, भौगोलिक, सांस्कृतिक व आर्थिक सम्बन्धों में बंधे रहे है और कभी ऐसा अवसर नहीं आया कि जब उनकी मित्रता में कोई व्यवधान पड़ा हो। दोनों देश इतिहास में समान संकट से गुजरे थे, अतः उन्होंने समान विदेशनीति का अनुसरण किया। फलतः वे अन्तर्राष्ट्रीय मसलों पर परस्पर सामंजस्य व विचार-विमर्श द्वारा सदैव एकमत रहे। परस्पर घनिष्ट सम्बन्धों के तहत उन्होंने एक दूसरे की समस्याओं के प्रति अनुकूल रूख अपनाया। दोनों देशों ने कभी भी दूसरे देशों से मित्रता के लिए अपने सम्बन्धों में आंच नहीं आने दी। भारत व अफगानिस्तान ने गुटनिरपेक्षता को स्वीकार किया था, तथापि उनके पड़ोसी महाशक्ति सोवियत संघ से मधुर सम्बन्ध रहे।

स्वतन्त्रता के पश्चात् विभाजन द्वारा पाकिस्तान के उदय से उनके सम्बन्धों पर प्रभाव पड़ा। दोनों की पाकिस्तान से सीमा-सम्बन्धी समस्याएं उत्पन्न हुई। भारत के साथ कश्मीर और अफगानिस्तान के साथ पख्तून विवाद का मसला उठा। पाकिस्तान इस मसले को अपने ढंग से हल करना चाहता है। वह अमेरिका, चीन व पश्चिमी देशों से सैन्य सहायता प्राप्त कर क्षेत्र में शक्ति सन्तुलन बनाये रखना चाहता है। जिस पर भारत व अफगानिस्तान की चिन्ता स्वाभाविक है। पाकिस्तान के साथ मधुर सम्बन्धों के अभाव में दोनों देशों के परस्पर व्यापार में प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। इसलिए वे प्रारम्भ से ही पाकिस्तान के साथ सम्बन्धों में स्थायित्व के प्रयास करते रहे हैं, किन्तु इसमें उन्हें अधिक सफलता नहीं मिली, अपितु दोनों देश (भारत-अफगान) परस्पर सम्बन्धों के सूत्र में बंधते गए।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद रूस व अमेरिका के रूप में महाशक्तियों का उदय हुआ। इन शक्तियों ने सम्पूर्ण विश्व को अपनी शक्ति से प्रभावित करने का प्रयास किया। उन्होंने एशिया के छोटे व पिछड़े देशों को आर्थिक व सैन्य सहायता देकर अपने निजी स्वार्थों के लिए प्रयोग किया। अफगानिस्तान प्रारम्भ से ही इन महाशक्तियों का क्रीड़ा स्थल रहा। दूसरी ओर दक्षिण एशिया के विशाल राष्ट्र भारत की शक्ति को नियन्त्रित करने तथा उसे अपने प्रभाव में लाने के प्रयास भी समय-समय पर इन महाशक्तियों द्वारा किए जाते रहे। वर्ष 1962, 1965 व 1971 में क्रमशः चीन व पाकिस्तान द्वारा भारत पर किए गए युद्ध में इन महाशक्तियों ने अपनी शक्ति द्वारा क्षेत्रीय राजनीति को प्रभावित किया।

भारत में नेहरू से लेकर वर्तमान सरकार तक तथा अफगानिस्तान में जहीरशाह से लेकर नजीबुल्ला तक दोनों देशों में परस्पर मैत्रीपूर्ण आर्थिक व सांस्कृतिक सम्बन्ध बने रहे।[8] दोनों देशों के नेताओं की एक दूसरे के देशों में सद्‌भावना यात्राओं से जहाँ मैत्री व सहयोग की भावना को बल मिला, वहीं उन्हें परस्पर विचारों को जानने का अवसर मिला। वर्ष 1973 में अफगानिस्तान में दाऊद के नेतृत्व में गणतन्त्र की स्थापना हुई। दाऊद को भारत से विशेष लगाव था, इसलिए उनके काल में दोनों देशों के मध्य राजनैतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक सम्बन्धों में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। भारत में भी स्वतन्त्रता के पश्चात आई गैर कांग्रेसी सरकार (जनता पार्टी) ने दोनों देशों के प्राचीन सम्बन्धों के सूत्र को मजबूत किया। वर्ष 1978 में अफगानिस्तान में खलकी क्रान्ति द्वारा तराकी के नेतृत्व में सोवियत प्रभाववाली कम्युनिस्ट सरकार की स्थापना पर पड़ोसी देशों में अनुकूल प्रतिक्रिया नहीं हुई। किन्तु भारत ने न केवल सरकार को मान्यता प्रदान की, बल्कि विदेश मन्त्री श्री वाजपेयी को वहाँ भेजकर प्रगाढ़ राजनैतिक व आर्थिक सम्बन्धों के प्रयास किए। किन्तु खलकी क्रान्ति शासन में स्थिरता नहीं ला सकी और परस्पर मतभेदों के कारण पुनः क्रान्ति द्वारा हफीजुल्लाह अमीन ने सत्ता सम्भाली। जनता अमीन की नीतियों का विरोध कर रहे थी। ऐसी स्थिति में सोवियत संघ के पूर्ण सहयोग से पुनः क्रान्ति हुई, जिसे परचमी क्रान्ति कहा गया। तत्पश्चात् राष्ट्रपति कारमल ने रूसी सेनाओं को देश में अस्थिरता तथा बाह्य तत्त्वों से देश की रक्षा के लिए आमन्त्रित किया। गुटनिरपेक्ष अफगानिस्तान में रूस की इस कार्रवाई की विश्वव्यापी प्रतिक्रिया हुई। मुख्य प्रतिद्वन्द्वी अमेरिका तथा क्षेत्रीय प्रतिद्वन्द्वी चीन ने बहुत शोर मचाया। पाकिस्तान इस घटनाक्रम से सबसे अधिक प्रभावित हुआ था। इसलिए उसने इसकी कड़े शब्दों में निन्दा की, क्योंकि वहाँ बड़ी संख्या में सीमा पार से क्रान्ति विद्रोही मुजाहिद्दीन देश में प्रवेश कर स्थिति को असन्तुलित कर रहे थे। इस प्रकार पाकिस्तान की सैन्य सरकार अफगान संकट का नाम लेकर अमेरिका, चीन व पश्चिमी देशों से सैन्य व आर्थिक सहायता प्राप्त करने लगी।

भारत अपनी भौगोलिक स्थिति और विश्व शान्ति व क्षेत्रीय स्थिरता के प्रति जागरूक होने के कारण अफगानिस्तान व पाकिस्तान में होने वाले सैन्य व राजनैतिक परिवर्तनों की उपेक्षा नहीं कर सकता, दोनों ही देश शीत युद्ध के दौरान एक-एक महाशक्ति के हाथों में प्रत्यक्ष

---

8. तीसरे देशों के साथ सम्बन्ध बनाए रखने की दृष्टि से भारत ने कम्युनिस्ट तराकी से नजीबुल्लाह तक सभी के साथ राजनैतिक व आर्थिक सहयोग को बनाए रखना
- यूसिफ, वोडेनस्की, 'न्यू प्रेंसर्स आन द इण्डियन वोर्डर लैण्ड्स', जेन्स डिफेन्स वीकली (लन्दन), 30 अप्रैल, 1988, पृ. 840
- कबीर, मोहम्मद हुमायूँ, अबूताहेर सलाहुद्दीन अहमद, 'पोस्ट कम्युनिस्ट अफगानिस्तान: इम्पलीकेशन्स, चैलिंजज एण्ड प्रोस्पेक्ट्स फार ए न्यू आर्डर', बी.आई.आई.एम.एम. जनरल, खण्ड 13, अंक 4, अक्टूबर 1992, पृ. 3-5

व परोक्ष रूप में कैद रहे हैं। भारत की रक्षा व विदेश नीति इन दोनों देशों में होने वाले परिवर्तनों पर निर्भर करती है।

भारत में जनवरी 1980 में इन्दिरा गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस सरकार की पुनः स्थापना हुई। श्रीमती गांधी अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप के प्रति अफगान सरकार के दृष्टिकोण को स्वीकार करते हुए अपने मित्र सोवियत संघ के साथ थीं, क्योंकि अन्य गठबन्धन भारत के अनुकूल नहीं थे। उन्होंने कुशल कूटनीति द्वारा अफगान संकट के समाधान में अथक प्रयास किए। श्रीमती गांधी ने अन्तर्राष्ट्रीय व क्षेत्रीय सम्मेलनों में इस समस्या के राजनैतिक समाधान के लिए उचित वातावरण तैयार करने हेतु संयुक्त राष्ट्र व गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सिद्धान्तों को अपनाये जाने पर बल दिया। भारत ने संयुक्त राष्ट्रसंघ व गुटनिरपेक्ष आंदोलन में पाकिस्तान के प्रोपेगण्डा का विरोध किया और क्षेत्रीय असन्तुलन को समाप्त करने के लिए रूसी सेनाओं की वापसी की मांग की।

अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप के साथ ही एशिया में महाशक्तियों के मध्य शीत युद्ध प्रारम्भ हो चुका था। अमेरिका व चीन पाकिस्तान को माध्यम बनाकर अपनी शक्ति का प्रदर्शन कर रहे थे। इस गठबंधन का उद्देश्य अफगान मुजहिदों को हथियार, प्रशिक्षण, तथा अन्य साधन-सामग्री देकर अफगानिस्तान में सोवियत संघ के लिए कठिनाइयाँ उत्पन्न करना था। अफगान मुजाहिद इनकी मदद से अफगानिस्तान में रूसी सेनाओं की वापसी तथा सत्तारूढ़ कम्युनिस्ट सरकार का अन्त कर अपनी इस्लामिक सरकार की स्थापना के लिए संघर्ष कर रहे थे। स्थिति की गम्भीरता को देखते हुए प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी ने दोनों महाशक्तियों से संकट के शीघ्र समाप्त करने पर बल देते हुए हथियारों की होड़ का कड़े शब्दों में विरोध किया।

रूसी सेनाओं के हस्तक्षेप के पश्चात् भारत-अफगान सम्बन्धों में ठहराव आया। विद्रोही गतिविधियों के कारण भारतीय सहयोग से चल रही परियोजनाओं को बीच में ही बन्द करना पड़ा। फिर भी भारत ने अफगानिस्तान के साथ सम्बन्धों को पूरी तरह विच्छेद नहीं किया। वर्ष 1986 में डा0 नजीब राष्ट्रपति बने। उनकी शान्ति योजनाओं को भारत ने पूरा समर्थन प्रदान किया। सयुंक्त राष्ट्र के अथक प्रयासों तथा विश्व में बदल रहे समीकरणों के तहत फरवरी 1989 में रूसी सैनिकों की वापसी हुई। तदुपरान्त अमेरिका द्वारा सोवियत संघ की कूटनीतिक घेरेबन्दी के परिणाम स्वरूप आर्थिक रूप से खोखले कम्युनिस्ट सोवियत संघ का विघटन हुआ। अफगानिस्तान में भी मुजाहिदों के कठिन प्रयत्नों व संघर्ष के पश्चात् राष्ट्रपति नजीबुल्ला को त्यागपत्र देना पड़ा। वास्तव में भारत ने कभी कट्टरता को स्वीकार नहीं किया। यही कारण है कि मुजाहिदों

द्वारा स्थापित, अन्तरिम सरकार भारत के अनुकूल नहीं है। वह कश्मीर मुद्दे पर पाकिस्तान के साथ है। मुजाहिदों की धार्मिक रूढ़िवादिता का फायदा उठा कर पाकिस्तान इन्हें कश्मीर में आतंकवादी गतिविधियों के लिए भेज रहा है। अफगानिस्तान में सत्ता के लिए चल रहे संघर्ष को लेकर भारत चिन्तित है। उसने वहाँ लोकप्रिय सरकार की स्थापना के लिए संयुक्त राष्ट्र के शान्ति प्रयासों का समर्थन किया है।

भारत-अफगान सम्बन्धों के समीक्षापूर्ण विश्लेषण के साथ ही पड़ोसी देशों की गतिविधियों तथा परस्पर सम्बन्धों का विवरण देना भी शोध प्रबन्ध की मौलिकता के लिए अनिवार्य है।

भारत का आदर्शवादी समुच्चय स्वप्निल छाया की तरह भारत की विदेशनीति को प्रभावित करता रहा है। यही कारण है कि जब प्रत्येक देश अपने स्वार्थों के अनुकूल नीतियाँ बनाता, बदलता रहता है, दूसरों के स्वार्थ की चिन्ता कम ही रहती है। भारत ने पिछले 47 वर्षों में इस सिद्धान्त का पालन नहीं किया और बहुत हानि उठाई है। 1962 में चीन ने स्वयं पंचशील की धज्जियां उड़ाई थी और मित्रता के सिद्धान्तों की अवहेलना की थी। आज उसी चीन के साथ दक्षिण एशियाई देशों के अच्छे सम्बन्ध है, जबकि भारत को वे भय की नजर से देखते हैं।[9] श्रीलंका के प्रश्न पर दुनिया का कोई भी देश हमारे साथ नहीं था। हम नेपाल व भूटान तक की आक्रामक कार्रवाइयों पर लगाम नहीं लगा सकते हैं। हम चाह कर भी अपनी सामर्थ्य चीन के आस-पास नहीं कर सके है।[10] चीन की अजेय शक्ति को देखते हुए भारत उससे अपनी हारी हुई भूमि वापस लेने की स्थिति में भी नहीं है। आज अगर पाकिस्तान के पास परमाणु बम है तो इसका श्रेय चीन को भी है। चीन और पाक के मध्य सैन्य सम्बन्ध भारत की सुरक्षा व्यवस्था के लिए सदैव चुनौती रहे हैं।[11] बेनजीर भुट्टो की सरकार ने प्रारम्भ में जिस व्यावहारिक और गतिशील सोच का परिचय दिया, उससे राजीव गांधी के कार्यकाल में भारत और पाकिस्तान के बीच सम्बन्ध निश्चित तौर पर सुधरे किन्तु पाकिस्तान के कट्टर मुस्लिम नेताओं के उत्तेजक बयानों कारण स्थिति शीघ्र विस्फोटक हो गई। कश्मीर में आत्म निर्णय के अधिकार को लेकर, पाक नेताओं के समर्थन से तनाव अपनी चरम सीमा पर है। मुकाबले के काले बादल उपमहाद्वीप के क्षितिज पर इकट्ठे हो गए है।[12] भारत का मत है कि वह तब तक जंग शुरू नहीं करेगा, जब तक कि पाकिस्तान शान्ति का हर एक रास्ता बन्द न कर दे। यह सत्य है कि अब यदि

---

9. द इण्डिपेन्डैण्ट के सहयोग से, 'पड़ोसियों से भारत के सम्बन्ध बिगड़ रहें है', दिनमान टाइम्स, 31 मार्च, 1990
10. मिश्र, आशुतोष, 'राजीव शासन राजनयिक पराजय का काल रहा', जनसत्ता, 4 अगस्त, 1989
11. सतीश कुमार, 'चीन का बढ़ता दायरा', नवभारत टाइम्स, 21 मार्च, 1995
12. दीक्षित, आभा, 'पाकिस्तान की बढ़ती रणनीति का असर', दिनमान टाइम्स, 11-17 मार्च, 1990

भारत-पाकिस्तान के मध्य युद्ध होता है तो वह पिछले तीन युद्धों से मंहगा पड़ेगा।[13] इस तनावपूर्ण स्थिति में भारत और पाकिस्तान के बीच जब कूटनीतिक वार्ताएं होती हैं तो वे कुछ ठोस परिणाम उपलब्ध कराने के बजाय तनाव कम करने या सम्भावित टकराव को टालने का माध्यम बनती है।

अफगान विदेशमन्त्री अब्दुल वकील ने अपनी भारत यात्रा पर कहा कि हिन्दुस्तान और अफगानिस्तान के सम्बन्ध बहुत पुराने हैं, जो कठिन परिस्थितियों में भी कम नहीं हुए हैं। उन्होंने कश्मीर तथा अफगानिस्तान में पाकिस्तान द्वारा की जा रही दखलन्दाजी पर चिन्ता प्रकट करते हुए कहा कि पाकिस्तान की अस्वाभाविक गतिविधियों के कारण आज स्थिति इतनी खराब हुई है।[14] सोवियत संघ भी प्रारम्भ से ही कश्मीर के प्रश्न पर भारतीय मत से सहमत रहा है।[15]

भारत के पड़ोसी देशों व विश्व की बड़ी शक्तियों का आकलन रहा है कि जो पाकिस्तान को कन्ट्रोल करेगा, वह भारतीय उपमहाद्वीप पर भी नियन्त्रण रखने में सफल होगा; शायद पाकिस्तान की इसी भू-राजनैतिक स्थिति के कारण आज भारत जैसे बड़े देश एवं उभरती क्षेत्रीय शक्ति के रहते हुए अमेरिका, चीन तथा ईरान जैसे मुस्लिम देश पाकिस्तान के साथ दोस्ती रखना चाहते हैं। भारत ने पाकिस्तान के खतरनाक इरादों को निर्मूल करने के लिए अफगानिस्तान के साथ राजनैतिक दोस्ती कायम की थी, लेकिन अमरीकी समर्थन और उसके राजनैतिक स्वार्थ के कारण अफगानिस्तान पर कट्टरपन्थियों का शिकन्जा कस गया, जो भारतीय हितों के अनुरूप नहीं है। पाकिस्तान का स्वयं के अस्तित्व को लेकर भारत से अलगाव व विरोध है। अपने से कई गुना बड़े भारत से वह सद्भाव व मैत्री के बजाय ताकत के बल पर उनका हल चाहता है। वह कश्मीर को मुस्लिम बहुल आबादी के नाम तथा मानवाधिकार के उल्लंघन का आरोप लगाकर सैनिक शक्ति से हड़पना चाहता है।[16] पाकिस्तान ने आतंक फैला दिया है कि यदि कश्मीर का विवाद उसकी इच्छानुसार हल नहीं हुआ तो उसका परिणाम परमाणु युद्ध के रूप में हो सकता है। उसके ब्लैकमेल से भय खाकर पश्चिमी देश भारत पर कश्मीर समस्या के समाधान के लिए दबाव डाल रहे है। दूसरी ओर भारत को भी इन स्थितियों के कारण अपनी सैन्य ताकत में बढ़ोत्तरी के लिए मजबूर होना पड़ रहा है। विश्व के बदलते परिपेक्ष्य में भी अमेरिका के लिए पाकिस्तान की राजनैतिक उपयोगिता कायम है। इसलिए कश्मीर में वर्षो से पाकिस्तान द्वारा प्रायोजित

---

13. मोहनराम, 'युद्ध हुआ तो हारजीत का फैसला नहीं होगा, न ही इस युद्ध से कोई समस्या सुलझेगी', दिनमान टाइम्स, 22-28 जुलाई, 1990
14. दूरदर्शन समाचार, 12 जुलाई, 1990
15. सोवियत विदेशमन्त्री का वक्तव्य, आल इण्डिया रेडियो, 26 जुलाई, 1990
16. शेखर, सुरेन्द्र, 'भारत के लिए परमाणुबम कितना जरूरी', सरिता, जून 1994, पृ.20-22

आतंकवाद के बावजूद अमेरिका उसे आतंकवादी देश घोषित नहीं करना चाहता।[17] इसके विपरीत सैन्य सहायता फिर से शुरू करने की बेताबी दिखाकर वह उसे सम्मानित कर रहा है।

अफगानिस्तान के सन्दर्भ में पाकिस्तानी नीति

अफगानिस्तान के सन्दर्भ में पाक विदेशनीति का जायजा लेना आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है। अफगानिस्तान में घटी घटनाओं से पाकिस्तान को लाभ हो रहा है। उसने अफगानिस्तान में दोहरी नीति का प्रयोग किया। एक ओर पाक नेता अफगान समस्या के राजनैतिक समाधान का समर्थन करते आए हैं तो दूसरी ओर हिकमतयार को हथियारों और हर प्रकार की सहायता करके दक्षिणी अफगान क्षेत्र के अधिक से अधिक भाग पर कब्जा करने को प्रोत्साहन भी देते आए है।[18] पाकिस्तानी विदेशनीति की पहली सफलता यह थी कि उसने अफगानिस्तान के मुजाहिदों को इस्लाम के नाम पर संगठित किया। जमायते इस्लामी तथा हिज्बे इस्लामी को पाकिस्तान ने पूरी तौर पर शरण तथा मदद प्रदान की। लगभग तीस लाख अफगान शरणार्थियों के लिए अमेरिका, सऊदी अरब तथा अन्य इस्लामी देशों से मिल रही भारी आर्थिक व सैनिक सहायता का उपयोग पाकिस्तान स्वयं अपने लिए करता रहा है। दूसरी ओर शरणार्थियों के तस्करी व अन्य असामाजिक गतिविधियों में लिप्त रहने के कारण कराची और उसके आस-पास के क्षेत्रों में आये दिन दंगे होने लगे हैं।[19] वास्तव में, पाकिस्तान के निर्माण की जड़ें हिंसा में छिपी हुई हैं। दूसरे, पाकिस्तानी शासक समस्या को सुलझाने की बजाय उलझाने की कोशिश करते रहे हैं। इस प्रकार एक तो हिंसा की मानसिकता, ऊपर से हथियारों का मिल जाना, इससे पाकिस्तान की स्थिति विस्फोटक हुई है। पाकिस्तान में कश्मीरी आतंकवादियों को प्रशिक्षण देने के लिए जगह-जगह खोले गए शिविर स्वयं उसके लिए भस्मासुर साबित हो रहे हैं।[20]

सोवियत संघ के पतन के बाद पूरी दुनिया में एक ध्रुवीय शक्ति अमेरिका का वर्चस्व कायम हो गया। यद्यपि शीत युद्ध की समाप्ति के पश्चात् पाकिस्तान को लेकर भारत-अमेरिका सम्बन्धों में व्याप्त तनाव समाप्त हुआ है, किन्तु वह भारत पर आर्थिक प्रतिबन्ध लगाकर उसे अपनी शर्तों पर व्यापार में साझेदार बनाना चाहता है। इसके लिए उसने अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष, गैट तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय एजेन्सियों को माध्यम बनाया है और अब वह परमाणु अप्रसार सन्धि को लेकर कमजोर व विकासशील देशों पर आर्थिक व राजनैतिक दबाव डाल रहा है। वह चाहता

17. शेखर, सुरेन्द्र, 'भारत के लिए परमाणुबम कितना जरूरी', सरिता, जून 1994, पृ.20-22
18. राय सिंह, 'अफगानिस्तान में हारे तो अफगान ही हैं', जनसत्ता, 18 मई, 1992
19. हुसैन मुजफ्फर, 'अफगान टूटे तो खतरा, न टूटे तो खतरा', जनसत्ता, 12 मई, 1992
20. राय, अमरेन्दु कुमार, 'पाकिस्तान इतना हिंसक क्यों है', नवभारत टाइम्स, 21 मार्च, 1995

है कि परमाणु सम्पन्न देशों के पास हथियार बने रहें, जबकि गैरपरमाणु सम्पन्न राष्ट्र परमाणु हथियार न बना सकें। अमरीकी दबाव के बावजूद भारत इस भेदभाव मूलक सन्धि का विरोध कर रहा है।[21]

संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् में स्थायी सदस्यता के भारतीय दावों को जहाँ अमेरिका ने क्षेत्रीय समर्थन हासिल करने (मूलतः कश्मीर मसले के हल तथा पाकिस्तान से सम्बन्ध सुधारने) जैसी शर्तों से नत्थी कर दिया, वहीं जर्मनी और जापान के साथ उसने कोई शर्त नहीं लगाई है। वास्तव में अमेरिका प्रारम्भ से ही संयुक्त राष्ट्रसंघ पर अपना दबदबा बनाए रखने एवं उसके माध्यम से विश्व राजनीति को अपनी इच्छानुसार संचालित करने जैसे मनोविकारों से ग्रस्त रहा है।[22] दूसरी ओर विरोधी कुण्ठा से ग्रस्त पाकिस्तान लगातार भारत की सुरक्षा परिषद् में स्थायी सदस्यता का विरोध कर रहा है।[23]

इस प्रकार अफगानिस्तान से सेनाओं की वापसी, सोवियत संघ के विघटन और शीतयुद्ध की समाप्ति के बाद जहाँ अन्तर्राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय तनाव में कमी आई, वहीं दक्षिण एशिया विश्व के प्रमुख तनाव क्षेत्र के रूप में उभरा है। कम्युनिस्ट चीन की बढ़ती हुई सैन्य शक्ति तथा पाकिस्तान का उसके साथ गठजोड़ एवं उनके भारत विरोधी रूख से सम्पूर्ण क्षेत्र में खतरा उत्पन्न हुआ है।

अफगानिस्तान में लगातार 14 वर्ष के संघर्ष के बाद कम्युनिस्ट शासन का अन्त हुआ। अन्तरिम सरकार ने सत्ता में आते ही घोषणा की कि अफगानिस्तान पूर्ण इस्लामिक राज्य है। नई सरकार पाकिस्तान व ईरान के साथ सम्बन्धों को बनाए रखना चाहती है। दूसरी ओर पाक सरकार भारत-अफगानिस्तान के बीच दूरियाँ बनाए रखने तथा अपने प्रभाव विस्तार के लिए कूटनीतिक गठजोड़ की कोशिश में लगी हुई है। अफगान सरकार पड़ोसी देशों की विस्तारवादी नीति से चिन्तित है। पश्चिम भी अफगानिस्तान में कट्टरवादी सरकार नहीं चाहता। यही कारण है कि अमेरिका आदि देशों ने उसे मान्यता प्रदान नहीं की। वास्तव में नई सरकार अफगानिस्तान में स्थायित्व व शान्ति बनाए रखने में असफल रही है, यही कारण है कि देश में गृहयुद्ध जारी है।[24]

अफगानिस्तान सामान्यतः प्रत्यक्षरूप में भारतीय सुरक्षा व्यवस्था पर संकट उत्पन्न नहीं करता, फिर भी अफगान सरकार की प्रवृति, वहाँ की कूटनीतिक स्थिति व विदेशी हस्तक्षेप भारतीय

21. सिंह, गोविंद, 'ऐसे समझौते ही विश्व युद्ध की ओर धकेलते हैं', नवभारत टाइम्स, 23 अप्रैल, 1995
22. कुमार, अवधेश, 'विश्व दृष्टि के विचलन का क्षण', नवभारत टाइम्स, 25 मार्च, 1995
23. सिंह, गोविंद, 'सुरक्षा परिषद में भारत की दावेदारी', नवभारत टाइम्स, 19 मार्च, 1995
24. कबीर, मुहम्मद हुमायुं, अहमद अबुताहेर, सलाहुद्दीन, देखिए क्र. 8

विदेशनीति को प्रभावित करता है। भारत अपने राष्ट्रीय हित व सुरक्षा के लिए अफगानिस्तान का सभी क्षेत्रों में विकास तथा उसे सुदृढ़ बनाना चाहता है। भारतीय नीति इस बात पर निर्भर करती है कि अफगानिस्तान मजबूत, शक्ति सम्पन्न तथा धार्मिक दृष्टि से स्थिर हो, ताकि पाकिस्तान वहाँ अस्थिरता न फैला सके। अफगानिस्तान में गणतान्त्रिक व जनता द्वारा चुनी हुई सरकार ही परस्पर सम्बन्धों को बनाए रख सकती है। नई दिल्ली व इस्लामाबाद दोनों ही अफगानिस्तान की ऐतिहासिकता से जुड़े हुए हैं। भारत, वर्तमान अफगान सरकार के साथ मित्रता बनाए रखने के लिए[25] वहाँ चल रहे गृहयुद्ध की स्थिति में मुजाहिदों की कार्यप्रणाली पर नज़र रखे हुए है।[26]

अफगानिस्तान में जहाँ अनेक मुजाहिद्दीन गुट अफगान समस्या का समाधान बलपूर्वक करने पर तुले हैं तो दूसरी ओर अफगानिस्तान के उत्तरी भाग में ताजिक, उजबेक और तुर्कमान कबायली नेता अफगानिस्तान के विभाजन के लिए सैनिक तैयारियां कर रहे हैं।[27] वास्तव में विभिन्न जातीय कबीलों की यह लगभग कभी न समाप्त होने वाली दुश्मनी अफगानिस्तान को संगठित आधुनिक राज्य नहीं बनने देती। इसलिए वहाँ केन्द्रीय सत्ता कभी भी शक्तिशाली नहीं रही।[28] अब काबुल को छोड़कर अनौपचारिक रूप से अफगानिस्तान का जातीय विभाजन हो चुका है। प्रश्न केवल यह है कि इस विभाजन के पीछे कौन से देश अफगानिस्तान के किस क्षेत्र पर आँख लगाए हुए है और अपने मोहरे किस प्रकार से चला रहे हैं। किन्तु भारत का इन शतरंजी चालों में कोई हाथ नहीं है।[29]

अफगानिस्तान में जातीय और क्षेत्रीय आधार पर चल रहे गृहयुद्ध से उत्पन्न अन्य समस्याओं में से सबसे गम्भीर समस्या है- भुखमरी की समस्या। मुजाहिदों की छापामार कार्रवाइयों के कारण यातायात के साधन ठप्प पड़ गए है और खाद्य सामग्री आनी बन्द हो गई। संयुक्त राष्ट्र द्वारा जारी की गई अपील के उत्तर में पाकिस्तान ने दस हजार टन गेहूँ विमान द्वारा काबुल और कन्धार भेजने का प्रबन्ध कर दिया है। ईरान को भी विमानों द्वारा काबुल, कन्धार और हिरात में खाद्य सामग्री पहुँचाने में कोई बाधा नहीं होगी। भारत ने पहले ही अफगानिस्तान को पचास हजार टन गेहूँ देने का समझौता किया था, लेकिन पाकिस्तान द्वारा पैदा की गई अड़चनों के कारण इस पर अमल नहीं हो सका। भारत ने चिकित्सा सेवाएं और उससे सम्बन्धित यन्त्र पहुँचाने का कुछ वर्ष पूर्व अफगानिस्तान से समझौता किया था, पर इस कार्य में भी विलम्ब हो रहा

25. सिंह, राहुल, 'अफगानिस्तान इण्डिया इन लूजर', डाईलोग, (ढाका), 15 मई, 1992
26. कबीर, मुहम्मद, अहमद अबुताहेर, सलाहुद्दीन, देखिए क्र. 8
27. सिंह, राय, 'अफगानिस्तान में विभाजन की योजनाएं', जनसत्ता (दिल्ली), 19 अप्रैल, 1992
28. अराजक अफगानिस्तान, जनसत्ता (दिल्ली), 19 अप्रैल, 1992
29. सिंह, राय, देखिए क्र. 18

है। इसी कारण अफगानिस्तान में जो भारत की छवि थी, उसे आघात पहुंचा है। दूसरी ओर भारत से सहायता की आशा रखने वाले मुजाहिद्दीन भी उसके प्रति उत्साहित नहीं है। दरअसल अफगानिस्तान में विभिन्न राष्ट्रों के स्वार्थों और हितों का ऐसा जाल फैल चुका है कि स्थितियाँ सुधरने के बजाय खराब ही हो रही है। पाकिस्तान, ईरान, उजवेकिस्तान, तजाकिस्तान और रूस तो अफगानिस्तान की स्थिति से सीधे-सीधे जुड़े हैं ही, सऊदी अरब, अमेरिका और भारत भी किसी न किसी रूप में प्रभावित होते हैं। अप्रैल 1992 में विभिन्न मुजाहिद गुटों के बीच सुलह कराने में यदि पाकिस्तान की प्रमुख भूमिका थी, तो आज उन्हें भिड़ाए रखने में भी उसकी भूमिका कम नहीं है। वह अफगानिस्तान में विशुद्ध रूप से कठपुतली सरकार चाहता है। रब्बानी के सत्ता सभालते ही उसने हिकमतयार को भड़काना शुरू कर दिया। इसलिए आज अफगानिस्तान में पाकिस्तान विरोधी भावनाएं बढ़ रही हैं। हिकमतयार को पाकिस्तान, दोस्तम को उजवेकिस्तान, और रब्बानी व अहमद शाह मसूद को तजाकिस्तान का समर्थन प्राप्त है। इन बाहरी दबावों के के बीच अफगान जनता पिस रही है।[30] ऐसी स्थिति में भारत ने अफगानिस्तान के आन्तरिक मामलों में विदेशी हस्तक्षेप तुरन्त रोकने और एक देशव्यापी स्थायी युद्ध विराम का आह्वान किया है। वहाँ मुजाहिद गुटों के परस्पर संघर्ष में राकेटों की अनवरत बौछार और तोपों एवं विमानों से बमबारी सतत् जारी है। अफगानिस्तान में अस्थिरता का प्रभाव न केवल इस पूरे क्षेत्र में, बल्कि स्वयं भारत की शान्ति व सुरक्षा पर पड़ना स्वाभाविक है।[31]

अफगान गृहयुद्ध में तालिबान के उदय से शक्ति-सन्तुलन बदला

गृहयुद्ध से जर्जर और खोखले हो चुके अफगानिस्तान में तालिबान के आकस्मिक उदय से देश के समीकरणों में नाटकीय बदलाव आया है। काबुल के प्रवेश द्वार पर दस्तक दे रही इस रहस्यमयी ताकत से न सिर्फ हिकमतयार जैसे दिग्गजों के पैर उखड़ गए हैं, बल्कि संयुक्त राष्ट्र को भी अपनी बहुप्रतीक्षित शान्ति योजना का क्रियान्वन स्थगित करना पड़ा है। जिसमें राष्ट्रपति रब्बानी का इस्तीफा तथा मुजाहिद्दीन गुटों के प्रतिनिधियों को लेकर एक नई अन्तरिम सरकार बनाने की बात कही गई थी। राष्ट्रपति रब्बानी और तालिबान दोनों ने इस शान्ति योजना को नामन्जूर कर दिया। तालिबान का कहना था कि अन्तरिम सरकार में सिर्फ सच्चे इस्लामी प्रतिनिधियों को शामिल किया जाए और योजना में प्रस्तावित संक्रमण काल के दौरान काबुल में शान्ति व्यवस्था की जिम्मेदारी एक तटस्थ सुरक्षा बल को सौंपी जाए।[32] तीन वर्ष के बाद तालिबान सहित अन्य

30. 'अफगानिस्तान में कुर्सी युद्ध', नवभारत टाइम्स (नई दिल्ली), 29 जून, 1994
31. नवभारत टाइम्स, 7 दिसम्बर, 1994
32. व्यास, मुकुल, 'तालिबान के उदय से शक्ति सन्तुलन बदला', नवभारत टाइम्स, 27 फरवरी, 1995

मुजाहिद गुट संयुक्त राष्ट्र की मध्यस्थता में राष्ट्रपति-चुनाव के लिए 20 फरवरी को मिले। अप्रैल 1992 से अब तक मुजाहिद्दीन 10 बार इस तरह मिल चुके हैं, किन्तु संघर्ष जारी रहा है। राष्ट्रपति रब्बानी ने बताया कि वे संघर्ष से दुःखी हैं।[33] वे संयुक्त राष्ट्र योजना के तहत गृहयुद्ध समाप्त करने हेतु पद छोड़ने के लिए तैयार हैं। संयुक्त राष्ट्र के विशेष दूत श्री मिस्त्री सम्बद्ध पक्षों से सत्ता हस्तान्तरण के लिए बातचीत कर रहे हैं, उन्होंने बताया कि तालिबान ने भी सहयोग के लिए वायदा किया है।[34]

तालिबान (इस्लामी छात्र मिलिशिया) का इस समय देश के एक तिहाई हिस्से पर नियन्त्रण है। तालिबान के उदय के पीछे पाकिस्तान की खुफिया एजेन्सी आई. एस. आई. का हाथ है। जिसने पाक सीमावर्ती प्रान्तों के मदरसों में इस्लाम का अध्ययन करने आए लगभग दो हजार अफगान छात्रों को हथियार बन्द कर उन्हें सैनिक प्रशिक्षण दिया। इसका उद्देश्य अफगानिस्तान के संघर्षरत मुजाहिद्दीन गुटों को सबक सिखाना था। नवम्बर 1994 में इन छात्र सैनिकों ने अफगानिस्तान में प्रवेश किया और बिना किसी खास प्रतिरोध के दक्षिणी अफगानिस्तान के प्रमुख शहर कन्धार पर कब्जा कर लिया।[35] इस संघर्ष के दौरान दुकानें, मकान, स्ट्रीट लाईट, सड़कें टूटीं, किन्तु सोवियत हस्तक्षेप के पश्चात् अब वहाँ की युद्ध से त्रस्त जनता ने शान्ति का अनुभव किया। संगठन के प्रवक्ता मुल्ला मासूम अफगानी ने कहा कि कन्धार में अब तालिबान के सदस्य ही हथियार रख सकते हैं। हथियारों के हटाने से शान्ति आएगी। तालिबान, शहर में शान्त व स्थिर सरकार चाहते हैं।[36]

कन्धार में कब्जा करने के बाद तालिबान ने अपना अभियान जारी रखते हुए जनवरी में हिज्बे इस्लामी नेता हिंकमतयार को काबुल के दक्षिण में स्थित मुख्यालय छोड़ने को बाध्य कर दिया। इस्लामी छात्र सैनिक अब काबुल में रब्बानी और अहमद शाह मसूद के ताजिक बलों को लड़ाई के लिए चेतावनी दे रहे हैं। पिछले 6 महिनों की यह बड़ी लड़ाई है जिसमें मिग जैट लड़ाकू विमानों का प्रयोग किया गया। सरकारी फौजों ने तालिबान को पूरी तरह काबुल से खदेड़ दिया।[37] पाक दूतावास के सदस्यों ने इस संघर्ष के कारण अपने काबुल स्थित कार्यालय को जलालाबाद स्थानान्तरित कर लिया है। तालिबान ने रब्बानी के लिए फतवा जारी किया है।[38]

---

33. 'अफगान फंकशन्स रीच एग्रीमेण्ट', द संडे टाइम्स ऑफ इण्डिया, 12 फरवरी, 1995
34. ग्रेग मेरी, 'अफगान प्रेसीडेन्ट एग्री टु स्टेप डाउन', द टाइम्स ऑफ इण्डिया, 23 फरवरी, 1995
35. व्यास, देखिए, क्र. 32
36. 'तालिबान, सोवियार्न ऑफ कन्धार', टाइम्स ऑफ इण्डिया, 2 मार्च, 1995
37. 'गवर्नमेण्ट फेसिस रेस्ट, काबुल फ्रॉम तालिबान', टाइम्स ऑफ इण्डिया, 27 फरवरी, 1995
38. टाइम्स ऑफ इण्डिया, 14 मार्च, 93

तालिबान का उद्देश्य अफगानिस्तान में इस्लामी सरकार स्थापित करना है। वे देश में स्थायी शान्ति के लिए सभी मुजाहिद्दीन गुटों को निरस्त्र करना चाहते हैं। पिछले तीन महीनों में तालिबान छात्र सैनिकों की संख्या दो हजार से बढ़कर पच्चीस हजार हो गई। तालिबान के पास लगभग एक दर्जन मिग-21 विमान, 200 टैंक और अन्य अत्याधुनिक हथियार हैं, जो रूसी हस्तक्षेप के समय अमेरिका व अन्य पश्चिमी शक्तियों द्वारा पाकिस्तान को दिए गए थे।[39]

पिछले तीन साल से चल रहे गृहयुद्ध से अफगानिस्तान तबाह हो चुका है। मुजाहिद गुटों की आपसी लड़ाई के कारण जारी हिंसा में अब तक लगभग 25000 लोगों की जानें जा चुकी हैं। मुजाहिद गुटों के खिलाफ पनप रहा जन-असन्तोष का लाभ भी तालिबान को मिला है। यही वजह है कि तालिबान को पख्तून इलाकों में किसी बड़े प्रतिरोध का सामना नहीं करना पड़ा। संयुक्त राष्ट्र शान्ति मिशन ने भी तालिबान की उभरती हुई ताकत को स्वीकार किया है। अन्तरिम सरकार को लेकर उत्पन्न हुए मतभेद के कारण जनरल रशीद दोस्तम ने धमकी दी है कि यदि उनके इलाके में सेनाएं हटाने की कोशिश की गई तो वे दक्षिणी तुर्कमिस्तान नाम से अलग राष्ट्र की घोषणा कर देंगे।[40] दूसरी ओर श्री मिस्त्री, रब्बानी और तालिबान के बीच गतिरोध दूर करने के लिए नए सिरे से बातचीत कर रहे हैं। जिसमें रब्बानी, तालिबान को भी सर्वदलीय प्रशासन आयोग* में शामिल करने पर जोर दे रहे हैं। ताकि उनके सदस्य काबुल में हमला न कर सकें।[41] राष्ट्रपति के प्रवक्ता मसूद खलीली ने कहा कि तालिबान को आयोग का सदस्य बनने के लिए प्रेरित करने की जरूरत है।[42] अब उग्रपंथी धार्मिक छात्रों के संगठन तालिबान के साथ हिज़्बे वाहदात और हिज्बे इस्लामी गुट तालमेल के लिए बातचीत कर रहे हैं। राष्ट्रपति रब्बानी की सेनाओं ने यू0 एन0 शान्ति प्रस्ताव का उल्लंघन करते हुए 1992 में सत्ता सम्भालने के बाद पहलीबार काबुल के साथ ही उसके आसपास के इलाके पर भी कब्जा कर लिया। तीन वर्ष के गृहयुद्ध में उनकी यह सबसे बड़ी विजय है। मुजाहिदों के अन्य विपक्षी गुट भी काबुल में राकेटों से हमले कर रहे हैं। इन विपक्षी गुटों का देश में तीस प्रान्तों में से बीस पर कब्जा है।[43]

अफगानिस्तान में विभिन्न मुजाहिद्दीन गुटों में आपसी संघर्ष तेज होने के कारण भारत ने काबुल में अपना दूतावास दोबारा नहीं खोलने का निश्चय किया है। विदेश सचिव श्री के0

39. व्यास, मुकुल, देखिए क्र. 34
40. दूरदर्शन समाचार, 21 फरवरी, 1995
* जिनको संयुक्त राष्ट्र के अनुसार सत्ता सौंपी जानी है।
40. द टाइम्स ऑफ इण्डिया, 23 फरवरी, 1995
42. नवभारत टाइम्स, 22 फरवरी, 1995
43. 'रब्बानी मे नोट कॉम्पली विद यू. एन. प्लान', टाइम्स ऑफ इण्डिया, 21 मार्च, 1995

निवासन ने कहा कि अफगानिस्तान की स्थिति अत्यन्त अस्पष्ट है तथा हाल में गठित तालिबान छापामार गिरोह ने समस्या को और जटिल बना दिया है। अत: काबुल में जब तक सामान्य स्थिति बहाल नहीं हो जाती, वहाँ दूतावास खोलना कठिन कार्य है। दिसम्बर 1994 में विदेश मन्त्रालय में संयुक्त सचिव बी0 कुमार के नेतृत्व में उच्चस्तरीय आधिकारिक दल ने काबुल जाकर युद्ध से जर्जर अफगानिस्तान की सुरक्षा स्थिति का जायजा लिया और अफगान सरकार से द्विपक्षीय मुद्दों पर विचार-विमर्श भी किया। जिसमें प्रस्ताव रखा गया था कि काबुल में शीघ्र दूतावास खोला जाए।[44]

पाकिस्तानी प्रेस राष्ट्रपति रब्बानी को भारतीय समर्थन के आरोप दोहराता रहा है। किन्तु तालिबान के उदय से यह स्पष्ट हो गया है कि पाकिस्तान ही अफगानिस्तान की गृहयुद्ध की स्थिति को और बिगाड़ने के लिए जिम्मेदार है। संयुक्त राष्ट्र के विशेष दूत की भी राय है कि वहाँ संकट जारी रहने का कारण बाहरी हस्तक्षेप है। यदि अफगानों पर संकट के समाधान का भार होता तो वे आपस में इसका हल बहुत समय पहले खोज लेते। राष्ट्रपति रब्बानी ने भी पाकिस्तान पर तालिबान को मदद दिए जाने का आरोप लगाया है। तालिबान के कमाण्डर मुल्ला अब्दुल कादिर ने एक बयान में कहा कि हमारी रणनीति काबुल पर केवल कब्जा करने की ही नहीं है, अपितु हम मुल्क में अमन कायम करने के लिए सारे अफगानिस्तान पर अधिकार करना चाहते हैं। अगर रब्बानी ने सत्ता तथा अपने विपुल हथियार तालिबान को नहीं सौंपे तो हम युद्ध छेड़ देंगे। राष्ट्रपति के सेनापति मसूद का मत है कि पाकिस्तान जैसे देशों ने गृहयुद्ध में दखल-अन्दाजी जारी रखी तो अफगान युद्ध लम्बा होता जाएगा। जबकि पाकिस्तान यह कहता रहा है कि वह तटस्थ है और अब किसी भी गुट को मदद नहीं देता। बेनजीर भुट्टो ने भी अपने एक बयान में कहा कि वे अफगानिस्तान में शान्ति चाहती हैं ताकि उनके देश में रह रहे लगभग बीस लाख शरणार्थी स्वदेश वापस लौट सकें।[45]

काबुल में पन्द्रह महीने बाद पुन: 4 मई को भारतीय दूतावास ने काम करना शुरु कर दिया। गृहयुद्ध के कारण जनवरी 1994 में इसे बन्द कर दिया गया था। भारतीय संसद में (लोक सभा) विदेश राज्यमन्त्री आर0 एल0 भाटिया ने बताया कि 24662 अफगानी, भारत में बस चुके हैं। उन्होंने कहा कि जनवरी 1994 तक वहाँ कोई भारतीय नहीं गया, जबकि भारतीय मूल के 200 व्यक्ति वहाँ रह रहे हैं।[46]

---

44. नवभारत टाइम्स, 27 फरवरी, 1995
45. 'अफगानिस्तान में अशान्ति के पीछे पाकिस्तान', नवभारत टाइम्स, 29 मार्च, 1995
46. 'पार्लियामेण्ट क्वस्चन', द टाइम्स ऑफ इण्डिया, 6 मई, 1995

अब गृहयुद्ध को समाप्त करने के उद्देश्य से राष्ट्रपति रब्बानी ने जनरल रशीद दोस्तम की ओर दोस्ती का हाथ बढ़ाया है। रब्बानी ताजिक है, जबकि दोस्तम उजबेक । प्रारम्भ से अफगानिस्तान में पख्तूनों का राज्य रहा है। अन्य छोटी जातियों को दूसरे दर्जे का स्थान प्राप्त है, अब छोटी जातियों का आपस में मिलना बहुत ही महत्वपूर्ण माना जा रहा है। रशीद दोस्तम की वायुसेना बहुत ताकतवर और मजबूत है। तालिबान भी उनसे लोहा नहीं ले सके, जबकि हिकमतयार को राजधानी से हटाने में वे सफल हुए थे। अब हिकमतयार को तालिबान का दोस्त माना जा रहा है। तालिबान का दक्षिण अफगानिस्तान में कब्जा बरकरार है, किन्तु राजधानी के जिन क्षेत्रों पर उसने कब्जा किया था उन पर सरकारी सेनाओं का नियन्त्रण है।[47] अफगान जनता देश में शान्ति चाहती है। रब्बानी व दोस्तम की मित्रता इसमें महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है। इस प्रकार सदैव संघर्षरत रहने वाले मुजाहिदों को संयुक्त राष्ट्रसंघ के माध्यम से शान्ति की प्रेरणा मिली है, इसलिए वे अब संघर्ष के स्थान पर परस्पर मित्रता और सामन्जस्य को महत्व दे रहे हैं।

इस प्रकार दुनिया में हो रहे व्यापक परिवर्तन के दौर में विभिन्न देशों के बीच में आपसी टकराव और मतभेदों का स्थान अब पारम्परिक समझदारी, शान्ति सौहार्द और सहयोग ले रहे है। वास्तव में शीत युद्ध की समाप्ति ने यह तथ्य स्थापित किया है कि सैनिक मजबूती से अधिक आर्थिक मजबूती की आवश्यकता है। यही कारण है कि रूस ने खुद को यूरोप के बजाय एशिया का हिस्सा मानते हुए भारत-सोवियत मैत्री का स्थान लेने की इच्छा व्यक्त की है। अमेरिका से भी भारत के सम्बन्ध सामान्य हुए है। सोवियत संघ के विघटन के पश्चात् पुनः चार दशकों बाद भारत-अमेरिका सम्बन्धों में सुधार हो रहा है। इस प्रकार जहाँ तक मौजूदा सम्बन्धों का सवाल है, पाकिस्तान को छोड़ कर भारत को किसी ओर देश से कोई विशेष परेशानी नहीं है। किन्तु चीन लगातार पाकिस्तान, बर्मा व बंगला देश को हथियार देकर हमारे लिए खतरा उत्पन्न कर रहा है। यद्यपि वह पहले की तरह भारत को शत्रु नहीं मानता किन्तु वह भारत को क्षेत्रीय शक्ति भी नहीं बनने देना चाहता। अफगानिस्तान में इस्लामी परचम ने भारत की महत्वपूर्ण कूटनीति को प्रतिबन्धित किया है, लेकिन भारत ने सम्पूर्ण विश्व में शान्ति, सहयोग व पारस्परिक सामन्जस्य का उद्देश्य रखते हुए मित्र देश अफगानिस्तान में सामान्य स्थिति बहाल करने के प्रत्येक प्रयास का समर्थन किया है।

---

47. दूरदर्शन समाचार, 22 मई, 1995

(ख) प्रगाढ़ सम्बन्धों की आवश्यकता

सोवियत नेताओं को खुश करने के लिए जिस तरह भारत ने तराकी, अमीन, कारमल और नजीबुल्लाह का समर्थन किया, उससे अफगान जनता भारत की ओर सन्देह भरी निगाहों से देखने लगी है। इसलिए अब हर मुजाहिद गुट कहता है कि जब तक भारत अपने किए पर पश्चाताप प्रकट नहीं करता, तब तक उससे मैत्री सम्बन्ध स्थापित नहीं किए जा सकते। गुलबुद्दीन हिकमतयार का कहना है कि उनका कम्युनिस्ट समर्थक भारत सरकार से कोई वास्ता नहीं है। हिज्बे इस्लामी नेता कमाण्डर अब्दुल हक यथार्थवादी है, उनका कहना है कि भारत ने अब तक जो किया वह तो निन्दनीय है, लेकिन यदि भारत पुनः हमारी मदद करे तो हम पिछली बातों को माफ करने के लिए तैयार हैं। जमायते इस्लामी के नेता रक्षामन्त्री अहमद शाह मसूद ने कहा कि हमने समर्थन और प्रेरणा के नाते भारत की ओर देखा, लेकिन हमें कुछ नहीं मिला। यह भारतीय कूटनीति की असफलता ही है। इसलिए काबुल में अब सत्ता में कोई भी आए भारत को अफगानिस्तान से सम्बन्धों को सुधारने के लिए वस्तु स्थिति की समीक्षा की ही नहीं, अपितु विदेशनीति में पुनर्विचार तथा समझदार कूटनीतिज्ञों की अत्यन्त आवश्यकता होगी। पिछले दो दशकों से प्रत्येक भारतीय राजदूत ने काबुल में भारतीय विदेशनीति को व्यक्ति विशेष पर ही केन्द्रित रखा, जिससे उन्हें निजी लाभ तो अवश्य हुआ पर राष्ट्रीय हितों को भारी आघात पहुंचा, क्योंकि काबुल में शासक वर्ग एक के बाद एक उखड़ते गए। भारतीय विदेशनीति का दूसरा बड़ा दोष है, साधनों की कमी, जिसके कारण वह पर्याप्त मात्रा में दूसरे देशों की सहायता नहीं कर पाता। जो सहायता देता भी है उसका उचित उपयोग नहीं हो पाता। यह सत्य है कि कुछ दिन पूर्व तक भारत, अफगानिस्तान की अखण्डता, प्रभुसत्ता और गुटनिरपेक्षता को सुरक्षित रखने की दुहाई देता रहा था। लेकिन आज भारत ने चुप्पी साध ली। इससे भारतीय कूटनीति का खोखलापन स्पष्ट होता है।

जहाँ तक देश के लिए बाहरी खतरों के विश्लेषण का सवाल है, हम आमतौर पर सिर्फ पाकिस्तान पर नज़र रखते हैं। पाकिस्तान और उसकी सैन्य तैयारी (परमाणु बम आदि) इस हद तक ध्यान केन्द्र में बस गई है कि हमारे दूसरे पड़ोसी देश में क्या हो रहा है, इसे हम लगभग नज़र अंदाज कर रहे हैं। वास्तव में, भारत और पकिस्तान के साथ तिब्बत और दक्षिण चीन के परमाणु अस्त्रों पर रोक लगे तो इस सारे इलाके में अमेरिका की उपस्थिति का कोई औचित्य नहीं ठहराया जा सकता। पाकिस्तान, भारत के परमाणु कार्यक्रम की आलोचना करता रहता है किन्तु इसमें उसका उद्देश्य दोनों देशों के बीच स्थायी शान्ति और सहअस्तित्व की इच्छा व्यक्त

करना नहीं है बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय दबाव पैदा करके भारत को अपने लिए एक उपयुक्त सुरक्षा व्यवस्था विकसित करने से रोकना है। पश्चिमी देश भी भारत को क्षेत्रीय महाशक्ति के रूप में प्रचारित करके पड़ोसियों को आतंकित करने का षड्यन्त्र कर रहे हैं। एशियाई देशों व बड़ी शक्तियों को इस तथ्य को भली भाँति समझना चाहिए कि एशिया की सुरक्षा सैनिक समझौतों या विशेष मैत्री गुटों द्वारा सम्भव नहीं हो सकती, वरन् परस्पर लाभकारी अच्छे पड़ोसी सम्बन्धों और राज्यों के मध्य अर्थयुक्त सहयोग पर निर्भर है। यद्यपि इस कार्य में अनेक कठिनाइयां हैं, परन्तु भारतीय विदेशनीति के आधारभूत सिद्धान्त इसी दिशा में चलने का निर्देश करते हैं।

भारतीय उपमहाद्वीप में अमेरिका की बेवजह की तानाशाही से मुक्ति पाने तथा पाकिस्तान की शक्ति को नियन्त्रित करने के लिए भारत और चीन की दोस्ती आवश्यक है। विश्व के नए राजनैतिक और आर्थिक व्यवस्था के निर्माण ने पुनः पंचशील की प्रासंगिकता को रेखांकित किया है। यह राष्ट्रों को सह-अस्तित्व के सिद्धान्त पर पारस्परिक व्यवहार के लिए नियम देता है। पंचशील न केवल भारत और चीन को जोड़ सकता है, बल्कि ईरान को भी जुड़ने की प्रेरणा दे सकता है।

नरसिंहाराव सरकार अपनी कुर्सी की अस्थिरता के कारण कश्मीर पर कोई ठोस कार्रवाई नहीं कर पा रही है। कश्मीर में अफगान आतंकवादियों की बढ़ती गतिविधियों से यह प्रमाण मिलता है कि किस तरह हम अफगान संकट के समाधान की प्रक्रिया में अप्रासंगिक हो गये हैं। इन्दिरा गांधी के समय में ऐसा नहीं था। अफगानिस्तान में हो रही छोटी-मोटी गतिविधियों से ही भारत में हलचल शुरु हो जाती थी। तब यह कल्पना भी नहीं थी कि पाकिस्तान की शह पर अफगान आतंकवादी हमारे यहाँ आएंगे और आतंक फैलाएंगे। आज चूंकि कई मुजाहिद्दीन गुट पाकिस्तान के हाथ की कठपुतली बने हुए हैं और पहले की तरह उनके पास लड़ने को खास कुछ नहीं है। इसलिए पाक इंटेलीजेंस एजेन्सी उन्हें कश्मीर की ओर मोड़ने में सफल हो गई। हमारी सरकार को न सिर्फ कश्मीर पर अपनी रणनीति तय करनी है, बल्कि इस महाद्वीप में अपनी कूटनीति भी सुधारनी है।

अफगानिस्तानको लेकर भारतीय विदेशनीति इस समय ढुलमुल तरीके से चल रही है, वह काफी चिन्ताजनक है। अफगानिस्तान में स्थायित्व स्वयं भारतीय सुरक्षा के लिए आवश्यक है। वहाँ शान्ति व सुरक्षा में भारत का राष्ट्रीय हित शामिल है। आवश्यकता इस बात की है कि हम उसके प्रति अपनाई गई पूर्व नीति का विश्लेषण करें और शीघ्र उचित कदम उठाएँ। अन्यथा भविष्य में भारत को काफी नुकसान उठाना पड़ सकता है।

अफगान जनता को वर्तमान संकट में दोहरी हमदर्दी की आवश्यकता है, एक तो वहाँ शीघ्र ही शान्ति की स्थापना की जाए, दूसरा, पाक-अफगान सीमा पर रह रहे शरणार्थियों को मानवीय सहायता के रूप में टैंट, दवाइयां, कम्बल और बच्चों के भोजन की शीघ्र व्यवस्था। जब तक अफगास्तिान में शान्ति स्थापित नहीं हो जाती, शरणार्थी पाकिस्तान में ही रहेंगे। अतः अफगानिस्तान में रह रहे अपने सम्बन्धियों से बात करने के लिए पाकिस्तान में दफ्तर खोले जाएं।

इस प्रकार, अफगानिस्तान में निरन्तर बदलते हुए घटना क्रम को देखते हुए आवश्यकता इस बात की है कि भारतीय विदेश मन्त्रालय एक स्वतन्त्र अफगान नीति का निर्माण करे। यदि गृहयुद्ध से प्रभावित अफगान सरकार को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए उसके साथ सामाजिक, आर्थिक व व्यापारिक स्थिति में सुधार के प्रयास के साथ-साथ प्राचीन सांस्कृतिक सम्बन्धों का आदान-प्रदान प्रारम्भ किया जाए तो वह भारत, पाकिस्तान और अफगानिस्तान तीनों को नजदीक लाने का काम करेगा। भारत और अफगानिस्तान के मध्य प्रगाढ़ सम्बन्धों के लिए जहाँ विदेश मन्त्रालय की नीतिगत प्रणाली में कसावट लाने की आवश्यकता है, वहीं सबसे बड़ी जरूरत है, उन्हें आत्म निर्भर बनाने की। वास्तव में, हमें शान्ति तभी प्राप्त हो सकती है, जब हम आर्थिक एवं प्रौद्योगिक दृष्टि से आत्म निर्भर बनने की पूरी कोशिश करें। हममें परस्पर जो भी मतभेद हों उन्हें मिल-बैठकर शान्ति से दूर करें, अपने आन्तरिक मामलों में किसी दूसरे का हस्तक्षेप न होनें दें और संयुक्त राष्ट्र संगठन को मजबूत बनाएँ।

(ग) सुझाव व भविष्य

आज भारत, अफगानिस्तान के इस पूरे घटनाक्रम में एकदम निर्लिप्त नजर आ रहा है, लेकिन क्या यह उचित है? अफगानिस्तान न सिर्फ हमारा पड़ोसी रहा है, वरन् पिछले तीन वर्षो को छोड़ दें तो वह हमारा गहरा दोस्त रहा है। अफगानिस्तान में कुछ भी घटता है तो छींटे हम पर भी पड़ते हैं। इसलिए भारत को अपनी कूटनीति पर पुनर्विचार कर शान्ति व स्थिरता के लिए व्यापक प्रयास करने चाहिए। बदलते परिवेश में अफगानिस्तान को भी अपनी विचारधारा में परिवर्तन करना होगा तथा अपनी राजनैतिक व आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए स्वयं प्रयास करना होगा। अफगान नेताओं को स्थिति में सुधार के लिए तथा भारत से लाभकारी सहयोग सम्बन्ध बनाने के लिए उसके खिलाफ संघर्ष में धर्म का नाम लेकर पाकिस्तान का साथ नहीं देना चाहिए।

वास्तव में, अफगानिस्तान का वर्तमान जितना अनिश्चित है, उससे भी भयानक उसका भविष्य है। आज वहाँ जो कुछ हो रहा है उससे स्पष्ट है कि गृहयुद्ध थमने वाला नहीं है।

अमेरिका, ईरान व पाकिस्तान नहीं चाहते कि अफगानिस्तान संगठित होकर उनके हितों को नुकसान पहुंचाए। संयुक्त राष्ट्र में भारतीय प्रतिनिधि के0 नटवर सिंह ने युद्ध-जर्जर अफगानिस्तान की स्थिति की चर्चा में भाग लेते हुए कहा कि समस्या के एक ऐसे राजनैतिक समाधान के प्रयास किए जाने चाहिए जिसमें अफगान जनता की आकांक्षाए झलकती हों और समाधान बिना किसी विदेशी हस्तक्षेप के सम्बद्ध अफगान पक्षों द्वारा स्वयं निकाला जाए। इस उद्देश्य से उन्होंने संयुक्त राष्ट्र महासचिव के विशेष दूत महमूद मिस्त्री की अफगान जनता के बीच एक राष्ट्रीय आम सहमति कायम करने, समाज के सभी वर्गों को मान्य, एक राजनैतिक ढांचा खड़ा करने और राष्ट्रव्यापी युद्ध विराम द्वारा शान्ति बहाली के प्रयासों का पुरजोर समर्थन किया है। पाकिस्तान को भी गृहयुद्ध के समाधान में दिलचस्पी लेनी चाहिए न कि मुजाहिद गुटों को परस्पर भड़काकर अपने उद्देश्यों की पूर्ति के प्रयास करने चाहिए। यह सत्य है कि पाकिस्तान सहयोग दे तो स्थिति शीघ्र सामान्य हो सकती है। इसके लिए सम्बद्ध राष्ट्रों से विचार-विमर्श किया जाना चाहिए। एक स्वतन्त्र गणतान्त्रिक व गुटनिरपेक्ष सिद्धान्तों पर आधारित अफगान सरकार की स्थापना के लिए पड़ोसी देशों सहित संयुक्त राष्ट्रसंघ के सहयोग की आवश्यकता है। पाकिस्तान के साथ ही ईरान, तुर्कमेनिस्तान, उजबेकिस्तान, तजाकिस्तान भविष्य में वहाँ शान्ति बनाए रखने की महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। किन्तु मुजाहिदों की अन्तरिम सरकार की स्थापना के पश्चात वहाँ शान्ति स्थापना में भारत की महत्वपूर्ण भूमिका की सम्भावना नहीं है। किन्तु भारत को यह सोचकर अफगानिस्तान से दूर नहीं होना चाहिए बल्कि उसे गृहयुद्ध से प्रभावित सरकार के साथ पूर्ण सहयोग व शान्ति के किसी अवसर को गंवाना नहीं चाहिए, क्योंकि कूटनीतिक दृष्टि से वह हमारा महत्वपूर्ण पड़ोसी है।

अफगानिस्तान से रूसी सेनाओं की वापसी के बाद समस्या के समाधान की ओर बढ़ते हुए भी यह स्पष्ट नहीं है कि अफगानिस्तान सचमुच बाहरी प्रभावों से मुक्त होकर एक स्वतन्त्र सरकार चला पाएगा। वहाँ राजनैतिक व सामाजिक टकराव की स्थिति में यदि इस्लामी रूढ़िवादी व कट्टरवादी मुजाहिद्दीन सत्ता में आते हैं तो अफगानिस्तान का विभाजन हो जाएगा और यह भारत के लिए सबसे बड़ी चुनौती होगा। अभी तक काबुल में तटस्थ सरकार का बने रहना ही दक्षिण पश्चिम एशिया के क्षेत्र में भारत की विदेशनीति का आधार था। इस्लामी कट्टरवाद से यह आधार ही समाप्त हो जाएगा। इसके पूर्व ही भारत के नीति निर्धारकों को विदेशनीति के आयामों पर पुनः विचार करके कोई कारगर विकल्प खोजना चाहिए।

अफगानिस्तान में एक विशाल इस्लामी ब्लाक का सपना देखा जा रहा है। उसके एक

ओर पाकिस्तान व ईरान है तो ठीक उसके उत्तर में सोवियत संघ की 6 विसर्जित इस्लामी शक्ति व साधन सम्पन्न रियासतें हैं। जो साम्यवाद का पीछा छुड़ाने के लिए इस्लाम को धारदार हथियार के रूप में प्रयोग करती रही है। यही कारण है कि रूस ने राष्ट्रीय हितों की रक्षा के उद्देश्य से तत्कालीन सरकार को मानवता के नाम पर मदद देकर, उससे जुड़ने का प्रयास किया है। दूसरी ओर यद्यपि चीन को भी अपने यहाँ मुस्लिम कट्टरता का भय है, किन्तु उसने साम्यवादी होने के बावजूद कभी इस्लामी राष्ट्रों का विरोध नहीं किया। इसलिए विश्व शक्ति के रूप में चीन इस ब्लाक से जुड़ कर अपना अन्तर्राष्ट्रीय वजन बढ़ा लेगा किन्तु अमेरिका इस गठबन्धन को बाजार सम्बन्धी हितों के कारण कभी पसंद नहीं करेगा। भारत की तो सुरक्षा ही खतरें में पड़ जाएगी, क्योंकि अफगान समस्या सुलझ गई तो भारतीय कश्मीर पर पाकिस्तान व अफगानिस्तान मिल कर सैनिक छेड़छाड़ करेंगे। अफगानिस्तान में गुरिल्लों की सरकार बन जाने के पश्चात् भारतीय उपखण्ड में इस्लामी कट्टरता की लहर और अधिक शक्तिशाली बनेगी।

अफगानिस्तान में पाकिस्तान व ईरान की जीत कैसे और कब तक कायम रहेगी यह सब इन देशों के नेताओं की सूझबूझ और नीतियों पर निर्भर होगा। किन्तु यह सत्य है कि शरणार्थियों तथा मुजाहिद गुटों की शरणस्थली ईरान व पाकिस्तान, अफगानिस्तान के दलदल में जितना फसेंगे उतना ही वहाँ की हालत वे और बिगाड़ेंगे। संयुक्त राष्ट्रसंघ के पास न इतनी ताकत है और न अफगानिस्तान में उसकी ऐसी मान्यता कि वह शान्ति व व्यवस्था कायम कर सके। बाहरी शक्तियां (अमेरिका, रूस आदि) भी वहाँ शान्ति व्यवस्था कायम करने को उत्सुक नहीं दिखतीं। वास्तव में अफगानिस्तान अराजकता और कबीलाई हिंसा के जिस दौर से गुजर रहा है उस सब के प्रति अमेरिका उत्तरदायी है, जिसनें वहाँ के हिंसक गुटों को मुफ्त हथियार देकर देश को आतंकवादी भट्टी में धकेल दिया। इस प्रकार अफगानिस्तान को जातीय व क्षेत्रीय आधार पर विभाजित करने की पड़ोसी देशों एवं बड़ी शक्तियों की साजिश दक्षिण एशिया के शक्ति संतुलन को गड़बड़ा रही है।

इस समय पाक समर्थक गुलबुद्दीन हिकमतयार के लिए काबुल में सरकार बनाना सम्भव नहीं है। इसलिए सम्भव है कि वे पख्तूनिस्तान की योजना को साकार करके पाकिस्तान को अपने सरहदी सूबे से हाथ धोने पर मजबूर कर दे। यदि पाकिस्तान में पख्तूनिस्तान की मांग तेज होती है तो अफगानिस्तान के पठान और विघटित सोवियत संघ की रियासतें उन्हें समर्थन दे सकती हैं। क्योंकि वहाँ उनके वंशज हैं। यदि पख्तूनिस्तान आजाद होता है तो पाकिस्तान यह चाहेगा कि कश्मीर भी स्वतन्त्र राष्ट्र बने। इस प्रकार यदि कालान्तर में पाकिस्तान टूटता

है तो भी भारत का सिरदर्द इस्लामी ब्लाक के रूप में कायम रहेगा। इसका संतुलन तभी कायम हो सकता है, जब भारत, सिंध को भी पाकिस्तान से अलग होने की प्रेरणा दे। पाकिस्तान के टूटने से भारत मजबूत होकर उभरेगा। इसके विपरीत यदि कश्मीर भारत से अलग हो गया तो भारत उभरती हुई सैन्य शक्ति नहीं रह सकेगा। वास्तव में पाकिस्तान, पख्तूनिस्तान व सिंध की माँग को कश्मीर की माँग से दबाने का प्रयास कर रहा है। इसलिए तत्कालीन पाक प्रधानमन्त्री नवाज शरीफ ने हिकमतयार के नेतृत्व में पठान मुजाहिदों को कश्मीर को इस्लाम के नाम पर भारत से मुक्त कराने का दायित्व सौंपा और घोषणा की कि बदले में उन्हें कश्मीर की अध्यक्षता सहित मुँह मांगा इनाम दिया जाएगा। इस प्रकार वे पख्तूनिस्तान की माँग को उठाने से पहले ही दबा देंगे और कश्मीर मुक्ति के दावे द्वारा भारत के लिए गम्भीर सैनिक समस्या उत्पन्न कर सकेंगे।

इस्लामी अफगानिस्तान पर अपनी पकड़ मजबूत बनाए रखने के लिए पाकिस्तान चाहता है कि अफगानिस्तान में बचे हुए तीन हजार हिन्दू और सिक्ख नागरिकों को या तो वहाँ से निष्काषित कर दिया जाय या उन्हें सभी अधिकारों से वंचित कर अफगानिस्तान छोड़ने पर मजबूर किया जाए। सभी प्रयासों के बावजूद अफगानिस्तान में पाकिस्तान की स्थिति सन्तोष जनक नहीं है। पाकिस्तान ने एक बार फिर अफगानिस्तान में अपना दबदबा बनाए रखने के उद्देश्य से आधुनिक अस्त्र-शस्त्रों से लैस धार्मिक उग्रवादी छात्र संगठन (तालिबान) को अफगानिस्तान में रब्बानी को सत्ताच्युत कर कट्टर इस्लामिक सरकार की स्थापना के लिए भेजा है। पाक सहयोग से पख्तून, ताजिक, उजबेक, तुर्कमेन तथा सिया व हजारा जातियों में बंटे हुए अफगानिस्तान में तालिबान किस हद तक सफल होते हैं, यह कहना कठिन है।

अफगानिस्तान में कहा जाता है कि जो राजधानी में नियन्त्रण करेगा वहीं सम्पूर्ण देश में नियन्त्रण करेगा। रब्बानी (ताजिक)* का काबुल पर नियन्त्रण है। हिकमतयार (पख्तून) राष्ट्रपति बनना चाहते हैं, किन्तु अब तक की गई उनकी कोशिशें बेकार गई है। अतः आशा है कि पख्तून भविष्य में ऊँचा दर्जा नहीं पा सकेगें। अब राष्ट्रपति रब्बानी द्वारा जनरल दोस्तम (उजवेक) से की गई मित्रता की पहल से आशा व्यक्त की गई है कि अफगानिस्तान में दूसरे दर्जे वाली जातियाँ देश में शान्ति की स्थापना में महत्वपूर्ण योगदान कर सकेंगी। किन्तु यह सत्य है कि अफगानिस्तान में विभिन्न काबायलियों की आपसी प्रतिद्वन्द्विता तथा जिसकी जितनी बड़ी तलवार उसका उतना ही बड़ा दावा होने के कारण इस समस्या का कोई सर्वमान्य हल निकट भविष्य

---

* जाति

में सम्भव नहीं दीख रहा है। दूसरी ओर अफगानिस्तान में बढ़ रहे विभाजन के आसार को देखते हुए अफगान विशेषज्ञ व अमरीकी विद्धान ग्राहम ई. फुलर का मत है कि जातीय आधार पर अफगान समस्या का हल नहीं हो सकता।

हर वक्त कश्मीर का राग अलापने वाला पाकिस्तान कराची व सिन्ध की हिंसा को लेकर भीषण संकट से गुजर रहा है। वास्तव में केवल धर्म के नाम पर लोगों को एक नहीं रखा जा सकता। दूसरी ओर धर्म और लोकतन्त्र साथ-साथ नहीं चल सकते। यदि पाकिस्तान में सच्चा लोकतन्त्र आ जाए तो वह स्वयं न केवल मजबूत होगा, वरन् उसका भारत से बैर भी समाप्त हो जाएगा। पाक नेताओं को भारत को चेतावनी देने के बजाय अपने यहाँ लोकतन्त्र मजबूत करना चाहिए।

विश्व राजनीति का मौजूदा दौर झंझावातों से भरा है। बारूदी सुरंगों के सम्भावित विस्फोट और सभी तरह की व्यवस्थाओं से व्यापक मोह भंग का दौर है। ऐसी स्थिति में यदि भारत को दक्षिण एशिया क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय रणनीतिक कुचालों का प्रभावी ढंग से सामना करना है तो उसे अपनी क्षमता और शक्ति का अहसास करना होगा। नेहरू युग के आदर्श और सिद्धान्तवादी सुरक्षा दृष्टिकोण में बदलाव जरूरी है। आज हमें अन्य देशों के समान ही ईंट का जबाव पत्थर से देने की क्षमता की आवश्यकता हैं। इसके लिए भारत को अपना ही सुरक्षा तन्त्र खड़ा करना होगा। अमेरिका या किसी अन्य देश पर इसके किए भरोसा नहीं किया जा सकता। अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए अमरीकी दवाब के बावजूद भारत को अपना परमाणु बम बनाने का विकल्प कायम रखना होगा। भारतीय जनता पार्टी के नेता जसवंत सिंह ने कहा कि चीन और पाकिस्तान एटमी शक्ति बन चुके हैं, इसलिए भारत को भी निरोधक के रूप में अपने एटमी विकल्प का इस्तेमाल करना चाहिए। इसके द्वारा वह न केवल विश्व राजनीति में प्रभावशाली भूमिका निभा सकेगा, बल्कि विश्व शान्ति में भारतीय प्रयास भी तभी सार्थक हो सकेंगे। इस प्रश्न पर संशयात्मक रवैया नुकसान देह साबित होगा। सुरक्षा परिषद् में स्थायी सदस्यता के लिए घृणित प्रतिस्पर्धा का दुष्परिणाम भी हमें आने वाले समय में अवश्य भुगतना पड़ेगा। यदि भारत सदस्यता की दावेदारी की जगह समानता व विश्वबन्धुत्व पर आधारित विश्व व्यवस्था के निर्माण के अपने पारम्परिक सिद्धान्तों के साथ सामने आता तो निश्चय ही उसे विश्व समुदाय का व्यापक समर्थन मिलता।

यूरोप में शान्ति के लिए बातचीत के दौर चलते रहते हैं। एशिया में भी ऐसा होना चाहिए। नेपाल को शान्ति क्षेत्र और दक्षिण एशिया को परमाणु मुक्त क्षेत्र बनाने के प्रस्ताव

कारगर नहीं हो सकते हैं। अतः सम्पूर्ण एशिया में शान्ति का प्रयास होना चाहिए, एशिया की सामूहिक सुरक्षा प्रणाली की स्थापना के लिए कुछ ठोस कदम उठाए जानें चाहिए। इस क्षेत्र में शक्ति संतुलन समाप्त करने के लिए भारत का मत है कि अफगान समस्या का हल संयुक्त राष्ट्र प्रयासों के तहत होना चाहिए। अमेरिका, रूस, पड़ोसी मध्य एशिया और ईरान आदि सभी देश अफगानिस्तान में शान्ति पूर्ण हल चाहते हैं। क्योंकि अराजक अफगानिस्तान उन सभी की सुरक्षा के लिए चुनौती है। किन्तु तत्कालीन परिस्थितियों को देखते हुए विद्वानों का मत है कि मत है कि अफगानिस्तान समस्या का अब राजनैतिक समाधान सम्भव नहीं हैं, बल्कि सैनिक समाधान ही सम्भव है। अतः भारत को अपने दूरगामी लक्ष्यों के तहत सैनिक रूप से सशक्त होना होगा। भारत सरकार को पाकिस्तान के प्रति अपनी नीति पर पुनर्विचार करना चाहिए। पाकिस्तान की ओर से आक्रमण के खतरे को बढ़ा-चढ़ा कर पेश न करके ऐसे कदम उठाए जाने चाहिए, जिसमें दोनों देशों के बीच अच्छे पड़ोसी की भांति सम्बन्ध सामान्य हो सके। यद्यपि पाकिस्तान को लगातार अमरीकी शस्त्रों की आपूर्ति को दृष्टि में रखते हुए भारत निश्चिन्त नहीं रह सकता, फिर भी उसे सकारात्मक बातचीत से सम्बन्धों में सुधार के प्रयास करने चाहिए। यदि दोनों देश परमाणु हथियारों की होड़ में न पड़ कर परस्पर मैत्री सम्बन्ध कायम करें तो इस क्षेत्र के अन्य देश हथियारों पर होने वाले खर्च को जनकल्याण और विकास कार्यों में खर्च कर सकेंगे। आगामी वर्षों में दक्षिण एशिया की आत्म निर्भरता में भारत का योगदान सर्वाधिक महत्वपूर्ण होगा। अतः हमें अपनी प्रगति के साथ-साथ पड़ोसी देशों के साथ आर्थिक सहयोग बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए। जिसके लिए भारत और पाकिस्तान को अपने प्राचीन मतभेद भुलाकर क्षेत्रीय स्थिरता की दृष्टि से एकताबद्ध कार्य करना होगा। सुरक्षा की दृष्टि से भारत को चीन के साथ भी सम्बन्ध सुधारने का प्रयास करना चाहिए। इसके पूर्व आवश्यकता है कि हम अन्दरूनी कमजोरियाँ दूर कर अपने को मजबूत स्थिति में लाएँ। वास्तव में अखण्ड, शक्तिशाली व स्थिर भारत समस्त समस्याओं का समाधान है।

सुदृढ़ भारत को नवोदित अफगानिस्तान के प्रति बड़े भाई का नहीं, बल्कि मित्र का अहसास कराना चाहिए। वहाँ स्थिति सामान्य होते ही उसे सार्क जैसे क्षेत्रीय सहयोग संगठन में स्थान दिलाने का प्रयास करना चाहिए, जिससे अन्य सम्मिलित सदस्य देश उसके विकास में योगदान कर सकें और क्षेत्रीय तथा विश्व राजनीति में वह पुनः अपना प्रतिष्ठित स्थान पा सके। अफगानिस्तान में चल रहे गृहयुद्ध ने उसकी सम्पूर्ण अर्थ व्यवस्था को जर्जर बना दिया है। अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय को अफगान समस्या के समाधान के लिए सर्वप्रथम भुखमरी की समस्या हल करनी चाहिए।

वहाँ विभिन्न मुजाहिद गुटों के मध्य चल रहे युद्ध के कारण अफगानिस्तान को संयुक्त राष्ट्र की अन्तरिम सहायता तथा अन्तर्राष्ट्रीय रेडक्रास सोसायटी द्वारा मदद नहीं मिल पा रही है, अस्पतालों में मृत्यु दर बढ़ रही है। ऐसी स्थिति में भारत सरकार द्वारा प्रस्तावित सहायता भी युद्धरत अफगानिस्तान को प्राप्त नहीं हो सकी है। अत: भारत को अफगानिस्तान में आवश्यक वस्तुओं की सप्लाई, का उचित प्रबन्ध करना चाहिए। अफगानिस्तान में स्थिर सरकार की स्थापना के पश्चात् बेरोजगारी की समस्या को हल करने के लिए अफगानिस्तान को स्वालम्बी बनाने में भारत को आवश्यक सभी मदद करनी चाहिए। सांस्कृतिक आदान-प्रदान बढ़ाने चाहिए। जिससे वह आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर हो सके। दोनों देशों में परस्पर आर्थिक सम्बन्धों में सबसे बड़ी बाधा सीधे यातायात मार्ग का अभाव होना है। परस्पर आर्थिक सम्बन्धों में सुधार के लिए दोनों देशों को पाकिस्तान से सम्बन्ध सुधारना होगा। साथ ही भारत को संकट ग्रस्त अफगानिस्तान के साथ लाभ के आधार पर नहीं, बल्कि सहयोग के आधार पर व्यापार बढ़ाना चाहिए। तभी अफगानिस्तान भारत के प्रति आश्वस्त हो सकेगा। सोवियत हस्तक्षेप से पूर्व भारतीय सहयोग से चल रही अधूरी परियोजनाओं को पूरा करने तथा वहाँ नए आयामों की खोज के प्रयास भी भारत सरकार द्वारा किए जाने चाहिए। वहाँ सीमाओं की ओर से हो रहे आन्तरिक हस्तक्षेप तथा सुरक्षा सम्बन्धी हितों को ध्यान में रखते हुए उसके साथ प्रतिरक्षा सन्धि करनी चाहिए। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में समर्थन प्राप्त करने तथा परस्पर प्रगाढ़ सम्बन्धों के लिए भारत को अफगानिस्तान की पख्तूनिस्तान की माँग का समर्थन करना चाहिए।

अन्त में दक्षिण एशिया में अपनी भौगोलिक स्थिति को देखते हुए कहा जा सकता है कि जब तक भारत व अफगानिस्तान में सुरक्षात्मक तथा प्रगाढ़ राजनैतिक सम्बन्ध नहीं होंगे, तब तक एशिया में हम अपनी सीमाओं की सुरक्षा ठीक ढंग से नहीं कर सकते। विश्व में बदलते हुए परिपेक्ष्य में भारत-अफगानिस्तान के प्राचीनतम सम्बन्धों को नवीन रूप दिए जाने की अति आवश्यकता है। अफगानिस्तान का वर्तमान संकट भारत की सुरक्षा व कूटनीति के लिए गम्भीर चुनौती है। अस्तु, आवश्यकता है चुनौती को स्वीकारने और एक स्थायी विश्वास भरे मैत्री सम्बन्धों को नई दिशा देने की। यह केवल राजनैतिक बयानों और अल्पकालीन उपायों से सम्भव नहीं है, इसे सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और दीर्घकालीन राजनैतिक व कूटनीतिक स्पर्श भी देने होंगे।

*****

INDIA PAKISTAN AND AFGHANISTAN

परिशिष्ट
(Appendix)

APPENDIX I

THE TEXT OF THE INDIA-AFGHANISTAN TREATY OF FRIENDSHIP ISSUED IN NEW DELHI ON JANUARY 4, 1950

The government of India and the Royal Government of Afghanistan recognising the ancient ties which have existed between the two countries for centuries and their mutual need for cooperation in strengthening and developing these ties and urged by their mutual desire to establish peace between the two countries with a view to the common benefit of their people and the development of their respective countries, wish to enter into a Treaty of Friendship with each other and to this end have appointed as their plenipotentiaries the following persons, viz.,

THE GOVERNMENT OF INDIA:
THE HON'BLE PRIME MINISTER AND MINISTER FOR EXTERNAL AFFAIRS.

THE ROYAL GOVERNMENT OF AFGHANISTAN:
THE AMBASSADOR OF AFGHANISTAN IN INDIA.

Who have examined each other's credentials and found them good and in due form have agreed as follows:

Article I

The two Governments recognise and respect the independence and rights of each other.

Article II

There shall be everlasting peace and friendship between the two Governments who will further strive to maintain and strengthen the cordial relations existing between the people of their respective countries.

Article III

1. In order to establish and maintain the relations referred to in Article 2. the parties agree to continue diplomatic relations with each other by means of representatives with all such suitable staff as the representatives may require for the due performance of their functions and to such extent as may

mutually be agreed on from time to time by the respective Governments.

2. Such representatives and their agreed staff shall have such diplomatic privileges and immunities as are customarily granted by international law on a reciprocal basis:

Provided that in no case shall these be less than those granted to persons of a similar status of any other state having diplomatic relations with either Government.

Article IV

The two Governments agree to appoint Consuls-General, Consuls, Vice-Consuls and Consular Agents, who shall reside in towns, ports and other places in each other's territory as may be agreed to.

Consuls-General, Consuls, Vice-Consuls and Consular Agents shall be provided with exequaturs or other valid authorisation of their appointment. Such exequaturs or authorisation is liable to be withdrawn by the country which issued it, if considered necessary. The reason for the withdrawal shall be indicated wherever possible.

The persons mentioned above shall enjoy on a reciprocal basis all the rights, privileges, exemptions and immunities that are accorded to persons of corresponding status of any other state.

Article V

The two Governments agree that such trade agencies of either Government as already exist in the territories of the other shall be continued and others may be established in the future.

Article VI

The two Governments agree to strengthen and develop cultural ties between their respective countries and to assist in each other's industrial and agricultural progress.

Article VII

Any differences arising out of the interpretation or application of this Treaty shall be settled by negotiations through the ordinary diplomatic channels. If no

settlement is arrived at with in a reasonable time the matter shall be referred to arbitration in such manner as may be mutually agreed upon.

Article VIII

The Treaty shall be subject to ratification and shall come into force from the date of the exhange of the instruments of ratification, which shall take place as soon as possible at New Delhi.

Article IX

This Treaty shall continue in force for five years after coming into force as provided in Article VIII and shall thereafter continue in force:

Provided that after the said period of five years either Government may give to the other not less than six months, notice of its intention to terminate the Treaty, and on the expiry of the period of such notice the Treaty shall cease to be in force.

IN FAITH WHEREOF, the side plenipotentiaries have signed the present Treaty in the English and Persian languages, both texts being equally authentic, and have affixed thereto their seals.

APPENDIX II

TREATY OF TRADE AND COMMERCE BETWEEN INDIA AND AFGHANISTAN

(Signed at Kabul on 4 April 1950 and ratified on 24 January, 1952)

TREATY BETWEEN THE REPUBLIC OF INDIA AND THE ROYAL KINGDOM OF AFGHANISTAN

The Republic of India and the Royal Kingdom of Afghanistan being equally desirous of facilitating and furthering trade and commerce between their respective territories have resolved to conclude a treaty for this purpose and have appointed as their plenipotentiaries:

The Republic of India:

His Excellency Wing Commander Rup Chand, Ambassador of the Republic of India in the Royal court in Kabul.

The Royal kingdom of Afghanistan:

HIS EXCELLENCY ABDUL MAZID KHAN.

President of the second group and Minister of National Economy of Afghanistan.

who, having communicated their full powers found in good and due form, have agreed as follows:

Article 1

The nationals of either contracting party shall have right to carry on commerce, industries, trade or insurance in the territory of the other, in conformity with the laws and regulations in force therein, on terms and conditions not less favourable than those accorded to the national of the most favoured nation.

The provisions of this article shall not preclude the adoption of any measures taken by either contracting party in the interests of public safety and order, public health and morality.

Article 2

The nationals of either contracting party shall receive treatment not less favourable than that accorded to the nationals of the most favoured nation in regard to the acquisition, possession' management, lease and disposal of all kind of movable and immovable property, in conformity with the laws and regulations in force in the territory in the other.

Article 3

The properties of whatsoever description of the nationals of either contracting party shall not be seized or confiscated except for reasons of public interest and only if real and just compensation is given to them for such expropriation.

Article 4

The nationals of either contracting party shall not in the territory of the other be subjected to any taxes, onerous, in nature or amount, than those imposed on the nationals of the most favoured nation.

Article 5

The resident nationals of either contracting party as cease to reside in the territory of the other may freely remove their personal belongings and household effects under the same conditions as accorded to the nationals of the most favoured nation. As regards all other properties, tangible or intangible, they may do so or dispose of them, subject to the laws and regulations in force concerning the removal or disposal of such properties, in order to safeguard the due discharge of all debts and obligations incurred by them in the territory of the other.

Article 6

If a national of either contracting party dies leaving property in the territory of the other, and his legal heirs are unknown or unable or unwilling to represent themselves, the Consular representatives of either party shall have the right to take possession of and administer such property of the deceased and in so doing to take all necessary steps to safeguard the property and supervise its disposal according to the laws governing the succession of such national in his territory; provided that for the due discharge of all obligations an debts incurred by the

deceased in the territory of the other contracting party, or obligations imposed on his Estate by law, such administration shall be subject to the order of the Courts of the other contracting party having jurisdiction to decide such obligations and debts.

Article 7

The nationals of either contracting party shall in the territory of the other, have the same access to the courts and be entitled to the same equality before the law, as is accorded to the nationals of the other with respect to their persons and proprietorial, contractual and other rights and interests.

Article 8

All commercial, industrial, trading, banking or insurance corporations, owned or controlled by the nationals of either contracting party, may be constituted or incorporated in the territory of the other, in conformity with its laws and regulations. Such corporation shall be recognised as legal persons in the courts of the contracting parties and may sue or be sued in the courts, as such. For all other purposes including the right of constitution or incorporation, they shall be accorded most favoured nations treatment.

Article 9

All commerical, industrial, trading, banding or insurance corporations constituted or incorporated in the territory of one contracting party, and owned or controlled by the nationals of that party shall similarly be deemed legal persons and may be and be sued as such in the courts of the other in accordance with the laws and regulations in force in its territory, and shall enjoy most favoured nation treatment in the territory of the other.

Article 10

There shall be freedom of transit through the territory of either contracting party via the routes mutually agreed upon by them as most convenient for traffic in transit to or from the territory of either contracting party. Either contracting party may require that traffic in transit through its territory be entered at the proper custom house, but except in cases of failure to comply with applicable customs laws and regulations, such traffic coming from or going to the torritory of either contracting party shall not be subject to any unnecessary delays or restrictions and shall be exempt from customs duties and from all transit duties or other charges imposed in respect of transit, except charges for transportation

or those commensurate with administrative expenses entailed by transit or with the cost of services rendered.

Goods (including baggage) shall be deemed to be in transit across the territory of a contracting party when the passage across such territory with or without transhipment, warehousing, breaking bulk or change in the mode of transport is only a portion of a complete journey beginning and terminating beyond the frontier of the contracting party across whose territory the traffic passes. "Traffic in transit" in this article means traffic of this nature.

Article 11

Each contracting party shall accord to goods which have been in transit through and third country treatment no less favourable than that which would have been accorded to such goods had they been transported for the territory of one party to their destination in the territory of the other without going through such third country; provided that the customs authorities of either contracting party are satisfied that such goods have not undergone any sorting, separating, mixing, booting, repacking or any process of manufacture or any process whereby the value of the goods is altered in the countries of transit. Each contracting party shall, however, be free to maintain in respect of any goods in regard to which such direct consignment is a requisite condition of eligibility for entry of the goods at preferential rates of duty or has relation to either contracting party's prescribed method of valuation for customs purposes.

Article 12

With respect to customs duties and charges of any kind imposed on or in connection with importation or exportation or imposed on the international transfer of payments for imports or exports and with respect to the method of levying such duties and charges and with respect to all rules and formalities relating to the clearance of goods through the customs, any advantage, favour, privilege or immunity granted by either contracting party to any product originating in or destined for any other country shall be accorded immediately and unconditionally to the like product originating in or destined for the territory of either contracting party.

Article 13

All charges and regulations imposed by either contracting party on traffic in

transit to or from either country shall be reasonable, having regard to the conditions of the traffic.

As regards goods imported into the territory of either contracting party from the other, the charges imposed for transportation within the territory of the other will be reasonable having regard to all relevant circumstances. For this purpose, the parties agree on request to consult with each other to see if the charges required modifications subject to the above conditions.

Article 14

The contracting parties agree to make arrangements regarding "Certificates of Origin" in their mutual trade, which shall, as near as circumstances allow, be the same as those usually arranged between different countries.

Article 15

The contracting parties agree that with respect to exchange of specific commodities of one contracting party against specific commodities of the other party they may enter into trade agreements with each other. To facilitate such agreements they may also agree to enter into arrangements for methods of payment for such arrangements or for surplus goods so exchanged and delivered.

Article 16

The contracting party agree that the provisions of this treaty with respect to "most favoured nation treatment" shall not be deemed to be contravened by the grant or continuance of (a) advantages accorded or to be accorded by either of the contracting parties to contiguous countries, (b) advantages resulting from any customs union or free trade area to which either of the contracting parties is or may become a party, (c) preferences or advantages accorded by either contracting party to any country, existing on the date of this or in replacement of such preferences or advantages, or (d) advantages accorded or to be accorded by virtue of a multilateral economic agreement designed to liberalise international commerce.

Article 17

The contracting parties agree that all disputes arising out of the application or the interpretation of the treaty shall be settled by peaceful means and in the first instance by negotiations through the ordinary diplomatic channels within

a reasonable time.

Article 18

This treaty shall be subject to ratification. When ratified, ratification shall be exchanged as soon as possible at Kabul as may be mutually convenient and agreed on. This treaty shall come into force two months after the date of the exchange of ratifications and shall remain in force for a period of three years from that date. It shall terminate at the end of this period if either contracting party shall notify the other party of its intention not to continue the treaty at least six months before the date of expiry. If no such notice is given, the treaty shall continue in force for another period for two years. After the expiry of these two years, the treaty can be terminated at any time by either contracting party giving notice to the other party, at least six months before the date on which it wishes to terminate the treaty.

This treaty is drawn up in two languages English and Persian. Both texts shall be regarded as equally authentic and valid. In faith whereof the respective plenipotentiaries have signed the present Treaty.

For the Republic of India
(sd). RUP CHAND.
4th April, 1950.

For the Royal Kingdom of Afghanistan
(sd). ABDUL MAJID KHAN
15th Hamal, 1329

FINAL PROTOCOL

On proceeding to sign to Treaty of Commerce between the Republic of India and the Royal Kingdom of Afghanistan the undersigned plenipotentiaries have agreed on the following declarations and reservations on the meaning of certain terms used in the Treaty and certain matters not specifically covered by the Treaty.

1. In order to enable such nationals to exercise the right as to commerce, etc.

granted to them, it is understood that they shall have the right of entry in to, residence and travel in the territory of the other party in conformity with the laws and regulations in force therein. The treatment accorded to them in these matters shall nevertheless, not be less favourable than that accorded to the nationals of the most favoured nation.

2. The nationals of either contracting party shall be exempt in peace or war, from all military services whatsoever, or other obligatory services of the like nature and from all obligations or payments imposed in lieu of such services; provided, however, that in the case of natural catastrophic such services, of a civil nature, as are imposed on the nationals either contracting party may also be imposed on the resident nationals of the other to the same extent and under the same conditions.

3. The assembly of vehicles and mobilized machinery arriving in a knocked down condition or the disassembly for the disassembly and subsequent reassembly of bulky articles, shall not be held to render the passage of such goods outside the scope of "traffic in transit" in Article 10 provided that any such operation is undertaken solely for convenience of transport.

4. Such transhipment, warehousing, breaking bulk or change in the mode of transport as is done solely for convenience of transport shall not be deemed to contravene the provisions of Article 11 with respect of repacking.

5. If the negotiations referred to in Article 17 fail, the parties shall endeavour to arrive at a settlement by the such means as may be mutually agreed upon in any particular case before resorting to the Court of International Justice.

6. This protocol shall form an integral part of the Treaty and shall be considered as approved and sanctioned by the contracting parties without any special ratification by the sole fact of the exchange of ratifications of the Treaty to which it pertains. It has been drawn up in two languages English and Persian both texts being equally authentic and valid on the day.

Source: Indian Trade Journal, vol. 181, January-March 1952, pp. 704-06

APPENDIX III

The Government of India's Position on the Afghan Question Statement of B.C. Mishra Permanent Representative of India to the United Nations at the UN General Assembly on November 19, 1980,

Mr. President, the situation in and around Afghanistan has cast, for the major part of this year, a long shadow in the International Political horizon giving rise to complex scenarios of political Pressure and diplomatic power play.

While the reality of the situation in the region still remains grim, the developments of the past months have seriously affected the entire climate of international relations and set back the process of detente limited as it was, so sedulously cultivated during the past few years. Indeed, Afghanistan today has become a flash point for a virtual return to the polemics and paranoia of the cold war. Successive efforts aimed at defusing the situation have been frustrated by the continued adoption of unrealistic attitudes and inflexible positions.

This continued emphases has caused deep concern and anxiety to India we are all the more disturbed because the developments in Afghanistan have had the effect of reversing a trend of events in the Subcontinent which had earlier given rise to a degree of optimism. The Nations of the subcontinent had begun to experience a period of relative relief from the climate of distrust and hostility and were gradually embarking on relationship based on mutuality, common benefit and a developing faith in bilateral negotiations as a means of settling outstanding problems. All the countries in our region having become 6 members of the non-aligned movements. It was our hope that the entire area would be free of tensions and could engage purposefully in the challenging tastes of the national reconstruction and socio-economic advancement of our people.

The events of the past year have, if anything, interrupted this process and, in some respects, assumed more ominous proportions owing to factors most of which are not indigenous to the immediate issue facing the region. The impulse to resort to arms and confrontation could only prove detrimental to

confidence building and to the evolution of stability through mutual co-operation among the countries of the region, suspicious generated by the harbouring and encouragement of dissident elements and the consequent build up of tensions could only heighten the risk of great power confrontation closer on our doorsteps.

As for as Afghanistan is concerned, India has always had close and friendly relations with the Government and people of Afghanistan and we have been deeply concerned and vitally interested in the security, independence, sovereignty and territorial integrity of this traditionally friendly non-aligned country. We have continued our productive and fruitful cooperation despite vicissitudes of history on both sides, Our concern with present developments affecting both Afghanistan as well as the region as whole stems from the fact that the security of all our neighbours in the sub-continent is inextricably related to our security and national interest. We are concerned, not only that the existing situation could generate reactions and serve as a pretext for those who wise to create further instability in the area but also that the continued festering of this situation without attempts at ameliorating it could only lead to an alteration of the political and economic resources of the countries leading to their further weakening and serving as a standing temptation for outside intervention and cupidity . It is for the countries of the region to seek ways and means other than by military force to bring about a solution, to the problems underlying the present situations. This is why a political solution is of the utmost urgency.

The Government of India has been over the past several months engaged in consultations with a large number of countries, both of the region and outside. In the course of these consultations, we have consistently stressed the need to prevent an escalation of tensions in South-West Asia. While there has been a general appreciation of the need for a political solution, it is equally under stood that such a solution can emerge only out of an atmosphere of relative trust and confidence based on the realities of the existing situation in the area. The immediate task to be under taken is that of establishing a dialogue without any strict stipulation as to the outcome thereof. Such an exercise will naturally involve a meticulous sifting of global, regional and national aspects and their inevitable interaction. We are convinced, however, that in the process of such a dialogue several other lines of perceptions would open up for further probe

and action and would lead eventually to the contours of a political solution.

The adoption of public postures in international bodies should, my delegation feels, facilitate rather than hamper the process of a political solution. As far as possible, attempts should be made by all concerned to avoid extreme position or to adopt confrontationist postures as these could only put back the process of diffusion of tensions. Any attempt also to proceed on the basis of decisions or recommendations adopted even in a body such as the UN which has not been accepted by the countries primarily involved could only aggravate the matter. It is essential that all the states concerned should display a degree of flexibility and not attempt to impose rigid preconditions whether through a UN resolution unacceptable to some of them or by setting up other rigid modalities designed to close the door on negotiation.

Thus, my delegation feels, as it felt in January this year, that debate in the general Assembly of Afghanistan, which would almost certainly lead to the adoption of another resolution unacceptable to some of the countries directly involved, might very well be counter-productive. It we are taking part in the debate, it is only to advise restraint and in the hope of contributing to wards a possible amelioration of the situation in the future rater than in older to apportion blame for the past. We seep an urgent solution to this question both for the peace and security of our region as also in order to avoid further deterioration of the situation through increased involvement by outside Powers. Above all, we seek a solution of the crisis on the basis of certain commonly acceptable elements. Actually important elements in such a solution would be the complete cessation of all interference of intervention in the internal affairs of states, firm opposition to the presence of foreign troops in any country as well as the withdrawal of existing foreign forces and the furnishing of complete and reliable guarantees against all forms of interference.

What must be avoided is the emphasis on one principal or element over others. They must be taken together and they must be given equal importance in any political settlement. We cannot therefore support the draft resolution contained in document A/35/L12.

The Government of India would continue in its efforts through diplomatic channels, bilateral contacts and other forms of consultation to seek ways and means of defusing the situation in the region and for moving towards the creation of conditions that would urgently appeal to all concerned, particularly the more powerful countries outside the area to act with responsibility and restraint.

APPENDIX IV

Prime Minister Indira Gandhi's views on Afghanistan expressed at the press conference on the conclusion of the seventh Non-aligned summit in New Delhi on March 12, 1983.

Q. Madam prime Minister, you consider that a country which has on its territory an expeditionary force of several tense of thousands of men from one of the two big supper powers can be considered as non-aligned in the context of the founders of the movement?

I.G. If you are referring to Afghanistan, why not say so?

Q All right, I say so.

I.G. I have spoken on this issue many times. If a small country sees itself in danger and invites a force in, that is its business, on the other hand, India as a Government and I personally have made it clear even before I was in government that we did not approve of foreign troops or any king of interference or intervention in the affairs of another country. But this must be balanced with that is happening in other parts of the world. I don't think there could be single person here in this hall who is unaware of interference, destabilisation, removal of elected leaders, the putting up on puppet regimes and so on. So, when we think of such questions, I think, we should look at the world as a whole and not have double standards.

Q. Madam Prime Minister, I would like to ask what practical steps you foresee to solve the Afghan question?

I.G. I can't see any practical steps as such immediately, but I don think that the manner in which a hue and cry was raised didn't help towards any solution. Many of the people who are now talking about the question of Afghanistan, did not raise their voices when Vietnam was invaded and they had to face a terrible war for many years. It is only one example , I could give hundred more just now.

Q. I was Slightly puzzled by your remarks on the soviet troops in Afghanistan. Now one of the tests of sovereighty and independence is effective control of a government in its own territory, in spite of international pressures and outside pressures. Now, does the non-aligned movement consider the proposition of drawing in line how long foreign troops are staying too long, destroying the credibility of the regimes they have setup.

I.G. I am afraid that is gentle men's knowledge of what is happening is not very accurate.

Q. Many people are raising the question of Afghanistan. I wanted to know how do you look at the problem of Afghanistan? Is it realised that a non-aligned sovereign country has been interfered by hostile forces and a kind of undeclared war has been launched by the USA, China and others from the territory of neighbouring countries.

I.G. I don't want to go into the details of this question, but I think all of you will remember that before President Sadat was no tragically assassinated, he himself publicly said that he had been asked to send weapons to the rebels in Afghanistan and this has been conferred by may others - That is, against the régime there.

APPENDIX V

PRESS INFORMATION BUREAU
GOVERNMENT OF INDIA

INDO-AFGHAN TRADE TO BE REVIEWED

New Delhi, Asadha 30, 1907
July 21, 1985

An Afghan Trade Delegation led by Mr. Ziauddin Zia, President, Ministry of Commerce of the Democratic Republic of Afghanistan is currently in India to hold review of Indo-Afghan Trade.

The two-way Indo-Afghan Trade is of the order of about Rs. 40 crores. India's main exports to Afghanistan are tea, jute manufactures, metal manufactures, machinery, transport equipment and pharmaceuticals. Afghanistan exports to India, mainly dry and fresh fruits, spices and medicinal herbs.

The purpose of the visit of the Delegation is to take stops for promotion of trade as well as balancing the trade. During their visit, the Afghan Delegation will hold discussions with the representatives of the Banking Institutions, State Trading Corporation, Engineering Export Promotion Council and other exporting agencies in India.

MJ:CAR:CC 385/1 19.7.8 17.15

APPENDIX VI

PRESS INFORMATION BUREAU
GOVERNMENT OF INDIA

CULTURAL EXCHANGE PROGRAMME WITH AFGHANISTAN SIGNED

New Delhi, Sravana 16, 1907
August 21, 1985

A programme of cultural exchanges for 1985-87 was signed here today between India and the Democratic Republic of Afghanistan. Shri Y.S. Das, Secretary, Department of Culture signed on behalf of the Government of India and H.E. Mr. Mohiuddin Shahbaz, Deputy Minister, State Planning Committee, Democratic Republic of Afghanistan, signed on behalf of the Afghanistan Government.

To Strengthen the ancient cultural bonds between the two countries, India and Afghanistan had signed a Cultural Agreement in October 1963. In furtherance of its objectives programmes of specific cultural exchange have already been concluded and implemented. This cultural exchange programme is the fourth in the series and will come into force immediately. It envisages exchange of academics, archivists, historians, artists, performing groups, journalists, sports teams, professionals in areas of management consultancy, delegations to explore possibilities of scientific and technical co-operation, books and periodicals, micro films of rare books and art publications etc.

The programme also envisages award by India of 10 scholarship to Afghan nationals, doctoral as well as visiting fellowships to Afghan scholars and fellowships for training in public co-operation and child development. India will also provide Afghan nationals training facilities in repair and preservation of historical monuments, in care and conservation of books, manuscripts and archives etc. and in sports coaching. Besides this, India will assist Afghanistan in preservation, repair and maintenance of historical buildings and monuments and excavation of historical sites.

Provision has also been made for co-operation in joint research and teaching programmes, strengthening of the programme of Afghan studies in India and supply of text books and holding film weeks.

BS/ACA 152/1 (7.8.85) 12.00 Noon

APPENDIX VII

STARRED QUESTION 440
PRIORITY XX

RAJYA SABHA

STARRED QUESTION NO. 440

TO BE ANSWERED ON THE 22nd AUGUST, 1985

INDO-AFGHAN JOINT COMMISSION MEET

440. SHRI MATI KRISHNA KAUL:

Will the Prime minister प्रधान मन्त्री
be pleased to state:
(a) whether any meeting of the Indo-Afghan Joint Commission was held recently in Delhi; and
(b) if so, what was the outcome thereof?

ANSWER

THE MINISTER OF STATE IN THE
MINISTRY OF EXTERNAL AFFAIRS विदेश राज्य मंत्री
(SHRI KLHURSHED ALAM KHAN)

(a) & (b): A statement is attached.

Statement referred to in reply to part (b) of Rajya Sabha Starred Question No. 440 for 22.8.1985

A Protocol was signed between India and Afghanistan after the 7th meeting of Indo-Afghan Joint Commission. Among the important provisions of the protocol are:-

(a) Both sides, continuing discussions on matters pertaining to bilateral trade, expressed desire to take expeditious follow up action on the proposals to increase trade in a more balanced manner.
(b) Indian assistance for the expansion of the Institute of Child Health, Kabul.
(c) Indian assistance for setting up a 300 beds Obstetrics and Gynecological hospital in Kabul.
(d) Supply of equipments to Industrial Estate, Kabul.
(e) Supply of Musical instruments to Indian Classical Music Centre in Kabul.
(f) Supply of a range improved variety of agricultural seeds to Afghanistan.
(g) Deputation of Indian experts to Kabul.
(h) Indian help to Afghanistan in conducting feasibility studies for setting up on Coal Briquette manufacturing factory.

2. Indian assistance to Afghanistan would be in the nature of grants under the ITEC programme.

APPENDIX VIII

UNSTARRED QUESTION No. 2809

RAJYA SABHA

UNSTARRED QUESTION NO. 2809

TO BE ANSWERED ON THE 22ND AUGUST, 1985

INDO-AFGHAN TRADE TALKS

2809. SHRI DHULESHWAR MEENA:

Will the Prime Minister प्रधान मन्त्री
be pleased to state:

(a) whether a working group of officials of India and Afghanistan discussed on the 6th August, 1985 the details of areas for co-operation in trade and other fields to find out a satisfactory solution; and

(b) if so, the outcome of these talks?

ANSWER

THE MINISTER OF STATE IN THE
MINISTRY OF EXTERNAL AFFAIRS विदेश राज्य मंत्री

(SHRI KHURSHED ALAM KHAN)

(a) Yes, Sir,

(b) A statement is attached.

RS USC NO. 2809

STATEMENT REFERRED TO INREPLY TO PART (B) OF RAJYA SABHA UNSTARRED QUESTION NO. 2809 FOR 22.8.1985

A Protocol was signed between India and Afghanistan after the 7th meeting of Indo-Afghan Joint Commission.

The important provisions of the protocol are same as referred to in reply to Rajya Sabha Starred Question no. 440 for 22.8.1985.

संदर्भ-सूची
(Bibliography)

BIBLIOGRAPHY

PRIMARY SOURCES

Debates

1. Lok Sabha Debates.
2. Raj Sabha Debates.
3. Ministry of External Affairs Reports (1947-85)
   (Publications Division, Ministry of External Affairs Government of India, New Delhi).

Speeches and Writings

1. Attarchand, "Non-alignment solidarity and National security" Selected Document, Speeches, massages 1961-63 (Delhi 1985)
2. Gandhi, Indira, Selected speeches 1966-69. Publication division, Ministry of Information and Broadcasting, Government of India, New Delhi, 1971.
3. Gandhi, M. K. Gandhiji's correspondence with the Government (1944-47) Navjiwan, Ahmedabad 1959.
4. India's Foreign Policy, changing world, New Delhi, External Publicity Division, 1978.
5. India's foreign policy "Selected speeches, Sep 1946 - April 1961", Publication division, Government of India, Bombay 1962.
6. India, Reference Annual 1964, The Research and Reference Division, Ministry of Information and Broadcasting, Government of India.
7. Ministry of Information and Broad casting, Speeches of Prime Minister Jawaharlal Nehru, Vol.1 Sept. 1946 - May 1949 (1949), Vol. II June 1949 - Feb. 1953 (1954), Vol. III March 1953 - Aug. 1957 (1958), Vol. IV, Sept. 1957 - April 1963, (1964).
8. Radhakrishnan S., Occasional Speeches and Writings, October 1952- Jan. 1958, Publication Division, Government of India, New Delhi, 1959.
9. Shastri, L.B., A Collection of Speeches from June 1964 to May 1965, Publication Division, Government of India, New Delhi, 1966.
10. Speeches of President V.V.Giri, Vol II., Publication division, Ministry of Information and Broadcasting, Government of India 1972.
11. Vajpayee, A.B, "India's foreign Policy", New Delhi, Ministry of External Affairs 1977.

Conference Proceeding

1. "Afghanistan two years of occupation", U.S. Department of State Paper on Afghanistan, Released on December 23, 1981, Indraprastha Press, New Delhi, July 6, 1982.
2. Asian Relations, Reports of the Proceeding and Documentation of the First Asia Relations Conference (Asian Relations, organisation, New Delhi, 1948)
3. Delhi Record I 1921, Government of India, Foreign and Political Department, Secret-Frontier Proceedings, January 1921. No. 1-147, India-Afghan Conference Mussoorie Part II.
4. India, two Decades of non-alignment: Documents of the Gatherings of the Non-aligned countries 1961-82, New Delhi, Ministry of External Affairs 1983.

5. India's views on the Afghan situation, October 1981, Publicity Division, External Affairs Government of India, New Delhi, Prime Minister and Foreign Minister Statement in Loksbha and Rajya sabha.
6. The Global Significance of the Occupation of Afghanistan by USSR, (United States International Communicational Agency, text as Published by FVIS Dec.6, 1978)

Documents:

1. Annual Report of 1982-84, Published by Indian Foreign Ministry.
2. Asian Recorder 1947-1985, Published by K.K.Thomas at Recorder Press, NDSE Part I, New Delhi.
3. Atlas of the Northern Frontier of India (Ministry of External Affairs, New Delhi, 1960).
4. Basic Statistical material Relating to Foreign Trade (Office of the Economic Advisor, Government of India, New Delhi)
5. Foreign Affairs Record 1960-1985 A ministry of External Affairs Publication Division, Government of India, New Delhi.
6. Foreign Affairs Reports, Indian Council of World Affairs, New Delhi.
7. Foreign Policy of India Texts of Documents 1947-64 by Lok Sabha Secretariat 1966.
8. India's Foreign Trade Statistics with Special Reference to Asian Countries, (Office of the Economic Advisor to the Government of India, New Delhi).
9. India's Foreign Trade Statistics with Special Reference to Asian Countries, (Office of the Economic Advisor to the Government of India, New Delhi).
10. India's Trade Agreement with other Countries (as in force on July 1, 1960, July 1, 1962, July 1, (1963), Director of Commercial Publicity, Ministry of Commerce and Industry, Government of India, New Delhi).
11. Press Information Bureau, Government of India, New Delhi.
12. Resolution of Foreign Policy 1947-57 AICC., New Delhi.
13. Robert Fraser, Keesings Contemporary Archives (1947-85), Record of World Events, Keesings Publications (A division of Longman Group Ltd. London).
14. Selected Documents on Asian Affairs; India (1947-50), External Affairs, Vol. 2, ed S.L. Poplai (ICWA), London 1959.
15. USSR, Bulganin, N.A., and Khrushev, N.S., visit of Friendship to India, Burma and Afghanistan, Speeches and Official Documents, Moscow: Foreign Languages Publishing house, 1956,

Government of Afghanistan:

1. Afghanistan's Foreign Trade Statistics 1958-59, Royal Afghan Ministry of Commerce, Kabul, 1960
2. Afghanistan's Foreign Trade, 1335 Through 1342 (March 21, 1956 to March 20, 1964) Royal Afghan Ministry of Commerce, Kabul 1965
3. A New State of Central Asia, Royal Afghan Embassy, London 1960.
4. Basic Lines of Revolutionary Duties of the Government of the Democratic Republic of Afghanistan, Kabul Government Printing Press 1978.
5. Pakhtoonistan: The Khyber Pass as the Focus of the New State of Pakhtoonistan (Afghan Embassy, London)
6. Statistical Information of Afghanistan 1975-78 (Kabul: Afghan Education Press, 1978).

7. The Truth About Afghanistan: Documents, Pacts Eyewitnesses Reports, Novosty Press, Moscow 1981.

United Nations

- General Assembly Official Records (1947-84), Official Records of Security Council 1947-84.
- United Nations Year Book 1947-84.

Treaties

- Aitchison, C.U. Treaties, Engagements and Sanads Relating to India and Neighbouring Countries, Vol. XI, and XIII (Central Publications, Calcutta-1909, 1933).
- Text of India-Afghanistan treaty of Friendship (Issued in New Delhi on Jan. 4, 1950, Lok Sabha Secretariat, New Delhi 1966).

SECONDARY SOURCES: BOOKS

1. Adamec, W.L. Ludwig, "Afghanistan's Foreign Asian to the mid-twentieth century",The University of Arizan Press, Tucson, Arizona U.S.A. 1974.
2. Ahmad, Jamaluddin, Aziz M.A., "Afghanistan-A Brief Survey", London 1934.
3. Ansari, Azhar: "Afghanistan through Indian Eyes", Shabdakar publishers, Delhi 1980.
4. Anthony Arhorld, "Afghanistan The Soviat Invasion in Perspective", Hoover Institution press, Stanford University, California 1981.
5. Anthony Hyman, "Afghanistan Under Soviat Domination, 1964-81", The Macmillon Press Ltd. London and Basingstok 1982, printed in Hongkong.
6. Appadorai, A., "Selected Documents on India's Foreign Policy and Relations 1947-72", Oxford University Press, New York 1982.
7. Appadorai, A., and M.S. Rajan, "India's Foreign Policy and Relations", South Asian Publishers, New Delhi 1985.
8. Arora, V.K., and A. Appadorai: "India's World Affairs 1957-58", Sterling publishers, New Delhi 1975.
9. Asghar, H. Bilgrami, "Afghanistan and British India 1793-1907, A Study in Foreign Relations", Sterling Publishers, New Delhi, 1972.
10. Ashitkov, gorvokyarn, Polonsky, Swatojarov, "Afghanistan Sachchai kya hai", Delhi 1983.
11. Attar Chand: "Non-aligned Solidarity and National Security", UDH publishers, Delhi.
12. Attar Chand: "Non-Aligned Nations Arms Race and Disarmament", New Delhi Publications 1983.
13. Bain, S.K., "Afghanistan will not Die", Satyam Shivam Publication, Calcutta 1982.
14. Baldev, "Global Impact of Afghan Crisis", International Reporter publications, New Delhi 1980.
15. Banerjee, Brijendra Nath, "India's aid to its Neighbouring countries", Publishers and Distributers, New Delhi 1982.
16. Barnds, William J., " India Pakistan and the Great Powers", Praeger publishers, New York 1972.

17. Battacharya, Vivek Ranjan, "Indira Gandhi: Her Role in World peace", Metropolitan Book Co., New Delhi 1982.
18. Bear, D.D., "Afghan Intertude" (London 1957).
19. Bhargava, G.S., "South Asian Security after Afghanistan", Massachusetts Lexington Books 1983.
20. Bisheshwer prasad, "The Foundation of India's Foreign Policy, 1882-1914", Naya Prakashan, Calcutta, 1979.
21. Bradsher Henry, S., "Afghanistan and the Soviet Union", Duke Press Policy studies Durham, New Delhi.
22. Breacher Michael, "India's Foreign Policy: Krishna menon's View of the World",(Recorded Interview), Oxford University Press, London 1968.
23. Breacher Michael, "India's Foreign Policy: An interpretion", Institute of Pacific Relations, 1957.
24. Chakravarty, summit, "Date Line Kabul", Delhi, 1983.
25. Chavan, Y.B., "India's foreign Policy", Samaiya publications, Bombay.
26. Chowdhary, Narendra Singh, "Bhartiya Upmahadvip Mein Sheet yudh", Bareilli 1981.
27. Doody, Agnes G., "Words and Deeds: An Analysis of Jawahar Lal Nehru's Non alignment Policy in the Coldwar 1947-53", pennsylvania State University Thesis, 1961.
28. Dupree, L. "Afghanistan" Princeton University Press, 1980.
29. Dutt, V.P., "India's Foreign Policy", Vikas Publishing House, New Delhi 1984.
30. Fedoseyev, P.N., Girigulevich I.R., Maslova, N.I., "Afghanistan Past and Present", Oriental Studies in the USSR, Publication 1981.
31. Fraser Tytler, W.K., "Afghanistan - A Study of Political Developments in central Asia", London, 1967.
32. Gangal, S.C., "India's Foreign Policy", Young Asia Publications, New Delhi, 1980.
33. Ghose, Dilip Kumar, "England and Afghanistan - A Phase in their Relations", The world press, Calcutta 1960.
34. Gildner Jay W., "Chronology of Afghanistan Events", Indraprastha Press, New Delhi 1980.
35. Gopal Krishnan, R., "The Geography and Politics of Afghanistan", Concept Publicating company, New Delhi 1982.
36. Goyal, D. R., "Afghanistan Behind the Spoke Screen", Ajanta Publication, Delhi 1984.
37. Goyal, Desh Raj, "jagrat Afghanistan", Navyug Publishers, Delhi 1984.
38. Gregorian Vartan, "The Emergence of Modern Afghanistan", Politics of Modernization, 1880-1946, (Stanford university, Thesis 1969).
39. Griffiths, John, C., "Afghanistan", Pall Mall Press, New York, 1967.
40. Griffthiths, T.C., "Afghanistan - Key to a continent" (London 1981).
41. Guha, A., "Economic Transition in Afghanistan 1929-61", ISIS Thesis, Delhi 1962.
42. Gupta, M.G., "Indian Foreign Policy theory and practice", Agra 1985.
43. Gupta, Bhabani Sen, "Afghan Syndrome, how to live with Soviet Power", Vikas Publisher, Delhi 1982.
44. Gupta, Karunaker, "Indian Foreign Policy in Defense of National Self Interest - An Analytical Study of India's Foreign Policy", World Press, Calcutta 1956.
45. Gupta, R.C., "U.S. Policy towards india and pakistan", Delhi 1967.

46. Gupta, D.C., "Antar Rashtriya Sambandh", New Delhi.
47. Gupta Sisir, "India and Regional Integration in Asia", New Delhi 1964.
48. Harmandar Singh, "India and Her Neighbours" Phulkian Press, Patiala 1967.
49. Horney and Jones, "The Non-alignment Countries", Orbes Press Agency, London 1982.
50. Hunter, Edward, "The Past Present: A Year in Afghanistan", London 1959.
51. Jafri Hasan Ali Shah, "Indo Afghan Relations 1947-67" Sterling Publishers, New Delhi 1976.
52. Janata's Foreign Policy, Vikas Publishing House, New Delhi 1979.
53. Jeta, "Afghanistan Ki Sour Kranti" Delhi 1979.
54. Kahzad, Ahmed Ali, "Frontier Discord between Afghanistan and Pakistan, Government Press Department, Kabul 1951.
55. Kakar, Hasan Kawun, "Government and Society in Afghanistan", University of Texas Press, Austin, London 1979.
56. Karunakaran, K.P., "India in World Affairs, 1947-50", ICWA, Calcutta 1952.
57. Kaur, Kulwant, "Pak-Afghanistan Relations", Deep and Deep Publications, New Delhi 1985.
58. Khilnami, N.M., "Panorama of Indian Diplomacy", S. Chand and Company Ltd, New Delhi 1981.
59. ----- Realities of Indian Foreign Policy, ABC Publishing House, New Delhi 1984.
60. Kothari, S.L., "India's Emerging Foreign Policies", Bombay 1951.
61. Kumar, Ashok, "Pakistan as a Factor in Indo Afghan Relations 1947-73", Thesis, Meerut University, 1981.
62. Limaye Madhu, "Problems of India's Foreign Policy", Delhi 1984.
63. Lowe and Brydon, World Politics since 1945" Longman, Great Britain 1968.
64. Malhotra, Ravinder, "Afghan Search for Identity- Frontier Settlements 1872-1893", G.D.K. publications, Delhi 1982.
65. Mathur, Girish, "New Afghanistan", Sterling Publishers, New Delhi 1981.
66. Mellor, Andrew, "India Since partition", London 1951.
67. Mervyn O.Praghell, "The International Year Book and statemen's who's who", Shomas Skinner Directories, England.
68. Misra, K.K., "Kashmir and India's Foreign Policy", Chugh Publications, Allahabad 1979.
69. Misra, K.P., "Afghanistan Crisis" Vikas Publishing House, New Delhi 1981.
70. Mukherji, Sadhan, "Afghanistan from Tragedy to Triumph", Sterling Publishers, New Delhi 1984.
71. Murti, B.S.N., "Nehru's Foreign Policy" New Delhi 1954.
72. Nayar, Kuldeep, "Report on Afghanistan", Allied Publishers, New Delhi 1981.
73. Newwell, Richard, S., "The Politics of Afghanistan", London 1970.
74. Noyce, F., "England, India and AFghanistan", London 1902.
75. Pant, H.G., "India's Foreign Policy", Punchsheel, Jaipur 1971.
76. Paranjpe, Srikant, "India and south Asian Since, 1971", Radiant Publishers, 1985.
77. Rahim, M.A., "History of Afghan in India", Karachi 1961.
78. Rahman, M.M., "Politics of Non-alignment", New Delhi 1969.

79. Rahul, Roy, " Struggle for Central Asia", Vikas Publishing House, New Delhi 1982.
80. Rajan, M.S., "India in World Affairs 1954-66", Bombay 1968.
81. Rajkumar, N.V., "The Background of India's Foreign Policy", Navin Press, Delhi 1953.
82. Rana, A.P., "The Imperatives of Non-alignment A conceptual Study of India's Foreign policy Strategy in the Nehru Period", MacMillan, New Delhi 1976.
83. Rashtia, S.Q., "The Price of Liberty - the Tragedy of Afghanistan", Geneva, Switzerland 1984.
84. Rastogy, Ramsagar, "Indo-Afghan Relations 1880-1900" Nov-Jyoti Press, Luknow 1965.
85. Ratnam Parela, "Afghanistan's Uncertain future" Tulsi Publishing House, New Delhi 1981.
86. Roy, M.P., "Indian Foreign Policy 1966-77-A Critical Analysis", Seventh Rajisthan political Science Conference, 5-27 Feb., 1978.
87. Sagar, Vidya, "India in World Affairs, Chronology of Events 1947-72", Swastik Prakashan, New Delhi 1973.
88. Sareen, Anuradha, "India and Afghanistan 1907-21", Sima Publications, Delhi 1981.
89. Shabbir, Ali Rizvi, "Afghanistan Under Soviet Occupation", World Affairs Publications, Islamabad 1980.
90. Sharma, V.B., "The Strategic Aspects of India's Foreign Policy", London University Ph.D. Thesis 1958.
91. Singhal, D.P., "India and Afghanistan 1876-1907, A Study of Diplomatic Relations", University of Queensland Press, Australia 1963.
92. Srivastava, Govind Narain, "India Non-alignment and World Peace", New Delhi 1984.
93. Srivastava, M.P., "Soviet Intervention In Afghanistan", ESS publications, New Delhi 1980.
94. Tripathi, G.P., "Indo - Afghan Relation 1882-1907", Kumar Brothers, New Delhi 1973.
95. Vaidik, V.P., "Afghanistan mein Soviet Ameriki Pratisaprdha", National Publishing House, New Delhi, 1973.
96. Vaidik, V.P., "Bhartiya Videshneeti", National Publishing House, New Delhi 1980.
97. Varshney, R.L., "India's Foreign Trade After the Second World War", Allhabad 1954.
98. Venkatraman, T.K., India and her Neighbours", Bombay.
99. Verma, S.P. and Mishra K.P., "Foreign Policies in South Asia", Orient Longmans, New Delhi 1969.
100. Wakman, Mohammad Amin, "Afghanistan at the Crossroad", ABC Publishing House, New Delhi 1985.
101. Wakman, Mohammad Amin, "Afghanistan Non-alignment and the Super Power", Radiant Publishers, New Delhi 1985.
102. Wilber, Donald, N., "Afghanistan: and its people, its Society, its Culture", New Haven 1962.
103. Young, Cuyler, "Current Problems in Afghanistan", Princeton 1961.
104. Zafar, Ullah Khan, "Pakistan's Foreign Relations", Karachi 1950.
105. Zahir Shah Mohammad, King of Afghanistan - "Constitution of Afghanistan", Kabul 1958.

ARTICLES

1. Abescromdie, Thomas J. "Afghanistan: Crossroad of conquerors", National Geographic Magazine 134 (3): September, 1968, pp 297-344.
2. Abibi, S.A.H., "Cultural Relations Between Afghanistan and India", India and Foreign Review, Vol. 6, No. 17, July 15, 1969, pp 9-10.
3. "Afghan-Pak Relations" Young Indian 3(43): Oct. 4, 1973, pp 13-20.
4. "Afghanistan, Pakistan and China", Tribune, 19(45) March 22, 1975, pp 15-18.
5. "Afghanistan: Up in central Asia", Economist, 193 (6068), December 12, 1959, pp 1046.
6. "Afghanistan: The Pakhtoonistan problem", Central Asian Review 7(3): 1959, pp 291-300.
7. "Afghanistan and India communique", September 6, 1977, International Law Reports 5(11) Nov. 1977, pp 290-92.
8. "Afghanistan and USSR Treaty Moscow", December 5, 1978, Survival, 21(2) March-April, 1979, pp 92-93.
9. "Afghanistan and USSR Treaty Moscow", Soviet Review, 15(58) December 21, 1978, pp 35-40.
10. "Afghanistan events A Pakistani View Point", Democratic World, 9(3): Jan. 20, 1980, pp 10-14.
11. "Afghan Claim to Pakhtoonistan", Egyption Economic and Political Review, 2(8): April, pp 15-16, 35, 1956.
12. "Afghan Proposals for Political Settlement", People's Democracy, 4(24): June 15, 1980, pp 8-10.
13. "Afghan Claims Against Pakistan", The Asiatic Review, July, 1950. pp 1104-08.
14. "Afghan Coup: Promises to keep", Democratic World, 11(30): July 26, 1973; pp 3-4.
15. "Afghan-Pak-Relations", Young Indian, Vol. 3, No. 43, October 4, 1973, pp 13-20.
16. Agwani, M.S., "The sour Revolution and After", International Studies, 19(4) October-December 1980, pp 557-73.
17. Ali, Mohammad, M.A., "Afghanistan's Mountains", Afhanistan Vol. VIII, No.1, Jan-March 1953, pp 47-52.
18. Ali, Slamat, "India gets Involved", Far Eastern Economic Review, 140(20) May 19, 1988, pp 35.
19. Amauryde, RienCourt, "Indo and Pakistan in the Shadow of Afghanistan", Foreign Affairs Vol. 61, No.2, 1982 pp 416-437.
20. Amin Tahir, "Afghan Resistance Past, Present and Future", Asian Survey Vol. 24, No.4, April 1984 pp 373-399.
21. Anand, J.P., "Indo-Afghan Co-operation, I.D.S.A.", News Review on South Asia and Indian Ocean, July, 1976, pp 477-480.
22. Anand, J.P., "Focus on Indo-Afghan Relations", Foreign News and Features 6(ii): March 15, 1975, pp. 3-4.
23. Anand, Mohan, "The Turning Wheel of India's Foreign Policy", Progressive 27(2): Feb. pp 25-27.
24. Andrianov, L., "Afghanistan Economy and Politics", Party Life 10(8): May 7, 1974,

pp 53-57.

25. Anita (Retd) Maj-Gen-S. N., "Afghan Crisis and India's Stakes", Mainstream, Vol.18. No.24, Feb. 9, 1980, pp 5-7.
26. Appadorai, A."Foreign Policy after Nehru", Eastern Economist 53(21); Nov. 21. 1969, pp 964, 967-8.
27. Appadorai, A. "What is Non-Alignment",Eastern economist 53(1): July 4, 1969, pp 9-10.
28. Appadorai, A."Parliament Review of our Foreign Policy", Eastern Economist 54(23), June 5, 1970, pp 1061-62, 1064.
29. Ariel, Sanjay, "India and Afghanistan",Tribune 24(51), 5 July, 1980, pp 25-29.
30. Arthur, Lall,"Change and Continuity in India's Foreign Policy", Orbis, 10(1), Spring 1966, pp 91-105.
31. A Spinall Richard, "Broken Window in Central Asia - Afghanistan", Australian Outlook, Vol.10 No.1, March 1956, pp 46-51.
32. Attar Chand, "India's Foreign Policy 1947-70", Young Indian, April 15, 1974, pp 113-119.
33. Ayar, Sahnaz k., "US Quite, UN Talk on Afghanistan", Indian Express, May 6, 1986.
34. Banerjee, Subrata, "India, Afghanistan and the World, A Study in Perspective", Secular Democracy, Vol. 13, No.3 Feb., 1980, pp 24-27.
35. Barindranath Dhawan, "Afghanistan: An Indian perception", Democratic World, 9(7), February 13, 1980, pp 5-6.
36. Batra Manohar Singh, "The Foreign Policy and Relations of Afghanistan", Indian School of International Studies, pp 1-9.
37. Bhambri, C.P., "India's Foreign Policy",Social Scientist 10(10) October 1982, pp 51-55.
38. Bharat Wariavwalla, "Soviet Presence in Afghanistan", Times of India, July 5, 1980.
39. Bhargava, G.S., "Afghanistan What India can do", Indian Express, Jan. 5, 1985.
40. Bhasin, Prem, "India's Role in the Afghan Tangle", Janta 35(1), February 10, 1980, pp 5-7.
41. Bhattacharya, Arun, "Relations with Neighbours" Now 36, (1) October 7, 1966, pp 11.
42. Bimal Prasad, "India and the Afghan Crisis" International Studies, Vol.4, No.19, October-December 1980, pp 635-641.
43. Bimal Prasad, "Fundaments of Nehru's Foreign Policy",Socialist India 9(25), November 23, 1974, pp 17-19.
44. Bose Pradip, "The Afghan Crisis and India's Role", Janata Vol. 35, No.3, February 24, 1980 pp 7-9.
45. Bose Pradip,"Peace Building in Afghanistan: India's Role", Janta 43(7), May 1988, pp 21, 23, 26.
46. Braun, Dieter, "Change in South Asia Inter-Regional and External Relationship",World Today, Vol XXXIV No. 10, October 1978, pp 393.
47. Budhraj, Vijaysen, "India's Response to the Crisis In Afghanistan",Punjab Journal of politics Vol. 4,No. 1, jan-June 1980, pp 1-9.
48. Chakaravarti, "After Geneva accord",Link, 30(38), April 24, 1988, pp 5-6.
49. Chakaravarti, Sumit, "Afghanistan New Visit under Najib",Mainstream 25(43), July 11, 1987, pp 31-34.
50. Chakho, Arun, "Afghanistan withdrawal Symptoms; What will happen after the soviets leave?", India Today, march 15, 1988.
51. Chakravarti, Nikhil, "An Afghan Journey",Mainstream, 23(20) January 12, 1985, pp 27-32.

52. Chanda, Nayan, "Peace on out terms", Far Eastern Economic Review, 140(14), April 7, 1988, pp 17-18.
53. Chandra Attar, "Indo Afghan Cultural Relations", Socialist India, 10(16) March 22, 1975, pp 17, 26.
54. Chari, P.R., "Turmoil in Afghanistan, Soviet Options", Mainstream, Vol. 17, No. 45, July 7, 1979, pp 7-8, 32.
55. Chari P.R., "Afghanistan Situation: India's Initiatives", Strategic Analysis Vol. 3, No.12, March 1980, pp 431-434.
56. Chaudhary, Madhukar, "Roots of Afghan Problem", Patriot, January 15, 1980.
57. Chaudhary, Neerja, "India's Stand on Afghanistan", Muslims Demand Sovient withdrawal, Himmat, February 22, 1980, pp 7-8, 23.
58. Chauhan, R.S., "India's option in Afghanistan", Indian Journal of Asian affairs; 1(1) Summer 1988, pp 60-69
59. Chavan, Y.B. Rao, "Non-alignment and the countries", Mainstream, Vol. 21, March 1983, pp 24-25.
60. Chopra, B.D., "India-Afghanistan Common Dangerous", Patriot, Jan 21, 1985.
61. Chopra Pran, "Keeping peace in Afghanistan", Indian Express (Chandigarh), Feb. 1, 1988.
62. Chopra Surendra, "Pakistan-Afghan Relation, the Pakhtoonistan Issue", India Journal of Political Science, Vol. 35, No. 4, October-December 1974, pp 151-152.
63. Chopra Pran, "India's Afghan Dilemma", Sunday, Vol. 7, No. 32, February 10, 1980, pp 18.
64. Commerce Research Bureau, "Indo-Afghan Economic Relations", Commerce, Vol. 117, No. 2998, Oct. 19, 1968, pp 838, 840.
65. Commonwealth, "Afghanistan and the Soviet Threat", Commonwealth, 107(1) January 18, 1980, pp 3-4.
66. Daruwalla, K.N., "Afghanistan The Original Sin", The Economic Times, May 1, 1995.
67. Das, Parimal Kumar, "Indian Foreign Policy in a Changing Situation", Mankind, 13(6) August 1969, pp 18-22.
68. Das, Sitanshu, "India's Afghan Connection", Tribune, May 8, 1978.
69. Deepak Lal, "Indian Foreign Policy 1947- 64", Economic and Political Weekly 2(19), May 1967, pp 879, 881-83, 885-87,-2(20) May 20, 1967, pp 933-39.
70. Desai, C.C., "India and her Neighbours", Political and Economic Review, 2(32-33), Oct. 23, 1971, pp 7, 11.
71. Development in Afghanistan, Peoples Democracy 4(2) Jan 13, 1984, pp 4-9.
72. Dhakar, B.L., "India and Neighbouring Countries Regional Economic Cooperation", United Asia, 22(6) Nov-Dec. 1970, pp 320-26.
73. Dinesh Singh, "Principles of India's Foreign Policy", Socialist India, 1(16) Sept. 12, 1970, pp 12-14.
74. Doud Khan, "Statement July 17, 1973", Foreign Affairs Reports 22(9), September 1973, pp-174.
75. Dumber, Charless, " Afghanistan in 1987: A year of decision", Asian Survey 28(2) Feb 1988, pp 148-62.
76. Dupree Louis, "Afghanistan in 1983 and still no solution", Asian Survey, Vol. 24, No.2, February 1984, pp 229-239.
77. Dupree Louis, "India's Stake in Afghan-Pakistan Relations: Some of the Political

Implications for the Afghan-Pakistan Border Dispute", South Asia Series, Vol. VI, No.1, February 1962, pp-2-3.

78. Dupree Louis, "Afghanistan 1968", American Universities Field Staff Reports (South Asia Series) 12(4) 1-8,(5) 1-19,(6) 1-14(7) 1-6.

79. Dupree Louis, "Inside Afghanistan Yesterday and Today; A Strategic appraisal" Strategic Studies, 2(3) Spring 1979, pp 69-83.

80. Dupree Louis, "Afghanistan in 1982;still no solution", Asian Survey, Vol. 23, No.2, February 1983, pp 133-141, 145.

81. Dutt, Vidhya Prakash, "The Afghan War" Sunday, 10 February, 1980, pp-15.

82. Etemadi, Noor Ahmed, "Greeting on Successful Launching of First Earth Satellite Kabul", April 27, 1970, Peking Review, 13(19), March 8, 1970, pp 28.

83. Fltezam, Zabioullah A., "Afghanistan's Foreign Trade",Middle East Journal, 20(1), winter 1966, pp 95-103.

84. Foot Rosemary, "The Changing Pattern of Afghanistan Relations with its Neighbour's", Asian Affairs, Vol 11, No.1 February 1980, pp 55-62.

85. "Foreign Spokes man's Demial of Kabul Radio Allegation about Pakistan involvement in the Kabul disturbances", Foreign Affairs Pakistan 6(8) August 1978, pp 19.

86. Gandhi, Indira, "The fundamentals of our Foreign Policy" Socialist India, 1(16), Sept. 12, 1970, pp 7-10, 20.

87. George, C. Montagno, "The Pak-Afghan Detentes" Asian Survey, December 1963, Vol.3, No.12, pp 616-624.

88. Gerald Sehgal, "China and Afghanistan", Asian Survey Vol.12, No.11, Nov. 1981, pp 1158-1174.

89. Ghosh, K.P., "Afghanistan in World Affairs" Afghanistan Vol. 9, No.4, Oct-Dec. 1954, pp. 51-55.

90. Ghosh, Pardha, S., "Afghan Accord, An Analysis" Mainstream 26(34) June 4, 1988, pp 20-21.

91. Goyal, D.R.,"Afghanistan spring in the Air", Mainstream, Vol. 21, March 1983, pp 85-87.

92. Goyal, D.R.,"Geneva Agreement on Afghanistan Frame Work for Peaceful Development" Soviet Review, 25(6), June 1988, pp. 52-54

93. Goyal, D.R., "Turmoil in Afghanistan, Moscow Kabul Relations and India's Strategic Interest - A back ground", Secular Democracy, Vol. 18, No.1, Jan 1980, pp 31-33.

94. Guha, Amalendu, "Afghanistan and Central Asia", Major Problems of Modern Central Asia, 27-28 Jan. 1980, Indian School of International Studies, pp 1-7.

95. Gupta,Bhawani Sen,"India helps Afghanistan in Preserving Her Heritage", Afghanistan, Vol. 26, No. (3)101, Dec. 1973, pp 23-25.

96. Gupta, Bhukesh, "P.M.'s big confusion on big powers" New Age, 21(25) June 24, 1973, pp 1-10.

97. Gupta, Shekhar, "Afghanistan end game many years" India Today, 15 July 1989, pp 107-8.

98. Gupta, Shekhar, "Afghanistan stage of size" India Today, 31 March 1989, pp 154-57

99. Gupta, Shekhar, "Afghanistan stopping up the Fire" India Today, 15 April, 1989, pp 47-48, 51.

100. Gupta, Sisir, "Problems India's Foreign Policy" Australia's Neighbour 4 (64) May-June 1969, pp 3-6.

101. Gupta, Sisir, "Relations between Pakistan and Afghanistan" Foreign Affairs Report, Vol. IV, No. 7, July 1955.

102. Gupta, Sisir, "Our Foreign Policy: The Problem" Seminar (19) March 1961, pp 10-12.

103. Gupta, Subodh Das, "The Afghan Question a Different View", Modern Review 13(10) April 1980, pp 377-81.

104. Gupta Bhawani Sen , "India and the Super Power Illusion and Reality of Regional influential", Asian Perspective, 3(2) Fall, 1979, pp 162-79.

105. Gupta, Bhabani Sen, "Afghanistan Dead Locked War", India Today, July 31, 1985.

106. Harison, Salings, "Date Line Afghanistan" Foreign Policy (Washington) 1980-81, No. 41, pp 172.

107. Hasan, Iqbal, "A Role for India", Pakistan & Gulf Economist 7(10), March 5, 1988, pp 3.

108. Hill, Kenneth L., "India's Foreign Policy An Evolution", Orient/ West 8(3) May-June 1963, pp 21-26.

109. Haksar, P.N., "Thoughts on our Foreign Policy", Mainstream 23(52) Aug. 24, 1985, pp 7-9.

110. Holiday, Fred,"US Over Reaction: Wrong Moves on Afghanistan",Mainstream, Vol. 18, No. 14, Feb. 9, 1980, pp 8-10.

111. Husan, Zubeida, "An Foreign Policy of Afghanistan" Vol. 17 (7), 1964, pp 48-57.

112. Hasan, Khursid,"Pakistan-Afghanistan Relations", Asian Survey, Sept. 1962, Vol. 11, No. 7, pp 14-16.

113. "Immediate withdrawal of Foreign Troops from Afghanistan Urged", UN monthly Chronicle 17(2): March 1980, pp 5-9., 107-9.

114. "India's Foreign Policy Today", Thought 13(13) April 1961, C:1-1

115. "India, Lal Bahadur Shastri", Round Table, Vol. 222, March 1966, pp 194-97.

116. "India and Afghanistan, changed Stance" Economic and Political Weekly, Vol. 15, No. 3, Jan 19, 1980, pp 88.

117. "India and Afghanistan-joint Communique", Socialist India 10(17), March29, 1975, pp 18.

118. "India and Afghanistan Resolve to Promote Peace in South Asia", Indian and Foreign Reviews, Vol.14, No. 23, Sept. 15, 1977, pp 6-7.

119. "India and Afghanistan Relations", Asia and Africa Review, Vol. 13(9), Sept. 1973, pp 15.

120. "Indo-Afghan Economic Relation", Commerce 126, (32,41) June 16, 1973, pp 1205.

121. "Indo-Afghan Ties", Commerce, 118(3030) May 31,1969, pp 1056-57.

122. Jabcke, Peter, "Economic development in Afghanistan and its Obstades", Asian Studies 5(2), August 1967, pp 345-57.

123. Jade, Khaleel, "The super power and the Northern Tie", International security, winter 1979-80, pp 10-11.

124. Jafari, H. A. S., "Afghanistan's Foreign Policy", A Biblio-graphical Note, South Asian Studies 2(2) July 1967, pp 207-14

125. Jafari, H.A.S., "India's Pakhtoonistan Policy, Notes towards Role identification", South Asian Studies, 5(1) Jan. 1970, pp 49-62.

126. Jain, Giri lal, "Soviet takeover in Kabul, Grim Implication for India", Times of India, Jan. 1, 1980.

127. Jain Girilal, "Whole war of Afghanistan, Avoiding Sino US Trap",Times of India, 16 January, 1980.

128. Jayraman, "India can save the sub-continent from disintigration", Radiance views weekly 15 (38), Feb. 3, 1980, pp 1-2.

129. Jena, B.B., "Indo-Afghan Amity- A Study", Indian Journal of political Science 23(3) July-september 1967, pp 117-24.

130. Jha, Prem Shankar, "India and the super Powers",Week end Review 2(19) Feb. 10, 1968, pp 6-8.

131. Johari, J.C., "Afghanistan Interest in the pakhtoonistan Movement", Radical Humanist 37(1) Oct. 1973, pp 24-27.

132. Joshi Nirmal, "Soviet Intervention in Afghanistan", Foreign Affairs Reports, Vol. 29, No.7 , July 1980.

133. Kabir, Mohammad Humayun, Abu Taher Salahuddin Ahmed, "Post-Communist

Afghanistan: Implications, Challanges and Prospects for a New Order", BIISS Journal, Vol. 13, No. 4, Oct. 1992, pp 489-524.

134. Kahzad, Ahmad Ali, "Frontier Discord between Afghanistan and Pakistan", Afghanistan, Jan-march 1951.

135. Karmal, Babrak, "New Phase of Afghan Revolution", Mainstream 18(20), Jan 12, 1980, pp 27-30.

136. Kaul, T.N., "India's Role at The UN" Socialist India, 1(21), Oct. 17, 1970, pp 10-11, 24.

137. Kaul, T.N.,"Idealism and Self interest in Foreign Policy", Indian and Foreign Review, 4(16), June 1967, pp 8-9,15.

138. Kaul, T.N., "Role of Non-alignment" World Focus, 2(11-12) Nov.-Dec. 1981, pp 47-49.

139. Kaur, Kulwant, "Recent Developments in Afghanistan and its Impact on India's security" Punjab Journal of Politics 4(1) Jan-June 1980, pp 10-27. ,

140. Kaur, Kulwant, "Pak-Afghan Relations - A study of India's Perception", Punjab Journal of Politics, Vol. 3, Oct. 1979, pp 148-64.

141. Khan Aftab Ahmed, "Afghanistan Talks in Geneva" Pakistan & Gulf Economists 7(12), March 19, 1988, pp 34-36

142. Khurshid Hasan, "Pakistan-Afghanistan Relations" Asian survey, Vol. 12, No. 7, sept. 1962, PP, 14-19, 23.

143. Kohzad, Ahmed Ali, "Indo-Afghan cultural Relations", Afghanistan Journal, Vol.9, No.2, Jan 1964, PP 1-10.

144. Kotri M.L., "Wider Portents from Afghan tragedy" Stateman (New Delhi), 23 Oct. 1980.

145. Kriplani, Acharya J.B., "The must always do First", organiser Vol 31, No.21, March 2, 1980, pp 7

146. Krishnan, N.K., "Prospect of Democratic Advance in Afghanistan", Party Life, 12(9), May 22, 1976, pp 5-8.

147. Krishna Murti G.V.G., "Nehru and India's Foreign Policy -A Alcc Economic Review 17(22), June 1, 1966, pp 21-24.

148. Lawrence Ziring, "Pakistan and India Politics,Personalities and Foreign Policy" Asian Survey Vol. 18, No.7, July 1978, pp 706-713.

149. Leedinah, "Kabul's Cup Markers Keep their Neighbours Quessing", Eastern Economics Review, 100(19), May 12, 1978, pp 8-9.

150. Mahendra Kumar, "The Geneva Accord on Afghanistan", Gandhi Marg, 10(2), May 1988, pp 67-70.

151. Mansuri, M.A., "U.S. Arms Offer to Pakistan - Delhi's Negative Reaction" Dawn Overseas Weekly, Vol. 5, No. 4, Jan. 26-Feb. 1, 1980.

152. Manzar Moiz, "Soviet Invasion on Afghanistan" Radians views Weekly 16(2), May 25, 1980, pp 5.

153. Man, Surjeet Singh, "Is India a Great Power?", General of Politics 6(2), July-Dec. 1972, pp 9-17.

154. Masani, M.R., "What is wrong with our Foreign Policy" Quest(48) Jan-March, 1966, pp 61-65.

155. Masood Ali Khan, "India's Interest in Soviet-US Detente", New age 21(25) June 24, 1973, pp14.

156. Mathur, Girish, "What India wants in Afghanistan", Link 30(31), March 6, 1988, pp 8-11

157. Mathur, S.M., "Crisis in Afghanistan: A perspective" Nagpur Since, 19 Jan, 1980.

158. Mates Leo, "The non-align Countries and the Great Powers", Review of International

Affairs 24(560-1), Aug. 5-20, 1973, pp 6-8.
159. MecMurn, Sir George, "Afghanistan and India", The Asiatic Review, April 1928.
160. Mehta, Jagat S., "A Natural Solution", Foreign Policy (Washington) No. 47, 1982, pp 146.
161. Misra, K.P.,""Indo-Afghan Relations", South Asian Studies 2(1) Jan 1967, pp 59-70.
162. Misra Panchanan, "India and the Afghan crisis: Will Placation Help" Janta Vol. 35, No. 27, Aug. 17-24, 1980, pp 7-8.
163. Mitra Shankar N., "Three Reason; why Russia has occupied Afghanistan" Organiser 31(44), March 23, 1980, pp 8-9, 12.
164. Mir Kasim, Syed, ""Our Foreign Policy and Afghan Developments", Mainstream 18 (22-23), 1980, pp 13-15.
165 Mohan Ram, "India Plans to be a Good Neighbours", Far Eastern Economic Review 86(48), Dec. 6, 1974, pp 34.
166. Monood mastine, "Afghanistan Hopes and Difficulties" New Times, Feb. 5, 1985, pp 20-21.
167. "Morarji Desai in Moscow, Indian Oceans and Afghanistan" Commerce 138(3550), June 30, 1979, pp 1125-26.
168. "Moscow-Kabul Relations and India's Strategic Interest-a background study", Secular Democracy, Jan, 1980, Vol. 13, No. 1, pp 32-33.
169. Mukharji, Dilip, "Afghanistan under Daud Relations with Neighbouring States" Asian Survey, Vol. 15, No.4, April 1975, pp 301-312.
170. Mukherji, Hiren, "Sorn over Afghanistan and India's concern" Democratic World, Vol. 9, No. 6, Feb. 10, 1980, pp 5-6.
171. Muni, S.D. "Major Developments in India's Foreign Policy and Relations", International Studies 19(1), Jan.-Mar. 1980, pp 71-85.
172. Myrdal Gunner, "India's Role Under Indira Gandhi" Assam Tribune, June 1, 1972, pp 4-5.
173. Naboodiri, P.K.S., "India's option in Afghanistan", Pioneer, 10 July, 1979.
174. Nakvi, Sayeed, "Iran New move on Afghan Triangle", The Hindustan Times, Nov. 22, 1987.
175. Nassery, Zia Khan, "Afghanistan-A Matter of Real Concern for India", Radians View Weekly, 15(35), Jan.13, 1980, pp 3,11.
176. Nath, Pai, "Aberrations of Nehru's Foreign Policy", Janta 16(48): Dec. 1961, pp 5-6, 13-14.
177. Negaran, hannah, "The Afghan coup of April 1978. Revolution and International Security", Orbis 23(1), Spring 1979, pp 93-113.
178. Nehru, Jawaharlal, "Changing India" Foreign Affair, 41(3), April 1963, pp 453-65.
179. "New Delhi Summit" Mainstream, Vol. 21, March 1983, pp 17.
180. Newell Rechard, S., "Revolution and Revolt in Afghanistan", World today 35(11), Nov. 1979, pp 432-42.
181. "New India to help Afghanistan an Archaeological Research", Afghanistan, Vol. 26, No. 3, Dec. 1973, pp 105-6.
182. Nigam, R. L., "On the Afghanistan Question", Radical Humanist, 45(1), April 1980, pp 26-30,33.
183. Noorani, A.G., "India's Foreign Policy on Afghanistan", Indian Express, June 15, 1985.
184. Oberoi, J.P.S., Structure of Indo-Afghan Relations", Indian and Foreign Review, 13(16), July 15, 1976, pp 23-24.
185. Ohri Major, "Afghanistan, Soviet withdrawal Likely", Current Topics, Swaran Publication, Vol. 12, No.5, April 1986.

186. P.C. Pseud, "Afghanistan: The super Power Syndrome", Radical Humanist, 44(11), Feb., 1980, pp 11-12, 41.

187. Panday, P.K., "Nehru's Foreign Economic Policy", Socialist India 9(25), Nov. 23, 1974, pp 20-22.

188. Pandit, C.S., "Afghanistan-India Growing Relations", World Focus Vol. 5, No.4, April 1984, pp 30-32.

189. Pant, Girijesh, "Major Development in India's Foreign Policy and Relations", Jan.-June 1981, International Studies, 22(1), Jan 1985, pp 59-77.

190. Park Richard L., "India's Foreign Policy 1964-68", Current History 54(320), April 1968, pp 200-5, 243-44.

191. Poalladal B., "Pakhtoonistan Afghan Domestic Politics and Relation with Pakistan" Pakistan Western Border Lands, New Delhi 1977, pp 134.

192. "Potential Market in Afghanistan", Pakistan Economist, 10(32) Aug. 7, 1976, pp 17-26.

193. "Preparatory Committee of Non-aligned countries Meeting", Kabul, Review of International Affairs, 24(556) June 5, 1973, pp 17-18.

194. Prasad, Birendra, "A leaf from Indo Afghan Relations", Modern Review, 134(3), March 1974, pp 206-14.

195. Qureshi, S.M.M., Pakhtoonistan: "The Frontier Dispute Between Afghanistan and Pakistan", Pacific Affairs, Vol. 39, No. 12, Spring, summer 1966, pp 99-114.

196. Qureshi, Anver, "The Soviet Invasion of Afghanistan" Pakistan Economist, 20(4) Jan. 26, 1980, pp 5-9.

197. Rahman, M.A., "Towards a solution of the problem of Afghanistan", Journal of International Affairs, Vol.2, No. 1,March-May, 1984, pp 47-60.

198. Rajan, M.S., "India's Foreign Policy in Changing Frame Work", Indian and Foreign Review 10(22), Sept. 1973, p 13,16.

199. Rama Chandran K., "P.M.Indira Gandhi's Pragmatic Approach to International Relations", socialist India, 7(20) Oct. 6, 1973, pp 8-9.

200. Rao, Narsimha, "Foundations of India's Foreign Policy", Indian Foreign Review, 19(5), Dec. 15, 1981, pp 8-10.

201. Ratnam Parela, "Asian Neighbours: India's Role", International Studies, 17(3-4), July-Dec., 1978, pp 475-81.

202. Ray, Subodh, "Weather India's Non-alignment", Janata, Vol. 35 No. 26, Aug. 10, 1980, pp 9-10.

203. Razvi, Mujtaba, "Pak-Afghan Relation since 1947:An Analysis", Pakistan Horizon Quarterly, Vol. 32, No. 4, 1979. pp 35-50.

204. Richard, Evens, "Afghanistan the Battle for Paktia", Far Eastern Economic Review, Sep. 2, 1985, pp 48-49.

205 Ridout, Ghristine, F., "Authority Patterns and the Afghan Cup of 1973", Middle East Journal, Vol. 29, No. 2, 1975, pp 165-78.

206. Rizvi, Amenul Hasan, "Afghanistan a Matter of Real Concern for India", Radians News Weekly, Vol. 15, No. 35, 13 Jan, 1980, pp 3

207. Roucek, Joseph, S., "The Geopolitics of Afghanistan", United Asia, Vol. 11, 1959, pp 511-13.

208. Ruthna Swami, M., "The Geography of India's Foreign Policy", Swarajya, Annual No., 1967, pp 69, 79.

209. "Russian Occupation of Afghanistan Shocks the Indian Press" Organiser, 31(34), Jan. 13, 1980, pp 12.

210. Samdani, Zafar, "Safeguarding Big Power Interest",Pakistan & Gulf Economist, 7(3) Jan 16, 1988, pp 39-41.

211. Satish Kumar, "Major Developments in India's Foreign policy and Relations", International Studies, 14(3) July-Dec. 1975, pp 417-431.

212. Sawheney, R.G., "Afghanisan Insurgency - No Decisive Impact", World Focus, Vol. 15, No. 4, April 1984, pp 10-12.

213. Sehanavis, Chin Mohan, "Afghanistan and India's Struggle for Freedom", Mainstream, Vol. 17, No.7, 1979, pp 18-21.

214. Shah, Narottam, "India's Foreign Trade 1949-71", Commerce, (Annual No.) 1971, pp 10-12, 14-16.

215. Sharma, P., "Afghanistan and the Brezhnev Doctrine", Janta, 37(10), April 13, 1980, pp [illegible].

216. Shaking the tree, "Afghanistan and its Problems", Economist 228(6518), July 27, 1968, pp 24-25.

217. Singh, Dinesh, "Document: National Concern on Non-alignment", New Delhi Summit, Vol. 21 March, 1983, pp 21.

218. Sinha, P. B., "The Afghan Revolution and After", Foreign Affairs Reports, Vol. 28, No. 7, July 1979, pp 111-133.

219. Sinha, Tarkeshwari, "Indo-Afghan Trade: Good Prospects", Commerce, 117(2994), Oct. 19, 1968, pp 838-40.

220. Staff Report, "Afghanistan Crisis:Policy Position of Afghanistan, Pakistan, USSR, US, Iran and India", Strategic Studies, 11(3) Sept 1986, pp 23-59.

221. Subrahmanyam, "The Afghan Situation and India's National Interest", Foreign Affairs Reports, Vol. 29, No. 8, Aug. 1980, pp 143-60.

222. Subrahmanyam K., "Afghanistan Strategic Dimension - Coldwar Manoeuvres", World Focus, Vol. 5, No. 4, April 1984, pp 7-9.

223. Swami, R.N.M., "Some Problems of Non-Alignment", Indian Foreign Affairs, (6)(2-3), March 27-28,1983

224. Syed Ayub, "Afghanistan Today", India and Foreign Review, Vol.1, No. 4, Dec.1, 1963, pp 21-23.

225. Szuk Tab, "We do not Approve the Soviet Presence in Afghanistan-An Interview with Mrs. Indira Gandhi", Sunday, Vol. 10, No. 7, Aug. 1-7, 1982, pp 20-23.

226. Tabibi, Abdul Hakim, "What Afghan Accept from India", Himmat, 17(23), Nov. 1, 1981, pp 17-18.

227. Tabibi Abdul Hakim, "Right of Self Determination Just Aspiration of Pakistan", Mainstream, 10(1-4),Annual 1971, pp 79-80.

228. Taksal, Vinod, "What India can do in Afghanistan", Link, 30(4) May 15, 1988, pp 7-8.

229. Talibans, "Saviours of kandhar", Times of India (New Delhi), March 2, 1995.

230. Taraki-Noor Mohammad, "Interview", Secular Democracy, 11(12) June 2, 1978, pp 9.

231. Taussig, H.C., "Afghanistan Agricultural Problems", Eastern World, 20(3-4), March-April 1966, pp 11-13.

232. Teplinsky, L., "Afghanistan: Friendly Neighbour", International Affairs, (Moscow) (6), June 1959, pp 103-4.

233. Teraswa Hajime, "The Significance of the Afghan Problem", Korean Journal of International Studies, B-(4), Autumn, 1982, pp 339-51.
234. Thakur, Ramesh, "Afghanistan: The reasons for India's Distinctive Approach", Round Table, Vol. 280, Oct. 1980, pp 422-33.
235. Thaper Romesh, "Changing Alignments", Seminar, (161), Jan. 1973, pp 42-45.
236. "The New Realities in Afghanistan", South (90),April 1988, pp 7.
237. "The Problems of Afghan Refugees", Radiance News Weekly, Vol. 21, No. 21, Sep. 29-Oct. 5, 1985, pp 12.
238. Tiwari, J.G. " Harsh Facts About Afghanistan Crisis", Radiance views Weekly, 16(1), May 18, 1980, pp 9,11.
239. Tiwari, J. G., "The story Soviet Take over of the Afghanistan", Organiser, Vol. 30, No. 39, 1980, pp 12.
240. Upadhyay, Harishkesh, "Afghanistan Crisis, The Fallout in south Asia", South Asia Forum (3), Summer, 1982, pp 23-28.
241. Usvatov, A., ""Soviet-Afghan Friendship", New Times, (22) June 1973, pp 6-7.
242. Vadik.V.P., "India and Afghanistan", International Studies, 17(3-4) Jan-March 1978, pp 529-41.
243. Vadik, V.P., "Afghan Non-alignment Changing Faces", International Studies, (New Delhi) 20(1-2), Jan-June 1981, pp 240-55.
244. Vadik, V.P., "Afghanistan - A Historical Perspective", World Focus, Vol 5, No.4, April 1984, pp 3-6.
245. Vallu, A., "Kabul Factor in US Aid for Pak" Indian Express, Jan. 10, 1989.
246. Vasfi, S., Asif Syed, ""Is Panchsheel Irredovant in Afghan Crisis", Radiance views weekly, vol. XVI, No. 4 June 8, 1980, pp1
247. Vasilyev Alexei, "Our Good Neighbour: Afghanistan", New Times, (50) Dec. 1975, pp 21-23.
248. Verghese, B.G, "Afghanistan Asia's Voice", Himmat Weekly, Jan 25, 1980, pp 13-14.
249. Vivekananadan, B., Afghanistan Invasion viewed from India", Asia Pacific Community, (9), Summer, 1980, pp 63-82.
250. Wafadar, K., "Afghanistan in 1981-The Struggle Intensifies", Asian Survey, Vol. 22, No 2, Feb. 1982, pp 147,154-155
251. Wilber, Donald N., "Afghanistan: A Neutral in Orbit", United Asia, 11(6) 1959, pp 514-518.
252. "Window on World - Afghanistan Under Heel of Communists", The Competition Master, Vol. XXVII, No. 8, March 1986, pp 606-607.
253. "Window on pakistan - Pressure for Change in Afghanistan Policy - A Special Correspondent", Secular Democracy, Vol. 13, No. 8, Aug. 1980, pp 17-18.
254. Wolfram Eberhard, "Afghanistan-Young Elite", Asian Survey, March 1962, Vol. 2. pp 3-23
255. Yusuf, Syed, "A Critique our Afghan Policy", Radiance, 24(2) Aug. 7, 1988, pp 178.
256. Zaidi, Manzur, "Afghanistan: Case study in Competitive Peaceful Co-existence", Pakistan Horizon, Vol. 15, No. 2, pp 1962.
257. अख्तर, खालिद, "अमेरिका की अफगान नीति में बदलाव", दिनमान टाइम्स, 12-18 अगस्त, 1990
258. आनन्द, मधुसूदन, "भारत-सोवियत रिश्तों का बदलता यथार्थ", नवभारत टाइम्स, 31 जुलाई, 1990
259. ------ "काबुल मे दहशत" नवभारत टाइम्स, 3 जनवरी, 1994
260. ------ "फिर अपने स्वभाव का बन्धक अमेरिका, ईराक प्रकरण के बहाने एक पड़ताल", नवभारत

टाइम्स, 18 अप्रैल, 1990
261. आनन्द, मधुसूदन,"अफगान विद्रोहियों के हौसले ढीले पड़ रहे है", नवभारत टाइम्स, 30 जनवरी, 1992
262. आलिफ, शीन, "अफगान मसला-इस्लाम की फतह", अमर उजाला (मेरठ), 8 मई, 1992
263. इसहास, यदुल्लाही, "पाकिस्तान अमरीकी युद्ध नीति का घोड़ा", दैनिक वीर प्रताप, 4 अक्टूबर, 1987
264. काबुल में स्थानीय होती समस्या", नवभारत टाइम्स, 7 अगस्त, 1990
265. कुमार, प्रदीप, "दक्षिण एशिया, जुनेजो की अमेरिका यात्रा के बाद", आज, 27 जुलाई, 1987
266. कुमार, मनोज, "माल्टा शिखर वार्ता-व्यापक परिवर्तन पर सहमति", दिनमान टाइम्स, 7-23 दिसम्बर, 1989
267. कुमार, रंजीत, "तूफान के पहले का सन्नाटा", नवभारत टाइम्स, 4 दिसम्बर, 1994
268. कुमार, सतीश, "चीन का बढ़ता दायरा", नवभारत टाइम्स, 21 मार्च, 1995
269. ------ "खाड़ी संकट से भारत की विकट स्थिति", नवभारत टाइम्स, 30 अगस्त, 1990
270. कायल, एस0वी0, "गुटनिरपेक्ष आन्दोलन-क्या साख कायम रहेगी", दिनमान टाइम्स, 25 जनवरी-3 मार्च, 1990
271. केलकर, एस. के., "अशुभ स्थितियाँ जारी रहेंगी", धर्मयुग, 20 जनवरी, 1980, वर्ष 31, अंक 3, पृ. 53
272. कुल बिहारी द्वारा श्री सुशील चतुर्वेदी, "भारतीय सीमा पर बढ़ता हुआ युद्ध का खतरा", देवदारु, अक्टूबर-दिसम्बर, 1985, पृ. 41-43
273. कौल, जवाहर, "भारत की सुरक्षा से पश्चिम परेशान क्यों", जनसत्ता, 8 अक्टूबर, 1989
274. ------ "अफगान युद्ध पाकिस्तान पर भारी पड़ सकता है", जनसत्ता, अक्टूबर 1989
275. गंगवार, महेश्वर दयालु, "अफगानिस्तान में शान्ति छली गई", दिनमान टाइम्स, 31 मार्च,1989
276. ------ "अफगानिस्तान उलझते दॉव-पेंच", दिनमान टाइम्स, 30 अप्रैल, 1989, पृ. 53
277. गुजराल, इन्द्र कुमार, "भारत अफगानिस्तान में रूस के फौजी हस्तक्षेप के विरूद्ध रहा है", पंजाब केसरी (जालंधर), 13 जुलाई, 1988
278. ------ "भारत अफगानिस्तान के घटनाक्रम के प्रति आँखें नहीं मूंद सकता है", पंजाब केसरी (जालंधर), 14 जुलाई, 1988
279. गुप्ता, शेखर, पाकिस्तान के मुशाहिद हुसैन और ब्यूरो रिपोर्ट, "अफगानिस्तान-बिरादरों में दो-दो हाथ", इण्डिया टुडे, वर्ष 3, अंक 9, 1-15 मार्च, 1989, पृ. 28-31
280. गोयल, देशराज, "अफगानिस्तान को दोबारा जंग में धकेलने की कोशिश", आज (कानपुर), 13 अप्रैल, 1991
281. चौधरी, शाहिद ए0, "नजीबुल्लाह का पतन", माया, 31 मई, 1992, पृ. 44
282. जैन, गिरिलाल, "पाकिस्तान का दोमुहापन, 'इस्लामीकरण' इलाज नहीं", दिनमान, 15 जुलाई, 1988, पृ 77
283. जोशी, त्रिनेत्र, "अफगानिस्तान का अतीत ही भविष्य का आईना है", जनसत्ता, 14 अप्रैल, 1988
284. ------ "एक त्रासद सच्चाई है अफगानिस्तान", जनसत्ता, 19 फरवरी, 1989
285. डेसमन्द, एडवर्ड, डब्ल्यू, "अफगानिस्तान टूटने का खतरा", माया, वर्ष 63, अंक 1, 14 जनवरी, 1992, पृ. 50-52
286. तलब, मनमोहन,"विदेश नीति पर फिर गौर हो", जनसत्ता, 19 जून, 1989
287. दिनकर, डा0 रामधारी सिंह, "जब चीन ने हिन्दुस्तान पर हमला कर दिया", धर्मयुग, 22 अक्टूबर, 1972, वर्ष 23, अंक 43, पृ. 20-21
288. दीत्रि, "रूसी सैनिकों की वापसी के बाद", दिनमान, 28 फरवरी, 1989
289. नागर, डा0 विष्णु दत्त, "अमरीकी सैनिक सहायता: दो पड़ोसी देशों को और गरीब बनाने वाली पुरानी दास्तान", धर्मयुग, 15 अप्रैल, 1973, वर्ष 24, अंक 15, पृ. 14
290. नैय्यर, कुलदीप, "शास्त्री जी, अय्यूब और भुट्टो, 1965 के भारत-पाक युद्ध और ताशकंद समझौते के संदर्भ में", धर्मयुग, 1 अप्रैल, 1973, वर्ष 24, अंक 13, पृ. 8-13, 53
291. पैट्रिक, मार्कबर्न, "कुवैत पर ईराकी हमला: खाड़ी देशों के समीकरण बदल देगा", दिनमान टाइम्स, 12-18 अगस्त, 1990
292. प्रभाकर, प्रवीण, "अफगानिस्तान: मजबूत स्थिति में आ गए है नजीब", दिनमान, 15 सितम्बर, 1979, पृ. 51
293. फ्रैंकव, फ्रेन्साइन आर, "भारत को वास्तविक खतरा अमेरिका की सुदूर रक्षा नीति से है", आज (कानपुर), 24 मई, 1985

294. भट्ट, प्रमोद शंकर, "हिन्दमहासागर में नया तूफान", धर्मयुग, 19 जनवरी, 1975, वर्ष 26, अंक 3, पृ 17-19
295. माथुर, राजेन्द्र, "महाशक्तियाँ है, लेकिन महाविचार कहीं नहीं", नवभारत टाइम्स, 7 जुलाई, 1985
296. मिश्रा, डा0 सी0पी0 पंकज, "संयुक्त राष्ट्र", प्रतियोगिता दर्पण, अंक 12, वर्ष 38, जुलाई 1986, पृ 939-40
297. मिश्र, आशीष, "शक्ति सन्तुलन का नया ध्रुव बनाने की तैयारी", नवभारत टाइम्स, 6 मार्च, 1995
298. मैसकारन्हिास, एंटोनी, "अफगानिस्तान: सोवियत संघ का वियतनाम", धर्मयुग, 13 जुलाई, 1980, वर्ष 31, अंक 27, पृ. 24-25
299. महिपाल, "न हार जीत होती है न बातचीत", जनसत्ता, 17 अप्रैल, 1986
300. राय, अमरेन्द्र कुमार, "पाकिस्तान इतना हिंसक क्यों है", नवभारत टाइम्स, 31 मार्च, 1995
301. राय, प्रभात कुमार, "क्या अफगानिस्तान में शान्ति टिक सकेगी", अमर उजाला(मेरठ), 7 मई, 1992
302. लिमये, मधु, "कौन कितना ताकतवर है", रविवार, खण्ड 9, 24-30 अगस्त, 1986
303. वत्स, दिनेश कुमार, "अफगान समस्या जेनेवा वार्ता की सार्थकता", आज, 29 जुलाई, 1986
304. वत्स, शशिकान्त, "विकासशील देशों का नया मंच: विकासशील देश कमजोर है लेकिन निरीह नहीं", दिनमान टाइम्स, 24-30 जून, 1990
305. वैदिक, वेदप्रताप, "भारत-अफगान मैत्री: अतीत और वर्तमान की राजनैतिक कड़ियाँ", धर्मयुग, 25 मई, तथा 21 जून, 1969, वर्ष 20, अंक 21-22, पृ.11, 13
306. वैदिक, वेदप्रताप,"भारत-पक युद्ध: एक युद्ध विराम से दूसरे युद्ध विराम तक", धर्मयुग, 19 सितम्बर, 1971, वर्ष 22, अंक 38, पृ. 9-11
307. वैदिक, वेदप्रताप, "अफगानिस्तान को भूलिए मत: दक्षिण एशिया की राजनीति और भारत-अफगान सम्बन्ध",धर्मयुग, 24 सितम्बर, 1972, वर्ष 23, अंक 52, पृ. 31-33, 65
308. वैदिक, वेदप्रताप, "अफगानिस्तान में राजतन्त्र की समाप्ति के लिए सफल विद्रोह", धर्मयुग, 5 अगस्त, 1973, वर्ष 24, अंक 31, पृ. 15, 27
309. वैदिक, वेदप्रताप, "अफगानिस्तान में नया शक्ति संतुलन, स्वतन्त्र भारतीय विदेश नीति जरूरी", नवभारत टाइम्स, 8 नवम्बर, 1978
310. वैदिक, वेदप्रताप, "भारत-अफगान सम्बन्धों के नये आयाम", नवभारत टाइम्स, 7 नवम्बर, 1978
311. वैदिक, वेदप्रताप, "अफगास्तिान में सोवियत कार्यवाही - क्या दक्षिण एशिया महाशक्तियों का अखाड़ा बन जाएगा", साप्ताहिक हिन्दुस्तान (नई दिल्ली), 20 जनवरी, 1980
312. वैदिक, वेदप्रताप, "नई दिल्ली शिखर सम्मेलन, गुटनिरपेक्ष आन्दोलन, नौवे दशक की चुनौतियाँ", धर्मयुग, 6 मार्च, 1983, वर्ष 34, अंक 10, पृ. 8-12, 18
313. वैदिक, वेदप्रताप, "विदेशनीति गति है, मगर दिशा स्पष्ट नहीं", धर्मयुग 12-18 मई, 1985, पृ. 13
314. विभाकर, जगदीश, "गुटनिरपेक्ष आन्दोलन कौनसा पथ है-विकासशील और विकसित अर्थ तन्त्रों के बीच की खाई को पाटना है", दिनमान टाइम्स, 6-18 मई, 1990, अंक 23, वर्ष 1
315. व्यास, हरिशंकर, "बटी बिखरी दुनियां का संयुक्त राष्ट्र", नवभारत टाइम्स, 13 जनवरी, 1986
316. ------ "सात बहनों के घोंसले की डाल", जनसत्ता, 19 नवम्बर, 1986
317. ------ "अफगानिस्तान फिनलैण्ड हो सकता है", जनसत्ता, 7 मई, 1986
318. ------ "भाई-भाई में करीबी और दोस्त की चिन्ता", जनसत्ता 14 दिसम्बर, 1987
319. ------ "अफगानिस्तान में समस्या अन्तरिम सरकार की है", जनसत्ता, 18 फरवरी, 1988
320. ------ "अफगानिस्तान समझौता, मोहरा बने जीते और छले भी गए", जनसत्ता, अप्रैल 1988
321. ------ "क्या अफगानिस्तान से सबक लेंगे", जनसत्ता, 15 मई, 1988
322. बाली, सूर्यकान्त, "दुनियां के नक्शे में उभर रहा है एशिया", नवभारत टाइम्स, 23 जून, 1993
323. शेखर, सुरेन्द्र, "भारत के लिए परमाणु बम कितना जरूरी", सरिता, जून द्वितीय, 1994, पृ. 20-22
324. स्नेही, भूपेन्द्र कुमार, "पंजाब में चीनी हाथ और भुल्लर की वापसी", रविवार, खण्ड 10, अंक 4, 21-27 सितम्बर, 1986
325. शर्मा, गणेश शंकर, "भारतीय लोकतन्त्र को घेर लिया है गैर लोकतान्त्रिक तत्वों ने", साप्ताहिक हिन्दुस्तान, 31 अगस्त से 6 सितम्बर, 1986, वर्ष 36, अंक 41, पृ. 12-13

326. सिंह, गोविंद, "सुरक्षा परिषद् में भारत की दावेदारी", नवभारत टाइम्स, 19 मार्च, 1995
327. ------ "ऐसे समझौते ही विश्वयुद्ध की ओर धकेलते है", नवभारत टाइम्स, 23 अप्रैल, 1995
328. सिंह, रामपाल, "अफगानिस्तान से अंगद का पांव कैसे हटे", साप्ताहिक हिन्दुस्तान, 31 अगस्त, 1986, पृ 14
329. सिंह, राय, "नए शीत युद्ध की तैयारी है", जनसत्ता, 30 जुलाई, 1990
330. सिंह, राय, "अफगानिस्तान में हारे तो अफगान ही है", जनसत्ता, 18 मई, 1992
331. हरिवंश, पी0के0, "अफगानिस्तान, ईरान व भारत", हिन्दुस्तान (नई दिल्ली), 3 जून, 1978
332. हुसैन, मुजफ्फर, "अफगास्तिान टूटे तो खतरा, न टूटे तो खतरा", जनसत्ता, 12 मई, 1992
333. हुसैन, मुशाहिद, "सोवियत संघ अफगानिस्तान से सम्मानजनक ढंग से बाहर निकलने के चक्कर में", पंजाब केसरी (जालन्धर), 25 अक्टूबर, 1988
334. त्रिवेदी, शैलेन्द कुमार, "जेनेवा वार्ता व विश्व शान्ति", राष्ट्रधर्म, फरवरी 1986, अंक 9, वर्ष 23, पृ 91-99

Periodical Journals:

Afghanistan (Kabul)
Afghanistan News. (Royal Afghan Embassy London).
Analysis Journal (New Delhi)
Asia (NewYork)
Asian Affairs (London)
Asia and Ear East (Britain)
Asia Pacific Community (Tokyo)
Asian Recorder (New Delhi)
Asian Review (London)
Asia Survey (Berkeley)
Australian Outlook (Mailborn)
British Survey (London)
Bulletin (Munikh)
Central Asian Review (London)
China Quarterly (London)
Commerce (Bombay)
Contemporary Review (London)
Comparative Strategy (New York)
Current History (Philadelphia)
Current Affairs (New Delhi)
Department of State Bulletin (Washington)
Dharamayug (Bombay)
Dinman (New Delhi)
Eastern World (London)
Economic Political Weekly (Bombay)
Economist (London)
Far Eastern Economic Review (Hongkong)
Foreign Affairs (New York)
Foreign Affairs Record (New Delhi)
Foreign Affairs Reports (New Delhi)
Foreign Policy (Washington)

Frontier (Delhi)
Himmat Weekly (Bombay)
Indian and Foreign Review (New Delhi)
International Organization (Madison)
Indian Journal of Political Science (ICWA, Jaipur)
Indian Quarterly (New Delhi)
Indian Year Book of International Affairs (Delhi)
India Today (New Delhi)
International Affairs (New Delhi, Moscow, Oxford University England)
Indian Foreign Affairs (New Delhi)
International Relations (London)
International Security (Cambridge)
International Studies (New Delhi)
IDSA Journal (Institute for Defence Studies and Analysis)
Janata (Bombay)
Journal of International Affairs (New Delhi)
Journal of Asian Studies (University of Michigal)
Keesings Contemporary Archives (Harbor, U.K.)
Middle East Journal (Washington)
Modern Review (Calcutta)
Mainstream (New Delhi)
Maya (Delhi)
Modern Asian Studies (Cambridge)
Newsweek (New York)
Pakistan and Gulf Economist
Punjab Journal of Politics (Amritsar)
Political Science Quarterly (New York)
Pakistan Horizon (Karachi)
Pakistan Review (Lahore)
Problems of Non-alignment (New Delhi)
Pacific Affairs (Canada)
Pratiyogita Darpan (New Delhi)
Radiance Views Weekly (Delhi)
Rashtra Dharam (Delhi)
Raviwar (Calcutta)
Round Table (London)
South Asian Studies (Jaipur)
Swarajya (Madras)
Saptahik Hindustan (New Delhi)
Sarita (Delhi)
Strategic Analysis (Delhi)
Strategic Review (Washington)
Secular Democracy (New Delhi)
The Times (Moscow)

The Eastern Economicst (New Delhi)
The Competition Master (Chandigarh)
U.S. News and World Report (Washington)
United Asia (Bombay)
World Politics (Princeton)
World Today (London)
World Focus (Ghaziabad)

News Papers:

Aaj (Kanpur)
Amar Ujala (Meerut)
Amrita Bazar Patrika (Calcutta)
Anis (Kabul)
Christian Science Monitor (Paris)
Daily Telegraph (London)
Dawn (Karachi)
Hindustan (New Delhi)
Islah (Kabul)
International Herald Tribune (Zurich)
Indian Express (New Delhi)
Motherland (New Delhi)
New York Times (New York)
National Herald (New Delhi)
Nav Bharat Times (New Delhi)
Pravda (Moscow)
Pakistan Times (Lahore)
Punjab Kesri (Jalandhar)
Patriot (New Delhi)
The Time (London)
Times of India (New Delhi)
The Hindu (Madras)
The Hindustan Times (New Delhi)
The Daily News (Karachi)
The Evening Star (Washington)
The guardian (Manchester)
The Statesman (New Delhi)
The Tribune (Chandigarh)
Washington Post (Washington)

उपर्युक्त सन्दर्भ की सूची में केवल चुनी हुई सामग्री रखी गई है। भारत-अफगान पारस्परिक सम्बन्धों, विदेशनीति, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति, ऐतिहासिक महत्व व अध्ययन, अफगान संकट से सम्बन्धित सैकड़ों ग्रन्थों और शोध पत्रों का प्रस्तुत शोध में अध्ययन किया गया है, सभी को उद्धरित करना सम्भव नहीं था। अतः कलेवर विस्तार के भय से मुख्य प्रकाशित सामग्री को ही इस सूची में समाविष्ट किया गया है।

*****